सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५६

(१६ सितम्बर, १९३३ – १५ जनवरी, १९३४)

आश्रमके समर्पणकी चर्चा-सभामें (पृष्ठ ६८)

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५६

(१६ सितम्बर, १९३३ – १५ जनवरी, १९३४)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खंडमे चार महीनों (१६ सितम्बर, १९३३ से १५ जनवरी, १९३४ तक) की जिस अवधिको लिया गया है, उसके दौरान गांधीजी कानूनी तौरपर एक स्वतन्त्र व्यक्ति थे, क्योकि उन्हे २३ अगस्तको बिना शर्त रिहा कर दिया गया था। लेकिन ४ अगस्त, १९३३ को उन्हे एक सालकी कैद की जो सजा दी गई थी, उसकी मियाद पूरी होनेतक वह अपने-आपको एक कैदी ही मानते रहे। उन्होंने इस अवधिमे पूरी ईमानदारीके साथ अपने-आपको हर प्रकारके राजनीतिक कार्यसे अलग रखा और सविनय अवज्ञा आन्दोलनको आगे बढ़ानेकी कोई कोशिश नही की। लेकिन अस्पृश्यताके विरुद्ध अपने आन्दोलनका संचालन करने और आश्रममें तथा अन्य स्थानोंपर रचनात्मक कार्योंका मार्ग-निर्देशन करनेमे उन्होंने पूरी स्वतन्त्रतासे काम लिया। अस्पृश्यताके विरुद्ध सतत आन्दोलन करते रहनेकी उनकी आन्तरिक विवशताको सरकार, यहाँतक कि उनके राजनीतिक सहयोगी भी पूरी तरह समझ नही पाते थे। उनकी यह आन्तरिक विवशता उनके इस दृढ विश्वासपर आधारित थी कि जिस प्रकार १८३३ मे दास-प्रथाका अन्त कर दिया गया था, उसी प्रकार और उसी अर्थमें अस्पृश्यताको भी १९३२ मे बम्बईमे मदनमोहन मालवीयजी की अध्यक्षतामे होनेवाले हिन्दू-समाजके प्रतिनिधियोके सम्मेलनमे समाप्त कर दिया गया था। उनका यह विश्वास भी था कि "गम्भीरतासे की हुई इस प्रतिज्ञाका समुचित पालन करनेके लिए कमसे-कम एक व्यक्ति है जिसका जीवन बन्धकके रूपमें रखा हुआ है" (पृष्ठ ९४)।

गाधीजी इस समय जिस प्रकारके आत्मधारित अनुशासन और जिस प्रकारकी प्रबल क्रियाशीलताका परिचय दे रहे थे, उसके कारण स्वभावत: उनके अनुयायियों और उनके आलोचको मे बहुत ज्यादा गलतफहमी उत्पन्न हुई। काग्रेस पार्टीके नेताके रूपमे उन्होने जवाहरलाल नेहरूको मुखतारनामा दे दिया था। उदाहरणके लिए, अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके कार्यके लिए उन्होने नरीमनको जवाहरलालसे बात करनेकी सलाह देते हुए कहा कि वह "मेरे राजनैतिक मुखिया" है। जवाहरलालसे उन्होने यह स्वीकार किया कि "मै तो पूरी तरह बदनाम हूँ कि मै एक धार्मिक सनकी हूँ और मुख्यत: एक समाज-सेवक हूँ" (पृष्ठ १७५)। जब उनपर यह आरोप लगाया गया कि वह हरिजन-आन्दोलनका उपयोग सविनय अवज्ञा आन्दोलनको मजबूत

बनानेके लिए कर रहे है, और यह कि वह हरिजन-आन्दोलनकी खातिर सविनय अवज्ञा आन्दोलनको छोड़ दे रहे है, तब वह केवल यही कह सके कि "मै दो प्रकारके संकटोंके बीच फँसा हुआ हूँ। काग्रेसी मुझपर यह आरोप लगाते है कि मैंने अस्पृश्यता-निवारणार्थ इस तूफानी अभियानको शुरू करके सविनय अवज्ञा आन्दोलनका अहित किया है। जो लोग मुझपर कोई गुप्त मंशा रखनेका सन्देह करते है वे मुझ पर सविनय अवज्ञा आन्दोलनको मजबूत बनानेका आरोप लगाते हैं। . . . यह तो अत्यावश्यक धार्मिक पुकार है जिसका कि मै अनुसरण कर रहा हूँ" (पृष्ठ ३६०)।

विट्ठलभाई पटेलकी अन्त्येष्टिके समय उनकी अनुपस्थितितक का गलत अर्थ निकाला गया। उन्होने मथुरादास त्रिकमजीसे अनुरोध किया कि आप मुझसे चितामे आग देनेका आग्रह न करें: "मेरा मन बाहरकी चीजोमें जाता ही नही है; जेलमें ही रहता है। मै येन-केन प्रकारेण हरिजन-यात्रा भर करूँगा। इसके अलावा मै अन्य चीजोंपर कदाचित् ही कोई विचार करता हूँ" (पृष्ठ १६९)। उन्हें मणिबहन पटेलको समझाना पड़ा कि "हरिजन-कार्यकी खातिर ही मै [जेलसे] बाहर हूँ, यह केवल सरकार या जनताको कहनेके लिए नही, परन्तु मेरे हृदयमें भी यही चीज है" (पृष्ठ २३४)। सविनय अवज्ञामें भाग न ले सकनेके कारण वह "पंखविहीन पक्षीके समान" थे (पृष्ठ २३८)। गोरधनभाई पटेलको एक पत्र लिखकर उन्होने यह स्पष्टीकरण किया: "विट्ठलभाई और मेरे बीच जो मतभेद था उसका मेरे न आनेके साथ कोई भी सम्बन्ध नही है। मेरे न आनेका कारण तो मेरी आजकी परिस्थिति ही थी" (पृष्ठ २६५)।

आतंकवादियोंके बारेमे गांधीजीका कहना था कि उनकी "हिंसा . . . असंगठित, उन्मादपूर्ण और सर्वथा अप्रभावकारी है" (पृष्ठ ८८), किन्तु उन्होने अपने अंग्रेजी मित्रोकी इच्छा अमान्य करते हुए आतंकवादियोकी निन्दा करनेसे यह कहकर इनकार कर दिया कि मै सरकारका यह जवाबी आतंकवाद रोकनेमे भी तो असमर्थ हूँ जो मेरी रायमें "ज्यादा शरारतपूर्ण होता है, क्योंकि यह संगठित होता है और सारी जनताको भ्रष्ट कर देता है" (पृष्ठ ३६)।

उपवासके कारण गाधीजी बहुत कमजोर हो गये थे, और २३ अगस्तके संकटके बाद उन्हे डाक्टरोंकी यह आज्ञा माननी पड़ी कि वह छः सप्ताह पूरा विश्राम करें। तथापि ७ नवम्बरको उन्होने हरिजनोके हितार्थ अपना 'तूफानी' दौरा शुरू कर दिया। इस सिलसिलेमें उन्होने मध्य भारत, आन्ध्रदेश, तमिलनाडु, मैसूर और केरलकी यात्रा की। इस दौरेके मध्य वह थोड़े समयके लिए दिल्ली आये जहाँ उन्हें हरिजन सेवक संघके केन्द्रीय मण्डलकी बैठकमे भाग लेना था, और इसी मौकेपर

उन्होंने जवाहरलाल नेहरू, अबुल कलाम आजाद और आचार्य कृपालानी आदि कांग्रेसी नेताओंसे मन्त्रणा भी की।

अहमदाबादमें सर चिनुभाई माधवलालकी एक मूर्तिका अनावरण करते हुए गांधीजीने अपनी यह हार्दिक अभिलाषा व्यक्त की कि "अपने देशमें अमीर और गरीबके बीचमें संघर्ष न हो, कलह-क्लेश न बढ़े और दोनों ही अपने-अपने धर्मको समझकर उसका पालन करते रहें" (पृष्ठ १४)। हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें उन्होंने जो-कुछ भी किया और कहा, उसके पीछे भी संघर्षको बचानेकी चिन्ता और लोगोंको अधिकारोंकी अपेक्षा कर्त्तव्योंका ध्यान दिलानेका उद्देश्य ही रहा। वह एक साथ सुधारकों, सनातनियों और हरिजनों, सभीकी सेवा करना चाहते थे (पृष्ठ १५२)। उन्होंने हरिजनोंसे दृढ़चरित्र और निस्स्वार्थ बननेको कहा और सवर्ण हिन्दुओंको बताया कि उनका कर्त्तव्य है कि वे अस्पृश्यताके अभिशापसे अपनेको मुक्त करें। उनका दृढ़ विश्वास था कि हरिजनोंका उद्धार अन्ततः अन्दरसे ही हो सकता है (पृष्ठ १)।

हरिजनोद्धारके कामके सिलसिलेमें उन्होंने किसी गुटको नाराज नहीं किया, बल्कि इस बातकी कोशिश की कि सनातनी, सुधारक और हरिजन तथा समान्यजन, इन सभी वर्गोंके साथ अपना तादात्म्य स्थापित करें। पंडित लालनाथ जैसे बराबर कठिनाई पैदा करनेवाले सनातनियोंके साथ भी उन्होंने कभी अपना धीरज नहीं छोड़ा और तनिक भी असहिष्णुता प्रदर्शित नहीं की। उनकी सभाओंमें उपस्थित होनेवाली भारी भीड़ और पर्याप्त धन-संग्रह इस बातके पर्याप्त प्रमाण थे कि उन्हें अपने काममें सच्चा लोक-समर्थन प्राप्त है, पर उनका एकमात्र उद्देश्य विरोधियोंके दिलोंको जीतनेका था। "हम तो नम्रतम शब्दोंमें अनुनय-विनय करके उन्हें अपने पक्षमें करना चाहते हैं, उनके दिल और दिमागपर विजय पाना चाहते हैं" (पृष्ठ २०६)। कट्टरपंथी पंडितोंने गांधीजीकी सफलतासे क्रुद्ध होकर उन्हें तरह-तरहकी गालियाँ दी, लेकिन जब गांधीजीने उपनिषदों और 'रामायण' के इस मुख्य सन्देशकी दुहाई दी कि "केवल ईश्वर ही सत्य है, और ईश्वरके अतिरिक्त अन्य कोई व्यक्ति, कोई चीज नहीं है" (पृष्ठ ४२६), तो इसका विरोध ये पंडित भी नहीं कर सके, क्योंकि सिद्धान्त रूपमें ही सही, उनके और सामान्य लोगोंके मनमें इस मूल सत्यका जबर्दस्त महत्त्व था। वस्तुतः गांधीजीका दावा था और सही भी था कि उन्होंने मैत्रीपूर्ण चर्चाओंके जरिये काफी-कुछ गलतफहमी दूर कर दी थी और अपने विरोधियोंको अपना समर्थक बना लिया था। गांधीजीने कहा: "लोगोंके दिलो-दिमागतक अपनी बात पहुँचानेकी कोशिश करनेके अलावा मेरे पास और कोई हथियार नहीं है। और मैं जिस सुधारकी बात करता हूँ वह सुधार केवल करोड़ों हिन्दुओंके हृदय-परिवर्तनसे ही हो सकता है" (पृष्ठ ४९६)।

गांधीजीका कहना था कि "मैं अपनेको सनातनी तथा सुधारवादी, दोनों मानता हूँ। हरिजनोंके प्रति एक सवर्ण हिन्दू अधिकसे-अधिक जितना सद्भाव रख सकता है, मैंने वैसा सद्भाव पैदा करनेका प्रयत्न किया है। . . . मैं भी चीजोंको हरिजनोंकी आँखोंसे देखनेका तथा यह जाननेका प्रयत्न कर रहा हूँ कि उन लोगोंके मनमें क्या-कुछ विचार चल रहे हैं" (पृष्ठ २२५)। आर्थिक प्रगति हो या सामाजिक सुधार, गांधीजीके सारे दर्शनमें हरिजन मनोवृत्ति छाई हुई थी और वह जो-कुछ भी सोचते थे, गाँवोंमें रहनेवाले करोड़ों लोगोंको ध्यानमें रखकर सोचते थे। गरीबसे-गरीब आदमीकी खुशीमें उनकी खुशी थी और ये गरीब लोग जी सकें तभी वे भी जीना चाहते थे (पृष्ठ १५५)। उन्होंने राजकुमार कॉलेजके अभिजात-वर्गीय छात्रोंको चेतावनी देते हुए कहा: "अगर आप भारतके गरीबोंकी पीड़ाको समझना न सीखेंगे तो आपकी शिक्षा व्यर्थ है" (पृष्ठ ३००)। गांधीजीको मेहनत-मजदूरी करनेवाले गरीबोंके बीच रहने और खाने-पीनेका अनुभव था, और इस अनुभवने उन्हें मद्य-निषेधका कट्टर समर्थक बना दिया था। उन्होंने कहा: "मैं स्वैच्छिक मद्य-त्यागकी बात नहीं करता। मैं तो पूर्ण रूपसे मद्य-निषेधके पक्षमें हूँ" (पृष्ठ ४७१)।

गांधीजीका कहना था कि शुद्धीकरणके आन्दोलनमें स्वयं हरिजनोंको "सम्मानजनक और मूल्यवान भूमिका अदा करनी होगी" (पृष्ठ ४०७)। सुधार-कार्योंमें लगे कार्य-कर्त्ताओंके लिए उनकी सलाह थी कि वे तर्क-वितर्कपर निर्भर न करें बल्कि शुद्धता और चरित्र-बल पर भरोसा करें। उन्होंने उनसे स्पष्ट कह दिया: "यदि आपके पास चरित्र-गुण ही नहीं है तो फिर स्वाभाविक है कि लोग आपपर किसी प्रकारका यकीन नहीं करेंगे। आपको जन-साधारणके हृदयको स्पन्दित करना होगा, जन-साधारणके हृदयको बदलना होगा। ... जनता बहस नहीं करेगी। . . . वे प्रामाणिक चरित्र-वाले आदमी हैं तो जनता उनकी बात सुन लेगी" (पृष्ठ ३७६)। मद्रासमें उन्होंने छात्रोंसे कहा कि हरिजनोंकी सेवा करके वे एक तरहसे दोहरी क्रान्ति लायेंगे — एक तो हरिजनोंके जीवनमें, और दूसरे खुदके जीवनमें" (पृष्ठ ३७७)।

सत्यकी एकता और निष्ठापूर्वक धारित और आचरित सत्यकी सर्वव्यापक शक्तिमें उनकी इतनी प्रबल आस्था थी कि उनका विश्वास था कि अस्पृश्यता-निवारण मात्रसे वर्गों और जातियोंके बीचके सारे झगड़े, हिन्दू-मुसलमानों और पूँजी तथा श्रमके बीच के सारे विवाद समाप्त हो जायेंगे (पृष्ठ ३११)। उनका कहना था कि चूँकि अस्पृ-श्यता-निवारणका कार्य मूलत: मानवतावादी और धार्मिक कार्य है, अत: उनका जीवनके सभी पहलुओंपर असर पड़ना चाहिए, क्योंकि धर्म तो जीवनके सभी अंगोंका संचालन करता है (पृष्ठ ४०१)। इसीलिए इस आन्दोलनके पीछे कोई राजनीतिक उद्देश्य न होते हुए भी इसके राजनीतिक परिणाम होंगे, यह निश्चित है। उन्होंने

कहा : "धर्म मानकर किये गये किसी कार्यके अनेक महत्त्वपूर्ण परिणाम होते है। 'पहले ईश्वरका साम्राज्य प्राप्त करो, उसके बाद सभी चीजे तुम्हें मिल जायेगी', यह कथन मेरे विचारमें एक वैज्ञानिक सत्य है" (पृष्ठ ३३८)। नागपुरकी एक सार्वजनिक सभामे उन्होने कहा कि मेरा समस्त जीवन धर्मसे संचालित है। मेरी राजनीतिका मूल भी धर्म ही है (पृष्ठ २१३)।

उन्होने यह बात बहुत स्पष्ट शब्दोमें कही कि "मेरी राष्ट्रीयताकी भाँति ही मेरा हिन्दुत्व भी सम्पूर्ण मानवतासे अलग या मानवताके किसी अंगके हितोके प्रतिकूल नही है" (पृष्ठ ३४३)। वस्तुतः मै अपने हरिजन-कार्यके द्वारा सभी जातियोकी सेवा करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। "ये सभी एक विशाल परिवारकी शाखाएँ है। मैंने हिन्दू-शाखामें एक ऐसा रोग देखा है जिसे यदि समय रहते दूर नही किया गया तो वह सारे कुटुम्बमे फैल जायेगा और उसे नष्ट कर देगा" (पृष्ठ २९२) हर धर्मकी रक्षा और विकासके लिए उस धर्मके माननेवालोको बराबर तपस करते रहना होगा (पृष्ठ ६३)। सभी धर्म पुकार-पुकार कर कहते है कि "धर्मकी रक्षा केवल तपश्चर्या द्वारा ही हो सकती है" (पृष्ठ ४८८)। अस्पृश्यताके इस काले धब्बेकी ओर संकेत करते हुए कालीकटमें उन्होने बिशप हेबरकी इस उक्तिकी ओर लोगोंका ध्यान दिलाया कि "केवल मनुष्य ही घिनौना है" और हिन्दुओंको चेतावनी दी कि "हम यदि प्राचीन ऋषियो द्वारा छोड़ी गई अमूल्य निधिके अयोग्य प्रतिनिधि सिद्ध हुए तो वैसी स्थितिमे हिन्दू-धर्म" भी "आसन्न विनाशसे" नही बच सकेगा (पृष्ठ ५१६)।

गाधीजीने सत्यकी खोज पुस्तकोमे नही बल्कि मनुष्योके हृदयमे, ठोस स्थितियोमे करना सीख लिया था, उन्होने मनुष्यके हृदयमे दिखाई पड़नेवाले सत्यको पहचानना, और हर व्यक्तिकी स्वतन्त्रताका सम्मान करना भी सीख लिया था। "किसी व्यक्ति को यह अधिकार नही है कि सत्यको जैसा वह समझता है, दूसरेको उसके अनुसार ही कार्य करनेके लिए मजबूर करे" (पृष्ठ २२६)। वह स्त्रियोके लिए विचार और कार्यकी पूर्ण स्वतन्त्रताके अभिलाषी थे। आश्रमकी महिलाओके लिए उनका सन्देश था : "रासकी कूचके आयोजनके समय भले ही जो-कुछ विचार किये गये हों और प्रतिज्ञाएँ की गई हो, पर अब सारी बहनोको नये सिरेसे स्वतन्त्र रूपसे विचार करके जो निर्णय करना हो, करे। . . . कोई किसीपर जोर न डाले। सब लोग अपना-अपना विचार कर ले, यही धर्म है। सब लोग अपनी इच्छा और शक्तिके अनुसार चले। मै तो अनायास ही जेलके बाहर हूँ" (पृष्ठ ५१९)। मणिलाल और सुशीला गांधीको भी उन्होने इसी भावनासे लिखा : "मै तो आज हूँ और कल नही। अपने बलसे ही तू करे, यही बात शोभाजनक है। . . . अपूर्ण पिताके संरक्षणमें शान्तिकी

खोज करनेकी अपेक्षा पिताके पिता अर्थात् पूर्ण परमेश्वरके संरक्षणमें शान्तिकी खोज कर। इससे तू बलवान बनेगा। तुझे मेरी यह शिक्षा है" (पृष्ठ २२८)। विभिन्न धर्मो या विभिन्न संस्कृतियोके लोगोंके बीच परस्पर विवाहके प्रश्नपर अपने एक विदेशी अनुयायीको अपने विचार बतानेके बाद उन्होने यह चेतावनी भी जोडी: "मै तुम्हारी बुद्धि या तुम्हारे हृदयको गुलाम बनानेका अपराध कभी नही करूँगा। मै अपूर्ण हूँ, और मैं अपनी गलतियोंमें तुम्हें अपना भागीदार नही बनाना चाहता" (पृष्ठ २४५)। उन्हें गलती करनेकी सम्भावनाका अहसास था और वह सारी मानवताके साथ, जिसमे पापी और सन्त सभी शरीक थे, तादात्म्यकी भावना का अनुभव करते थे। इसी कारण वह रामनामको फूट डालनेवाली अहंकारकी भावना और सत्कार्य करनेकी दुर्बल इच्छा-शक्ति दोनोंका सबसे प्रभावकारक उपाय मानते थे। उनका कहना था कि "रामनाम निर्दोष और निरोगी व्यक्तिके लिए नही वरन् हम जैसे दोषपूर्ण और व्याधिग्रस्त मनुष्योके लिए है" (पृष्ठ ३९)। सत्यके पुजारियोकी आध्यात्मिक प्रगतिके लिए विनम्रताकी अनिवार्यता बताते हुए वह कहते है कि सत्यके पुजारियोंको "नम्र बनना है। धूलकी तरह या शून्यके समान बनकर रहना है" (पृष्ठ ७०)।

राजनीतिक कार्योंके प्रति गांधीजीकी तटस्थता, तथा दूसरोके अन्दर स्वतन्त्र रूपसे सोचने-और कार्य करनेकी प्रवृत्तिको बढ़ावा देनेकी उनकी उत्सुकता उनके पत्रोमें अक्सर प्रकट होती है। जवाहरलाल नेहरूको उन्होने पत्र लिखकर यह राय जाहिर की कि अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी बैठक बुलानेसे कोई लाभ नही होगा, किन्तु साथ ही यह भी लिखा कि "इसका मतलब यह नही कि ऐसी कोई बैठक यदि होगी तो उससे मुझे गहरी चोट लगेगी" (पृष्ठ ३२)। मालवीयजीको एक पत्रमे उन्होंने अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी बैठके बुलानेकी भर्त्सना की जिनमें असम्बद्ध और बेसिलसिला चर्चाएँ होती है और अविचारित प्रस्ताव पास किये जाते हैं (पृष्ठ १०१)। वह एक निश्चित नीति और कार्यक्रम अपनाकर उसे बिना हिचके कार्यान्वित करनेके पक्षमें थे। उनका कहना था कि "निराशाजनक अकर्मण्यता सबसे बुरी चीज है और इसको प्रोत्साहन नही देना चाहिए" (पृष्ठ १७५)। उन्होंने इस बातको स्वीकार किया कि जो कांग्रेसी सविनय अवज्ञा आन्दोलनमे भाग नही लेते अथवा नही ले सकते, उनके राजनीतिक अस्तित्वके लिए स्वराज्य पार्टीका गठन आवश्यक हो गया है। इस सिलसिलेमें उन्होने क० मा० मुंशीको एक पत्रमें लिखा: "जैसे तुम मुझसे पूछना उचित समझते हो उसी प्रकार जवाहरलालसे भी इसकी चर्चा करो" (पृष्ठ ४८०)। जवाहरलालने हिन्दू महासभाकी जो कड़ी आलोचना की थी उसके बारेमे गांधीजीने उन्हे लिखा कि यह आलोचना "जरा कम तीखी हो सकती थी" (पृष्ठ ३०२)। उन्होने जवाहरलाल पर लिखे गये घनश्यामदास बिड़लाके लेखको ठीक बताते हुए लिखा कि

जवाहरलाल "बहुत सीधा पुरुष है। अपनी भूल सुधारता है . . . और अन्तम वह सत्यके पथपर ही आ जायेगा" (पृष्ठ १०९)।

प्रभावतीको एक पत्रमे उन्होने लिखा: " . . . यदि जयप्रकाश इस फकीरीको अपनानेके लिए तैयार हो तभी वह इस लड़ाईमे शामिल हो सकता है। सिपाहीका यही धर्म है। दूसरा धर्म कुटुम्बके प्रति है। . . . यह धर्म जब स्वतन्त्र रूप धारण करता है तव वह समाजके हितका विरोधी होता है। . . . सत्याग्रहका आशय इसी धर्मको टालना है। लेकिन जो इसे नही समझता और इसका पालन करनेका प्रयत्न करता है, वह दोनोंसे हाथ धो वैठता है" (पृष्ठ २७६)। एक सुव्यवस्थित समाजमे किसी अच्छे नागरिकसे बहुत बडे त्यागकी अपेक्षा नही की जा सकती, लेकिन जब समाजकी अव्यवस्थित दशाओमे ऐसे त्याग की आवश्यकता हो, उस समय भी अपने गार्हस्थिक उत्तरदायित्वोका बोझ ढोते हुए कोई व्यक्ति सत्याग्रह नही कर सकता। एक अन्य पत्रमे यही बात जरा और खोलकर कही गई है: "निजी कुटुम्ब-धर्मका पालन करनेमें कोई पाप नही है, और सेवाधर्मका पालन करना हो तो निजी धर्मका त्याग करना ही चाहिए" (पृष्ठ ३३५)। यही सलाह एक पत्रमें जवाहरलाल नेहरूको भी दी गई है: "आखिरी लडाईमे केवल वे ही खड़े रह सकेंगे जिनके पास कोई सम्पत्ति नही होगी और सर टेकनेका कोई ठौर नही होगा" (पृष्ठ ३०२)।

गांधीजीका दृढ विश्वास था कि "मानव प्राणीकी रचना ही आत्माको पहचाननेके लिए हुई है और वह आत्म-स्वरूप ही है" (पृष्ठ ५१) और सभी धर्मोका अन्तिम लक्ष्य आत्माकी उस मूलभूत एकताको जानना है जो सभी जीवोंमे व्याप्त है और अनेक रूपोमे व्यक्त होती है (पृष्ठ ३१६)। वह पुनर्जन्मके सिद्धान्तका उपयोग सारी मानव-जातिके वेहतर भविष्यकी खातिर वैयक्तिक नैतिक प्रयासको प्रेरित करनेके लिए करते थे, धर्मकी पुकारसे बचकर भागनेके लिए नही। उनका कहना था कि पुनर्जन्मकी वात अपनी ही हदतक सोचनी चाहिए। "दूसरोको कष्टमे देखकर उनकी उपेक्षा करना . . . तथा यह कहना कि तुमने पूर्वजन्ममें जो किया है उसे भोगो, ईश्वरको . . . राक्षस वना देना है" (पृष्ठ २५८)। कर्मका नियम क्या है, इसको पचास सालतक जाननेकी सच्ची कोशिशके बाद गाधीजी इस निष्कर्षपर पहुँचे थे कि "इसे अपनेको छोड़कर अन्य सब लोगोपर लागू करना इसे विकृत बनाना है। . . . यदि हम कार्यके सिद्धान्तको लागू करते है, अर्थात् स्वयं अपने ऊपर लागू करें, तो हम यहाँकी भूमिका और अन्य स्थानोकी भूमिका स्वरूप ही बदला हुआ पायेंगे" (पृष्ठ ४९४)।

गाधीजीने 'गीता-प्रवेशिका', जिसमे 'भगवद्गीता' के चुने हुए ४२ श्लोक थे, यरवडा मन्दिरमे १९३२ मे रामदासकी खातिर तैयार की थी, जो उस समय उसी जेल

में नजरबन्द थे। रामदासको ये सरल और भक्तिरसपूर्ण श्लोक बहुत पसन्द आये और दूसरे लोगोंकी राय हुई कि यह पुस्तिका रूपमें प्रकाशित हो तो हरिजन-कार्य करनेवालोके लिए बहुत सहायक सिद्ध होगी। यह श्लोकसंग्रह प्रकाशन योग्य है अथवा नही, इसका निश्चय करनके लिए गांधीजीने विनोवा, काकासाहव और बालकृष्ण भावेकी सलाह ली। ये तीनो सज्जन भी उस समय जेलमें थे और 'गीता' के प्रेमी अध्येता थे। इन तीनोंने आपसमें परामर्श किया और पुस्तककी उपयोगिता बढ़ानेके विचारसे गांधीजीको सलाह दी कि वे संग्रहके तीन श्लोक निकाल दें और उनके स्थानपर चार नये श्लोक जोड़ दें। इस प्रकार संशोधित हुआ यह संग्रह स्त्री-पुरुष कार्यकर्त्ताओको तथा 'गीता' के अन्य प्रेमियोको 'गीता' की प्रवेशिकाके रूपमें सुलभ किया गया। लेकिन गाधीजीने उसमें यह चेतावनी जोड़ दी: "इस प्रवेशिका अथवा सम्पूर्ण 'गीता' ही को कंठस्थ कर लेनेसे या पूरा अर्थ समझ जानेसे कोई लाभ नही होना है। 'गीता' तो अनुकरणके लिए है" (पृष्ठ ७६-७)। कस्तूरबाको 'गीता' पर लिखे अपने सुन्दर प्रवचनोमें उन्होंने सेवामें सहज भक्ति और श्रद्धापर वल दिया (पृष्ठ ४१६-१७ और ४३६-३७)।

संस्कृतमें पांडित्यके अपने अभावको स्वीकार करते हुए गांधीजीने महादेव देसाईको लिखा: "तुम अपना अनुवाद जारी रखो और उसमें मेरे विचारोको व्यक्त करनेमें जिस हदतक मेरे अनुवादसे मदद मिले, उसकी मदद लो, लेकिन विलकुल मेरे अनुवादकी ही नकल मत करो। . . . जहाँ टिप्पणियाँ व्यर्थ है वहाँ उनको छोड़ दो। जहाँ टिप्पणी देना जरूरी हो वहाँ अपनी टिप्पणी दे दो। . . . जहाँ फिरसे लिखनेकी जरूरत हो, लिख दो, और जहाँ कुछ जोड़ना हो वहाँ जोड़ दो। . . . तव फिर जव यह सारा परिणाम मेरे हाथमें आयेगा उस समय मैं उसपर काम करूँगा और अपने अर्थको स्पष्ट करनेके ख्यालसे जहाँ जो परिवर्तन करने होंगे, कर दूँगा। . . . उसके वाद हम गुजरातीका संस्करण निकाल सकते है और तुम्हारा किया हुआ अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित कर सकते है" (पृष्ठ २७४-७५)। महादेव देसाई का यही अंग्रेजी अनुवाद १९४६ में 'द गॉस्पेल ऑफ सेल्फलेस ऐक्शन' अथवा 'द गीता एकॉर्डिंग टु गांधी' शीर्षकसे पुस्तक रूपमें प्रकाशित हुआ।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओ, व्यक्तियों, पुस्तकोके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओके आभारी हैं:

संस्थाएँ: साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय; नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गाधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्ली; मैसूर सरकार; राष्ट्रीय पुस्तकालय, कलकत्ता; नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली; मद्रास पुस्तकालय संघ और वुडब्रुक कॉलेज, बर्मिघम।

व्यक्ति: श्री एम० एस० केलकर; श्री कनुभाई मशरूवाला, अकोला; श्री कान्तिलाल गाधी, श्रीमती गगाबहन वैद्य, बोचासण, श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्री जयरामदास दौलतराम, नई दिल्ली; श्री जीवनजी डाह्याभाई देसाई, अहमदाबाद; श्रीमती जेसी हॉयलैंड, फॉवे, कॉर्नवॉल; श्री द० बा० कालेलकर, नई दिल्ली; श्री नारणदास गाधी, राजकोट; श्री प्रभुदास गाधी; श्रीमती प्रेमलीला ठाकरसी, श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड; श्री बनारसीलाल बजाज; श्री भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या, सेवाग्राम, वर्धा; श्रीमती मनुबहन मशरूवाला, श्री महेश पट्टणी; श्रीमती मीराबहन, गाडने, ऑस्ट्रिया; श्रीमती मेरी बार; श्री रमणीकलाल मोदी, अहमदाबाद; श्रीमती लक्ष्मीबहन खरे, अहमदाबाद; श्रीमती वनमाला देसाई; श्रीमती वसुमती पण्डित; श्री वालजी गोविन्दजी देसाई, पूना और श्री शान्तिकुमार मोरारजी।

पुस्तकें: 'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'इन द शेडो ऑफ द महात्मा', 'कोई शिकायत नही', 'गाधीजीकी दिल्ली डायरी, खण्ड–१', 'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापूजीनी शीतल छायामा', 'बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने', 'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने', 'बापुना बाने पत्रो', 'बापुनी प्रसादी', 'मध्यप्रदेश और गांधीजी', 'महात्मा: लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड-३ और 'माई डियर चाइल्ड'।

पत्र-पत्रिकाएँ: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'द इन्डियन एन्युअल रजिस्टर', खण्ड–२, 'द साइनो-इंडियन जरनल', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'मद्रास मेल', 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु', 'हरिजन सेवक' 'हितवाद', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' तथा 'हिन्दू'।

अनुसन्धान एवं सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओके लिए सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, राष्ट्रीय अभिलेखागार और श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र है। प्रलेखोकी फोटो-नकल तैयार करनेमें मदद देनेके लिए हम सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके भी आभारी है।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमे गांधीजीके स्वाक्षरोंमे मिली है, उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोकी स्पष्ट भूले सुधार दी गई है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमे प्राप्त हो सके है, उनका हमने मूलसे मिलान और सशोधन करनेके बाद उपयोग किया है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणमे संशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गाधीजीने अपने गुजराती लेखोंमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमे दिये गये अंश सम्पादकीय है। गांधीजीने किसी लेख, भाषण, आदिका जो अंश मूल रूपमे उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमे छापा गया है। लेकिन यदि ऐसा कोई अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोडकर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणोकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द-जो गाधीजीके कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोडे गहरी स्याहीमे छापे गये है। भाषणो और भेटकी रिपोर्टोंके उन अंशोमें जो गांधीजीके नही है, कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दाये कोनेमे ऊपर दे दी गई है; जहाँ वह उपलब्ध नही है, वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोमे दी गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हे आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमे रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गाधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधार पर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ है, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

साधन-सूत्रोमे 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमे उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमे उपलब्ध

कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालयकी मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिट द्वारा तैयार कराई गई रीलोंका, और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमि का परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. कुछ प्रश्न

मेरी फाइलमे हरिजनोके कई पत्र पडे हुए है, जिनमे मुझसे अनेक प्रश्न पूछे गये है। यहाँ मै सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न ही ले रहा हूँ। इन सवालोका जवाब देनेके पहले मै पत्र-लेखकोको एक चेतावनी दे देना चाहता हूँ। वह यह कि वे सिर्फ सवाल पूछनेकी ही नीयतसे सवाल न पूछे, अथवा इससे भी बुरी बात तो यह है कि अपना विज्ञापन करानेकी खातिर प्रश्न न पूछे। उच्च या सवर्ण कहलानेवाले लोगोमे जो दुर्गुण और दोप है, उनसे तो हरिजन भाई अपनेको दूर ही रखे, उनसे मेरी यह प्रार्थना है। हरिजन-कार्यकर्त्ताओकी सख्या अभी बहुत ही थोडी है। मै चाहता हूँ कि वे शुद्ध, निष्कलक चरित्रवाले और स्वार्थशून्य रहे, क्योकि उन्हे वहुत ही वडा बोझ उठाना है। यह तो मै वारम्वार इस पत्रमे कह चुका हूँ कि अस्पृश्यताके शापसे अपनेको मुक्त करना सवर्ण हिन्दुओका धर्म है। अन्तमे, हरिजनोका उद्धार तो उनके अपने निजी प्रयत्नसे ही होगा। ऊपर मैने जो सलाह दी है, उसके अनुसार मै यहाँ पत्र-लेखकोंके नाम नही दे रहा हूँ, और मुझे आशा है कि वे मेरी इस वातको स्वीकार कर लेगे।

पहला प्रश्न जो मै लेता हूँ वह यह है:

> **आम तौरसे हरिजन-सेवाका काम शहरोंमें हो रहा है, पर गाँवोंमें तो लगभग कुछ भी काम नहीं किया जा रहा है। सेवा-कार्यकी सच्ची आवश्यकता तो गाँवोंमें ही है। इसके लिए क्या किया जाये?**

मुझे भय है कि पत्र-लेखकने जो कहा है, वह अधिकाशमे सच है। वदकिस्मतीसे सुधारकके आगे जो भगीरथ कार्य पडा हुआ है, उसे देखते हुए काम करनेवाले तो वहुत ही कम है और ज्यादातर हरिजन-सेवक नागरिक जीवनके अभ्यस्त होनेके कारण गाँवोमे जाकर वसना पसन्द नही करते। इस प्रश्नपर [अखिल भारतीय हरिजन-सेवक सघ]के केन्द्रीय वोर्डने पूरा-पूरा ध्यान दिया है, और गाँवोमे सेवक भेजनेका प्रयत्न जारी है। इसमें सघको कुछ सफलता भी मिली है। इसलिए इस प्रश्नका कि "इसके लिए क्या किया जाये", जवाब यह है कि यह प्रयत्न और भी तेजीसे चलाया जाये। गाँवोमें हरिजन-सेवाका कार्य करनेवाले या तो खोज निकालने है या तैयार करने है। वस, एक वार गाँवोमे जा बसनेका जहाँ उनका डर दूर हुआ, तहाँ आजकी अपेक्षा वे फिर अधिक सख्यामे मिलने लगेगे। कोशिश जारी रखनेपर सफलता मिल कर रहेगी।

दूसरा प्रश्न यह है:

सवर्ण हिन्दू अगर हरिजनोंको अपने घरमें नौकर रख लें, तो क्या अस्पृश्यता शीघ्रसे-शीघ्र दूर नहीं हो जायेगी?

यह कोई नई सलाह नही है। स्वामी श्रद्धानन्दजी तो इसपर बहुत जोर दिया करते थे कि सवर्ण हिन्दू जिस प्रकार दूसरी जातिवालोंको घरमे नौकर रखते है, ठीक उसी प्रकार हरिजनोको भी उन्हें नौकर रख लेना चाहिए। पर मेरे विचारसे तो हरिजनोंको जब घरमें आम तौरसे नौकर रखने लगेंगे, तब अस्पृश्यता-निवारणके लिए यह कार्य सिर्फ उत्तेजनरूप ही नही होगा, बल्कि यह इस बातका चिह्न होगा कि अस्पृश्यताका नाश हो गया। तो भी ऐसे हरएक सुधारकका जिसने अपने घरसे अस्पृश्यताको निकाल दिया है, यह कर्त्तव्य है कि वह अपने घरमें एक हरिजन नौकर रख ले। सुधारक यदि एकाध हरिजन-बालक या कन्या को बतौर नौकरके नही, बल्कि कुटुम्बीके रूपमे रख ले, तो निःसन्देह यह बहुत ही अच्छा काम हो।

तीसरा प्रश्न यह है:

अस्पृश्यता-निवारणकी इस लड़ाईमें खुद हरिजनोंको किस तरह भाग लेना चाहिए?

इस सवालका जो जवाब मै पहले अनेक बार दे चुका हूँ, वही फिर देता हूँ। हरिजनोंको खूब जोशके साथ अपने अन्दर सुधार करना चाहिए। किसीके लिए यह कहनेको न रह जाये कि उनमें अमुक बुराई है।

चौथा प्रश्न यह है:

खेड़ा जिलेके दो गाँवोंमें हरिजनोंका इसलिए बहिष्कार कर दिया गया है कि उन्होंने मरे हुए ढोर उठानेके लिए सवर्ण हिन्दुओंसे यथोचित मजदूरी माँगी थी। ऐसे मामलोंमें हरिजन क्या करें?

मैं यह बात सहर्ष कह सकता हूँ कि एक गाँवमें तो वहाँके हरिजन-सेवक सघके प्रयत्नसे बहिष्कार उठा लिया गया है और इस लेखके लिखते समय दूसरे गाँवके बारेमे इतनी खबर मिली है कि वहाँ भी मैत्रीपूर्ण समझौता हो जानेकी पूरी-पूरी सम्भावना है। मगर मान लो कि किसी गाँवमे सवर्ण हिन्दू हठपर ही तुले हुए है और हरिजनोंका बहिष्कार चालू कर रखा है, तो ऐसे अवसर पर हरिजनोंमे अगर तनिक भी आत्माभिमान शेष है, तो उन्हे भी बिना उचित मजदूरी पाये काम न करनेका आग्रह जारी रखना चाहिए, और यदि उनसे बहिष्कार बर्दाश्त न किया जाये, तो शान्तिसे उस गाँवको छोड़कर वे कही दूसरी जगह चले जायें। मैं जानता हूँ कि कहनेमे तो यह बात सहल है, पर करना कठिन है। मुझे यह भी मालूम है कि मेरे कहे अनुसार मार्ग ग्रहण करनेकी हरिजनोंमे अभी वह जागृति भी नही आई है। किन्तु मुझे दृढ़ विश्वास है कि वह समय बड़ी तेजीसे आ रहा है, जब इस प्रकारका बहिष्कार करनेके पहले सवर्ण हिन्दुओको एक नही सौ बार विचार करना पड़ेगा।

पाँचवाँ प्रश्न यह है :

आपने यह प्रस्ताव रखा था कि हरिजन-सेवक संघको सलाह देनेके लिए हरिजनोंका अपना एक अखिल भारतीय परामर्शदाता-मण्डल बनना चाहिए। आखिर फिर इसका हुआ क्या?

यह तजवीज मैंने अहमदाबादमे पेश की थी, और वह प्रान्तीय सघके सम्बन्धमे थी। लेकिन जो बात प्रान्तीय सघके सम्बन्धमे ठीक है, वही अखिल भारतीय सघके विषयमे भी कही जा सकती है। पर इतना याद रखना चाहिए कि यह सलाह हरिजनोंको दी गई थी, इसलिए इस दिशामे काम करना और ऐसी परामर्शदात्री समितियोको नियुक्त करना उन्हीका काम है। नि.सन्देह अखिल भारतीय और प्रान्तीय बोर्ड ऐसी समितियोका स्वागत ही करेगे और उनका काम भी बडी अच्छी तरहसे चलेगा। बहुत-कुछ काम उनसे हो सकेगा।

छठा प्रश्न यह है :

क्या आपको मालूम है कि कुछ मन्दिर, जो हरिजनोंके लिए खोल दिये गये थे, बादमें बन्द कर दिये गये हैं? इस समस्याका हल आप किस तरह करेंगे?

फिलहाल हमे यह मान लेना चाहिए कि वे मन्दिर या तो कुछ दबावके कारण खोल दिये गये थे, या उन्हे हरिजनोके लिए बन्द कर देनेका बादमे ट्रस्टियोपर दबाव डाला गया। ट्रस्टियोंको मजबूर करनेके एक-दो उदाहरण मुझे मालूम है। दोनो ही हालतोमे मेरा हल तो यह है कि फिलहाल हमे यह स्थिति सहन ही कर लेनी चाहिए।

सातवाँ सवाल यह है :

मन्दिर-प्रवेशका आन्दोलन अब, मालूम होता है, जैसे बिलकुल ठप ही हो गया है। इस सम्बन्धमें क्या आप कुछ करनेका विचार कर रहे हैं?

मेरा तो ऐसा खयाल नही है कि मन्दिर-प्रवेशका आन्दोलन खत्म हो गया है। आन्दोलनका दिखाऊ रूप बेशक बन्द कर दिया गया है, लेकिन हरिजनोके लिए नये मन्दिर बनवाने और पुराने मन्दिरोके द्वारोको खुलवानेका प्रयत्न तो बराबर वैसी ही दृढ़ताके साथ आज भी जारी है, जैसा कि 'हरिजन' के पृष्ठोमे देखा जा सकता है।

आठवाँ प्रश्न यह है :

यदि सभी पक्षके लोग आपसमें समझौता करके यरवडा-समझौतेमें फेरफार करना चाहें, तो क्या आप उसका समर्थन करेंगे?

यह तो स्वाभाविक बात है कि अगर सभी पक्ष एकमत हो, तभी समझौतेकी शर्तोमे रद्दोबदल किया जायेगा। पर जहाँतक मेरा अपना सम्बन्ध है, मै यही कहूँगा कि उस इकरारनामेमे कोई ऐसा फेरफार कभी नही हो सकता, जिससे हरिजनोको कोई नुकसान उठाना पड़े।

नवाँ सवाल यह है:

> **बम्बईकी विधान-सभामें जो यह प्रस्ताव पास हुआ था कि हरिजनोंके लिए सार्वजनिक कुएँ खोल दिये जायें, उसपर न तो बम्बई सरकारने और न जनताने ही अबतक कोई अमल किया है। क्या आपकी राय है कि ऐसी स्थितिमें हरिजन सत्याग्रह करें?**

पहले तो इस सम्बन्धमे मेरे पास कोई ठीक-ठीक खबर नहीं आई है; दूसरे, मौजूदा परिस्थितिमे, किसी भी तरह मै सत्याग्रह करनेकी सलाह देनेमे असमर्थ हूँ।

दसवाँ और अन्तिम प्रश्न यह है:

> **क्या आप इस विचारसे सहमत हैं कि अस्पृश्यता-निवारणके सम्बन्धमें हरिजन-नेताओंका एक अखिल भारतीय सम्मेलन किया जाये?**

निश्चय ही ऐसा कोई भी सम्मेलन, जो पूरी तरह प्रातिनिधिक हो, उपयोगी होगा। इसलिए ऐसे किसी सम्मेलनका तो मुझे स्वागत ही करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-९-१९३३

२. पत्र: मार्गरेट स्पीगलको

१६ सितम्बर, १९३३

चि० अमला[1],

मुझे तुम्हारे कई पत्र मिले। तुम्हें मेरे प्रति अपने मनका भय छोड़ देना चाहिए। आश्रममे मैंने जो-कुछ भी कहा और किया था वह शुद्ध प्रेमभावसे और तुम्हारे भलेके लिए कहा और किया गया था। मैं जो-कुछ कहता हूँ यदि तुम्हे उसमे विश्वास है तो तुम मुझसे क्यों डरो? इसलिए तुम्हे मुझसे कतराने या मुझसे भय करनेकी जरूरत नही है। ब्लड-प्रेशर होनेके बावजूद मैं ठीक-ठाक हूँ।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. एक जर्मन महिला, जो आश्रममें हरिजन सेवा-कार्यका प्रशिक्षण प्राप्त कर रही थीं। गांधीजीने बादमें उनका भारतीय नाम 'अमला' रख दिया था।

३. बातचीत : स्त्री-कार्यकर्त्ताओंसे[1]

[१६ सितम्बर, १९३३][2]

मैं तो बरसोंसे कहता आया हूँ कि जो बातको समझ गये हैं उन्हें खादीके उत्पादनमें हाथ बँटाना चाहिए। लेकिन किसीने मेरी रायको स्वीकार नहीं किया। यदि यह राय मान ली गई होती तो खादी आज व्यापक हो चुकी होती और इतना कष्ट नहीं उठाना पड़ता। यदि रोज आधा घंटा काता जाये तो इसमें जाता ही क्या है! परन्तु आज तो लगता है कि इसमें बहुत-कुछ जाता है। जो बुनकर हाथका सूत बुननेको तैयार हैं उन्हें हाथका सूत नहीं मिल पाता। ऐसे कितने ही जुलाहे हैं जिन्हें मुझे मजबूर होकर कहना पड़ा है कि मैं तुम्हारे लिए हाथकते सूतकी व्यवस्था करता हूँ; पर यदि मिल ही न पाये तो तुम लोग भले ही मिलके सूतका उपयोग करो। मुझे कोई तुम्हारा धन्धा थोड़े ही बन्द करना है। आधा घंटा कातनेकी बात तो मैंने तुम लोगोंके समक्ष ऐसी पेश की थी जो अत्यन्त सुगम थी, यही माना जाना चाहिए। खादीके बिक्री-कार्यमें तुम्हें लोगोंकी बातें सुननी पड़ती होंगी तो उन्हें सहन कर लेना; तुम इसी योग्य हो। पर मैंने जो-कुछ कहा है, यदि तुम उसपर चलो तो बातें सुननेका अवसर ही न आये।

प्रश्न : बहनें जब कातती थीं तब कातनेकी व्यवस्था नहीं थी।

गांधीजी : यह सच है; यह बात मेरे ध्यानमें लाई गई थी। लेकिन स्त्रियाँ जो-कुछ कातती थीं उसे तो सूत कहा ही नहीं जा सकता था। यदि बहनें रस्से कातने लगें तो बुनकर क्या बुनें? बुनकर केन्द्र तो अपने पास कितने ही हैं। इसलिए दोष तो हमें बहनोंको ही देना होगा, क्योंकि उन्होंने कातना सीखनेका प्रयत्न ही नहीं किया।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २४-९-१९३३

१ और २. यह बातचीत चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" में "सरल मार्ग" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी। गांधीजीकी ६५ वीं वर्षगाँठपर दो बहनें गांधीजीके पास गईं। उनमें से एक बहनने खादीकी बिक्रीमें जो मंदी आ गई थी उसकी शिकायत की थी। गांधीजीकी यह वर्षगाँठ गुजराती विक्रम सम्वतके अनुसार १६ सितम्बरको पड़ी थी।

४. उत्तर: पत्र-लेखकोंको[1]

[१७ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

सुख और दुख गर्मी और सर्दीके समान हमारे पीछे लगे रहते हैं।[2] एक दिन मोटर हो और दूसरे दिन पाँव-प्यादे चलना पड़े तो इसमे दुख माननेका क्या कारण है? हिम्मत और धीरज कभी न छोड़ना। यही सच्ची दौलत है।

जहाँ सेवा करनेका अवसर मिले वहाँ सेवा करना हमारा धर्म है। सुख-दुख तो मनके माननेकी बात है। तुम्हे दुख हो ही क्या सकता है? रामनामको भूलना ही सच्चा दुख है। यह तो तुम नही भूलते।

इसमे तनिक भी सन्देह नही कि ईश्वरने तुम्हें बचा लिया है। तुमसे उसे अधिक सेवा लेनी है।

जो शरीर एक दिन नष्ट होनेवाला है उसमे यदि कुछ बुराई[3] घुस आये तो हम क्या कर सकते है? लेकिन ऐसी सहनशक्ति सब नवयुवकोंको कैसे दी जा सकती है? बूढ़ोके मनसे भी जीनेकी आशा जब नही छूटती तब बच्चोका क्या कहना? परमेश्वर तो सबको बचानेवाला है ही।

जो बात तुमपर और मुझपर लागू होती है वह हरिजनोंपर भी लागू होनी चाहिए, इसका आग्रह नहीं किया जा सकता। हरिजनोंको तो हमने अपने समाजसे बाहर रखा है। और फिर, आज जो वस्तुस्थिति है हमे उस ओर भी देखना चाहिए। यदि हम कुछ-एक लोगोंको छोड़ दे तो आज स्कूल-कालेजोके बहिष्कार पर कहाँ अमल किया जा रहा है? इसलिए यदि हम हरिजनोसे कहें कि तुम लोग यदि सामान्य स्कूल कालेजोमे जाओगे तो तुम्हें मदद नहीं मिलेगी, तो यह उनके प्रति घोर अन्याय होगा।[4]

मै अपनी शक्तिका अधिकांश भाग हरिजन सेवा-कार्यमे लगा ही रहा हूँ; और मै जेलके भीतर रहूँ अथवा बाहर, जीवनकी आखिरी घडीतक मैं हरिजन-कार्य ही करता रहूँगा।[5]

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १७-९-१९३३

१. यह और इसके बादके चार शीर्षक १७-९-१९३३ के हरिजनबन्धु में प्रकाशित चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से लिये गये हैं।

२. पत्र-लेखकने गांधीजीको अपनी आर्थिक स्थितिके बारेमें लिखा था।

३. इस पत्र-लेखककी बाँहकी हड्डी टूट गई थी।

४. असहयोगको माननेवाले एक हरिजन सेवकने पूछा था कि गांधीजी एक समय जिन सरकारी स्कूलों और कालेजोंके बहिष्कारकी बात करते थे, अब उन्हीं स्कूलों और कालेजोंमें जानेके लिए हरिजनोंको छात्रवृत्ति क्यों दिलवाते हैं।

५. पत्र-लेखकने गांधीजीको अपनी शक्ति हरिजन-सेवामें केन्द्रित करनेके लिए लिखा था।

५. एक पत्र[1]

[१७ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

एक हदतक 'आत्म-निन्दा' भी आवश्यक है। परन्तु मैंने देखा है कि कुछ-एक लोगोंको आत्म-निन्दामे अतिरेक करनेकी आदत ही पड जाती है; और इस प्रकार वे फिर प्रगति कर ही नही सकते। आत्म-निन्दाका उपयोग तो इतना-भर होना चाहिए कि हम प्रगति कर सके। भूतकालमें हमारे हाथो जो दोष हुए हो और आज हम उन्हे न कर रहे हो तो उनका बार-बार चिन्तन करके आत्माका उत्पीड़न करनेका अर्थ तो दोषकी वृद्धि करनेके समान ही है। कोई महादोष हो उसे तो प्रकट कर ही देना चाहिए, इसे मै स्वीकार करता हूँ। सत्यका पुजारी तो इसके अलावा कुछ कर ही नही सकता। पर इस दोषको स्वीकार करते हुए किसी भी प्रकारका बोझ मनपर नही होना चाहिए। चढी हुई मैलको एक बार धो देनेके बाद उसी मैलका बोझ भला खुदपर कोई रहने देगा? परन्तु तुम कुछ ऐसा ही करते जान पड़ते हो। हममे सत्यके प्रकट होनेपर ही हमारे समक्ष असत्य छिप नही पायेगा। लेकिन हममे कौन-सा असत्य किस स्थानमे छिपा है, इसे हम सदा ही नही खोज पायेंगे। मेरा लिखनेका हेतु केवल इतना ही है कि तुम्हें अपना मन हलका कर लेना चाहिए। यह भक्तिका ही लक्षण है। भगवानका सहारा लेनेके बाद भक्त कभी घबराता नही। भूतकालकी याद करके वह कभी रोने नही बैठेगा। वह भविष्यके विषयमें भी निश्चिन्त रहेगा। वर्तमानपर तो उसका काबू है ही। उसकी सँभाल वह करेगा और उसको सँभालनेकी कुँजी भगवानने उसे दे ही रखी है। "जो-कुछ तू करे . . . वह मुझे अर्पण कर।"[2] भक्त यदि इतना कर पाये तो वह मुक्त होकर नाच सकता है। यदि तुम अपना मन इस प्रकार हलका कर सको तो शारीरिक और मानसिक सारे ही रोग चले जाये और तुमसे भरपूर सेवा ली जा सके। अपना मन अवश्य ही हलका कर लेना।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १७-९-१९३३

१. यह "भक्तिका लक्षण" शीर्षकसे प्रकाशित किया गया था। यह एक हरिजन-कार्यकर्ता के पत्रके उत्तरमें लिखा गया था, जो अपने स्वभावगत दोषोंके कारण अत्यन्त संतप्त था।

२. श्रीमद्भगवद्गीता, ९, २७।

६. बातचीत : एक हरिजन-कार्यकर्त्तासे[1]

[१७ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

सेवाकी मेरी रीति ही निराली है। जिसे सर्वोत्तम काम करना है, जो शुद्ध और सच्चा सेवक बनना चाहता है, उसमें इतनी योग्यता तो होनी ही चाहिए। यों तो जिसे जो काम करना हो वह किया करे, उसे क्या कोई रोकता है? परन्तु हमारा काम शीघ्रतासे नहीं होता, इसका कारण यही है कि सेवक जन पूरी योग्यता प्राप्त किये बिना ही अपने जिम्मे काम ले लेते हैं।[2]

विलायत पढ़ने भेजें तो मैं जानेको तैयार हूँ।

इतने-से कामके लिए इतना अधिक खर्च किया जाये! यहाँ धन्धेका जितना शिक्षण मिल सके, उतना ग्रहण करो; विलायतका विचार फिर किया जाये। और फिर, विदेश कितने लोगोंको भेजा जा सकता है?

तो फिर कोई सामाजिक सेवाका काम बताइये।

सब इसीमें आ जाता है। सीखते हुए किसीकी सेवा नहीं हो सकती, ऐसा थोड़े ही है। तुममें योग्यता होनी चाहिए। योग्यताके बिना जो तुम चाहते हो वह नहीं मिल सकता। सेवाके नामपर दौड़-धूप तो बहुत करते हैं, पर इससे क्या जनताकी सेवा हो जाती है? जिसे रचनात्मक काम करना है, जनताकी सच्ची और शुद्ध सेवा करनी है उसका तो तरीका ही जुदा होता है। लोगोंको अगर चरित्रवान् बनाना हो, तो तुममें उतनी शक्ति होनी चाहिए। उद्यममें अगर तुम्हारा मन न लगे तो कोई नौकरी कर लो और ईमानदारीसे नौकरी करो। इससे भी कौमकी सेवा हो सकती है। अगर तुम्हारी यह छाप लोगोंपर पड़े कि तुमसे अधिक पवित्र आदमी नहीं मिलता, तो वह भी तुम्हारी जन-सेवा ही कही जायेगी। किसी मनुष्यके बारेमें यदि लोग यह कह सकें कि इसकी ईमानदारीकी तो सीमा ही नहीं है, तो क्या यह कोई छोटी बात है? ऐसे ईमानदार नौकर बड़े आदमियोंके यहाँ सोलह आने कर्त्ता-धर्त्ता बन गये, इसके कई उदाहरण मैं दे सकता हूँ। ऐसे नौकरोंकी सेठ लोग पूजा करते हैं।

मुझे पैसा नहीं कमाना, मुझे तो त्याग करना है।

इसमें पैसा कमानेकी बात नहीं है। तुम्हें यदि इतनी प्रतिष्ठा मिल जाये कि हिन्दू-समाज यह कह सके कि एक प्रामाणिक हरिजन देखना चाहते हो तो यह रहा,

१. यह बातचीत "नन्दके समान बनो" शीर्षकसे प्रकाशित हुई थी।

२. हरिजन-कार्यकर्त्ता चरखे द्वारा सेवा करनेमें खुश नहीं थे और वे यह जानना चाहते थे कि बिना किसी पूर्व प्रशिक्षणके तुरन्त सेवा किस प्रकार की जा सकती है?

यह कोई मामूली बात नही है। मुझे आज यह कहना पडता है कि हरिजनोमे नन्द[1]-जैसा एक पुरुष पैदा हो गया है। नन्दको हुए चार-पाँच सौ वर्ष हो गये है, लेकिन उसकी कीर्तिगाथा आज भी गाई जाती है। नन्दके समान हरिजनोमे आज कोई पैदा क्यों नही हो सकता? उनके जमानेमे हो सके और आज नही हो सकते, ऐसा थोड़े ही है। यदि हरिजन नन्द-जैसे हो जाये, तो फिर क्या कहना! मै तो सवर्णोमे अस्पृश्यता-निवारणका आन्दोलन चला रहा हूँ, और हरिजनोको भी उनका धर्म बताता हूँ।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १७-९-१९३३

७. सलाह: एक कार्यकर्त्ताको[2]

[१७ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

प्रचारक तो मालवीयजी-जैसे हो, नारायण शास्त्री[3], लक्ष्मण शास्त्री[4] या श्रीधर शास्त्री पाठक-जैसे हो। वे तो शुद्ध कुन्दन-जैसे चरित्रवाले मानव होते है। भला ऐसे प्रचारक हम विज्ञापन देकर कैसे प्राप्त कर सकते है। ऐसे प्रचारक तो रटे हुए भाषण हमे दे जायेगे। इनसे हमारा काम कैसे बनेगा। अत॰ यदि खरी मुहर नही मिल पाती तो क्या खोटे सिक्के लेकर हम काम चलायेगे। यह तो शेखचिल्लीकी-सी बात होगी। मुझे तो यह जरा भी पसन्द नही है। मैने तो इस प्रकार कभी कोई काम नही किया।

तो अब मै एकाएक यह कैसे कह दूं कि मै प्रचारक तैयार कर रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १७-९-१९३३

१. चिदम्बरमके नन्दनार, तमिलनाडुके ६३ शैव सन्तोंमें से एक।

२. यह लेख "कार्यकर्ताके गुण" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। गाधीजीके समक्ष एक ऐसा सुझाव आया था कि कुछ वैतनिक प्रचारक अस्पृश्यताका मुकाबला करनेके लिए भेजे जायें। चन्द्रशकर शुक्ल इस रिपोर्टके प्रारम्भमें यों लिखते हैं: "गाधीजी प्रचारकोंमें कुछ विशेष गुणोंकी अपेक्षा करते है, जैसे धर्म-सम्बन्धी ज्ञान और चरित्रकी पवित्रता आदि। वे कहते है कि हम प्रचारको व्यवसाय तो नहीं बना सकते। वह तो एक धार्मिक कार्य ही हो सकता है। वैतनिक प्रचारकों वाली बात उन्होंने मंजूर नहीं की।"

३. नारायण शास्त्री मराठे उर्फ स्वामी केवलानन्द।

४. तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशी।

८. बातचीत : गुरुकुल कांगड़ीके विद्यार्थियोंसे[1]

[१७ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

अपने चरित्रको शुद्ध करके ही हम हरिजन-सेवा कर सकते हैं। इसके लिए जिस शुद्धिकी आवश्यकता है वह भी खरी होनी चाहिए। अर्थात् तुम्हें इसके लिए तपस्या करनी चाहिए। इसी तपस्याके निमित्त मैंने उपवास किये। इसका कुछ परिणाम तो तत्काल हुआ। और अभी बरसोंतक इसका परिणाम बना रहेगा। सामान्य रूपसे तो हम आत्मशुद्धि करते हैं, परन्तु हरिजन-सेवाके लिए विशेष शुद्धिकी आवश्यकता है। और यह शुद्धि जितनी अधिक बन पड़ेगी उतनी ही अधिक हरिजन-सेवा हो सकेगी। यदि ऐसा एक भी मनुष्य हो तो उसका भी असर पड़े बिना नहीं रहेगा। ऐसा मनुष्य हरिजनोंके बीच जायेगा तो वहाँ भी काम कर सकेगा। सनातनियोंके बीच पहुँचेगा तो उनका हृदय भी द्रवित कर सकेगा। हरिजनोंकी अपेक्षा तो सनातनियोंकी शुद्धिकी अधिक आवश्यकता है, इस विषयमें मुझे जरा भी शंका नहीं है। लेकिन जो लोग गर्वमें चूर हैं उन्हें कौन समझा सकता है? हमें सनातनियोंके बीच जाना होगा और उन्हें समझाना होगा। यदि वे हमें गालियाँ देंगे तो हम बदलेमें गाली नहीं देंगे; यदि वे मारपीट करेंगे तो हम मारपीट नहीं करेंगे। यदि वे बीमार होंगे तो हम उनकी सेवा-शुश्रूषा करेंगे। वे आचार-विचारका बड़ी कठोरतासे पालन करते होंगे तो हम उनसे भी अधिक कठोरताके साथ करेंगे। उन्हें वेदादिका जो ज्ञान होगा, उससे कहीं अधिक ज्ञान हम प्राप्त करेंगे। ऐसा करनेसे ही उनपर हमारा असर होगा। अस्पृश्यताका मूलोच्छेदन कठिन कार्य है। यह कार्य कोई स्वार्थका नहीं है, परमार्थ दृष्टिसे किया जाने योग्य है। इसके लिए हमें दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक शुद्ध होना पड़ेगा।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १७-९-१९३३

१. यह "शुद्धिरूपी पूँजी" शीर्षकसे प्रकाशित हुई थी।

९. ब्राह्मण क्या करें ?

"ब्राह्मण क्या करें" इस शीर्षकका जो लेख[1] मैंने गतांकमे लिखा था, उसके सम्वन्धमे वही महाराष्ट्रीय सज्जन फिर लिखते है[2]

इस पत्रसे वहुत-से प्रश्न उठते है। ब्राह्मणोको जो कठिनाइयाँ उठानी पड़ती है, वह दूसरोको सहन नही करनी पडती, ऐसी बात नही है। आज एक नही तो अन्य कारणोसे नौकरी प्राप्त करनेमे सभीको थोडी-बहुत कठिनाई होती ही है। अबतक ब्राह्मणोको आसानीसे नौकरी मिल जाती थी। पर अब वह बात नही रही है। इसमे सन्देह नही है कि ब्राह्मणोकी जो हालत आज हो गई है या होती हुई जान पडती है, वैसी हालत अन्य जातियोकी कुछ वर्ष पहले थी। जहाँ जात-पाँतका भेद होता है, वहाँ ऐसी उन्नति-अवनति होती ही रहती है। इसलिए किसीको सन्तोषजनक आश्वासन देना कठिन है।

इस कठिनाईके मूलमे एक बात है जो विचारणीय है। नौकरियोकी सख्या सदा ही सीमित रहेगी। और नौकरीके उम्मीदवारोकी सख्या समयके साथ-साथ बढा ही करती है। इसका सीधा रास्ता यही है कि नौकरीका त्याग करनेकी प्रवृत्ति बढ़ानी चाहिए और अन्य धन्धोकी ओर रुचि पैदा करनी चाहिए और तत्सम्बन्धी योग्यता प्राप्त करनी चाहिए। इस फेरफारके सन्धिकालमे, कष्ट अवश्य होता है, परन्तु फल अच्छा ही निकलता है। अन्य देशोमे यही अनुभव किया गया है, और जो अबतक नौकरी करते थे, वे अब अन्य धन्धोमे लग गये है।

दूसरी बात ध्यान देने योग्य यह है कि खर्च कम किया जाये, पारिवारिक और व्यक्तिगत आवश्यकताएँ कम की जायें। जीवनको सादा बनानेकी आवश्यकता सारे ससारमे अधिकाधिक स्पष्ट होती जाती है। इस आशयकी एक अग्रेजी कहावत है कि 'सादा जीवन और उच्च विचार"। भारतमे तो सादगी निरा सद्‌गुण ही नही, वल्कि धर्मका एक अग भी है।

कुटुम्वकी स्त्रियोको भी यथाशक्ति घरके खर्चमे सहयोग देनेकी आवश्यकता है। मजदूर वर्गकी स्त्रियाँ तो घरका काम-काज करती हुई भी कुछ कमाई कर लेती है। अन्य स्त्रियाँ भी ऐसा क्यो न करें? एक कुटुम्बमे खानेवाले तो बहुत और कमाने-

१. १० सितम्बर, १९३३ का; देखिए खण्ड ५५ पृ०, ४४०-४१।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने इसमें यह बताया था कि ब्राह्मण ब्रह्म-ज्ञानके प्रचार द्वारा अपनी रोजी नहीं कमा सकते, क्योंकि आम जनताको ये सब बातें पसन्द नहीं हैं। इसलिए बस एक ही विकल्प है कि नौकरी कर ली जाये। ब्राह्मण लोग इस सम्बन्धमें किन्हीं खास सुविधाओंकी माँग नहीं करते, लेकिन इतना जरूर चाहते है कि ब्राह्मण होनेके कारण उन्हें नौकरीके मामलेमें किसी कठिनाईका सामना न करना पड़े।

वाला केवल एक ही हो, तो उसके ऊपर अनुचित भार पड़े बिना न रहेगा। इसलिए जिन ब्राह्मणोंको नौकरी मिलनेमें कठिनाइयाँ दिखाई पड़ें, उन्हें इस सलाहपर भी ध्यान देना चाहिए।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १७-९-१९३३

१०. पत्र : जमनालाल बजाजको

१७ सितम्बर, १९३३

चि० जमनालाल,

अखबारोंमें तुमने सब पढ़ लिया होगा। मैं तुम्हें जानबूझकर ब्योरेवार नहीं लिखता था। तुम्हें किसी प्रकारका दायित्व सौंपते हुए आजकल मुझे संकोच होता है। चिदम्बरामें तुम्हें एकदम वापस आना पड़ा, यह भी अच्छा नहीं लगा। अब तो जब मिलेंगे तब बात करेंगे। मुझे भी आरामकी जरूरत होगी। गजानन[1] की बहू गोपी बहुत करके मेरे साथ ही होगी और किसन[2] नामक एक अत्यन्त भली महिलाको भी मैंने अपने साथ आनेका न्योता दिया है। उसका स्वास्थ्य अच्छा था, लेकिन अब कुछ गड़बड़ा गया है। अपने स्वभावानुसार इन सबका बोझ तुम अपने कन्धोंपर उठा लोगे, यह मैं जानता हूँ, लेकिन कोशिश करूँगा कि हम बोझरूप न हों।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

जवाहरलाल आज रात लखनऊ जा रहे हैं। कदाचित् बादमें वर्धा जायें। ज्ञान आ गई होगी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२५) से।

१. रामेश्वरदास बिड़लाके पुत्र।

२. किसन घुमतकर

११. श्रद्धांजलि : एनी बेसेंटको

[२० सितम्बर, १९३३][1]

डॉ० बेसेंटको उनकी लम्बी और कष्टदायक बीमारीसे मृत्युके हाथो मुक्ति दिलानेके लिए जहाँ लोग ईश्वरको धन्यवाद देंगे वही हजारो लोग उनकी मृत्युपर शोक करेंगे। जबतक भारत जीवित है तबतक डॉ० बेसेंटकी शानदार सेवाओकी याद भी जीवित रहेगी। भारतको अपना देश बनाकर और अपना सर्वस्व उसपर न्योछावर करके उन्होने भारतीयोका प्यार जीत लिया था।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-९-१९३३

१२. भाषण : अहमदाबादमें – १[2]

२१ सितम्बर, १९३३

इस शुभ कार्यको सम्पन्न करनेका काम मुझे सौप कर आपने मुझपर अनुग्रह किया है। इसको करते हुए मै सम्मानित हुआ हूँ, यह मेरी मान्यता है। अध्यक्ष महोदय[3] ने वैसे मेरे लिए कहनेके लिए कुछ भी बाकी नही रखा है। सर चिनुभाईकी दानशीलताकी एक लम्बी तालिका उन्होने कह सुनाई है। इसपर विचार करते हुए मेरे मनमे चट यही खयाल आया कि सर चिनुभाईकी दानशीलता पारसियोकी संसार प्रसिद्ध दानशीलताकी कोटिकी है। सर गिरिजाप्रसादने कहा कि सर चिनुभाईकी दानवृत्ति केवल एक कौम या धर्मके लोगोके लिए ही नही थी, बल्कि सबके लिए थी। अहमदाबाद शहरके सारे निवासी उससे लाभ उठा सके, ऐसी थी। सर चिनुभाईने स्वय जो शिक्षा प्राप्त की और जिसे पाकर उन्होने इतना नाम पाया उसे प्रोत्साहन देनेमे उन्होने कुछ उठा नही रखा। अध्यक्ष महोदयने मुझे स्मरण दिलाया कि पहली बार अहमदाबादमे आनेके अवसरपर मुझे जो मानपत्र दिया गया था उसे प्रदान करनेवाले सर चिनुभाई ही थे।[4] वह प्रसग मेरी आँखोके समक्ष आज भी तरगित हो रहा है। सर गिरिजाप्रसादने सर चिनुभाईकी यह प्रतिमा अहमदाबाद-निवासियोको भेंट की है, और अपनी पितृभक्तिकी थोडी-सी झाँकी हमे दी है। 'थोड़ी-सी झाँकी' मै इसलिए

१. डॉ० एनी बेसेंटका निधन २० सितम्बर, १९३३ को हुआ था।

२. यह भाषण सर चिनुभाई माधवलाल, बैरोनेटकी प्रतिमाका अनावरण करनेके अवसरपर दिया गया था।

३. मणिभाई चतुरभाई शाह, अहमदाबाद नगरपालिकाके अध्यक्ष।

४. देखिए खण्ड १३, पृष्ठ १७।

कह रहा हूँ कि कोई भी पुत्र अपना पितृऋण पूर्ण रूपसे नही चुका सकता। यह बात उन्होंने सत्य ही कही है। हम सभी उनसे आशा रखे और ऐसी आशा रखनेके लिए उन्होने हमे एक कारण भी दिया है — कि जिस प्रकार सर चिनुभाईने कमाया और जिस तरह लुटाया वैसे ही उनके चिरंजीव भी उतनी ही उदारताके साथ अपनी कमाईको लुटाये।

एक महत्त्वपूर्ण अवसरपर मैने कहा था कि धनवानको धन सचित करने और कमानेका अधिकार है। ससारमे साहस तो सदा कायम रहेगा ही। साहस रोका नही जा सकता। इसीलिए मै कहता हूँ कि धनवान पैसा भले ही कमाये, पर उस पैसेका उपयोग और उसका उदारतापूर्वक दान उसे यह समझकर करना चाहिए कि वह पैसा जनताके हितार्थ है। जिन कई आशाओंके आसरे मै जी रहा हूँ, उनमे से मेरी एक आशा यह भी है कि अपने देशमे अमीर और गरीबके बीचमे संघर्ष न हो, कलह-क्लेश न बढ़े और दोनो ही अपने-अपने धर्मको समझकर उसका पालन करते रहे। आज दुनियामे पूँजीवाद और श्रमजीवी लोगोंके बीच या अमीरो और गरीबोंके बीच एक भारी सग्राम छिड़ा हुआ है। ईश्वर इस लड़ाई-झगड़ेसे हमारे देशकी रक्षा करे। परन्तु सिर्फ एक मनुष्यके सामना करनेसे क्या होता है? यह आशा तो तभी सफल हो, जब इस आदर्शका हममे से अनेक मनुष्य सिचन करें। इस प्रसगपर गिरिजाप्रसादके बहाने मै अहमदाबादके धनिकोसे कहना चाहता हूँ — क्योकि ईश्वरकी कृपासे यहाँ अनेक धनवान है — कि स्वर्गीय सर चिनुभाई जो दानशीलताकी विरासत छोड़ गये है, उसमे यहाँके धनिकोंको अधिकाधिक वृद्धि करनी चाहिए। मैने जो आदर्श बताया है, उसकी पूर्तिका प्रयत्न करना धनिकोंका काम है। मेरी यह एक महत्त्वाकांक्षा है कि अहमदाबाद भारतके सामने, ससारके सामने एक आदर्श उपस्थित करे।

इस प्रतिमाके अनावरणका शुभ कार्य करनेसे पूर्व मै एक बातका निवेदन करना चाहूँगा। यह प्रतिमा तो कितने ही दिन पूर्व तैयार हो चुकी थी लेकिन इसका अनावरण सरदार करें या मै करूँ, आप सबके इसी मोहके कारण यह कार्य इतने दिनों रुका रहा।[1] इसी बीच एकाएक मै जेलसे छूट गया और मुझसे यह कार्य करनेको कहा गया। मै इससे इनकार न कर सका। मैं इसे ईश्वरका अनुग्रह मानता हूँ कि इस शुभ कार्यको करनेका सुप्रसग मुझे दिया गया। आप सब भाई-बहनोका आभार तो मै क्या मानूँ? आप सबने तो यहाँ आकर सर चिनुभाईके प्रति आपके हृदयमे जो सम्मान है उसे अभिव्यक्त किया है। अहमदाबाद के नागरिकोने शहरकी जो सेवा की है उनके प्रति आपके मनमे सम्मान होना ही चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि अहमदाबादके निवासी — धनिक और गरीब — सब सुखी हों।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १-१०-१९३३

१. २२-९-१९३३ के *बॉम्बे क्रॉनिकल* में यहाँ इस प्रकार लिखा है: महात्माजीको सरदार वल्लभभाईकी अनुपस्थिति बहुत ज्यादा महसूस हो रही थी और उन्होंने कहा कि यदि यह महान और महत्त्वपूर्ण कार्य उनके हाथों सम्पन्न होता तो ज्यादा अच्छा रहता।

१३. भाषण: अहमदाबादमें – २[1]

२१ सितम्बर, १९३३

आज प्रात काल ही आपने मुझसे एक शुभ कार्य करवाया और मुझे सम्मान दिया। अब यह दूसरा शुभ कार्य करवा रहे है। मै इन दोनो सम्मानोके लिए नगर-पालिका और अहमदाबादके नागरिकोका आभार मानता हूँ। इस प्रसगपर मै थोड़ी कठिनाईका अनुभव कर रहा हूँ। सर्वप्रथम तो मै उस सूचनाके सम्बन्धमे ही कह देना चाहता हूँ जो भाई रसिकलालने अभी दी है। मैने आज प्रात काल ही सुना कि इस पुस्तकालयके लिए मेरे नामका उपयोग किये जानेका विचार है। पर ऐसी एक भी सस्था नही है जिसके साथ अपना नाम जोड़नेकी इजाजत मैने दी हो। मैने तो यह निश्चय ही कर लिया है कि ऐसा मुझसे नही हो सकता। जिन्होंने इसके लिए दान दिया है उनसे क्षमायाचना करते हुए और आपके दिलको बिना दुखाये, यदि मै कह सकूँ तो मै कहना चाहूँगा कि जबसे मैने सार्वजनिक जीवन बितानेका इरादा किया था जबसे मुझे सहज ही यह सद्भाग्य प्राप्त हुआ, उस दिनसे जिस-जिसको मै परामर्श दे पाया हूँ उन्हे मैने अपने दानके साथ उनका खुदका या उनके अपने बड़ोका नाम जोड़नेसे रोका है, अथवा रोकनेका प्रयत्न किया है। दानके साथ अपना या अपने पूर्वजोका नाम जोडना पाप है, मै ऐसा नही कहना चाहता। परन्तु लोगोमे ऐसी प्रथा चल पडी है, उन्हे इसका लोभ रहता है और इसके परिणाम बहुत ही हास्यास्पद होते है, यह बात मैने देखी है। इसीलिए जिन्हे मै रोक पाया हूँ, रोकता आया हूँ। इसमे मुझे बहुत हदतक सफलता भी मिली है, पर जहाँ सफलता नही मिल पाई है उस प्रसगमे मैने अपनी सहमति भी व्यक्त की है, और इस प्रकारके दान मैने स्वीकार भी किये है। मै वह सब अपनी बड़ाईका गान करने या दूसरोके दोष बतानेकी दृष्टिसे नही कहता, परन्तु इसके जरिये मेरी इच्छा है कि मै जो-कुछ करता-कराता आया हूँ उसके विरुद्ध कुछ करनेका आग्रह मुझसे न किया जाये। मुझमे झूठा विवेक नही है। मेरा अपना एक जीवन-मन्त्र है और उसका अवलम्बन करते हुए मुझसे मिथ्या विवेकका कार्य बन ही नही सकता।

एक दूसरा सबल कारण भी है। ये जो किताबे दी गई है इनके लिए मै तो केवल निमित्तमात्र हूँ। इनमे मेरा कोई स्वामित्व नही है। आश्रममे भी कोई वस्तु ऐसी नही जिसपर मेरा अधिकार हो। मै तो ट्रस्टी भी नही हूँ। मेरे जीवनमे तो यह भी रहा है कि मुझे उस वस्तुका ट्रस्टी भी नही रहना है जो कभी मेरी अपनी रही हो। मुझे तो यह दान करनेका अधिकार भी नही था। पर जो-कुछ नैतिक अधिकार मुझे है उसका उपयोग करते हुए मै ट्रस्टियों और आश्रमवासियोको

१. माणेकलाल जेठालाल पुस्तकालयके शिलान्यासके अवसरपर।

समझा पाया। अतः मैं तो वाहन-मात्र हूँ, या कहे पोस्ट ऑफिस हूँ। मैंने तो आश्रम-का लिफाफा-भर नगरपालिका तक पहुँचाया है। विद्यापीठकी भी यही बात है। उसकी पुस्तके मैं नही दे सकता। यह तो काकासाहबका या विद्यापीठकी समितिका अधिकार है। यों विद्यापीठके पुस्तकालयके साथ आश्रमके पुस्तकालयको मिला देनेका विचार था ताकि आश्रमके पुस्तकालयका ठीक उपयोग हो सके। आश्रममें तो मजदूरीका काम ठहरा। फिर वहाँ कोई वैतनिक ग्रन्थपाल नही रखा जा सकता। अतः विचार था कि जब शान्तिका समय आयेगा और विद्यापीठ (सरकारसे) वापस लेंगे तब दोनों पुस्तकालय एक कर देंगे। और अब जबकि आश्रमका पुस्तकालय नगरपालिकाको दे दिया गया तो काकासाहबका पत्र आया कि विद्यापीठकी इमारतों और पुस्तकालयका कब्जा हमारे पास नहीं है, पर यदि सरकार पुस्तकें दे दे तो वे भी नगरपालिकाको दे दी जायें। इस प्रकार विद्यापीठकी पुस्तकें भी नगरपालिकाको दे दी गई। अतः इन दोनों ही के लिए मैं कोई निमित्त नही। मै इनका श्रेय नहीं ले सकता।

तीसरा कारण भी दूं। मेरे नामके साथ ज्ञानका क्या सम्बन्ध? मेरे नामके साथ तो मजदूरीका अवश्य सम्बन्ध है। अतः आप मुझे इस भारसे मुक्त रखें। इसके एवजमें क्या करना अधिक ठीक होगा, यह बात मैं यहाँ नही कहना चाहता। आज प्रातःकाल ही मैंने अध्यक्ष महोदय और बल्लुभाईके साथ चर्चा की थी और यदि उन्हें मेरा सुझाव अच्छा लगेगा तो वे उसे आपके सम्मुख पेश करेंगे, पर मुझपर तो आप दया ही करना।

अब मैं एक भिन्न विषयपर आता हूँ। सरदार आज उपस्थित नहीं हैं, इस सम्बन्धमें मैंने सुबह भी कहा था। सरदार और मैं लगभग १८ वर्षोंसे साथ काम करते आ रहे हैं। दिन-ब-दिन हमारे बीच ऐक्य बढ़ता आया है। हमें शास्त्र शिक्षा देते हैं कि पति-पत्नी शरीरसे भले ही भिन्न हों, पर दोनोंकी आत्मा तो एक ही है। सरदार और मेरे बीच भी यही नियम लागू होता है। आपसे मैं यह फैसला तो नही करवाना चाहता कि हममें पति कौन है, और पत्नी कौन। हम अधिक निकट तो इस बार ही आये। काममें साझेदार होते हुए भी हम निश्चिन्ततापूर्वक कभी साथ नही बैठ पाये। खेड़ामे हम महीनों साथ रहे, पर वहाँ बिना काम कभी वल्लभभाई मेरे पास आये हों ऐसा अवसर याद नहीं आता। दूसरे मोर्चोंमें भी कामकी हदतक ही वे थोड़े समयके लिए आते और चले जाते थे। यह तो इस बार जेलमें ही पहली बार हम बिना किसी कामके एकसाथ रहे, और इसलिए दोनों ही खूब खुले। रातमे भी खाटें पास-पास डालकर सोते थे और सुख-दुःखकी बातें किया करते थे। वैसे दुःख तो हम आप लोगोंपर उड़ेल कर चले गये थे, लेकिन कहनेमें चूंकि ऐसा ही आता है इसलिए कह रहा हूँ कि सुख-दुःखकी बाते किया करते थे। वल्लभ-भाईको तो नीदमें भी हिन्दुस्तानके ही बारेमें सपने आते। वे तो अत्यन्त कुशल व्यक्ति है — "*यत्पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे*" मे विश्वास करनेवाले। जो अहमदाबादके लिए वही गुजरातके लिए और जो गुजरातके लिए वही हिन्दुस्तानके लिए और जो हिन्दुस्तानके लिए वही सारे संसारके लिए — ऐसा कुछ सामान्य नियम उन्होंने बना लिया था।

उन्हे अहमदाबादके स्वप्न भी आया करते। मेरी नगरपालिका, मेरा वाटरवर्क्स — भले ही बनाया उसे रणछोडभाईने हो — पर सरदार उसके वारिस जो ठहरे! क्या गिरिजाप्रसाद कह सकते है कि वाटरवर्क्स उनका है? जब रणछोड़भाईने उसका कब्जा छोड दिया तो वह अहमदाबादका हो गया अर्थात् वल्लभभाईका हो गया। इस प्रकार आप देखेंगे कि अहमदाबादके प्रति सरदारका मोह कितना है। वाडीलाल अस्पताल[1] के विषयमे तो मै कुछ जानता नही। वल्लभभाईके जो खास काम होते थे उनमे मै दखल नही देता था। मुझे तो विश्वास ही होता था कि वल्लभभाई काम ठीक ढगसे चला रहे है। अस्पतालके सम्बन्धमे मुझे जेलमे विस्तारपूर्वक जाननेको मिला। यद्यपि ऐसा कहना छोटे मुँह बडी बात होगी — क्योकि कहाँ ईश्वर और कहाँ मनुष्य? पर जैसा कलापी[2] ने कहा है यदि वैसे कहा जाये तो "जहाँ-जहाँ मेरी नजर पडती है वहाँ-वहाँ अहमदाबादमे सरदारकी ही कृतिके दर्शन करता हूँ।" अतः कीर्तिका यह बोझ भी वे ही उठा सकते है, वे समर्थ है। मै यह बोझ नही उठा सकूँगा।

यह नगरपालिका भी धन्यवादकी पात्र है जिसे सरदार-जैसा अध्यक्ष मिला है। अहमदाबादके म्युनिसिपल-जीवनका प्रारम्भ एक धनवानके प्रयत्नोसे हुआ। फिर इसे एक ऐसा अध्यक्ष मिला जो फकीर था। मै उम्मीद किये था कि अहमदाबाद एक सुहावना नगर बने — सुहावना यानी मेरे अर्थोमे। यहाँके स्त्री-पुरुष सुन्दर हो, बागबगीचे हो, बाहरी सौन्दर्य तो होना ही चाहिए परन्तु मै भीतरी सौन्दर्य भी चाहता हूँ। इस प्रकार अहमदाबाद हर दृष्टिसे आदर्श शहर बने और अहमदाबादकी नगरपालिका भी आदर्श बने — सरदार यही स्वप्न साकार करना चाहते है। इसे साकार बनानेकी दिशामे उन्होने अपना हाथ भी बँटाया है; मै भी इसमे उनका साझेदार हूँ। मैने जबसे अहमदाबादमे रहनेका विचार किया तभीसे मै यह स्वप्न देखता रहा हूँ कि अहमदाबादमे धन है, यहाँ व्यवहार-कुशलता है, गुजरातकी यह राजधानी है और मैने यहाँ जन्म लिया है, अत. अपने सार्वजनिक जीवनका प्रारम्भ यहीसे करूँगा। मैने यही सोचकर यहाँ रहना शुरू किया। तभीसे यह स्वप्न तो मेरा भी रहा है कि अहमदाबादमे एक बढियासे-बढ़िया पुस्तकालय हो और यहाँ दूसरी भी अनेक सस्थाएँ हो जिससे कि यहाँ आकर बसनेके लिए लोगोका मन हो। अहमदाबादकी आबोहवा खराब है, ऐसा न माने। एक बार मेरा मसूरी जानेका विचार चल रहा था, उस समय डॉ० कानूगाने कहा कि अहमदाबाद ही मसूरी है। और इसके बाद मैने मसूरी जानेका विचार छोड़ ही दिया। खराब तो हम स्वय ही है। हमने अहमदाबादको गन्दा कर छोड़ा है। डॉ० हरिप्रसाद[3] ने इसे साफ करनेके लिए अत्यधिक परिश्रम किया। तो भी मै आज यह प्रमाण-पत्र नही दे सकता कि अहमदाबाद एक स्वच्छ शहर है। यहाँ खुशबूके बदले बदबू छूटती है। स्वय डॉ० हरिप्रसादको यदि पुनः स्वयसेवक और सेविकाएँ मिल सके तो शहरकी घनी गलियाँ साफ की जा सकती।

१. वाडीलाल साराभाई अस्पताल।

२. सूरसिंहजी तख्तसिंहजी गोहिल, गुजरातके सुप्रसिद्ध कवि।

३. डॉ० हरिप्रसाद देसाई।

पुस्तकालयोंके विषयमें मेरे अपने कुछ आदर्श हैं, उन्हें मैं आपके सम्मुख रख देना चाहता हूँ। इसके लिए आप जो इमारत बाँधें उसे इस प्रकार बनायें कि जैसे-जैसे पुस्तकालय विकसित होता जाये इसकी शाखाएँ बढ़ती जायें और साथ ही इमारतमें भी विस्तार किया जा सके। किन्तु ऐसा करते हुए यह न लगे कि मकानमें और कमरे जोड़े गये हैं और उसके कारण वह टेढ़ा-मेढ़ा प्रतीत हो। इस पुस्तकालयमें भाषण हों, विद्यार्थी आकर शान्तिसे अध्ययन कर सकें और पढ़ सकें तथा शोध-कार्यमें लगे हुए शिक्षार्थी भी बैठकर अध्ययन कर सकें — आप इन सुविधाओंको ध्यानमें रखकर ही इमारत बाँधें। हमारा आदर्श तो यह होना चाहिए कि दुनियामें बड़ेसे-बड़ा और अच्छेसे-अच्छा पुस्तकालय जैसा हो सकता है इसे हम वैसा बनायें। ईश्वर ऐसा बल आपको देगा ही। काकासाहबने सूचित किया है कि विद्यापीठमें भी साधारण-सा ही सही, एक संग्रहालय तो है ही; उसे भी पुस्तकालय-भवनमें ही रख लिया जाये। गुजरातमें कलाका अभाव नहीं है। भद्रकी जालीकी जोड़ सारे संसारमें नहीं है। अहमदाबादकी कारीगरीकी होड़ क्वचित ही की जा सकती है। अहमदाबादके कारीगरोंकी नक्काशी देखकर तो मैं भौंचक्का रह गया। मैंने इन कारीगरोंको अंधेरी कोठरियोंमें जीवन बिताते देखा है। पर कलाके विशेषज्ञ प्रोत्साहनकी राह देखने नहीं बैठते। संग्रहालय तो इसी मकानमें खड़ा हो सकता है बशर्ते कि कोई ५० हजार रुपया और दे दे।

आप कुछ ऐसा करें कि इस पुस्तकालयका दिनोंदिन विकास होता जाये। इस कार्यके लिए यदि एक-दो व्यक्ति अधिक समय दे सकें तो अच्छा हो। ग्रन्थपाल कोई व्यापारी न नियुक्त किया जाये जो कि केवल पुस्तकोंकी सारसँभाल ही कर सके। ग्रन्थपाल तो ऐसा नियुक्त करना कि जिसे पुस्तकोंकी जानकारी हो और वह उनका चुनाव कर सके। इस कार्यके लिए यदि कोई स्वयंसेवक न मिल सके तो अधिक रुपया खर्च करना। हरिजनोंको निःशुल्क प्रवेश देना और उन्हें पुस्तकें भी ले जाने देना। यदि उनके हाथोंसे पुस्तक खराब हो जाये या चोरी जाये तो भी सहन कर लेना। इन लोगोंका तो गरीबोंकी श्रेणीमें भी अन्तिम स्थान है। यदि ऐसी रियायत गरीब-मात्रके लिए दी जा सके तो देना। इससे तो आपकी शोभा ही बढ़ेगी।

भाई रसिकलालने जो विनती आपसे की है वही मेरी भी है कि पुस्तकालयकी समितिका गठन आप बराबर करें। इस समितिमें विद्वान लोग हों; इससे पुस्तकालयको जीवित बनाये रखनेमें सहायता मिलेगी। समितिमें केवल व्यवहार-कुशल व्यक्ति ही हों, यह खयाल न रखना। पुस्तकालय कैसा हो और वह आदर्श कैसे बनाया जा सकेगा, यह बात तो विद्वान लोग ही समझ सकेंगे। कार्नेगीने अनेक पुस्तकालयोंको दान दिया। उसने जो शर्तें रखीं, अनेक विद्वानोंने उन्हें मान लिया; परन्तु स्कॉटलैंडके विद्वान उसके वशीभूत न हुए। उन्होंने कार्नेगीसे स्पष्ट कह दिया कि यदि आप कुछ शर्तोंके आधारपर ही पैसा देना चाहते हैं तो हमें आपका दान नहीं चाहिए। हमें तो केवल किताबें चाहिए, और आपको किताबोंकी क्या जानकारी है? कलाके विशेषज्ञ अपनी कलाको बेचने नहीं जाते। गुजरातमें बड़ी अमूल्य किताबोंका भण्डार पड़ा है; वह

आज बनियोके हाथमे पडा है। जैनियोका सुन्दर पुस्तक भण्डार है, पर वह केवल रेशममे बँधा पड़ा है। इन पुस्तकोको देखकर मेरा हृदय रो पड़ा। ये पुस्तके तो उन अज्ञानी बनियोके हाथमे पड़ी है जो केवल पैसा पैदा करना जानते है; इनका उपयोग भला क्या हो सकता है? इनके हाथो तो जैन-धर्म भी निष्प्राण होता जा रहा है। क्योकि इन्होने जैन-धर्मको भी पैसेके ही ढाँचेमे उतार दिया है। भला धर्म भी कही पैसेके ढाँचेमे ढाला जा सकता है? पैसेको अवश्य धर्मके ढाँचेमे ढलना चाहिए। इसीलिए मै आपसे कहता हूँ कि आप ऐसा कुछ उपाय करे कि पुस्तकालयकी समितिमे विद्वानोका समावेश हो। भगवान करे पुस्तकालयका विकास हो।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १-१०-१९३३

१४. जापानसे

सर लल्लूभाई सामलदास जापानसे हरिजन-सेवा-कार्यके लिए रु० १६९९-११-० लाये थे। यह रकम मुझे यरवडा जेलमे प्राप्त हुई थी, लेकिन दाताओकी सूचीवाला पत्र मुझे जेलसे बाहर आनेके बाद दिया गया। इसलिए मै उससे पहले प्राप्ति स्वीकार नही कर सका था। कोबेके इडियन सिल्क मर्चेण्ट्स एसोसिएशनकी ओरसे यह रकम आई है। चेकके साथवाले पत्रमे बयालीस दाताओकी नामावली है। इनमे से अधिकाश सिन्धी व्यापारी है। इसके लिए मै उन्हे धन्यवाद देता हूँ, और साथ ही एक चेतावनी भी — वह यह है कि मै उनसे इससे कही अधिककी आशा कर रहा था। दक्षिण आफ्रिकाके अपने सिन्धी मित्रोकी दानशीलताको मै जानता हूँ। जापानमे भी वैसे ही उदार सिन्धी सज्जन होगे। अत. इस चेकको तो मै आगे मिलनेवाले दानका बयाना ही समझूँगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २३-९-१९३३

१५. एक और नरक

पाठकोको याद होगा कि कुछ महीने पहले मैने इलाहाबादकी भगी बस्तियोकी दुर्दशाकी ओर जनताका ध्यान खीचा था।[1] अब प्रोफेसर मलकानी[2] ने दिल्लीकी बस्तियोके अपने निजी अनुभव लिखकर मुझे भेजे है। ये 'हिन्दुस्तान टाइम्स'मे प्रकाशित हुए है। इन अनुभवोसे मालूम होता है कि इलाहाबादकी बस्तियोसे दिल्लीकी हरिजन-बस्तियोकी हालत कुछ अधिक अच्छी नही है। अकथनीय गन्दगी और फल-स्वरूप वहाँके निवासियोंकी अधोगतिकी जो कहानी वहाँ है वही यहाँ भी है। दिल्ली

१. देखिए खण्ड ५४, पृष्ठ ५१५-१७।
२. एन० आर० मलकानी।

निवासियोंका स्वास्थ्य अधिकतर जिन भंगियोंकी सेवापर निर्भर करता है वे ही लोग बिना खिड़कियोंकी और अंधेरी कोठरियोंमें रहते हैं। प्रोफेसर मलकानीके अन्तिम अंशको ही ज्यों-का-त्यों मैं यहाँ उद्धृत करता हूँ[1]:

जबतक हम ऐसे-ऐसे नारकीय स्थलोंको सहन करते रहेंगे और जबतक हम समाजके अत्यन्त उपयोगी सेवकोंके साथ इस प्रकारका व्यवहार करते रहेंगे जैसे वे मनुष्य ही न हों, तबतक गन्दगी और अस्वच्छतासे उत्पन्न बीमारियोंसे हम सदा दुःख ही भोगते रहेंगे, इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं। जिस प्रकार सड़े हुए अंगका सारे शरीरपर असर पड़ता है और उसे सड़ा देता है, वैसे ही समाजके सड़े हुए अंगके समान भंगियोंकी यह दुर्दशा सारे समाजको सड़ाकर रहेगी। इसलिए यदि हम जल्द ही जाग्रत न हुए और हमने भंगियोंकी दशाको सुधारनेके तात्कालिक उपाय ग्रहण न किये, तो ईश्वरका कोप हमपर पड़े बिना नहीं रहेगा। हरिजनोंके लिए कायदेकी अच्छी आवास-व्यवस्था करनेका प्रश्न केवल हिन्दुओंकी ही नहीं बल्कि सारे समाजकी समस्या है। इसीलिए इस सम्बन्धमें सुधारकों और कट्टर सनातनियों, हिन्दुओं और अहिन्दुओंमें कुछ भेद नहीं रहना चाहिए। दिल्लीकी नगरपालिकाका ध्यान अब उसकी बस्तियोंकी हालतकी ओर खींचा जा चुका है; अतः मुझे आशा है कि वह इस अपमानजनक दुर्दशाको दूर करनेके लिए अवश्य ही तत्काल कोई क्रियात्मक उपाय ग्रहण करेगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-९-१९३३

१६. सच है, तो भयानक है

दयानन्द-दलितोद्धार-सभाका एक सम्मेलन चम्बामें हुआ था। उसके प्रस्तावोंमें से मैं निम्नलिखित अंश लेता हूँ[2]:

यह विश्वास करना कठिन है कि भारतका कोई भी राज्य अमुक जातिके लोगों द्वारा अमुक कार्य को करनेसे इनकार करनेको अपराध समझता है। मुझे आशा है कि रियासतके अधिकारियोंके पास इन प्रस्तावोंमें उल्लिखित दोषारोपणोंका प्रबल उत्तर होगा, अथवा सम्मेलनकी आदरपूर्वक की हुई प्रार्थनाको मानकर रियासत उन प्रथाओं का त्याग कर देगी, जिनकी चर्चा सम्मेलनने की है। मैं देखता हूँ कि सम्मेलनमें जिन लोगोंने भाग लिया था, वे शिक्षित और उत्तरदायी आदमी हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-९-१९३३

१. यहाँ नहीं दिया गया है। हरिजनोंकी ये बस्तियाँ कितनी गन्दी थीं और किस प्रकारके नारकीय वातावरणमें हरिजनोंको रहना पड़ता था, इसका करुण चित्रण इस अंशमें किया गया था।

२. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें हाली तथा अन्य जातियोंके लोगों द्वारा मुर्दा पशु उठाने और बेगार करने तथा नाग देवतापर बकरेकी बलि चढ़ानेसे इनकार करनेके कारण किये जानेवाले अत्याचारके विरुद्ध पास किये गये प्रस्तावका पाठ दिया गया था।

१७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२३ सितम्बर, १९३३

असंशोधित

प्रिय जवाहरलाल,

मैं कल जाकर तुम्हे पत्र लिखनेकी स्थितिमे हो सका। तीसरे पहर १ बजे मेरी जाँच-पड़ताल पूरी हुई थी। मैंने कस्तूरभाई, श्रीमती हठीसिह और शकरलालसे, जो कि उस परिवारको अच्छी तरह जानते है, बात की है। मुझे जो अनुभव हुआ उससे मैं पूरी तरह सन्तुष्ट नही हूँ। मुझे स्पष्टवादिताकी कमी अखरी है। इसके बावजूद मेरे पास प्रस्तावित विवाहके विरुद्ध कहनेको कुछ नही है। नये वातावरणमें कृष्णा[1] काफी खुश रहेगी। इससे बढ़कर तो यह है कि उसने इस विवाहका निश्चय कर लिया है। वह राजाकी माँके साथ पत्र-व्यवहार करती रही है। उसके मनपसन्द व्यक्तिका प्यारका नाम राजा बाबू है। कृष्णाके नाम कुछ सम्पत्ति वे लोग छोडे, इसका तो कोई सवाल ही नही है। बेशक मैंने उन लोगोको यह स्पष्ट कर दिया कि कृष्णाके नाम कुछ सम्पत्ति छोड़नेका सुझाव शुद्ध रूपसे मेरा है, और यह भी कि इसके बावजूद इस बातको विवाहकी शर्त बनानेका मेरा कोई इरादा नही है। मैंने उनको बतलाया कि मैंने यह प्रस्ताव इसलिए रखा है, क्योकि मै सभी लड़कियोके मामलेमे, जहाँ सम्भव हो, ऐसी व्यवस्था करनेमे विश्वास रखता हूँ। यह विवाह यदि अन्तिम रूपसे तय होना है तो तुम्हे श्रीमती हठीसिहको अहमदाबादके पतेपर पत्र लिखकर निश्चित रूपसे प्रस्ताव करना होगा, और वह तुम्हे अपनी स्वीकृति भेज देंगी। वह इस बातके लिए बिलकुल तैयार है कि कृष्णा जितनी जल्दी चाहे, विवाह सम्पन्न कर दिया जाये। वह चाहती है (और मैं उनसे सहमत हूँ) कि सगाई और विवाह एकसाथ ही कर दिया जाये। अब तुम उनके लडके (हठीसिह) को पत्र लिख सकते हो और जब चाहो तब बुला सकते हो।

आशा है माँ और कमला[2] अब पहलेसे बेहतर है।

मैं आज सुबह वर्धा पहुँचा। डाक्टरोने जाँचमे ब्लड-प्रेशरकी शिकायत पाई है, लेकिन इसके सिवा मुझे कोई तकलीफ नही है। तथापि अबसे तीन सप्ताह तक, यानी अगले १५ अक्टूबर तक मैं कही आऊँ-जाऊँगा नही।

१. जवाहरलालजीकी छोटी बहन।

२. जवाहरलालजीकी पत्नी।

मथुरादास[1] बम्बईमें हैं। बा, मीराबहन और प्रभावतीके अलावा चन्द्रशंकर[2] और नायर मेरे साथ हैं। प्रभुदास[3] भी मेरे साथ है।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३, सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१८. तार: जवाहरलाल नेहरूको

वर्धागंज
२३ सितम्बर, १९३३

जवाहरलाल नेहरू
लखनऊ

तुम्हारा तार मिला। आज पत्र[4] डाला है। जाँच-पड़ताल कल समाप्त कर ली। परिणाम कुल मिलाकर सन्तोषजनक। औपचारिक रूपसे विवाहका प्रस्ताव करते हुए तुम श्रीमती हठीसिंहको लिखो। माँ पहलेसे अच्छी है, इसकी खुशी है।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१९. बातचीत: हरिजन-कार्यकर्त्ताओंसे[5]

[२४ सितम्बर, १९३३ से पूर्व][6]

कितने ही सेवक समझते हैं कि जबतक वे स्वतन्त्र-रूपसे स्वयं नहीं कमा सकेंगे, तबतक सेवा-कार्यमें उनका ठीक मूल्य नहीं आँका जा सकता। इन सेवकोंसे मैं कहता हूँ कि जितना तुम बाहर कमा सकते हो, यदि उससे कम लो तो तुम सुरक्षित हो,

१. मथुरादास त्रिकमजी।
२. चन्द्रशंकर प्राणशंकर शुक्ल, *हरिजनबन्धु* के सम्पादक।
३. छगनलाल गांधीके पुत्र।
४. देखिए पिछला शीर्षक।
५ और ६. यह बातचीत "ईश्वरनो आधार के पैसानो" शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी। यह और इससे अगला शीर्षक २४-९-१९३३ के *हरिजनबन्धु* में प्रकाशित "साप्ताहिक पत्र" से लिया गया है।

और जितना बाहर मिलता है उससे अधिक लो तो सुरक्षित नही हो। फिर सेवकोको पैसा जोड़कर करना ही क्या है?

पहले भाईने कहा : इन भाईके पास दस हजार रुपया है। मेरे पास तो एक पाई भी नहीं है। मै अगर बीमार पड़ जाऊँ तो मुझे किसी अस्पतालकी ही शरण लेनी पड़े।

और वहाँ बादशाहकी तरह तुम्हारी सेवा होगी। मुझे कभी यह प्रतीत नही होता कि मैंने जो दिया है वह गँवाया है। मैं तो कहता हूँ कि मै जगतमे सबसे बडा धनी आदमी हूँ। मुझे पैसेका अभाव कभी खला नही।

दूसरे भाईने कहा : सेवा-कार्यमें भी खर्च करनेकी जरूरत पड़नेपर इसमें से पैसा उठाया जाये, इसीलिए यह रकम रखी है।

पैसा हो तो खर्चनेकी जरूरत जान पडती है, इसलिए खर्च किया जाता है। परन्तु तुम खर्चनेवाले कौन हो? जब तुमने उसपर से अपना हक छोड दिजा तो फिर तुम्हे उसे खर्च करनेका क्या अधिकार है?

पहले सज्जनने कहा : मै पैसा दे सकता हूँ—यह जो मोह है उसे छोड़ देना चाहिए।

इसमे जो सूक्ष्म अहकार भरा हुआ है, वह मनुष्यको खाये जाता है। जो अहकार प्रत्यक्ष दिखाई देता है, उसे तो जीता जा सकता है, पर सूक्ष्म अहकारपर काबू पाना कठिन है। इससे अनेक मनुष्योका भारी अध पतन हुआ है। लोगोकी दृष्टिमे तो जो मनुष्य पैसेवाला होते हुए भी, अपने लिए पैसेका उपयोग नही करता वह साधु पुरुष समझा जाता है। उसके विषयमे कहा जाता है कि वह अपना पैसा जनताके हितार्थ लगा रहा है। तो फिर वह उसको जन-सेवामे अर्पित हीं क्यो न कर दे? मैंने यह धन्धा किया है, इसलिए कहता हूँ। मै मानता था कि मै जो वकालत करता हूँ वह जनताके लिए करता हूँ। फिर मनमे आया कि ऐसा ही है, तो वकालतमे खर्च होनेवाला सारा समय जनताके ही काममे क्यो न लगाया जाये? इसलिए वकालत छोड दी। जो पैसा था वह जनताके काममे लगाने लगा। बादमे सोचा कि वह पैसा जनताको ही क्यो न सौप दिया जाये? फिर मनमे यह बात आई कि पैसा दिया जाये, तो उसका ट्रस्ट क्यो न बनाया जाये? ट्रस्ट बनाया गया, लेकिन मैंने अपनेको उससे अलग रखा। फीनिक्सके ट्रस्टमे मै नही रहा। आश्रमके भी ट्रस्टमें मैंने अपना नाम नही रखा। मेरा नैतिक अधिकार ही वहाँ रहा। ट्रस्टी चाहे तो मुझे निकाल सकते है। मै अपने अनुभवसे किसी नतीजेपर पहुँचनेवाला आदमी रहा हूँ, इसलिए एकके बाद दूसरी बातका अनुभव करता गया। जबसे मै हिन्दुस्तानमे आया तभीसे मै यह कहता आया हूँ। तुम्हारे पास इतनी बडी रकमका होना असह्य लगता है।

उस भाईने कहा : जरूरतके वक्त माँगनेके लिए जाना पड़े, यह तो कठिन मालूम होता है।

कठिन नही लगना चाहिए। माँगनेके लिए जाना कठिन मालूम होता है, यही मुझे खलता है। इससे क्या होता है? या तो ऐसा जीवन बना ले कि पैसेकी जरूरत

ही न पड़े अथवा जरूरत पड़ ही जाये तो फिर माँगनेमे शर्म नही आनी चाहिए। अपने देशमें ५६ लाख आदमी भटकते फिरते है, उन्हे जब खानेको मिल जाता है तो तुम लोगोंको, जो देशको चौबीसों घंटे दे रहे हो, अवश्य ही भोजन पानेका अधिकार है। हमारे पास दो रास्ते है — एक तो यह है कि आवश्यकता पड़नेपर माँग लें और दूसरे, जरूरत पड़े तो भी न माँगने जायें। परिणाम क्या होगा? मर जायेंगे, बस यही न? ईश्वर हमसे इससे अधिक नही माँगता। इसीमें सच्ची स्वतन्त्रता है। पैसेकी परतन्त्रता हम लोग किसलिए भोगें? पैसे पड़े है उसकी मदद लें, इसकी अपेक्षा ईश्वरसे सहायता क्यों न ली जाये? मेरे पास तो यह कसौटी है। कई वर्ष हुए, अपने भाईके कहनेपर मैंने बम्बईमें दस हजारका बीमा कराया था। बादमे आफ्रिकासे मैंने रेवाशंकरभाईको पालिसी रद कर देनेको लिखा।[1] सात वर्षतक जो पैसे भर चुका था, उन्हें भी जाने दिया। मैंने सोचा कि पैसेपर भरोसा रखनेकी अपेक्षा ईश्वरपर भरोसा क्यों न रखा जाये? मैंने मनमे कहा, तुझे जनताकी सेवा करनी है या अपनी? जनताकी सेवा करनी हो तो फिर तेरे पास पैसे किसलिए चाहिए? हमारे बीच कुछ तो अकिंचन जन होने ही चाहिए।

जब वह भाई जा रहा था, गांधीजीने कहा:

यह सब जो कहा इसके लिए, भाई, माफ करना। परन्तु यदि मै न सुनाता, तो फिर कौन सुनानेवाला था?

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २४-९-१९३३

२०. अपील: प्रार्थना-सभामें[2]

[२४ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

इस प्रार्थना-सभामे आप जो भाई-बहन आये है, मै उन सबसे कहना चाहता हूँ कि यदि सरकार मुझे स्वतन्त्र रहने देगी तो मै मुख्य रूपसे हरिजन [उद्धार]का काम करना चाहता हूँ। अतः हरिजनोंके लिए भिक्षा माँगना मेरा धर्म है। जो भाई-बहन प्रार्थनामे आते है यदि वे चाहें तो अपनी शक्तिके अनुसार कुछ लेते आयें। इससे दो अर्थ सिद्ध होते है। हरिजनोंके लिए कुछ पैसा मिल जाता है और साथ ही इस बातका अन्दाज भी लग जाता है कि हरिजन-सेवाके निमित्त कितने लोग मदद देनेवाले है और इस कार्यमें दिलचस्पी लेनेवाले कितने लोग है। जिन्हे यह कार्य पसन्द नही है उनसे तो मै कौड़ी भी नही लेना चाहता। और जो केवल मेरे

१. देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ २००-२।
२. यह "भिक्षानी झोळी" शीर्षकसे प्रकाशित हुई थी।

निमित्त ही देने हैं वह तो निरर्थक ही है। अतः मेरी इच्छा है कि इस कार्यमे वे लोग ही पैसा दे जिन्हे इस प्रवृत्तिमे श्रद्धा हो।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २४-९-१९३३

२१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२४ सितम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

प्रस्तावित विवाह-सम्बन्धके बारेमे मेरी आज जमनालालजीके साथ बातचीत हुई। वह उस परिवारको भली प्रकार जानते लगते है। उनका निश्चित मत है कि कस्तूरभाईको छोड़कर शेष परिवार जितना सम्पन्न दिखाई पडता है उतना है नही। उनकी तो यहाँ तक राय है कि वे लोग शायद अभाव-पीड़ित है। मैंने सोचा कि तुम्हे यह खबर दे दूँ। वह भी चाहते है कि उनकी राय मै तुम्हे बता दूँ। लेकिन उनका विचार है कि कृष्णाको यह जान लेना चाहिए। जहाँतक मै देख सकता हूँ, जबतक कृष्णाको लड़केमें निश्चित रूपसे कोई दोष नही दिखाई पड़े तबतक अन्य किसी बातका उसके निर्णयपर प्रभाव नही पड़ेगा। और वह इसमे बिलकुल ठीक होगी। कस्तूरभाईका दृढ़ मत है कि कृष्णाकी पसन्द ठीक है।

तुम सबोंको प्यार।

बापू

[पुनश्च :]

तुम मुझ जैसे लोगोको इस बातके लिए राजी करनेमे सफल हो सकते हो कि तुम्हे पण्डित कहकर सम्बोधित न करे, लेकिन मै देखता हूँ कि यह विशेषण तुम्हारे साथ हमेशा लगा रहेगा।

[पुनश्च :]

मै जो कहना चाहता था वह यह था कि यदि यह विवाह होना तय हो जाये, और यदि माँकी सहमति हो, तो धार्मिक कार्य वर्धामे सम्पन्न किया जाये। मै कठिनाइयाँ जानता हूँ। मै जानता हूँ कि मै स्वार्थपूर्ण ढगसे सोच रहा हूँ। मैंने तो सुझाव-भर दे दिया है। अब देखें कि क्या होता है। मै कस्तूरभाईसे मिलनेवाला हूँ।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

२२. पत्र : निर्मल कुमार बोसको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
२४ सितम्बर, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला।

चूंकि श्रीयुत् सतीशचन्द्र दासगुप्त मेरी रचनाओंसे अच्छी तरहसे वाकिफ हैं इसलिए मैं चाहूँगा कि आप अपना संग्रह[1] उन्हें दिखायें, और यदि वह उन्हे पसन्द हो तो मुझे आपके पुस्तकको प्रकाशित करनेमें कोई आपत्ति नही है। आप यह पत्र उन्हें दिखला सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५२२)से।

२३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
२४ सितम्बर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा १९ तारीखका पत्र बम्बईमें मिला था और २१ तारीखका आज वर्धामें मौन ग्रहण करनेके बाद।

. . .[2]

दाँतोंके बारेमें मैं समझ गया। उनसे थोड़े समयतक तो काम चलना चाहिए।

मेरे साथ बा, मीराबहन, चन्द्रशंकर, प्रभुदास, नायर, आनन्दी[3], निर्मला (महादेवकी), शारदा (चिमनलालकी) और प्रभावती है। ब्रजकिशन भी हैं। वह मंगलवारको अपने घर जायेगा। रास्तेमें राधा[4] और सन्तोक[5] मिली थी। राधाकी तबीयत बहुत अच्छी है। वह तुम्हारी पड़ोसिन है। उसे लिखना। लीलावती[6] देवलालीमें

१. सिलेक्शन्स फ्रॉम गांधी।
२. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूट गया है।
३. लक्ष्मीदास आसरकी पुत्री।
४. मगनलाल गांधीकी पुत्री।
५. स्वर्गीय मगनलाल गांधीकी पत्नी।
६. लीलावती आसर।

सेनटोरियममे है। केशू[1] यही है। जमनालालजीके जिन (रुई ओटनेकी मशीन)मे काम करता है? ५० रुपये वेतन तय हुआ है। काम अच्छा है। यदि वह स्थिरचित्त बनेगा तो तरक्की करेगा। जमनालालजी उसके कामसे सन्तुष्ट दीख पड़ते है। नी०[2] और अमलाका काम कठिन है। नी० अत्यन्त भावुक है, अमला मूर्ख है। उसे कुछ भी नही आता। दोनो ही यहाँ ठीक बोझरूप बनी हुई है। यह बोझ कुछ हल्का हो, ऐसा प्रयत्न करूँगा। डकन और मेरी बार अच्छी तरहसे काम कर रहे है, मेहनती है, ईमानदार है। नरहरिके बच्चे – वनमाला और मोहन – बीमार होनेकी वजहसे कठलाल गये है। मै उनसे अहमदाबादमे मिला था। वे शुक्रवारको कठलाल जानेवाले थे। अमीना[3]के बच्चे बहुत घुल-मिल गये है। वे लाल बगले[4]में अपनी छुट्टियाँ वितायेंगे। सिरियस बीमार था। अब ठीक हो गया है। अस्पतालमे था। मै रमा जोशीसे मिला था। वह अच्छी थी। उसका स्वास्थ्य तो खूब सुधर रहा है। वह अपना हाथ अब ठीक-ठीक ऊँचा उठा सकती है। जिस दिन मैने बम्बई छोडा उसी दिन मणि आई। मेरे साथ ही बहुत समयतक रही। एल्विन[5] को देखने गया था, वहाँ भी उसे साथ ले गया था। मैंने उसे तुमसे मिलकर और दाँत तथा आँखका उपचार करनेके बाद मेरे पास आनेकी सलाह दी है। फूफी अभी बम्बईमे है, मथुरादास भी बम्बईमे है। वह खासा थक गया है। उसने बहुत बडी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली थी। शास्त्री ('हरिजन'के) ठीक चल रहे है। चन्द्रशकर समस्त गुजराती सामग्री हम जहाँ है, वहीसे भेजेगा। मैंने पृथुराज[6] को कालीकटमे ही रुकनेके लिए लिखा है। इन्दु[7] भावनगरमे है, ठीक चल रहा है। जयप्रकाश अपने पिताके पास गया होगा। मै जब बम्बईसे रवाना हुआ था तब वह वही था। वह मुझसे मिला करता था। वह प्रभावतीसे तो रोज ही मिलता था। उसने मेरे विरुद्ध जो आरोप लगाया है सो मै जानता हूँ, लेकिन मै क्या करूँ? अब तो वह कुछ शान्त हो गया है। रामदासका मन ही उसका बैरी है। इसलिए कुछ नही कहा जा सकता। वह पूर्णतया कब शान्त होगा? नीमु[8] की तबीयत यो ही कभी अच्छी कभी खराब रहती है। बगाल[9] का मामला मेरे ध्यानमे है, देखूंगा। जमनालाल अभी पहाड़पर नही जायेंगे। वे दस दिनके लिए पहाड हो आये है। [फिरसे जानेके लिए] प्रलोभन तो अवश्य दूंगा। अब उनकी तबीयत ठीक रहती है।

१. केशव, मगनलाल गांधीके पुत्र।
२. एक अमेरिकी महिला। इसमें तथा अगले शीर्षकोंमें इनका नाम नहीं दिया गया है।
३. अमीना कुरेशी, गुलाम रसूल कुरेशीकी पत्नी।
४. आश्रमके समीप डॉ० प्राणजीवनदास मेहताका घर।
५. वेरियर एल्विन।
६. लक्ष्मीदास आसरका पुत्र।
७. इन्दु पारेख, एक आश्रम विद्यार्थी।
८. रामदास गांधीकी पत्नी निर्मला।
९. इसका सम्बन्ध यरवडा-समझौतेके खिलाफ बंगालके सवर्ण हिन्दुओंके आन्दोलनसे है।

आनन्दी आदि लड़कियाँ और कुरेशीके लड़के अनुसूयाबहनके हरिजन छात्रावासमें रहते हैं। मुझे लगा कि हमारे लिए यही शोभाजनक है। वहाँ वे लोग बहुत सुखी हैं। नारणदासके पुरुषोत्तमने जीवनलाल[1] के भाई हरखचन्द,[2] की पुत्रीके साथ सगाई की है। यह एक ही जातमें होनेके कारण मुझे अच्छा नहीं लगा। लेकिन कहते हैं कि लड़की अच्छी है। इसीसे नारणदासने भी अपनी सम्मति दे दी है। जमना[3] राजकोटमें है। कनु[4] भी वहीं है। जमनादास[5] के स्कूलमें जो पढ़ाया जाता है उतना पढ़ता है। महादेवका बाबू[6] वल्सारमें अपनी मौसीके पास है। उसने दीवालीके बाद आनन्दीके पास आनेके लिए लिखा है। राजेनबाबूकी खबर हर तीसरे दिन मिलती रहती है। उनका स्वास्थ्य अच्छी तरह सुधर रहा है। लक्ष्मी[7] यहीं है। उसके जालन्धर जानेकी बात थी। सब कुछ विचार करनेके बाद देवदासने उसके जालन्धर जानेके कार्यक्रमको रद कर दिया। लेकिन अभी निश्चय नहीं हुआ कि क्या किया जाये। प्रभुदासकी समस्या भी अभी नहीं सुलझी है। इसीसे वह मेरे साथ आया है। . . .[8] को साधु हुआ समझ लो। वह हमेशा असन्तुष्ट ही दिखाई देता है।

यदि तुम्हारा 'गीता' का अध्ययन पूरा हो जाये तो भी माना जायेगा कि तुमने संस्कृतमें अच्छी तरक्की कर ली है।

आश्रमकी गोशाला कांकरियामें चल रही है। इसे टाइटस चलाता है और यह शंकरलालकी देखरेखमें है। ठीक चलती है। जवाहरलालकी कृष्णाकुमारीकी सगाई बहुत करके कस्तूरभाईकी बहनके लड़केके साथ होगी, जो अभी-अभी विलायतसे बैरिस्टर होकर लौटा है। मैं कस्तूरभाई और उसकी बहन तथा उसके लड़केसे मिल चुका हूँ। असली पसन्द तो इन दोनोंकी ही है। वे बम्बईमें रावके यहाँ दो-तीन बार मिले थे। सरूपरानी[9] ने अपनी सहमति दे दी है। थोड़े ही समयमें विवाह हो जायेगा। यदि विवाह सम्पन्न हो गया तो सरूपरानीके सिरसे एक भारी बोझ उतर जायेगा।

मैं ठीक रहता हूँ। रक्तचाप यहाँ रहता है या नहीं, सो नहीं कहा जा सकता। यहाँ उस कोटीके और डाक्टर नहीं हैं। जरूरत भी नहीं है। आजकल तो एक पौंड दूध लेता हूँ। और दो बार सब्जी लेता हूँ। सब्जीमें लौकी, तोरी आदि मिलती है। यहाँ जब आया था तब मेरा वजन ९९ पौंड था। थोड़े दिनों बाद फिर वजन लूँगा।

१. जीवनलाल मोतीचन्द शाह।
२. चोरवाडके एक सामाजिक कार्यकर्ता।
३. नारणदास गांधीकी पत्नी।
४. नारणदास गांधीके पुत्र।
५. नेशनल स्कूल, राजकोटके जमनादास गांधी।
६. नारायण देसाई,-जो सामान्यतः बाबलो नामसे पुकारे जाते थे।
७. राजगोपालाचारीकी पुत्री और देवदास गांधीकी पत्नी।
८. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिया गया है।
९. जवाहरलाल नेहरूकी माँ।

बा मजेमे है और मीराबहन भी। जमनालालजीकी कमला[1] दिनशा मेहताके आरोग्य भवनमे थी। उसे कुछ लाभ हुआ है। वह मेरे साथ यही आई है। कमलनयन[2] भी यही है। आजकल वकीलकी पाठशाला महामारीके कारण बन्द है। अब यह पाठशाला विले पार्ले चली जायेगी।

मेरा कार्यक्रम तो ऐसा है कि १५ अक्टूबर तक मै यही विश्राम करूँगा।

चूंकि आश्रमका कब्जा सरकारने नही लिया है[3] इसलिए अब स्थायी रूपसे इसका उपयोग हरिजन निवासके रूपमे किये जानेका विचार है। जमनालालको यह विचार पसन्द आया है। अहमदाबादके मित्रो — रणछोडभाई आदिको भी यह अच्छा लगा है। इसमें हरिजन निवास, चर्मशोधनालय, हरिजन छात्रावास और हरिजन सेवा सघका ऑफिस रखनेका विचार है। मेरा इरादा आश्रमकी जमीन और मकान अखिल भारतीय सेवा सघको सौप देनेका है। इस बारेमे यदि तुम्हे कुछ कहना हो तो लिखना। अब तो काफी हो गया न?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ २९-३०

२४. अपील : उड़ीसाकी बाढ़-सहायताके लिए

२४ सितम्बर, १९३३

उड़ीसाके बाढ़-पीड़ित लोगोंकी सहायताके लिए चन्देकी अपील करते हुए श्री गांधीने कहा है कि दो हजार मीलका क्षेत्र बाढ़से प्रभावित है। इससे तीन लाख लोगोंपर असर पड़ा है। पन्द्रह सौ गाँव तबाह हो गये है। बीस हजार मकान ढह गये हैं, और लगभग १५,००,००० रुपयेके मूल्यका नुकसान होनेका अनुमान है। श्री गांधीका कहना है कि जिन लोगोंको वास्तवमें भोजन और कपड़ेकी आवश्यकता है उन्हें बारह महीनेतक सहायता देनेकी आवश्यकता होगी, क्योंकि अगले वर्षकी फसल होनेतक उनके पास अपनेको जीवित रखनेकी कोई व्यवस्था नहीं होगी। जो लोग सचमुच गरीब सिद्ध किये जा सकते है ऐसे लोगोंकी सहायताके लिए कमसे-कम पाँच लाख रुपयेकी जरूरत होगी।

[अंग्रेजीसे]
द इंडियन एनुअल रजिस्टर, जुलाई-दिसम्बर, १९३३, खण्ड २, पृष्ठ १०

१. रामेश्वरदासकी पत्नी कमला नेवटिया।

२. जमनालाल बजाजके पुत्र।

३. जुलाई, १९३३ में गांधीजीने सरकारसे आश्रमका कब्जा ले लेनेके लिए कहा था; देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ३१६-१९।

२५. सन्देश : हरिजन-दिवसपर

[२४ सितम्बर, १९३३][1]

'हरिजन-दिवस' के अवसरपर मैं हृदयसे आशा करता हूँ कि सवर्ण हिन्दुओंके मनमे अपने हरिजन भाई-बहनोंके लिए शुद्ध प्रेम जाग्रत होगा और प्रत्येक हिन्दू स्त्री-पुरुषको अस्पृश्यता-उन्मूलनकी आवश्यकता अनुभव होगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २५-९-१९३३

२६. पत्र : एन० आर० मलकानीको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा

२६ [सितम्बर][2], १९३३

प्रिय मलकानी,

मेरे इसी २ तारीखके पत्रके उत्तरमे तुम्हारा ८ तारीखका पत्र मुझे मिला। उस पत्रका मैं इससे पहले उत्तर नहीं दे सका, और अब मुझे तुम्हारा सबसे हालका पत्र मिला है जिसके साथ तुमने बस्तियोंके बारेमें अपनी रिपोर्ट भेजी है। तुम्हारी रिपोर्टके प्रथम अंगमें कही गई बातोंको मैंने पहले ही हाथमें ले लिया है।[3] लेकिन पूरी रिपोर्टको पढ़ चुकनेके बाद उसके बारेमें मैं तुम्हें बादमें लिखूंगा।

हरिजन-कार्यके बारेमें तुम्हारे सुझाव अच्छे हैं। मैं तुम्हारी कोई मदद नहीं कर सकता, विशेषकर इस समय। लेकिन उनके बारेमें तुम ठक्कर बापासे बातचीत करना। तुम शीघ्र ही औद्योगिक शालाओंके बारेमें कुछ सुनोगे। चमड़ा कमानेके उद्योगके महत्त्वके बारेमें मैं तुमसे बिलकुल सहमत हूँ। इस समस्यापर मैं अभी भी विचार कर रहा हूँ।

भंगियोंके बीच काम कठिन जरूर है, लेकिन अत्यन्त आवश्यक भी है।

१. यह सन्देश २४ सितम्बरको तृतीय हरिजन-दिवसके अवसरपर वर्धामें जमनालाल बजाजके सभापतित्वमें आयोजित सभामें पढ़कर सुनाया गया था। प्रथम हरिजन-दिवस १८ दिसम्बर, १९३२को और द्वितीय हरिजन-दिवस ३० अप्रैल, १९३३ को मनाया गया था।

२. साधन-सूत्रमें यह शब्द अस्पष्ट है।

३. देखिए "एक और नरक" २३-९-१९३३।

मैं तुम्हारे इस सुझावका समर्थन करता हूँ कि यात्रा करने और विभिन्न सगठनोका अध्ययन करनेके लिए तुम्हे सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एन० आर० मलकानी
हरिजन सेवक संघ
बिड़ला मिल्स, दिल्ली

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९००) से।

२७. पत्र : वी० राघवय्याको[1]

२६ सितम्बर, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला।

विभिन्न निर्णयोपर पहुँचनेके लिए मेरे पास सारे तर्क मौजूद थे। इसलिए आप मुझसे यह अपेक्षा नही करेगें, खासतौरसे मेरी मौजूदा सेहतको देखते हुए, कि मैं अपने बचावके लिए फिरसे वही सब बाते कहूँ जो मैं पहले कह चुका हूँ। लेकिन समय जरूर बतायेगा कि सच क्या है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत वेन्नेलाकान्ती राघवय्या
नेल्लूर
(दक्षिण भारत)

अग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०४४८) से; सौजन्य . के० लिंगराजू

२८. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२८ सितम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारे कई पत्र मिले। मेरी रफी[2] से लम्बी बातचीत हुई। वह तुम्हे उसके वारेमे बतायेगे। मैं अब भी अपनी इस रायपर कायम हूँ कि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी बैठक करानेसे कोई लाभ नही होगा। लेकिन इसका मतलब यह नही

१. एक काग्रेसी और कवायली कार्यकर्ता जिन्होंने गांधीजीके हरिजन-समस्याको लेकर किये जानेवाले अनशनका विरोध किया था और लिखा था कि ऐसा करके वे आर्थिक समस्याकी उपेक्षा करेंगे।

२. रफी अहमद किदवई।

कि ऐसी कोई बैठक यदि होगी तो उससे मुझे गहरी चोट लगेगी। इसके विपरीत, यदि बहुतसे सदस्य बैठक चाहते हों तो बैठक बुलाये जानेकी माँग करना उनका कर्त्तव्य है। मुझे जो लगता है वह यह कि हमें इसमें पहल नही करनी चाहिए। अगर व्यक्तिगत रूपसे तुम्हे लगता हो कि माँग न होनेपर भी बैठक बुलाना बेहतर है तो तुम्हें बैठक बुला लेनी चाहिए। मै जानता हूँ कि मुझे कार्यकर्त्ताओंकी रायका भी पता नही है। इसलिए जिन लोगोंका मत निश्चित रूपसे भिन्न है, वे मेरी रायको बिना किसी खतरेके नजरअन्दाज कर सकते हैं।

मेरी बातचीतके बारेमे रफी अपना जो विवरण तुम्हे देंगे, उसके सिवा एक अन्य मुद्दा, जिसे मै स्पष्ट करना चाहूँगा वह कार्यकर्त्ताओंके बारेमे है। बेशक मुझसे जो हो सकेगा सो मै करूँगा, लेकिन मेरा यह दृढ़ मत है कि प्रत्येक प्रान्तको अपने कार्यकर्त्ताओंका व्यय सँभालना चाहिए और प्रत्येक जिले या तहसीलको अपने कार्यकर्त्ताओंका। जबतक हम इस स्थितिको नही प्राप्त कर लेते तबतक हमारा संगठन ताशके घरके समान रहेगा। मेरी राय है कि तुम्हे अपने प्रान्तमे भिक्षा-पात्र हाथमे लेकर निकल पड़ना चाहिए और एक उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए। मेरा आदर्श तो यह है कि प्रत्येक कार्यकर्त्ताको अपने गुजारेका खर्च उस क्षेत्रसे प्राप्त होना चाहिए जिसमे कि वह काम करता है, और इस बातपर उसे गर्वका अनुभव करना चाहिए। प्रत्येक मजदूर अपने मेहनतानेका हकदार है।

शेष बातें रफी तुम्हें बतायेंगे।

आशा है माँ और कमला, दोनों अब बेहतर हैं। डॉ० विधानका क्या कहना है, सो तुम मुझे यथासमय बताओगे ही।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

व्यक्तिगत पत्रोंके बारेमे[1] मुझे कुछ नही कहना है। आशा है . . .[2] लिखे मेरे दो पत्र तुम्हें मिले होंगे।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", २३-९-१९३३ तथा २४-९-१९३३।

२. साधन-सूत्रमें यहाँ अस्पष्ट है।

२९. पत्र : मेरी बारको

२८ सितम्बर, १९३३

चि० मेरी,[1]

मुझे बहुत खुशी हुई है कि आज तुम सामान्य हो। मेरे खयालसे तुम्हारे लिए यह बेहतर होगा कि तुम पारम्परिक डाक्टरी इलाज करा कर ठीक हो जाओ। आजकल तो इंजेक्शन लगाना आम बात है। अच्छा यही है कि तुम उन्हे लगवा लो। और डाक्टर लोग जो खानेको कहे, वह खाओ। यदि तुम्हे नी० की सहायता की आवश्यकता नही है तो उसको चला आने दो। मै जानता हूँ कि एक सुव्यवस्थित अस्पतालमे बाहरी लोगोके रहनेसे डाक्टरोंको उलझन होती है।

ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६००७) से। सी० डब्ल्यू० ३३३३ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

३०. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

वर्धा
२८ सितम्बर, १९३३

भाई भगवानजी,

आपका पत्र मिला। . . .[2] आपके प्रयत्न सफल हो। आप कुछ भी उठा न रखे। . . .[3] और यदि व्यवस्थित ढंगसे साथ रहते न बने तो [सम्पत्तिका] बँटवारा[4] करते हुए भी संकोच न कीजिएगा।

मैं रतुभाई[5] को अलगसे नही लिख रहा हूँ।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२०) से। सी० डब्ल्यू० ३०४३ से भी; सौजन्य . नारणदास गाधी

१. मेरी बारको लिखे इस पत्रमें तथा अन्य पत्रोंमें ये शब्द देवनागरी लिपिमें हैं।
२ और ३. यहाँ साधन-सूत्रमें कुछ कटा-फटा है।
४. प्राणजीवनदास मेहता की सम्पत्ति का।
५. रतिलाल सेठ, छगनलाल मेहताके ससुर।

३१. पत्र : नानाभाई इ० मशरूवालाको

वर्धा
२८ सितम्बर, १९३३

भाई नानाभाई,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। नाजुक तबीयत होते हुए तो तुम्हे यहाँ आनेकी जरूरत हो ही नही सकती। मै ठीक ही हूँ। पूरी शक्ति आनेपर, जब मै यात्रा कर सकनेकी स्थितिमे होऊँगा तब तुम्हारा प्रेम निश्चय ही मुझे अकोला खीच ले जायेगा। मणिलाल[2] काममे खूब फँस गया जान पड़ता है। उसने अपने सिरपर बहुत बडी जिम्मेदारी ले ली है।

तारा[3] का समाचार जमनालालजीने दिया है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत नानाभाई मशरूवाला
अकोला
बरार

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६८९) से। सी० डब्ल्यू० ४३३४ से भी; सौजन्य : कनुभाई मशरूवाला

३२. पत्र : नलिनीकान्त सेठको

वर्धा
२८ सितम्बर, १९३३

चि० नलिनीकान्त,

तुम्हारे भेजे हुए पत्र मिले है। मैंने उत्तर रंगूनके पतेपर भेजा है। मैं ठीक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१७४) से। सी० डब्ल्यू० ४६७० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. मणिलाल गांधीके ससुर।
२. मणिलाल गांधी।
३. नानाभाई मशरूवालाकी पुत्री।

३३. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२८ सितम्बर, १९३३

मुझे यहाँ पूर्ण शान्ति मिलती है। चार बजेसे पहले किसीको आने ही नही दिया जाता। ४ से ५ के बीच कोई आये तो मिल सकता है। उसी समय कातता हूँ। मै छतपर सोता हूँ। दूध पर्याप्त मात्रामे ले पाता हूँ। . . .[1] इसलिए जमनालालजी जो रिपोर्ट दे उसपर भी विश्वास न करना। रक्तचाप खुद-ब-खुद कम हो जायेगा। वजन तो अब ही बढ सकता है।

. .[2]

शारीरिक स्वास्थ्यका ध्यान रखते हुए तुमसे जितनी मेहनत हो सके उतनी करना। सच तो यह है कि तुम्हे कुछ समयके लिए बाहर चले जाना चाहिए और पूरा आराम करना चाहिए। क्या यह सम्भव होगा?

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १३६

३४. तार : 'मातृभूमि' को

२९ सितम्बर, १९३३

श्री माधवन नायरकी मृत्युसे एक जबर्दस्त राष्ट्रीय क्षति[3] हुई है। उनके परिवारके प्रति जमनालालजी तथा मै सम्वेदना भेजते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०-९-१९३३

३५. पत्र : अगाथा हैरिसनको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
२९ सितम्बर, १९३३

प्रिय अगाथा,

मै जानता हूँ कि मैने तुम्हारे साथ न्याय नही किया है। तुम तो मुझे पत्रपर-पत्र लिख रही हो और मै तुम्हे एक पक्ति भेजकर ही सन्तुष्ट हो गया हूँ। सच यह है कि अभीतक मैने अपनी खोई हुई शक्ति पूरी तरह फिरसे प्राप्त नही

१ और २. यहाँ साधन-सूत्रमें कुछ छूट गया है।
३. देखिए "भाषण कालीकटकी सार्वजनिक सभामें", १३-१-१९३४ भी।

की है, और जो-कुछ शक्ति है उसे हाथमें लिये हुए मौजूदा काममें लगाना है। इसलिए मुझे बहुत सारी ऐसी चीजोंकी उपेक्षा करनी पड़ती है जो मैं अन्यथा करना चाहूँगा। मैं एन्ड्रयूज और मीरा पर निर्भर करता रहा हूँ कि वे तुमको पत्र लिखते रहें। लेकिन इसी ९ तारीख और १६ तारीखके तुम्हारे दो पत्र ऐसे है जिनका मुझे काफी विस्तारसे जवाब देना चाहिए।

तुमने मिदनापुर काण्डके विषयमें जो-कुछ लिखा है और जो-कुछ नही लिखा है उसे मैं समझता हूँ। आशा है मैंने जो वक्तव्य दिये है उन सबकी प्रतियाँ तुमको मिल गई हैं। मिदनापुरके बारेमें मैंने जो-कुछ कहा है उसके लिए मैं कोई माफी नही माँगता।[1] मै इससे कम कुछ नही कह सकता था, और इससे ज्यादा भी नही; कारण, उस वक्तव्यमे जो-कुछ कहा गया था वह सोलहो आने सच था। लेकिन जान-बूझकर गलत प्रचार करनेका अभियान चलाया जाये तो कोई उससे किस प्रकार निपटे? मै जो-कुछ कहता हूँ उसका एक-एक शब्द तोड़-मरोड़ कर बताया जाता है। जहाँ तोड़-मरोड़ करना सम्भव नही होता वहाँ मेरे वक्तव्योंमें से वाक्यके-वाक्य इस प्रकार निकाल दिये जाते है कि निकाले हुए वाक्योंके साथ पढ़नेपर वक्तव्यका जो अर्थ निकलता, उससे बिलकुल भिन्न अर्थ उसी वक्तव्यसे निकलता है। लेकिन मैं इन तरीकोसे विचलित नही होता। मेरे लिए ये कोई नई चीज नही है। मुझे अपने उद्देश्यमें और अपने सत्यमे अपार विश्वास है। इसलिए जो चीज करनेकी है वह यही है कि विस्तारपूर्वक कैफियत देनेकी कोशिश न की जाये, क्योकि यह व्यर्थ है, बल्कि ठीक अवसर आनेपर उसी सत्यको और बलपूर्वक दोहराया जाये।

इंग्लैंडके मित्रोंकी स्थिति इससे कुछ भिन्न है। स्वभावतः वे कुछ करके दिखाने को उत्सुक हैं। तथापि मैं मित्रोसे कहूँगा कि वे ऐसे मौकोंपर विचलित न हों; क्योकि इस समय तुम्हारी आवाज नक्कारखानेमें तूती-जैसी होगी, और मैंने जो-कुछ कहा हो, यदि उसके बारेमें तुमने कैफियत देनेकी कोशिश की तो ऐसा करके तुम हमारे उद्देश्यको हानि पहुँचाओगी। मै एक जबर्दस्त प्रयोग कर रहा हूँ। मेरी हर साँसमें अहिंसा बसी हुई है। मैं जो-कुछ लिखता हूँ उसमें नमक-मिर्च नही लगाता। मैं कुछ भी नही छिपाता। इसलिए मैं यह नही चाहूँगा कि मित्र लोग मेरे किसी कार्य या मेरे किसी कथनको माफ करे। अगर वे उसे नहीं समझते तो चुप रहें। यदि वे उससे असहमत हैं और सारे तथ्योंको जानने और उनको तोलनेके बाद यदि वे उसका खुलकर विरोध करें तो मैं उसका बुरा नही मानूँगा। वास्तवमे इससे हमारे उद्देश्यका हित होगा। इसी मिदनापुर-सम्बन्धी वक्तव्यको ही लो। मैं जानता हूँ कि जवाबी आतंकवादके सरकारी रवैयेके कारण आतंकवादकी जड़ें और गहरी पैठती जा रही हैं। जवाबी आतंकवादका प्रभाव ज्यादा शरारतपूर्ण होता है, क्योकि यह संगठित होता है और सारी जनताको भ्रष्ट कर देता है। जवाबी आतंकवाद बजाय आतंक-वादको खत्म करनेके आतंकवादी तरीकोके समर्थनमें एक वातावरण पैदा करता है, और इस प्रकार उसे कृत्रिम उत्तेजन प्रदान करता है। मुमकिन है इसके परिणाम

१. देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ४१९।

तुरन्त सामने न आयें, लेकिन वह निश्चय ही भविष्यमे ज्यादा बडे पैमानेपर आतंकवादी गतिविधियोके लिए भूमिका तैयार करता है। इसलिए जैसा मिदनापुरमे हुआ, उस प्रकारका कोई विस्फोट होनेपर इस बातको जोरदार शब्दोमे स्पष्ट करके रखना चाहिए, और यदि सत्यको जोरदार ढंगसे नही कहा जा सकता तो स्पष्ट है कि इसका विकल्प यही है कि चुप रहा जाये। ऑपरेशन न करनेकी अपेक्षा आधे मनसे ऑपरेशन करना कही ज्यादा खतरनाक है। यह सब मै अहिंसाके बारेमे अपने ज्ञान, और सुनिश्चित तथ्योकी जानकारीके आधारपर कह रहा हूँ।

फिर, मेरे अनशन या हालके मेरे सभी अनशनोको लो। यदि वहाँके मित्र इन अनशनोको इतनी अच्छी तरह नही समझ सके है कि उनको उचित बता सके, तो वे उनकी उपेक्षा कर सकते है, या वे निर्णय करनेसे पहले सारी जानकारी और तथ्य प्राप्त कर ले और तब यदि निर्णय मेरे विरुद्ध जाता हो तो उन्हे अपना निर्णय घोषित करनेमे हिचकिचाना नही चाहिए, लेकिन यदि वे अनशनोके पक्षमे निर्णय देते है तो उन्हे अपना समर्थन स्पष्ट शब्दोमे देना चाहिए। तुम तो वहाँ बिलकुल अकेली पड़ गई हो। इसलिए मै इतना ही चाहता हूँ कि तुम जो भी कदम उठाओ उसपर दृढ रहो, बशर्ते कि तुम्हे अपने ऊपर, भारतीय उद्देश्यमे और मुझमें — मै, जो आज भारतके उद्देश्यका तुम्हारे सामने प्रतिनिधित्व करता हूँ — विश्वास है। मै तुम्हे कभी गलत नही समझूँगा। मै जानता हूँ कि तुम मुट्ठीभर लोग जो-कुछ भी करोगे, पूरे दिलसे करोगे। मै इससे ज्यादाकी अपेक्षा नही करता, न कोई अन्य व्यक्ति कर सकता है अथवा करनी चाहिए।

पता नही मै अपनी बात तुम्हे ठीकसे समझा सका हूँ या नही। यदि मै इसमें विफल हुआ होऊँ तो तुम इस पत्रको अपने दिमागसे निकाल देना और मुझे बताना कि कहाँपर तुम मुझे नही समझ सकी हो। जहाँतक मेरे स्वास्थ्यकी बात है, मै धीरे-धीरे शक्ति-लाभ कर रहा हूँ। मुझसे अपेक्षित है कि मै कमसे-कम २३ अक्टूबर तक आराम और शान्तिका सेवन करूँ, जिसके बाद यदि सब ठीक-ठाक रहा तो मेरा एक दौरेका कार्यक्रम निश्चित किया जायेगा। एन्ड्रयूज उड़ीसामे है। महादेव बेलगाँव जेलमें है और देवदास मुल्तान जेलमे। उसकी पत्नी यहाँ है। प्यारेलाल नासिक जेलमे है। उसकी माता और भाई यहाँ है, और नासिक जानेवाले है। अवश्य मीरा यही है।

सप्रेम,

बापू

कुमारी अगाथा हैरिसन
२, क्रैनब्रोर्न कोर्ट
एल्बर्ट ब्रिज रोड
लन्दन, एस० डब्ल्यू० ११

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४६८) से।

३६. पत्र : एफ० मेरी बारको

२९ सितम्बर, १९३३

चि० मेरी,

तुम्हारा प्रेम-पत्र मिला। मरीजोंको एक हदके आगे लाड़ नही करना चाहिए। मैंने सबसे पहली गलती तो यही की कि नी० को तुम्हारे साथ भेजा। कृपया उसे भेज देनेको मत कहो। जब तुम स्वस्थ हो जाओगी और मेरे पास आ जाओगी तब मैं तुम्हें कायल कर दूंगा कि मै ठीक था। मै उसे उसी के हितमे यहां रोके हुए हूँ। अब मुझे पता चला है कि डंकन तुम्हारे पास रहेंगे। इसकी मुझे खुशी है। मै सरस्वतीका पता नही चला पा रहा हूँ। पता चलते ही मै उससे बात करूँगा। अगर वह राजी हुई तो उसे भेज दिया जायेगा। इन परिवर्तनोंको तुम फिलहाल माफ कर देना। यदि नी० को वापस न बुला लिया गया होता तो कोई परिवर्तन करना जरूरी न होता। एक बार तुम अभ्यस्त हो जाओगी तब कोई परिवर्तन नही किया जायेगा। तथापि मुझे आशा है कि वहांकी नर्सें काफी योग्य और पर्याप्त संख्यामे हैं।

ईश्वर तुम्हें शीघ्र स्वस्थ करे।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च:]

मै मीराको नहीं भेज रहा हूँ, क्योंकि उसे रोजाना लगभग चार घंटे अमलाको देने पड़ते हैं। वह अपना समय खराब कर रही है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६००८) से। सी० डब्ल्यू० ३३३४ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

३७. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

२९ सितम्बर, १९३३

चि० रामेश्वरदास,

तुम्हारे लिए, मेरे लिए, और जिन्हे विश्वास है उन सबके लिए रामनाम अचूक औषधि है, इसमे तनिक भी सन्देह नही है। रामनाम निर्दोप और निरोगी व्यक्तिके लिए नही वरन् हम-जैसे दोषपूर्ण और व्याधिग्रस्त मनुष्योके लिए है। तात्पर्य यह कि फल मिले या न मिले, तो भी हमें दृढतापूर्वक उसका स्मरण तो करते ही रहना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत रामेश्वरदास
मार्फत भोलाराम जोहारमल
धुलिया, जिला खानदेश

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०९) से।

३८. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

२९ सितम्बर, १९३३

भाई परीक्षितलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। काठियावाड़के आश्रमके लिए जीवनलालभाई और नानाभाई[1] दीवालीके बाद प्रयत्न करनेवाले है। उसमे हमसे जो प्रयत्न बन पड़ेगा सो हम करेगे। यदि ये लोग कुछ नही कर सकते तो मेरा खयाल है, हम आश्रमको नही चला सकेगे। लेकिन मुझे पूरा यकीन है कि ये लोग आश्रमको खत्म नही होने देगे। भावनगर और वरतेजके आश्रमोको सम्मिलित कर दिया जाना चाहिए अथवा नही, इसपर विचार किया जाना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९९६) से।

१. नरसिंहप्रसाद कालिदास भट्ट।

३९. पत्र : जसभाईको

२९ सितम्बर, १९३३

भाई जसभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं यहाँ बैठा हुआ तुम्हारा मार्गदर्शन नहीं कर सकता। जैसा चिमनलाल कहें वैसा करना। मुझसे पूछनेकी जरूरत महसूस होगी तो वह मुझसे पूछेगा। विवश होकर कुछ भी न करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० २३१७३) से।

४०. पत्र : मणिबहन पटेलको

२९ सितम्बर, १९३३

चि० मणि,

तेरा पोस्टकार्ड मिला है। तुझे जबतक रहना पड़े तबतक वहाँ रहना और ठीक होकर आना। बापू[1] का पत्र मुझे भी मिला है। उसपर से पता चला है कि उनके साथ अब चन्दूभाई[2] हैं। बहुत अच्छा हुआ। मुझे पत्र लिखा करना। डाह्याभाई[3] से कहना कि मैंने करमचन्दको जवाब दे दिया है। मैं ठीक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्री मणिबहन पटेल
पारेख स्ट्रीट
सैण्डहर्स्ट रोड
बम्बई–४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४ : मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १०८

१. मणिबहनके पिता सरदार वल्लभभाई पटेल।
२. डॉ० चन्दूभाई देसाई।
३. मणिबहनके भाई।

४१. पत्र : द० बा० कालेलकरको

[३० सितम्बर, १९३३ से पूर्व][1]

चि० काका,

...[2]

मैं आश्रमको सदाके लिए हरिजन निवास, हरिजन छात्रावास और हरिजन-सेवक संघके कार्यालय तथा चर्मालयके लिए अखिल भारतीय हरिजन सेवक सघको सौंप देनेका विचार कर रहा हूँ। तुम्हारी इसके बारेमे क्या राय है? जमनालालजीको तो यह विचार बहुत पसन्द आया है। छगनलाल, चिमनलाल और मगनभाईको भी यह बात अच्छी लगी है।

तुम अपना कार्यक्रम बताना।

स्वास्थ्यको देखते हुए मैं यहाँ १५ अक्टूबर तक निश्चित रूपसे हूँ।

मैं ठीक हूँ। मैं अपने साथ भारी फौज लाया हूँ। आनन्दी, बचु[3] और बबु[4] साथ है। प्रभुदास भी है। मोहन[5] और वनमाला[6] कठलाल गये हैं।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४७८) से, सौजन्य : द० बा० कालेलकर

४२. व्याख्याकी आवश्यकता

उरई (संयुक्त प्रान्त)के मुन्सिफकी अदालतमे एक विचित्र मुकदमा दायर किया गया था। सरकारने एक मुसलमानको कोंचके हरिजनोके प्रतिनिधिके रूपमे वहाँकी नगरपालिकामे मनोनीत कर दिया था। इसपर तीन हरिजनोने सपरिषद भारत मन्त्री तथा दूसरोपर दावा दायर किया और माँगकी कि इस मनोनीत सदस्यको सदस्यतासे हटा दिया जाये, और यह घोषित कर दिया जाये कि नगरपालिका अधिनियमके अनुसार, केवल किसी हिन्दू हरिजनको ही मनोनीत किया जा सकता है। इस सम्बन्धमे कानूनमें अनिश्चितता तो है ही, इसलिए अदालतका फैसला वादीके विरुद्ध रहा। यहाँ मैं फैसलेके गुण-दोषोंकी जाँच नही करना चाहता। मैं तो जनताको केवल यही बताना चाहता हूँ कि कानून न केवल हरिजन-वर्ग, जिसका कि वर्णन फैसलेमे 'दलित

१. पत्रमें सत्याग्रह आश्रमको हरिजन-सेवक संघको सौंप देनेका गांधीजीने जो विचार व्यक्त किया है, यह तारीख उसके आधारपर तय की गई है; देखिए "पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको", ३०-९-१९३३।

२. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ अंश काट दिया गया है।

३. निर्मला, महादेव देसाईकी सौतेली बहन।

४. शारदा, चिमनलाल शाहकी पुत्री।

५. और ६. नरहरि परीखके पुत्र और पुत्री।

जातियों' के नामसे किया गया है, की व्याख्याके बारेमें ही अनिश्चित है, बल्कि अगर फैसला ठीक है तो, इस शब्दकी अभीतक कोई कानूनी परिभाषा ही नहीं बनी है। यदि यह ठीक है, तो यह समझना कुछ कठिन नहीं है कि इस परिभाषाके अभावमें हरिजनोंके प्रति घोर अन्याय हो सकता है और उससे दुःखदायी परिणाम निकल सकते हैं। इससे तो सवर्णों और हरिजनों, तथा हरिजनों और हरिजनों एवं हिन्दुओं और गैर-हिन्दुओंके बीच बहुत कटुता व लड़ाई-झगड़े पैदा हो सकते हैं। अगर कानून द्वारा अस्पृश्यताको स्थायी नहीं बनाना है, तो यह बहुत जरूरी है कि इस शब्दकी उचित व्याख्या निश्चित करनेकी ओर जनता अपना ध्यान एकाग्र करे। पाठक यदि उक्त मुन्सिफके फैसलेके निम्न अंश[1] को ध्यानसे पढ़ डालें तो वे मेरे अभिप्रायको अधिक अच्छी तरह समझ सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-९-१९३३

४३. हरिजन छात्रावास[2]

एक हरिजन छात्रावासके संचालकने लिखा है :[3]

यह कोई नई बात नहीं है। हरएक छात्रावासमें पाखानेकीसफाई तकका काम विद्यार्थियोंसे कराना चाहिए, इसमें मुझे तनिक भी शंका नहीं। ऐसा करानेसे विद्यार्थियों की पढ़ाईमें कोई बाधा नहीं आती। सच पूछा जाये तो इससे तो उनके अध्ययनमें वास्तविकताका योग होता है और उनके स्वास्थ्यकी भी उन्नति होगी; और पैसेकी बचत होती है, सो अलग। परन्तु जो संचालक विद्यार्थियोंमें सस्ती लोकप्रियता प्राप्त करनेके लोभसे अथवा अपने विद्यार्थियोंके साथ इन बातोंकी चर्चा करनेमें आलस्य करनेके कारण उन्हें छात्रावासके सारे काम करना नहीं समझाता, वह विद्यार्थियोंकी कोई भलाई नहीं करता। ऐसी मेहनतको विद्यार्थियोंकी शिक्षाका एक अंग समझना चाहिए। पर विद्यार्थियोंसे यह दैनिक काम करानेमें एक शर्त जरूरी है। वह यह कि संचालकोंको स्वयं काममें मदद देकर अपना उदाहरण उनके आगे रखना चाहिए। ऐसा किया जाये तो फिर "क्षुद्रताकी भावना बढ़नेका" जरा भी भय नहीं रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-९-१९३३

१. यहाँ नहीं दिया गया है। निर्णयमें कहा गया था : "नगरपालिका अधिनियममें 'दलित वर्ग' की कोई व्याख्या नहीं दी गई है। अदालतको यह पता नहीं है कि कानून द्वारा जो मान्य हो, ऐसी कोई कानूनी परिभाषा इस शब्दकी है। . . ."

२. इस अंग्रेजी लेखको यद्यपि ३०-९-१९३३ के **हरिजन** में प्रकाशित किया गया तथापि इसका गुजराती अनुवाद **हरिजनबन्धु** के २४-९-१९३३ के अंकमें पहले ही छाप दिया गया था।

३. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने गांधीजीसे पूछा था कि यदि छात्रावासोंमें छात्रोंसे बर्तन मंजवाये जायें तो क्या इसमें अनुचित होगा?

४४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
३० सितम्बर, १९३३

प्रिय घनश्यामदास,

आपको मालूम ही है कि आश्रमवासियोंने गत पहली अगस्तको साबरमतीके 'सत्याग्रह आश्रम' और उसकी भूमिको त्याग दिया था। मुझे आशा थी कि सरकार मेरे पत्र[1] के अनुसार इस त्यक्त सम्पत्तिपर अधिकार कर लेगी, लेकिन उसने ऐसा नही किया। ऐसी अवस्थामे मेरे सामने यह सवाल खड़ा हुआ कि मेरा क्या कर्त्तव्य है। मुझे लगा कि कीमती इमारतोको यो ही नष्ट होने देना बिलकुल गलत होगा। मैंने मित्रो और सहकर्मियोके साथ परामर्श किया और मैं इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि आश्रमका सबसे अच्छा उपयोग यही हो सकता है कि उसे हमेशाके लिए हरिजन सेवाके निमित्त अर्पित कर दिया जाये। मैंने अपना सुझाव आश्रमके न्यासियों[2] के, जो बाहर है, और सहसदस्योके सामने रखा, और मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता होती है कि वे इससे हृदयसे सहमत है। जब इस सम्पत्तिका त्याग किया गया था तो उस समय यह आशा अवश्य की जा रही थी कि किसी दिन सम्मानपूर्ण समझौतेके द्वारा, अथवा भारतकी लक्ष्य-सिद्धि होनेपर, न्यासी लोग इस सम्पत्तिपर पुन. अधिकार कर सकेगे। इस नवीन सुझावके अनुरूप न्यासी लोग सम्पत्तिसे पूरी तरह हाथ धो रहे है। न्यास-पत्र[3] के अनुसार ऐसा करनेका उन्हे अधिकार है, क्योकि न्यासका एक उद्देश्य हरिजन सेवा भी है। अतएव यह नया सुझाव आश्रम और न्यासके व्यवस्था-विधानके[4] पूर्णतया अनुरूप है।

ट्रस्टियोके और मेरे लिए विचारणीय प्रश्न यही था कि जिस विशेष उपयोगका मैंने उल्लेख किया है उसके लिए सम्पत्ति किसके सुपुर्द की जाये, और हम सब सर्व-सम्मतिसे इस निष्कर्षपर पहुँचे कि उसे भारत-व्यापी उपयोगके लिए अखिल भारतीय हरिजन सघके सुपुर्द करना चाहिए। ट्रस्टके उद्देश्य निम्नलिखित है· (१) भविष्यमे बनाये जानेवाले नियमोपनियमोके अनुरूप आश्रमकी भूमिपर वाछनीय हरिजन परिवार बसाये जाये, (२) हरिजन बालको और बालिकाओके लिए छात्रावास खोला जाये, जिसमे गैर-हरिजनोको भर्ती करनेकी स्वतन्त्रता रहे; (३) खाल उतारने, कमाने, चमडा तैयार करने और इस प्रकार तैयार किये गये चमड़ेके जूते, चप्पल और दैनिक आवश्यकताओकी ऐसी ही अन्य चीजे तैयार करनेकी कलामे दीक्षित करनेके लिए एक तकनीकी विभाग खोला जाये, और अन्तमे, इमारतोंको गुजरात प्रान्तीय या

१. २६ जुलाई, १९३३ का; देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ३१६-९।
२. जमनालाल बजाज और छगनलाल गांधी।
३. देखिए खण्ड २९, पृष्ठ ४२७-८।
४. देखिए खण्ड ३६, पृष्ठ ४१९-३१।

केन्द्रीय बोर्डके कार्यालयके रूपमें, और उन सारे उपयोगोंके लिए काममें लाया जाये जिन्हे निम्नलिखित अनुच्छेदमें निर्दिष्ट समिति उचित समझे।

मैं न्यासियोंकी ओरसे यह सुझाव पेश करता हूँ कि हरिजन सेवक संघ एक विशेष समिति नियुक्त करे जिसमें आप और मन्त्री पदेन (एक्स ऑफीशियो) सदस्य रहें और तीन अन्य सदस्य अहमदाबादके तीन नागरिक हो। इस समितिको अपनी संख्यामें वृद्धि करनेका अधिकार रहे, और यही इस न्यासको हाथमें लेकर उसके उद्देश्योंकी पूर्ति करे।

दो मित्र, श्री बुधाभाई और श्री जूठाभाई इस आश्रमके साथ हमेशासे रहे है। उन्होंने आश्रममें अवैतनिक प्रबन्धकोंकी हैसियतसे रहनेकी तत्परता प्रकट की है। इनके जीवन-निर्वाहके अपने स्वतन्त्र साधन है और ये हरिजन सेवा-कार्यमें बहुत कालसे लगे हुए हैं। एक ऐसा आश्रमवासी[1] भी है जिसने हरिजन सेवाके लिए अपना जीवन अर्पित कर दिया है। यह भी आश्रममें खुशी-खुशी रहनेको तैयार हो जायेगा। हरिजन बालकों और बालिकाओंके शिक्षण-कार्यमें तो इसने कमाल हासिल किया है। अतएव मैंने जैसी समिति बताई है उसे न्यासका प्रबन्ध करनेमें कोई कठिनाई नही होनी चाहिए, न यह जरूरी है कि मैंने जितने काम बताये हैं वे एक साथ और तुरन्त ही हाथमें ले लिये जायें। आपको पता ही है कि कुछ हरिजन परिवार वहाँ इस समय भी रहते हैं। आश्रमके सदस्योंका यह स्वप्न रहा है कि हरिजन परिवारोंकी एक बस्ती बसाई जाये, पर कुछेक को बसानेको छोड़कर हम इस दिशामें अधिक आगे नही बढ़ सके। वहाँ चमड़ा कमानेका प्रयोग भी जारी रखा गया था और आश्रमवासियोंके तितर-बितर होनेके समयतक वहाँ चप्पले भी बनती थी। इमारतमें बड़ा-सा छात्रावास है जिसमें १०० जन आसानीसे रह सकते हैं। इसमें बुनाई करनेका काफी बड़ा शेड है, और मैंने जो-जो काम गिनाये है उनके लिए पूरी व्यवस्था है। सम्पत्तिमें १०० एकड़ भूमि है। इस प्रकार मैं कह सकता हूँ कि उपरोक्त उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए स्थान काफी बड़ा तो नही है, फिर भी फिलहाल उनको जितनी पूर्तिकी आवश्यकता है, उसे देखते हुए अच्छा खासा है। आशा है, मेरा प्रस्ताव स्वीकार करनेमें और इस स्वीकृतिजन्य उत्तरदायित्वकी पूर्तिमें संघको कोई आपत्ति नही होगी।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत घनश्यामदास बिड़ला
अध्यक्ष, हरिजन सेवक संघ
बिड़ला मिल्स, दिल्ली

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९३७) से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१. भगवानजी पुरुषोत्तम पण्डया, जो आश्रममें स्थायी रूपसे रहनेके लिए बर्मासे चले आये थे।

२. ४ अक्टूबर, १९३३ के अपने पत्रमें बिड़लाजीने गांधीजीका प्रस्ताव स्वीकार करते हुए यह अनुरोध किया था कि जो लोग आश्रममें पहलेसे ही हैं, वे आश्रमकी तथा उसकी भूमिकी देखभाल करते रहें।

४५. पत्र : आत्मा एस० कमलानीको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
३० सितम्बर, १९३३

प्रिय कमलानी,

तुम्हारा पत्र मिला।

तुमने मुझे अनशनका कोई विकल्प नही बताया है। लेकिन मेरे सम्भावित अनशनोको लेकर तुम्हे उद्विग्न होनेकी जरूरत नही है। वे अकारण और बिना सोचे-विचारे नही किये जाते और अधिकाशतः उनके पीछे कोई प्रेरणा होती है, इसलिए उनके लिए मुझे जिम्मेदार नही ठहराया जा सकता। जबतक विभ्रम मनमे बना रहता है तबतक बुद्धि कुछ काम नही करती और बुद्धिकी दुहाई व्यर्थ होती है। इस प्रकारका ईश्वर प्रेरित अनशन करते समय मेरे या मुझे इस अनशनसे विरत करनेका प्रयत्न करनेवाले लोगोके सामने जो अलघनीय कठिनाई होती है उसे क्या तुम नही देख सकते?

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्रीयुत आत्मा एस० कमलानी
अवैतनिक सयुक्त मन्त्री
"फ्रेड्स ऑफ इडिया"
४६ लकास्टर गेट
लन्दन, डब्ल्यू० २

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५३१) से।

४६. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रचूजको

वर्धा
३० सितम्बर, १९३३

प्रिय चार्ली,

तवा कढ़ाईको काला कह रहा है। मैं देखता हूँ कि तुमपर फिर चिन्ताका भूत सवार हो गया है। क्या मैंने कहा नहीं है कि "अखबारी रिपोर्टोंपर विश्वास मत करो?" जबतक डाक्टर लोग मुझे चँगा करार नहीं दे देते तबतक मैं दौरेपर नहीं निकलूंगा, और २३ अक्टूबरसे पहले तो किसी भी सूरतमें नहीं। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि कोई चीज जल्दबाजीमें नहीं की जायेगी। और आप मौकेपर मौजूद आदमीपर भरोसा क्यों नहीं करते? निश्चय ही जमनालालजी जबतक बिलकुल सन्तुष्ट नहीं हो जायेंगे कि मैं बाहर जाने लायक चंगा हो गया हूँ, तबतक वे मुझे हिलने भी नहीं देंगे।

अन्ततः मैं वेरियरके कमरेमें झाँकनेके लिए कुछ समय निकाल सका। वह बिलकुल ठीक दिखाई पड़ता था। वह बहुत ठीक प्रगति कर रहा है।

मेरा वजन बढ़ा है और ब्लड-प्रेशर बम्बईमें जितना था उससे निश्चय ही कम है।

सप्रेम,

मोहन

[पुनश्च :]

अमियके क्या हाल हैं?

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७९५) से।

४७. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
३० सितम्बर, १९३३

प्रिय डॉ० सप्रू,

आपका पत्र पाकर बड़ी खुशी हुई। बेशक मै जानता था कि आप मुझे पत्र क्यों नही लिख रहे है। मै यह सोचनेकी गलती कभी नही कर सकता था कि आपमे स्नेह या शिष्टताकी कमी है।

मै अभी भी अपनी खोई हुई शक्ति प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। वह धीरे-धीरे वापस लौट रही है।

हरिजनोंके विरुद्ध रूढ़िपथियोके पूर्वग्रहको दूर करनेके लिए मै भरसक प्रयत्न कर रहा हूँ। मै आपसे बिलकुल सहमत हूँ कि "उनके प्रति हमारा रवैया हमारे चरित्रपर सबसे बड़ा कलंक है"। मै जानता हूँ कि इस मामलेमे मै इस बातपर निर्भर कर सकता हूँ कि आप पूरे दिलसे सहायता करेंगे, लेकिन मै यह नही पसन्द करता कि आप मुझे पत्र लिखते समय केवल हरिजन-समस्याके बारेमे ही लिखे। आप राजनीति या राजनीतिक चर्चामे सक्रिय भाग नही लेते तो न ले, लेकिन निश्चय ही आप अपने मित्रोको अपनी सलाह, मार्गदर्शन और परिपक्व अनुभवके लाभसे वचित नही करना चाहेगे। हमारे दृष्टिकोणमे चाहे कितनी ही भिन्नता हो, लेकिन आप जानते है कि मेरे मनमे आपके और आपकी रायके लिए बहुत आदर है। इसलिए मै चाहूँगा कि आप मुझे लन्दनके अपने अनुभवों[1] का सक्षिप्त विवरण और उनपरसे आपने जो धारणा बनाई है, उसके बारेमे लिखे।

मेरे साथ सेठ जमनालालजी भी अपना अभिवादन भेज रहे है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सर तेजबहादुर सप्रू
१९, अल्बर्ट रोड, इलाहाबाद

[अंग्रेजीसे]

गांधी-सप्रू करेस्पाडेन्स : जी० २६; सौजन्य : राष्ट्रीय पुस्तकालय, कलकत्ता

१. श्री सप्रू संयुक्त संसदीय समितिमें भाग लेनेके लिए अप्रैलकी बैठकोंमें लन्दन गये थे।

४८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
३० सितम्बर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा २६ तारीखका पत्र मिला।

मणिका पत्र कल आया। ऐसा लगता है कि उसका प्लीहा बढ गया है। वह उसका उपचार भी करवा रही है। इसलिए यहाँ आनेमें उसे कुछ समय लगेगा। आश्रमको हरिजनवासके रूपमें चलानेके लिए बुधाभाई, जूठाभाई और भगवानजी तो हैं ही। तीनों ही व्यक्ति ईमानदार, मेहनती और कुशल हैं। पहले दो को कुछ देनेकी जरूरत भी नहीं है।

रामदास धीरे-धीरे ठिकाने आ जायेगा। चिन्ताका कोई कारण नही।

आनन्दी ठीक रहती है। पृथुराज कालीकटमें है। इन्दुके पत्र भावनगरसे आते हैं। . . .[1]

आशा है, तुम कुशलपूर्वक होगे। चन्दूभाई आनन्दपूर्वक होंगे।

यह सम्भव है कि लक्ष्मी थोड़े समयमें मद्रास जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ३१

४९. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

३० सितम्बर, १९३३

मेरे बारेमें समाचारपत्रोंमें जो रिपोर्ट प्रकाशित हुई है वह सच होते हुए भी झूठ है। डॉक्टर ऐसा ही कहेंगे। लेकिन जिन्हें मेरे स्वास्थ्यके बारेमें मालूम है उन्हे घबराना नही चाहिए, क्योंकि यहाँ जितना रक्तचाप है इसकी अपेक्षा वहाँ ज्यादा था। वजनका घटना अथवा बढ़ना मेरे स्वास्थ्यकी दृष्टिसे कोई महत्त्व नही रखता। लेकिन अब तो मेरा वजन भी कमसे-कम १०१ पौंड हो गया है। मैं आराम भी काफी करता हूँ।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १३६

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूट गया है।

५०. एक टिप्पणी[1]

वर्धा
३० सितम्बर, १९३३

यह रकम हरिजन-कोषके लिए दिल्ली हरिजन सेवक-सघको भेजी जाये।

मो० क० गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०७१) से।

५१. भविष्यका वर्ण-धर्म

एक सनातनी सज्जन लिखते है :[2]

इस प्रकारके प्रश्नोका सीधा जवाव देना कठिन है। कोई त्रिकालदर्शी ही इनका उत्तर दे सकता है। दूसरे तो कोरा अनुमान ही लगा सकते है। मेरे लिए तो वर्तमानका ज्ञान और तदनुसार आचरण ही पर्याप्त है। 'चूकै मति यह दाँव, कहा आगेकी सोचे', आस्तिक और नास्तिक दोनो ही इसे अन्त.करणसे गा सकते है। नास्तिकके अरमान तो खाने-पीने और मौज उड़ानेमे ही पूरे हो जाते है, और आस्तिकके अरमान भगवद्भक्ति और उससे प्राप्त कर्त्तव्य-कार्यमे तन्मय हो जानेमे सम्पन्न होते है। मै अपनेको आस्तिक मानता हूँ और अपने वर्तमान कर्त्तव्यको पूरा करनेमे ही कृतार्थता मानता हूँ। आज जैसा करूँगा, भविष्यमे वैसा भरूँगा, अर्थात् यह निश्चित है कि वर्तमान कर्मानुसार ही भविष्य बनेगा। इसीलिए वर्ण-धर्मके भविष्यके विषयमे मुझे चिन्ता नही है। इन सनातनी सज्जनसे भी मै यही सिफारिश करूँगा कि वह भविष्यकी चिन्तामे न पड़े। मेरी तरह जो वर्ण-धर्म मानता है, और मेरी बताई व्याख्या ही जिसे स्वीकार है वह उसीके अनुसार अपना आचार-विचार रखे तो वह पूर्णतया अपने धर्मका पालन करनेवाला समझा जायेगा।

फिर एक दूसरी बात भी ध्यानमे रखने योग्य है। किसी भी धर्मके मूल सिद्धान्तमें व्यापक बननेकी क्षमता होनी चाहिए। जिन सिद्धान्तोमे ये गुण नही होते, वे सिद्धान्त ही नही कहे जा सकते। यदि वर्ण-धर्मका सिद्धान्त व्यापक न हो तो

१. गांधीजीने १४-१०-१९३३ को अमृतलाल वि० ठक्करको लिखे पत्रमें जिस टिप्पणीकी चर्चा की है, वह सम्भवतः यही है।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने अपने पत्रमें गुजरातके हरिजनोंको दृष्टिमें रखते हुए लिखा था कि सच्चे अर्थोमें वर्णाश्रम-धर्मकी प्रतिष्ठा अब दुर्लभ ही है।

उसकी उत्पत्ति किसी विशेष काल, स्थान और संयोगमें होनी चाहिए; और इनमें से किसी एकके भी वदलते ही वर्ण-व्यवस्था भी वदल जानी चाहिए। वर्ण-व्यवस्था अगर इतनी क्षणजीवी वस्तु हो तो चाहे वह रहे या न रहे, उसके सम्बन्धमें कुछ भी विचार करनेकी जरूरत नहीं है। पर अपनी व्याख्यानुसार, मैं वर्ण-धर्मको सर्वव्यापक सिद्धान्त मानता हूँ। उसके पालनपर ही जनसमाजके अस्तित्वका आधार है। यदि मेरे विश्वासमें तथ्य है तो भविष्यमें वर्ण-धर्म अवश्य व्यापक होगा, फिर भले ही वह चाहे जिस नामसे पुकारा जाये। वर्ण-धर्मका अभिप्राय है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी पैतृक आजीविकाके साधनसे सन्तुष्ट हो। इस योजनाके मूलमें अहिंसा है, ईश्वरीय नियमका ज्ञान है, शुद्ध अर्थशास्त्र है और मनुष्यत्व है। इस वर्ण-धर्मका पालन न हुआ तो अभूतपूर्व पारस्परिक संहार ही होगा। ज्यों-ज्यों करोड़ोंमें जागृति आती जायेगी, सव धनवान होना चाहेंगे, सब वड़े बनना चाहेंगे और नीच कहे जानेवाले धन्धे कोई नहीं करना चाहेगा, त्यों-त्यों ऊँच-नीचकी भावना और अधिक वढ़ती जायेगी। मुझे लगता है कि इसका परिणाम आपसकी मार-काटके सिवा और कुछ नहीं होगा।

पर मनुष्यके स्वभावमें ही आत्म-रक्षाका गुण मौजूद है। इसलिए मनुष्य वर्ण-धर्मका आश्रय लेगा और बच जायेगा। सब अपने-अपने पैतृक धन्धोंमें लगे रहेंगे, किसी धन्धेको ऊँचा-नीचा माने बिना ही सब अपना-अपना जीवन बितायेंगे। ऐसा होनेपर अगर कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, आदि नामोंसे प्रसिद्ध न होकर, दूसरे नामोंसे प्रसिद्ध हो, तो उसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। वर्ण चारके बजाय दो हो सकते हैं और चारसे अधिक भी। इतना स्पष्ट है कि वर्णके महान नियमोंका पालन करनेसे हम पूंजीवाद और मजदूरवाद आदिके कलहसे वच जायेंगे। इस व्यवस्थामें एक ओर तो अतिशय लोभ, धन, और मद नहीं होगा, और दूसरी ओर लाचारी, कंगाली और दीनता न होगी। सव मिलकर प्रेमसे रहेंगे, कोई किसीको ऊँच या नीच नहीं मानेगा।

इतना लिखकर अब मैं अपनी कल्पनाके घोड़ेपर सवार होकर थोड़ी सैर करना चाहूँगा। अगर वर्ण-व्यवस्थाकी रचना कोई मुझे करने दे और मैं भारतमें होऊँ, तो उसका श्रीगणेश मैं ब्राह्मणोंसे ही करूँ। वे निश्चित रूपसे अनुभव-ज्ञान और उसके आधारपर रचे हुए आचारके रक्षक होते हैं, अतः उनके सहयोगसे दूसरे वर्ण स्वयं व्यवस्थित हो सकते हैं। कारण यह है कि उनका अनुभव स्वयंसिद्ध होता है और वे निःस्वार्थ होते हैं, अतः सहज ही सव लोग उनका अनुसरण करेंगे। उनमें कार्यकुशलता भी होती है। कौन ब्राह्मण है, यह प्रश्न ही तव नहीं रहेगा। आज जिसे हरिजन कहा जाता है वह ब्राह्मणकी तरह सर्वसामान्य होगा, और जो ब्राह्मण है वह अपनेको शूद्र कहे जानेमें संकोच नहीं करेगा। मैं जिस कालकी कल्पना कर रहा हूँ उसमें मुझे कुछ अड़चन नहीं आयेगी. कारण कि उस समय ऊँच-नीचकी भावनाका सर्वथा उन्मूलन हो चुकेगा और सब अपने-अपने गृहकर्ममें लग जायेंगे, तथा सहज ही अपने-अपने स्थानमें सुव्यवस्थित जम चुके होंगे। कल्पनाके घोड़ेकी यात्राका लम्बा वर्णन करनेमें कुछ विशेष लाभ नहीं होता। इसलिए थोड़ा मार्गदर्शन करके ही समाप्त

करता हूँ। पर मेरे इस लेखसे इतना तो समझ ही लेना चाहिए कि वर्ण-धर्म यहाँ अहिंसा-प्रधान माना गया है, अतः उसमे राजदण्ड अथवा बलात्कारके लिए स्थान ही नही है। मनुष्य-स्वभावमे यदि वर्ण-धर्म है, तो उसका उद्धार हो ही जायेगा। वर्ण-धर्म यदि मानव-स्वभावके विपरीत है, तो आज उसका जो लोप हो चला है वह ठीक ही है। मनुष्य पशुजातिका जन्तु-विशेष ही नही है, बल्कि वह प्राणी है, जिसमे से पशुत्व दिन-दिन कम होता जाता है और जो अज्ञानकी मूर्च्छासे जाग्रत होकर आत्मार्थी बनता जाता है। मानवप्राणीकी रचना ही आत्माको पहचाननेके लिए हुई है और वह आत्म-स्वरूप ही है। इसलिए किसी-न-किसी दिन ऊँच-नीचके मिथ्या प्रपचसे निकल कर, वह आत्मैक्य बढानेवाली वर्ण-व्यवस्थाको स्वय स्वीकार करेगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १-१०-१९३३

५२. पत्र : पद्माको

१ अक्टूबर, १९३३

चि० पद्मा[1],

तू मुझे माफ कर देगी न? तुझे लिखनेका मन तो रोज करता है, लेकिन समयकी कमीके कारण तुझे लिख नही पाता। अब तो तू और सरोजिनी देवी[2] अच्छी हो गई होगी। तू मुझे अपना कार्यक्रम बतलाना। तेरा दूसरा पत्र आनेपर ज्यादा लिखूंगा। आनन्दी, बबु, बचु, प्रभावती और मीराबहन और बा मेरे साथ हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१४४) से। सी० डब्ल्यू० ३४९९ से भी; सौजन्य. प्रभुदास गाधी

५३. पत्र : सुदर्शन वी० देसाईको

१ अक्टूबर, १९३३

चि० मावो,

तू मावे जैसा मीठा है क्या? न हो तो बनना। अपनी लिखावट रोज सुधारना। वहाँ मन अच्छा लग गया है क्या?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७६३) से; सौजन्य : वालजी गो० देसाई

१. संयुक्त प्रान्तके एक कांग्रेसी कार्यकर्त्ता सीतला सहायकी लड़की।
२. पद्माकी माँ।

५४. पत्र: धीरू सी० जोशीको

१ अक्टूबर, १९३३

चि० धीरू,

अब तेरा बुखार उतर गया होगा। तू अपनी छुट्टियाँ वहाँ ही शान्तिके साथ बिताना। गिजुभाई[1] का कहना है कि वहाँ रहा जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३१६) से।

५५. पत्र: दूधीबहन वी० देसाईको

वर्धा
१ अक्टूबर, १९३३

चि० दूधीबहन,

तुम्हें पत्र लिखनेकी इच्छा तो बहुत होती है, लेकिन समय ही नहीं मिलता। तुम्हें वह जगह अनुकूल आ गई जान पड़ती है। मेरा खयाल है यदि कुसुम[2] मान जाये तो उसका धर्म है कि राणावावमें रहकर वह अपने स्वास्थ्यको सुधारे। आशा है तुम आनन्दपूर्वक होगी। वालजीके पत्रमें कुछ जानने योग्य हो तो मुझे लिखना। सबके पत्र इसके साथ हैं, यथा कुसुम, बलभद्र[3], इन्दु, नानु[4], भावो[5] और धीरू।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४५३) से; सौजन्य: वालजी गो० देसाई

१. गिजुभाई बधेका, शिक्षा-शास्त्री और लेखक।
२. कुसुम गांधी, जो तपेदिकसे ग्रस्त थी।
३. बलभद्र एन० पटेल।
४ और ५. दूधीबहनके पुत्र जिनका नाम क्रमसे विमलचन्द्र और सुदर्शन था।

५६. पत्र : द० बा० कालेलकरको

१ अक्टूबर, १९३३

चि० काका,

तुम्हारा पत्र मिला। बहुत प्रतीक्षा करवाई। लेकिन अब उसका कारण समझमें आया।

तुम्हें जमनालालजीकी अनुमति लेनेकी जरूरत नहीं, क्योंकि तुम आश्रमवासी हो। . . .[1]

आश्रमके दानके बारेमें मैंने घनश्यामदासको आज ही पत्र[2] भेजा है। वल्लभभाईको लिखा तुम्हारा पत्र मुझे तो ठीक लगा है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४७९) से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

५७. पत्र : जयश्री रायजीको

१ अक्टूबर, १९३३

प्रिय बहन,

तुमने जो कार्य शुरू किया है उसके लिए तुमने मेरा आशीर्वाद माँगा है, और चूंकि वह देना मुश्किल नहीं है इसलिए यह लो। इसके अतिरिक्त तुमने किसी चीजकी कामना नहीं की है। लेकिन मेरे समझनेमें यदि कोई भूल हुई हो तो सुधारना; और बातको साफ-साफ लिखना ताकि मुझसे जो बन पड़ेगा उसे पूरा करनेमें नहीं चूकूंगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

बापुजीनी शीतल छायामां मे प्रकाशित गुजरातीकी अनुप्रतिसे, पृष्ठ ८ के सामने।

१. यहाँ कुछ अंश काट दिया गया है।
२. देखिए "पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको", ३०-९-१९३३।

५८. पत्र : एफ० मेरी बारको

२ अक्टूबर, १९३३

चि० मेरी,

मैं छतपर टहल रहा हूँ और इस बीच डंकन मेरे पास आया है, वह मुझे तुम्हारा और अपना स्नेहाभिवादन कहता है। मैं तुम्हारे इस स्नेहको अपने हृदयमें सँजोकर रखूंगा। लेकिन मै चाहता हूँ कि तुम्हारी कमजोरी दूर हो जाये और तुम जल्दसे-जल्द उठकर काम करने लगो। भगवान करे तुम जल्द ही अच्छी हो जाओ। बेशक, मैं तुम्हारे स्वास्थ्यके सम्बन्धमें पूरी जानकारी रखता हूँ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६००६) से; सी० डब्ल्यू० ३३३२ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

५९. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

२ अक्टूबर, १९३३

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। मथुरादास भी लिखता है कि तुम मेरी चिन्ता करती रहती हो। लेकिन यह जगह मेरे मनको खूब भा गई है। मैं ठीक खाना खाता हूँ, वजन भी बढ़ रहा है, रक्तचाप कम होता जाता है; इसलिए चिन्ता करने जैसी कोई बात नहीं है और महाबलेश्वर जानेकी भी कोई जरूरत नहीं है। जो काम मैं यहाँ निबटा सकता हूँ सो वहाँ नहीं कर सकता, ऐसा मुझे लगता है। इसके अलावा इस समय मैं इतना ज्यादा खर्च करनेकी जरूरत भी नहीं समझता।

तुम्हारा जुकाम तो बिल्कुल ठीक हो गया है न?

बा आज खादी-कार्यके लिए नागपुरमें गई है।

लड़कियोंको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८३३) से; सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी

६०. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

असंशोधित

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
३ अक्टूबर, १९३३

प्रिय चार्ली,

तुम्हारा पत्र मिला।

तुमने उड़ीसाके बेहतर और अनुकूल वातावरणके बारेमे जो बताया है उसे मै समझता हूँ और उससे मुझे खुशी हुई है। ठक्कर बापा किसी सूरतमे भी उड़ीसा नही जा सकते, कमसे-कम इस समय तो नही, लेकिन उनके अलावा कोई और योग्य व्यक्ति थोडे ही समयमे वहाँ पहुँच जायेगा।

'आमरण अनशन' का तुमने जिन अर्थोमे उपयोग किया था उसमें मैंने सुधार किया था, लेकिन मै देखता हूँ कि तुम फिर उसी अर्थमे उसका उपयोग करने लगे हो। मैंने तुम्हे बताया था कि अबतक मैंने जितने उपवास[1] रखे है उनके साथ शर्त जुडी रहती थी; यहाँतक कि सबसे आखिरी उपवास भी सशर्त था। मै यह अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि किसी व्यक्तिको विना किसी शर्तके आमरण अनशनकी बात रुचिकर न लगे, हालाँकि मै तुम्हे बता चुका हूँ कि जीवनके प्रति मेरा जो दृष्टिकोण है उसमे अत्यन्त असामान्य परिस्थितियोमे बिना किसी शर्तके उपवासको भी स्थान है। लेकिन मै उस अन्तिम स्थितिकी चर्चा करनेकी कोई जरूरत नही समझता। मैं सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूँ कि गुरुदेवसे बातचीत करते हुए तुम्हे इतनी सावधानी बरतनी चाहिए कि 'आमरण अनशन' का जो शाब्दिक अर्थ है, उस अर्थमे उसपर कोई दलील न करो। इसलिए सबसे अच्छा यही होगा कि तुम गुरुदेवके साथ केवल मेरे उन उपवासोंकी ही चर्चा करो जिनके बारेमे गुरुदेव सन्तुष्ट नही है, जैसाकि शायद मेरा पिछला उपवास था; और वहाँ भी यह कहना बिलकुल एक बात होगी कि अभीतक जो तथ्य मालूम हुए है उनको देखते हुए उपवास करनेको उचित नही कहा जा सकता, और यह कहना बिलकुल दूसरी बात है कि हरिजनोके बारेमे जो प्रश्न मैंने यरवडामे उठाया था, उस प्रश्नपर किसी भी स्थितिमे उपवास करना उचित नही कहा जा सकता। मेरे सामने एक अत्यन्त कष्टकर किन्तु दिलचस्प मामला है, जिसमे मैंने एक कार्यकर्तासे सत्य और सम्मानकी रक्षाके लिए पश्चात्ताप रूप उपवास रखनेके लिए कहा है। मैंने गुजरातीके 'हरिजन'[2] मे इसके बारेमे चर्चा की है। तुम्हे अगले सप्ताहके अंग्रेजीके 'हरिजन'[3] मे भी यह देखनेको मिलेगा।

१. १६ अगस्तसे २३ अगस्त तक; देखिए खण्ड ५५।
२ और ३. देखिए "उपवास कब आवश्यक होता है?", ८-१०-१९३३।

उम्मीद है तुम अपनी शक्ति-सीमासे ज्यादा काम नही कर रहे हो। म खूब मजेमे चल रहा हूँ। मैंने अपने प्रस्तावित दौरेके बारेमे तुम्हें निश्चिन्त करते हुए परसों एक पत्र लिखा था।[1]

सप्रेम,

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७९६) से।

६१. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

असंशोधित

३ अक्टूबर, १९३३

प्रिय कुमारप्पा,

तुम्हारा पत्र ठीक उसी समय आया है जब मुझे उसकी आशा थी। जब तुम इस पत्रका उत्तर दो तब तुम मुझे अपनी शारीरिक अवस्थाके बारेमे भी सब-कुछ लिखना। तुम जब यहाँ आना चाहो तब आ सकते हो और इस महीनेकी २३ तारीखसे पहले किसी भी समय आ सकते हो। यदि डाक्टर लोग मुझे जानेका प्रमाणपत्र दे देंगे तो मैं इसके बाद अपनी यात्रा आरम्भ कर सकता हूँ।

मैं काफी काम कर रहा हूँ और दिनमें कमसे-कम एक घंटा मुलाकातके लिए आनेवालोसे भेंट भी करता हूँ। इसमें हमेशा एक घंटेसे ज्यादा समय चला जाता है। इसलिए तुम्हें चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नही तथा मैं जानता हूँ कि तुम मुझे परेशान नही करोगे।

मैं आशा करता हूँ कि तुम्हारी बहनपर जो दैवी आपत्ति आ पड़ी है उसे वह वीरताके साथ झेल रही है। मैंने तो यह जाना है कि अखंडित सुखकी अपेक्षा, जो कि बाहरी परिस्थितियोंपर निर्भर करता है, ऐसे दुःख कभी-कभी भगवानकी ओरसे भेजे गये ज्यादा सच्चे वरदान सिद्ध होते हैं।

चन्द्रशंकर, जो कि मेरी मदद कर रहा है, विशेष रूपसे तुम्हे अपना नमस्कार भेजता है। मुझे इस हफ्ते किसी भी समय काका साहबके यहाँ आनेकी उम्मीद है और हो सकता है कि वह कुछ समयतक यहाँ रहें।

सप्रेम,

बापू

श्रीयुत जे० सी० कुमारप्पा
मार्फत श्री सी० वी० नरसय्या
कोयम्बटूर (द० भारत)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१००) से।

१. देखिए "पत्र : सी० एफ० एन्ड्र्यूजको", ३०-९-१९३३।

६२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

३ अक्टूबर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिला।

. . .[1]

आश्रमके बारेमे तुम मेरा पत्र[2] समाचार-पत्रोमे देखोगे। जरूरत जान पडी तो तोतारामजी[3] को भेजूंगा। परीक्षितलाल भी वही रहेंगे। कोई दिक्कत नही होगी।

मणिको मैंने लिखा है कि वह ठीक इलाज करवाके ही आये।

. . .[4]का काम तो ऐसे ही चलेगा। उसे सुधारना तो कुत्तेकी पूंछको पत्थरके साथ बांधने जैसा है। कृष्णा नेहरूके बारेमे तुमने पढ़ा ही होगा।

अब चूंकि मुझे और काम करने हैं इसलिए आज इतनेसे ही समाप्त करता हूँ। जमनालालजी मेरी बगलमे ही बैठे है, और कहते है कि उनके सम्बन्धमे तुम कोई चिन्ता न करना। आवश्यकता हुई तो वे पहाड़पर जायेंगे। उनका वजन १९० पौंडतक तो पहुँच गया है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ३२

६३. सलाह : जापानी बौद्ध स्थविरोंको[5]

४ अक्टूबर, १९३३

मुझे खुशी है कि आपसे मुलाकात हो सकी और काफी दिलचस्प बाते हुईं। आपने मुझे जो लम्बा पत्र भेजा था उसे मैं सावधानीपूर्वक पढ गया हूँ।

आपके मनमे जो यह इच्छा है कि भारतमे बौद्ध-धर्मकी पुनर्स्थापना हो, उसको मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ और मैं उसकी सराहना करता हूँ; केवल मैं आपको

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूट गया है।

२. देखिए "पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको", ३०-९-१९३३, जो ७-१०-१९३३ के *हरिजन* में प्रकाशित हुआ था।

३. तोताराम सनाढ्य, एक आश्रमवासी।

४. साधन-सूत्रमें नाम नही दिया गया है।

५. रेवरेंड फूजी और रेवरेंड ओकीत्सु ४ अक्टूबरको गांधीजीसे मिले थे। इस मुलाकातकी संक्षिप्त रिपोर्ट ५-१०-१९३३ के *हिन्दू* में प्रकाशित हुई थी।

यह बताना चाहूँगा कि बौद्ध-धर्मका चाहे जो भी अर्थ हो, भगवान गौतम बुद्धके उपदेशोंके सारको हिन्दू-धर्ममें समाविष्ट कर लिया गया है और मेरे खयालसे, तुलनात्मक दृष्टिसे कहें तो, इस महान् सुधारकके उपदेशोंकी शुद्धताको भारतमें ही सबसे ज्यादा सुरक्षित रखा गया है। बाहरके जिन देशोंने इस धर्मको अपनाया है उन देशोंमें, जैसा कि मुझे लगता है, इस धर्मका ह्रास हुआ है: उदाहरणके तौरपर, महात्मा बुद्धकी शिक्षा अनिवार्य रूपसे यह थी कि न केवल मनुष्य-मनुष्यमें भ्रातृत्वकी भावनाका विकास हो बल्कि जीवमात्रमें इस भावनाका प्रसार हो। इसमें आश्चर्य की कोई बात भी नहीं है। मेरे विचारसे महात्मा बुद्धने किसी नवीन धर्मकी स्थापना नहीं की। उन्होंने तो एक सच्चे हिन्दूके नाते हिन्दू-धर्मको एक नई दिशा दी थी। इसलिए मैं आपको सुझाव देना चाहूँगा कि आप संस्कृत और पाली का अध्ययन करें और भगवान बुद्धकी शिक्षाके सम्बन्धमें अपने ज्ञानमें अभिवृद्धि करें। संस्कृतका अध्ययन करना इसलिए जरूरी है ताकि आपको मालूम हो सके कि यह उपदेश कहाँसे लिया गया है तथा जिस समय यह उपदेश दिया गया था उस समय क्या परिस्थितियाँ थीं; तथा यह बिलकुल स्पष्ट है कि पालीका अध्ययन भी अनिवार्य है, क्योंकि बौद्ध-धर्मके मूल धर्मग्रन्थ इसी भाषामें हैं। और चूँकि आप हिन्दुस्तानियोंके सुख-दुःखके साथी बन गये हैं, मैं आपसे कहूँगा कि आप हिन्दी अथवा हिन्दुस्तानी पढ़नेकी अनिवार्यताको समझें और उसपर ध्यान दें।

अन्तमें मेरा आपसे यह निवेदन है कि चाहे जैसे धार्मिक पुनर्जागरण की आवश्यकता हो, वह व्याख्यान और पाण्डित्यसे नहीं बल्कि अपने जीवनमें पवित्रताको बढ़ाकर और सर्वज्ञपर, उस जीवन्त सत्यपर प्रार्थनापूर्वक श्रद्धा रखनेसे ही सम्पन्न हो सकता है जो इस ब्रह्माण्डके कण-कणमें व्याप्त है, जो इसे प्रकाश देता है और जिसके बलपर यह टिका हुआ है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-१०-१९३३

६४. पत्र: अमृतलाल वि० ठक्करको

वर्धा
६ अक्टूबर, १९३३

भाईश्री ठक्कर बापा,

तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। तुमने विधान रायकी खूब याद दिलाई। मेरी स्मरण-शक्ति तो घास चरने चली गई जान पड़ती है। तुमने याद न दिलाई होती तो रह जाता। अब तो कल पत्र अवश्य जायेगा।

अब दौरेके बारेमें। घनश्यामदास लिखते हैं कि मुझे १५ नवम्बरसे पहले दौरेपर रवाना नहीं होना चाहिए। डॉ० खरेका[1] भी यह आग्रह है कि मैं कमसे-कम छः सप्ताह तक दौरा न करूँ। इसलिए मैंने ८ नवम्बर तक यहीं रहना मंजूर किया है।

१. डॉ० एन० बी० खरे।

बुधवार ८ तारीखके रोज मैं दौरा शुरू करूँगा। इससे जमनालालजीको भी सन्तोष मिलता है। मुझे भी लगता है कि रवाना होनेकी तारीख भले ही ८ नवम्बर हो। इस बीच, मेरे पास कुछ काम पड़े हुए हैं वे भी पूरे हो जायेंगे। हरिजन निवासके लिए भी मुझे विचार तो करना ही होगा। अहमदाबादके मजदूरोका मामला भी है, और फिर यहाँका भी बहुत सारा काम देखना बाकी है। यदि तुम इस विलम्बको उचित समझते हो तो उसके अनुरूप फेरबदल करना होगा। दौरेका सम्पूर्ण कार्यक्रम बनाते समय ऐसा करो · मध्यप्रान्तके लिए जमनालालजी यहाँके कार्यकर्त्ताओसे मिलकर नमूनेके तौरपर एक कार्यक्रम बनाकर भेजे। अन्य प्रान्तोके सप्ताह निर्धारित कर दो और उनसे उन सप्ताहोका कार्यक्रम लिख भेजनेको कहो। ऐसा करनेके बाद कोई फेरबदल नही करना पडे। इसके बाद हमे नौ मासका पूरा कार्यक्रम एकबारगी प्रकाशित न करके प्रान्त-प्रान्तके दौरेका कार्यक्रम पहले प्रकाशित करना चाहिए जिससे यदि छोटे-मोटे कोई परिवर्तन करने आवश्यक ही हो तो हमे कोई दिक्कत न हो। ऐसा करे तो हमे सबसे पहले दो प्रान्तोका कार्यक्रम प्रकाशित करना चाहिए। और एक प्रान्तके खत्म होनेपर दूसरे प्रान्तका कार्यक्रम प्रकाशित हो। ऐसा करनेसे मेहनत भी कम पडेगी। जब जमनालालजी अपने सुझाव तैयार करेंगे तब मैं विस्तारसे लिखूँगा।

अब हरिजन निवासके सम्बन्धमे; इसे नाम क्या दिया जाये? मैं अनुभव करता हूँ कि हमे हरिजन शब्दका प्रयोग नही करना चाहिए, लेकिन जिस शब्दका प्रयोग करें उसमे हमारा उद्देश्य स्पष्ट होना चाहिए। हमारा उद्देश्य तो अन्तत हरिजन शब्दको भुला देना है अथवा सबको हरिजन बन जाना हैं। इसीलिए विनोबाका सुझाव है कि हम उसका नाम सर्वोदय मन्दिर अथवा 'समभाव मन्दिर' रखे। मुझे तो निश्चय ही पहला नाम पसन्द है, क्योकि रस्किनकी प्रसिद्ध पुस्तक[1] को आजसे बीस वर्ष पहले मैंने यही नाम दिया था। इस तरह हरिजन शब्दका भी समावेश हो ही जाता है। इस नामके बारेमे घनश्यामदासके साथ बातचीत करके मुझे लिखना। पत्रमे लिखी दूसरी चर्चाके बारेमे भी घनश्यामदासको समझाना।

बबलभाई[2] ने तुम्हारा और मेरा कहना माना, इस बातसे मुझे बहुत खुशी हुई है। वह यदि अपना नाम वापस न लेते तो स्थिति बहुत विषम हो जाती।

बापू

[पुनश्च :]

जैसे हम काठियावाडको कुछ नही दे सकते उसी तरह दिल्लीको भी नही देंगे। श्रीवास्तवजीके पराक्रमका समाचार तो मुझे बहुत पहलेसे मिल गया था। लेकिन घरकी फूटका दुखडा हम किसके आगे जाकर रोये?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२४) से।

१. अनटु दिस लास्ट; देखिए खण्ड ८।

२. बबलभाई मेहता।

६५. पत्र : माणेकलालको

६ अक्टूबर, १९३३

चि० माणेकलाल,

तुमने पत्र लिखा सो ठीक किया। आजकल कैसी नौकरी है? कितनी तनख्वाह मिलती है? बाकी सब तो तुम्हें राधाके पत्रसे मालूम हो जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२३, ३६९) से।

६६. पत्र : राधा गांधीको

६ अक्टूबर, १९३३

चि० राधा,

मैं तेरा गुनहगार हूँ। मैं काममें इतना ज्यादा व्यस्त रहता हूँ कि तेरे जैसे प्रियजनोंको भूल जाता हूँ और वे [पत्रोंके बिना] रह जाते हैं। तुम सबकी याद मनमें बनी तो रहती है, लेकिन पत्र लिखना रह जाता है। तुम सब सुखी हो, अपने-अपने संसारमें विचरण करते हो, यही जानकर मैं सन्तुष्ट रहता हूँ। तुझे यह आशीर्वाद देता हूँ कि तू दीर्घायु हो। मैं लिखूँ अथवा न लिखूँ, लेकिन तू लिखे यह बात जरूर अच्छी लगेगी। तेरा चेहरा तो हर पल मेरी आँखोंके आगे नाचता रहता है। मैं ठीक हूँ। बा यहीं है। रामदास और उसकी पत्नी भी यहीं हैं। देवदास जेलमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२३) से।

६७. टिप्पणियाँ

धन कैसे एकत्र किया जाये

बहुत-सी सस्थाओके सचालक समझते है कि जनतासे केवल अपील निकाल देनेसे ही उनकी संस्थाओको पैसा मिल सकता है। पर यह बात तो इने-गिने सुप्रसिद्ध और तपे हुए लोक-सेवकोंके मामलेमे ही सही है। मुलर और रामकृष्ण परमहस-जैसे महा-पुरुषोंको तो मूक प्रार्थनापर ही पैसा मिल जाता है। ऐसे विरले सन्तोकी एक मूक इच्छा ही, बेतारकी तारबर्कीके सन्देशके समान, लोगोके पास पहुँच जाती है। पर अधि-काशमे साधारण जन-सेवकोको धन-संग्रह करनेके लिए भारी परिश्रम करना ही पड़ेगा। और परिश्रम उठानेका अच्छेसे-अच्छा रास्ता यही है कि घर-घर घूमा जाये। कार्य न्यायोचित हो — हमारा कार्य तो न्यायोचित है ही — और कार्य करनेवालोकी प्रामाणिकता लोग जानते हो, तो पैसा अवश्य मिलेगा। घर-घर जाकर भिक्षा माँगना एक प्रकारका उत्तम प्रचार-कार्य भी है। दानी सदा ही कड़े होते है और होने ही चाहिए। जिस सस्थाके लिए उनसे मदद माँगी जाती है, उसकी सब आवश्यकताएँ वे पूछते है, जो उचित ही है। इसलिए जो सेवक भिक्षा माँगने जाये, उन्हे वस्तु-स्थिति और यथार्थ आँकडोकी तैयारी करके ही जाना चाहिए। पर सबसे अधिक जरूरत तो धीरजकी है। कही अपमान भी हो जाये तो वह उन्हे सहन कर लेना चाहिए। अन्तमे वे देखेंगे कि जहाँ प्रामाणिकता और कार्यशक्तिके विषयमे शका नही होती, वहाँ पैसा मिलनेमे कमसे-कम कठिनता पड़ती है। ये दोनो गुण जहाँ नही होते वहाँ धन होना भी भार-रूप हो जाता है। यह बात आजकलकी बहुत-सी तथा-कथित धार्मिक सस्थाओमे देखी जाती है, जिनके पास प्रचुर द्रव्य होनेपर भी उनमे सड़न फैल गई है।

अप्रामाणिक और निकम्मे न्यासी लोग इन न्यासोंकी पूरी देखभाल नही कर सकते। उनके हाथोमे धन या तो व्यर्थ ही जमा रहता है और उसका कुछ सदुपयोग नही होता, या फिर धर्मके नामपर वे घोर अनाचार तथा दूसरी भ्रमपूर्ण प्रथाओमे अपने द्रव्यका दुरुपयोग करते है।

एक अमेरिकावासीका सुझाव

एक अमेरिकी मित्र, जो भारतकी स्थितिसे काफी कुछ परिचित है और हरिजन-कार्यमे जिनकी काफी रुचि है, मेरे एक पत्रके उत्तरमे लिखते है :[1]

> . . . मुझे लगता है कि यदि जगह हो तो जो-कुछ काम किया गया हो उसके वर्णनके साथ-साथ यह भी बताया जाना चाहिए कि इसके मुकाबले पहले

१. यहाँ पत्रके केवल कुछ अंश दिये गये हैं।

> क्या दशा थी। . . . फिर यह भी प्रकट कर देना चाहिए कि प्रत्येक बस्तीमें हरिजनोंकी तादाद क्या है, जिससे मालूम हो सके कि नई सुविधा का लाभ कितने मनुष्योंको मिलता है, और वह सुधार किस हदतक पर्याप्त या अपर्याप्त है। साथ ही यह भी बताना चाहिए कि उन जगहोंमें ऊँची कही जानेवाली जातियोंको क्या-क्या सुविधाएँ प्राप्त हैं। . . .

इन अमेरिकी मित्रके सुझावका अभिप्राय यह है कि हमें अधिक कड़ाईके साथ सत्यका पालन करना चाहिए। हमारे सेवा-कार्यके विवरणोंमें कितनी ही सावधानी बरती जाये, वह कम है। इन विवरणोंमें हमारी शक्ति और हमारी कमजोरी दोनों प्रतिबिम्बित होनी चाहिए। बहुधा संस्थाओंके वर्णन छटायुक्त शब्दचित्रोंसे आकर्षक बना दिये जाते हैं। पर इन वर्णनोंमे न तो सत्य ही होता है और न यथार्थ स्थितिका प्रतिम्बिब ही। लेकिन सचाईसे दूर होनेके कारण इन विवरणोंका भी वही हाल होता है जो साधारण पत्रोंमें छपे हुए लेखों और सार्वजनिक समाचारोंका होता है। पाठक इन विवरणोंको पढ़तेतक नही, और पढ़ते भी हैं तो उनपर विश्वास नहीं करते। जैसाकि पत्र-लेखकका कहना है, पुरानी और नई स्थितिका तुलनात्मक विवरण देनेसे पाठकगण आँकड़ों और तथ्योंको अधिक अच्छी तरह समझ सकेंगे। जबतक कोई खास जरूरत न हो, इन विवरणोंमे छटायुक्त वक्तृत्व या लेखककी अपनी राय नही आनी चाहिए। वर्णन संक्षिप्त और उद्देश्ययुक्त होने चाहिए। कुछ भी प्रगति न होनेपर, प्रायः सेवक-जन कह दिया करते हैं कि कोई खबर देने योग्य नहीं है। ये लोग भूल जाते है कि खास जरूरत तो उनके अपने कार्योंके बारेमें सच्ची सूचना की है। इस तरह अगर व्यवस्थित काम हो, तो उनका सच्चा कार्य-विवरण दूसरे कार्यकर्त्ताओंके लिए उपयोगी सिद्ध हुए बिना न रहे। हो सकता है कि हमें हमेशा सफलता न मिले, पर सफलताके लिए आवश्यक प्रयत्न और दिन-प्रतिदिन एकाग्रता बढ़ाते जाना, इतना तो हम कर ही सकते है। सफलता इनके पीछे-पीछे आती है।

कार्य-विवरणोंका मूल्य

ठक्कर बापाने मुझसे अक्सर शिकायतकी है कि बहुत-सी संस्थाएँ अपने कार्य-विवरणकी रिपोर्टें नियमपूर्वक और समय से नहीं भेजतीं, और जो विवरण भेजे भी जाते है उनमे भी शब्दाडम्बर ज्यादा होता है, तथ्य और आँकड़े कम। इन संगठनोंके मन्त्री और कार्यकर्त्ता लोग इस बातका हमेशा ख्याल नहीं रखते कि इन रिपोर्टोंको केन्द्रीय कार्यालय अपने शौकके लिए नहीं मँगाता, बल्कि इसलिए मँगाता है कि रोज-बरोजकी नीति निर्धारित करनेमें केन्द्र इन रिपोर्टोंसे मार्ग-दर्शन ग्रहण करता है, विभिन्न संगठनोंके कार्यकी जाँच करने और उनका समन्वय करनेमें इनकी सहायता लेता है, और समय-समयपर जनताको इस आन्दोलनकी प्रगतिकी सूचना भी इनसे मिलती है। रिपोर्टें तैयार करनेका काम यदि पूरी ईमानदारीसे किया जाये तो उससे सभी क्षेत्रोंमे कार्यकर्त्ताओंके कार्यको उत्तेजन मिलेगा और सभी संगठन अपेक्षित स्तरपर काम करेंगे। उदाहरणके लिए 'हरिजन दिवस' (गत २४ सितम्बर) के दिन

किये गये कार्यका विवरण यदि सभी कार्यकर्त्ता भेज दे, तो विभिन्न प्रान्तोमे मिली सफलता और विफलताका अनुमान लगाना सम्भव हो जायेगा, और तब यह भी निश्चित कर सकना सम्भव हो सकेगा कि अगले 'हरिजन-दिवस' के लिए क्या निर्देश जारी किये जाये। इसलिए मुझे आशा है कि ऐसे विवरण यदि पहले ही न भेजे जा चुके हो तो फौरन दिल्लीमे मुख्य कार्यालयको भेज दिये जायेगे। और किसी पाठकको यदि अपने अनुभवोके बारेमे कुछ विशिष्ट बात बतानेको हो, तो मै उससे कहूँगा कि वह उन्हे सीधे मेरे पास भेजे। मै आशा करता हूँ कि 'हरिजन दिवस' मनानेकी तैयारी के सिलसिलेमे जो-कुछ चन्दा जमा किया गया हो और जितना कुछ व्यय हुआ हो, उसका बिलकुल सही ब्योरा इन रिपोर्टोमे भेजा जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-१०-१९३३

६८. वे क्या मानते है

राव बहादुर एम० सी० राजाने कुछ समय पहले मन्दिर प्रवेश विधेयक[1] के सम्बन्धमे गत २४ अगस्तको विधान-सभामे दिये गये अपने भाषणकी एक प्रति भेजी थी। पाठकोको नीचे उनके भाषणके विपुल उद्धरण मिलेगे।[2] भाषणके दौरान टोक-टाक, उनके प्रत्युत्तर और अन्य गैर-महत्त्वपूर्ण अश छोड दिये गये है।

उनके इस भाषणका महत्त्व उनके ऐतिहासिक वक्तव्योकी यथार्थताकी दृष्टिसे उतना नही है जितना कि इस बातमे है कि बहुतसे लोग वास्तवमे उनमे उतने ही दुराग्रहपूर्वक विश्वास करते है जितने दुराग्रहपूर्वक कि सनातनी लोग, जो कि हरिजनो को किसी मानवीय अधिकारका पात्र मानते ही नही, अस्पृश्यताका समर्थन करनेवाले वक्तव्योमे विश्वास करते है। अन्तत. इस प्रश्नका निर्णय ऐतिहासिक साक्ष्यसे या ऐसे सस्कृत ग्रन्थोकी व्याख्याके आधारपर नही होगा जिनका धार्मिक महत्त्व सदिग्ध है, बल्कि यह प्रश्न सर्वथा निर्दोष और शुद्ध मन तथा आचरणवाले सुधारकोके प्रार्थनापूर्ण और अनवरत प्रयत्नोसे तय होगा। कोई भी धर्म अपनी विगत उपलब्धियोपर जीवित नही रह सकता। उसके अनुयायी बराबर अपने तपस द्वारा उसे पोषण और जीवन न देते रहे तो वह धर्म मर जाता है। ज्ञानके बलपर नही बल्कि सही आचरणके बलपर धर्म फलते-फूलते है। जब शुद्ध अभिरक्षकोकी सतर्कता ढीली पड़ गई तब ही अस्पृश्यता, आज हम उसको जिस रूपमे मानते है, हमारे धर्ममे घुस आई। यह तभी समाप्त होगी जब तपसकी अटूट और अटूटनीय शृखला स्थापित कर दी जायेगी। पीढियोसे जन-साधारणके मनमे ऊँच और नीचका जो विचार भर दिया गया है उसे तमाम पडितो और तमाम शास्त्रियोका सर्वसम्मत निर्णय भी नही निकाल सकता।

१. इसे रगा अय्यरने प्रस्तुत किया था; देखिए खण्ड ५३।
२. यहाँ नहीं दिये गये है।

साधारण जनता उन लोगोंके आचरणकी साक्षी चाहेगी जिन्हें वह अपने धर्मका शुद्ध हृदय प्रतिनिधि मानती है।

तथापि मैं हिन्दू-धर्मके अध्येताओसे सिफारिश करूँगा कि वे राव बहादुर राजाके भाषणका ऐतिहासिक दृष्टिकोणसे अध्ययन करे। यह बात यदि असदिग्ध रूपसे सिद्ध हो जाये तो उसका काफी महत्त्व होगा कि कमसे-कम दक्षिणके हरिजन एक ऐसी सभ्यताके प्रतिनिधि हैं जिसे एक विजेता जातिने, जो मूल निवासियोके प्रति तिरस्कार व्यक्त करनेके लिए अपने-आपको आर्य कहती थी, ध्वस्त कर दिया था और मूल निवासियोंका अपने स्वार्थके लिए उपयोग किया और उन्हे गुलामोकी स्थितिमे पहुँचा दिया। मुझे मानना पड़ेगा कि इस कहानीकी सत्यतामें मुझे हमेशा गम्भीर सन्देह रहा है। श्रेष्ठताके ऐसे दावेदार एक उदात्त धर्मके निधान हो सकते हैं, इस बातको मैं अस्वीकार करता हूँ। यदि ऐतिहासिक साक्ष्य सन्देहातीत हो, तो हमे विवश होकर मानना पड़ेगा कि हिन्दू-धर्ममे जो-कुछ भी उदात्त है वह विजेताओकी देन नही है बल्कि पराजित और विजित लोगोकी देन है और अस्पृश्यता वह भ्रष्ट तत्त्व है जिसे विजेताओंने विजित लोगोकी संस्कृतिको स्वीकार करके उस संस्कृतिपर ऊपरसे थोप दिया था। इस विषयमे जो दो विचारधाराएँ हैं उनमे से सत्य किसी मे भी हो, लेकिन यदि हिन्दू-धर्मको जीवित रहना है तो अस्पृश्यताकी सर्वस्वीकृत बुराईको दूर करना नितान्त आवश्यक है। यह बात भी स्पष्ट है कि उक्त दो विचारधाराओके अनुसार हिन्दू-धर्मका उद्भव चाहे इसी देशमे हुआ हो या वह बाहरसे आया हो, लेकिन आरम्भमें उसमे अस्पृश्यताका दोष मौजूद नही था। किसी भी सूरतमे चूँकि अनार्यो और आर्योमे, जिनके बारेमें कहा जाता है कि वे बाहरसे आये थे, अब कोई अन्तर नहीं है और देशके मूल निवासियोमे वे घुलमिल गये हैं, इसलिए इस बातको तय करनेका या जाननेका भी कोई व्यावहारिक महत्त्व नही है कि कौन- सच्चा आर्य है। जो बात बहुत ही जबर्दस्त महत्त्व रखती है वह यह कि अस्पृश्यताके दानवपर प्राणान्तक आक्रमण करनेके लिए समस्त हिन्दुओको अपनी शक्ति लगानी पड़ेगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ७-१०-१९३३

६९. पत्र : कृष्णा नेहरूको

[७ अक्टूबर, १९३३][1]

चि० कृष्णा,

तुम्हारा पुनर्जन्म होनेवाला है, क्योंकि शादी एक तरहका पुनर्जन्म ही तो है, है न?

स्वरूप[2] दुलहन बनकर काठियावाडमे आई, पर उसने अपने पतिको अपने पुराने सूबे—यू० पी०—में जाकर बसनेके लिए तैयार कर लिया। लेकिन तुम्हारेमे और स्वरूपमें अन्तर है। रणजीत काठियावाड़ी और महाराष्ट्रीय होनेका दावा रखता है। गुणोत्तम सिर्फ गुजराती है और मै नही समझता कि उसे तू इलाहाबाद खीच ले जायेगी। तुम्हें तो बहुत करके गुजरात अथवा बम्बईमें ही रहना होगा। मेरी उम्मीद है कही भी तू रहे खुश रहेगी और माता-पिताके नामको उज्ज्वल रखेगी। ईश्वर तुझे और गुणोत्तमको सहायता करे। विवाहके समय मेरा आना तो नही हो सकता, इसलिए यहीसे आशीर्वाद भेजकर सन्तुष्ट रहना होगा।

बापूके आशीर्वाद

कोई शिकायत नहीं, पृष्ठ ११३-४

७०. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

७ अक्टूबर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले। पहलेका उत्तर देनेकी तो जरूरत नही।

मै देखता हूँ कि कृष्णाका विवाह २० को है। मुझे खुशी है। पर मुझे इलाहाबाद आनेका प्रयत्न नही करना चाहिए। मेरे लिए तो पर्देमें रहना ही बेहतर है, जबतक कि डाक्टर लोग यह ऐलान न कर दें कि मै एकदम स्वस्थ हूँ। साथका यह पत्र कृष्णाके लिए है।[3]

मै देखता हूँ कि तुम्हारी माँ अभी पूर्ण रूपसे संकटसे बरी नही हो पाई है। हम सब उम्मीद करे कि विवाहमें शरीक हो सकने लायक वे स्वस्थ हो जायेंगी।

१. सम्भवतः यह पत्र ७ अक्टूबर, १९३३ को जवाहरलाल नेहरूको लिखे पत्रके साथ संलग्न था; देखिए अगला शीर्षक।

२. विजयलक्ष्मी पण्डित; कृष्णा नेहरूकी बड़ी बहन।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

डी० एच० के लिए लिखा तुम्हारा लेख[1] मुझे बहुत पसन्द आया। मैं इसे अगाथा को भेज रहा हूँ कि वह इसका जैसा-कुछ उचित उपयोग कर सके, करे। वह एक अद्भुत कार्यकर्त्री है।

अपने जेलके अनुभवोंके ब्योरेके सम्बन्धमें मीरा बिलकुल ही भूल गई थी। अब उसकी पाण्डुलिपि तैयार है। एन्ड्रयूजको देनेके लिए इसे तुम्हारे पास भेजा जायेगा। और भी तुम जैसा चाहो इसका उपयोग कर सकते हो।

कार्यकर्त्ताओंके लिए क्या-कुछ किया जा सकता है, इस सम्बन्धमें मैं कुछ विचार कर रहा हूँ।

टंडनके मतभेदोंके बारेमें अखबारोंमें मैं जो पढ़ रहा हूँ, यह सब क्या माजरा है? क्या तुमने वह अनुच्छेद देखा है?

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

७१. पत्र : मणिबहन पटेलको

वर्धा
७ अक्टूबर, १९३३

चि० मणि,

तेरा पत्र मिला। जिन-जिनसे मिलना हो उन सबसे मिलकर और फुरसत पाकर मेरे पास आना। लेकिन इसका अर्थ यह न करना कि अगले युगमें आओगी तो भी चलेगा। बाबाको[2] जरूर साथ लाना। उसे अच्छा लगेगा। मेरी तबीयत सुधरती जा रही है अर्थात् ताकत आती जा रही है। मैं यहाँ ७ नवम्बर तक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मणिबहन पटेल
रामनिवास, पारेख स्ट्रीट
बम्बई-४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १०८

१. उपलब्ध नहीं है।
२. डाह्याभाई पटेलके पुत्र।

७२. पत्र : विपिन पटेलको

वर्धा
७ अक्टूबर, १९३३

चि० बाबा,

तुम्हारा पत्र मिला। हर अक्षरको मोती जैसा सुन्दर बनानेकी कोशिश करो। बुआ[1] के साथ अवश्य आओ। मुझे अच्छा लगेगा। तुम्हे खेलनेके मौके जरूर मिलेगें। यहाँ तुम्हारी उम्रके बच्चे है। क्या तुम दादाको पत्र लिखते हो?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १६३

७३. पत्र : जीवनजी डा० देसाईको

७ अक्टूबर, १९३३

भाईश्री जीवनजी,

तुम्हारे दो पत्र मिले है। तुम्हारा नोटिस पढा था, ठीक है। बाबलाको दीवालीके बाद भेजनेका बन्दोबस्त करना। उसने आनेका वचन तो दिया है। बाबला वचनबद्ध है, अत यदि वह उसका पालन करता है तो अच्छा होगा। मुझे अभी तालिका नही मिली है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

जितनो जल्दी बन पडेगा वर्ण-धर्म पर प्रस्तावना[2] लिखूंगा।

श्रीयुत जीवनजी देसाई
नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
गाधी रोड
अहमदाबाद, बी० बी० ऐंड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९३१) से। सी० डब्ल्यू० ६९०६ से भी, सौजन्य : जीवनजी डाह्याभाई देसाई

१. मणिबहन पटेल, देखिए पिछला शीर्षक भी।
२. "वर्णव्यवस्था" शीर्षकसे प्रकाशित गांधीजीके वर्ण-व्यवस्था सम्बन्धी विचारोंका एक संकलन। भूमिकाके लिए देखिए खण्ड ५९।

७४. आश्रमका समर्पण[1]

[८ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व][2]

हमने तो [आश्रमका] समर्पण ट्रस्टियोंकी तरह किया है। और ट्रस्टियोने ऐसा द्वेष-भावसे नही समत्वकी भावनासे किया है, क्योकि उन्होने देखा कि इसपर अपना कब्जा बनाये रखकर वे अपने धर्मका निर्वाह नही कर सकते। इसे सरकार [भले ही] ले ले पर वह नही लेती। और मै यह नहीं चाहता कि यह [आश्रम] बरबाद हो जाये। . . . आश्रमका कब्जा छोड़ दिया है, पर इसका मतलब यह नही है कि यहाँ अब कभी रहना ही नही है। मुझे आशा है कि हम रह तो सकेंगे ही। सरकार यदि इसे बेच दे तो भी मुझे उम्मीद है कि आश्रमवासी तो उसी भूमिपर जाकर रहेंगे। . . . यह हरिजनोंके लिए तीर्थक्षेत्र और मन्दिर-स्वरूप बने। यह ऐसा हो कि सवर्ण हिन्दुओंको भी इसके जरिये अपने धर्मका भान हो। सवर्ण हिन्दुओको तो प्रायश्चित्त करना है और इसके जरिये सवर्ण हिन्दुओंकी सेवाका भी समावेश हो जाता है, इस बातको वे समझे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ८-१०-१९३३

७५. बातचीत: आपसी विग्रहके भयपर

[८ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व]

प्र०: क्या अस्पृश्यता-निवारणकी समस्या इतनी महत्त्वपूर्ण है कि उसका निराकरण आज और अभी हो जाना चाहिए? कई लोगोंको भय है कि इसके कारण हिन्दुओंमें पारस्परिक विग्रह और झगड़े उठ खड़े होंगे।

उ०: इसके बिना हम स्वराज्यके पथपर कदम ही नही रख सकते। और मान लिया जाये कि स्वराज्य प्राप्त भी हो गया तो भी वह स्वराज्य स्वराज्य नही होगा। वह तो अन्धविश्वास और अधर्मका राज्य होगा। बहुत-से हिन्दू आज ऐसा मानते है कि यदि अस्पृश्यता दूर कर दी जायेगी तो हिन्दू-धर्मका नाश हो जायेगा, पर मैं तो देख रहा हूँ कि यदि अस्पृश्यता नही जाती तो हिन्दू-धर्म नष्ट हो जायेगा। इस युगमे धर्मके लिए तलवारका युद्ध नही होता। धर्मकी जागृति और धर्मकी रक्षा इस युगमे तलवारसे नहीं होती और न होनी ही चाहिए। पर विवेक और भावनासे, बुद्धि और हृदयसे धर्मोंका मुकाबला, उनकी तुलना होती रहेगी। यह अस्पृश्यता विवेक

१ और २. यह और अगले तीन शीर्षक चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से लिये गये हैं।

और भावनासे प्रतिकूल है। यह तो एक महान् दोष है, यह बात तो काग्रेसियोकी हैसियतसे हमे माननी ही चाहिए। ऐसा करनेके परिणामस्वरूप यदि कांग्रेसमे केवल मुट्ठीभर हिन्दू ही रह जाये तो भले ही रहे। यदि ऐसा होगा तो काग्रेस एक महान् सस्था बन जायेगी। आज तो यदुवशियो जैसे गृह-युद्धकी आशकामात्र ही है, पर यदि अस्पृश्यता नही हटी तो फिर तो आपसी विग्रह अवश्यम्भावी है। अस्पृश्यताको हटानेके लिए यदि प्रचण्ड उपाय नही किये गये तो पारस्परिक विग्रह हुए बिना नही रहेगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ८-१०-१९३३

७६. बातचीत : एक कार्यकर्त्तासे[1]

[८ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व]

प्र० : कांग्रेसके कार्यक्रममें अस्पृश्यता-निवारणके लिए स्थान तो है ही, तब फिर यह आन्दोलन राजनीतिक दृष्टिसे क्यों न चलाया जाये?

उ० · इसे राजनीतिक दृष्टिसे चलायेंगे, तो यह नष्ट हो जायेगा। इसके राजनीतिक परिणाम होगे और उन्हे कोई रोक नही सकता। परन्तु इसे राजनीतिक कार्य नही माना जाना चाहिए, ऐसेमे यह टिक नही सकेगा, क्योकि यह तो एक विशुद्ध धार्मिक प्रवृत्ति है। इसलिए जो लोग यह कहते है कि यह प्रवृत्ति शुद्ध राजनीतिक दृष्टितक ही सीमित कर दी जाये, इसमे से मन्दिर-प्रवेश जैसी कठिन चीज निकाल दी जाये, उनसे मैं कहता हूँ कि ऐसा करनेपर तो हरिजन-आन्दोलनमे कोई तत्त्व ही नही रह जाता।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ८-१०-१९३३

७७. बातचीत : नम्रताकी आवश्यकतापर

[८ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व]

व्रत धारण करके कोई अभिमानसे आकाशमे नही उड़ने लगना, धरतीपर ही रहना। हम लोग तो अणु-रेणु है, रजकणके समान हैं। हम मिट्टीके ही मानव है और अन्तमे मिट्टीमे मिल जानेवाले है, इसे मैं सत्य मानता हूँ। हम मिट्टीसे ही पैदा हुए हैं, मिट्टीके ही पुतले है, फिर अभिमान करे तो किस बातका करे? चीटी जैसे जीव अपनी बाँबीकी जैसी सुन्दर कलामयी रचना कर लेते है, वैसी हमसे नही बनती। चिड़िया और चीटियाँ इत्यादि सम्पूर्णताको प्राप्त कर चुकी है, पर हम नही। हम लोग तो अपूर्ण है। हम तो शरीरसे भी सम्पूर्ण नही है। इसलिए हम

१. यह बातचीत "शुद्ध धार्मिक कार्य" शीर्षकसे प्रकाशित हुई थी।

सम्पूर्णताको अन्यत्र खोजते रहते है। जिस स्थितिमे हम है उसमे रहते हुए हमे सन्तोष ही नही है। ईश्वरने ही यह 'दैवी असन्तोष' हममे भर दिया है। इससे हम 'यह नही' 'यह नही' ऐसा कहा करते है, और बराबर और-और आगे बढनेके लिए जूझते रहते हैं। चीटी सम्पूर्ण है, क्योंकि वह आगे बढना ही नही चाहती। हमे तो आगे बढ़ना ही है। इसलिए हमे नम्र बनना है। धूलकी तरह या शून्य के समान बनकर रहना है। आजका भौतिक शास्त्र और खगोल शास्त्र कहता है कि एक-एक अणुमे सम्पूर्ण विश्व समाया हुआ है। उपनिषद्के ऋषियोने तो हजारों वर्ष पहले यह समझ लिया था। इसीसे उन्होने कहा है कि 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे'— अर्थात् जो पिण्डमे है वही ब्रह्माण्डमे है। हम जब परमाणुके समान बनकर रहे, शून्यवत् होकर रहे, तभी हम ईश्वरीय अंश प्राप्त कर सकते हैं। कारण यह है कि परमाणु विश्वव्यापी और शाश्वत है। इसलिए हमे आकाशमे उड़ना नही, किन्तु धूलके समान अकिंचन बनना सीखना है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ८-१०-१९३३

७८. उत्तर: पत्र-लेखकोंको[1]

[८ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व]

वर्ण-धर्म और वर्णान्तर विवाह

मै चातुर्वर्ण्यको मानता हूँ।[2] लेकिन वर्ण-व्यवस्थाका उद्देश्य तो चार वर्णोके धन्धोको निश्चित कराना और उनकी मर्यादा बताना या निर्धारित करना था। विवाह और खान-पानका प्रतिबन्ध कभी वर्ण-धर्मका अंग नही माना गया था। सामान्य रूपसे तो लोग स्वाभाविक रीतिसे अपने ही वर्णमे विवाह करेगे; किन्तु हम ऐतिहासिक प्रमाणोसे यह जानते है कि कुछ संयोगोमे वर्णान्तर विवाह सदासे होते चले आये हैं। धीरे-धीरे मेरा यह विश्वास और भी दृढ़ होता गया है कि धन्धोकी पसन्दगीमे पूरी गड़बडी हो जानेसे वर्णोके विषयमे भी अन्धेर चल रहा है। आज तो वर्ण-धर्म नाम-मात्रका ही रह गया है और हिन्दू-समाजमे ऊँच-नीचकी हीन भावना फैलानेमे ही चातुर्वर्ण्यकी सुन्दर व्यवस्थाका दुरुपयोग हो रहा हैं। सच्चे वर्ण-धर्मकी स्थापना किस तरह की जा सकती है, इस सवालका ठीक-ठीक हल मेरे पास नही है। मगर मुझे इस विषयमे तनिक सन्देह नही है कि वर्तमान पीढ़ी यदि सच्चे मार्गपर चलेगी, तो उसीका आधार लेकर वर्ण-धर्मकी पुनःस्थापना हो जायेगी। उसके रूपमे शायद थोड़ा-कुछ परिवर्तन हो जायेगा। धार्मिक बातोमे इतना तो हमेशा याद रखना चाहिए कि अपने इस कलेवरके पीछे जो आत्मा वास कर रही है हमें उसीका साक्षात्कार करना है— बिना आत्म-साक्षात्कारके यह काया बेकार है।

१. यहाँ गांधीजीकी डाकमें आये हुए भिन्न-भिन्न पत्र-लेखकोंके प्रश्नोंके उत्तरोंका सार दिया गया है।
२. पत्र-लेखकने गांधीजीसे पूछा था कि जब आप वर्णाश्रम-धर्मको मानते हैं तो फिर वर्णान्तर विवाहके लिए स्वीकृति किस प्रकार देते हैं।

प्रतिज्ञासे छुटकारा

तुम्हारे निश्छल पत्रके लिए धन्यवाद।[1] मनुष्य यदि अपनी प्रतिज्ञा तोडता है, तो उसके नैतिक परिणामसे कोई दूसरा आदमी उसे मुक्ति नही दे सकता। यह मुक्ति तो केवल ईश्वर ही दे सकता है। मुझे पता नही है कि ईश्वरने ऐसी मुक्ति दी है, पर तो भी मै तुम्हारी कठिनाईको समझ सकता हूँ। लेकिन मुझे आशा है कि जितना बन सकेगा तुम खादीका ही उपयोग करोगे। हस्ताक्षर लौटानेकी तो जरूरत नही है।

ईश्वरके विषयमें

१. ईश्वर सत्य है।

२ अत. ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग यह है कि मन, वाणी और कर्मसे सत्यका पालन किया जाये।

३. रामनामका स्मरण यदि हृदयसे किया जाये, तो उससे अवश्य ही आत्म-साक्षात्कार होगा।

४. आत्म-साक्षात्कारका अर्थ है सत्यका साक्षात्कार।

एक हरिजन-सेवकका प्रश्न

सनातनियो और हरिजनोके दरम्यान जहाँ कटुता पैदा हो जाये, वहाँ यथाशक्ति समझौतेका प्रयत्न करे। हरिजनोके लिए विदेशी वस्त्र इत्यादिका दान मिले तो उसका उपयोग तो नही किया जाना चाहिए।

जैन मुनि क्या सेवा करे?[2]

जैन मुनिको आपने जो नीति-नियम बताये है, वे मुझे उचित प्रतीत होते है। किन्तु अपने अन्दर यदि स्वतन्त्र स्फुरणा न हो और जो मेरे परामर्शपर निर्भर करते हों, तो मेरा धर्म यह है कि मै उन्हे वेश बदलनेसे रोकूं। कारण यह है कि वेशमें कोई दोप नही है, दोष तो उसके दुरुपयोगमे है। यह मुनि यदि पूर्ण अभ्यासी बनकर निर्भयतापूर्वक धर्म-मार्गका दिग्दर्शन करायें और तदनुसार चले, तो वह बहुत सेवा कर सकते है। उन्हे चाहिए कि वे अत्यन्त परिश्रम करके सस्कृत और मागधी भाषाका गहरा अध्ययन करे। जैन मुनिका वेश स्वीकार करनेवालोके लिए निर्धारित नियमोके अन्तर्गत इस बातको प्रथम स्थान दिया गया है, पर अब तो मुनि इसका पालन क्वचित ही करते है। जैन-दर्शनमें अस्पृश्यता और वर्तमान वर्ण-धर्मका निश्चय ही कोई स्थान नही है, यह बात उन्हे दृढतापूर्वक कहनी चाहिए और दूसरोसे कहनेके पहले उन्हे स्वय यह बात हृदयगम कर लेनी चाहिए। जैन-

१. यह पूनाके एक विद्यार्थीके पत्रके जवाबमें लिखा गया था। विद्यार्थीने प्रतिदिन आधा घटा सूत कातनेका अभिवचन देकर गांधीजीके हस्ताक्षर प्राप्त किये थे। पत्रमें उसने चरखा न कातनेके लिए अपनी असमर्थता व्यक्त की थी और गाधीजीके हस्ताक्षर लौटानेकी बात भी। देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ४३९ भी।

२. लोक सेवाके इच्छुक एक जैन मुनि अपने साधुवेशको निरर्थक और सेवामें विघ्नरूप मानकर उसका त्याग करना चाहते थे। उनके एक मित्रने इस सम्बन्धमें गांधीजीसे सलाह माँगी थी।

मुनिके लिए किसीको पढ़ानेमें कोई बाधा नहीं है। अतः थोड़े-से हरिजन बालकोको एकत्र करके वह उन्हें शिक्षा दे। यदि उन्हें यह बात प्रमाणित हो चुकी हो कि जैन-धर्म हिन्दू-धर्मसे भिन्न नहीं है, तो उन्हें इसका प्रतिपादन करना चाहिए। ऐसा करते हुए यदि उनका बहिष्कार किया जाये, तो उसे वह प्रेमपूर्वक सहन कर ले और अपना सेवाधर्म बराबर जारी रखें। मैं समझता हूँ, इसीमें सब-कुछ आ जाता है।

विदेशी शिक्षाका मोह

मैं देख रहा हूँ कि आप जल्दबाजी कर रहे हैं।[1] अच्छे कामके लिए जल्दबाजी की जाये तो इसमें कोई गलती नहीं है। आपकी महत्त्वाकांक्षा भी अच्छी है, पर मैं चाहता हूँ कि आप इसे किसी और अच्छी दिशामें मोड़ दें। इंग्लैंड जाकर शिक्षा पानेका मोह युवकोंमें है और वह मिथ्या है, यह मैं हमेशासे मानता आया हूँ। यह तो एक ऐसा खिलौना है जो बहुत महँगा है। वस्तुस्थिति यह है कि जो-कुछ हमें इंग्लैंडमें मिल सकता है उसमें का बहुत-कुछ हमें यहाँ भी मिल सकता है। मेरी मान्यता तो यह है कि जिस महत्त्वाकांक्षाको केवल मुट्ठीभर लोग ही पूरी कर पाते हो ऐसी महत्त्वाकांक्षा रखना अनुचित ही है। और यदि ऐसी महत्त्वाकांक्षा पूरी करनी हो तो अपने बलपर ही पूरी करनी चाहिए। इसे सार्वजनिक संस्थाओं अथवा व्यक्तिगत दानकी मददसे भी पूरा नहीं करना चाहिए। और यदि आप बाहरी सहायतापर अवलम्बित रहना चाहते हों तो आपको ऐसी मदद माँगनी चाहिए जो उन दूसरे लोगोंको भी उपलब्ध हो सके जिनकी स्थिति आपके जैसी ही है।

विलायत जानेमें मैं तो आपका उद्देश्य इतना ही देखता हूँ कि आप अधिक कमाई कर सकें और हरिजन-कार्यमें अधिक धन दे सकें। लेकिन आपको इतना तो स्वीकार करना ही होगा कि आप चाहे जितना देंगे, तब भी अकेले आपका दान तो [इस कार्यके लिए] सागरमें बूँदके समान होगा। अतः अधिक देनेकी दृष्टिसे अधिक कमाई करनेके अटपटे मार्गपर जानेके बजाय आप कोई अच्छा रास्ता क्यों न अख्तियार करें? यह अच्छा रास्ता यह है कि आप स्वयं अपनेको ही हरिजन सेवाके लिए अर्पण कर दें। ऐसा करना सागरमें बिन्दु रूप नहीं होगा। बल्कि वह तो एक उज्ज्वल दृष्टान्त होगा और अनेक लोगोंके लिए अनुकरणीय होगा। मैं आपके दिमागमें यह ठूँसना चाहता हूँ कि हृदयकी शिक्षाका मूल्य दिमागकी शक्तिकी अपेक्षा अनन्त गुना अधिक है। और हृदयकी शिक्षा तो जितनी अन्यत्र कहीं मिल सकती है उतनी ही यहाँ भी मिल सकती है। और फिर, उसकी कोई कीमत भी नहीं चुकानी पड़ती।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ८-१०-१९३३

१. यह एक हरिजन शिक्षकके प्रश्नके उत्तरमें दिया गया था जिसने हरिजन सेवक संघसे उच्च शिक्षा पानेके लिए विदेश जानेकी अनुमति माँगी थी।

७९. सत्याग्रह आश्रमका नया रूप[1]

सत्याग्रह आश्रमकी भूमि और भवन हरिजन-सेवाके लिए दिये जानेके कारण अहमदावादके सवर्ण हिन्दुओ एवं हरिजनोका उत्तरदायित्व और भी बढ़ गया है। इतने मकान और इतनी अविक जमीन वहुत थोडी सस्थाओके पास है। जहाँतक मै जानता हूँ, कोई हरिजन-सस्था इतनी बडी नही है। लेकिन विना मनुष्योके जमीन और मकान एक तरहसे खण्डहर ही है। स्वयं अपना उनका मूल्य कुछ नही होता। हरिजन वहाँ जाकर सिर्फ रहने-भर लगे तो इससे इस विशाल आश्रमकी शोभा नही, और न उसके पीछे जो उनके उद्देश्य है वही पूरे होनेके। यह तो तभी एक आदर्श सस्था और तीर्थ-क्षेत्र बन सकता है, जब उसमे योग्य हरिजन जाकर रहे, निर्धारित नियमोका पालन करें और सवर्ण हिन्दू उनके उत्थानमें दिलचस्पी दिखाये तथा अपना समय, अपनी वुद्धि आदि हरिजन-सेवामे ही समर्पित कर दे। यह सव अहमदावादके आसपास रहनेवाले सवर्ण हिन्दू और हरिजन ही कर सकते है। मुझे आशा है कि आप दोनो ही अपना-अपना फर्ज निभायेगे।

[गुजरातीसे]
हरिजनवन्धु, ८-१०-१९३३

८०. उपवास कब आवश्यक होता है?

एक हरिजन-सेवकने मुझे एक पत्र लिखा है जिसका सार निम्नलिखित है:

स्थानीय हरिजन सेवा सघके अध्यक्षके साथ एक सेविका और मै एक गाँवको जा रहे थे। हम लोग वैलगाडीमे थे। रास्तेमे अध्यक्ष और सेविका विनोद कर रहे थे; इस बीच सेविका थक गई और विनोद करती हुई वह अध्यक्षकी गोदमें सो गई। मुझे कुछ आघात लगा। गाँवसे लौटते हुए हम एक रेलवे स्टेशनपर गये। वापसीमे हमे बैलगाडीसे नही जाना था। स्टेशनसे हमे शहरके लिए गाड़ी पकड़नी थी। गाडी आनेमें देर थी। अध्यक्ष और सेविका एक वैंचपर वैठ गये। मै थोडी दूर जमीनपर वैठा था। चाँदनी रात थी। दोनोकी हरकते देखनेका मेरा मन हुआ। मुझे उनमे कुछ मलिनता दिखाई दी। मेरी इच्छा उनकी अविक परीक्षा लेनेकी हुई। मैने नीदका ढोग करनेका निश्चय किया। अध्यक्षसे कहा, 'गाडी आनेमे अभी देर है। यदि आप अनुमति दे तो मै सो जाऊँ; मै थक गया हूँ। गाडी आनेपर मुझे उठा दीजिये।' अध्यक्ष यह सुनकर खुश जान पडे। उन्होने मुझे सोनेकी अनुमति दी। मैने सोनेका

1. यह लेख "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

ढोंग किया। अध्यक्षने मेरी परीक्षा भी की। मेरा जवाब न मिलने पर वह निश्चिन्त हो गये। बादका तो कहना ही क्या? अध्यक्ष और सेविका एक झाडीके पीछे गये। थोड़ी देरमे दोनों वापस आ गये। गाड़ी समयपर आई। उन्होने मुझे जगाया।

मुझे लगा कि अध्यक्ष इस तरह मलिनतामे लिप्त हो, यह अच्छी बात नही है। आपका २१ दिनोका उपवास और उसके कारण मेरी आँखोके सामने खड़े हो गये। मैंने दूसरे दिन साथियोसे बात की। उन्होंने अध्यक्षसे कहा। अध्यक्षने "उलटा चोर कोतवालको डाँटे" जैसा व्यवहार किया। यह मनुष्य अध्यक्षपद लेना चाहता है इसीसे मुझसे द्वेष करता है और मुझे निकालनेके लिए इसने यह आरोप मुझपर लगाया है। मैं बिलकुल निर्दोष हूँ। इस तरह वह उलटे मुझपर आरोप लगाकर स्वयं बच जाना चाहता है और अध्यक्ष पद नही छोड़ना चाहता। अब मुझे क्या करना चाहिए?

इस दुखद पत्रमे से मैंने कुछेक अनावश्यक भाग छोड दिया है। कोई भी पाठक इस करुण कथाके पात्रोंको खोज निकालनेका वृथा प्रयत्न न करे। ऐसा प्रयत्न करनेमे भी दोष है। यदि स्थान अथवा पात्रोका परिचय देनेकी आवश्यकता होती तो मैं ही दे देता। मैंने परिचय नही दिया। इसीसे यह स्पष्ट है कि परिचय जाननेकी इच्छा करना दूसरेको गुप्त बात जाननेकी इच्छा करने जैसा ही दोषपूर्ण है।

अब हम ऊपरकी घटनाकी जाँच करें। पहली बात तो यह है कि उपर्युक्त सेवकने अपने साथी और सरदारकी परीक्षा करने जाकर एक बहुत बडा अपराध किया है। दूसरोंके दोष देखना कतई हमारा धर्म नही है। लेकिन जब अनिच्छासे भी यदि किसी मित्र अथवा साथीके दोष दिखाई पड़े तो हमे उसे उसी समय बता देना चाहिए। इस किस्सेमे जब उपर्युक्त सेवकको अध्यक्षके आचरणमे मलिनताकी गन्ध आई थी उसे उसी समय अध्यक्षको बता देना चाहिए था और उसे विनयपूर्वक सावधान कर देना चाहिए था। इसके विपरीत उसने तो अन्तिम परीक्षातक करनेकी इच्छा करके अध्यक्षकी स्थितिको विषम बना दिया।

हम सब नित्य अनेक प्रकारके प्रलोभनोंके बीच रहते हैं, लेकिन भाग्यसे हम उनसे बच निकलते हैं। प्रलोभनोंमे फँसनेका संयोग मिलनेपर भी उनमे न फँसनेवाले लोग करोडोंमे एक-दो ही मिलते हैं। यह तो कोई भी निश्चयपूर्वक नही कह सकता कि अध्यक्षको जो संयोग प्राप्त हुआ था यदि स्वयंसेवकको वैसा ही संयोग मिला होता तो वह प्रलोभनमे न फँसता। इसीसे अनुभवी लोगोने कहा है कि हमे कभी लालच को न्योता नही देना चाहिए और न किसीको लालचमे डालना ही चाहिए।

अब हमने देखा कि इस न्यायसे सेवकने अध्यक्षको लालचमें डालनेका अपराध किया है। लालचमे डालनेके बाद भी वह दोनोंको बचा सकता था। जब उसको यह विश्वास हो गया था कि मलिनता बढ़ती जा रही है तब उसे नींदका ढोंग छोड़कर दोनोको सावधान करके उन्हें बचा लेना चाहिए था। यदि वह ऐसा करता तो नींदका ढोंग रचनेका जो दोष उसने किया बहुतांशमे उससे वह बच जाता।

लेकिन यह सब तो हुआ। 'यदि' और 'तो' से जगतका सुधार नही हो सकता। अब क्या सम्भव है?

जबकि सेवकने आरोप लगाया, साथियोको बताया, अध्यक्षने उसे माननेसे इन्कार किया, ऐसी स्थितिमे यदि सेवक सच्चा हो और उसने द्वेषभावसे प्रेरित होकर अध्यक्षपर झूठा आरोप न लगाया हो तो अपने सत्यको सिद्ध करनेके लिए और अध्यक्षसे पश्चात्ताप करवानेके लिए सेवकको चाहिए कि वह अध्यक्षको प्रेमपूर्वक व्यक्तिगत नोटिस दे और यदि वह अपना अपराध स्वीकार न करे तो आमरण उपवासका मार्ग अपनाना चाहिए। मेरा दृढ मत है कि ऐसे समयमे एकमात्र उपवास ही सत्यको सिद्ध करनेका और दोषी व्यक्तिको जाग्रत करनेका अमोघ अस्त्र है। यदि उसमे आमरण उपवास करनेका बल न हो तो वह भले ही २१ दिनोका उपवास रखे। ऐसा करनेसे, सम्भव है अध्यक्ष अपना अपराध स्वीकार कर लेनेपर मजबूर हो सकता है। यदि वह ऐसा नही भी करता तो भी सेवकने अपने दोषका परिष्कार कर लिया यह तो माना ही जायेगा, और जिस तरह शुद्ध हृदयसे किये गये उपवासका परिणाम अवश्य शुद्ध होता है उसी तरह इसका परिणाम भी शुद्ध होगा, ऐसी श्रद्धा रखनी चाहिए। ऐसे कठिन प्रसगोमे उपवासकी आवश्यकताके बारेमे मुझे तनिक भी सन्देह नही है। और इतना कहनेकी कदाचित् ही आवश्यकता होगी कि मेरी यह सलाह केवल उन्ही लोगोपर लागू होती है जिन्हे उपवासके बारेमे श्रद्धा है।

यह दुखद घटना हुई अथवा नही, इसकी सच्चाईमे जानेके लिए यह लेख नही लिखा गया है। हमे इस बातकी कामना करनी चाहिए कि अध्यक्ष और सेविका निर्दोष हो। लेकिन कही-कही ऐसी मलिनताका प्रगट न होना असम्भव बात नही है। मेरी इच्छा है कि इस वर्णनसे सेवक और सेविकाएँ जाग्रत हो और रहे। मेरे विचारसे अस्पृश्यता-निवारण केवल धार्मिक वस्तु है। उसमे [कार्य करनेवाले] सेवक और सेविकाएँ पवित्र होने चाहिए। उनकी पवित्रताके बिना मै करोडो व्यक्तियोके हृदय परिवर्तनकी बातको असम्भव मानता हूँ। धर्म—सत्य—पवित्र हृदयोमे ही बसता है, इस बातकी समस्त संसारके सन्तोने साक्षी दी है। हमे इसकी अवहेलना नही करनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ८-१०-१९३३

८१. भूमिका: 'गीता प्रवेशिका' की[1]

वर्धा
८ अक्टूबर, १९३३

इस 'गीता प्रवेशिका' के श्लोकोंका चयन[2] गत वर्ष (१९३२ में) यरवडा मन्दिरमें किया गया था। मेरा तृतीय पुत्र रामदास इसी जेलमें था। उससे कभी-कभी मिलनेकी या पत्र लिखनेकी सुविवा जेलके अधिकारी मुझे दिया करते थे। रामदास 'गीता' पढ़ा करता था; पर पूर्ण रूपसे समझ नहीं पाता था। रामदासमें भक्तिभाव है, श्रद्धा भी है। उसे मदद मिल सके इस उद्देश्यसे मैंने 'गीता' के सरस और भक्तिप्रदान श्लोकोंका संग्रह करके उसे भेजा। यह संग्रह रामदासको पसन्द आया। मैंने इस संग्रहको 'राम गीता' नाम देकर[3] रामदासको प्रोत्साहन दिया।

बावा राघवदासने[4] यह संग्रह काका साहवके हाथमें देखा, उन्होंने इसे पढ़ा और उन्हें लगा कि यह हरिजन सेवकोंके लिए उपयोगी वन पड़ेगा। इसी दृष्टिसे इसे प्रकाशित करनेकी उन्होंने अनुमति माँगी। पर मैं कोई पंडित तो हूँ नहीं, अतः मैं यह निर्णय नहीं कर पाया कि यह संग्रह छपवानेके योग्य है या नहीं। आश्रमवासी श्री विनोबा, काका साहव और बालकृष्ण[5] यहीं थे। ये तीनों ही 'गीता' के अभ्यासी हैं और भक्त हैं। मैंने वावाजीसे कहा कि यदि ये तीनों आश्रमवासी पसन्द करें तो इस संग्रहको छपवानेमें मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। इन तीनोंने इसपर विचार किया और इसकी उपयोगिता बढ़ानेकी दृष्टिसे तीन श्लोक निकाल देनेकी और चार नये श्लोकोंका समावेश करनेकी सलाह दी। यह संग्रह इस प्रकार इतने सुधारके साथ सेवक-सेविकाओं और अन्य गीता-भक्तोंके समक्ष रखा जा रहा है। मेरी आशा और आशय यह है कि इस संग्रहका पठन-पाठन केवल एक प्रवेशिकाकी दृष्टिसे ही किया जाये। और इसको ठीक ढंगसे समझ लेनेके बाद ही सम्पूर्ण 'गीता' का अभ्यास किया जाये। साथ ही यह भी स्मरण रहे कि इस प्रवेशिका अथवा सम्पूर्ण 'गीता' ही को

१. यह मूल रूपमें शुद्ध खादी भण्डार, कलकत्तासे हिन्दीमें प्रकाशित की गई थी, जो उपलब्ध नहीं है।

२. जिन श्लोकोंका समावेश इसमें किया गया है वे क्रमशः इस प्रकार हैं: अध्याय ६: श्लोक ५, ६, १४, २९-३२ और ४७; अध्याय ७: श्लोक ७ और १०; अध्याय ८: श्लोक १४; अध्याय ९: श्लोक २२, २६, २७, २९-३१ और ३४; अध्याय १०: श्लोक ८-१०; अध्याय ११: श्लोक ५३-५५; अध्याय १२: श्लोक १५; अध्याय १३: श्लोक २७; अध्याय १८: श्लोक ४६, ६१, ६२, ६६ और ७८; अध्याय ११: श्लोक १५, १६, १८-२०, ३८-४०, ४३ और ४४।

३. देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ ३९२-९५।

४. संयुक्त प्रान्तके एक किसान नेता।

५. विनोबा भावेके छोटे भाई।

कठस्थ कर लेनेसे या पूरा अर्थ समझ जानेसे कोई लाभ नही होना है। 'गीता' तो अनुकरणके लिए है। इसके पारिभाषिक शब्दोको ठीक समझ लेनेके बाद, इसके मध्य-विन्दु — अनासक्तियोग — के हृदयमे उतर चुकनेके बाद 'गीता'को समझनेमे क्वचित ही कठिनाई होगी।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ९-९-१९३४

८२. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

असंशोधित

८ अक्टूबर, १९३३

प्रिय ठक्कर बापा,

हरिजन फंडकी जो रकम मेरे पास जमा हुई है उसके सम्बन्धमे तुम्हारा पत्र मिल गया। मथुरादास द्वारा भेजा गया हिसाब मुझे मिल गया है। मै तो चिमनलालकी राह देख रहा हूँ। वह यहाँ शीघ्र ही आनेवाला है। वह आया कि मै इसमें लग जाऊँगा।

दौरेके विषयमे लिखा तुम्हारा पत्र भी मुझे मिला। तुम्हारा दूसरा पत्र मिलनेसे पूर्व ही मै अपना पत्र तुम्हे डाल चुका था। यह बात मेरे मनमे एकदम स्पष्ट है कि समूचे मध्य प्रान्तका कार्य एकसाथ ही पूरा कर दिया जाये। पजाबकी ठडकी मुझे चिन्ता नही है। इसलिए ठंडके मौसममे मैं कहाँ हूँ, इससे कोई फर्क नही पड़ता। और न मुझे गरमीकी ही चिन्ता है। बचाव तो तुम्हे बरसातसे करना है। अत. जून और जुलाईके महीने हम उन प्रान्तोको दे, जहाँ बरसात जल्दी शुरू नही हो जाती।

बखले नगरपालिकाके चुनावसे हट गये; इससे मुझे काफी राहत हुई, जैसीकि तुम्हे भी हुई होगी। अब हम श्री कोदण्डरावके साथ इस बातकी चर्चा करेगे कि तुमने और मैने जो सलाह दी थी उसकी बुनियादमे क्या सिद्धान्त था। मैने उन्हे बतलाया है कि मै ऐसी चर्चाका स्वागत करूँगा।

बापू

श्रीयुत अमृतलाल वि० ठक्कर
महामन्त्री
हरिजन-सेवक-संघ
बिड़ला मिल्स, दिल्ली

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२५) से।

८३. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

८ अक्टूबर, १९३३

भाई घनश्यामदास,

तुम्हारा पत्र[1] मिल गया।

तुमने जिस कठिनाईकी बात कही है वह तो मौजूद है ही। उसीकी बात सोचकर तो मैंने ट्रस्टबोर्डके गठनकी बात कही थी। मेरी राय है कि यह सम्पत्ति ट्रस्टियोंके पास स्थायी रूपसे रहे और उन्हें उसे बेचनेतक का अधिकार रहे। हरिजन सेवक संघका भविष्य चाहे जो हो, तुम और ठक्कर बापा उसके स्थायी सदस्य रहो। इस प्रस्तावसे उस प्रश्नका भी निपटारा हो गया जिससे अपेक्षाकृत अधिक बडे प्रश्न का जन्म हुआ है और जिसकी मै यहाँ समयाभावके कारण चर्चा नही करना चाहता हूँ। इस बीच मैं तुम्हे अखिल भारतीय चरखा सघका व्यवस्था-विधान पढ जानेको कहूँगा। मुलाकात होने तक इसकी चर्चा मुल्तवी रखे। मै यहाँ ७ नवम्बर तक तो हूँ ही, इसलिए यदि सम्भव हो तो उस प्रश्नकी खातिर ही सही, एक दिनके लिए आ सकते हो।

तुमने दिल्लीमे छात्रावास खोलनेकी बात कही है। अब आश्रमकी जमीन और इमारते अपने पास होनेके बाद भी क्या दिल्लीवाले छात्रावासकी कोई खास जरूरत रह गई है? एक और नई और बडी योजना आरम्भ करनेसे पहले क्या साबरमतीकी योजनाकी प्रगति देखना अच्छा नही रहेगा? मै तो समझता हूँ कि हमे साबरमती वाली योजनाको पूर्ण सफल बनानेकी ओर ही सारा ध्यान देना चाहिए, और उसे सफल बनानेके काममे हममें से अनेककी पूरी शक्तिकी आवश्यकता पड़ेगी।

आशा है, तुम स्वस्थ होगे। नाकका क्या रहा? इन दिनों तो दिल्लीका मौसम बडा अच्छा होगा।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९३८ तथा ७९३९) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला। इन द शैडो ऑफ द महात्मा से भी।

१. ५ अक्टूबरका; इसमें लिखा था: अबतक तो हमारे पास कोई सम्पत्ति है नहीं।...लेकिन आपका प्रस्ताव मान लेनेपर हम जल्द ही बहुमूल्य सम्पत्ति प्राप्त कर लेंगे। अब तुरन्त यह प्रश्न उठ खडा होगा कि इस सम्पत्तिका मालिक कौन हो? क्या हरिजन मण्डल? यदि हाँ, तो सभी व्यावहारिक कार्योंकी दृष्टिसे हरिजन मण्डलका तात्पर्य होगा वे लोग जिनकी मौन अनुमतिपर यह टिका हुआ है तथा हमारे समाजमें मौन अनुमति नामकी कोई चीज तो अबतक है नहीं। इसलिए हमें यह तय करना पड़ेगा कि भविष्यमें हमारा संविधान किस प्रकारका हो।

८४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

८ अक्टूबर, १९३३

भाई घनश्यामदास,

गोपीका अच्छी तरह चल रहा है। खुश रहती है। मैंने गजाननको खत लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ७९३९) से, सौजन्य : घनश्यामदास बिडला

८५. भाषण : वर्धाकी सार्वजनिक सभामें[1]

८ अक्टूबर, १९३३

कलतक मुझे इसका ध्यान नही था कि इतने विशाल जनसमूहके आगे मुझे बैठना होगा, और यह भी मालूम नही था कि मुझे यहाँ कुछ बोलना पड़ेगा। मै बहुत ऊँची आवाजसे नही बोल सकता। बोलनेका प्रयत्न करूँ भी, तो मेरे डाक्टर मित्रोने मुझपर इसका प्रतिबन्ध लगा दिया है। इसलिए मैंने थोडा-सा लिखकर दे दिया है। आप लोग जानते है कि मै एक वर्षतक — ३ अगस्त, १९३४ तक — खासकर हरिजन-सेवाका ही काम करना चाहता हूँ। बचपनसे ही मैंने हिन्दू-धर्मका अभ्यास करनेका प्रयत्न किया है। बचपनसे मुझे जो शिक्षा मिली, उसके अनुसार आचरण करनेकी भी कोशिश की है, और यथाशक्ति हिन्दू-शास्त्रोंका अध्ययन किया है। दूसरे धर्मशास्त्रोका अध्ययन भी भक्तिभावसे किया है। बचपनसे ही मै यह मानता हूँ कि जैसी अस्पृश्यता हम लोग आज मानते है, उसके लिए हमारे हिन्दू-धर्ममे कोई स्थान नही है, और हिन्दू-धर्मके अन्दर यह एक बडा भारी पाप पैठ गया है। अभ्याससे और अनुभवसे भी मुझे ऐसा मालूम होता है। मेरा यह दृढ़ विश्वास हो गया है कि यदि हमने यह अस्पृश्यतारूपी पाप दूर न किया तो हिन्दू धर्म नष्ट हो जायेगा।

१. स्वास्थ्य खराब होनेके कारण गाधीजी सभामें स्वयं नहीं बोले थे। भाषण हिन्दीमें था और पढ़कर सुनाया गया था। हिन्दी रिपोर्ट उपलब्ध न होनेके कारण इसे चन्द्रशकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से लिया गया है।

अस्पृश्यता दूर करनेका अर्थ सिर्फ इतना ही नहीं है कि जिन्हें हम अस्पृश्य मानते हैं, उन्हें हम छूने लगें। अवसर आनेपर प्रेम-भावसे उनका स्पर्श तो करना ही है। किन्तु इसका अर्थ इससे कहीं अधिक है। अस्पृश्यता नष्ट करनेका यह अर्थ है कि हमें ऊँच-नीचका भाव भूल जाना चाहिए। यों तो ऊँच-नीचका भाव साधारणतया सभी देशोंमें देखनेमें आता है। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि यह भाव वहाँ किसी भी धर्मका अंश माना जाता है। यह बात तो यहीं कही जाती है कि यह हिन्दू-धर्मका अंश है। किन्तु यदि पक्षपात छोड़कर हिन्दू-धर्मके तत्त्वोंका हम निरीक्षण करें, तो हम देखेंगे कि हिन्दू-धर्ममें भी ऊँच-नीचका भाव नहीं है। हाँ, हमारे आचारमें यह भाव भरपूर पैठ गया है और हमें यह सिखाया गया है कि यह भाव हिन्दू-धर्मका एक विशेष अंग है। हिन्दू-धर्मके सिद्धान्तोंमें एक सिद्धान्त यह है कि जो आचरण अपने प्रतिकूल समझा जाये वह दूसरोंके प्रति कभी न बरता जाये। इसी आशयके एक अन्य श्लोकमें कहा गया है कि प्राणिमात्रको अपने ही समान समझना चाहिए। जिस धर्ममें ऐसा आदेश दिया गया हो, उस धर्ममें ऊँच-नीचका भाव किस प्रकार पैदा हो गया है यह मेरी समझमें ही नहीं आता।

सारांश यह है कि गत वर्ष २५[1] सितम्बरको बम्बईमें मालवीयजी महाराजकी अध्यक्षतामें हिन्दू-समाजके नामपर नेताओंकी परिषद्ने अस्पृश्यताको दूर करनेकी जो प्रतिज्ञा की थी, उसका पालन करना प्रत्येक हिन्दूका धर्म है। मुझे आशा है कि आप सब लोग, जो यहाँ आये हैं, इस प्रतिज्ञाका पालन करेंगे। इसी प्रस्तावमें साफ तौरसे यह कहा गया है कि सार्वजनिक मन्दिरों, सार्वजनिक कुओं, सार्वजनिक पाठशालाओं इत्यादिके उपयोगका जो अधिकार दूसरे हिन्दुओंको है, वही प्रत्येक हरिजनको है। जब करोड़ों सवर्ण हिन्दुओंका हृदय पलट जायेगा और हम लोग दया-धर्मको भली-भाँति समझने और उसका पालन करने लगेंगे, तभी हरिजनों और दूसरे हिन्दुओंमें शुद्ध ऐक्य-भाव उत्पन्न होगा। इतना ही नहीं, बल्कि अन्य धर्मावलम्बियोंके साथ भी हम लोग समभावसे रहने लगेंगे और द्वेषमात्र दूर हो जायेगा। परमात्मासे हमारी प्रार्थना है कि इतनी आत्मशुद्धि करनेकी शक्ति वह हमें दे और हिन्दू-धर्ममें जो यह अस्पृश्यताका कलंक पैदा हो गया है, वह निर्मूल हो जाये।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १५-१०-१९३३

१. साधन-सूत्रमें यहाँ "२४" है। प्रस्तावका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था तथा अन्य नेताओंने २४ सितम्बर, १९३२ को पूनामें इसपर अपनी सहमति प्रदान की थी। लेकिन औपचारिक रूपसे प्रस्ताव २५ सितम्बरको बम्बईमें पास किया गया था। देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ १४८-४९।

८६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

[९ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व][1]

भाईश्री वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र आज ही मिला है। मेरा काम बढता ही जा रहा है, यह तो तुम समाचारपत्रोंमे देखोगे। मेरा रक्तचाप कम हो गया है। यह १६०–१०० है और वजन बढकर १०३ पौड हो गया है।

राजा कोयम्बटूरमे है। ठीक रहते है। लक्ष्मी शनिवारको गई। कृष्णदास[2] पहुँचाने गया है। साथमे मद्रासमे खादी-कार्यको देखता आयेगा। लक्ष्मी कोयम्बटूर हो आयेगी। देवदासके पत्र आते रहते है। वह ठीक चल रहा जान पडता है। वह अध्ययन भी करता है।

कृष्णा (नेहरू)का विवाह गुणोत्तम हठीसिहके साथ २० तारीखको इलाहाबादमे सम्पन्न होगा। मै वहाँ नही जानेवाला हूँ। वे मेरी उपस्थितिकी आशा भी नही रखते। मैंने तो आशीर्वादका पत्र भी भेज दिया है। तुम भी भेज देना।

किशोरलाल दो-तीन दिनोमे आयेगा।

जमनालालजीकी यह राय है कि आनन्दीकी सगाई कर देनी चाहिए। मै भी ऐसा महसूस तो जरूर करता हूँ। [3] आनन्दी तो कहती है कि उसे अभी विवाह नही करना है। लेकिन मै समझता हूँ कि यदि मै उसे विवाह करनेके लिए कहूँ तो वह मेरी बात मान लेगी। तुम अपनी राय मुझे बताना। लक्ष्मीदाससे मिल सको तो उससे मिलकर इस सम्बन्धमे पूछना। मै उसे लिख रहा हूँ।

[4]

मैंने मणिको पत्र लिख दिया है। वह कदाचित् मृदु[5] के साथ भी नही आयेगी।

जमनालाल व्यक्तिगत कामके लिए दो-तीन दिनोके लिए आज बम्बई जा रहे है।

१. पत्रकी तारीख, कृष्णा नेहरूके विवाह और जमनालालके बम्बई जानेकी चर्चा परसे तय की गई है; देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", ९-१०-१९३३।

२. छगनलाल गाधीके पुत्र।

३ और ४. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूट गया है।

५. मृदुला साराभाई।

मेरा दौरा ८ नवम्बरसे शुरू होनेकी सम्भावना है। साथमें सम्भवत: ठक्करबापा, चन्द्रशंकर, मीरा, नायर और रामनारायण चौधरी होंगे। तुम्हें और चन्दूभाईको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ३३-४

८७. तार: जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
९ अक्टूबर, १९३३

जवाहरलाल नेहरू
आनन्द भवन, इलाहाबाद

भगवानको धन्यवाद। आशा है माताजीकी तबीयत इतनी ठीक हो जायेगी कि आगामी विवाहमें स्वस्थ होकर शरीक हो सकेंगी।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

८८. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
९ अक्टूबर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा तार मिल गया था जिसका जवाब मैं दोपहरमें ही दे चुका। मैं उम्मीद करता हूँ कि माताजी काफी शक्ति हासिल कर लेंगी और विवाहमें शरीक हो सकेंगी।

यह साथका पत्र मुझे आज सरलादेवी[1] से मिला है। मैंने उनसे कह दिया है कि इन्दु[2] को [इस मामलेमें] स्वतन्त्रता है कि वह जैसा चाहे करे; और यह भी कि फिलहाल तो वह अध्ययनमें लगी हुई है इसलिए विवाह-सम्बन्धी किसी भी प्रस्तावमें

१. सरलादेवी चौधरानी।
२. इन्दिरा नेहरू।

वह शायद ही कोई रुचि लेगी। मैंने उन्हे यह भी लिख दिया है कि मै उनका पत्र तुम्हे भेज रहा हूँ। पर अगर इन्दु विवाहके किसी प्रस्तावपर विचार करनेको तैयार हो तो दीपक[1] को मै अवश्य ही अच्छा साथी मानता हूँ।

आज हार्डीकर[2] और कमला चट्टोपाध्याय आये थे। हार्डीकरको भगन्दरकी शिकायत है और उसका ऑपरेशन कराना जरूरी है। विशेष जानकारी कल कर सकूँगा। जमनालालजी बम्बई गये है। उनका एक मित्र आर्थिक सकटमे है और वे उसकी मददके लिए गये है। वे चार दिन बाद लौटेंगे।

यदि सब ठीक-ठाक रहा तो मेरा दौरा ८ नवम्बरको शुरू होना है। मुझे काफी आराम मिल रहा है।

कमला आजकल बिलकुल पत्र नही लिखती।

सप्रेम,

बापू

[अग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३३, सौजन्य . नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय

८९. पत्र : एफ० मेरी बारको

९ अक्टूबर, १९३३

चि० मेरी,

तुम्हारे गलत ढगसे रहनेकी पूरी रिपोर्ट मुझे कल मिल गई। डाक्टरोका कहना है कि तुम्हारी तिल्ली बढी हुई है। इसका मतलब है कि तुम्हे दूध, फल और हरी सब्जियोपर रहना चाहिए। लगातार कुनैनकी गोलियाँ लेनेका दड भी तुम्हे भोगना होगा। मुझे विश्वास है तुम एक-दो दिनमे पुन अच्छी हो जाओगी।

स्वामीजीका नाम कुवलयानन्द, [और पता] साताक्रूज, बम्बई है।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६००९) से। सी० डब्ल्यू० ३३३६ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

१. सरलादेवीका पुत्र।

२. एन० एस० हार्डीकर; हिन्दुस्तानी सेवा दलके संस्थापक और महामंत्री।

९०. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

१० अक्टूबर, १९३३

प्रिय कुमारप्पा,

तुम्हारा पत्र मिल गया।

यह तो ठीक ही है कि तुम अपनी सहूलियतसे अपनी बहनके मामलेको व्यवस्थित रूपसे निपटा दोगे। मैं अभी ७ नवम्बर तक यहीं हूँ, अतः तुम्हारे लिए काफी समय है।

बोणा तो अहमदाबादमें तुम्हारी राहमें है ताकि वह तुम्हारा माकूल इलाज कर सके।

जब तुम यहाँ आओगे तब तुम्हें जो-कुछ कहना है उस सबके लिए तुम्हें पूरा घंटा-भर समय मिलेगा। काका साहब अभी कुछ दिन और यहाँ रहेंगे पर तुम्हारे आनेतक शायद न रहें।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

श्रीयुत जे० सी० कुमारप्पा
"मनोरमा"
पल्लमकोट्टा, (जिला तिन्नेवेल्ली)

मूल अंग्रेजी (जी० एन० १०१०१) से।

९१. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

१० अक्टूबर, १९३३

भाई ठक्कर बापा,

रोहतकके बारेमें मुझे भी एक पत्र मिला था और मैंने इसके सम्बन्धमें समाचारपत्रोंमें भी पढ़ा था। लाला श्यामलाल हालांकि लाहौरमें हैं, उन्होंने मुझे आश्वस्त कर रखा है कि वह रोहतककी ओरसे जाँच कर लेंगे; और चूँकि वह लाहौरमें बहुत पैसा बना रहे हैं इसलिए और भी विशेष।

यंग साहबके कारनामोंको हमें सहन करना ही होगा। लकड़ीका हत्था लगनेपर ही तो कुल्हाड़ी पेड़को काट सकती है न?

लगता है तुमने मथुरादासको परेशानीमे डाल दिया है। उसने तुम्हे जो पत्र लिखा है उसकी नकल मैं पढ गया हूँ। ऐसा तुमने क्या लिखा होगा? चाहे जो हो इसमे उसका तनिक भी दोष नही है, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ। वह बहुत सावधान रहता है, लेकिन उसे क्रोध भी तुरन्त ही आ जाता है। हम जैसे बूढ़े और गुलामीमें पले लोग यदि कुछ व्यर्थकी बाते कहे भी तो उसपर क्रोध नही करना चाहिए। लेकिन जवान लोग भला कही बुड्ढोको सहन कर सकते है? इसलिए तुम्हे मरहम-पट्टी करनी चाहिए। मै तो मथुरादासको लिखूँगा ही।[1] डॉ० विधानको लिखे पत्रकी नकल[2] इसके साथ है। देवी बाबूको उसकी नकल भेजी है और हिन्दीमे पत्र भी लिखा है।

आसामसे आया हुआ पत्र इसके साथ रख रहा हूँ। उसमें मेरे उत्तरकी प्रति[3] भी है।

मैं देखता हूँ कि मुझे ७ नवम्बर तक तो यहाँ रहना पड़ेगा और मुझे यह पसन्द भी है, क्योंकि धीरे-धीरे जो काम इकट्ठा हो गया था उसको मैं निपटा सकूँगा और मुलाकातियोसे मिल सकूँगा। इतनेमे शरीरमे ज्यादा ताकत भी आ जायेगी। जमनालालजीको अचानक किसी मित्रकी सहायताके लिए बम्बई जाना पड़ा है, इसलिए यहाँके कार्यक्रमका मसविदा नही भेज पाये होगे।

वे चार दिनोमे लौटेगे। जैसाकि मैंने सुझाया है यदि तुम मध्य प्रान्तको छोड़कर दूसरे ढगसे कार्यक्रम बनाओ तो वह तुरन्त बन जायेगा। सारे मध्य प्रान्तका कार्यक्रम एक बारगी बना डालना चाहिए। हमारे दलमे तुम, मैं, मीराबहन, चन्द्रशकर, रामनारायण, नायर और जिन्हे तुम शामिल करोगे, वे लोग होगे।

शास्त्रीका इरादा 'हरिजन' [के कार्यालय] को मद्रास ले जानेका है। उनकी दलील मुझे उचित लगी है। वे व्यर्थ ही पूनामे पड़े हुए हैं। इसलिए सम्भवतः पन्द्रह-एक दिनोमे 'हरिजन' वहाँसे बदल जायेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२६) से।

१. देखिए "पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको", पृष्ठ ८८।
२ और ३. उपलब्ध नही हैं।

९२. पत्र : चिमनलाल पारेखको[1]

[११ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व]

मुझे यह जानकर खेद हुआ कि समझौता करा पानेमे तुम सफल नही हुए। मुझे इस बातसे विशेष दु:ख हुआ कि प्रारम्भिक कठिनाइयोके कारण समझौता होनेमे बाधाएँ उठी। और दोनो पक्षोकी बातको बिना सुने मैं भी कोई निर्णय नही कर सकता कि कौन-कौनसी जानकारी उनसे तलब की गई और जिसे मिल-मालिक लोग नही दे पाये।

यह प्रश्न ऐसा भी नही है जिसपर पचोकी राय माँगी जा सके। लेबर एसोसिएशनके श्री गुलजारी लाल नदा मुझसे मिले। मैंने उनसे कहा कि यदि मुझसे फैसला देनेको कहा जाये तो मेरे समक्ष दोनो पक्षोकी दलीलोंका होना जरूरी है। और ऐसा लिखित बयानोंके जरिये ही किया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-१०-१९३३

९३. पत्र : पद्माको

वर्धा

११ अक्टूबर, १९३३

चि० पद्मा,

तेरा पत्र मिला। आशा है तुम सब ठीक हो गये होगे। वहाँ रहनेकी व्यवस्था कैसी है, इसका विवरण देना। मेरा वजन १०३ पौड तक गया है। खानेके लिए दूध और फल तथा कोई सब्जी जैसेकि लौकी, चिचिडा तथा टमाटर आदि लेता हूँ।

थोड़े दिनोंमे आनन्दी, बाबू और निर्मला अहमदाबाद जायेंगे। फिलहाल यहाँ चालीस-एक लडकियाँ है। बारह वर्षसे नीचेकी उम्रवाली लड़कियोने कल खुशी-खुशी अपने बाल कटवाये, बाकी लड़कियोको समझा रहा हूँ।

तुझे ब्राण्डीका इन्जेक्शन दिया गया, इसमे तेरा कोई दोष नही है। तूने कोई उसे शौकसे थोडे ही पिया है? और फिर वह वैक्सीन जैसा घिनौना भी नही है। कानके पर्देके लिए किसी औषधिके बारेमे मुझे मालूम नही है। इसके

१. अहमदाबाद मिल-मालिक संघके अध्यक्ष श्री पारेखने समझौता समितिसे त्यागपत्र देनेकी सूचना गांधीजीको दी थी।

लिए तो किसी डाक्टरसे बात करनी चाहिए अथवा किसी वैद्यको इसके बारेमे मालूम हो सकता है।

मेरा दौरा ८ नवम्बरको शुरू होगा। तबतक तो मै यहाँ ही हूँ।

शीला खूब मजेमे होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१४५) से। सी० डब्ल्यू० ३५०० से भी; सौजन्य : प्रभुदास गाधी

९४. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

११ अक्टूबर, १९३३

अब आश्रमके बारेमे। इसमे तू भटक गया है। सरकार यदि जमीनका कब्जा नही लेती तो जमीनको वीरान होने दिया जाये, इसमें तो वैरभाव और कृत्रिमता दिखाई देती है। सरकार जमीनको लेकर उसे उजडने देती तो इसमे परेशानीकी कोई बात न थी। लेकिन जिस जमीनका वह कब्जा नही लेती उस जमीनको हम कैसे बरबाद होने दें? यदि ऐसा करें तो क्यो न चल सम्पत्तिको जला डाले? तेरे सिद्धान्तके अनुसार तो जिन्होने अपनी फसलोको जला डाला है उन्होने समझदारीका काम किया है। मेरा तो यह विश्वास है कि आश्रमकी जमीनको हरिजन-कार्यके लिए सौप देनेसे सत्याग्रह आश्रमकी सार्थकता पूर्ण रूपसे सिद्ध हो गई है। आश्रमको सरकारके पास रहने देनेकी अपेक्षा हरिजन सेवक सघको देनेमें इसकी सार्थकता अधिक है। सरकारके पास रखनेके पीछे यह भावना काम कर रही थी कि कभी-न-कभी उसे वापस ले लिया जायेगा। इसमे तो आश्रमवासियोने हमेशाके लिए एक त्याग किया और भविष्यके लिए अपने-आपको ईश्वरपर छोड दिया। जिस ढगसे भी विचार करे, हम देखेगे कि हमने इस समय जो मार्ग ग्रहण किया है वही सत्याग्रहीके लिए शोभनीय है। इसमें पैसेके लोभको कही भी स्थान नही दिया गया था। इसमे तो केवल विवेककी अर्थात् अहिसाकी बात थी। सरकार देशको वीरान होने दे सकती है, लेकिन हम यथासम्भव ऐसा नही होने दें। इतनेसे यदि तेरा समाधान न हुआ हो तो फिर लिखना। इस बारेमे तेरा समाधान करना मुश्किल नही होना चाहिए।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १३७

९५. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

११ अक्टूबर, १९३३

तू एक नियमको भूल गया जान पड़ता है। पत्रमे काटे हुए शब्दोको कभी नही पढ़ना चाहिए और अगर पढ भी लो तो उसका अर्थ कभी नही करना चाहिए। मनुष्यको अपने विचार सुधारनेका अवसर मिलना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति अपने दुष्टसे-दुष्ट विचारोंको भी सुधार लेता है तो फिर उसपर दुष्टताका आरोपण करना केवल अज्ञान है। यदि हम सदा अपने विचारोंको एक-दूसरेके आगे व्यक्त करे तो ससार एक मिनट भी सुखपूर्वक न चल पाये। मुझे लगता है कि तूने व्यर्थ ही क्रोध किया।[1]

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १३८

९६. पत्र : एच० के० हेल्सको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
१२ अक्टूबर, १९३३

प्रिय मित्र,

आपके इसी ६ तारीखके पत्रका जवाब देनेमे मुझे थोड़ा विलम्ब हुआ है, इसके लिए क्षमा करेंगे। बात यह है कि मेरा पत्र-व्यवहार दिनोदिन बढता जा रहा है और उसे निपटा पानेकी मेरी अपनी शक्ति तो सीमित ही है।

आपके सुझावकी निस्वत यह स्पष्ट है कि आप मेरी मर्यादाओको नही समझ पा रहे है। पहली बात तो यही कि मुझे इस बातका कोई भरोसा नही है कि सरकार मेरे मिदनापुर जानेकी कल्पनाको पसन्द करेगी, और यदि वह पसन्द कर भी ले तो जिस ढगसे काम करना मै समुचित समझूँगा वैसा करनेकी स्वतन्त्रता मुझे देगी, इसका कोई भरोसा नही है। और इस सबके अलावा मै जो विचार प्रकट कर चुका हूँ उनसे तो आप अवगत ही है।[2] यदि मुझे हिसाके पक्षपाती दो दलोमे से केवल एक पक्षको ही समझना हो, तो मेरे जैसे पक्के सुदृढ शान्ति सस्थापकके लिए भी सफलता की कोई गुंजाइश नही हो सकती। मै तो सरकार और आतकवादियो, दोनोंको हिसाका प्रतिनिधि मानता हूँ — आतकवादियोंकी हिसा मेरी दृष्टिमे असघटित, उन्मादपूर्ण और सर्वथा अप्रभावकारी है; इसके विपरीत सरकारकी हिसा सुस-

१. देखिए "पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको", १०-१०-१९३३।

२. देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ४१९।

घटित, सुविचारित और विनाशकारी है, लेकिन वह भी मेरी दृष्टिमे एकदम निष्प्रभावी है। यदि हिंसा करनेवाले दो दलोमे से प्रबलतर दलपर मेरा कुछ भी असर नही हो, तब आतंकवादी लोग तो मेरी बातपर कान ही नही धरेंगे। तो भी आप यह खयाल एक क्षणको भी मनमे न लाये कि यदि मैं मिदनापुर नही जा रहा हूँ तो मैं आतंकवादियोको प्रभावित करनेकी कोई कोशिश भी नही कर रहा हूँ। यह प्रभाव निषेधात्मक हो सकता है। मैं भली-भाँति जानता हूँ कि किन अड़चनोके बीच मुझे कार्य करना पड रहा है। लेकिन मुझे अपने अहिंसाके सिद्धान्तपर अटूट श्रद्धा है, और वह दिन उतनी दूर नही है जितना कि कुछ लोग समझते होंगे, जब अहिंसाको सफल होते आँखोसे देखा जा सकेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री एच० के० हेल्स, एम० पी०
५२, गाल्सटॉन बिल्डिंग्स
रसैल स्ट्रीट, कलकत्ता

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

९७. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
१२ अक्टूबर, १९३३

प्रिय ठक्कर बापा,

साहू और अधिकारियोंके बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ वह और उसकी प्रतिलिपियाँ इसके साथ है, इन्हीके साथ मैंने साहूको जो जवाब दिया है उसकी नकल भी है। यह ठीक होगा यदि तुम भी एक औपचारिक पत्र बिहार या उडीसाके कलेक्टरको या गृहसदस्यको इस बातका उल्लेख करते हुए लिख दो कि आन्दोलनकी प्रगतिमे किस प्रकार अनावश्यक बाधाएँ डाली जा रही है।

नी० के सम्बन्धमें तुम्हारा तार मिला। तीन दिन हुए ठीक प्रार्थनाके बाद ही वह एकाएक गायब हो गई। इन दिनो उसका व्यवहार बडा ही अजीब हो चला था। उसका दिमाग तो निश्चय ही कमजोर पड़ गया है। जवाबमे मैंने भी तुम्हे तार भेजा है जो, उम्मीद है, तुम्हे मिल चुका होगा। अब उसके पीछे तुम्हें अपना समय नष्ट नही करना है। लेकिन यदि वह बेकार तुम्हारे रास्तेमे आये तो उसके लिए पुलिसको सूचित कर दें, हालाँकि मेरा खयाल है ऐसा वह शायद ही करेगी।

डॉ० शर्माने भी मुझे तार दिया है और मैंने उन्हें सलाह दी है कि वे उसपर ध्यान देना ही छोड़ दें।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२७) से।

९८. पत्र : महेन्द्र वी० देसाईको

वर्धा
१२ अक्टूबर, १९३३

चि० मनु,

तेरा हरी और लाल स्याहीसे लिखा पत्र मिला। तूने जो अक्षरोंको गोल-मटोल बनाकर लिखा है सो ठीक नहीं है। चित्रकला आनेपर ऐसा किया जा सकता है। अभी तो अच्छे, साफ और सादे अक्षर लिखना ही ठीक होगा।

बच्चोंके पास तो पत्रमें लिखनेके लिए बहुत कुछ होता है।

नये वर्षके[1] लिए तुम सबको आशीर्वाद। खूब जियो, खूब पढ़ो और खूब अच्छे बनो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१६०) से; सौजन्य : वालजी गो० देसाई

९९. पत्र : जयश्री रायजीको

१२ अक्टूबर, १९३३

प्रिय बहन,

आपको व्यापार करना नहीं आता। मैं ही आपकी माँगका स्वरूप निर्धारित करूँ, यह तो रेतसे मक्खन बिलोये जानेकी अपेक्षा करना है। मेरे पास तो एक दमड़ी भी नहीं है। लेकिन यदि मैं आपकी किसी ऐसी विशेष जरूरतके बारेमें जो अन्य प्रकारसे पूरी न हो सकती हो, जान लूँ और यदि मेरी दृष्टिमें ऐसा कोई व्यक्ति आ जाये तो मैं उससे भिक्षा माँग लूँ। बाकी आजकल तो मेरा मन हरिजन-कार्यमें लगा रहता है।

मोहनदास

[गुजरातीसे]
बापुजीनी शीतल छायामां, पृष्ठ १०७

१. कार्तिक सुदी १, गुजराती नव वर्ष जो २० अक्टूबर, १९३३ को पड़ा था।

१००. पत्र : एफ० मेरी बारको

१३ अक्टूबर, १९३३

चि० मेरी,

मुझे खुशी है कि तुम्हारा बुखार उतर गया। यदि असुविधा न हो तो तुम दोपहरमे ४ बजे आ जाओ; मै तुमसे गाडीमे ही मिल लूँगा, तुम्हे ऊपर नही आना है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०१०) से। सी० डब्ल्यू० ३३३५ से भी, सौजन्य : एफ० मेरी बार

१०१. टिप्पणियाँ

अनेक धन्यवाद

समस्त भारतके और पश्चिमी देशोके मित्रोने मुझे मेरे जन्म-दिवसपर बधाइयोके तार भेजे है। इन तारोके लिए मै उनका हृदयसे आभारी हूँ। सभी तारोकी अलग-अलग स्वीकृति भेजनेमे असमर्थ होनेके कारण, आशा है, वे मुझे क्षमा करेगे। मै चाहता हूँ कि मेरे ये मित्र प्रार्थना करे कि परमात्मा मुझे इस अभिनन्दनके योग्य बनाये। मै जानता हूँ कि बधाई भेजनेवाले आशा करते है कि मानव-समाजकी मै कुछ सेवा करूँ। इच्छा तो सदा ही ऐसी रही है, पर यह तो प्रभु ही जानता है कि अपने उद्योगमे मै कहाँतक सफल होऊँगा।

मेरा आगामी दौरा

सब-कुछ ठीक रहा तो हरिजन-कार्यके सिलसिलेमे मेरा देश-भ्रमण आगामी ८ नवम्बरसे प्रारम्भ होगा। कहते है कि मै ठीक-ठीक स्वास्थ्य-लाभ कर रहा हूँ, और डाक्टर खरे, जो इस समय मेरी देख-रेख करते है, की राय है कि उपर्युक्त तारीखसे मै अच्छी तरह अपना दौरा शुरू कर सकूँगा। पर इसका मतलब यह नही है कि पहलेकी तरह मै व्यस्त कार्यक्रमका भार उठा सकता हूँ। सप्ताहमे दो दिन — रविवार और सोमवार अधिक उपयुक्त होगे — यात्रा न करनेका प्रस्ताव है, ताकि उन दिनो 'हरिजन' के सम्पादन और पत्र-व्यवहारका काम मै निबटा सकूँ।

जहाँ-कही मेरे मित्र मुझे ले जायेंगे, वहाँ मै पैसा इकट्ठा करूँगा। सब जगह सनातनियोसे मिलना मैं पसन्द करूँगा। मुझे इसमे सन्देह नही कि इस आन्दोलनका विरोध ज्यादातर भ्रमके कारण हो रहा है। यह तो स्वाभाविक ही है कि हर जगह मैं हरिजनोसे मिलूँ और हरिजन बस्तियाँ भी देखूँ। रातको देर तक लम्बा कार्यक्रम न रखा जाये। इन सब मर्यादाओके होते हुए भी, जिन स्थानोके लोग मुझे बुलानेको उत्सुक है, उन्हे जहाँतक हो जल्दी ही ठक्कर बापाको लिखना चाहिए, ताकि कार्यक्रममे कोई परिवर्तन करनेकी आवश्यकता न पड़े और न किसीको निराश होना पड़े। हरिजन-सेवाके लिए जिन प्रदर्शनोकी आवश्यकता न हो, वे न किये जायें। एक-एक पैसेकी बचतका खयाल रखा जाये। अगर कही मानपत्र दिये जाये, तो उनमे जो-कुछ कार्य किया गया है उसका सक्षिप्त वर्णन, हरिजनोकी स्थिति और उनके व्यवसायके आँकडोंका ही वर्णन रहना चाहिए, न कि मेरा बहुत-सा गुणगान। यदि मुझमे कुछ अच्छी बाते होगी तो वे स्वय ही प्रकट होगी।

क्या दूसरे विश्वविद्यालय अनुकरण करेंगे?

नागपुर-विश्वविद्यालय और मध्यप्रान्तीय हाई स्कूल बोर्डके सदस्य श्रीयुत नारायण केशव बेहरे लिखते है कि "हरिजनों और पिछडी हुई आदिम जातियोसे परीक्षा-शुल्क न लिया जाये"—इस आशयका एक प्रस्ताव मैंने पेश किया था। सौभाग्यसे मेरा वह प्रस्ताव पास हो गया है। युनिवर्सिटीने उसमे "१९४० ईसवी तक" इतना अश और जोड दिया है। और हाई स्कूलके बोर्डने पाँच साल तककी मियाद रखी है। इसलिए इस बीचमे मध्यप्रान्तके इन विद्यार्थियोंसे मैट्रिकसे लेकर एम० ए० या एल० एल० बी० तकका परीक्षाशुल्क नही लिया जायेगा।

इस प्रस्तावके पास करनेके लिए मैं नागपुर विश्वविद्यालयको, हाई स्कूल-बोर्डको और प्रस्तावक (श्री बेहरे)को धन्यवाद देता हूँ। समयकी मर्यादा रखनेसे प्रस्तावकी उपयोगितामे कोई कमी नही आती। यह मर्यादा तो विश्वविद्यालय और बोर्डके सदस्योके आशावादका एक चिह्न है। उनका विश्वास है कि इतने समयमे इन जातियोकी आर्थिक स्थिति इतनी सुधर जायेगी कि उन्हे तब इतनी माफी देनेकी आवश्यकता न रहेगी। उनकी यह आशा सफल हो! भारतके अन्य विश्वविद्यालय और हाई स्कूल-बोर्ड क्या मध्यप्रान्तके इस सुन्दर दृष्टान्तका अनुकरण करेंगे?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १४-१०-१९३३

१०२. गुलामी बनाम अस्पृश्यता

दीनबन्धु एन्ड्र्यूज लिखते हैं [1]

सौ वर्ष हुए, पश्चिममें अस्पृश्यतासे भी अधिक भयानक एक अमानुषी प्रथाका अन्त किया गया था। दास-प्रथाने स्त्री और पुरुषोंको पशुके समान बना दिया था जिन्हें उनके मालिक खरीद सकते थे, बेच सकते थे या अपने पास रख सकते थे। प्राचीन कालसे प्रचलित यह अन्याय सारे संसारमें फैला हुआ था। पर पश्चिममें तो गुलामीने विकराल रूप धारण कर लिया था। हब्शियोंको आफ्रिकासे जहाजोंमें पशुओंकी तरह भर-भरकर लाया जाता था और उन्हे गन्नेके खेतोंमें गधोंकी तरह जोत दिया जाता था। . . . गुलामीके व्यापारसे अमेरिकामें और अन्यत्र जो रँग-भेदकी समस्या पैदा हो गई है, वह अभी तक हल नहीं हुई है। . . .

बहुधा यह शंका की जाती है कि क्या केवल दयाधर्मकी प्रेरणासे कोई भारी नैतिक सुधार हो सकता है? इस कसौटीके निकटतम पहुँच सके वह चीज गुलामीका नाश है। . . . इस पापपूर्ण प्रथाका अन्त करानेके लिए ग्रेट-ब्रिटेनने अपने राजस्वमें से दो करोड़ पौंड दिये। अतः यह कहना ठीक नहीं है कि राजनीतिमें दयाधर्मकी कभी विजय नहीं हुई। १८३३ में दयाधर्मकी विजय हुई थी।

अब १९३३ में क्या होगा? . . . भारत यदि इसी वर्ष 'अस्पृश्यता' का पूर्णतया अन्त कर दे, और लगभग साढ़े चार करोड़ मनुष्योंको नैतिक गुलामीसे मुक्त कर दे, तो निश्चय ही यह एक बहुत जबर्दस्त दयाधर्मका कार्य समझा जायेगा।

कितना अच्छा हो कि दीनबन्धुकी मनोकामना सफल हो। बिना दैवी चमत्कारके, इस वर्षके शेष महीनोंमें, और शायद अनेक वर्ष बाद भी, करोड़ों मनुष्योंका एकसाथ हृदय-परिवर्तन हो जाना कठिन मालूम होता है।

पर अस्पृश्यता-उन्मूलनका क्या अर्थ है और १८३३ में दास-प्रथाके उन्मूलनका क्या अर्थ था? कानूनके अनुसार गुलामी उठ गई थी, पर हृदयकी गुलामी तो उस समय नहीं छूटी थी, और सौ वर्ष बीत जानेपर भी गुलामीका पूरे तौरपर नाश शायद ही हुआ है। इतना लिखनेका अभिप्राय १८३३ के महान् कार्यका महत्त्व कम करनेका

१. यहाँ केवल कुछ अंश दिये गये हैं।

नही है, किन्तु अपने मनमे स्थितिको स्पष्ट करने और १८३३ के प्रयत्नकी सीमाको समझानेका ही है।

जिस तरह १८३३ मे गुलामीका उन्मूलन कर दिया गया था, उसी तरह अस्पृश्यताका अन्त सितम्बर १९३२ मे[1] हिन्दुओके प्रतिनिधियोकी उस सभामे हो गया जो पडित मालवीयजीकी अध्यक्षतामे बम्बईमे की गई थी। वह कोई दिखावेकी चीज नही थी। उसका ठोस परिणाम यह हुआ था कि तुरन्त ही अखिल भारतीय अस्पृश्यता-निवारण-सघकी स्थापना हुई। उस समयसे देशके एक कोनेसे लेकर दूसरे कोने तक अस्पृश्यताके विरुद्ध निरन्तर लड़ाई लड़ी जा रही है। यह बात 'हरिजन'के पृष्ठोसे बहुत अच्छी तरह सिद्ध की जा सकती है। गम्भीरतासे की हुई हिन्दुओकी इस प्रतिज्ञा-का समुचित पालन करनेके लिए कम-से-कम एक व्यक्ति है जिसका जीवन बन्धकके रूपमे रखा हुआ है।

यह सही है कि १८३३मे विधान-सभाने कानून बनाकर गुलामीका अन्त किया था। पर सन् १९३२ मे एक स्वैच्छिक सघने अस्पृश्यताका नाश किया है और इसके पीछे सत्तावल नही है, यह कहकर १९३२ के प्रयासका मूल्य कोई कम न आँके। १९३२ का कार्य ऐच्छिक ही हो सकता था। गुलामी एक इकरारके समान थी और कानूनके बलपर उसका पालन कराया जा सकता था। अस्पृश्यता एक धार्मिक प्रथा है। दीनबन्धु एन्ड्रयूजने सच ही कहा है कि अस्पृश्यता "नैतिक गुलामी" है। इसका कानून द्वारा अन्त नही हो सकता था। इसे नष्ट करनेका एकमात्र औपचारिक उपाय बम्बईमे निश्चित किया गया था। फिर, मै बता ही चुका हूँ कि ऐसा नही है कि इसके पीछे कोई सत्तावल न हो। यह सच है कि इसके पीछे जो सत्ता है वह नैतिक है, पर अन्तमे कानूनी सत्तासे नैतिक सत्ता ही अधिक प्रबल साबित होती है। पाठक समझ ले कि जिन विधेयकोको केन्द्रीय विधान-सभामे पास करानेका प्रयत्न किया जा रहा है, उनके द्वारा अस्पृश्यताका नाश करानेका इरादा जरा भी नही है। एक विधेयकका उद्देश्य तो हरिजनोके मन्दिर-प्रवेशके लिए नियम बनवाना है, और दूसरे विधेयकका उद्देश्य यह है कि अस्पृश्यताको कानूनन जो स्वीकृति मिली हुई है, उसे समाप्त कर दिया जाये। धार्मिक मान्यताओ और सामाजिक रीतियोपर इन दोनो विधेयकोमे से एकका भी प्रभाव नही पड़ता। यह काम तो धार्मिक और सामाजिक सुधारकोका है। सुधारोकी गति तेज करनेके लिए विधेयकोका पास होना बहुत जरूरी है, पर इनसे अस्पृश्यताका अन्त नही हो सकता। अस्पृश्यता कोई इकरारकी चीज नही है। 'अस्पृश्य' कहे जानेवाले लोग खरीदे या बेचे नही जा सकते।

अतः मुझे आशा है कि इतना तो स्पष्ट समझको आ जायेगा कि सन् १८३३ मे होनेवाले गुलामीके नाशके समान २४ सितम्बर, १९३२ को अस्पृश्यताका नाश हो चुका है। इसकी जयन्ती विधिपूर्वक गत २४ सितम्बरको मनाई गई थी। सारा हिन्दू-समाज बम्बईके प्रस्तावका कब पालन करेगा, यह बात प्रस्ताव पास करनेवालो और

१. देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ १४८-९।

पालन करानेकी चेष्टा करनेवालोंके पुरुषार्थपर निर्भर करती है। लेकिन यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके बारेमे यह नही कहा जा सकता कि ऐसा किसी अमुक दिन हुआ।

मै जानता हूँ कि दीनबन्धु किसी ऐसे निश्चित दिनकी बाट देखने नही बैठे हैं, जब कि सारे जनसमाजका एकसाथ हृदय-परिवर्तन दुनिया देख सके। वह जो चाहते है और मै जो चाहता हूँ तथा प्रत्येक सुधारक जिस बातकी चेष्टा कर रहा है, वह यह है कि हिन्दुओंकी समस्त शक्तिका ऐसा प्रदर्शन हो कि कोई व्यक्ति चलते-चलते भी देख सके कि हिन्दू-धर्मने ऊँच-नीचकी भावनाको नष्ट कर दिया है, और अब उसमे जन्मसे या कर्मसे कोई उच्च, नीच अथवा अछूत नही समझा जाता। ईश्वरकी दृष्टिमे पापी और साधु दोनो बराबर ही है। दोनोके साथ समान न्याय होना है और ऊर्ध्वगमन या अधःपतनका समान अवसर दोनोको मिलना है। दोनो ही ईश्वरके बेटे है, उसीकी रचनाएँ है। जो साधु अपने-आपको पापीसे ऊँचा मानता है, वह अपनी साधुता गँवा बैठता है और पापीसे भी तुच्छ हो जाता है, क्योकि पापीको तो इस बातका ज्ञान ही नही होता कि वह क्या कर रहा है।

अस्पृश्यता-निवारक-समितियोका काम अत्यन्त पुण्यमय है। अतः हमे दीनबन्धु एन्ड्रूजके साथ स्वर मिलाकर प्रभुसे प्रार्थना करनी चाहिए कि इन सस्थाओको पर्याप्त आध्यात्मिक बल मिले जिससे कि वे अनेक युगोसे चलते आये इस पुराने अन्धविश्वासको, जो हिन्दू-समाजको गन्दा कर रहा है, समाप्त कर सके। यदि हिन्दू-समाजने युग-धर्म को नही पहचाना, तो यह अन्धविश्वास हिन्दू-धर्मको समाप्त कर डालेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-१०-१९३३

१०३. अकेला व्यक्ति क्या कर सकता है?

हरिजन-सेवक बननेकी इच्छा रखनेवाले एक सज्जन लिखते है[1]

मुझे इसमे जरा भी सन्देह नही कि बेचारी उस भंगिन और 'कट्टरपंथी' कुटुम्ब, इन दोनोकी सेवा करनेका सुनहरा अवसर पत्र-लेखकने यो ही खो दिया। उसे हरिजन-स्पर्शसे 'अपवित्र' हुई लडकीकी माँको नम्रताके साथ समझाना चाहिए था। इस तरह उन्हे लज्जित करके अगर वह उनसे पश्चात्ताप नही करा सकता था, तो कमसे-कम उनका क्रोध तो अपने ऊपर ले ही लेता। और उस हरिजन-लडकीको यह भान होता कि एक हितू तो उसकी सहायताको दौड़ पडा है। लडकीकी माँ

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें बताया गया था कि किस प्रकार एक हरिजन बालाका धोखेसे स्पर्श हो जानेके कारण एक सवर्ण हिन्दू बाला और अन्य सवर्णोंने उस हरिजन बालाको भद्दी-भद्दी गालियाँ दीं। पत्र-लेखकने यह जानना चाहा था कि एक ऐसे गाँवमें, जहाँ कि अन्धविश्वासका बोलबाला है और जहाँ हरिजनोंको पशुओंसे भी बदतर समझा जाता है, वे कोई उपयोगी कार्य किस प्रकार कर सकते हैं।

और उसके अन्य सम्बन्धी कमसे-कम विचार करनेको विवश तो अवश्य हो जाते। शायद पत्र-लेखकको उनके साथ बहस करनी पड़ती। सारे गाँवके लोगोने शायद उस मामलेमे दिलचस्पी दिखाई होती और यदि पत्र-लेखक स्थितिके अनुसार खरा उतरता तो वह भविष्यमें ठोस सेवा करनेका श्रीगणेश वहींसे कर सकता था; अथवा यदि उसका सिर तोड दिया जाता, तब भी यह आगे सेवा-कार्य करनेके लिए अनुमति-पत्रके समान ही सिद्ध होता। मुझे तो साफ मालूम होता है कि ऐसे अवसरोपर प्रत्येक मानव-प्रेमीको होशियारी और नम्रतापूर्वक, लेकिन साहसके साथ, लाचारोकी रक्षाके लिए बीचमे पड़ जाना अपना धर्म समझना चाहिए।

अब मै पत्र-लेखकके सामान्य प्रश्नको लेता हूँ। यदि हमने आत्मविश्वास नही खो दिया होता तो यह प्रश्न उठता ही नही कि एक मामूली मनुष्य क्या कर सकता है। कोई भी मनुष्य इतना तुच्छ नही है कि सकटमें पडे हुए किसी प्राणीकी सहायता न कर सके। इसके लिए पहलेसे शिक्षा लेनेकी जरूरत नही होती। जिसमे इच्छा हो, और साथ ही पूरी हिम्मत भी हो, ऐसे प्रत्येक मनुष्यमे पीडितोकी सहायता करनेकी शक्ति होती ही है। पत्र-लेखक अपने गाँवकी हरिजन-बस्तीमे जाकर अनेक प्रकारसे उनको अपना मित्र तो बना ही सकता है। जबतक वह गाँवमे रहे, वह हरिजन-बच्चोको पढा सकता है। उसकी अनुपस्थितिके दौरान क्या होगा, इसका भय करनेकी उसे जरूरत नही है। केवल लिख-पढ सकनेके योग्य हो जानेसे ही शिक्षाकी समाप्ति नही हो जाती। हरिजनोके लिए इसके अन्य अनेक अर्थ है। बालकोको बारह-खड़ी रटवानेसे पहले उन्हे सभ्यता और स्वच्छताका पाठ अवश्य पढाना चाहिए। पत्र-लेखक हरिजन बच्चोंको घुमानेके लिए ले जा सकता है, निर्दोष और शिक्षा-प्रद खेल सिखा सकता है, हरिजनोके मकानोको झाड़-बुहार कर साफ कर सकता है, और चिकित्साकी सुविधा प्रदान कर सकता है, वह सावधानीके साथ उनकी आर्थिक, सामाजिक और दूसरी आवश्यकताओंको लिखकर अपने जिले या प्रान्तके हरिजन-सेवा सघ तक कार्य-विवरण पहुँचा सकता है, और इस तरह हरिजनो और सेवा-सघके बीच सम्बन्ध स्थापित करनेमे वह अपनेको एक कड़ी बना सकता है। एक मनुष्य कितना काम कर सकता है, इसकी सम्पूर्ण सूची तो मैंने यहाँ नही दी है। मैंने तो कुछ उदाहरण ही बताये है। चतुर सेवक इस कार्य-सूचीको चाहे जितना बढा सकता है। "जहाँ इच्छा हो, वहाँ मार्ग भी निकल ही आता है।"

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १४-१०-१९३३

१०४. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
१४ अक्टूबर, १९३३

प्रिय चार्ली,

तुम्हारा तार मिला था जिसका मैंने निम्नलिखित जवाब भेजा था :

तुम्हारा तार मिला। आशा है गुरुदेव शीघ्र ही स्वस्थ हो जायेंगे। सप्रेम। मोहन।

हेल्सने मुझे पत्र लिखा था कि मुझे तुरन्त मिदनापुरके लिए रवाना हो जाना चाहिए, और मैं समझता हूँ कि उसने मेरे जवाबकी प्रतीक्षा किये बिना ही वह पत्र प्रकाशित कर दिया। उसको जो जवाब[1] मैंने लिखा है उसकी प्रति तुम्हारे सूचनार्थ यहाँ सलग्न कर रहा हूँ।

तुम जानते हो कि डाक्टरोंने जितना आराम बताया है वह मैं ले रहा हूँ और ७ नवम्बर तक मैं यहाँसे नहीं निकलूँगा। मेरा वजन बराबर बढ़ा है और ब्लड-प्रेशर बराबर घटता गया है।

मैंने सी० यू० प्रेसको[2] कह दिया है कि अहिंसावाला अंश वह छाप ले, इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

सप्रेम,

मोहन

सलग्न : २

रेवरेंड सी० एफ० एन्ड्रयूज
शान्तिनिकेतन
(बंगाल)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७९७) से।

१. देखिए "पत्र : एच० के० हेल्सको", १२-१०-१९३३।
२. अनुमानतः केम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस।

१०५. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

शनिवार, १४ अक्टूबर, १९३३

भाई ठक्कर बापा,

लिखना तो था 'अजमेर', और लिखा गया 'आज मर गये'। और यह लिखनेवाला जैसा मूर्ख वैसा ही पढ़नेवाला भी मूर्ख रहा होगा। यदि ऐसा सोचा होता तो दुबारा पढ़े बिना नहीं रहता। मेरा "दिल्ली" नहीं बल्कि "कलकत्ता" लिखनेका इरादा था।[1] दिल्लीको भी कुछ दिया गया है, मैं यह भी नहीं जानता। नी० की कथा करुणाजनक है। अध्यक्ष यदि १५ नवम्बरको दौरा आरम्भ करनेका सुझाव दे और मैं न मानूं तो इसमें भी क्या शिकायत करने जैसी कोई बात है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२८) से।

१०६. सन्देश : दयानन्द अर्द्ध-शताब्दीपर[2]

१४ अक्टूबर, १९३३

ऋषि दयानन्द[3] हिन्दू-धर्मके महानतम सुधारकोंमें से थे। उन्होंने वेदोंके अध्ययनको प्रोत्साहित किया और अन्य बुराइयोंके साथ-साथ अस्पृश्यताका निर्भीकताके साथ विरोध किया।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १५-१०-१९३३

१. देखिए "एक टिप्पणी", ३०-९-१९३३।
२. यह सन्देश दिल्लीसे प्रकाशित होनेवाले उर्दू दैनिक तेज को भेजा गया था।
३. आर्य-समाजके संस्थापक दयानन्द सरस्वती।

१०७. बातचीत : एक खादी कार्यकर्त्तासे[1]

[१५ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व]

भापके यन्त्रो आदिसे चलनेवाले उद्योगोके लिए हमे बहुतसे यन्त्र चाहिए। ये आज हमारे पास नही है। ये हमे विदेशसे विदेशियोकी सुविधानुसार ही मिल सकते हैं। ऐसे यन्त्रोको चलानेके लिए अनुभवप्राप्त कुशल व्यक्ति चाहिए। ये भी हमारे देशमे पर्याप्त संख्यामे नही है। इसलिए फिलहाल तो हमे इन लोगोको भी विदेशोसे ही लाना होगा। और तीस करोड़ लोगोके लिए पर्याप्त पूँजी भी हमारे पास नही है। तात्पर्य यह कि भाप आदि यन्त्रोसे चलनेवाले उद्योगोमे आत्म-निर्भर बनना यदि हमारे लिए सम्भव भी हो तो उसके लिए बहुत लम्बा समय चाहिए। और फिर यदि हिन्दुस्तानमे इस प्रचड शक्तिका उपयोग बहुत बड़े पैमानेपर किया जायेगा तो इससे आजकी बेकारीमे और इजाफा होगा। कहते हैं कि अमेरिकामें इन विशाल यन्त्रोकी सहायतासे एक व्यक्ति ३६ गुलामों जितना काम ले सकता है। तात्पर्य यह कि एक व्यक्ति मशीनोकी मार्फत ३६ व्यक्तियोका काम करता है। यदि हिन्दुस्तानमे ऐसी स्थिति सम्भव हो जाये और यदि हम भारतकी आबादी ३७ करोड़ माने तो इसमे ३६ करोड़ व्यक्ति बेकार हो जायेंगे। तात्पर्य यह कि इस देशमें एक करोड़ व्यक्तियोको अमेरिकाके लोगो जैसा बनानेके लिए ३६ करोड़ व्यक्तियोको "हारा-किरी" अथवा आत्महत्या करनी चाहिए, अथवा किसी चंगेज खाँ अथवा रावणको देशके ३६ करोड़ लोगोका नाश करके हिन्दुस्तानको एक करोड़ लोगोमें बाँट देना चाहिए। इस देशमे प्रति व्यक्ति दो अथवा तीन बीघे जमीन है। इतनी जमीनसे भरण-पोषण नही हो सकता। इससे प्रत्येकको घर बैठे एक अन्य धन्धेकी जरूरत है, और वह धन्धा सहज ही चरखा है। और उसको व्यापक बनानेके लिए हमे केवल थोड़ी-सी पूँजीकी जरूरत है। दूसरे साधन हर गाँवमे मिल जायेंगे। केवल लोगोंका दृष्टिकोण बदलना चाहिए और उनका आलस्य दूर होना चाहिए। हरिजनोंकी आर्थिक स्थितिका समाधान भी इसीसे होगा। यदि यन्त्र युग आयेगा तो हरिजन भी इन ३६ करोड़ लोगोमे शामिल हो जायेंगे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १५-१०-१९३३

1. यह बातचीत चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" में "केवल चरखा ही क्यों?", शीर्षकसे प्रकाशित हुई थी।

आपके स्वास्थ्यकी, बल्कि कहूँ कि आपके अस्वास्थ्यके बारेमे, मै जानकारी रखता रहा हूँ। और यह बात मैंने बहुत पहले ही अनुभव कर ली थी कि आपसे यह अनुरोध करना व्यर्थ है कि आप यह परिवर्तन कर ले या वह कर ले। अन्य मामलोकी तरह इस मामलेमे भी आप अपना ही कानून मानते है। इसलिए मै यही प्रार्थना करके सन्तोष कर लेता हूँ कि जिस प्रभुने इतने लम्बे समयतक आपका ध्यान रखा है और आपको ऐसी शक्ति प्रदान की है जिससे भारतके युवक भी ईर्ष्या कर सकते है, वही प्रभु, जबतक उसे आपकी सेवाओकी आवश्यकता है तबतक आपकी रक्षा करता रहेगा।

मै यह पत्र आपके सबसे हालके वक्तव्यके सन्दर्भमे लिख रहा हूँ। मेरा अपना खयाल है कि अगर अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी बैठक हुई तो वह बहुत बड़े बहुमतसे सविनय अवज्ञा आन्दोलनको जारी रखनेके निर्णयका समर्थन करेगी। चूँकि मेरा यह विश्वास है, इसलिए मुझे निर्णयकी पुष्टिके लिए ऐसी कोई बैठक बुलानेका कोई कारण नही दिखता, क्योकि इस पुष्टिसे सविनय अवज्ञाकी रफ्तार तेज नही हो जायेगी। लेकिन यदि आपको ऐसा विश्वास हो कि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी सविनय अवज्ञाको छोडकर कोई नया कार्यक्रम स्वीकार करेगी तो कोई कारण नही है कि आप बैठक बुलानेकी माँग करानेका सक्रिय रूपसे प्रयत्न क्यो न करे, और सदस्यो द्वारा बैठककी माँगकी सूचना प्राप्त होनेपर जवाहरलाल बैठक बुलानेको बाध्य है। और मै यह कहनेकी भी धृष्टता करूँगा कि यदि आप बैठक बुलानेकी माँग करवानेका निश्चय करे तो आपको बैठककी माँग करनेवाले सदस्योके साथ परामर्श करके एक निश्चित नीति और कार्यक्रम निर्धारित कर लेना चाहिए, और उसे बिना झिझके कार्यान्वित करना चाहिए। यदि यह नही किया जाता और केवल बैठक बुलाने की माँग की जाती है, तो बैठकमे महज बेसिलसिला बहस-मुबाहिसा होगा और बिना सोचे-विचारे तैयार किये गये प्रस्ताव पास किये जायेगे। ऐसी किसी भी बैठकमे मै खुशीसे शामिल होऊँगा और मुझे जो कहना है सो कहूँगा, लेकिन यदि आप अथवा कुछ जिम्मेदार सदस्य उच्चतम मंशाके कारण ऐसा चाहे कि मुझे बैठकमे शामिल नहीं होना चाहिए तो मै खुशी-खुशी इसमे शामिल नही होऊँगा।

पडित मदनमोहन मालवीय
मसूरी

[अग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय

११०. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
१५ अक्टूबर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला जिसके साथ तुमने मदुराके कृष्णमूर्तिको लिखे अपने पत्रकी नकल भेजी थी।

हेल्सको लिखे अपने उस पत्रकी[1] प्रति मैं यहाँ संलग्न कर रहा हूँ जो उनके पत्रके जवाबमें मैंने लिखा है। उनका पत्र तुमने अखबारोंमें देखा ही होगा। और यह रही मालवीयजीको लिखे मेरे पत्रकी[2] प्रति। यह स्वयंमें काफी स्पष्ट है।

विवाहके अवसरपर मेरी शुभकामनाएँ। उस दिन मेरी आत्मा तुम्हारे साथ होगी।

सप्रेम,

बापू

संलग्न : २

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१११. पत्र : स्वरूपरानी नेहरूको

वर्धा
१५ अक्टूबर, १९३३

प्रिय भगिनी,

मैं आपको पत्र नहिं लिखता हूं। परंतु हम सब आपका स्मरण करते रहते हैं। जवाहरलालसे खबर पाते हैं। मेरी उम्मीद है कि आपको २०मी के दिन आराम रहेगा। मुझे दुःख है कि मैं वहाँ नहिं आ सकता। मेरा दिल तो उस रोज वहीं रहेगा। ईस्वर आपको जल्दी आराम देवे।

आपका,
मोहनदास

गांधी-इन्दिरा गांधी पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। जी० एन० ११४०६ से भी।

१. देखिए "पत्र : एच० के० हेल्सको", १२-१०-१९३३।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

११२. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१५ अक्टूबर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

यह रहा माँ के नाम एक पत्र।[१] हम सबको आशा करनी चाहिए कि उनकी तबियत इतनी अच्छी होगी कि वे समारोहमें भाग ले सकें।

क्या तुमने हिन्दी रोमन लिपिमें लिखनी शुरू कर दी है।

मालवीयजीको लिखे मेरे पत्रकी एक प्रतिके साथ तुम्हें [आज][२] एक टाइपशुदा पत्र[३] भेजा जा रहा है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी अनुप्रति (सी० डब्ल्यू० १०१०८) से।

११३. पत्र : जनकधारी प्रसादको

१५ अक्टूबर, १९३३

प्रिय जनकधारी बाबू,

बकाया पत्रोंको देखते हुए मुझे आपका गत २८ अगस्तका पत्र मिला। लेकिन उसके मिलनेसे पहले भी मैं अक्सर आपके बारेमें सोचता रहता था और अभी उस दिन ही मैंने जमनालालजीके साथ आपकी चर्चा की थी।

आपके बच्चे इतने छोटे हैं कि जबतक आप और आपकी पत्नी साथ न हों तबतक उन्हें कोई संस्था अपने यहाँ नहीं लेगी। इसका मतलब है कि आपको वहीं कुछ प्रबन्ध करना होगा। पहली चीज तो यह है कि आपको विनम्र बनना पड़ेगा और अपनेको साधारण मजदूरके स्तरपर रखना होगा तथा अपने बच्चोंको इस तरह पालना होगा कि वे आगे चलकर मजदूर बनें। लेकिन मजदूरोंको भी शिक्षा मिलनी चाहिए। यह शिक्षा आपको देनी चाहिए। आपकी पत्नीको भी मजदूरी करनी चाहिए। यदि आप अपने-आपको इस प्रकारके जीवनमें ढाल लेंगे तो आपके दिमागपर से बहुत बड़ा बोझ उतर जायेगा जिससे आपका मानसिक तनाव अपने-आप कम होगा, और नये प्रकारके जीवनके उत्तेजनकारी प्रभावसे आपका अजीर्ण भी बहुत-कुछ दूर हो

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. साधन-सूत्रमें यह शब्द अस्पष्ट है।

३. देखिए पृष्ठ० १०२।

जायेगा। लेकिन शर्त यही है कि आप इस जीवनको हर्षपूर्वक अपनायेंगे, तब। जबतक हम लोग, जिन्होंने काफी भरपूर शिक्षा पाई है, अपने जीवनमें क्रान्ति नहीं लायेंगे, तबतक हम भूखों मर रहे किसानोंके खून-पसीनेपर जीवित रहनेवाले पराश्रयी ही बने रहेंगे। आपको इस बारेमें व्रजकिशोर बाबू और अन्य लोगोंसे बात करनी चाहिए।

मैं चाहूँगा कि आप इस नई विचारधारा और नये आन्दोलनके अग्रदूत हों, और फिर भी यह कोई नई चीज नहीं है क्योंकि १९१५ में जब मैं भारत आया तब मैंने इस चीजको बहुत प्रचलित कर दिया था और तबसे मैं इसके अनुरूप ही रहनेका प्रयत्न करता रहा हूँ, भले ही मेरा यह प्रयत्न कितना ही अपूर्ण क्यों न हो। इसलिए आपको इसे पूर्ण बनाना है।

हृदयसे आपका,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५४) से।

११४. पत्र : अगाथा हैरिसनको

१५ अक्टूबर, १९३३

प्रिय अगाथा,

विट्ठलभाई पटेलके बारेमें लिखे तुम्हारे पत्रका[1] जवाब मैंने समुद्री-डाकसे न देकर मूर्खता की। इसलिए यह पत्र हवाई-डाकसे भेज कर मैं अपने-आपको दंडित कर रहा हूँ। मुझे कहना होगा कि हवाई-डाकको मैं अभी तक पसन्द नहीं कर सका हूँ। यह तो रईसोंके विलासकी वस्तु है और इसकी आवश्यकता उन लोगोंने पैदा की है जो थल, जल और आकाशपर और उनके निवासियोंपर शासन करनेकी इच्छा रखते हैं। तुम्हें पता नहीं कि वि० झ० पटेलके बारेमें जैसा पत्र तुमने लिखा उस तरहके पत्रोंकी मैं कितनी कद्र करता हूँ। तुम्हारा सामयिक तार पाते ही मैंने बोसको तार किया था और बोसने तत्परतासे उत्तर भेजा।

मुझे खुशी है कि उस सभामें भाग लेनेके लिए तुम जिनेवा गईं थी। तुम्हें किसी सूचना या स्पष्टीकरणकी जरूरत पड़े तो उसे माँगनेमें संकोच मत करना। तुम्हारी आवश्यकताओंका यहाँ हम लोगोंको कोई पूर्वानुमान होना हमेशा सम्भव नहीं है।

१. अगाथा हैरिसनने इस पत्रपर यह लिख दिया था: "जब मैं अक्टूबर, १९३३ में जिनेवामें थी उस समय मैं ग्लैंड (स्विट्ज़रलैंड)के एक सेनिटोरियममें विट्ठलभाई पटेलको देखने गई थी, जो कि उस समय मृत्यु-शय्यापर पड़े थे। सुभाष बोस उनकी देख-भाल कर रहे थे, और मैंने इसका हाल गांधीजीको लिखकर भेजा था।"

मिदनापुरके बारेमे हेल्स, एम० पी०, को लिखे अपने पत्रकी[1] प्रति सलग्न कर रहा हूँ। रायटरके जरिये तुम्हे उस पत्रका जो स्वरूप देखनेको मिलेगा वह शायद विकृत होगा। इसलिए यह प्रति तुम्हारी जानकारी और जरूरत हो तो उपयोगके लिए है। हेल्सने अपना पत्र मेरे उत्तरकी प्रतीक्षा किये विना अखबारोमे छपवा दिया था। तुमने उसे देखा होगा।

महादेव बेलगांवमे है जहाँ गाड़ी-भर किताबोके सिवा उसके पास और कोई नही है।[2] देवदास मुल्तानमे और प्यारेलाल नासिकमे है।

पता नही तुम्हे यहाँसे कोई दैनिक या साप्ताहिक अखबार मिलता है या नही। अगर तुम्हे या अन्य किसीको अवकाश हो तो मैं आसानीसे कुछ चुने हुए अखबार भेज सकता हूँ। तुम स्वय चुनाव करना चाहो तो और बात है।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७१) से।

११५. पत्र : अब्बास तैयबजीको

१५ अक्टूबर, १९३३

प्रिय भुर्रर[3],

कमला देवीको नापसन्द करने और उनपर अविश्वास करनेका आपको मुझे कारण बताना होगा। मुझे सलाह देनी है, और बिना आपकी मददके मैं वैसा नही कर सकता।

रेहाना[4] इधर काफी दिनोसे चुप्पी साधे हुए है।

हमीदा[5] कैसी है?

आप सबको मेरा प्यार,

भुर्रर

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५८७) से।

१. देखिए "पत्र: एच० के० हेल्सको", १२-१०-१९३३।

२. महादेव उस समय *अनासक्तियोग* का अंग्रेजीमें अनुवाद करनेमें लगे हुए थे, जो बादमें *द गीता एकॉर्डिंग टु गांधी* शीर्षकसे प्रकाशित हुई थी; देखिए खण्ड ४१।

३. गाधीजी और अब्बास तैयबजी एक दूसरेको 'भुर्रर' कहकर सम्बोधित करते थे।

४. तैयबजीकी पुत्री।

५. तैयबजीकी पौत्री।

११६. पत्र : प्रभावतीको

वर्धा
१५ अक्टूबर, १९३३

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र आज ही मिला। मुझे थोड़ी चिन्ता हो रही थी। वहाँ रहनेकी जबतक जरूरत महसूस हो तबतक अवश्य वहीं रहना। मैंने तो तुझे यहाँ दौड़ आनेकी छूट दी है। लेकिन जहाँ रहना तेरा धर्म हो तुझे वहीं रहना चाहिए। मातासे अवश्य मिलना। स्वास्थ्यका ध्यान रखना। मुझे लिखा करना। मेरा वजन १०३ पौंड है। ब्लड-प्रेशर १६०-१०० है। यह ठीक कहा जायेगा। खानेमें वही चलता है। कोई फेरबदल नहीं है। बा की आनन्दी और ओम[1] मदद करती हैं। २० तारीखके बाद आनन्दी, बन्नु और बबु जायेंगी। गोपीको तेरे बिना सूना तो जरूर लगता है। मुझे भी जब तू थी तब गोपीकी चिन्ता नहीं थी। गोपी दीवालीमें बम्बई जायेगी। मंगलवारको[2] यहाँसे रवाना होगी। नी० चुपचाप ही भाग गई है। मुझे तो उसकी दिल्ली तककी खबर है। अमला बहन यहीं है। वह आजकल तो ठीक काम कर रही है।

कृष्णाका विवाह २० तारीखको इलाहाबादमें होगा। प्रभुदासका विवाह यहीं १७ तारीखको होगा। कन्या[3] अच्छी है। प्रभुदासकी अपनी पसन्द है। मेरा खयाल है वह सुखी होगा। लक्ष्मीका पत्र आया है। तू गोपीको पत्र लिखती रहना। प्रभुदासको भी लिखना। मैं जानता हूँ कि पत्र लिखनेके बारेमें तुझे कुछ कहनेकी जरूरत नहीं है। रोज पढ़नेकी आदत बनाये रखना। थोड़ी अंग्रेजी, थोड़ी 'रामायण' और थोड़ा गणितका अभ्यास करना। 'गीता' तो है ही। सुरेन्द्र छूट गया है। वह थोड़े दिनोंमें यहाँ आयेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४३४) से।

१. जमनालाल बजाजकी छोटी पुत्री उमा।

२. १७ अक्टूबरको।

३. बिजनौरके लाला लालचन्दकी पुत्री अम्बादेवी।

११७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
१६ अक्टूबर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

यह रहा जमनालालजीका त्यागपत्र[१]। यदि तुम समझते हो कि यह नहीं भेजा जाना चाहिए और इससे कुछ उलझन पैदा होगी तो तुम्हे इसपर कोई कार्रवाई करनेकी जरूरत नही है। और जब तुम विवाह-सम्बन्धी प्रबन्धसे निबट जाओ तब तुम अपने कारण बताते हुए इसे वापस कर सकते हो। तथापि, यदि तुम यह समझते हो कि त्यागपत्र स्वीकार कर लिया जाना चाहिए तो तुम इसे प्रकाशित कर सकते हो। मैं जानता हूँ कि कोषाध्यक्षकी नियुक्ति केवल अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ही कर सकती है। इसलिए कुछ समयके लिए कोषाध्यक्ष पदपर जमनालालजी बने रह सकते हैं। मुख्य बात यह है कि वह कार्यकारी समितिकी सदस्यतासे अलग हो जाये। मैं समझता हूँ कि यह कदम बुद्धिमत्तापूर्ण और आवश्यक है। इस समय उनकी जो स्थिति है, उसको देखते हुए फिलहाल उनके लिए जेल जाना खतरनाक है अर्थात् उन सब चीजोंके बिना उनका जेल जाना खतरनाक है जिन्हे अनुभवी व्यक्ति आवश्यक समझता है। लेकिन आम तौरपर योद्धा अपने स्वास्थ्यकी उतनी परवाह नही करते जितनी जमनालालजीकी शरीर रचनाको देखते हुए उनके लिए आवश्यक है; और चूँकि सत्याग्रहीके कर्त्तव्यके विषयमें उनका वही विचार है जो कि मेरा है, इसलिए जबतक कांग्रेसमें वे एक जिम्मेदारीके पदपर बने हुए हैं तबतक उनको चैन नही मिल सकता।

जमनालालजीके त्यागपत्र देनेके सुझावको मैंने किन कारणोंसे स्वीकार किया वे कारण मैंने तुम्हे बता दिये हैं।

तुम्हारा,
बापू

संलग्न : १

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. कांग्रेसकी कार्यकारी समितिसे।

११८. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

वर्धागंज
१७ अक्टूबर, १९३३

मुझे जनताको यह बताते हुए दुख होता है कि लगभग दस दिन हुए, श्रीमती नी० अकस्मात वर्धा आश्रमसे गायब हो गई हैं। इधर कुछ समयसे उनका दिमाग गैर-मामूली ढंगसे असन्तुलित हो गया था। माता-पिता, भाई या बहन जितना प्यार दे सकते हैं उतना प्यार उनको दिया गया था, लेकिन स्पष्ट है कि उनका विगत भयावना जीवन उनके ऊपर हावी होकर रहा। सम्भव है कि वह अब फिरसे अपना पुराना अविचारपूर्ण, असत्यमय और भ्रष्ट जीवन बिता रही है।

मैं यह सूचना नवयुवकोंको यह चेतावनी देनेके उद्देश्यसे दे रहा हूँ कि वे उनको लुभानेकी कोशिश न करें और न उनके लुभानेमे आयें। मैं चाहूँगा कि उनके सम्पर्कमें आनेवाले लोग उनको कोई आर्थिक मदद न दें। वह अपना विवेक खो चुकी हैं और अगर कोई लोकोपकारी संस्था उनकी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ले तो उनका उद्धार हो जायेगा। अगर वह यह सूचना देखे तो मैं चाहूँगा कि वह वे सब वादे याद करे जो उन्होंने अपने-आपसे और मुझसे किये थे, और पूरे विनम्र भावसे ईश्वरसे प्रार्थना करें कि उनके ऊपर जो भूत सवार हो गया है उससे उन्हे मुक्ति दिलाये। वह जानती है कि यदि वह सच्चे मनसे प्रार्थना करेगी तो वह व्यर्थ नही जायेगी। उन्हे अपने होशके क्षणोंमें ऐसे अनुभव हो चुके है।

अन्तिम बार खबर मिली थी उस समय वह दिल्लीमें थीं।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, १८-१०-१९३३

११९. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

१७ अक्टूबर, १९३३

प्रिय चार्ली,

मेरा खयाल है, तुमने मुझे बताया था कि तुम टस्कीगीमे बुकर वाशिंगटन इंस्टिट्यूशन देखने गये थे। हरिजनोंकी खातिर मैं इस अद्भुत संस्थाके बारेमें प्रकाशित साहित्यको पढ़ता रहा हूँ। किताबोंमे उसके बारेमे जो-कुछ लिखा है क्या तुम्हारे निजी निरीक्षणसे उसकी पुष्टि होती है? क्या तुम "टस्कीगीमे मैंने क्या देखा" शीर्षकसे उसका एक संक्षिप्त विवरण लिख दोगे? क्या तुम किसी रेड इंडियनसे

मिले? क्या तुम उनके बारेमे अपने विचार मुझे बता सकते हो? संयुक्त राज्य अमेरिकाकी सरकार उनकी शिक्षा और उनके सुधारके ऊपर काफी बड़ी धन-राशि व्यय करती दिखती है।

सप्रेम,

मोहन

रेवरेंड सी० एफ० एन्ड्रयूज
आनन्द भवन
इलाहाबाद

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७९८) से।

१२०. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

[१८ अक्टूबर, १९३३][1]

भाई घनश्यामदास,

लिखनेका बहुत इरादा होते हुए भी मैं आजतक लिख न सका। जमनालाल दर्शनाभिलाषीओसे तो खूब बचा लेते है लेकिन खतोसे कौन बचा सके? कभी डेस्क साफ नहि कर पाता हू। क्योकि जल्दी सो जानेका भी कानून लगा दिया है। यह खत तीन बजे उठकर लिख रहा हू। अर्थ यह नहि कि इसी खतके कारण मैं उठा हू। रात्रिको जहा तक जागनेकी इजाजत है उसमे भी जतु इतने सताते हैं कुछ काम नहि करने देते।

जवाहरलालके बारेमे तुमारा लेख पढा। अच्छा है। लिखनेमे कोई हानि नहिं हुई। एक दूसरोके अभिप्रायको दबानेकी कुछ भी जरूरत नहिं हो सकती है। जहां *सत्यकी हि शोधना करनी है वहा अभिप्राय छुपाना दोष बन जाता है।* जवाहरलालको तो लेख भेजा होगा। अथवा भेजो। वह बहुत सीधा पुरुष है। अपनी भूल सुधारता है। मुझे, विश्वास है कि अतमे वह सत्यके पथपर ही आ जायगा। और उसीकी विचारश्रेणी योग्य होगी तो पीछे कहना ही क्या था? समानताका अर्थ एकरूप कभी नहिं हो सकता। समानताका अर्थ एकन्याय ही है। अणु और हिमालयमे ईश्वरके सामने कोई फर्क नही हो सकता है। जैसा हिमालयको ऐसे ही अणुको।

गोपी कल गई। मै ज्यादा बात तो नहिं कर सका। लेकिन नित्य मेरे पास आकर बैठ जाती थी। अत्यत सरल लडकी है। यहा बहुत आनन्दमे रहती थी। सबसे बोलती थी। दीवालीके कारण मुबई चली गई। मुंबईकी रोशनी भी देखना चाहती थी। दीवालीके बाद फिर आ जावे तो अच्छा होगा। वह शीघ्र तैयार हो

1. तिथिका निर्धारण गोपीके बम्बई जानेके उल्लेखसे किया गया है; देखिए "पत्र : प्रभावतीको", १५-१०-१९३३।

जायगी इसमे मुझे कुछ संदेह नहिं है। गजाननको मैंने लिखा था उसका उत्तर उसने दिया है। गोपीसे भी खत लिखवाया था। तुमारा स्वास्थ्यके बारेमें लिखो।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

हरिजनके बारेमे इंग्रेजीमे लिखवाऊंगा। आश्रममें गो [पी] रही बहुत अच्छा हु [आ]।

सी० डब्ल्यू० ७९४० से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१२१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१८ अक्टूबर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

साथमें दो मालाएँ हैं। वे वर-वधूके लिए खास मेरे खास तौरपर काते हुए सूतसे बनाई गई हैं। इनके साथ मेरे शुभ आशीर्वाद जुड़े हुए हैं। इन्हें मेरी तरफसे उनके गलेमें डाल देना। आशा है, ये तुम्हारे पास समयपर पहुँच जायेंगी।

मुझे इस बातका जरूर दुख है कि श्रीमती हठीसिंहने इस संस्कारके विरुद्ध राय दी है, परन्तु मेरा खयाल है कि इन मामलोंमें मैं पिछड़ा हुआ हूँ।

दीपकके बारेमें मैंने तुम्हारा कहना समझ लिया। मैं सरलादेवीको जितने कोमल ढंगसे लिख सकता हूँ, लिखूँगा।

तुम सबको प्यार।

बापू

[पुनश्च :]

जब सब काम निपट जायें तब मैं चाहता हूँ कि तुम मुझे तारसे बताओ कि माताजीने यह सब श्रम सहन कर लिया है।

[अंग्रेजीसे]

ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृष्ठ ११२

१२२. भाषण: प्रभुदास गांधीके विवाहके अवसरपर

वर्धागंज
१८ अक्टूबर, १९३३

विवाह-संस्कार समाप्त होनेके बाद वर-वधूको सम्बोधित करते हुए गांधीजीने कहा कि यह एक अन्तर्जातीय विवाह नहीं, बल्कि अन्तर्प्रान्तीय विवाह है। सुनिर्धारित मर्यादाओंके भीतर अन्तर्जातीय विवाहका समर्थन करनेमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है, क्योंकि मेरी मान्यता है कि वर्णके मूल अर्थोंमें कोई वर्ण या विभाजन नहीं है, और विवाहको समान वर्णके लोगोंतक ही सीमित करना वर्णाश्रमकी प्रमुख विशेषता नहीं है।

उन्होंने दम्पतिका ध्यान इस ओर दिलाया कि उनके विवाहका उद्देश्य वासनाकी तृप्ति करना नहीं है, बल्कि उनके ऊपर नियन्त्रण लगाना है। उन्होंने कहा, मुझे आशा है तुम दोनों देश-सेवाको अपने जीवनका ध्येय बनाओगे और तब तुम देखोगे कि तुम्हारा संयुक्त जीवन सुख, सन्तोष और उत्तरोत्तर बढ़ते हुए संयमका जीवन होगा।

गांधीजीने कहा, मुझे यह देखकर खुशी है कि वधू एक आर्यसमाजी कुलकी कन्या है। आर्यसमाजियोंके साथ मेरे घनिष्ठ सम्बन्ध रहे हैं, हालाँकि वे जानते हैं कि मेरे और उनके बीच सच्चे मतभेद हैं। इस विवाहसे मैं और वे एक-दूसरेके और निकट आये हैं।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-१०-१९३३

१२३. पत्र: रमाबहन जोशीको

वर्धा
१८ अक्टूबर, १९३३

चि० रमा,

यदि डॉक्टर कहे कि अस्पतालमे रहनेकी जरूरत नही तो मेरी सलाह यह है कि तुम यहाँ आ जाओ। यहाँकी आबोहवा निश्चय ही अच्छी है। यहाँ बहुत लड़कियाँ हैं। तुम लक्ष्मीबहनकी थोड़ी मदद भी कर सकोगी और तुम्हारे हाथकी मालिश भी हो सकेगी। अन्य किसी स्थानपर रहनेकी बात मुझे पसन्द भी नही होगी और हाथकी चिन्ता भी बराबर बनी रहेगी। हाथसे अभी ज्यादा काम नही करना चाहिए। डॉक्टर वगैरहकी मदद भी तुम्हे यहाँ मिलेगी। यदि यहाँ आना बन सके तो जितनी जल्दी

बने उतनी जल्दी आ जाओ, जिससे हम साथ रह सके। यहाँ लगभग ६० व्यक्तियो की रसोई होती है। इसमें ४० से ज्यादा तो लड़कियाँ है। आनन्दी, बचु और बबु आज रवाना होंगी। तारावहनको अब आ जाना चाहिए।

प्रभुदासका विवाह आज उत्तर भारतकी एक बालाके साथ हुआ। वह २४ वर्षकी है और उसका नाम अम्बा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५७) से।

१२४. पत्र: अमृतलाल वि० ठक्करको

१९/२० अक्टूबर, १९३३[1]

चि० ठक्कर बापा,

मैं हर रोज तुम्हें एक लम्बा पत्र लिखनेकी बात सोचता हूँ और हर रोज लिख नही पाता। जमनालाल मदद कर सकते हैं और मुलाकातोको रोक सकते हैं, लेकिन पत्रोके इस बढ़ते हुए प्रवाहको कौन रोक सकता है? चूंकि मुझे जल्दी सोना पड़ता है इसलिए कुछ पत्र छूट ही जाते है और इस तरह कागजोका ढेर बढ़ता चला जाता है। मेरा काम जैसे-तैसे चल रहा है।

मैं नी० के बारेमें क्या लिखूं? मुझसे जो हो सकता था वह मैंने उसके लिए किया। मेरा खयाल है उसने ईमानदारीके साथ अपनी वासनाओपर काबू पानका प्रयत्न किया। लेकिन अपने इन प्रयत्नोमे वह नाकामयाब रही और अन्तत. भाग गई। यदि वह कही डूब मरती है तो मुझे आश्चर्य अथवा दुःख न होगा। यदि वह जीवित है तो मै उसके सुधरनेकी उम्मीद नही छोड़ूँगा। उसे आश्रममे फिरसे लेनेकी बातका मुझे कोई पश्चात्ताप नही है। यह मेरा कर्त्तव्य था। उसे न केवल यहाँ बल्कि साबरमतीमे भी लोगोंसे बहुत प्यार-दुलार मिला। वह मुझे लिखा करती थी कि उसे ऐसा स्नेह अपने माता-पितासे भी नही मिला। उसने स्वेच्छासे अपनेपर जो थोड़ा बहुत संयम रखा था उसीसे सब लोग सन्तुष्ट थे। लेकिन जो कई वर्षोंसे बेलगाम रहा हो वह एकाएक कैसे बदल सकता है? मै अभीतक एस० को समझ नही सका हूँ। नी० को लेकर मुझे उसमे कभी कोई दोष नही दिखाई दिया।

आगरा काण्ड बहुत अफसोसजनक है। हम जैसा बोते हैं वैसा काटते है। यदि तथाकथित सनातनी लोग समय रहते नही चेतेंगे और मिथ्याभिमानके वश होकर भीड़की

१. पत्रके दूसरे अनुच्छेदके अन्तमें १९ अक्टूबर, १९३३ तारीख दी गई है। इसके अन्तमें गांधीजीने अपने हस्ताक्षरके साथ जो तिथि दी है वह है "वर्धा, २०-११-१९३३"। लगता है कि भूलसे मासका अंक १० के बजाय ११ लिखा गया है। यह पत्र स्पष्टत: गांधीजीके मध्यप्रान्तके दौरेसे पूर्व लिखा गया था। यह दौरा ८ नवम्बर, १९३३को आरम्भ होनेवाला था। सम्भव है, गांधीजीने पत्र लिखवाना १९ तारीखको आरम्भ किया और इसे पूरा किया २० अक्टूबरको।

मददसे गुण्डागर्दी करेंगे तो हिन्दू-धर्म नष्ट हो जायेगा। हम अपने कर्त्तव्यका पालन करते रहें, यही पर्याप्त है। अन्ततः ईश्वरकी इच्छा ही सर्वोपरि है। समरना और धोलकामे जो घटनाएँ हुई है वे दुखजनक ही नही बल्कि लज्जाजनक भी है। ऐसी ही छोटी-मोटी घटनाएँ यहाँ भी होती है। इस सम्बन्धमे मैं 'हरिजन' मे कुछ लिखनेका इरादा रखता हूँ।[1]

'हरिजन' (का कार्यालय) मद्रास चला गया है, यह मेरे विचारमे एक अच्छी बात है। शास्त्रीकी सेवाओंका पूरी तरहसे उपयोग करनेका एकमात्र तरीका यही था। कोदण्डरावने शास्त्रीके सम्मानमे एक छोटेसे उत्सवका आयोजन किया था। उत्सवमे देवधरने भाषण दिया। उन्होने भी वही बात कही। उन्होने कहा कि शास्त्री पूनामें मुरझा रहे थे और अब मद्रासमे वे खिल उठेंगे। शास्त्रीने अपनेमे 'हरिजन' को चलानेका विश्वास पैदा कर लिया है। उन्हें कुछ और लोगोकी सहायता भी मिलेगी। 'हरिजन' दिल्लीसे दूर होगा, लेकिन इससे कोई असुविधा नही होगी। 'हरिजन' का हिन्दी संस्करण पहले ही दिल्लीसे निकलता है। यदि शास्त्री पूनामें रह कर 'हरिजन' को अपना पूरा समय नही दे पाते थे तो दिल्लीमे तो और भी नही दे सकते थे। उनका कष्ट मानसिक और सच्चा था। और चूंकि हम शास्त्रीकी मददसे 'हरिजन' निकालनेवाले थे इसलिए उनकी सुविधाका ध्यान रखना हमारा फर्ज था। शास्त्रीने मुझे जो पत्र लिखा है यदि मैंने उसे नष्ट नही किया है तो वह पत्र मैं तुम्हे भेजूंगा जिससे तुम उनके मानसिक कष्टका अन्दाज लगा सकोगे। मेरा हमेशा यह मत रहा है कि सबसे अच्छा और सस्ता अंग्रेजी संस्करण मद्राससे ही निकाला जा सकता है। लेकिन यदि तुम और घनश्यामदास मेरे इस पत्रसे पूर्णतया सन्तुष्ट नही हो तो तुम शास्त्रीको सीधे पत्र लिख सकते हो और उनके आगे अपनी बात रख सकते हो।

मैंने रविवार और सोमवारको विश्राम करनेकी जो बात लिखी है उसे तुम भूल समझकर दरगुजर कर सकते हो। तुम जो कार्यक्रम निर्धारित करोगे उसमे सोमवार और मंगलवार शामिल कर सकते हो।

मध्यप्रान्तका यात्रा-कार्यक्रम तुम्हारे द्वारा बताये गये समयके अन्दर पूरा हो जायेगा। डॉ० खरेने मध्यप्रान्त (मराठी) के लिए कार्यक्रम पहले ही जारी कर दिया है। तुमने वह देखा होगा। वे तुम्हें भी लिखने वाले थे। सतीशबाबूने बंगालसे पत्र लिखा है। उन्होने तुम्हे भी लिखा है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११३३) से। सी० डब्ल्यू० १०४८९ से भी; सौजन्य : हरिजन सेवक संघ

१. देखिए "क्रूरताकी दो कथाएँ", ३-११-१९३३।

१२५. पत्र : एच० के० हेलसको[1]

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
२० अक्टूबर, १९३३

प्रिय मित्र,

इस बार मैं आपके इसी १८ तारीखके पत्रका जवाब लौटती डाकसे दे रहा हूँ।

आपने मुझे जैसा विनम्र माना है वैसी कोई विनम्रता मुझमे नही है। मैंने अपनी सीमाओंके बारेमे जो-कुछ लिखा वह अक्षरश. सही है। वे बिलकुल स्पष्ट है। मै किसीके और हरएकके साथ, और निश्चय ही सरकारके साथ ऐसी शान्ति स्थापित करनेके काममे सहयोग करनेको व्याकुल हूँ जो जीवन्त और वास्तविक हो, मृत्युकी शान्ति जैसी न हो। जीवन्त शान्ति सगीनके बलपर स्थापित नही की जा सकती, और न कभी की जा सकेगी। सरकारकी योजना उस डॉक्टर जैसी है, या कमसे-कम मुझे ऐसी लगती है, जो बिना कारणका पता चलाये और उनको दूर करनेकी कोशिश किये ही एक भयकर रोगको समाप्त कर देना चाहता है। मैं ऐसी किसी भी योजनामे सहयोग नही कर सकता। और लगातार ४० वर्षसे भी अधिक समय तक कभी-कभी अत्यन्त उत्तेजनात्मक परिस्थितियोके बीच अहिंसात्मक जीवन बितानेके बाद भी यदि मुझे अहिंसाके प्रति अपनी ईमानदारीका और अधिक सबूत देनेकी जरूरत हो तो ऐसा मान लेना चाहिए कि मैं उसे सिद्ध नही कर सकता।

जहाँ तक सर्व-दलीय बैठकका आपका सुझाव है, तो मान्य मापदण्डके अनुसार मै एक असफल व्यक्ति सिद्ध हुआ हूँ, जैसाकि साम्प्रदायिक समझौता करानेके विचारसे बुलाई गई ऐसी ही एक बैठकमे[2] मैंने जो-कुछ किया उससे देखा जा सकता है। इसी उद्देश्यसे भारतमे हमने जो दो अन्य बैठके बुलाई थी, उनमे भी मैं इतना ही असफल सिद्ध हुआ था।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७२ ए) से।

१. यह पत्र मामूली फेर-बदलके साथ २९-१०-१९३३ के *हिन्दू* में प्रकाशित हुआ था।

२. सम्भवतः लन्दनमें हुई अनौपचारिक बैठकोंमें से एक बैठक, देखिए खण्ड ४८, पृष्ठ १२८ और १६६।

१२६. पत्र : अगाथा हैरिसनको

असंशोधित

२० अक्टूबर, १९३३

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा लम्बा पत्र मिला। मुझे पता नही कि प्रतियाँ तुमने मेरे दोनो साथियों को भेजी थी कि नही। किसी भी सूरतमे मैंने उसे एन्ड्रयूजके पास डाकसे भेज दिया है। तुमने सोचा कि हम सब एक ही जगह होगे। लेकिन फिलहाल हम साथ नही है।

जिनेवामे तुमने शानदार काम किया। मै जानता हूँ कि तुम जहाँ भी होगी, बढ़िया काम कर सकती हो। लेकिन कुछ समय पहले मैंने तुम्हें जो राय दी थी वही राय मेरी अब भी है कि यदि तुम एक प्रतिनिधिकी हैसियतसे आती हो तो तुम्हारा खर्च तुम्हारे क्षेत्रके लोगोंको उठाना चाहिए। लेकिन यदि तुम चीजोंको अपनी आँखसे देखनेके उद्देश्यसे आओगी तो तुम्हारे खर्चका इन्तजाम यहीसे किया जा सकता है। तुम्हारा इस विशेष उद्देश्यसे यहाँ आना उपयोगी है अथवा नही, यह केवल तुम्ही तय कर सकती हो। यदि तुम्हे जरूरी लगे तो तुम्हे आना चाहिए। अगर तुम्हें जलयात्राका अच्छा अभ्यास हो तो तुम निश्चय ही बिना किसी कठिनाईके तीसरे दर्जेमे आ सकती हो और जीवनका ज्यादा नजारा देख सकती हो, क्योकि सैलून-यात्रीकी अपेक्षा एक तीसरे दर्जेके यात्रीकी हैसियतसे तुम्हे साधारण लोगोको देखनेका ज्यादा अवसर मिलेगा। यह मेरा स्वयका और उन लोगोका अनुभव है जो सभी दर्जोमे यात्रा कर चुके है।

बोसके पासपोर्टपर लगे प्रतिबन्धका जहाँतक सवाल है, मुझे पूरा विश्वास है कि सरकार फिलहाल अगर प्रतिबन्ध उठायेगी तो अपमानकारी शर्तोंपर ही उठायेगी। मै तुमसे पूरी तरह सहमत हूँ कि बगालके बारेमे उनके बराबर जानकारी किसीको नही है, और यह भी जानता हूँ कि शान्ति-स्थापनामे वह बहुत मदद कर सकते है, लेकिन उनके सामने भी वे ही कठिनाइयाँ होगी जो मेरे सामने है।

मुझे श्री हेल्सको जो पत्र[1] लिखना पडा है उसकी भी एक प्रति मै तुम्हे भेज रहा हूँ। तथ्य यह है कि सरकार अपनी शर्तपर सहयोगकी माँग करती है, जो कोई भी व्यक्ति मुक्त मनसे कभी नही देता और जो कोई भी आत्मसम्मानी व्यक्ति कभी नही दे सकता।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

तुमने अपने पत्रमे जो महत्त्वपूर्ण मुद्दे उठाये हैं, मेरा खयाल है उन सबका जवाब इसमे आ गया है।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७२) से।

१२७. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

२० अक्टूबर, १९३३

चि० रुक्मिणी,

बहुत दिनों बाद तेरा पत्र मिला। आज प्रतिपदा है। मैं एक बार फिर कहता हूँ कि नियमोंका पालन करनेसे ही जीवन सुव्यवस्थित होता है। हर हफ्ते नहीं तो पन्द्रह दिन, हर पन्द्रह दिन नहीं तो हर महीने यदि तू मुझे पत्र लिखनेका नियम बनाये तो यह अच्छी बात होगी। मैं तो इस आदर्शमें विश्वास करता हूँ कि हम जो कार्य करें सो नियमपूर्वक करें। कल प्रभुदासका विवाह हो गया। कन्या अच्छी जान पड़ती है। तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७०१) से; सौजन्य : बनारसीलाल बजाज

१२८. एक एम० ए० की अधीरता

केरलसे एक एम० ए० पास भाईने एक लम्बा पत्र भेजा है। पत्रके सार्वजनिक महत्त्वसे पूर्ण कुछ अंश[1] नीचे दिये जाते हैं :

पत्र-लेखकके इस कथनका मैं हार्दिक समर्थन कर सकता हूँ कि "अगर हमारे देशमें अस्पृश्यता बनी रही तो मुझे या लेखकको और उनके मित्रोंको शान्ति नहीं मिल सकती"। मेरा वह वचन भी ज्यों-का-त्यों कायम है। पर अस्पृश्यता ताकतसे अथवा कानूनसे दूर नहीं की जा सकती और न इन साधनोंसे मन्दिर ही खुल सकते हैं। कुछ कानूनी फैसलोंने अस्पृश्यता-निवारणमें जो बाधा डाल रखी है, उसे हटानेके लिए ही कानूनमें संशोधनकी अत्यन्त आवश्यकता है, पर यह जरूरी नहीं है कि इन

१. यहाँ नहीं दिये गये हैं। पत्र-लेखकने शिकायत की थी कि अस्पृश्यताकी बुराई अभी भी जारी है, खादी कार्यकर्त्ता हरिजन-कार्यमें कोई दिलचस्पी नहीं लेते, गाँववालोंका रवैया हरिजनोंके प्रति खराब है, और साथ ही सुझाव दिया था कि हरिजनोंमें साहस, आत्म-विश्वास आदिका भाव भरा जाना चाहिए।

दोनों विधेयकोके पास हो जानेसे ही हिन्दू-हृदयमें पैठी हुई अस्पृश्यता नष्ट हो जायेगी, और आपसे-आप सार्वजनिक मन्दिर खुल जायेंगे। हिन्दू-हृदयके द्रवित होनेपर ही अस्पृश्यता नष्ट होगी। जब पूजा करनेवालोको यह पता लग जायेगा कि परमात्मा मनुष्यमात्रके साथ भेद-भावका व्यवहार नही करता और उसका उन मन्दिरोमे निवास नही है, जो मनुष्यकी धृष्टता या अज्ञानताके कारण ऐसे लोगोके लिए बन्द कर दिये गये है जो समान शर्तोपर उपासना करनेके उत्सुक हैं, तब तत्काल ही सार्वजनिक मन्दिरोंके द्वार सर्व-साधारणके लिए खुल जायेंगे।

पत्र-लेखक गुरुवायूरके मन्दिरके खोले जानेकी सारी जिम्मेदारी मेरे ऊपर डालना चाहते हैं। उन्हे जान लेना चाहिए कि यह किसी एक आदमीका काम नही है। ईश्वर जब चाहेगा, तभी यह मन्दिर खुल जायेगा। कार्यकर्त्ता लोग तो बस अपनी योग्यता-भर काम ही कर सकते हैं। वह यह भी स्मरण रखे कि केलप्पनकी प्रतिज्ञा[1] अभी समाप्त नही हुई है। वह थोडे दिनोके लिए ही कोलम्बो गये हैं। जेलमे होनेपर भी राजगोपालाचारी प्रार्थना द्वारा तो सेवा कर ही रहे हैं। केरलके महान और सच्चे सेवक श्री माधवन् नायर अब नही रहे। पर इसमे मुझे सन्देह नही कि उनकी आत्मा हमारे अच्छे-बुरे कामोको देख रही है। जबतक अस्पृश्यताके कलंकसे हिन्दू-धर्म मुक्त नही हो जायेगा, तबतक उनकी आत्माको शान्ति नही मिलेगी। पत्र-लेखक विश्वास रखे कि उपयुक्त समय आनेपर और परमेश्वरकी इच्छा होनेपर केलप्पन और मै दोनो ही न सिर्फ गुरुवायूरके बल्कि और भी बहुत-से मन्दिरोके कपाट खुलवानेके लिए एक बार फिर अपने प्राणोकी बाजी लगा देंगे।

खादी-सेवकोके बारेमे पत्र-लेखककी शिकायत तो सर्वथा अनुचित है। खादी-सेवामे लगे हुए लोगोसे यह आशा नही रखी जा सकती कि वे अपना सारा समय हरिजन-सेवामे लगा दे। पर मै जानता हूँ कि अधिकाश खादी-सेवकोके हृदयोमे अस्पृश्यताकी भावना नही है, और वे हरिजनोकी कुछ-न-कुछ प्रत्यक्ष सेवा कर सकनेका कोई मौका हाथसे नही जाने देते। खादी-सेवामे हरिजनोको लेनेका कोई प्रतिबन्ध नही। अन्तमे, मैं कहूँगा कि खादी-संस्थाएँ सारे देशमे फैली हुई है, और उनसे हजारो हरिजन-परिवारोका पालन हो रहा है।

भारतके अनेक भागोमे [हरिजनोके प्रति] गाँववालोके रुखके सम्बन्धमे पत्र-लेखककी शिकायत अधिक ठीक है। गाँववालोंकी अज्ञानता बेहद बढ़ी हुई है। ऊँच-नीचकी भावना उनमें कूट-कूट कर भरी हुई है। गाँवोकी सख्याको देखते हुए ग्राम-सेवकोंकी संख्या बहुत ही छोटी है। पर निराशाका कोई कारण नही। गाँवके लोगोमे जागृति आ रही है। वे समझने लगे हैं कि जो दर्जा स्वयं उन्होने अपने लिए रखा है उससे अपने दूसरे भाई-बहनोको वचित रखना ईश्वरकी 'समदर्शिता' मे अविश्वास करना है। बहुत-से सेवक गाँवों और गाँवोके आसपास जो मौन किन्तु ठोस सेवा-कार्य कर रहे है, उसकी खबर इस पत्र-लेखकको शायद नही है। हरिजन-सेवाका कार्य चूँकि विशुद्ध धार्मिक है, इसलिए उसमे दिखावेके लिए ज्यादा गुंजाइश नही

१. देखिए खण्ड ५२।

है। कार्यकर्त्ताओंमें जितनी ही शुद्धि और तपस्या होगी, उतना ही यह कार्य सफल होगा। कार्यकर्त्ताओंमें अगर मलिनता, स्वार्थवृत्ति या मिश्रित भावना होगी, तो जरूर ही इस कार्यको धक्का पहुँचेगा।

अब रही हरिजनोंमें प्राण-संचारण करनेकी बात। जीवन-शक्तिकी स्फूर्ति तो उनमें उसी क्षण आ जायेगी, जिस क्षण अस्पृश्यताका कमर तोड देनेवाला भारी बोझा उनके सिर परसे उतार लिया जायेगा। जो अनेक पाठशालाएँ इनके लिए खुली है और खुलती जा रही है, उनमें इन्हें धार्मिक और अन्य विषयोंकी शिक्षा मिलती है और मिलनी ही चाहिए। समय हमारे पक्षमें है। युग-धर्म भी हमारा साथ दे रहा है। समस्त धर्मोंपर आज विश्वके लोकमतका प्रखर प्रकाश पड़ रहा है और यह असम्भव है कि इस प्रचण्ड प्रकाशमें इन धर्मोंकी बुराइयाँ और अन्धविश्वास टिके रह सके।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २१-१०-१९३३

१२९. . . . तो फिर भंगियोंका क्या होगा?

एक अंग्रेज मित्र भारतमें आनेवाली दो अंग्रेज महिलाओंके सम्बन्धमें लिखते हैं:[१]

> ये दोनों चाहती है कि अपना "भंगी" वाला काम वे स्वयं करें, चाहे इस काममें कुछ स्थानीय सवर्ण हिन्दुओंके हाथों . . . उन्हें तकलीफ ही क्यों न उठानी पड़े। . . . स्थानीय भंगियोंके कारण वे मुसीबतमें पड़ सकती हैं, क्योंकि बहुत सम्भव है कि वे भंगी इस बातकी शिकायत करें कि उनका अच्छा धन्धा और अच्छी मजदूरी मारी जा रही है। तब इस सवालका ठीक-ठीक जवाब क्या है? मान लीजिए कि सारे भारतके हजारों और लाखों सवर्ण हिन्दू और दूसरे लोग अपना पाखाना-पेशाब स्वयं साफ करनेका निश्चय इसलिए कर लें कि उन्हें प्रायश्चित्त करना है, और इस बातका स्पष्ट प्रमाण देना है कि वे अपने-आपको भंगियोंसे अच्छा नहीं समझते, तो बहुत-से भंगियोंकी रोजी मारी जायेगी। . . . यह तो समाजके उत्तरोत्तर विकासके साथ श्रमिकोंके विस्थापित होते चले जाने की उसी पुरानी कहानीका एक नया रूप है। मुझे याद नहीं पड़ता कि इस सम्बन्धमें आपकी या किसी दूसरेकी चर्चा मैंने 'हरिजन' में पढ़ी है। . . .

यह सच है कि एक कठिनाईके रूपमें इस प्रश्नकी चर्चा मैंने 'हरिजन' मे नही की है, क्योंकि यह कठिनाई अभीतक सामने आई ही नही थी। साबरमतीमे जो आश्रम था उसमें और उसकी वर्धाकी शाखामे तथा और भी कई स्थानोमे आश्रमवासी अपनी टट्टियाँ स्वयं साफ करते रहे है, और इससे स्थानीय भंगियोको कभी भी क्षोभ नही

१. यहां केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

हुआ। शुरू-शुरूमे साबरमतीमे भंगी रखे गये थे और उन्हें थोडी-सी तनख्वाह दी जाती थी। दो घटेके कामके लिए उन्हें अधिक वेतन देना सम्भव नही था। और उनका काम बहुत अच्छा होनेपर भी यथेष्ट सन्तोषजनक नही होता था। न तो वे स्वच्छतासे टट्टी साफ करनेकी रीति जानते थे, और न सुगमतासे इसे सीखते ही थे।

पाखानेकी सफाईका धन्धा कुछ बहुत प्राचीन समयसे पुश्तैनी नही चला आ रहा है। अबतक मैंने जितने प्रमाण इकट्ठे किये है, उनसे तो यही पता चलता है कि मुसलमानों द्वारा इस देशको जीतनेसे पहले अपने यहाँ भगीका धन्धा करनेवाले लोग नही थे। हिन्दू सामाजिक व्यवस्था ग्रामजीवनके आधारपर रची हुई होनेके कारण, तब इस तरहकी सफाईके धन्धेकी जरूरत नही थी; मगर इस समय, जबकि शहर तेजीके साथ बढते जा रहे है, टट्टियोंकी सफाईका धन्धा अत्यन्त आवश्यक हो गया है। पर इससे मेरा यह मतलब नही है कि हिन्दू-कालमें गाँवोकी सफाई आदर्श या सन्तोषजनक रूपमे होती थी। इसके विपरीत, पता तो यह चलता है कि सफाई बहुत-कुछ अव्यवस्थित ही होती थी। पश्चिममे सफाईके जिन वैज्ञानिक उपायोका विकास हुआ है और होता जा रहा है वह हाल ही मे हुआ है और बेशक है भी बहुत ही लाभदायक।

चूंकि मेरा यह मत है, इसलिए मै तो दोनो अग्रेज बहनोके इस निश्चयका स्वागत ही करूँगा कि वे अपनी टट्टियाँ खुद साफ करे। अगर मै उनके स्थानमें होऊँ, और मेरे पडोसके भगी बेकार हो जाये, तो मैं उनसे दूसरे काम-धन्धे करनेको और यदि उनकी इच्छा हो तो उनसे पाखाना साफ करनेकी नीरोगी और स्वच्छ रीति सीखनेको कहूँ। वे दूसरा काम करनेको उद्यत हो या न हो, सफाईकी उत्तम रीतियाँ सीखनेको वे तैयार हो या न हों, पर वे अपने मनमे यह भाव बहुत दिनोंतक नही रख सकते कि उन बहनोंकी टट्टियाँ साफ करनेके लिए उनसे नही कहा गया और इस प्रकार उनकी हानि हुई; कारण, उन बहनोसे मै यह आशा रखूंगा कि वे हरिजनोंकी उन्नतिके लिए दूसरे उपायोका सब तरहसे प्रयत्न करेंगी। कठिनाई केवल तभी होती है, जब हरिजनोको आश्रित समझकर, या स्वार्थवृत्तिसे काम दिया जाता है। ऐसी दशामें सदा कठिनाई पडनी ही चाहिए। उदाहरणके लिए अगर मै अपने भंगीके साथ कभी-कभी कुछ काम इस तरह करूँ कि उसका स्पर्श न हो, और सार्वजनिक सभाओंमें कह दूँ कि अपने भगीके साथ-साथ मैंने टट्टी तक साफ की है, तो इसमे हरिजनोंको अपना आश्रित समझनेका भाव आ जाता है। मेरा यह काम तब स्वार्थपूर्ण होगा जब भंगीके हाथों जितनी सफाई होती है, उससे अधिक साफ रखनेके लिए मै अपनी टट्टियाँ स्वय साफ करूँ और अपने भगीको सफाईकी आधुनिक रीति सिखानेमे अपना समय नष्ट न करूँ, या अधिक योग्य और अच्छी सेवाके लिए उसे अधिक वेतन न देना चाहूँ। पर जब मै अपने पड़ोसी भगियोंकी अनेक प्रकारसे सेवा करता हूँ, और अपनी टट्टी स्वयं साफ करके उन्हे प्रत्यक्ष उदाहरण द्वारा सिखाता हूँ कि सफाईका काम कोई नीच कर्म तो है नहीं, बल्कि वह सम्मान-योग्य एक अत्यन्त उपयोगी धन्धा है जो सभीको सीख

लेना चाहिए, और यदि सेवा-वृत्तिसे प्रेरित होकर बहुत-से लोग इसे करने लगें, तो समाजका बहुत-कुछ हित हो सकता है, और मेरे इस कामसे किसीको असन्तोष नहीं हो सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-१०-१९३३

१३०. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

वर्धा
२१ अक्टूबर, १९३३

चि० प्रेमा,

मैंने अपने किसी पत्रमें तुझे लिखा था कि मैं जान-बूझकर तुझे पत्र नहीं लिखता ताकि धुरन्धरके[1] सभी पत्र तुझे मिल सकें। लेकिन अमतुलके पत्रपरसे देखता हूँ कि तू मेरे पत्रकी आशा रखती है और वे तुझे मिल भी सकते हैं। मैं लिखनेका विचार कर ही रहा था कि इतनेमें मुझे कल सुशीलाका[2] कार्ड मिला। इसलिए मैं यह पत्र सवेरेकी प्रार्थनासे पहले लिख रहा हूँ।

मैं देखता हूँ कि वहाँ तेरी गाड़ी ठीक चल रही है। तुझसे लिखा जा सके तो तू मुझे अपनी दिनचर्या लिख भेजना — और खाने-पीने आदिका अन्य जो ब्योरा दे सके वह भी देना।

मेरे पास फिलहाल बा, मीरा, चन्द्रशंकर और नायर हैं। काका अभी यहीं हैं। किशोरलाल और गोमती[3] परसों चले गये। स्वामी[4] जल्द आयेगा, तारावहन भी आयेगी। पन्नालाल,[5] नानी बहन,[6] गंगाबहन,[7] अहमदाबादमें हैं। आश्रम हमेशाके लिए हरिजन-निवास बनेगा। उसमें उसका कार्यालय आदि होगा। यह सब तूने पढ़ा होगा। तुझे और अन्य सब बहनोंको यह अच्छा लगा होगा।

महादेवके लम्बे पत्र आते रहते हैं। वह बेलगाँवमें पुस्तकालय खोलकर बैठा हुआ है। दुर्गाको[8] उसके पत्र मिलते होंगे। देवदास मुल्तानमें आनन्द कर रहा है, और प्यारेलाल नासिकमें है। बा [जेल जानेकी] तैयारी कर रही है।

१. प्रेमाबहनके भूतपूर्व अध्यापक।
२. प्रेमाबहनकी मित्र सुशीला पाई।
३. किशोरलाल मशरूवालाकी पत्नी।
४. स्वामी आनन्दानन्द।
५ ६. और ७. झवेरी-परिवारके लोग।
८. महादेव देसाईकी पत्नी।

लक्ष्मीबहनके[1] पास ४०से अधिक लड़कियाँ हो गई हैं। द्वारकानाथ[2] उसकी मददके लिए उसके पास है। नर्मदा नालवाडीमें विनोबाके पास है।

प्रभुदासका विवाह बुधवारको सम्पन्न हुआ। उसे जैसी कन्या चाहिए थी वैसी मिल गई है। २४ वर्षकी है। गुरुकुलमें पढी है। होशियार लगती है।

मेरा दौरा ८ तारीखसे शुरू हो रहा है। उम्मीद है, सब बहनें आनन्दपूर्वक होंगी और क्षण-क्षणका उपयोग कर रही होंगी। बाकी तेरा पत्र आनेपर।

तुम सबको,

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इस पत्रको लिखनेके बाद मैंने नहीं पढा है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३५१) से। सी० डब्ल्यू० ६७९० से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कटक

१३१. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२१ अक्टूबर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिला था। मैं तुम्हारी इच्छापर अमल कर रहा हूँ। धर्म आड़े नहीं आयेगा। मैं चाहूँगा कि तुम चिन्ता करना छोड़ दो।[3] तुम्हारे पास प्रेमलीला-बहनकी दूरबीनकी अपेक्षा अधिक जोरदार दूरबीन होनी चाहिए। उनकी दूरबीनसे तो राई भी पहाड़ जैसी दिखाई देती है। प्लूटो[4] ग्रह याद है न?

प्रभुदासका विवाह बुधवारको हुआ। उसे जैसी कन्या चाहिए थी वैसी ही मिली है और यह उसके ही पुरुषार्थका फल है। लडकी २४ वर्षकी है और बिलकुल सादी है। वह उत्तर भारतकी है, इसलिए उसे न तो टीकेकी और न चूडीकी ही परवाह है। विवाहके समय भी उसके हाथमें चूडी न थी। अब जानकीबहनने उसे जबरदस्ती काँचकी चूड़ियाँ पहनाई हैं। खासी पढ़ी-लिखी है, आर्यसमाजी है।

महादेवका (बेलगाँव जेलसे) मुझे काफी लम्बा पत्र मिला है। यह तो एक लम्बी कविताके समान है। इस पत्रके साथ मैं तुम्हें उसके कुछ अंश भेज रहा हूँ।

१. लक्ष्मीबहन खरे।

२. द्वारकानाथ हरकरे।

३. वल्लभभाईने गांधीजीसे आराम करनेका अनुरोध किया था।

४. यह प्लूटो होना चाहिए, जिसका पता १९३० में लगा था।

व्रजकिशन[1] दिल्लीमें जाकर बीमार हो गया था। बा (जेलमें जानेकी) अपनी तैयारी कर रही है। किशोरलाल और गोमती परसों चले गये। आनन्दी, बचु और बबु भी गईं। किशोरलाल अकोला गया। आनन्दी लक्ष्मीदाससे मिलनेके लिए राहमें उतरनेवाली थी। लक्ष्मीदासका अभी भी कोई पत्र नही आया। यदि आनन्दी विवाह कर ले तो भी उसे आश्रममे पूरी छूट तो होगी ही।

तुम्हारा वजन कितना रहता है। तुम क्या खाते हो? दूध, दही कितना लेते हो? क्या कुछ भेजूं? माँगे बिना तो माँ भी खाना नही देती और फिर माँ भी मेरे जैसी? अब सवेरेकी प्रार्थनामे जानेका समय हो गया, इसलिए यही खत्म करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो — २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ३४-५

१३२. पत्र : एफ० मेरी बारको

२१ अक्टूबर, १९३३

चि० मेरी,

तुम्हारे पास कुछ जौ है इसलिए नहीं, बल्कि तुम्हे यदि उसकी जरूरत हो तो तुम जौ ले सकती हो। लेकिन अगर तुम्हे कब्ज हो, तो तुम्हे जौ की नहीं बल्कि कुछ सब्जियोंकी, जैसे लौकी[2] आदिकी जरूरत है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०११) से। सी० डब्ल्यू० ३३३७ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

१. व्रजकृष्ण चाँदीवाला।
२. साधन-सूत्रमें यहाँ देवनागरी लिपिमें 'दूधी' लिखा हुआ है।

१३३. पत्र : कोतवालको

२१ अक्टूबर, १९३३

भाई कोतवाल,

सामान्यतया यह कहा जा सकता है कि जिस व्यक्तिकी सविनय अवज्ञा आन्दोलनमे श्रद्धा है और जो उसमे लगा हुआ है उसे किसी दूसरे काममे नही लगना चाहिए। इसके विपरीत श्रद्धा होनेपर भी यदि कोई व्यक्ति पहलेसे ही किसी अन्य कार्यको अपने हाथमे लिये हुए है तो वह उस कामको अधूरा छोड़कर सविनय अवज्ञा मे शामिल नही हो सकता। श्रेयानस्वधर्मो विगुण. . .[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३६०५) से।

१३४. पत्र : वनमाला एन० परीखको

२१ अक्टूबर, १९३३

चि० वनमाला,

तू अब तो बिलकुल रोगमुक्त हो गई होगी। अब तू जल्दी ही आनन्दी, बचु, और बबुके पास पहुँच जाना। तू यदि स्वस्थ होती और यहाँ आ गई होती तो तू और मै — हम दोनो ही आनन्द मनाते।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८२) से। सी० डब्ल्यू० ३००५ से भी; सौजन्य : वनमालाबहन एम० देसाई

१. भगवद्गीता, अध्याय ३, श्लोक ३५।

१३५. पत्र : मोहन एन० परीखको

२१ अक्टूबर, १९३३

चि० मोहन,

तेरा पत्र मिला था। तू अब तो बिलकुल ठीक हो गया होगा। इसलिए यदि आनन्दीके साथ रहे तो अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नक़ल (एम० एन० ९१८६) से।

१३६. पत्र : जयसुखलाल गांधीको

२१ अक्टूबर, १९३३

चि० जयसुखलाल[1],

तेरा पत्र मिला है।

उमियाके[2] बीमार होनेकी खबर मुझे मिली थी। मैंने जमनालालजीसे उसके बारेमें बातचीत की थी। चरखा-सम्बन्धी समस्याका समाधान तुम्हें वहीं करना चाहिए। तुममेंसे किसीको वहांके चरखेपर कपास लोढ़नेके लिए उसमें आवश्यक परिवर्तन कर लेना चाहिए। केशूका पत्र इसके साथ है।

विनोद और कुसुमके पत्र मुझे भी आये थे। आशा है तुम्हारी तबियत अच्छी रहती होगी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

प्रभुदासके विवाहके बारेमें तुमने सब-कुछ पढ़ा होगा।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/३) से।

१. जयसुखलाल अमृतलाल गांधी, एक कांग्रेसी कार्यकर्ता।
२. जयसुखलाल गांधी की पुत्री।

१३७. पत्र : केशवराम एस० त्रिवेदीको

२१ अक्टूबर, १९३३

भाई केशवराम,

तुम्हारा पत्र मिला। खादी भाई हरखचन्द मोतीचन्दको उड़ीसा बाढ़ सहायता समिति, कटक, उड़ीसाकी मार्फत भेजना।

बापूके आशीर्वाद

श्री केशवराम त्रिवेदी
शुद्ध खादी भण्डार
नवसारी

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

१३८. पत्र : शंकरलाल डी० परीखको

२१ अक्टूबर, १९३३

भाई शंकरलाल,

तुम्हारा पत्र कुछ दिन पूर्व आया था, पर मैं उसका उत्तर नहीं दे पाया। अब तो जवाब लिखे बिना चारा ही नहीं है, अतः लिख डालता हूँ। वनमाला और मोहन अब बिलकुल अच्छे हो गये होंगे। मेरी सलाह है कि दोनोंमें से एकको भी कठलाल मत रख छोड़ो। नरहरिका तो एक पत्र ही विशेष रूपसे उनके बारेमें था, जिसमें उन्होंने भी कहा है कि दोनों को आनन्दी आदिके साथ ही रहना चाहिए। यह वाछनीय है कि अन्य लोगोंके साथ रहते हुए दोनोंमें अपने भविष्यका निर्माण करनेकी आदत पड़ जाये। स्वस्थ-अस्वस्थ तो चलते ही रहते हैं। यदि ये दोनों जानेको बिलकुल ही तैयार न हों तब तो मेरे लिए मजबूरी होगी, पर उन्हें समझाकर तुम भेज सको तो तुम्हें उन्हें भेज देना चाहिए, ऐसा मेरा खयाल है। जहाँतक मेरा खयाल है वनमालाको तो आनन्दी वगैरहके साथ रहना काफी अच्छा लगा है, पर कदाचित् यह हो सकता है कि मोहनसे अभी कठलालका मोह नहीं छूटेगा। पर वह भोला है और तुम उसे समझा दोगे तो समझ जायेगा। नरहरि और मणिका[1] कुछ समाचार

१. नरहरि परीखकी पत्नी।

आया हो तो मुझे लिखना। तुम अभी क्या करते हो यह भी सूचित करना। तुम वैसी ही सुघड़ताका परिचय दे रहे हो जैसाकि मैंने अनुभव किया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६८५) से।

१३९. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

२१ अक्टूबर, १९३३

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पिछला पत्र मिल गया था, पर जवाब लिखनेके लिए समय कहाँसे निकालूं? कच्चे और पक्के सूतके भाव लिखना तो भूल ही गया था। तुम्हारा पत्र भाई शंकरलालको भेज दिया है। उनकी राय माँगी है। वे कदाचित् तुम्हारे साथ भी बात करेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३६३) से; सौजन्य : भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या

१४०. भेंट : 'उन्नति' के प्रतिनिधिको

[२२ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व][१]

प्रश्न : समाज-सुधारकोंकी कोशिशोंके बावजूद सिन्धमें शिक्षित वर्गोंका जीवन-स्तर बड़ी तेजीसे बढ़ता रहा है; ऐसी परिस्थितिमें आप क्या सलाह देंगे?

उत्तर : जो लोग इसको गलत मानते हैं उनको मैं सलाह दूंगा कि वे सादा जीवन व्यतीत करें और अच्छा सोचें और अच्छे काम करें।

प्रश्न : नवयुवकोंका विश्वास है कि जबतक वे १५० से २०० रुपये महीनेतक अर्जित करनेकी स्थितिमें न हों तबतक वे विवाह करनेकी कल्पना भी नहीं कर सकते। साथ ही, ऐसे नवयुवकोंकी संख्या बढ़ती जा रही है जो सोचते हैं कि विवाहित-जीवनके दायित्व उठाये बिना ही काम-वासनाकी तृप्ति किसी-न-किसी प्रकार कर लेना बिलकुल जायज है; ऐसी मनोवृत्तिके बारेमें आप क्या सोचते हैं?

उत्तर : मैं इस मनोवृत्तिपर लज्जा और गहरे खेदका ही अनुभव कर सकता हूँ। ऐसी मनोवृत्तिका परिणाम केवल आत्मघात ही हो सकता है। इसका एकमात्र

१. यह भेंट-वार्ता इस तारीखको हैदराबाद (सिन्ध) से प्रकाशनार्थ जारी की गई थी।

उपाय यही है कि जो नौजवान इस बुराईकी भयंकरताको समझते है वे स्वय अपने जीवनकी शुद्धता और सही आचरणकी मिसाल पेश करके इसका विरोध करें।

प्रश्न: आप उन युवतियोंको क्या सलाह देंगे जिन्हे मजबूरन कुँआरी रहना पड़ता है या जो विवाह नहीं करना चाहतीं?

उत्तर: ऐसी लड़कियोको अपने छोटे-छोटे कुल-समूहो या प्रान्तोकी सीमासे बाहर निकलकर उपयुक्त जीवन-साथीकी तलाश करनी चाहिए। जितनी जल्दी हम प्रान्तीयता और जातिकी भावनाका त्याग कर दे उतना ही हमारे लिए अच्छा होगा। मेरी समझमे नही आता कि एक शिक्षित आमिल लड़का या लड़की आमिल साथीकी ही तलाश क्यो करे और क्यो न वह लड़का या लड़की भारतके किसी भी भागसे अपना एक उपयुक्त जीवन-साथी चुने? शर्त इतनी ही होनी चाहिए कि उनका उद्देश्य काम-वासनाकी तृप्ति नही बल्कि आध्यात्मिक विकास और राष्ट्रीय हितवर्द्धन हो।

प्रश्न: क्या आप आमिल लड़कियोको यह सलाह नहीं देंगे कि वे आमिलवादकी दीवारोंको तोड़ डालें और किसी गैर-आमिलसे विवाह करनेके लिए तैयार रहें, फिर वह गैर-आमिल लड़का कोई भाईबन्द हो या भाटिया या और किसी जातिका हो? सिन्धियों और गुजरातियोके बीच अन्तर्विवाहके बारेमें आपके क्या विचार है?

उत्तर: इसका जवाब ऊपर पहले ही दिया जा चुका है।

प्रश्न: यदि आप मानते है कि "पुरुष और स्त्रीको आत्माभिव्यक्तिका ज्यादासे-ज्यादा अवसर दिया जाना चाहिए", तो क्या आप सलाह देंगे कि युवा लड़के-लड़कियोंको एक दूसरेसे मिलने-जुलनेकी पूरी आजादी दे दी जानी चाहिए, और यह जरूरी नहीं है कि उनके माता-पिताको इसकी जानकारी हो या इस प्रकारके मामलोंमें उनका कोई नियन्त्रण हो? यह भी, कि क्या लड़कियोंको लड़कोंकी तरह जहाँ चाहें वहाँ आने-जानेकी छूट होनी चाहिए?

उत्तर: निश्चय ही नही। मैं मध्यम मार्गमे विश्वास रखता हूँ। अधिकाश लड़के-लडकियोको अपने माता-पिताके निर्देशमे रहना चाहिए और उनका कहा मानना चाहिए। माता-पिताको भी अपने अभिभावकत्व या निरीक्षणमे रहनेवाले अपने लड़के-लडकियोकी स्वतन्त्रताका आदर करना चाहिए और उसको बढ़ावा देना चाहिए। देशके युवकोको यदि शुद्ध बनना है तो उन्हे कोई काम छिपाकर नही करना चाहिए।

प्रश्न: बूढ़े लोग कहते हैं कि सिन्धकी विशेष परिस्थितियोंको देखते हुए पर्देका त्याग करना सुरक्षित नहीं है, लेकिन युवक-जन स्वभावतः पर्देकी प्रथाको अत्यन्त हानिकर समझते है और इसका विरोध करते है। युवकों और बूढ़ोके बीच इस प्रश्न पर विवाद को बचानेके लिए आप क्या सुझाव देते है?

उत्तर. मुझे पर्दा-प्रथामे कभी विश्वास नही रहा। मै मानता हूँ कि यह प्रथा तेजीसे समाप्त हो रही है और जो लडकियाँ यह साहस कर सकती है कि पर्देको फाड़कर फेक दे और अपने पडोसियोको दिखा दे कि उन्हें किसी प्रकारकी कोई हानि नही उठानी पड़ी है, वे लड़कियाँ पर्देकी प्रथासे सम्बन्धित पूर्वग्रह या भयको दूर

करनेके पक्षमें सबसे समर्थ सबूत सिद्ध होंगी। पर्दा फाड़कर फेंक देनेका यह अर्थ नहीं है कि लड़कियाँ कहीं भी या सभी जगह घूम-फिर या आ-जा सकती हैं। मैं तो अन्य लोगोंके सामने मुखड़ा छिपानेकी रीतिकी बात करता हूँ जिसे मैं लड़कियोंके आत्मविकास या आत्माभिव्यक्तिके लिए अत्यन्त हानिकारी मानता हूँ। सबसे अच्छी सुरक्षा और सबसे सुन्दर पर्दा लड़कीकी अपनी शालीनता है।

प्रश्न : सह-शिक्षाके बारेमें आपके क्या विचार हैं?

उत्तर : मैं सुनियन्त्रित और सुचिन्तित सह-शिक्षामें विश्वास करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-१०-१९३३

१४१. बातचीत : एक मित्रसे[1]

[२२ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व]

जिस समय इंग्लैंडमें गोलमेज सम्मेलन चल रहा था उस समय तथाकथित अल्पसंख्यक जातियोंमें जो समझौता[2] हुआ उसके बारेमें आप जानते ही हैं। इसमें हरिजनोंको भी शामिल किया गया था। उस समय मैंने हरिजनोंके लिए अपने प्राणोंकी बाजी लगा दी।[3] एक दूरदर्शी व्यक्तिके रूपमें मैंने देखा कि किसी-न-किसी प्रकारका संविधान तो बनने ही वाला है, उसके लिए यदि इस समझौतेकी योजनाको सरकार स्वीकार कर लेगी तो हरिजनोंके साथ हमारा जो सम्बन्ध है वह टूट जायेगा और हिन्दू-धर्मके टुकड़े हो जायेंगे। हरिजन या तो हिन्दुओंसे अलग एक नई जाति बन जायेंगे अथवा किसी अन्य जातिसे मिल जायेंगे, लेकिन हिन्दू-धर्ममें तो वे कदापि न रहेंगे। मैंने देखा कि यदि ऐसा हुआ तो हिन्दू-धर्मका नाश हो जायेगा। यदि छः करोड़ व्यक्ति धर्म छोड़कर चले जायेंगे तो उससे धर्मका नाश हो जायेगा सो बात नहीं, लेकिन उसमें निहित कारणोंको लेकर उसका नाश हो जायेगा। कोई भी व्यक्ति यदि हिन्दू-धर्म छोड़कर जाना चाहे तो जा सकता है, लेकिन हम सवर्णोंको इसमें कारणरूप नहीं बनना चाहिए। अतएव प्राणोंकी बाजी लगाकर भी हिन्दू-धर्मके टुकड़े हो जानेसे रोकनेके अपने धर्मको मैंने समझा।

जिस समय ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलने निर्वाचक मण्डलोंके सम्बन्धमें अपना निर्णय[4] दिया उस समय यद्यपि मैं जेलमें था तथापि मुझे लगा कि मुझे इसका विरोध करनेकी अपनी प्रतिज्ञाका पालन करना ही होगा। इसलिए सितम्बर, १९३२ में[5] मैंने आमरण अनशन किया। और आज लोग कहते हैं कि भले ही अनपेक्षित रूपसे ऐसा हुआ हो, लेकिन इससे हिन्दू-धर्मकी महान सेवा हुई। यदि आप यह मानते हैं कि ब्रिटिश मन्त्रि-

१. यह और अगला शीर्षक चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से लिये गये हैं। यह लेख "मैंने हरिजन कार्य हाथमें क्यों लिया?" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२ और ३. देखिए खण्ड ४८, पृष्ठ ३२६ और ३३१।

४. १७ अगस्त, १९३२ को; देखिए खण्ड ५०, पृष्ठ ३९३।

५. देखिए खण्ड ५१।

मण्डलके निर्णयके सम्बन्धमे मैने जो विरोध किया वह सही कदम था तो उससे अन्य सब कदम उचित है।

प्र० : क्या आप इस बातको जरा अधिक विस्तारसे समझायेंगे — १९३२ के उपवास द्वारा जब आप हरिजनोंको अलगसे मताधिकार देनेकी योजनाको बदलवानेमें समर्थ हो गये थे तो फिर अन्य कदम उठानेकी क्या जरूरत थी?

उ० : ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलके निर्णयको बदलवाना तो इस उपवासका एक कारण-मात्र था। लेकिन उसके बदलनेके बाद सवर्ण हिन्दुओके कर्त्तव्य का प्रश्न उठ खडा हुआ। फलत जब सर पुरुषोत्तमदास[1] और श्री घनश्यामदास जेलमे मेरे पास आये तो मैने उनसे कहा कि ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलके निर्णयमे फेरबदल होने-भरसे मुझे सन्तोष नही होनेवाला है। सवर्ण हिन्दुओको बहुत-कुछ करना होगा। इसके बाद मैने उस बातको प्रस्तावका आकार दिया। और यही मसविदा लगभग इन्ही शब्दोमे २५ सितम्बरकी बम्बईकी सभामे पास हुआ।[2] इसमे कहा गया है कि अबसे हिन्दू-धर्ममे किसीको भी अस्पृश्य नही माना जायेगा। मन्दिर और अन्य स्थान जितने अशो तक अन्य हिन्दुओके लिए खुले है उतने ही अशो तक हरिजनोके लिए भी खुले रहेगे। इस प्रस्तावके पास होनेके बाद जब नेतागण मुझसे मिलने आये तब मैने हरिजन नेताओंसे कहा कि इस प्रस्तावके पालनके लिए मै अपने प्राण आपको जमानतके रूपमे सौपता हूँ। इसलिए मेरे लिए यरवडा मन्दिरमे रहकर भी यह काम करना आवश्यक हो गया। इस उपवासके बाद जेलके बन्द दरवाजोको खुलवानेके लिए मैने सरकारसे जो पत्र-व्यवहार किया उसमे लिखा कि मुझे सवर्ण हिन्दुओको उनके कर्त्तव्यके प्रति जाग्रत करना होगा और इसके लिए उनके और मेरे बीच कोई सम्पर्क न रहनेसे काम नही चलेगा। इसके फलस्वरूप सरकारने मुझे जेलमे रहते हुए हरिजन-कार्य करनेकी पूरी छूट दी।[3] बादमे जब मैने हरिजन-सेवकोमे मलिनता देखी तब मुझे सहज ही २१ दिनोका उपवास रखना पड़ा और अगस्तमे पुन जेलमें जानेपर मैने पहले जैसी कामकी सुविधाएँ माँगी और जब वे नही मिली तो आठ दिनका और उपवास करना पडा।

प्र० : क्या आप इस मलिनताका खुलासा दे सकते है?

उ० : यह उपवास सेवकोकी शुद्धिके लिए था। शुद्धिके लिए उपवास कब आवश्यक होता है, इसका एक उदाहरण मैने 'हरिजन' मे दिया है,[4] यह आप उसमे देखेगे। यदि हममें ऐसी मलिनता भर जाये तो धार्मिक सुधार करोड़ोके जनसमूहमे व्यापक नहीं हो सकता, अस्पृश्यता रूपी जो अधर्म हमारे गाँवोंमें गहरे पैठ गया है उसे नही निकाला जा सकता। उपवासके निर्णयपर पहुँचनेमे मेरे हृदयमे जो महा मंथन हुआ, जिन भयकर झझावातोसे मुझे गुजरना पडा इसका वर्णन तो मै दे चुका

१. सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास।
२. देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ १४८-९।
३. देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ ३५६-७, पाद-टिप्पणी १।
४. देखिए "उपवास कब आवश्यक होता है?", २७-१०-१९३३।

हूँ। मलिनताकी जो घटनाएँ मेरे देखनेमे आई उन सबका जिक्र मैंने 'हरिजन' मे नही किया है। उपवासके दौरान और उसके बाद कितनी ही अन्य चीजे मेरी जानकारीमे आई। कितने ही हरिजन-सेवक जाग्रत हुए और उन्होने कहा कि हम लोग तो यह मानते थे कि हम बिलकुल शुद्ध है, लेकिन हममे निहित दोष अब हम देख सकते है। एक ओवरसीयरने मजदूरोसे पैसा लिया था, उसकी स्वीकारोक्तिको तो मैंने प्रकाशित किया ही है।[1] यदि मैं सब किस्से कहने लगूँ तो 'हरिजन' के पृष्ठोसे दुर्गन्ध आने लगे, इसलिए मैंने उन्हे प्रकाशित नही किया। दुनिया शुद्ध हो, इसकी चिन्ता हम न करे लेकिन जिन लोगोंने इस धार्मिक कार्यके लिए अपने प्राण अर्पण कर दिये है उन्हे तो अवश्य ही शुद्ध रहना चाहिए, ऐसी अपेक्षा हम जरूर करते है। हिन्दू-धर्ममे तो उपवास अत्यन्त सामान्य चीज है, लेकिन अन्य धर्मोमे भी शुद्धिके लिए उपवासका निर्देश किया गया है।

प्र० : आपने विधान-सभामें मन्दिर-प्रवेश विधेयक[2] पास करवानेके प्रयत्न किये और इस सिलसिलेमें आपने राजाजीको दिल्ली भेजा, इससे बहुत सारे लोगोंको ऐसा लगता है कि आपने कांग्रेसके असहयोग सिद्धान्तका उल्लंघन किया है। क्या आप इसपर कुछ प्रकाश डालेंगे?

उ० — कांग्रेसके सिद्धान्त उसके कार्यको मदद देनेके लिए है। आपको यह मालूम है न कि १९२१ में जिस समय असहयोग आन्दोलन पूरे जोरपर था उस समय उत्कलके एक कांग्रेसीने यह सोचकर पैसे खाये थे कि चूँकि कांग्रेसने अदालतोका बहिष्कार किया है इसलिए वह उसपर मुकदमा नही चलायेगी। मेरे पास जब यह खबर आई तब मैंने तार किया कि उस व्यक्तिको गिरफ्तार करवाया जाये। कांग्रेसके नियम ऐसे तो नही हो सकते जिससे उसके ध्येयको ही नुकसान पहुँचे। मन्दिर-प्रवेशके बारेमे मैंने देखा कि इसमे कानूनी बाधा है, उसे दूर करवाये बिना यदि काम न चले तो उसे दूर करवानेका प्रयत्न करना चाहिए और यदि किसी अदूरदर्शी व्यक्तिको इसमें कुछ विरोधाभास दिखाई दे तो हम उसे सहन करे। एक ग्रेन विष ले अथवा ३० ग्रेन लें, क्या इसमे कोई भेद नही है? औषधिका उपयोग दर्द मिटानेके लिए होता है, आत्महत्या करनेके लिए नही। जिन लोगोंने बम्बई प्रस्तावको पास किया है उनका तो यह कर्त्तव्य है कि हरिजनोपर लगे प्रतिबन्धोको दूर करवानेके लिए यदि उन्हे कानूनको सहायता लेनी पड़े तो भी वे लें; यह बात प्रस्तावमे स्पष्ट है। इस प्रस्ताव पर अपनी सहमति देनेवाला व्यक्ति इस विधेयकका विरोध कैसे कर सकता है? अथवा विधान-सभाके सदस्योंकी मदद लेनेमे कैसे हिचकिचा सकता है? हमने सहयोग दिया नहीं वरन् लिया है। और मान लीजिए कि कल सरकार सम्पूर्ण मद्यनिषेधका कानून बनाती है तो क्या हम उससे यह कहेंगे कि हमें ऐसा कानून नही चाहिए?

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २२-१०-१९३३

१. देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ३३५।

२. इसे विधान-सभामें रंगा अय्यरने पेश किया था; देखिए खण्ड ५३, पृष्ठ १५-६, पाद-टिप्पणी ३।

१४२. हरिजनोंके लिए सीटें[1]

[२२ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व]

हरिजन मताधिकारका अच्छा उपयोग नही कर सकते और वे राष्ट्रहितको नही समझ सकते, ऐसा कहना तो लोकतन्त्रके सिद्धान्तपर कुल्हाड़ी मारनेके समान है। साम्राज्यवादी हमसे कहते है कि तुम लोग लोकतन्त्रके लायक ही नही हो, तुम्हे मताधिकारका उपयोग करना आ ही नही सकता। यह बात भी उन्हीके कथनके समान है। हमसे भूले तो होगी ही। भूलोंके बीच ही हम आगे बढ़ेगे। लेकिन इससे क्या यह कहना उचित है कि हमे मताधिकार ही नही मिलना चाहिए? जब हरिजन लोग मताधिकारका उपयोग करने लगेगे तब उन्हे उससे शिक्षा मिलेगी। वे लोग राष्ट्रहितको नही समझते, यह कहना भी ठीक नही है। ये लोग हमारी वोटोसे ही चुने हुए लोग होगे। हरिजनोकी प्रत्येक सीटके लिए हरिजन चार व्यक्ति चुनेगे और इनमे से एक व्यक्तिको हमे चुनना होगा। क्या इन चारोमे से हमे एक भी राष्ट्रहित करनेवाला व्यक्ति नही मिलेगा? और यदि नही मिल सकता है तो इसमे भी हमारा ही दोष है कि हमने इनकी इतनी ज्यादा उपेक्षा की है। हमारे लिए शुद्ध मार्ग यही है कि हम इन्हे अपनायें, इनकी सेवा करे और इनके दिलोको जीत ले। उनके प्रति अविश्वासको लेकर काम नही चल सकता।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २२-१०-१९३३

१४३. उत्तर: पत्र-लेखकोंको[2]

[२२ अक्टूबर, १९३३ से पूर्व]

स्वजनकी अमर स्मृति[3]

तुम्हारे दु:खमे पूर्णतया भागीदार हूँ। मेरे अनेक मित्रोकी भी ऐसी ही स्थिति हुई है, इसकी याद मुझे तुम्हारे पत्रसे हो आई है। लेकिन मैंने अनुभवसे यह जाना है कि प्रियजनके प्रति हमारा जो प्रेम होता है वह उनकी देहको लेकर नही अपितु उस देहमें वास करनेवाले अमर तत्त्वको लेकर होता है। अनेक वर्ष बीतनेपर भी तुम्हारे

१. यवरडा समझौतेके अन्तर्गत हरिजनोंके लिए जितनी सीटें सुरक्षित की गई थी उसपर बहुत आलोचना हुई थी। गाधीजीने आलोचकोंको उपर्युक्त उत्तर दिया था।

२. यह लेख "डाकके थैलेसे" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

३. यह एक पत्र-लेखकके उत्तरमें लिखा गया था। अपने पत्रमें उक्त पत्र-लेखकने अपनी पत्नीकी मृत्युका जिक्र किया था और गांधीजीसे पूछा था कि वह बिना किसी दु:खकी छायाके अपनी पत्नीकी स्मृतिको अपने हृदयमें कैसे बनाये रख सकता है, जिससे कि वह उसके लिए आनन्दका स्रोत बन सके।

हृदयमें तुम्हारी पत्नीकी स्मृति धूमिल नहीं पड़ेगी अपितु वह अधिक दृढ़ और अधिक समृद्ध होगी। इस विचार ही से तुम्हारा दुःख दूर हो जाना चाहिए और तुम्हारा हृदय आनन्दसे भर उठना चाहिए, और इस बातका भी सच्चा ज्ञान होना चाहिए कि संसारमें क्या सार है और क्या असार है। यदि एक व्यक्तिके अनुभवमें दूसरा व्यक्ति भागीदार हो सकता है तो जिस प्रकार मैं तुम्हारे दुःखमें भागीदार बन रहा हूँ, तुम मेरे अनुभवके भागीदार बनो, ऐसी मेरी इच्छा है।

मृत्युका उपहार[1]

यदि तुम्हें (इस संसारसे) विदा होना पड़े तो अपने घर जाना है, ऐसा समझकर शान्तिपूर्वक हृदयमें भगवानका नाम अंकित करके इस संसारसे विदा होना। और यदि ईश्वरने इस देहमें ही तुमसे कोई सेवा लेनी हुई तो वह तुम्हें स्वस्थ कर देगा।

आश्रमका उत्तम उपयोग

मैंने सत्याग्रह आश्रमको हमेशाके लिए हरिजन सेवार्थ अर्पित कर दिया है। मुझे लगता है कि यही इसका उत्तम उपयोग है। सरकारने इसका कब्जा नहीं लिया, इसलिए इसका इससे अच्छा उपयोग और कोई हो ही नहीं सकता था। सम्पूर्ण त्याग की बात भी इसमें आ सकी। आश्रमके समस्त आदर्शोंकी जाँच करनेपर यहाँ तो सबको इसका यही उपयोग सर्वोत्तम जान पड़ा। इसके लिए विशेष समिति नियुक्त की जायेगी। इसमें हर कोई हरिजन नहीं रह सकेगा। लेकिन जो रहना चाहेंगे उन्हें आश्रमके नियमोंका पालन करना होगा। यदि आश्रमवासी 'अनिकेत' और 'येनकेन चित्त सन्तुष्ट' रहें तो इसमें मुझे कोई दोष दिखाई नहीं देता। जब सब कार्य सम्पन्न हो जायेगा, तब भले हम नये आश्रमकी स्थापना करें, यही शोभनीय भी है।

एक हरिजन-सेवकके प्रश्न[2]

अनेक हरिजन-सेवक अपना पेट भरनेसे ज्यादा पैसा लेते हैं, यह बात मैं माननेके लिए तैयार नहीं हूँ। कितने ही कार्यकर्त्ता तो कुछ भी नहीं लेते। "भारी वेतन" से तुम्हारा क्या अभिप्राय है, सो मैं नहीं जानता। जो कार्यकर्त्ता अपनी खुराक और कपड़ेकी जरूरत जितना ही लेता है उसे मैं उत्तम प्रचारक कहता हूँ। हमारे जैसे गरीब देशमें हमारे पास ऐसा फुर्सतवाला वर्ग ही नहीं है जिसमें से हमें राष्ट्रीय सेवक प्राप्त हो सकें।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २२-१०-१९३३

१. यह एक ऐसी स्त्रीको लिखा गया था जो मृत्युशय्या पर पड़ी थी।

२. हरिजन कार्यकर्त्ताने निम्नलिखित शिकायतें की थीं: १. मन्दिर काफी तादादमें नहीं खोले जा रहे हैं। २. ये हरिजन-सेवक भारी-भारी वेतन लेते हैं। ३. खादी कार्यकर्त्ता हरिजन-कार्यमें रुचि नहीं लेते। ४. गाँवोंमें तो अज्ञान और वहमने घर कर रखा है।

शिकायत संख्या १, ३ और ४ के सम्बन्धमें गांधीजीके जवाब यहाँ नहीं दिये गये हैं, क्योंकि उनसे सम्बन्धित विस्तृत जवाब "एक एम० ए० की अधीरता", २१-१०-१९३३ में आ जाते हैं।

१४४. नगरपालिकाओं आदिके सम्बन्धमें

एक सज्जन, नगरपालिका, लोकल बोर्ड आदिके सम्बन्धमे निम्नलिखित सुझाव[1] देते है:

मुझे लगता है कि यह सुझाव निश्चय ही विचारणीय है। नगरपालिकाएँ भले ही ऐसे सुझावको कार्यान्वित न करे, लेकिन जहाँ स्थानीय हरिजन सेवक सघ जिम्मेदारी लेनेको तैयार हो वहाँ मकान और फर्नीचर आदि सही सलामत रखनेकी शर्तके साथ स्कूलके समयसे अतिरिक्त समयमे हरिजनोको उसका [स्कूलकी इमारतका] उपयोग बिना भाडेके करने दिया जाये। इससे भाड़ा भी बचेगा और हरिजन अच्छे और सुविधाजनक मकानोका उपयोग भी कर सकेगे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २२-१०-१९३३

१४५. कुछ नैतिक प्रश्न

जिन सज्जनने नगरपालिकाओं आदिसे सम्बन्धित सुझाव दिये है उन्होने ऐसे प्रश्न पूछे है जो समस्त सेवकोके लिए उपयोगी है। प्रश्न निम्नलिखित है।[2]

इन प्रश्नोंका मे यहाँ क्रमसे उत्तर दे रहा हूँ.

(१) जो व्रत लेना हो उसे स्पष्ट भाषामे लिख लेना चाहिए। उस समय यदि कोई साक्षी मिल जाये तो व्रत उसकी उपस्थितिमें लेना चाहिए। भविष्यमे भी प्रसंग

१. यहाँ नहीं दिया गया है। सुझाव यह था कि नगरपालिकाओंको हरिजनोंके लिए रातको स्कूल चलाने चाहिए और उन्हें आर्थिक सहायता देकर प्रोत्साहित करना चाहिए।

२. प्रश्न यहाँ नहीं दिये गये है। पत्र-लेखकने पूछा था:

(१) व्रत लेनेसे पूर्व किन बातोंपर विचार किया जाना चाहिए और क्या उनमें बादमें फेरबदल किया जा सकता है?

(२) क्या प्रार्थनाका समय निश्चित रूपसे सवेरे उठनेके तुरन्त बाद और सोनेसे ठीक पहले ही हो सकता है? कोई मनुष्य लम्बे समयके लिए एकाग्रचित्त कैसे हो सकता है?

(३) दैनन्दिनी लिखनेका सबसे अच्छा तरीका कौन-सा है, जिससे कि वह भविष्यमें मार्गदर्शकका काम कर सके?

(४) आप अपनी बात सूत्रोंमें कह देते है जिसके कारण अनेक बातें अस्पष्ट रह जाती हैं। एकाग्रचित्त स्थितिको प्राप्त होनेके लिए मनुष्यको क्या निश्चित कदम उठाने चाहिए?

(५) गीता के १२ वें अध्यायके १९ वें श्लोकमें पूर्ण सन्तोषकी बात कही गई है। क्या पूर्ण सन्तोष किसी प्रकारकी शर्त पर निर्भर करता है?

उपस्थित होनेपर उसका कड़ा अर्थ करना चाहिए, शिथिल नहीं। और यदि ऐसा प्रतीत हो कि उसे हल्का करनेकी दृष्टिसे कुछ रह गया है तो ऐसी कोई सुविधा उसमें नहीं जोड़ी जानी चाहिए। मान लो कि मैंने व्रत लिया कि मैं शराब कभी नहीं पीऊँगा। इसमें देशकी बात नहीं बताई गई। मैं विलायत गया। किसीने आरोग्य की दृष्टिसे शराब पीनेका आग्रह किया। इसपर मैं यह नहीं कह सकता था कि व्रत लेते समय मैं हिन्दुस्तानमें था इसलिए मेरा वह व्रत केवल हिन्दुस्तानके लिए ही है, और इसलिए विलायतमें शराब लेनेकी मुझे छूट है। न उसमें दवाका ही उल्लेख था, इसलिए दवाके रूपमें भी मुझे उसे लेनेकी छूट नहीं हो सकती।

(२) प्रार्थनाका समय भी अन्य प्रवृत्तियोंके समान ही निश्चित होना चाहिए। फिर यह समय चाहे कभी भी क्यों न निश्चित हो, इसकी कोई चिन्ता नहीं। सोनेसे पूर्व और सवेरे उठनेके बाद दातुन आदि करनेके बाद प्रार्थनाका समय रखना उत्तम है। सवेरे उठनेका समय भी निश्चित करनेकी आवश्यकता है। चित्तकी एकाग्रता किसीको भी एकदम उपलब्ध नहीं होती। "रसरी आवत जात तें सिल्पर परत निसान" इस न्यायसे नियमित रूपसे प्रार्थना करते-करते एकाग्रता स्वयमेव आ जायेगी। जबतक वह प्राप्त न हो जाये तबतक चिन्ता छोड़कर धैर्यपूर्वक नित्य प्रार्थना करनी चाहिए। "कदी नहीं हारना भावे साडी जान जावे।"

(३) दैनन्दिनी लिखनेका नियम बनानेके बाद फिर उसे कभी छोड़ना नहीं चाहिए। इसका लाभ तुरन्त नहीं तो बादमें अवश्य मालूम पड़ेगा। दैनन्दिनी लिखनेकी आदत ही हमें अनेक दोषोंसे बचा लेगी, क्योंकि वह हमारे दोषकी साक्षी रूप रहेगी। उसमें अपने किये दोषोंका उल्लेख होना ही चाहिए। उसपर टीका करनेकी कोई जरूरत नहीं है। उसमें टीका निहित ही रहती है। "आज 'ब' पर क्रोध आया", "आज 'क' को धोखा दिया", इतना उल्लेख पर्याप्त है। "यह बहुत बुरा हुआ", "अरे मन अब ऐसा न करना" आदि-आदि लिखनेकी कोई जरूरत नहीं। उसमें आत्मप्रशंसा परक शब्द लिखनेकी कतई आवश्यकता नहीं। किये हुए कामका और दोषोंका उल्लेख भर होना काफी होगा। दूसरोंके दोषोंका उल्लेख अपनी दैनन्दिनीमें कदापि नहीं होना चाहिए।

(४) यह प्रश्न समुचित नहीं जान पड़ता। 'गीता' की अपेक्षा मेरी भाषा सूत्र-रूप नहीं है। 'गीता' की भाषाके साथ मेरी भाषाकी तुलना नहीं की जा सकती, और यह शोभा भी नहीं देता। 'गीता' की भाषा यदि मुझे आती हो तो मुझे अच्छा लगेगा, लेकिन मैं उससे दूर हूँ। हमें जिस विषयका ज्ञान कम होता है उसके बारेमें हम जो भी पढ़ते हैं वह हमें सूत्र रूप ही जान पड़ता है। शास्त्रीय भाषा यानी विषयके प्रतिपादनके लिए पर्याप्त भाषा। जो लोग इसे नहीं जानते उन्हें यह सूत्र रूप लगती है। यह अलग चीज है और पतंजलिके सूत्र अलग। पतंजलिके सूत्रोंमें तो बहुत अध्याहार होते हैं। 'गीता' के बारेमें ऐसा नहीं कहा जा सकता। अपितु गीताकारने 'गीता' में पुराने शब्दोंको नये अर्थमें प्रस्तुत किया है, इसीसे उसे समझनेमें कठिनाई होती है। मेरी भाषा संक्षिप्त होती है, इतना गुण उसमें अवश्य है। लेकिन

वह अपूर्ण है, जबकि 'गीता' की भाषा पूर्ण है। जब मैं यह कहता हूँ कि मेरी भाषा अपूर्ण है तो मेरे कहनेका तात्पर्य यह नही कि मेरा भाषापर अधिकार कम है, हालाँकि अधिकार भी कम ही है। यहाँ तो ऐसा ही समझना चाहिए कि मेरे विचार अपूर्ण है, इससे मेरी भाषाको समझनेमे कठिनाई तो होगी ही। जब मेरे विचार पूर्ण होगे तब मैं उन्हे इस रूपमे प्रस्तुत करूँगा कि उन्हे समझनेमे आसानी होगी। अपनी भाषाका इतना दोष स्वीकार करनेके बाद मैं इतना अवश्य कहूँगा कि कितने ही पाठक उसे समझनेका पूरा प्रयत्न नही करते, इसीसे पूर्ण रूपसे व्यक्त किये गये विचारोको भी वे नही समझते और बादमे मुझे दोष देते है। जैसे कि हम उक्त पत्र-लेखकके दृष्टान्तको ही ले। कातनेकी क्रिया चूँकि प्रत्यक्ष है, इसलिए इसे प्रत्यक्ष बताया जा सकता है। चित्तकी व्यग्रता अप्रत्यक्ष वस्तु है। "अभ्यास करनेसे व्यग्रता दूर होगी" ऐसा कहना अपने-आपमे पूर्ण है। उसे प्रत्यक्ष रूपसे बतानेका हमारे पास आज तो कोई साधन नही है। यदि हम किसी दिन विचारोको भी रेखाचित्रोमे व्यक्त करना सीख सकेगे तो कातनेके समान इस 'अभ्यास' का भी प्रत्यक्ष चित्र खीचा जा सकेगा। अभी तो यही कहा जा सकता है कि धैर्यपूर्वक प्रार्थना करते रहनेसे व्यग्रता अवश्य दूर होगी। इसमे अभ्यासीकी सत्यता अथवा सत्यरायणतापर निर्भर करना पडता है। जो मनुष्य प्रार्थनाका आडम्बर करता हो और व्यग्र रहता हो उसे कौन जान सकता है? अथवा जो रोज अपने-आपको धोखा देता हो, और रोज प्रार्थनाके समय अनेक घोडे दौडाता हो उसे कौन टोक सकता है? इसलिए अभ्यासकी सफलता केवल अभ्यासी की प्रामाणिकतापर ही निर्भर करती है। कातनेकी क्रियामे यदि अप्रामाणिकता हो तो वह प्रत्यक्ष देखी जा सकती है, अत उसे कातने वालेको बताया जा सकता है।

(५) 'सन्तुष्टो येनकेनचित्'—का अर्थ यह नही कि आलसी मनुष्यको जो मिले उससे वह सन्तोष मान ले। इसमें सतत और ईमानदारीसे उद्यम करनेपर भी जो मिले उससे सन्तोष करनेकी बात है। तात्पर्य यह कि पुरुपार्थ करनेके बाद भी उसका उत्तरदायित्व ईश्वरेच्छा पर है। यदि प्रयत्न सफल होता न दीख पड़े तो निराश होनेकी तनिक भी जरूरत नही, गीताकारका यही कहना है।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २२-१०-१९३३

१४६. पत्र : माधवदास और कृष्णा कापड़ियाको

वर्धा
२२ अक्टूबर, १९३३

चि० माधवदास और कृष्णा,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। तुम दोनोंको आशीर्वाद। यह वर्ष तुम्हारे लिए सुखपूर्ण और शान्तिमय हो।

दौरा ८ तारीखको शुरू होगा।

बा को तुम्हारा पता तो मालूम ही है।

रामदास मजेमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० यू०/२२) से।

१४७. पत्र : कान्ति एन० पारेखको

२२ अक्टूबर, १९३३

चि० कान्ति,

तेरा पत्र पढ़कर बहुत खुश हुआ। तुझे और जयन्तीको इस वर्षके लिए आशीर्वाद। तुम दोनों अधिक सेवापरायण बनो और दीर्घायु हो।

प्रभुदासका विवाह यहाँ बुधवारको सम्पन्न हुआ। कन्या विनोदकी है और सादगीमें प्रभुदाससे बढ़कर है, मेहनती है, अच्छी ज्ञान पढ़ती है। वह बहादुर है, उसे सेवा करना पसन्द है। उसे शौक किसी चीजका नहीं है। रामदासकी गाड़ी ठीक चलती है। केशू जिनिंग मिलमें काम करने लगा है। कृष्णदास खादी विभागमें है। यहाँ ४० से अधिक लड़कियाँ हैं। सारा भार लक्ष्मीबहन और द्वारकानाथ वहन कर रहे हैं। गाड़ी ठीक चल रही है। आनन्दी, बच्चू और बबु अभी-अभी अहमदाबाद गई हैं। बलभद्र और बीरू जोशी भावनगरमें हैं। वहाँ वे खूब व्यस्त हैं। लगता है इन्दु टिकी रहेगी। दूधीबहन बच्चोंको लेकर भावनगरमें ही रहती हैं।

1. कस्तूरबा गांधीके भाई और उनकी पत्नी।

देवदासके और महादेवके पत्र आते रहते हैं, सरदारके तो होते ही हैं। आज . . .[1] का पत्र भी आया है। पृथुराज[2] कालीकटमें है। उसके पत्र भी आते हैं। उम्मीद है मणि अहमदाबाद गई होगी। स्वामी आज यहाँ आये हैं। किशोरलाल और गोमती बहन यहाँ रहकर वापस अकोला चले गये हैं।

मेरा दौरा ८ तारीखको शुरू होगा।

इस बार तो बहुत लिखा है न? प्रत्येक क्षणका सदुपयोग करना। अब भी मुझे लिखा जा सकता हो तो लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरे साथ नीराबहन, चन्द्रशंकर और नायर होंगे। फिलहाल तो बा भी साथ है। लेकिन वह थोड़े दिनों बाद मन्दिर चली जायेगी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२७६) से।

१४८. पत्र : मणिबहन पटेलको

२२ अक्टूबर, १९३३

चि० मणि,

तेरा कार्ड मिला। मैं बुधवारको तुम तीनोंकी प्रतीक्षा करूँगा। बाबा आयेगा न? आशा है, तेरी तबीयत अच्छी हो रही होगी। स्वामी आज पहुँचे हैं। अन्य सारी बातें बुधवारको।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १०९

१. साधन-सूत्रमें शब्द स्पष्ट नहीं है।
२. लक्ष्मीदास आसरके पुत्र।

१४९. पत्र : गंगा तो० हिंगोरानीको[1]

वर्धा
२२ अक्टूबर, १९३३

प्रिय भगिनी,

चिं० विद्याने[2] आनंदपरका तुमारा खत मुझे पढ़ा दिया है। तुमारे दोनोंकी चिंता छोड़ना चाहिये। आनंद और विद्या अब बालक नहिं है। उनका श्रेय जो करते हैं वही करने देनेमें है। आनंद तो तुमको मिलेगा। आनंदको आशीर्वाद दीजीये। अनुचित मोह छोडो। विद्याको शांतिकी आवश्यकता है। यहां उसकी प्रकृति भी अच्छी रहती है। कुछ अभ्यास भी करती हैं। सहीयर भी अच्छी मिली हैं। महादेव[3] भी अच्छा रहता है। उसके लिये भी चिंता मत करो। बड़ें लड़के मातापिताके साथ कहां तक रह सकते है? उनको स्वतंत्रता मिलनी चाहिये। तुमको तो भगवानने धन-संपत्ति दी है। इसलिये आनंद अथवा विद्याके पाससे कुछ शारीरिक सेवाकी हाजत भी नहिं रहती। विद्याका तो शरीर भी सेवाके लायक नहिं। वह खुद सेवाकी हाजत रखती है।

मोहनदास गांधीके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफ़िल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१५०. पत्र : एफ० मेरी बारको

२३ अक्टूबर, १९३३

चि० मेरी,

सब बड़े लोगोंके विचार एक जैसे होते हैं। मैं आश्चर्य कर रहा था कि कल रात तुमने यहाँ भोजन करनेसे क्यों इनकार कर दिया। बेशक तुम दोनों वक्तका भोजन यहीं कर सकती हो। तरल भोजनका अजीर्णसे कोई सम्बन्ध नहीं है। इससे यही पता चलता है कि प्रोटीन कम होनी चाहिए। लेकिन तुम जब आओ तो मुझसे कुछ समय मिलकर जाना।

सप्रेम,

बापू

१. आनन्द तो० हिंगोरानीकी माता।

२ और ३. आनन्द तो० हिंगोरानीकी पत्नी और पुत्र।

[पुनश्च .]

यदि पेट साफ न होता हो और तुम्हे अजीर्णका अनुभव हो तो तुम एक हिस्सा दूध मिला सकती हो। हॉं, शायद तीन बार खुराक लेना पर्याप्त होगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०१२) से। सी० डब्ल्यू० ३३३८ से भी, सौजन्य : एफ० मेरी बार

१५१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
२३ अक्टूबर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे दो तार मिले, एक तुम्हारा और दूसरा कृष्णा और राजाका। मॉंका साहस देखकर श्रद्धा होती है। उनसे पहली बार मिलनेके बादसे ही मेरे मनमे उनकी जो तस्वीर बनी है वह एक शान्त, गरिमामय साहस और त्यागकी मूर्तिमन्त व्यक्तिकी है।

एक बात मैं तुम्हे लिखना बराबर भूलता रहा। अगर तुम्हे कभी लगे कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक बुलानी चाहिए तो उसे बुलानेमे मत हिचकना। मेरी नापसन्दगीकी परवाह मत करना। मैं इसके पक्षमे नही हूँ, क्योकि मुझे लगता है कि इससे गड़बड़ी और भ्रम और ज्यादा बढेगा तथा इसमे शक्ति, समय और धनकी बर्बादी होगी। लेकिन मुमकिन है मैं बिलकुल गलत होऊँ।

तुम सबको प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य . नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१५२. पत्र : मीठुबहन पेटिटको

२३ अक्टूबर, १९३३

चि० मीठुबहन,

मैं तुम्हारा गुनहगार हूँ, लेकिन मैं लाचार हो गया हूँ।

तुम्हारे नमूने देख गया हूँ। इनके लिए ग्राहककी तलाश करूँगा। तुम्हारा सारा माल ले लिया जाये, ऐसी तजवीज भी करूँगा। तुमने लिखा है कि नुक्सान उठाकर भी तुम देनेको तैयार हो। सो कैसे और कितना नुक्सान उठाकर? यह मुझे बताना।

तुमने मुझसे सिफारिशी पत्र जैसी कुछ चीज माँगी थी। वह निम्नलिखित है:

तुम खादी और औषधालयके द्वारा गरीबोंकी जो सेवा कर रही हो उसका इनाम तो तुम्हें ईश्वर ही दे सकता है। लेकिन तुम्हारी जैसी त्यागी बहनोंकी सेवाको देश भी कभी भूल तो नहीं सकता। देश तुम्हारी कद्र तो इसी प्रकार कर सकता है कि वह तुम जो काम कर रही हो उसका स्वागत करे, उसे अपनाये और इस तरह सेवाकी तुम्हारी शक्तिमें वृद्धि करे।

तुम्हारी मार्फत तैयार की गई खादी यदि लोगोंको मँहगी जान पड़े तो भी उन्हें मालूम होना चाहिए कि इसके लिए दी गई कौड़ी-कौड़ी गरीबोंकी ही जेबमें जायेगी। खुद तुम्हें तो उसमें से कौड़ी भी नहीं चाहिए। तुम्हें जो चाहिए सो ईश्वर ने दे दिया है और उससे तुम सन्तोष मानती हो, इतना ही नहीं बल्कि उसमें से भी तो गरीबोंकी सहायतार्थ खर्च करती हो।

उम्मीद है तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी। दौरा ८ नवम्बरसे शुरू होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

जायजी का [स]माचार और पता लिखना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७०६) से।

१५३. पत्र : पद्माको

२३ अक्टूबर, १९३३

चि० पद्मा,

तेरा पत्र मिला है। अभी मै दौरेमे तुझे अपने साथ नही ले जाना चाहता। अभी तू और परिपक्व तथा स्थिर वन, वादमे सयोग मिलनेपर मै तुझे अवश्य अपने साथ ले जाऊँगा। प्रभुदासके विवाहके वारेमे तो तूने पढा होगा। वहुत लोग [मिलनेके लिए] आये है, इसलिए पत्र समाप्त करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१४६) से। सी० डब्ल्यू० ३५०१ से भी, सौजन्य : प्रभुदास गाधी

१५४. पत्र : एफ० मेरी बारको[1]

वर्धा

२४ अक्टूबर, १९३३

चि० मेरी,

अगर मुझे पता होता कि नी० कहाँ है तो मै उसको तुरन्त लौट आनेके लिए तार करता। मै तलाशमे हूँ, लेकिन अभी तक विफल रहा हूँ।

प्यार।

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०१३) से। सी० डब्ल्यू० ३३३९ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी वार

१. मेरी बारने गांधीजीसे नी० को लानेके लिए जानेकी इजाजत माँगी थी; यह पत्र इसी अनुरोधके उत्तरमें भेजा गया था।

१५५. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२४ अक्टूबर, १९३३

प्रिय ठक्कर बापा,

इसके साथ जॉर्ज जोजेफका पत्र और उसको लिखे मेरे उत्तरकी[1] प्रति भी संलग्न है।

और इसके साथ ही वह पत्र भी है जिसमें बेचारे बापीनीडुके विरुद्ध शिकायत की गई है और मैंने उसे जो उत्तर[2] लिखा है उसकी प्रति भी।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च:]

नी० के बारेमें तुम्हारा पत्र मिला। ['नेशनल] कॉल'ने एस० और नी० के साथ घोर अन्याय किया है। मैंने सहानीको पत्र लिखा है। उसका उत्तर आज मिल जाना चाहिए था।[3]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२९) से।

१५६. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२४ अक्टूबर, १९३३

तेरे क्रोधके बारेमें जब मुझे कुछ कहना उचित जान पड़े तब कहे बिना कैसे छोड़ दूँ? . . .[4] लेकिन तुझसे जबरदस्ती माफी नहीं मँगवानी है। जब मैं किसी-पर जोर-जबरदस्ती नहीं करता तो फिर तुझपर भी क्यों करूँ? और करने जाऊँ तो तू मुझे सहन भी कैसे कर सकता है? लेकिन जहाँ मुझे कहना चाहिए वहाँ कहनेका अधिकार तो मुझे है और मेरा यह धर्म भी है। . . .[5] मनुष्य जब क्षमा माँगता है तब दूसरोंके लिए नहीं वरन् अपने लिए माँगता है। समान गुणवाले व्यक्तियोंमें वयको स्थान है। यह प्रकरण मैं यहीं बन्द करता हूँ। मेरी लिखी बातको भूल जाना।

१ और २. पत्र उपलब्ध नहीं हैं।
३. पुनश्च: वाला अंश गुजरातीमें है।
४ और ५. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूट गया है।

ट्रस्टी[1] बननेका इस मामलेके साथ क्या सम्बन्ध है? तुझे जब ट्रस्टी बनाये जानेका सुझाव रखा गया था उसमें मैं भी शामिल था। यदि मुझे तुझसे अधिक गुणोवाला व्यक्ति मिले तो मैं तेरा नाम अवश्य वापस ले लूँगा और यदि तेरे समान गुणोवाला ही कोई व्यक्ति मेरे ध्यानमें आयेगा तो मैं तटस्थ रहूँगा।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १३८

१५७. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

२४ अक्टूबर, १९३३

भाई मूलचन्द,

तुमारा पत्र आया है। तुमारे शिक्षाका ही काम करना उचित होगा। उसीमें खादीका जो कुछ हो सकें किया जाय। लेकिन उसके लिये खादी शास्त्रका पूर्ण अभ्यास कर लेना आवश्यक है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२) से।

१५८. पत्र : रमादेवी चौधरीको[2]

वर्धा
२४ अक्टूबर, १९३३

प्रिय भगिनी,

तुमारा खत मिला। पुत्र और कन्या पढना चाहे तो पढाईका प्रबंध कर देना उचित है। कुछ भी उद्यम सीखे तो बहूत अच्छा होगा। पुत्रको मेरे साथ घुमाना शक्य नहि है। इस वखतका दौरा कुछ क[ठिन है][3]

बापुके आशीर्वाद

श्री रमादेवी चौधरी
चादनी चौक
कटक
उड़ीसा

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७८२) से।

१. गांधी सेवा संघके।
२. गोपबन्धु चौधरीकी पत्नी।
३. मूलमें यहाँ कटा-फटा है।

१५९. श्रद्धांजलि: विट्ठलभाई पटेलको[1]

२४ अक्टूबर, १९३३

श्री विट्ठलभाई पटेलको मृत्युसे[2] हमारे बीचसे एक अत्यन्त परिश्रमी और अत्यन्त योग्य राजनीतिज्ञ उठ गया। उनका आत्म-त्याग और उनकी हार्दिक निष्ठा और लगन ऐसी थी जिसकी तारीफ नहीं की जा सकती। काम करनेकी उनकी क्षमता अद्भुत थी। उनके बारेमें बिलकुल ठीक ही कहा गया है कि बम्बई कार्पोरेशनके अध्यक्षकी हैसियतसे या विधान-सभाके अध्यक्षकी हैसियतसे, वह अपना दिन-भरका सारा काम रोजका रोज निपटा डालते थे और कलपर कुछ नहीं उठा रखते थे। इस अवसरपर उनका निधन देशके लिए एक बड़ी क्षति है। इस श्रद्धांजलिको समाप्त करनेसे पहले मैं श्री सुभाष चन्द्र बोसकी प्रशंसा किये बगैर नहीं रह सकता, जिन्होंने स्वयं अपने स्वास्थ्यको जोखिममें डालकर भी विट्ठलभाईकी शानदार और लगनसे सेवा-शुश्रूषा की थी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २४-१०-१९३३

१६०. पत्र: जनकधारी प्रसादको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
२५ अक्टूबर, १९३३

प्रिय जनकधारी बाबू,

आपका दुःखभरा पत्र मिला। आप जिस प्रकार शोकसे अभिभूत हो गये हैं वैसा नहीं होना चाहिए। आशा है मैंने इसी १५ तारीखको आपको जो पत्र लिखा था वह आपको मिल गया है। मुझे पत्र लिखनेमें क्षमा माँगनेकी कोई जरूरत नहीं है। आप जब भी चाहें बेशक बराबर लिखें। आपको मेरी राय और मेरी सलाह माँगने का पूरा अधिकार है। मैंने इससे पहलेवाले पत्रमें जो सलाह दी है यदि आप उसे स्वीकार कर सकें तो उससे सारी कठिनाइयाँ हल हो जायेंगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५) से।

१. गांधीजीने यह श्रद्धांजलि एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे एक भेंटमें दी थी।

२. जो २२ अक्टूबरको हुई थी।

१६१. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२५ अक्टूबर, १९३३

प्रिय ठक्कर बापा,

साथमे नरसिहनका[1] पत्र है जो उसने दक्षिण भारतके दौरेके विषयमे लिखा है। मै नही जानता कि राजगोपालाचारीके यह चाहनेका क्या कारण है कि मै यथाशीघ्र दक्षिणका दौरा करूँ। तुम्हे शायद मालूम हो। मै नरसिहनको कारणका पता लगानेके लिए लिख रहा हूँ।

नी० के बारेमे तुम्हारे पत्रसे मुझे लगता है तुम सोचते हो कि मै अब उससे कोई मतलब नही रखना चाहता, लेकिन ऐसी बात नही है। मै उसे वापस पानेको उत्सुक हूँ। लेकिन वह इतनी बौरा गई है कि हो सकता है बिलकुल न लौटे। किसी भी सूरतमें, मै आज तुमको और अमेरिकी मिशनको तार भेज रहा हूँ। मै जानता हूँ कि 'नेशनल कॉल' ने एस० के बारेमे जो-कुछ कहा है वह झूठ और द्वेषपूर्ण है। उसने नी० के साथ कोई बुराई नही की है। नी० स्वय नही जानती कि साबरमतीमे जब उसने एस० को देखा तो उसकी वासना क्यो भड़क उठी। जिस पत्रमे उसने मुझे यह लिखा उसमें उसने एस० को दोषमुक्त कर दिया था। बहुतसे पुरुष स्त्रियोको देखकर उत्तेजित हो उठते है और उसी प्रकार बहुत-सी स्त्रियाँ भी पुरुषोको देखकर अक्सर उत्तेजित हो उठती है, और सदा स्वच्छदताका जीवन व्यतीत करनेवाली नी० के लिए उत्तेजित हो जाना स्वाभाविक ही है। मै एस० को कह रहा हूँ कि वह तुमसे मिल ले ताकि तुम उससे परिचय कर सको और उसे समझ सको। अब चूँकि तुम इस मामलेमे पड़ ही गये हो इसलिए यह ज्यादा अच्छा होगा कि तुम सभी पात्रोको समझ लो। इन पात्रोके बारेमें तुम्हारी राय जाननेसे मुझे मदद मिलेगी, क्योकि इन सभीके साथ अभी मेरा वास्ता खत्म नही हुआ है।

मै देखता हूँ कि रामनारायण दो महीनो तक नही आ सकता, क्योकि रामनाथ 'सुमन' इस बातकी अनुमति माँग रहा था कि उसे रामनारायणकी एवजीमे दो-तीन महीनों तक रख लिया जाये। और सवाल यह था कि तुम सहमत होगे या नही तथा रामनाथके पक्षमे रामनारायण अपना हक छोडेगा या नही। मेरा खयाल है कि तुम उसे जानते हो। वह काफी योग्य है और तुम जो अपेक्षा करते हो वह सारा काम करेगा। यह तो है ही कि चन्द्रशकरके लिए पत्र-व्यवहार, सम्पादन और अखबारोकी रिपोर्टें आदि तैयार करनेका सारा काम अकेले सँभाल सकना सम्भव नही है।

१. राजगोपालाचारीके पुत्र।

नेगीको लिखे तुम्हारे पत्रकी प्रति मुझे मिली है। लगता है कि बिहारीलालके बारेमें तुमने जो पत्र लिखा था तुम्हें उसका मुझसे जवाब पानेकी आशा थी, लेकिन उसका लम्बा पत्र संलग्न करते हुए तुमने जो पत्र लिखा था उसमें तुमने कहा था कि तुम उसके बारेमे मुझे आगे लिखोगे। अतः स्वाभावतः मैंने पत्र नही लिखा, लेकिन अब मैं कह सकता हूँ कि हमें उसके लिए कोई काम नही निकालना चाहिए। अगर कोई काम है जिसके कि वह योग्य हो तो नि.सन्देह वह उसे दे दिया जाये, भले ही हम उसे जो वेतन देंगे उससे कम वेतनपर वही काम कराया जा सकता हो।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

संलग्न : एक पत्र[1]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११३०) से।

१६२. पत्र : वसुमती पण्डितको

२५ अक्टूबर, १९३३

चि० वसुमती,

तेरे समाचार ताराके जरिये मिले हैं। वह अब यहाँ आ जानी चाहिए। सुरेन्द्र यहीं है। उसका स्वास्थ्य ठीक है। शरीर काफी दुर्बल हो गया है। स्वामी भी यहीं हैं। मणि और मृदुला आ रहे हैं। प्रभुदासने उत्तर प्रदेशकी किसी कन्यासे विवाह कर लिया है। विवाह संस्कार यहीं हुआ। कन्याका नाम अम्बा है। दोनो अभी यहीं हैं। मेरा दौरा ८ तारीखसे शुरू होगा। बा, मीरा और चन्द्रशंकर मेरे ही साथ हैं। बा अब मन्दिर [जेल] जानेकी तैयारी कर रही है। नानीबहन, गंगाबहन और पन्नालाल अहमदाबाद हैं। तुझसे जब लिखा जा सके तब पत्र लिखना। थोड़ा बहुत पठन-वाचन होता है क्या?

श्रीमती वसुमती पण्डित
प्रिजनर, डिस्ट्रिक्ट प्रिजन, थाना
जी० आई० पी० रेलवे

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३३७) से। सी० डब्ल्यू० ५८३ से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

१. यह उपलब्ध नहीं है।

१६३. पत्र : जानकीदेवी बजाजको[1]

२५ अक्टूबर, १९३३

प्रिय भगिनी,

आप बहनोंसे परदा तुड़वानेके लिये कलकत्ता जा रही है इसलिये धन्यवाद। परदा वहम ही नही है उसमे मुझे पापकी बू आती है। परदा किससे रखे? क्या पुरुषमात्र विषयासक्त रहते हैं? क्या स्त्री अपनी पवित्रता बगैर परदा नही रख सकती है? पवित्रता मानसिक बात है, सभी पुरुषमें सहज होनी चाहिये। यदि इस बुध्धि प्रधान युगमें स्त्री धर्मकी रक्षा करना चाहती है तो उसे दरिद्रनारायणकी सेवा करनी होगी, शिक्षण लेना होगा। दरिद्रनारायणकी सेवा करनेका अर्थ खादी प्रचार, कातना इत्यादि। हरिजन सेवाका अर्थ अस्पृश्यता रूप कलक धोना; ये दो बड़े भगवानके कार्य है। और विद्या पानेका कार्य परदा रखनेके साथ कभी नही चल सकता है।

परदा रखकर सीता रामजीके साथ जगलोमे भटकी होगी? सीतासे बड़ी पवित्र स्त्री जगतमे कभी हुई है? बहनोसे कहो परदा तोडो, धर्म रखो।

आपका,
मोहनदास गांधी

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृष्ठ ११८

१. जानकीदेवी बजाजको कलकत्तामें अखिल भारतीय मारवाड़ी महिला सम्मेलनकी अध्यक्षता करनी थी। यह पत्र प्रतिनिधियोंके नाम एक सन्देशके तौरपर था, जो २९-१०-१९३३ के विश्वामित्र में प्रकाशित हुआ था।

१६४. पत्र : एफ० मेरी बारको

२६ अक्टूबर, १९३३

चि० मेरी,

यह सब एक भूलका दुखद परिणाम है। जो व्यक्ति पहला पत्र लेकर आया था उसने कहा कि जवाबकी जरूरत नहीं है। अब मदनमोहनने उसका स्मरण दिलाते हुए पत्र लिखा है।[1] तुम दोनों ४ बजे अवश्य आओ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०१४) से। सी० डब्ल्यू० ३३४० से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

१६५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
२६ अक्टूबर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

इसके साथ मैं डॉ० आलमका इस्तीफा संलग्न कर रहा हूँ। मैं इसे स्वीकार करनेकी सलाह देता हूँ। यह इस्तीफा देनेका कारण यह है कि उनके विरुद्ध लाहौरसे एक बहुत ही कटु शिकायती पत्र प्राप्त हुआ है। उसकी एक प्रति मैंने उनको भेज दी थी। उन्होंने पत्रमें लगाये गये कुछ आरोपोंको बिलकुल अस्वीकार कर दिया। लेकिन प्रैक्टिस करनेके बारेमें जो आरोप था उसे उन्होंने मान लिया।

जमनालालजी अपने इस्तीफेके बारेमें चिन्तित हैं। मेरी अपनी राय है कि उनका इस्तीफा भी स्वीकार कर लेना चाहिए। वह जेल जानेको उत्सुक हैं, लेकिन उन्हें इस बातकी चिन्ता है कि वह तुरन्त नहीं जा पा रहे हैं।

मेरा खयाल है कृष्णा अब बम्बईमें है।

माँके बारेमें आजकल मैं अखबारोंमें कुछ नहीं देखता। क्या वह पहलेसे बेहतर हैं?

१. मेरी बारने अपनी पुस्तक बापू में इस पत्रको निम्नलिखित टिप्पणीके साथ प्रकाशित किया है: "मैंने गांधीजीको एक पत्र लिखकर पूछा कि क्या मैं अपने एक अंग्रेज मित्रको जो वर्धासे होकर गुजर रहे हैं, मिलानेके लिए ला सकती हूँ। यह पहली बार हुआ कि गांधीजीका जवाब मुझे नहीं मिला। अतः मैंने आश्रमको जानेवाले एक व्यक्तिके हाथों एक स्मरण-पत्र भेजा।"

विट्ठलभाईकी मृत्यु तो मैं निश्चित मान ही रहा था, लेकिन वास्तविकतासे मैं विचलित हो उठा हूँ। उनका विरोध भी मैं मूल्यवान मानता था। उससे मेरे विचार और साफ हो जाते थे और जितनी स्पष्टताके साथ मैं देशके सामने अपनी स्थितिको अन्यथा प्रस्तुत करता उससे ज्यादा स्पष्टताके साथ प्रस्तुत कर पाता था।

सप्रेम,

बापू

संलग्न।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१६६. पत्र : अब्बास तैयबजीको

२६ अक्टूबर, १९३३

प्रिय बूढ़ी दाढ़ी,

कमलाके बारेमें आपका पत्र आपके योग्य ही है। चूंकि मुझे उसको सलाह देनी है, इसलिए आपकी रायका कारण जानना मेरे लिए जरूरी था। आपने मुझे बिलकुल स्पष्ट राय दी है। रेहाना की राय उसके विपरीत है। आपकी राय मुख्यत: सहज-बुद्धि पर आधारित है, और रेहानाकी राय भी सहज-बुद्धि पर आधारित है। मेरी सहज-बुद्धि भी उसके विरुद्ध ही रही है। लेकिन उसके जोरदार खण्डनके आगे मैंने अपनी सहज-बुद्धिका कहना माननेसे इनकार कर दिया है। बेशक, मैंने अपनी शंकाओंसे उसको अवगत करा दिया था।

आशा है अमरेलीमें आपको सफलता मिली होगी। क्या उससे काफी कुछ फायदा हुआ? क्या आपने बहुत सारी खादी बेची? क्या आप कुछ ठोस हरिजन-कार्य कर सके?

आप सबको प्यार सहित,

आपका,
भुर्रर्र

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५८८) से।

१६७. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२६ अक्टूबर, १९३३

प्रिय घनश्यामदास,

तुम्हारे हिन्दीके पत्रका उत्तर अंग्रेजीमें बोलकर लिखा रहा हूँ।

हरिजन सेवा संघके संविधानके सम्बन्धमे और अधिक लिखना जरूरी नही था। विचारणीय प्रश्न यही है कि हमे एक अर्द्ध-प्रजातन्त्रीय संस्थाको तुरन्त ही जन्म देना चाहिए या नही। मुझे पता नही कि नियुक्तिके अन्तर्गत यह अधिकार दिया गया है या नही, पर मैंने जो बात सुझाई है[1] वह व्यवहार्य है और उसपर तुरन्त ही अमल किया जा सकता है। मेरा सुझाव यही है कि जिन न्यासियोके नाम मैंने सुझाये है, उनके नाम आश्रमका पंजीयन करा दिया जाये। तुम्हे अपने विचारके सम्बन्धमे ठक्कर बापा और हरिजीके साथ बात करनी चाहिए।

रही चरखा संघकी बात, सो इस सम्बन्धमें मुझे पूरी स्वतन्त्रता थी, इसलिए मैंने जो योजना बनाई उसके फलस्वरूप एक मजबूत और आसानीसे चलनेवाली संस्था बन गई, जिसे प्रजातन्त्रीय रूप देनेकी सम्भावनाएँ असीम थी। आश्रमको [हरिजन सेवक-संघके निमित्त] देनेका निश्चय होनेके तुरन्त बाद ही मैं तुम्हे लिखना चाहता था कि दिल्लीवाली महत्त्वाकांक्षापूर्ण योजनाको त्याग दिया जाये। लेकिन छात्रावास योजना अवश्य ठोस योजना है। इसमें सन्देह नही है कि हमे ऐसे अनेक छात्रावासोकी जरूरत पड़ेगी और यदि उनकी व्यवस्था ठीक-ठीक हो सकी तो उनके द्वारा बहुत कुछ ठोस काम होनेकी सम्भावना है। जब मैं दिल्लीमे होऊँ तो मुझसे जो काम चाहो, ले सकते हो।

बिहारीलाल यदि छात्रावास आदिकी योजनाओंके सिलसिलेमे काम करनेको तैयार हो तो उससे काम लिया जा सकता है। पर मैं वेतनभोगी उपदेशक रखनेके बिलकुल खिलाफ हूँ, चाहे वह हरिजन हो, चाहे कोई और। इस मामलेमे जितनी दृढ़ता बरती जाये, थोड़ी है।

दिल्लीमे रहनेका प्रबन्ध आपकी ही इच्छासे होगा। मैं स्वयं तो लक्ष्मीनारायणके[2] यहाँ ठहरना चाहूँगा। जबतक परिवर्तन करनेका कोई ठोस कारण न मिले तबतक मैं पुरानी जगहोपर ही ठहरनेमे विश्वास करता हूँ। मेरे स्वास्थ्यके लिहाजसे परमेश्वरीका घर आदर्श होगा। लेकिन ऐसा नही होना चाहिए कि कोई मुझसे मिल ही न सके। वैसा करनेसे तो इस यात्राका जो उद्देश्य है, वही पूरा नही होगा। मेरा वहाँ ठहरना इस बातपर निर्भर करना चाहिए कि मुझसे क्या काम लिया जाना

१. देखिए "पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको", ३०-९-१९३३।

२. लक्ष्मीनारायण गाडोदिया।

है। यदि तुम हमेशा मेरी सुविधाका विचार करोगे तो गलत निष्कर्षोंपर पहुँचोगे। तुम इत्मीनान रखो कि मुझे चाहे जहाँ ठहराओ, मैं अपनी सुविधाका प्रबन्ध कर लूँगा। कलकत्तेमे मेरे ठहरनेके बारेमें तुम्हे डॉ० विधान, सतीश बाबू आदिसे परामर्श करना चाहिए।

श्रीमती लाहिड़ीके बारेमे तुम्हारा जो कहना है उसे मै समझता हूँ। चूँकि मेरी कोई राय इस विषयमे नही थी इसलिए कोई राय मैंने दी भी नही। चूँकि उन्होने तुम्हारे नामका उल्लेख किया था और चूँकि तुम कलकत्तेमे लगभग सभी लोगोको जानते हो इसलिए मैंने सोचा कि मैं उनका पत्र तुम्हे भेजकर तुम्हारी राय ले लूँ। मैंने डॉ० विधानको भी, जिन्होंने कि प्रमाण-पत्र दिया है, पत्र लिखा है। तुम इस मामलेको कमसे-कम फिलहाल अपने दिमागसे निकाल सकते हो। यदि मेरी कोई राय बनी जिसे कार्यान्वित करनेके लिए मुझे तुम्हारी मददकी जरूरत हुई तो मैं तुम्हे तुरन्त सूचित कर दूँगा।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू[1]

[पुनश्च :]

गोपी अच्छी तरह है। खुश तो है ही। तुमारी प्रकृति कैसी है।[2]

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९४१) से, सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१६८. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२६ अक्टूबर, १९३३

प्रिय ठक्कर बापा,

परीक्षितलालको[3] भेजे गये तुम्हारे दो पत्रोकी प्रतियाँ मुझे मिली।

तुमने जो-कुछ सुना है वह बिलकुल सच है। घास एक गड़रियेको दे दी गई है। मेरे खयालमें कुछ रुपये बयानेके प्राप्त हुए है जिसे सघके खातेमे डलवाना होगा। रामजीसे[4] तथा दूसरे लोगोंसे जो वहाँ पहलेसे ही रहे है, रह नाममात्रका किराया वसूलना है। मेरा विश्वास है कि आश्रमका एक पूरा नक्शा है। मैं चिमनलालसे उसके बारेमें तुम्हे लिखनेके लिए कह रहा हूँ। बुधाभाई क्या करेंगे, इस सम्बन्धमे उनका पत्र इसके साथ है। मेरे खयालमे जूठाभाई पहलेसे ही आश्रममे रह रहे है और इसी तरह भगवानजी भी। यह देखना जूठाभाईका काम होना चाहिए कि मैदान

१. हस्ताक्षर देवनागरी लिपिमें है।
२. पुनश्चके बादका अंश हिन्दीमें है।
३. परीक्षितलाल एल० मजमूदार।
४. एक बुनकर।

और घरोंकी उचित देखरेख है कि नहीं। वृक्ष आश्रमकी सम्पदाके अत्यन्त बहुमूल्य अंग हैं।

तुमने परीक्षितलालको नियमोंका मसौदा भेजनेके लिए कहा है। स्पष्ट है कि जब तुमने पत्र भेजा उस समय तक तुम्हें मेरा वह पत्र नहीं मिला था जिसके साथ मैंने नियमोंकी प्रति भेजी थी।

इस पत्रके साथ मैं चन्देसे सम्बन्धित डॉ० विधानका पत्र भेज रहा हूँ। तुम पत्रको पढ़नेके बाद नष्ट कर देना।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

यह तो अच्छा हुआ कि तुम नी० की रक्षाके लिए आ गये हो।[1]

संलग्न : २ पत्र

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११३१) से।

१६९. मद्रासमें 'हरिजन'

पाठकोंको यह देखकर आश्चर्य हुआ होगा कि 'हरिजन' का प्रकाशन अब पूनासे बदल कर मद्राससे किया जायेगा। श्रीयुत आर० वी० शास्त्री और श्रीमती शास्त्रीने स्वयंको हरिजन सेवाके लिए अर्पित कर दिया है। श्रीयुत शास्त्रीको लगता था कि वह पूनामें इस कार्यपर पूरा समय नहीं लगा पा रहे थे और मद्रासमें वह अपनी ईश्वरप्रदत्त सारी प्रतिभाका उपयोग इस काममें कर सकेंगे। उनकी यह बात मुझे जँच गई। उसीका परिणाम है कि 'हरिजन' का तबादला मद्रास कर दिया गया। अगले ३ अगस्तके बाद क्या होगा या क्या हो सकता है, उसके बारेमें पाठकोंको या मुझे चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। 'मेरे लिए एक कदम ही काफी है', यह बात संगठनोंके मामलेमें भी उतनी ही सही है जितनी व्यक्तियोंके बारेमें। मद्राससे प्रकाशन करनेका एक अतिरिक्त लाभ यह है कि अंग्रेजीकी छपाईके खयालसे यह भारतका सर्वाधिक और सबसे सस्ता नगर है। और इससे बेहतर क्या हो सकता है कि 'हरिजन' एक ऐसे प्रान्तसे प्रकाशित हो जहाँ अस्पृश्यता अपनी सारी कुरूपताके साथ फैली हुई है? मैं आशा करता हूँ कि इस तबादलेका दक्षिण भारतके सुधारक, सनातनी और हरिजन लोग न केवल स्वागत करेंगे बल्कि कद्र भी करेंगे। 'हरिजन'-का उद्देश्य इन तीनोंकी ही सेवा करना है। इस तबादलेकी कद्र हुई, इसकी कसौटी यही होगी कि इसकी बिक्री बढ़ जाये।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-१०-१९३३

१. पुनश्च के बादका अंश गुजरातीमें है।

१७०. एक दुखद घटना

मेरी आयु जितनी ज्यादा होती जाती है उतना ही ज्यादा मैं इस बातको अनुभव करता हूँ कि मैं आनन्दका जो सुख भोगता हूँ — और जिससे मेरे मित्रोको इतनी ईर्ष्या होती है — वह उन दुखद प्रसगोके बावजूद कायम है जो मेरे हिस्से पड़े है, और ऐसे प्रसंग कम नही आये हैं। सबसे ताजा दुखद प्रसग नी०का लापता होना है। मुझे कोई सन्देह नही है कि उसका पश्चात्ताप सच्चा था। उसने अपने अतीतके खिलाफ बहुत बहादुरीसे सघर्ष किया है, लेकिन वर्धा आनेपर मुझे यह जरूर लगा कि यह सघर्ष उसके लिए बहुत भारी पड़ रहा है। वह धीरे-धीरे विक्षिप्त होती जा रही थी और उसका आत्मनियन्त्रण छूटता जा रहा था। इससे पहले, वर्धासे लिखे अपने एक पत्रमे उसने सकेत किया था कि वह शायद पागल हो जायेगी। उसके प्रति जितना स्नेह दिखाया जा सकता था, दिखाया गया था। इस स्नेहको वह समझती थी। इसका वह अत्यन्त अनुकूल उत्तर देती थी। लेकिन साथ ही वह अत्यन्त आवेगशील भी थी। वह बिना कुछ पैसा या सामान लिये ही चली गई है। दिल्लीके अखबारोंमें उसके बारेमें छपी रिपोर्टें मनगढ़न्त है जिनका उद्देश्य सनसनी पैदा करना है, और इनमें उसके साथ गम्भीर अन्याय किया गया है। उसकी जो वर्तमान मानसिक दशा है उसमें उसको उसके कार्योंके लिए जिम्मेदार नही ठहराया जा सकता। कोई धर्मार्थ स्थापित संस्था या पागलखाना ही उसके लिए ठीक जगह है। जो लोग झूठी दयावश या अपना पिंड छुड़ानेके लिए उसको चन्द रुपये देंगे वे उसके साथ कोई दया नही बरतेंगे। वह गैरजिम्मेदार है, इसलिए उसे जो-कुछ मिला है उसे वह व्यर्थं फेंकती रही है। उसके सम्पर्कमें जो लोग आये यदि वे उसका पता मुझको सूचित करेंगे और यह लेख उसको दिखा देंगे, तो मैं उनका आभार मानूंगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-१०-१९३३

१७१. खादी और हरिजन

बहुत ही थोड़े लोग जानते हैं कि खादीका हरिजनोंके लिए क्या महत्त्व है। हम कह सकते हैं कि सादी बुनाईका धन्धा अकेले हरिजन ही करते हैं, और हालांकि मिलकी कताई और बुनाईने बहुत-से हरिजनोंकी रोजीका एक जरिया छीन लिया है, मगर अब भी हजारों हरिजन हाथ-बुनाई पर ही गुजर करते हैं। किन्तु एक मित्र यह दलील देते हैं कि "नष्टप्राय धन्धेको जीवित रखनेसे क्या लाभ? इसके बजाय उन्हें किसी ऐसे धन्धेमें क्यों न लगा दिया जाये, जो उन्नति कर रहा हो? उनके उद्धारके लिए जब आप अनेक प्रकारके साधनोंको ग्रहण कर रहे हैं, तो अवश्य ही आप उन्हें जीर्ण-शीर्ण व्यवसायोंमें ही लगाये रखना नहीं चाहेंगे।" वास्तवमें, हरिजनों अथवा किसीको भी कताई-बुनाई या किसी और धन्धेमें लगानेकी मेरी तनिक भी इच्छा नहीं है, बशर्ते कि किसी अन्य उद्योग-धन्धेमें उन्हें अधिक लाभ हो सकता है। किन्तु मैं तो आपत्ति करनेवाले उक्त मित्रकी तरह हाथकी कताई और बुनाईके धन्धे-का भविष्य निश्चय ही अन्धकारपूर्ण नहीं देखता। मेरा अपना विश्वास तो यह है कि हाथकी ओटाई, धुनाई, कताई और बुनाईका भविष्य, कमसे-कम भारतवर्षमें, अत्यन्त उज्ज्वल और आशामय है। करोड़ों मनुष्योंको अगर कुछ सुखसे रहना है, तो मिलोंको तो अपना माल भारतके बाहर खपाना चाहिए। अपनी छोटी आय बढ़ानेके लिए हाथकी कताई और बुनाई आदिमें लग जानेके लिए गाँववालोंको हमें समझाना चाहिए। मान लिया जाये कि करोड़ों गाँववालोंको अधिक आयवाला अच्छा धन्धा मिल गया, तो भी स्वदेशी मिलोंको समस्त राष्ट्रकी आवश्यकताएँ पूरी करनेमें बहुत देर लग जायेगी — शायद कई दशाब्दियाँ। इसके अतिरिक्त बहुत बड़ी पूंजीकी भी तो जरूरत पड़ेगी और यन्त्रों तथा तकनीकी ज्ञानके लिए हमें विदेशोंपर निर्भर रहना पड़ेगा। सिद्धान्तके तौरपर तो विलायती मशीनों और विशेषज्ञोंपर निर्भर रहना कोई ऐसी बुरी बात नहीं है, पर व्यावहारिक दृष्टिसे यह बात मिल-उद्योगकी उन्नतिमें अवश्य ही एक भयानक रुकावट होगी। जबतक इस उद्योगको बाहरी सहायतापर निर्भर रहना पड़ेगा, तबतक उसे स्वदेशी उद्योगका नाम देना गलत होगा।

इसके विपरीत गाँवके उद्योग-धन्धेके रूपमें खादीके लिए तो बहुत ही कम पूंजी चाहिए। गाँवमें ही सब औजार बनाये जा सकते हैं, और ऐसे कारीगरोंकी भी वहाँ कमी नहीं है। सबसे जरूरी बात तो लोगोंकी मनोवृत्ति बदलनेकी है। खादीके विरुद्ध यद्यपि अत्यन्त चातुर्यपूर्ण युक्तियाँ दी जाती हैं, और मिलोंमें मालके उत्पादनके प्रभाव-शाली आँकड़े भी पेश किये जाते हैं, फिर भी मैं अपने इस मतमें तो अडिग ही हूँ कि भारतमें खादीका भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल है। जो चीज हम स्वेच्छासे या कायल होकर नहीं करेंगे वही चीज हमें परिस्थितियोंसे विवश होकर करनी पड़ेगी। भारतको

जीवित रहना है, अर्थात् करोडो भारतीयोको जीवित रहना है। इस विषयमें जरा भी मतभेद नही है कि आजकल वे मृतक-समान है, वे तो सिर्फ नाममात्रको अपनी हस्ती कायम रखे हुए है। ससारमें और कोई भी देश ऐसा नही है, जहाँके कई करोड लोग इस तरह आधे बेकार हो और जहाँकी सभ्यता मुख्यतः ग्राम्य-सभ्यता होते हुए भी, प्रति मनुष्यके हिस्सेमे मुश्किलसे दो एकड़ जमीन पडती हो। अगर भारत भाप या बिजलीसे अथवा मानव-शक्तिके अतिरिक्त किसी अन्य शक्तिसे कलोको चलाकर अपने कपडेकी सारी आवश्यकता पूरी करने लगा, तो जनताकी बेकारी और भी अधिक भयकर हो जायेगी। औद्योगीकृत भारतका अर्थ होगा करोडो लोगोका सर्वनाश, जिनमे स्वभावत. वे हरिजन भी शामिल होगे, जिन बेचारोको, यह बडी ही शर्मकी बात है, हमारे समाजमे निम्नतम स्थान मिला हुआ है।

कहते है कि बडे-बडे यन्त्रोसे उद्योग चलाकर अमेरिकाका प्रत्येक मनुष्य उतना काम कर लेता है, जितना काम कि वहाँ ३६ गुलाम करते थे। अगर अमेरिकाको अपना आदर्श बना ले और प्रत्येक भारतवासीको ३६ के बजाय ३० ही गुलाम रखने दे, तो भारतके ३१ करोड मनुष्योंमे से ३० करोडको तो आत्महत्या ही करनी पडे। मै जानता हूँ कि ऐसा हो तो कुछ उत्साही देशभक्त इसकी परवाह नही करेगे — इतना ही नही, बल्कि इसका वे स्वागत करेगे। वे कहेगे कि भारतमे ३० करोड़ अपग और निहत्थे प्राणियोकी अपेक्षा सुखी, सन्तुष्ट, सम्पन्न और नखसे शिख तक शस्त्र-सज्जित एक करोड मनुष्य कही अधिक अच्छे होंगे। इस फलसफेका मेरे पास कोई जवाब नही है क्योकि मेरे दिमागमे तो हरिजनोकी मनोवृत्ति भरी हुई है और इसलिए मै तो अपने करोडो ग्रामवासियोकी दृष्टिसे ही विचार कर सकता हूँ और मै तभी सुखी हो सकता हूँ, जब यहाँका गरीबसे-गरीब आदमी सुखी हो, और वे जीवित रह सके तभी मै जीना चाहता हूँ। मेरा यह बहुत ही सादा मन तो उस छोटे-से चरखेके उस तकुवेके परे जा ही नही सकता, जिसे मै सर्वत्र अपने साथ ले जा सकता हूँ और बडी आसानीसे जिसे मै बना सकता हूँ। इस सम्बन्धमे एक मित्रने अखबारोंमे प्रकाशित नीचेका लेखांश[1] मुझे भेजा है·

> कुछ उद्योग-धन्धोंमें जो बेकारी फैल गई है उसे दूर करनेके लिए जर्मनीमें नाजियोंने यह हुक्म जारी किया है कि जिन यन्त्रोंसे मनुष्योंकी रोजीमें बाधा आ रही हो उनको उपयोग में लाना बन्द कर दिया जाये। इस निषेधादेशपर चर्चा करते हुए इंग्लैंडके 'मैनचेस्टर गार्जियन' पत्रने यह टिप्पणी लिखी है: 'इस विषयकी चर्चा तो काफी हुई है कि बेकारीके प्रश्नको इतना जटिल बनानेमें यन्त्रोंका अधिक हाथ है, पर इस विचारको अमलमें लाने तथा यन्त्रोंका उपयोग बन्द करानेका तो नाजियोंने ही काम किया है। . . . गांधीजी सूत कातनेके साँचेके बजाय चरखे और करघा यन्त्रके स्थानपर हाथके करघे चलानेका

[1] यहाँ इसके केवल कुछ अंश ही दिये गये है।

जो प्रयत्न कर रहे हैं, उसीसे मिलता-जुलता प्रयत्न जर्मनीके सिगार और कांचके उद्योगोंमें चल रहा है'।

इस टिप्पणीके अन्तमे 'गार्जियन' लिखता है कि 'जब जर्मनीमें आज वही मध्य-युगकी सदाचार-भावना पुनः बरती जा रही है, तो कोई कारण नही कि वहाँका अर्थशास्त्र भी मध्ययुगीन क्यों न बन जाये।' इस आलोचनाका उत्तर देते हुए एक पत्र-लेखकने 'गार्जियन' में लिखा है:[1]

> हिटलर, गांधी और अन्य लोग भिन्न-भिन्न रीतिसे मालका उत्पादन उस हदतक घटानेकी कोशिश कर रहे हैं कि जितना माल पैदा हो वह सब काममें आ जाये, या जितना माल खप सके उतना ही पैदा किया जाये। भले ही उसे कोई मध्ययुगकी बात कहे, लेकिन हाथसे चलाये जानेवाले उद्योग-धन्धे न तो पिछड़े हुए कहे जा सकते हैं और न जंगली ही। प्रत्येक प्रगतिशील प्रारम्भिक और माध्यमिक पाठशालाओंमें इनकी शिक्षा दी जाती है। . . . जहांतक यन्त्रोंके द्वारा विशेष वर्गों और सामान्य वर्गोंकी सम्पन्नता और खुश-हाली बढ़ती हो, वहीं तक ये यन्त्र कल्याणकारक हैं। पर जब इनके फलस्वरूप बेकारी फैल रही हो और करोड़ों लोगोंके भूखों मरनेकी नौबत आ जाये— जैसा कि आज पश्चिमके यान्त्रिक उद्योगवाले देशोंमें हो रहा है—तो फिर ये यन्त्र अभिशापरूप बन जाते हैं। यन्त्र मनुष्यके लिए हैं, मनुष्य यन्त्रके लिए नहीं। इसलिए ऐसा करना चाहिए कि यन्त्रोंका उपयोग मनुष्यके कल्याणार्थ हो, उन्हें मनुष्यका स्वामी नहीं बनने देना चाहिए।

जर्मनीमें तलवारके जोरसे ग्राम्योद्योगोंको पुनर्जीवित किया जा रहा है, यह बात यहाँ प्रासंगिक नहीं है। यहाँ तो जो प्रासंगिक है वह यह बात है कि एक ऐसा देश जिसने उच्चतम तकनीकी कौशलका परिचय दिया है और जो यान्त्रिक उद्योगोंमें सबसे अधिक समुन्नत देशोंमें से है, भयंकर बेकारीका सवाल सुलझानेके लिए फिरसे ग्रामीण उद्योग-धन्धोंको पुनरुज्जीवित करनेका प्रयास कर रहा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-१०-१९३३

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही उद्धृत किये गये हैं।

१७२. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको[1]

वर्धा

सवेरे ३ बजे, २७ अक्टूबर, १९३३

तोतारामजी कहते हैं कि तुम्हारा उनसे परिचय है। तोतारामजीसे हरिजन लोग भी भली-भाँति परिचित हैं। लेकिन हरिजन आश्रम अथवा मन्दिर, जो भी कहो, चलानेका काम तुम्हारा है। इसलिए तुम्हारे मनमें जो योजना हो उसपर अमल करना। मुझसे तो कही कोई अड़चन आनेपर ही सलाह लेना। मैंने तो अपनी आदतके अनुसार सुझाव दिया है और देता रहूँगा। लेकिन इतना जानो कि इनमें से एक पर भी अमल करनेके लिए तुम बँधे हुए नही हो।

तुम नी० की खोजमें निकल पड़े हो, इसका मेरे मनपर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ा है। तुम्हारी परोपकार वृत्तिके बारेमे मुझे बहुत कुछ मालूम था, परन्तु नी० के प्रति तुममे जो असीम दयाभाव है उसे देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया हूँ। नी० की मर्यादासे बाहर जाकर मैंने जो सहायता की हैं उसके लिए अन्य मित्रोने मुझे बहुत बुरा-भला कहा है। लेकिन मेरी इस प्रत्यक्ष दीखती उदासीनतापर तुम्हे तो गुस्सा आ रहा है। तुम्हे मेरा हजारो वार नमस्कार। मेरा प्रेम जिससे हार गया है, भगवान करे तुम्हारे प्रेमसे उसका हृदय पिघल जाये। तुमने चन्द्रशंकरको उत्कलके बारेमे जो पत्र लिखा है उसे मैंने समझ लिया है।

बापू

[पुनश्च :]

हरिजन आश्रमके लिए तुम घनश्यामदाससे मिलकर तुरन्त नामकरण सस्कार कर डालो, यह अभीष्ट है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११३२) से।

१. गांधीजीने इसे चन्द्रशंकर शुक्ल द्वारा लिखे गये पत्रमें ही जोड़ दिया था।

१७३. पत्र : मोतीलाल रायको

२७ अक्टूबर, १९३३

प्रिय मोतीबाबू,

मैं हैरान था कि मुझे अपने पोस्टकार्डके उत्तरमें तुम्हारे बारेमें किसीसे कोई समाचार क्यों नहीं मिला है। लेकिन देरीका परिणाम जरूरतसे ज्यादा अच्छा निकला, और तुम्हारा लम्बा और स्नेहपूर्ण पत्र मिला।

हमें भगवानका शुक्रगुजार होना चाहिए कि अभी हालके लिए एक आँख बची है। लेकिन, जैसा कि तुम कहते हो, यदि ईश्वरकी इच्छा हुई कि इसकी आँख भी चली जाये तो उसका हुक्म सिर-माथे।

स्वामी ब्रह्मानन्दकी मृत्युका समाचार सुनकर दुःख हुआ। मृत्यु एक ऐसा मित्र है जो हमें कभी धोखा नहीं देती। वह कभी-कभी ऐसे समय में हमारी सहायताके लिए आती है जब उसकी कतई उम्मीद नहीं होती। और यह तो हममें विश्वासकी कमी है जो हम उसके आनेका दुःख मनाते हैं।

मुझे खुशी है कि तुम नित्य बढ़ते हुए विश्वासके साथ अपने खादी-कार्यक्रमको क्रियान्वित कर रहे हो।

जब मैं बंगालकी यात्रा करूँगा तब मेरी स्थिति हिरासतमें लिये गये कैदीके समान होगी, मेरे रखवाले मुझे जहाँ ले जायेंगे वहाँ मैं जाऊँगा, और यदि वे मुझे तुम्हारे आश्रममें ले जायेंगे तब मुझे निश्चय ही बहुत खुशी होगी। इसलिए तुम्हें इस सम्बन्धमें मुख्य जेलर डॉ० विधान रायसे बात करनी होगी, अथवा आप सहायक जेलरों, सतकौड़ी बाबू और सतीशबाबूको लिख सकते हैं।

जहाँ तक जवाहरलालके दृष्टिकोणका सवाल है, क्या तुमने हममें जो पत्र-व्यवहार[1] हुआ है उसे नहीं पढ़ा है? मैंने अपने पत्रोंमें निश्चयात्मक रूपसे दर्शाया है कि मैं किन बातोंमें उनसे सहमत हूँ और किनमें नहीं हूँ। लेकिन यदि तुम किन्हीं खास मुद्दोंपर, मैंने जो राय व्यक्त की है उससे अधिक स्पष्ट राय जानना चाहो तो निस्संकोच होकर मुझे लिखना।

तुम्हें प्यार। मीराबहन तुम्हें प्यार भेजती है।

तुम्हारा,
बापू

श्रीयुत् मोतीलाल राय
चन्द्रनगर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०४६) से।

१. देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ४४६ और परिशिष्ट १४।

१७४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२७ अक्टूबर, १९३३

भाईश्री वल्लभभाई,

मणि, मृदु, मृदुके चाचा और वावोको आये हुए आज तीन दिन हो गये हैं। वावो इस वार मेरे साथ हिल-मिल गया है। उसका स्वास्थ्य भी अच्छा है। वह मेरे साथ जापानी साधुका ढोल वजाता है। जापानी साधु तो आभूषण है। वह अत्यन्त निर्मल मन, विनम्र, हँसमुख और विनयी है। हिन्दी सीख रहा है। चरखा और तकली चलाता है। सब नियमोका सूक्ष्म रूपसे पालन करता है। दोनो बहनोको मैंने काफी घटे दिये हैं। आज सवेरे लगभग दो घंटे दिये हैं। अभी ११.३० वजे फिर समय देनेवाला हूँ। दोनो मानो घोड़ेपर सवार होकर आई हैं और विमानपर चढकर जानेवाली है, इसीलिए तो उन्होने मुझे आज मेलसे वापस जानेका नोटिस दिया है। मणिके पाँवको विजलीके उपचारकी जरूरत जान पड़ती है। मृदुको किन्ही बहनोकी देखभाल करनी है। दोनोका अच्छा मेल बन पड़ा है।

* * *[1]

पट्टाभि[2] आ गये हैं। मैं तो उनसे कदाचित् ही दस मिनट तक मिल पाया हूँ। वे विना कोई सूचना दिये आये थे। जमनालालजी कदाचित् ही किसीको ज्यादा समय लेने देते हैं। (अहमदावाद)के मिल-मजदूर प्रतिनिधियोको भी कुल मिलाकर (तीन हिस्सेमे) डेढ घटेका समय लेने दिया। उनका पहरा कडा है।

विट्ठलभाईकी मृत्युका दु:ख तो अवश्य हुआ। वे तो मरकर मुक्त हो गये। हम तो पहलेसे ही यह मानते थे कि उनकी मृत्यु विदेशमे ही होगी। उनकी देखभाल तो अच्छी हुई जान पडती थी। सुभाषने तो हद कर दी। जहाँ-तहाँसे उसके द्वारा विट्ठलभाईकी अनन्य सेवा-शुश्रूषाके समाचार मिलते रहते हैं। मैंने उसे पत्र लिखा है। तुम भी लिखना। मेरा पत्र मृत्युके समाचारसे पहले चला गया था।

स्वामी अभी थोड़े समय यहाँ रहेगे। नी० को खोजनेके लिए ठक्करबापा वृन्दावन गये है। उनकी दयाकी कोई सीमा नही। इस महिलाका दिमाग खराब हो गया है। यहाँ तो उसने कोई बुरा व्यवहार नही किया। वह चित्तभ्रान्त हो गई थी। अभी भी वह जगलोमे भटकती जान पडती है। वह आयेगी तो मै उसे अपने साथ रखूँगा। अमला तो अव खूब काम करती है। डंकन गाँवोंमें समाधिस्थ हैं। मेरी बार अभी यही है। वह बीमार थी, अब ठीक हो गई है। विनोबा गाँवोमें खूब सेवा कर रहे हैं।

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूट गया है।

२. पट्टाभि सीतारमय्या।

आनन्दीके साथ मणि गई है। बावलो भी गया है।

देवदासके पत्र आते रहते हैं। डॉ० दत्ता उससे मिल आये हैं। खुर्शेद[1] कुछ बीमार हो गई लगती है। मैंने डॉ० दत्ताको उससे भी मिलनेके लिए लिखा है। मेरे दौरेके बारेमें चिन्ता न करना। मैं संभल कर रहूँगा। राजाकी इच्छा है कि मैं पहले दक्षिणका दौरा करूँ। आनन्दी लक्ष्मीदाससे मिल आई है। वह [अभी] विवाह न करनेकी बात पर दृढ़ है। चन्दुलालको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ३६-८

१७५. तार : अद्वैतकुमार गोस्वामीको

वर्धा
२८ अक्टूबर, १९३३

अद्वैतकुमार
राधारमण मन्दिर
वृन्दावन

यदि नी० मन्दिरोंमें जाना चाहे तो उसे अवश्य ले जाये।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८०६) से।

१७६. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२८ अक्टूबर, १९३३

भाई मुन्नालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरे साथ रहना था तो इतने दिनों तक कहाँ सोये रहे? तुम्हारी आकुलता ठीक नहीं। तुम मेरे साथ दौरेपर नहीं जा सकते। यदि तुम एक स्थानपर बैठकर काम करना चाहते हो तो तुम्हें विनोबाके अथवा जमनालालजीके नीचे काम करना चाहिए। लेकिन मुझे आशंका है कि तुम कदाचित् ही कहीं टिक सकोगे। यदि तुम मेरे भयको निर्मूल सिद्ध कर सको तो करना। तुम्हें मैं अच्छी तरहसे पहचानता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६४६) से।

१. दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

१७७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२८ अक्टूबर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

आज सुभाषका तार आया है जिसमे लिखा है कि विट्ठलभाईका शव ९ तारीख को वम्वई पहुँचेगा और तुम्हे दाह-सस्कार करना है। मैंने प्रेसकी मार्फत जवाब दिया है कि तुम रिहा होनेकी माँग करोगे, ऐसा मै नही समझता। इसलिए दाह-सस्कार तुम्हारे बिना ही होना चाहिए। डाह्याभाईको यह सस्कार करना चाहिए। तुम्हारी राय जाननेका समय न था और मैंने उचित भी नही समझा। कुछ कहना हो तो कहना। मै डाह्याभाईको लिख रहा हूँ।

काकाके उपवासके वारेमे मैंने तुम्हे कल पत्र लिखा था, वह मिला होगा। आज तीसरा दिन है। वजन अभी वैसा-का-वैसा वना है। बिस्तरपर पड़े-पडे काम करते है। मजेमे है। . . .[1] अभी यही है। लेकिन इन तिलोमे तेल नही दिखाई देता।

प्रभुदास और अम्बाका ठीक चल रहा है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ३८

१७८. पत्र : जयश्री रायजीको

२८ अक्टूबर, १९३३

प्रिय वहन,

तुम पिताके[2] नामको सुशोभित कर रही हो। एक राजनीतिज्ञके घर ली हुई तालीम निष्फल नही गई। तुमने अन्त तक अपना मुँह नही खोला। तुमने यदि अभी तक वहाँके हरिजन सेवा सघमे अपनी अर्जी नही दी है तो अब देना। उसकी नकल मुझे भेजना। बादमे मुझसे जो बनेगा, मैं करूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

बापुजीनी शीतल छायामां मे उपलब्ध गुजरातीकी अनुप्रतिसे, पृष्ठ ९ के सामने।

१. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिया गया।
२. बड़ौदा राज्यके दीवान सर मनुभाई मेहता।

१७९. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२८ अक्टूबर, १९३३

तेरे स्वभावको लेकर किसीने ऐसी कोई शिकायत नही की है जिससे कि मैं तुझे नालायक मानूं?[1] और किसीके कहनेपर तू मेरी दृष्टिमे लायक अथवा नालायक बने, यह कैसे हो सकता है? क्या मुझे दूसरोंकी मारफत तुझे जानना होगा? तू नींदसे जाग। यहाँ आकर मनको हल्का कर जा। तेरे दु:खसे मैं दु:खी होता हूँ।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १३८-९

१८०. एक शिक्षकके प्रश्न

'मंगलप्रभात' में[2] से मेरे लेखोको अपने शिष्योको समझाते हुए एक शिक्षक कुछ उलझनमें पड़ गये। उस बारेमे उन्होने कुछेक प्रश्न किये है। उनमे से पहला निम्नलिखित है:[3]

मेरा आज तकका अनुभव यही बताता है कि खुदको जो सत्य जान पड़ता हो उसी मार्गपर चलनेमें ही श्रेय है। महान् विभूतियोका मार्ग कौन-सा है यह भी मनुष्य को स्वयं ही खोज निकालना होगा और महान् विभूतिको भी स्वय उसे ही पहचानना होगा। जो विभूति एकके लिए आदर्श रूप हो वह दूसरेके लिए तुच्छ हो सकती है। एक ही विभूतिको माननेवाले दो व्यक्ति उसके वचन और आचरणके दो विरोधी अर्थ करते हुए देखे गये हैं। विरोचन और इन्द्रकी कथा प्रसिद्ध है।[4] पग-पग पर 'स्वयं' कुछ करनेकी बात ही हमारे सामने आ खड़ी होती है। लेकिन मैंने इतना जो कहा उससे भी काम पूरा नही हो जाता। स्वयको हमेशा सत्य सूझता ही है, यह तो नहीं कहा जा सकता। मुझे आज जो सत्य प्रतीत होता है वह दो दिनो बाद असत्य लग सकता है। कितने ही लोगोंने जिसे सत्य माना है उसकी लगभग अन्य सब लोगोंने भर्त्सना की है। इसीसे हम इस भयकर परिणामपर आते है कि मनुष्य

१. गांधीजीने गांधी सेवा संघके न्यासी पदके लिए मथुरादास त्रिकमजीका नाम प्रस्तावित किया था। देखिए "पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको", २४-१०-१९३३ भी।

२. यरवडा सेन्ट्रल जेलमें लिखे गये गांधीजीके लेखोंका एक संग्रह; देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ४१ की पाद-टिप्पणी।

३. यहाँ नहीं दिया गया। प्रश्न यह था: अपनी दृष्टिसे देखे हुए मार्ग पर चलनेसे सत्यका विकास हो सकता है अथवा महान् विभूतिके चरण-चिह्नों पर चलनेसे हो सकता है?

४. छान्दोग्योपनिषद्, ८, ७।

भूले करते हुए, ठोकरें खाते हुए और विकट मार्गोको लाँघकर ही सत्यकी झाँकी पा सकता है।

लेकिन सारी उलझन तो सत्यान्वेषणकी शर्तोकी उपेक्षाके परिणामस्वरूप ही पैदा होती है। जिस प्रकार अन्य विषयोके सम्बन्धमे अधिकारकी योग्यताकी जरूरत रहती है उसी प्रकार सत्यके सम्बन्धमे भी रहती है। जो मनुष्य सत्येश्वरका दर्शन करना चाहता है उसे यमनियमका पालन करना ही चाहिए। जो व्यक्ति ऐसी योग्यता प्राप्त नही करता उसकी अपनी दृष्टि तो होती ही नही, वह तो अन्धे मनुष्यके समान होता है। यदि कोई व्यक्ति खगोल विद्याका अभ्यास किये विना उसका ज्ञान देनेका दावा करे तो हास्यास्पद लगेगा, उसी तरह सत्यको जाननेकी दृष्टि प्राप्त करनेका तनिक भी प्रयत्न किये विना जो व्यक्ति सत्य देखनेका दावा करता है वह भी हास्यास्पद ही होगा।

शिक्षकका दूसरा प्रश्न यह है:[1]

"तीर पर आ गये" कहनेका तात्पर्य केवल इतना ही है कि अब हम इस विषयमे सहज ही प्रवेश करते है। सत्यकी चर्चा करते हुए हम अहिंसा तक पहुँच ही जाते है। अहिंसा विना सत्यके सिद्ध हो ही नही सकती। यह बात अनुभवके आधारपर ऐसी सिद्ध है जैसे दो और दो चार।

शिक्षकका तीसरा प्रश्न यह है.[2]

इसमें कहा गया वाक्य मेरी अपरिपक्व भाषाका एक अच्छा नमूना है। मुझे याद है कि इस लेखको लिखते समय भी मुझे मुश्किल हो रही थी। मै जो भाषा चाहता था वह मुझे सूझ नही रही थी। लेकिन यदि मेरी स्थिति इतनी दयनीय है तो शिक्षककी स्थिति भी मुझसे कोई कम दयनीय नही है।

हम सभी अहिंसाका नाम तो बहुत रटते है लेकिन वह क्या है इसकी छानबीन कम ही करते है। उसके बारेमे जो लिखा गया है हम उसके अनुरूप आचरण नही करते और इसलिए इसके लिए प्रयुक्त की जानेवाली भाषा हमे चीनी पहेलीके समान जान पड़ती है। शिक्षकने 'नाश', 'मुसीबते', 'सामना करना', 'सहना', 'अपनाना', आदि शब्द प्रयुक्त किये है, लेकिन उसके सामने उसके अर्थका सही चित्र उपस्थित नही हो पाया है, यह तो [शिक्षककी] भाषा ही सूचित कर रही है। और इसे मै उसका दोष नही मानता, क्योकि यह अपूर्णता तो लगभग सर्वव्यापक है।

यह सब कहकर तो मैने पाठकोके सामने अपनी कठिनाई और विषयके प्रति हमारे अपने अज्ञानको प्रस्तुत किया है। मै यह मानता हूँ कि मै जो कहना चाहता हूँ उसे मै अच्छी तरह समझता हूँ, लेकिन अभी तक मेरे हाथ ऐसी भाषा नही लगी

१. प्रश्न था: "सत्य" नामक लेखके उपसंहारमें आप कहते हैं कि "अब हम अहिंसाके तीरपर आ गये।" क्या आपके कहनेका अर्थ यह है कि सत्य साधन और अहिंसा साध्य है।

२. प्रश्न था: जब आप यह कहते हैं कि विपत्तियोंका प्रतिरोध न कर उन्हें सह लेनेसे मनुष्य उन्नतिकी ओर अग्रसर होता है तब आपका कहनेका अभिप्राय क्या है? अहिंसाकी आप सीमित अर्थमें क्या व्याख्या करते हैं?

है जो मेरे अर्थको ज्यों-का-त्यो पाठकों तक पहुँचा दे। लेकिन मैं हारनेवाला नही; प्रयत्न करनेसे सफलता अवश्य मिलेगी।

अहिंसा नाशक नही, पोषक है। इसीसे वह 'मुसीबतोंका' 'सामना' उन्हे लाँघकर करती है। मेरा सूत अनेक बार उलझ जाता है और उस गुत्थीको तोड़ दूँ तो सूत हाथसे जाता ही है। हालाँकि तोड़ना आसान काम है और तुरन्त हो जाता है, लेकिन इससे सत्य मेरे हाथ नही लगता। मैं गुत्थीका 'सामना' उसे खोलकर करता हूँ, तो समय जरूर लगता है लेकिन उससे सूत बचता है और मैं धीरजका पाठ सीख पाता हूँ। इसके अतिरिक्त उस गुत्थीके सुलझनेपर मेरे आनन्दका पार ही नही रह जाता। दूसरे कातनेवालोंका मार्ग मैं साफ करता हूँ। मेरे ज्ञानमे इजाफा होता है। और मैं देखता हूँ कि उसमे जो समय लगता है वह जाया नही गया। और मुझे उससे शिक्षा मिलती है कि उस गुत्थीको तोड़ फेकनेका सहल और सक्षिप्त जान पड़नेवाला मार्ग खोटा और लम्बा था। गुत्थीको सुलझाते हुए मैंने उसका 'सामना' तो किया ही, लेकिन उसको सहकर, अपनाकर मैंने यह भी सीखा कि उस उलझनका कर्त्ता स्वय मैं था। उसके अस्तित्वकी जिम्मेदारी मेरी थी।

इस तरह सहन करनेमें अनेक सद्गुण कैसे आ गये यह बात भी, मैं समझता हूँ, मैंने उपर्युक्त दृष्टान्तसे स्पष्ट कर दी है। मेरा खयाल है कि ऐसे ही अन्य दृष्टान्तोंको घटाकर मेरे लिखनेके सिद्धान्तको ज्यादा अच्छी तरह समझा जा सकता है। दृष्टान्त तो अनेक मिल जायेंगे, लेकिन इसका अर्थ यह नही कि अहिंसाकी समस्त समस्याएँ सुलझ सकती हैं। अथवा इसकी सारी कुंजियाँ किसी मनुष्यके हाथमे धरी हैं। यह शास्त्र सम्पूर्णताको प्राप्त नही हुआ है। भला कोई भी शास्त्र सम्पूर्णताको प्राप्त हुआ कहा जा सकता है? किसी भी शास्त्रज्ञका ज्ञान उसके बढते जाते अज्ञानको माप सकनेमे ही निहित है। अहिंसा एक गूढ शास्त्र है। हमे अनेक प्रयोग करने पड़ेंगे, अनेक मनुष्योको अपनी आहुति देनी होगी। अभी तो इतना ही निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि अहिसा ही सत्येश्वर के दर्शन करनेका सीधा और सबसे छोटा मार्ग जान पड़ता है। और हिंसाकी मजिल तो हम दीर्घकालसे काटते चले आये है और फिर भी हम सत्यसे दूर जाते हुए प्रतीत होते हैं।

कुत्ते, बिल्लियो, सूक्ष्म जीवो और वनस्पतिका नाश भी हिंसा ही है; इसलिए वह भी पाप ही है। मनुष्य मात्र पाप बिना देहको धारण नही कर सकता, लेकिन लौकिक दृष्टिसे विचार करते हुए केवल देहका पोषण करनेके निमित्त की गई ओछीसे-ओछी अनिवार्य हिंसाको पाप नही माना जाता।

हिंसाकी अब उसके सकुचित अर्थमे व्याख्या की जा सकती है। स्वेच्छासे, अपने शौकके लिए, बिना किसी कारणके चीटीसे भी छोटे जन्तुका नाश करना हिंसा है। उसके नाशकी इच्छा न करना, नाश न करना, और नाश न करवाना अहिंसा है।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २९-१०-१९३३

१८१. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

वर्धा
२९ अक्टूबर, १९३३

प्रिय आनन्द,

तुम्हे मलेरियाको जड़मूलसे उखाड़ फेकना चाहिए। मुझे उम्मीद है कि तुम्हे मुल्तान जानेमे ज्यादा श्रम नही पड़ा है। विद्या धीरे-धीरे खुल रही है। कभी उदास और कभी प्रसन्न, अब उसकी मन स्थिति ऐसी नही है। वह मेरे साथ टहलनेको जाती है। उसे क्लबकी व्यवस्था पसन्द है। उसका स्वास्थ्य अच्छा है और महादेवका भी अच्छा है। तुम्हे उसके बारेमे कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिए। वह आज अपनेको उपयोगी काममें लगाये हुए है। वह मेरे लिए कुछ काम कर रही है। वह नियमित रूपसे अग्रेजी पढ रही है। उसने मुझसे तुम्हारी माँको एक लम्बा पत्र लिखवाया।[1] आज उसने पहली बार अपने लिए मक्खन तैयार किया। इसलिए उसे ईश्वर पर छोड़ दो।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य . राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१८२. पत्र : कान्ति पारेख और जयन्ती पारेखको

२९ अक्टूबर, १९३३

चि० कान्ति, जयन्ती,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। मै समझता हूँ कि तुम दोनोने खूब कमाई की है। स्वास्थ्यका ध्यान रखना। शुद्धतम रहना। जब लिखा जा सके तब लिखना। काका साहब यही है। आज उनके उपवासका चौथा दिन है। सात दिवसका व्रत है। वे गुरुवारको सवा बजे उपवास तोड़ेंगे। उनकी तबीयत अच्छी रहती है। यह उपवास प्रायश्चित्त स्वरूप है। सुरेन्द्रजी और दरबारी उनकी सेवामे रहते है। प्रभुदास लिखने का काम करता है। खूब प्रफुल्लित रहते है। वे बराबर पानी पी सकते है, इसलिए

१. देखिए "पत्र : गंगा तो० हिंगोरानीको", २२-१०-१९३३।

उन्हें कोई दिक्कत नहीं होती। किशोरलाल और गोमतीबहन अकोलामें हैं। वे इस मासके अन्तमें बम्बई जायेंगे।

रमाबहन जोशीका हाथ अभी ठीक है। वे कल यहाँ आयेंगी और रहेंगी। यहाँ अभी लड़कियोंकी भर्ती चालू है। चार घंटे उद्योग और चार घंटे पढ़ाई चलती है। मराठी सीखना अनिवार्य है।

बालकृष्ण स्वास्थ्य बनानेके लिए दूधके प्रयोग कर रहा है। चार दिन उपवास करनेके बाद चार दिन फलोंपर रहा। अब केवल दूध पीता है, पानी भी नहीं लेता। आज दूधका तीसरा दिन है। रोज बीस तोले बढ़ाता है। आज तीन पाव पियेगा। अभी परिणामके बारेमें कुछ नहीं बताया जा सकता।

स्वामी आनन्द यहीं हैं। इन सबको थोड़े दिनोंका मेहमान समझो। कुमारप्पा आकर चले गये।

विनोबाने एक श्लोककी रचना की है जिसमें ग्यारह व्रत बताये गये हैं। उसे रोज दो बार गाया जाता है:[1]

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असंग्रह
शरीरश्रम, अस्वाद, सर्वत्र भयवर्जन
सर्वधर्मीसमानत्व, स्वदेशी, स्पर्शभावना
ही एकादश सेवावीं, नम्रत्वे व्रतनिश्चये॥

मणि और बावलो आनन्दीके साथ गये हैं। वनमाला और मोहन कठलालसे शामिल हो गये होंगे।

तोतारामजी और हरिप्रसाद[2] यहीं हैं। उन्हें हरिजन सेवाके लिए साबरमती भेजना है।

विट्ठलभाईका शव ९ तारीखको बम्बई पहुँचेगा। अन्त्येष्टि धूमधामसे होगी। डाह्याभाई अग्नि देंगे। मणिबहन और मृदुलाबहन तीन दिन आकर रह गईं।

यदि इनमें से कुछ खबरें मैं दोबारा लिख गया हूँ तो बूढ़ा समझकर मुझे माफ कर दोगे न? मैं जितने पत्र लिखता हूँ यदि उन सबको याद रखूँ तो उनके बोझ तले मैं दब ही जाऊँ। जिस तरह स्मरण-शक्तिको बनाये रखना स्पृहणीय है उसी तरह भूल जानेकी शक्तिका विकास भी किया जाना चाहिए। यदि यह न हो तो हम या तो हमेशा हँसते ही रहें और या फिर हमेशा रोते ही रहें। लेकिन यह तो मैंने बीच में थोड़ा-सा व्याख्यान ही दे डाला। कुछ रह जानेकी अपेक्षा कई खबरें दुबारा देनेमें क्या हर्ज है?

अब तुम्हारे सवाल और तुम्हारी बातें सोनेकी मुहरों जैसी हैं, लेकिन "निग्रहः किं करिष्यति?"[3] किसीको हम जबरदस्ती कुँवारा रख सकते हैं? देवदास और प्रभुदास बत्तीस वर्षतक रुके लेकिन अपने पर वश न चलनेके कारण उन्होंने विवाह

१. श्लोक मराठीमें है।

२. तोतारामजीके दत्तक पुत्र।

३. *भगवद्गीता*, ३, ३३। देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ १७४-५।

कर लिया। मनमें विषयोका सेवन करनेसे तो विनम्रतापूर्वक अपनी असमर्थताको स्वीकार करना बेहतर है न? दोनो ने प्रयत्न तो खूब किया, इसकी साक्षी मैं हूँ।

कर्मेन्द्रियाणि सयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥[1]

अब यदि दोनो नम्रभावसे अपनी इच्छा व्यक्त करे तो उन्हे आशीर्वाद न देना हिंसा होगी। आदर्शका पालन करनेके लिए जी-तोड प्रयत्न करना चाहिए। लेकिन यदि वैसा करनेके बावजूद मनपर अंकुश न रह सके तो मिथ्याचारी न होकर जो-कुछ बन सके उससे सन्तुष्ट रहना चाहिए। ऐसा व्यवहार करनेवाले लोग बड़ेके आशीर्वादके पात्र है। चादरको देखकर पैर पसारने चाहिए। संक्षेपमें, जो मनुष्य अपनेको और जगतको धोखा नही देता वह अन्ततः आगे निकल जाता है। अब यदि मै तुम्हे अपनी बात न समझा सका होऊँ तो समय आनेपर मुझसे पूछना।

अभी इधर मुझे इन्दुका कोई पत्र नही मिला है लेकिन केशूके नाम उसका पत्र आया था। वह मजेमे है। बलभद्र और धीरू भी उसके साथ है। मणिभाई कोठारी बढ़वानमें है। वहाँ वे हरिजन और खादीका काम करते है। मेरा दौरा आठको शुरू हो रहा है। साथियोके नाम तो मै दे चुका हूँ। उसमे रामनाथ 'सुमन' का नाम जोडना है। वे हिन्दी साहित्यके प्रेमी है, और अच्छे लेखक है। अन्तमे उनका विचार आश्रममे शामिल हो जानेका है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२७५) से।

१८३. पत्र : डॉ० एम० एस० केलकरको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
३० अक्टूबर, १९३३

प्रिय डॉ० केलकर,

दुग्ध-चिकित्साके अन्तर्गत आप बीमारोको जितना दूध पीनेके लिए कहते है उतनी ही मात्रामें उन्हे पानी पीनेकी सलाह देते हैं; क्या आप मुझे यथासम्भव सक्षेपमें इसके कारण लिखकर भेजेगे? उम्मीद है आपके प्रयोग वहाँ सफलतापूर्वक चल रहे होगें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१०८) से। सी० डब्ल्यू० ३३०१ से भी; सौजन्य : एम० एस० केलकर

१. भगवद्गीता, ३, ६। देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ १४७-८ भी।

१८४. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

३० अक्टूबर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

अस्पतालके[1] सम्बन्धमें तुम्हारा पत्र मिला। तुममे विरोधका भय किये बिना यह कहनेकी क्षमता होनी चाहिए कि स्वराज्य भवन डिस्पेसरी बिलकुल धोखा है और इसका पूरी तरह बहिष्कार किया जाना चाहिए। बिना किसी सुनिश्चित प्रमाणके मै यह माननेको तैयार नही हूँ कि वे 'केस' बनाते है। मै इस प्रमाणको पानेके लिए उत्सुक हूँ, क्योकि काग्रेस-अस्पतालके सम्बन्धमे अपनी राय कायम करनेमे मुझे इसकी जरूरत है और मैं समझता हूँ कि यदि सरकारी प्रबन्ध विफल साबित हुआ हो तो हमे स्वराज्य भवन पूरी तौरपर अस्पतालके कार्यके लिए लेनेमे समर्थ होना चाहिए। यदि तुम समझते हो कि काग्रेस अस्पताल या डिस्पेसरी जहाँ इस समय चल रही है वही चलनी चाहिए और स्वराज्य भवनको दुबारा कब्जेमे लेनेका कोई भी प्रयत्न नही करना चाहिए तो ऐसी हालतमे एक अपील जारी करना अत्यन्त जरूरी हो जाता है और यह अपील मोहनलाल नेहरु[2] और कमलाके नामोसे जारी होनी चाहिए।

मुझे खुशी है कि माताजीकी हालतमें धीरे-धीरे सुधार हो रहा है। वास्तवमें विवाहके सफलतापूर्वक सम्पन्न हो जानेका भी उनके मानसिक तनावको शान्त करनेमें कुछ-न-कुछ हाथ रहा है।

एन्ड्रयूजके यहाँपर बुधवारको पहुँचनेकी आशा है।

जमनालालजीके बारेमे जो तुम्हारा कहना है उसे मैं समझता हूँ। तुम्हारी रायमें इसकी घोषणा बिना जोखिम कब की जा सकती है?

ठक्कर बापा लिखते है कि तुमने काग्रेसियोंको हरिजनोके हितके लिए काम करनेसे मना कर दिया है, भले ही वे सविनय अवज्ञामे भाग नही भी ले रहे हों।

१. स्वराज्य भवनमें कांग्रेस द्वारा चलाये जानेवाले अस्पतालको १९३१ में सरकारने अपने हाथमें ले लिया था। कुछ समय बाद ब्रिटिश अधिकारियोंने 'दिखावे' के तौरपर जनताके लिए एक डिस्पेंसरी बराबर खुली रखनेका निश्चय किया। जवाहरलालने लिखा, "लेकिन इसका कोई प्रमाण नहीं है कि जनताके किसी एक भी व्यक्तिने इसका फायदा उठाया हो।. . . मुझे बताया गया है कि रजिस्टरमें झूठे इन्दराज किये जाते है, यह दिखानेके लिए कि बहुतसे रोगियोंका उपचार किया जा रहा है।" इस अस्पतालके सरकारी नियन्त्रणमें ले लिये जानेके बाद काग्रेसने एक अस्पताल खोल दिया है जो अप्रैल, १९३२ से स्वराज्य भवनसे लगी एक कुटियामें चल रहा है। काग्रेस-अस्पतालको चलानेवाले सभी साधन "लगभग समाप्त" हो चुके है।

२. जवाहरलाल नेहरूके चचेरे भाई।

इसमे कहाँ तक सचाई है! इस प्रकारके किसी प्रतिबन्धके सम्बन्धमे मुझे कुछ पता नही है।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य . नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय

१८५. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

३० अक्टूबर, १९३३

विट्ठलभाईका अग्नि-सस्कार मेरे हाथो हो, क्या इस बातमे तेरा भी कोई हाथ है? तूने मेरी टिप्पणी तो पढी होगी। यदि किसीको मेरी उपस्थितिकी आशा हो तो तू उसे निरुत्साहित करना — यदि तुझसे बन सके तो। मेरे ऊपर दबाव डाला गया तो मै उसका उपाय कर लूंगा। लेकिन बेहतर यह होगा कि कोई दबाव न डाला जाये। मेरा मन बाहरकी चीजोमे जाता ही नही है, जेलमे ही रहता है। मै येन केन प्रकारेण हरिजन यात्रा-भर करूँगा। इसके अलावा मै अन्य चीजोपर कदाचित् ही कोई विचार करता हूँ।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १३९

१८६. पत्र : एच० के० हेल्सको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
३१ अक्टूबर, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका इसी २५ तारीखका पत्र मिला। इस वर्तमान फूट और कलह मे उस अमुक व्यक्तिके स्थानपर जो भी व्यक्ति मेल-मिलापका वातावरण पैदा कर देगा उसको धन्यवाद देनेवाला मै पहला व्यक्ति होऊँगा। आपको अपने काममे पूरी सफलता मिले, इसकी मै कामना करता हूँ।

नि सन्देह हिन्दू-मुस्लिम तनाव बुरी चीज है। बस मेरी समझमे ही नही आता कि इसे दूर कैसे किया जाये। मुझमे जितनी भी सामर्थ्य है उसके अनुसार मै व्यक्तिगत तौरपर पूरा प्रयत्न कर रहा हूँ, लेकिन यह तो कोई बहुत बडा आश्वासन नही हो सकता।

बेशक, अपनी असफलताओंसे मैं घबराता नहीं। मैं हरेक असफलताको सफलताकी ओर ले जानेवाली एक-एक सीढ़ी मानता हूँ। लेकिन यह एक चीज है और सफलताकी थोड़ी भी आशा न करते हुए भी प्रयत्न करना दूसरी चीज है। इसलिए आप मेरी इस बातका विश्वास कीजिए कि मैं जब भी समझौते द्वारा इस मामलेको आगे बढ़ानेका थोड़ा भी अवसर देखूँगा और उसमें सहयोग दे सकूँगा, तो मैं इस मामलेमें कूदते हुए हिचकूँगा नहीं।

'व्हाइट पेपर' जब पहले-पहल प्रकाशमें आया तो मुझे उससे खुशी नहीं हुई। और आज तो और भी कम खुशी है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-११-१९३३

१८७. पत्र: आनन्द तो० हिंगोरानीको

३१ अक्टूबर, १९३३

प्रिय आनन्द,

देवदासके बारेमें मुझे तुम्हारा पत्र मिला। तुमने अच्छा विवरण दिया है। इससे मैं देख सकता हूँ कि एक प्रत्यक्षदर्शीसे समाचार पाकर देवदासका मन कितना मुदित हुआ होगा। लेकिन मुझे इस पत्रमें उस बमकी ही बात करनी चाहिए जो तुम पर आ गिरा है।

तुम्हें पिताकी बातोंको बढ़ा-चढ़ा कर नहीं कहना चाहिए। तुम्हें इन सब चीजोंके लिए तैयार रहना होगा और यदि तुम शान्त और अपने निश्चय पर दृढ़ रहोगे तो सारे बादल छँट जायेंगे। तुम्हें अपने माता-पितासे कोमलतापूर्वक लेकिन दृढ़ शब्दोंमें बातचीत करनी चाहिए और बताना चाहिए कि वे तुम्हें अपना भविष्य आप निर्धारित करने दें। उन्होंने तुम्हें उदार शिक्षा दी है। अब उन्हें उसके परिणामको लेकर झगड़ा नहीं करना चाहिए। जितने विनम्र शब्दोंमें हो सके उतने विनम्र शब्दोंमें अपनी स्थिति स्पष्ट करनेके बाद तुम्हें अपना कार्यक्रम तय करना चाहिए। तुम्हें कराचीमें गिरफ्तार होनेसे बचना चाहिए। आखिरकार हैदराबाद तुम्हारा कार्यक्षेत्र है और वहाँ तुम मित्रोंकी सलाहसे काम करोगे। एक अच्छे सत्याग्रहीकी तरह तुम्हें एक चीजसे बचना चाहिए। कार्यक्षेत्रका चुनाव करते समय तुम्हें अपनी सुविधाओंका अथवा उन कष्टोंका ध्यान नहीं करना चाहिए। इसलिए तुम्हे वर्धाके आसपास अपने-आपको गिरफ्तार होने देनेका विचार छोड़ देना चाहिए। यह सत्याग्रहकी भावनाके विरुद्ध होगा।

मैंने विद्याके साथ सारी स्थिति पर बातचीत की है और मेरा खयाल है कि वह मुझसे सहमत है। मुझे उसके साथ तर्क नहीं करना पड़ा; उसने स्वयं ही कहा

कि जब उसने तुम्हारे अपनेको गिरफ्तार होने देनेकी और अपने वर्धा रहनेकी बातको स्वीकार कर लिया तब उसने यह भी मान लिया कि वह कैदकी अवधिके दौरान तुमसे नही मिलेगी। उसने कहा कि यदि तुम्हे पत्र लिखनेकी अनुमति दी जाती है, जैसाकि तुम्हे निश्चय ही दी जायेगी, तो इतना ही पर्याप्त होगा और मेरा खयाल है कि यदि तुम कराचीमे ही गिरफ्तार हो जाते हो तब भी यही स्थिति ठीक है। विद्या सचमुच बहुत अच्छी चल रही है। वह अब अन्यमनस्क दिखाई नही देती, वह उद्भ्रान्त नही है और वह अधिकाधिक प्रसन्नचित्त दिखाई देती है। और मैं चाहता हूँ कि तुम भी प्रसन्न रहो और प्रसन्न मनसे उसे पत्र लिखो।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे, सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१८८. पत्र: छगनलाल जोशीको

३१ अक्टूबर, १९३३

चि० छगनलाल,

कल रमा और विमला[1] आई थी। और चूँकि तुम दोनोसे अभी हाल ही मे मिले थे इसलिए उनके बारेमे कुछ नही लिखता। रमासे मुझे मालूम हुआ है कि तुम्हे पत्र लिखा जाये तो वह तुम्हे मिल सकता है और तुम मेरे पत्रकी उम्मीद लगाये बैठे हो। उम्मीद करनी तो अवश्य चाहिए। लेकिन स्वयं रमा ही जब थोडे पत्र लिख सकती है तो उसमे मैं क्योकर हिस्सा बँटाऊँ, यह सोचकर ही मैंने तुम्हे कोई पत्र नही लिखा। लेकिन दमयन्ती जैसे पेडोसे नलका समाचार पूछती फिरती थी उसी तरह जो कोई मेरे हाथ लग जाता था उससे मैं तुम्हारा समाचार पूछ लेता था और इस तरह कुछ-न-कुछ जान लेता था।

मेरे पास तुम इतने समय तक रहे इसका कोई-न-कोई बदला तो अवश्य चुकाना चाहिए और वह तुमने अच्छी तरह चुकाया है। महादेवने भी चुकाया है और आज भी चुका रहा है। लेकिन सूर्य जिस प्रकार अपने साथ छाया लेकर चलता है और उस छायाके पीछे उजाला भी अवश्य रहता है उसी तरह महादेव कही-न-कहीसे शान्ति तो प्राप्त कर ही लेता है। तुम पर भी यही बात लागू होती है। तुम्हे पुस्तकोका सत्सग मिलता रहता है और फिर तुम्हे बाहरसे मक्खन मँगवानेकी अनुमति भी मिल गई है, सो अब बाकी क्या बचा? चाहे कैसी भी परिस्थितियाँ क्यो न हो लेकिन मनको सदैव प्रसन्न रखनेका 'गीता' का पाठ तुमने कितने ही वर्षोसे कण्ठस्थ कर रखा है। उसको व्यवहारमे लानेका प्रसग उपस्थित होनेपर यदि हम उसे व्यवहारमे न लाये तो यह हमारे लिए शर्मकी बात होगी न? इसलिए मै तुम्हारे बारेमे निश्चिन्त

१. छगनलाल जोशीकी पुत्री।

हूँ और यह माने हुए हूँ कि तुम परीक्षामें असफल नहीं होगे अपितु प्रथम वर्गके अंक प्राप्त करोगे।

काकाका उपवास चल रहा है। सात दिनोंका व्रत था। यह परसों अर्थात् गुरुवारको पूरा होगा। यह उपवास . . .के[1] लिए है। वे बहुत प्रसन्न हैं। उपवासका उनपर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा है। थोड़ी कमजोरी तो होगी ही। वे खुले आकाशके नीचे सोते हैं। अच्छी नींद आती है। वे अच्छी मात्रामें पानी पी सकते हैं। इस बारेमें वे मुझसे खूब आगे जा सकते हैं। सुरेन्द्र और अपनेको इनका शिष्य माननेवाले दरबारी इनकी सेवामें रहते हैं। इसलिए यह बात तुम सहज ही समझ सकते हो कि उनकी सेवा अच्छी तरहसे की जाती है। प्रभुदास उनके सचिवका काम करता है। उन्हें जो थोड़े पत्र लिखवाने होते हैं सो लिखता है। उन्हें 'गीता', 'उपनिषद' आदि पढ़कर सुनाता है। स्वामी भी फिलहाल यहीं हैं। किशोरलाल और गोमती आज आये हैं। यहाँका मौसम तो इन दिनोंमें बहुत अच्छा होता ही है। वर्धा आश्रम कन्या आश्रम बन गया है। यहाँ इस समय चालीससे अधिक लड़कियाँ हैं। लक्ष्मीबहन जी-तोड़ मेहनत कर रही हैं। उनकी सहायताके लिए द्वारकानाथ हैं। अभी-अभी एक संगीत शास्त्रीको नियुक्त किया है। लेकिन प्रार्थना तो लक्ष्मीबहन स्वयं ही चलाती हैं। उनका स्वर मधुर है, यह बात तो मैं पहलेसे ही जानता था लेकिन उन्हें एकाध सौ भजन कण्ठस्थ हैं, इसकी मुझे खबर नहीं थी। बृहस्पतिवार और शुक्रवारकी शामके दो भजन मथुरी[2] गाती है और गुरुवारको गाई जानेवाली गजलमें उसका साथ योगा[3] देती है।

प्रभुदासका विवाह अभी हाल ही में सम्पन्न हुआ है। कन्या उत्तर भारतकी है। उसका नाम अम्बा है, २५वाँ वर्ष चल रहा है। यह पसन्द प्रभुदासकी ही है। उसकी खोज निकालनेका पुरुषार्थ भी उसीका है। अम्बाकी सादगी प्रभुदासकी सादगीसे बढ़कर है। उनमें साहस भी बहुत है। प्रभुदास बहुत खुश है। मैं जबतक हूँ तबतक तो दोनों यहीं हैं। मेरा दौरा ८ तारीखसे शुरू होगा। विवाहके समय काशी[4], छगनलाल[5] अथवा बाहरके भी सगे-सम्बन्धी अथवा मित्रको निमन्त्रण नहीं दिया गया था। कन्यापक्षकी ओरसे भी छः व्यक्ति ही आये थे। तात्पर्य यह कि यह विवाह अत्यन्त सादगीके साथ सम्पन्न हुआ, ऐसा कह सकते हैं। विवाह सम्पन्न करवानेके लिए वर्धाके ही एक शास्त्री थे और उसकी देखरेखके लिए काका थे।

तुम जिन लड़कियोंको जानते हो उनमें चन्द्रकान्ता[6] भी यहीं है। विद्या हिंगोरानी[7] भी यहीं है और एक वर्ष तक तो अवश्य रहेगी। विनोबा यहाँसे एक मील

१. नाम नहीं दिया गया है।

२. लक्ष्मीबहन खरेकी पुत्री।

३. पण्डित खरेके भाईकी पुत्री श्रीमती सोमण।

४ और ५. प्रभुदासके माता-पिता।

६. सुमंगल प्रकाशकी बहन।

७. आनन्द हिंगोरानीकी पत्नी।

दूर (हरिजनोंके एक) गाँवमे रहते है, यह तो तुम्हे मालूम ही है। लेकिन कन्या आश्रमके लिए नैतिक जिम्मेदारी उन्हीकी है। आनन्दी, बबु और बचु मेरे साथ आये थे, अब वापस चले गये हैं। तुम्हे यह जानकर आश्चर्य होगा कि लड़कियोको शारदा मन्दिर पढनेके लिए जाना अच्छा नही लगता। वे घरमे पढाये जानेकी व्यवस्थाकी माँग करती है। मै इसकी तजवीज कर रहा हूँ, कोई दिक्कत नही होगी। इनके अलावा वनमाला, मोहन, मणि और बाबलो तो है ही। और ये सब अनसूयाबहनके हरिजन बालाश्रममे है। वे वहाँ खुशीसे रहने गये हैं। खुराक वगैरहमे अवश्य थोडी दिक्कत पेश आती है। हरिजन कन्याओकी खुराक तो बहुत सादी होती है। इन्हे दूध, घी भी कम ही मिलता है। अपने बच्चोको यदि हम उनके जैसी खुराकपर रखनेका आग्रह करे तो उनके शरीर ही सूख जाये। इसलिए वहाँ रहते हुए भी उन्हे उचित खुराक मिल सके, मैं इस सम्भावनापर विचार कर रहा हूँ। इस बीच वे किसी-न-किसी तरह आवश्यक खुराक तो लेते ही है। अमीनाके बच्चे भी इसी आश्रममे है और वे घुलमिल गये है। सारा दिन ऊधम मचाते है। उनको 'कुरान' और उर्दू सिखानेके लिए एक मुन्शी रखा है।

आश्रमको अन्तत हरिजन कार्यके लिए अर्पित कर दिया गया है, यह बात तो तुम्हे मालूम हो ही गई होगी। तोतारामजीको आश्रम भेजनेका निश्चय किया गया है। हरिप्रसाद भी वही जायेगा। ये दोनो फिलहाल यही है। पन्नालाल[1] स्वतन्त्र रूपसे गोशाला खोलना चाहता है। उसे मैने यही आनेके लिए पत्र तो लिखा है। वह फिलहाल नानीबहन[2] और गगाबहनके[3] साथ अहमदाबाद मे है। हमारी दुग्धशाला कांकरिया तालाब पर शकरलालकी[4] देखरेखमे टाइटस चला रहा है, अच्छी चल रही है। अब उसके सम्बन्धमे भी हमारी कोई जिम्मेदारी नही है।

आश्रम और विद्यापीठके पुस्तकालय नगरपालिकाको सौप दिये गये है, यह तो तुम जानते ही होगे। रावजीभाई[5] और मोहनलाल भट्टको[6] एक दो दिनमें यहाँ पहुँच जाना चाहिए। बा मन्दिरमे जानेकी तैयारी कर रही है। मनु यही है। धीरू, बलभद्र और इन्दुने भावनगरमे अड्डा जमा लिया है। दूधीबहन अपने बच्चोके साथ वही रहती है। . . .का . . शारदा मन्दिरमे है। यह लिखावट तो तुम पहचानते ही होगे। इतनेमे मैने तुम्हे काफी समाचार दे दिये है। अभी और भी दे सकता हूँ, लेकिन समय कहाँ से लाऊँ? इसलिए बाकी की पूर्ति स्वामी करेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५१३) से।

१. पन्नालाल झवेरी।
२. पन्नालालकी पत्नी।
३. पन्नालालकी सौतेली माँ।
४. शकरलाल बैंकर।
५. रावजीभाई नाथभाई पटेल, जो साबरमती आश्रममें खादी-विभागके अध्यक्ष थे।
६. नवजीवन प्रेसके मैनेजर।

१८९. तार: आनन्द तो० हिंगोरानीको

वर्धा
१ नवम्बर, १९३३

आनन्द हिंगोरानी
सहितीपुर
बन्दर रोड
कराची

तुम्हारा पत्र मिला। कार्यवाही हैदराबादमें हो। सिन्धके बाहर अनावश्यक।[1]

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

१९०. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

असंशोधित

१ नवम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे बहुतसे पत्र मिले। मैं देखता हूँ कि तुमने दोनों त्यागपत्र[2] अखबारोंको दे दिये हैं। उनसे थोड़ी बहुत बात साफ हो जानी चाहिए।

हिन्दू सभाकी गतिविधियाँ मेरी समझमें नहीं आईं। वे दुष्टतापूर्ण हैं। यदि वे शुद्धिके सम्बन्धमें मेरे नामका प्रयोग कर रहे हैं तो यह बहुत बेईमानीकी बात है। यदि तुम्हारे पास [इस सम्बन्धमें] कोई प्रकाशित सामग्री हो तो कृपया मुझे दे देना। मेरे विचारमें तथाकथित या वास्तविक राष्ट्रीय अखबारोंने इसकी गतिविधियोंका स्वागत नहीं किया है और अक्सर इसकी आलोचना ही की है। मौलाना अबुलकलाम आजादकी पुस्तकपर प्रतिबन्ध लगानेके सम्बन्धमें मुझे कुछ पता नहीं है। हरिजनोंके लिए कार्योंका जहाँतक सवाल है, शिकायत बिलकुल अनुचित है। मेरी अन्तरात्मा बिलकुल साफ है। जहाँ तक तुम्हारा और मेरा सम्बन्ध है, यदि तुम चाहो तो हम

१. देखिए "पत्र: आनन्द तो० हिंगोरानीको", ३१-१०-१९३३।
२. जमनालाल बजाज और डॉ० शेख मुहम्मद आलमके।

पत्र-व्यवहार द्वारा अपने मन और हाथ दोनो साफ कर सकते हैं। मुझे नही मालूम कि विशिष्ट कार्योकी जोरदार शब्दोमे निन्दा करनेके अलावा और कौन-सी आक्रामक कार्रवाई सम्भव है या वाछनीय है।

गोरखपुरके बारेमे क्या किया जा सकता है, यह मेरी समझमे नही आ रहा। तुम्हारे कार्यकर्त्ताओ और दलके लोगोके लिए चन्दा हासिल करनेमे मुझे कठिनाई हो रही है। मै अभी भी इन दोनोके बारेमें बातचीत कर रहा हूँ। बाबा राघवदासने मुझसे कहा है कि वे संकटग्रस्त किसानोके लिए अनाज इकट्ठा करनेकी कोशिश कर रहे हैं। उन्होने मुझे अत्याचारका प्रामाणिक विवरण भेजनेका वायदा कर रखा है।

कल नरीमन[1] यहाँपर आये थे। मैंने उन्हे तुमसे मिलनेकी सलाह दी है और उन्हे बता दिया है कि तुम मेरे 'राजनैतिक मुखिया हो!' इसके अलावा मैं क्या कर सकता था? मै तो पूरी तरह बदनाम हूँ कि मै एक धार्मिक सनकी हूँ और मुख्यत. एक समाज-सेवक हूँ। मैंने उनसे कहा है कि यदि मुझे इस बातका यकीन हो जाये कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सदस्य सविनय अवज्ञाको समाप्त करने और कौंसिल-प्रवेश कार्यक्रमको अपनानेके इच्छुक है तो मै तुरन्त तुमसे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक बुलानेके लिए कहूँगा। मै यह सब इसलिए नही करता क्योकि मुझे भरोसा है कि अधिकांश सदस्य सविनय अवज्ञा कार्यक्रमपर आग्रह करेंगे और दूसरे, मै यह नही चाहता कि सरकारको अध्यादेश रूपी तलवारका प्रयोग करनेका अवसर दूँ। मैंने उनसे कह भी दिया है कि अ० भा० कां० क० जो कार्यक्रम चाहेगी मैं उसका विरोध नही करूँगा, हालाँकि सविनय अवज्ञाको बन्द करनेकी स्वीकृति मैं नहीं दे सकता। मेरे विचारमे केलकरके[2] विचार शुद्ध और दृढ़ हैं। वह स्पष्ट रूपसे असहयोग आन्दोलन और सविनय अवज्ञाको नापसन्द करते हैं। आतकवादी कहे या किसी और नामसे पुकारे, केलकर उनका साथ नही देंगे। इसके बाद राजनीतिक कार्य करनेवाले व्यक्तिके लिए कौसिल-प्रवेश ही एक कार्यक्रम रह जाता है। निराशा-जनक अकर्मण्यता सबसे बुरी चीज है और इसको प्रोत्साहन नही देना चाहिए।

मेरे खयालमे तुमने अपने पत्रोमे जो मुद्दे उठाये थे मैंने उन सबका जवाब दे दिया है, यहाँ तक कि जो मुद्दे नही उठाये थे उनका भी। इस समय सुबहके चार बजनेवाले हैं।

उम्मीद है माँके स्वास्थ्यमे सुधार जारी है। इस पत्रके साथ एक पत्र[3] कमलाके लिए है।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य. नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. के० एफ० नरीमन।
२. एन० सी० केल्कर।
३. उपलब्ध नहीं है।

१९१. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१ नवम्बर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

अंग्रेजीमे कहावत है कि महान् पुरुष एक जैसा ही सोचते है। हम भी तो महान् ही कहलाते हैं अतः विट्ठलभाईके दाह-सस्कारके बारेमे दोनोने एक जैसा ही सोचा।[1] मैंने डाह्याभाईको लिख दिया है। तुम्हारे विचारानुसार मैं कुछ भी प्रकाशित करनेवाला नही हूँ। तुम्हे जो तार मिले हैं उनके बारेमे जो पत्र तुम मुझे लिखोगे मेजरसे[2] पूछकर एक यह पंक्ति लिखना, "जिन लोगोने मुझे सम्वेदनाके तार और पत्र भेजे हैं मेरी ओरसे उन सब लोगोके आभार प्रेस द्वारा माने।" यदि मेजर इसे पास न कर सके तो आई० जी० से पूछवाये और यदि अनुमति मिल जाये तो हम प्रकाशित करेंगे। . . .[3]

नरीमन कल यहाँ आये थे। उन्होने मेरा खासा समय लिया और मैंने दिया। मेरे दरोगाने[4] देने दिया। लेकिन अब तो हम चाहे कितने ही प्रयत्न क्यों न करे, हमें कुछ हासिल होनेवाला नही है।

आज दीनबन्धु आ रहे हैं। खूब घूमे हैं, इसलिए मुझसे खासा समय माँगेंगे और मुझे देना ही होगा। काका का उपवास कल पूरा होगा। वह प्रसन्न हैं। उपवासका उनपर कोई खास असर नही हुआ है। काका को [पेशाबके समय] मेरी तरह जलन नही होती। वे खूब पानी पी सकते है। उसमें नमक पड़ा हो तो भी, सोडा हो तो भी, और ठंडा हो तो भी अथवा गर्म हो तब भी। यदि ईश्वर मुझे यह शक्ति दे दे तो मैं इस उम्रमे भी भणसालीसे[5] प्रतिस्पर्धा करूँ। बादमें उनके जैसा ही पागलपन मुझपर ही चढ आये तो भले आ जाये। वह मनईकी मोटी रस्सीके साथ कमरमे टाटकी लँगोटी डाले रहते हैं। आटा पानीमे घोलकर पीते हैं और घूमते फिरते हैं। कभी-कभी कार्ड लिखकर दर्शन देते है और लिखते हैं कि सच्चा अनुभव तो वे केवल अब प्राप्त कर रहे हैं।

१. २९ अक्टूबर, १९३३ के अपने पत्रमें सरदार वल्लभभाई पटेलने लिखा था कि उन्होंने मित्रोंको सूचित कर दिया है कि एक सत्याग्रहीके नाते दाह-संस्कारके लिए सरकारसे रिहा किये जानेकी माँग करना उनके लिए उचित नहीं है।

२. नासिक जेलके सुपरिंटेंडेंट।

३. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ नहीं दिया है।

४. जमनालाल बजाज।

५. जयकृष्णदास प्रभुदास भणसाली, जो अपने लम्बे-लम्बे उपवासोंके लिए प्रसिद्ध थे।

उपवासके दौरान काकाने कुछ लिखवानेका काम किया है। प्रभुदास उनका अवैतनिक मन्त्री है और काकाके पास गीता-पाठ आदि भी करता है। प्रभुदास उनका पट्टशिष्य है इसलिए काकाको वह अनुकूल बैठा है। कल किशोरलाल और गोमती भी आये। उनके आनेका कारण तो मैं हूँ।

\+ + +[1]

काकाने मित्र-धर्म और पिताके धर्मका अच्छी तरह पालन किया है। . . .[2] अपने घमण्डमें खिंचता ही जा रहा है। लेकिन मैं कोई उसकी आशा छोड़कर नहीं बैठा हूँ। मैं यह अवश्य मानता हूँ कि ठोकर खाये बिना उसकी आँखें नहीं खुलेंगी। तुम जो लिखते हो सो सच है। कायरका ज्ञान उसे दूरतक नहीं ले जा सकता और . . .[3] जैसे हवामें उडनेवाले लडके यदि ज्ञान प्राप्त करे तो उनका यह ज्ञान फाँसीके तख्तेपर चढनेतक भी टिका रह सकता है। ऐसा दिन कहाँसे। मैं मानता हूँ कि काका का शरीर तुरन्त कस जायेगा, चिन्ता न करना। उपवासके दौरान मैंने नीम-हकीमके रूपमें अपने ज्ञानको यूँही नहीं जाने दिया। फलत· काका को उपवासका जो आध्यात्मिक लाभ मिलना होगा सो तो मिलेगा ही, लेकिन शारीरिक लाभ तो मिला ही है। . . .[4] और पण्ड्याको[5] तुमने ठीक मात्रा दी,[6] लेकिन जल्दी असर करनेवाली दवाओंका परिणाम लम्बे समयतक नहीं टिक पाता और उनका रिऐक्शन अर्थात् प्रतिक्रिया अनेक बार भयानक होती है। यह बात मैंने कोई तुम्हारी दवाका दोप बतानेके लिए नहीं लिखी है। यह तो मैंने वस्तुस्थितिका भान करानेके लिए ही लिखी है। महादेवके पत्र आते रहते हैं। वह चारो ओरसे पुस्तकें इकट्ठा किया करता है। किसी-न-किसी दिन ये पुस्तके भी सार्वजनिक पुस्तकालयमें जायेगी न? जेलमें पढ़-पढकर महादेव अन्धा न बन जाये तो गनीमत है। मैं उसे हल्की-सी निषेधाज्ञा भेजनेका इरादा कर रहा हूँ। डॉ० दत्ता [जेलमें] देवदाससे मिल आये हैं। वह समय का ठीक उपयोग कर रहा प्रतीत होता है। वह पढ़ता है, सिखाता है, खेलता है और कातता है। मेरा कार्यक्रम अभी तो इस प्रकार है· इस महीने मध्य प्रान्तमें, बादमें दिल्ली, फिर पजाब, फिर सिंध, फिर राजपूताना, सयुक्त प्रान्त और फिर बगाल, आसाम आदि। अभी तो केवल इतना ही है। इस कार्यक्रममें कदाचित् कुछ परिवर्तन हो और पहले मद्रास जाना पड़े तो आश्चर्य नहीं है। ८ तारीखको यहाँसे रवाना होना है। बादमें मुझे दो-तीन दिनोंके लिए फिर वर्धा तहसीलके दौरेके

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूट गया है।

२, ३ और ४. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिये गये हैं।

५. मोहनलाल कामेश्वर पण्ड्या, खेडा जिलेके एक कार्यकर्ता।

६. सरदार पटेलने अपने पत्रमें (जिसकी चर्चा पहले की गई है) दवाकी मात्राको हिरण्य गर्भ मात्रा कहा था और जेल जानेका सुझाव दिया था।

लिए आना पड़ेगा। देवधरको तुम्हारे पत्रके बारेमें लिखूंगा। राजेन्द्र बाबूको फिर अस्पतालमें ले गये हैं। मुझे लगता है कि अब तो उन्हें वहीं रखा जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ३९-४३

१९२. पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको

१ नवम्बर, १९३३

नेतृत्व छोड़नेकी मेरी वृत्ति तनिक भी कम नहीं हुई है; अपितु दिन-ब-दिन तीव्रतर होती जाती है। लेकिन उसे चाहकर भी नहीं छोड़ा जा सकता, क्योंकि मैं स्वयं उसे लेनेके लिए नहीं निकला था।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १४०

१९३. पत्र: बंगालके गवर्नरको

वर्धा
२ नवम्बर, १९३३

प्रिय मित्र,

हालाँकि आपसे व्यक्तिगत रूपसे परिचित होनेका सौभाग्य मुझे नहीं है, फिर भी मैं जब १९३१ में इंग्लैंडमें था तब सर सैमुअल होरकी मार्फत आपके बारेमें जाननेका सौभाग्य मुझे मिल गया था। उस परिचयके आधारपर मैं संलग्न पत्रोंको[1] आपको दिखानेका साहस करता हूँ। ये एक सम्मानित कार्यकर्ताके पत्र हैं। इन पत्रोंका मुद्दा उन्हींमें स्पष्ट हो जाता है। मेरा खयाल है कि पत्रमें जिस कार्रवाईका विवरण दिया गया है उसका सम्भवतः आप समर्थन नहीं करेंगे। पत्रमें जिस सविनय प्रतिरोधीका जिक्र है वह लेखकका भाई है। इसमें शक नहीं कि सविनय प्रतिरोधी कष्टसहनके लिए तैयार रहता है, लेकिन मेरा ऐसा विचार है कि आज जो आदर्श स्पष्ट रूपसे स्वीकार किया गया है उसके अनुसार अपनेको सभ्य कहनेवाली सरकारें यातना देनेके सारे तरीकोंका बहिष्कार करेंगी।

१. २७ और २८ अक्टूबरके अपने पत्रोंमें सतीशचन्द्र दासगुप्तने अपने भाई क्षितीशचन्द्र दासगुप्त तथा हिजली जेलके दूसरे कैदियों द्वारा जेल-अधिकारियोंको सलाम करनेसे इनकार करनेके फलस्वरूप उनके साथ हुए अमानवीय व्यवहारका वर्णन किया था।

जिस मामलेको आपकी नजरमें लानेका मैंने साहस किया है, उसमें आप निजी दिलचस्पी ले रहे हैं, इस सूचनाके लिए मै आपका आभार मानूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

बंगालके गवर्नर
कलकत्ता

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय

१९४. बातचीत : डॉ० कोंगरसे[1]

२ नवम्बर, १९३३

डॉ० कोंगर : क्या ईश्वरका हाथ केवल भलाईके ही पीछे रहता है या बुराईके पीछे भी?

गाधीजी भलाईके ही पीछे रहता है, लेकिन ईश्वरके हाथमे वह केवल भलाई ही नहीं रह जाती। उसका हाथ बुराईके पीछे भी रहता है, लेकिन फिर वह बुराई बुराई नही रह जाती। "भलाई" और "बुराई" तो हमारी अपनी अपूर्ण भाषामे होते हैं। ईश्वर तो "भलाई" और "बुराई" दोनोसे परे होता है।

प्र० : हमारे प्रत्येक कार्यके पीछे ईश्वरकी इच्छा रहती है, क्या ऐसा नहीं है?

उ० · मान भी ले कि प्रत्येक कार्य के पीछे उसकी इच्छा रहती है तो मनुष्य कह सकता है कि ईश्वर कुछ चीजोकी अनुमति देता है, इच्छा करता है या निषेध करता है। ये सब बाते उसकी "इच्छा" मान ली जाती हैं।

प्र० : आप कहते है कि आपके २१ दिनके उपवासके पीछे ईश्वरीय प्रेरणा थी। आपने 'रेसलिंग' की बात कही हैं। इससे आपका ठीक आशय क्या है?

उ० : ये सब तो अपूर्ण मनुष्य की बकवास है। मनुष्य का ईश्वर के साथ झगड़ना वैसा ही है जैसा किसी बच्चे का अपनी माँके साथ। बच्चा तो माँके साथ अवश्य लड़ता है और जब माँ बच्चेको अपना स्तन दे देती है तो बच्चा कहता है: "मैंने इसे माँसे बलपूर्वक छीन लिया है।"

यहाँपर गांधीजीने अंग्रेजी शब्द "रेसिल" (कुश्ती) और 'रेस्ट' (छीनना) के शब्दकोषमें क्या अर्थ हैं वे बताये।

इस प्रकार जब ईश्वर किसी वस्तुको देता है तो वह खुशी के साथ देता है, बशर्ते कि हम मान ले कि उसे खुशी और दुःख दोनो ही होते हैं। जो व्यक्ति उसके

१. यह रिपोर्ट चन्द्रशकर शुक्लने लिखी थी, जो उस समय गांधीजीके सचिवके रूपमें कार्य कर रहे थे। उन्होंने बातचीतको लिखकर रख लिया था और बादमें इसका विवरण अपनी पुस्तक *कन्वरसेशन्स विद् महात्मा गांधी* में प्रकाशित किया था।

चरणोंमें प्रत्येक वस्तु निछावर कर देता है वह उससे कहता है: "यदि तूने मुझे अमुक वस्तु नही दी तो मै मर जाऊँगा।" वह ईश्वरका विरोध करता है और उसे ललकारता है। लाखो उदाहरण ऐसे होते हैं जहाँ ईश्वर ऐसे मनुष्यो को मृत्युकी अवस्थातक पहुँचने देता है। तव हम यह कहते हैं कि उसने मनुष्यकी अच्छी तरह परीक्षा ले ली है। तथापि यह हमारी अपनी निजी मनोभावना है। यदि मनुष्य किसी तरह चीजोको व्यक्त करनेके ईश्वरीय ढंगको जान सकता तो पता नही वह क्या कहता। हम मूर्ख प्राणी यह समझते है कि उसके सग लडते-झगड़ते हुए हमने अपना बल समाप्त कर लिया है। ईश्वरके साथ न लड़ाई-झगड़ा होता है न छीना-झपटी। यदि ईश्वर निष्पक्ष है तो वह अपने भक्त को पीड़ा नही पहुँचायेगा।

प्र० : ईश्वर निष्पक्ष है या नहीं?

उ० : ईश्वर निष्पक्ष है। शायद वह निष्पक्ष नही, बल्कि दयालु है। क्योकि वह दयालु है इसलिए ही वह निष्पक्ष है। हालाँकि ये सब हमारी दुर्बल भावनाकी ही प्रतिध्वनियाँ हैं। कभी-कभी मनुष्य ईश्वर को उसका देय देनेकी भी बात करता है। लेकिन एक दास अपने स्वामीको क्या दे सकता है? ईश्वरके सामने मनुष्यकी परिस्थिति हमेशा ऋणीकी ही रहती है, ऋणदाताकी नहीं।

प्र० : श्रद्धा आवश्यक है या प्रयत्न?

उ० : वास्तव में श्रद्धा और प्रयत्न दोनों आवश्यक हैं।

प्र० : क्या मनुष्यके सामने अपनी पसन्दका चुनाव करनेका अवसर है?

उ० : मनुष्यको चुननेका अवसर है, लेकिन उसी हदतक जिस हदतक कि जहाज पर सवार किसी यात्रीको है। उसके लिए इतना ही काफी है। यदि हम इसका उपयोग नही करते तो हम लगभग मृतप्राय ही हैं।

प्र० : ईश्वरका एक उद्देश्य है जिसे वह संसारमें कार्यान्वित कर रहा है, क्या ऐसा नहीं है?

उ० : मै इस वातमे यह संशोधन कर देता हूँ कि यह तो मनुष्यका कहना है। ईश्वरका उद्देश्य क्या है यह मुझे नही मालूम, क्योकि मै ईश्वर तो हूँ नहीं। मै तो मनुष्य हूँ। इसलिए मैं ईश्वरको और उसके उद्देश्यको वाणी द्वारा नही बल्कि जीवनके माध्यमसे समझनेका प्रयत्न करता हूँ। मैं इस ससारके करोड़ो लोगोका एक एकांशके रूपमे सामना नही कर सकता। मै उनमें से हर एकके हृदयमे प्रवेश नही कर सकता, क्योंकि वे असंख्य है। लेकिन ईश्वर सर्वशक्तिमान है। जिस प्रकार ब्रह्माण्ड रूपी एकांशके लिए उसका एक निर्धारित उद्देश्य है उसी प्रकार जीवनके प्रत्येक अणुके लिए एक उद्देश्य हैं—मनुष्यके लिए भी और चीटीके लिए भी।

प्र० : क्या यह एक अच्छा उद्देश्य है?

उ० : यह एक अच्छा उद्देश्य है, लेकिन "अच्छा" हमारी सीमित मानवीय भाषामे।

[अंग्रेजीसे]

सिनो-इंडियन जरनल, गांधी मेमोरियल नवम्बर, दिसम्बर, १९४८

१९५. टिप्पणियाँ

रोहतकमें संकट[1]

यह एक दुखद कथा है जिससे प्रभावित होकर दयालुओंको कार्रवाई करनी चाहिए। जो दान सम्पादक, 'हरिजन', सी पाईक्रॉफ्ट्स रोड, ट्रिप्लीकेन, मद्रासके पतेपर भेजा जायेगा उसकी प्राप्ति-सूचना भेजी जायेगी और वह रकम उचित स्थानपर भिजवा दी जायेगी।

मेरा आगामी दौरा

कई हरिजन-सेवकोंने यह प्रश्न पूछा है कि "आपके आगामी दौरेमें जो धन इकट्ठा किया जायेगा, उसका बँटवारा किस तरह होगा?" यह धन इस आदेशके साथ केन्द्रीय बोर्डको सौंप दिया जायेगा कि जिस प्रान्त, जिला, तालुका या शहरमें जितना धन एकत्र हुआ हो उतना धन जहाँतक हो सके, वहीं खर्च किया जाये। यह तो एक सामान्य नियम हुआ। किन्तु मैं आशा करता हूँ कि कुछ स्थानों से बड़ी-बड़ी रकमें दानमें मिलेंगी। इन दानोंका उपयोग तो जहाँ हरिजन-कार्यमें सबसे अधिक आवश्यकता मालूम होगी, वहीं किया जायेगा। इतना तो साफ समझ लेना चाहिए कि जिस जगहपर जो धन इकट्ठा किया जाये वहीं उसे खर्च करनेका अगर कोई सख्त नियम बना दिया जायेगा तो वह उद्देश्य ही मारा जायेगा जिस उद्देश्य से कि धन-संग्रह किया जाना है। निस्सन्देह हर जगह स्थानीय कार्यकर्त्ता या दाता यह तो मुझे बतायेंगे ही कि उस धनका उपयोग किस प्रकार किया जाये।

किसी कार्यकर्त्ता या दाताको इस बातसे डरनेकी आवश्यकता नहीं है कि संकलित धनका उनके खास जिलेमें या अच्छेसे-अच्छे तरीकेसे उपयोग नहीं किया जायेगा। उन्हें मालूम होना चाहिए कि हरिजन-सेवक-संघका केन्द्रीय बोर्ड हिसाब-किताब बड़े अच्छे ढंगसे रखता है और सारा हिसाब बराबर जाँचा जाता है। और मेरा विश्वास है कि वह नियमित रूपसे प्रकाशित भी होता रहता है।[2]

स्व० विट्ठलभाई और हरिजन

अखबारोंमें श्री विट्ठलभाई पटेलको श्रद्धांजलि देते हुए[3] मैंने जो कहा उसमें एक बात तो छूट ही गई जो नहीं छूटनी चाहिए। सन् १९१७ की गोधराकी राज-

१. पंजाबके रोहतक जिलेके, जहाँ सितम्बर १९३३ में भारी वर्षाके कारण २१,००० घर तबाह हो गये थे, हरिजनोंके पुनर्वासके लिए हरिजन सेवक संघ द्वारा खोले गये कोषमें धन देनेके हेतु अमृतलाल वि० ठक्करने जो अपील निकाली थी, यह टिप्पणी उसीमें संलग्न थी; देखिए "पत्र: अमृतलाल वि० ठक्करको", १०-१०-१९३३ भी।

२. यहाँ तकका अंश *हरिजन* में से अंग्रेजी से लिया गया है। इसके बादका अंश *हरिजनबन्धु* में उपलब्ध मूल गुजराती से अनुवाद करके लिया गया है।

३. देखिए "श्रद्धांजलि: विट्ठलभाई पटेलको", २४-१०-१९३३।

नीतिक परिषद्के अवसरपर विट्ठलभाईको मैंने हरिजन वस्तीमें देखा था। वह दृश्य कभी भुलाया नहीं जा सकता। जैसाकि हुआ करता है, राजनीतिक परिषद्के साथ-साथ गोधरामें दूसरे सम्मेलनोंका आयोजन किया गया था। उनमें एक विश्व सुधार सम्मेलन भी था। उसमें एक प्रस्ताव हरिजनोंके सम्बन्धमें था। मैंने परिषद्में कहा कि जहाँ अँगुलियों पर गिनने लायक भी हरिजन मौजूद न हों, वहाँ उस प्रस्तावका रखना निरर्थक ही है। इससे यह अच्छा होगा कि रातको हरिजन-वस्तीमें जाकर वह प्रस्ताव पास किया जाये। सभाको यह बात पसन्द आ गई। हरिजन-वस्ती सवर्ण हिन्दुओंसे खूब भर गई। गोधराके इतिहासमें यह बात अपूर्व थी। तिल रखनेको जगह न थी। अब्बास साहब, उनकी बेगम साहिबा वगैरा तो थे ही। पर वहाँ मैंने एक दाढ़ीवाले भाईको कफनी, धोती और साधुओं जैसा कनटोप लगाये देखा। इस अजीव भेसमें विट्ठलभाई को इससे पहले मैंने कभी नहीं देखा था। इसलिए मैं उन्हें झटसे न पहचान सका। पर जब पहचाना तो हम एक-दूसरेसे लिपट गये और मुक्त कंठसे हँसे। इस भेसमें विट्ठलभाई का एक नाटकीय स्वांग तो था ही, किन्तु इसके अन्दर उनकी सादगी और जन-साधारणमें घुल-मिल जानेकी एक रुचि थी। वहाँ श्री विट्ठलभाईकी उपस्थितिसे मुझे उनके हरिजन-प्रेमका परिचय मिला। और फिर ज्यों-ज्यों उनका अधिक अनुभव मुझे होता गया, मुझे विश्वास हो गया कि उनकी हरिजन बस्तीमें उस दिनकी उपस्थिति शुद्ध हार्दिक थी।

उनके अन्दर छुआछूतके लिए जरा भी जगह न थी; ऊँच-नीचका भाव भी उनमें नहीं था। उनका दृढ़ विश्वास था कि जो अधिकार या पद सवर्ण हिन्दुओंको प्राप्त हो सकें, वे सबके-सब हरिजनोंको भी मिलने चाहिए। और ऐसा ही उनका व्यवहार भी था। इसीसे मैं आशा करता हूँ कि आगामी ९ नवम्बरको जब उनके शवका अग्नि-संस्कार बम्बईमें होगा, उस दिन समस्त जनताके आँसुओंमें हरिजनोंकी अश्रुधारा भी सम्मिलित रूपसे बहेगी।

हरिजन, ३-११-१९३३ और **हरिजनबन्धु**, ५-११-१९३३

१९६. उड़ीसाकी पुकार

१७ अक्टूबरको प्रातःकाल हम खण्डायता गये। घरघराते हुए जोरके पानीने किनारोंको तोड़ डाला था, और अनेक घरोंको ढहाती हुई मीलों लम्बी एक नई नदी ही वहाँ बन गई थी। बचे हुए बहुत ही थोड़े घर दिखाई देते थे। मारवाड़ी-संघ यहाँ काम कर रहा है। यह संघ २५ गाँवोंके ३५०० आदमियोंको भोजन पहुँचा रहा है और प्रतिव्यक्ति सात सेर चावल माहवारी दिया जाता है। (कटकका डेढ़ सेर चार पौंडके बराबर होता है)। सूती चादरें और ढोरोंके लिए भूसा भी संघ बाँट रहा है। इस तरह इन लोगोंपर संघने ५००० रुपये खर्च किये हैं। एक दूसरे केन्द्रमें संघ २७ गाँवोंके ५,००० बाढ़-पीड़ितोंकी सेवा-सहायता कर रहा है। यहाँ फी आदमीको ५ छटांक और एक तोला चावल मिलता है। इतनी थोड़ी-सी सहायताके लिए भी बड़ी [illegible]

मचती है। सहायताके दो मुख्य केन्द्र कटकमे और दो पुरीमें खोले गये हैं। वहाँ लगभग १५००० रुपये खर्च किये जा चुके हैं। खडायतासे हम खडरदा गये। हरिजन-बस्तियोके आधे घर यहाँ मिट्टीमे मिल गये है। जो बच गये है, वे जर्जर हो गये हैं। वहाँ हमे एक बहन मिली। उसके आधे तनपर ही कपड़ा था। बेचारीका कोई आसरा नही था। वह कोई काम न मिलनेकी शिकायत करती थी। पास ही एक घरमे हमने एक बहन गीले फर्शपर पड़ी हुई देखी। वह तेज बुखारसे जल रही थी। जाडेका मौसम आ रहा है। इन गरीबोको कपडोकी तो जरूरत होगी ही। खडरदासे हम लोग झारपाडा गये। वहाँ हमने आठ स्वयसेवकोको अत्यन्त कठिन परिस्थितिमे काम करते हुए देखा। रोगियोके लिए वे दवादारूका प्रबन्ध करते है और जिन मरीजों की हालत बहुत ही असाध्य है उन्हे टिकानेकी भी उन्होने किसी तरह कुछ व्यवस्था कर ली है। इन बेचारे रोगियोको किस प्रकारकी सेवा-शुश्रूषा मिल सकती है, उसकी आप कल्पना कर सकते है। यहाँ बालिग व्यक्तियोको तो हर सप्ताह चार पौड चावल (जिसकी कीमत ६ पैसे होती है) दिये जाते हैं और नाबालिगोंको दो पौड। समर्थ और स्वस्थ लोगोको कुछ नही दिया जाता। अत' सहायता मुख्यतया औरतो और बच्चोको ही मिलती है। मै नही समझता कि दयावान धर्मभीरु व्यक्तियोके धनका इस समय इससे अधिक अच्छा कोई उपयोग हो सकता है। पर आप कही इससे यह कल्पना न कर ले कि जो सहायता दी जा रही है वह किसी भी दृष्टिसे पर्याप्त है। यदि और पैसा हो तो और भी केन्द्र खोले जा सकते हैं। प्रति माह चालीस से लेकर पचास हजार रुपये तकका उत्तम-से-उत्तम उपयोग किया जा सकता है, क्योकि ५०,००० रुपयेसे, आठ आने माहवारके हिसाबसे भी, सिर्फ एक लाख आदमियोंकी ही सहायता की जा सकती है। मगर बाढ़-पीडितोंकी संख्या तो इससे कहीं अधिक है।

श्री हरखचन्द मोतीचन्दके पत्रोंके कुछ अंशोका उल्था मैंने ऊपर दिया है। उन्हें स्थानीय बाढ़-सहायता समितिकी मदद करनेके लिए ही उडीसा भेजा गया है। इस समितिका प्रधान-पद दीनबन्धु एन्ड्रयूजने स्वीकार कर लिया है। ठक्कर बापाने मुझे यह मीठी झिडकी दी है — और ऐसा करनेका उन्हे अधिकार है कि :

> बेचारे बाढ़-पीड़ितोंकी संकट-कहानियाँ आप 'हरिजन' में क्यों नहीं प्रकाशित करने देते? उनकी दशा हरिजनोंसे कुछ अधिक अच्छी नहीं है। और अगर आप हरिजनोंकी ही बात कहते हैं, तो उनमें आपके हजारों हरिजन भी बाढ़-पीड़ित निकल आयेंगे। अगर आप देवदास-लक्ष्मीके विवाह-वर्णनके लिए अपने पत्रमें कुछ स्थान दे सकते हैं, तो उड़ीसाके उन बाढ़-पीड़ितोंके कष्टोंकी ओर आपका ध्यान जाना ही चाहिए। उड़ीसाके लिए आप एक हृदयस्पर्शी अपील निकाल ही चुके हैं। अगर आप समय-समयपर 'हरिजन' में उड़ीसाके बाढ़-पीड़ितोंकी हालत छापते रहें, तो इसमें मर्यादाका उल्लंघन नहीं होगा।

'हरिजन' में देवदास-लक्ष्मीके विवाहकी चर्चा हरिजन-कार्यके हितार्थ आवश्यक थी, इस बातको भूल जानेके लिए ठक्कर बापाको क्षमा करना होगा। पर प्रेम अन्धा होता है; और ठक्कर बापा समस्त पीड़ित मानवसमाजके प्रेमी है, फिर वे पीडित जन ससारके चाहे किसी भी भागके हो। सर्वशक्तिमान प्रभुने जो एक सीमा निर्धारित कर दी है, उस हदतक ही उनका प्रेम सीमित है। इसीलिए वह पुकार-पुकार कर कहते हैं: "देखिए, पंचमहालके मेरे भीलोके लिए उस दिन मेरे कार्यकर्त्ताओको कितना पैसा मिल गया था? फिर उन भीलोंकी अपेक्षा एक पूरे प्रान्तकी कही अधिक पीडित जन-संख्याके लिए आपको उससे भी अधिक धन क्यों नही मिल सकता।" वह ठीक कहते हैं, और मैं अत्यन्त नम्रतापूर्वक इस लेखके पाठकोसे सहायताकी अपील करता हूँ। इसमे कोई सन्देह नहीं कि वहाँके लोग संकटमें हैं। मैं सदासे मानता आया हूँ कि उड़ीसा भारतका अत्यन्त असहाय और दरिद्र देश है। पुण्योपार्जनके लिए सहस्रो तीर्थ-यात्री पुरीके प्राचीन मन्दिरका दर्शन करने जाते हैं। यात्रियोमे सैकडो ही व्यक्ति इतने धनी होते हैं कि वे भूखोंकी भूख शान्त कर सकते हैं और नंगोको कपडे पहना सकते हैं। समय बेशक खराब है, पर धनवानोंके लिए यही उपयुक्त अवसर है कि वे अपने सुख और भोग-विलासकी जिन वस्तुओको अभीतक आवश्यक मानते रहे हैं उनका त्याग करके, ईश्वरने उन्हे जो धन प्रदान किया है उस धनपर असहाय दीन-दरिद्रोंकी सेवा-सहायता करते हुए अपना उचित अधिकार स्थापित कर ले।

१९१५ में जब मैं भारत लौटा तभीसे मुझे ऐसा लगता है मानो देशकी सारी मुसीबत और बेबसी उड़ीसामे ही सिमटकर आ गई हो। बम्बईकी सहायता समिति भी वहाँ काम कर रही है, पर बम्बईके नागरिकोंसे मैं कहूँगा कि उनका उद्योग तो बहुत ही अल्प है। यह लेख लिखते हुए मुझे मालूम हुआ है कि बम्बईने सिर्फ १२,००० रुपये ही दिये हैं। भूख और वस्त्रहीनताकी स्थिति उत्पन्न हो जानेपर बम्बईने कभी खराब समयकी दलील दी हो, ऐसा कोई प्रसंग मुझे याद नही आता। जब बम्बईवासियोके कानमे सहायताकी पुकार गूँजने लगती है, तो वे अपने सिनेमा और थियेटर-जैसे मनोरंजनके स्थानोंमें भी बेचैन हो उठते हैं। पहलेके मुकाबले आज उन्हें कम उद्योग नही करना चाहिए। और भारतके अन्य प्रान्तोके भी धनवान क्यो न जाग पड़े? दिल खोलकर दान देनेमे बम्बईवालोंके साथ वे क्यो न बाजी लगा दे? जो दान सम्पादक, 'हरिजन', पाईक्रॉफ्ट्स रोड, ट्रिप्लीकेन, मद्रासके पतेपर भेजा जायेगा, उसकी प्राप्ति-सूचना पत्रमे प्रकाशित की जायेगी, और वह रकम उचित स्थानपर भिजवा दी जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-११-१९३३

१९७. क्रूरताकी दो कथाएँ

इस पत्रमे प्रति सप्ताह हरिजन-कार्यका सुस्थिर प्रगतिके सुखद समाचार प्रकाशित हुआ करते है। पर यह आनन्द हरिजनोके प्रति किये गये उन अमानुषी अत्याचारोसे ढँक जाता है, जिनकी खबरें समय-समय पर प्रकाशमे आती रहती हैं। गुजरातके खेडा जिलेमे समरखा नामका एक गाँव है। खबर आई है कि वहाँके सवर्णोने ईसाई हरिजनोंकी फसल इसलिए जला दी कि उनमे से एक या एकाधिक लोगोने एक सार्वजनिक कुएँसे पानी भरनेका साहस किया था। सुना है कि अदालतमे यह मामला चल रहा है।

अहमदावादके धोलका ताल्लुकाके एक गाँवमे हरिजनोको चाबुकोसे पीटे जानेके समाचार आये है, जिनमे से दो तो सख्त घायल हुए है। कारण यह बताया जाता है कि एक हरिजनने सार्वजनिक तालावमे नहानेकी धृष्टता की थी।

इस प्रकारके सिर्फ ये ही दो मामले नही है। बहुत सगीन होनेके कारण ही ये मामले प्रकाशमे आये है। हमे बहुत-से उन छोटे-छोटे अन्यायोका तो पता ही नही है, जो निरपराध हरिजनो पर प्राय. होते रहते है, और सो भी सिर्फ इसलिए कि वे कानूनसे स्वीकृत मानवीय अधिकारोका उपयोग करते है।

इन घटनाओंसे सनातनियोकी आँखे खुल जानी चाहिए। मै एक भी ऐसे सनातनीको नही जानता जिसने इस प्रकारकी बर्बरताका समर्थन किया हो। इन दुर्घटनाओको रोकने, या इनसे निबटनेके लिए वे चाहे तो सुधारकोंके साथ काम करे, पर उन्हे खूब प्रभावपूर्ण रीतिसे काम करना चाहिए।

हरिजन-सेवकोंका कर्त्तव्य स्पष्ट है। जब आवश्यक ही हो जाये, तो अदालत तक ऐसे मामले ले जानेमे वे संकोच न करें। पर ऐसा करनेसे पहले उन्हे इस बातकी पूरी कोशिश करनी चाहिए कि अन्याय करनेवालोको यह भान करा दे कि उन्होने अन्याय किया है और उस अन्यायकी यथेष्ट क्षतिपूर्ति करनेके लिए भी उन्हे राजी करें। मेरा विश्वास है कि ऐसा किया जा सकता है। उदाहरणके तौरपर, यदि समरखा गाँवमे नडियादके, और जरूरी हो तो अहमदाबादके भी, खास-खास व्यक्ति जाये और उन अत्याचारियोंको दलीलसे समझाये तो ऐसा किया जा सकता है। ये लोग अपने पूर्वजोंके समयसे यही समझते चले आ रहे है कि सवर्ण हिन्दू लोग हरिजनोंके साथ मनुष्यताका नहीं, बल्कि जड़ सम्पत्तिका-सा बरताव कर सकते है। मनुष्यके मानवोचित अधिकारोके विषयमे जो घोर अज्ञान फैला हुआ है वह तभी दूर हो सकता है, जब इस पर लोकमतका प्रकाश पड़ेगा। मुझे आशा है कि कोई हिन्दू यह खयाल नही करता होगा कि ईसाई हरिजनोके लिए उसे चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नही है। जो अधिकार सवर्ण हिन्दुओको प्राप्त है, निश्चय ही वे ही सार्वजनिक

अधिकार हिन्दू-हरिजनोंको प्राप्त है, और इसीलिए वे ही सार्वजनिक अधिकार ईसाई हरिजनोंको भी प्राप्त है। सवर्ण हिन्दू यदि सार्वजनिक संस्थाओंका उपयोग नहीं करना चाहते तो वे केवल अपने ही उपयोगके लिए अपने खर्च पर दूसरी सस्थाएँ खड़ी कर सकते हैं। भिन्न-भिन्न जाति और सम्प्रदायवाले चदा इकट्ठा करके अपने लिए पृथक पाठशालाएँ और अलग अस्पताल बनाते हैं। इसमें कोई आपत्ति नहीं करता। पर जो वस्तु जन-साधारणकी है, उसे उपयोगमें लानेसे कोई किसीको कैसे रोक सकता है? फिर यह भी स्मरण रहे कि इन ईसाई हरिजनोंकी सृष्टिके लिए हम ही जिम्मेदार हैं। सर्वथा अप्रत्याशित स्थानोंमें भी अस्पृश्यताका पाप फैल गया है। सदियोंसे जिस पापको हम आसरा देते आ रहे हैं, उसके लिए अगर अब हमें दण्ड भोगना पड़े, तो हमें दुखी नहीं होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-११-१९३३

१९८. चर्मालयकी जरूरत नहीं है?

एक सज्जनने नीचे लिखा प्रश्न उठाया है:

> **हरिजन-सेवाके लिए समर्पित आश्रममें हरिजन-सेवक-संघका अखिल भारतीय अथवा प्रान्तीय बोर्डका कार्यालय रखा जाये, यह बात मैं समझ सकता हूँ। और वहाँ छात्रालय और एक आदर्श हरिजन-बस्ती बनानेकी योजना भी समझ सकता हूँ। किन्तु चमड़ेका कारखाना वहाँ खोलना मुझे ठीक नहीं लगता। और अगर वहाँ चर्मालय ही रखना है, तो फिर भंगीका काम और सफाई सिखानेका भी एक विभाग क्यों न खोला जाये? चमड़ा कमानेका काम अगर हरिजनोंका है, तो वह भी तो उन्हींका काम है।**

यह तो एक मिथ्या हेतुका तर्क है। लेखकने चर्मालय रखनेका हेतु नहीं समझा। उसके रखनेका उद्देश्य यह है कि चमड़ा कमानेके काम को एक महान् राष्ट्रीय उद्योग बनाया जाये। चमड़ेका रोजगार बहुत बड़ा है। जो कच्चा चमडा हम हिन्दुस्तानसे बाहर भेज देते है, उसे अपने देशमें ही रखना चाहिए और उससे अपनी आवश्यकता की चीजें बनानी चाहिए। इससे अवश्य ही अपने देशकी सम्पत्तिमें बहुत वृद्धि होगी। हजारों हरिजन आज चमडा कमानेके काममें लगे हुए हैं। यह एक इज्जतका धन्धा है, और इस रोजगारमें बहुत लाभ है। इसका अगर अच्छी तरहसे सगठन किया जाये, तो यह और भी अधिक लाभदायक हो सकता है। लेकिन गाँवोंमें तो चमडा सिझानेका काम बडे ही बेढंगे तरीकेसे किया जाता है। इसके अलावा उसकी तमाम क्रियाएँ सफाईके साथ और वैज्ञानिक रीतिसे नहीं की जाती। यदि वे वैज्ञानिक पद्धतिसे की जाती, तो ढोरोंकी खाल उतारने व सिझानेके प्रति लोगोंके मनमें मे जो घिन है, वह न रहती। इसलिए इस नई सस्थामें चमड़ेका कारखाना खोलनेके पीछे यह विचार है

कि इस धन्धेको प्रतिष्ठित बनाया जाये और अभी इसमें जो गन्दगी और वेढगापन नजर आ रहा है, वह सब दूर कर दिया जाये। फिर यह भी बात नही है कि इस कामको वहाँ केवल हरिजन ही करेगे। वे लोग गैर-हरिजनोके साथ-साथ यह काम करेगे। यह काम सीखनेके लिए कोई मजबूर नही किया जायेगा, और यह तो कोई कह ही नही सकता है कि इस कामको वैज्ञानिक रीतिसे या अधिक स्वच्छताके साथ करनेका ढंग सीखनेके लिए कोई भी हरिजन तैयार नही होगा। अन्तमे एक बात और कह देना चाहता हूँ। वह यह कि मैंने तकनीकी विभागकी जो चर्चा की है, वह तो एक उदाहरणके रूपमे है। अगर सब काम ठीक-ठीक चला, तो और भी अनेक विभाग खोल दिये जायेगे। सफाई करनेकी अच्छीसे-अच्छी पद्धति ढूंढ निकालने-का भी एक विभाग होगा, जहाँ सब लोग एक साथ भाग ले सकेगे। सफाईके प्रति हमारी लापरवाहीके कारण ही हम लोगोमे बीमारियाँ बढी है और गन्दी आदते जड पकड चुकी है। मुझे तो आशा है कि वहाँ ऐसा एक भी रोजगार या धन्धा उपेक्षा की दृष्टिसे नही देखा जायेगा जो हरिजनोके लिए लाभदायक हो, फिर भले ही वह धन्धा उन्होने आजतक कभी किया हो या न किया हो।

[अंग्रेजीमे]
हरिजन, ३-११-१९३३

१९९. पत्र : अगाथा हैरिसनको

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
३ नवम्बर, १९३३

प्रिय अगाथा,

बंगालके गवर्नरको भेजे गये अपने पत्र[1] की एक प्रति मैं इस पत्रके साथ सलग्न कर रहा हूँ। गवर्नरको लिखे पत्रके साथ भेजे गये संलग्न पत्रोके लेखक श्रीयुत सतीशचन्द्र दासगुप्त सम्मानित और हमारे एक जाने-माने सहयोगी है। उनमे अहिसाकी भावना कूट-कूट कर भरी हुई है, वह दिखावटी बिलकुल नही है। और जिन सच्चे लोगोसे मिलनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है उनमे से वे एक है। हिजली जेलकी प्रथाका उन्हे पहले-पहल तब पता चला जब उन्होने यह जाना कि उनके भाईको, जो एक सविनय प्रतिरोधी है, हथकडियाँ पहना कर हाथ ऊपर रखते हुए खडा रहनेकी सजा दी गई थी। लोहेकी बेडियाँ हथकडियोंसे अलग होती है। लोहे की बेडियाँ पैरोके लिए होती है।

इस समय तो जो बाते मेरे ध्यानमे आती है उनके सम्बन्धमें कोई सार्वजनिक आन्दोलन चलानेका मेरा इरादा नही है। मैं ऐसी चीजे अधिकारियोको सौप देता

१. २ नवम्बर, १९३३ का।

हूँ। इसलिए जबतक मैं तुमसे कहूँ नहीं तबतक इस प्रकारका कोई पत्र-व्यवहार तुम्हारी ओरसे भी नहीं छपना चाहिए। इसके अलावा इस प्रकारकी सूचनाका उपयोग करनेकी तुम्हें मनाही नहीं है।

सीमा प्रान्तसे प्राप्त एक पत्रकी प्रति भी मैं तुम्हें भेज रहा हूँ। मुझे भेजे गये सतीश बाबूके पत्रमें हिजली जेलमें होनेवाले व्यवहारका जो वर्णन किया गया उससे भी कहीं ज्यादा खराब व्यवहारकी कहानी इस पत्रमें कही गई है। स्वाभाविक है कि सीमा प्रान्तसे प्राप्त सूचनाकी सत्यताको कोई भी प्रमाणित नहीं कर सकता। लेकिन फादर एल्विनने वहाँकी हालतका जैसा उद्घाटन किया है उसके बाद पत्रमें यदि वहाँकी स्थितिको कुछ घटाकर ही बताया गया हो तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा। यह पत्र मुझे अभी-अभी मिला है और मैंने अभी यह निश्चय नहीं किया है कि मैं उसका यहाँ पर कैसे उपयोग करूँ।

सी० एफ० एन्ड्रयूज यहींपर हैं।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७३) से।

२००. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

३ नवम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मेरी अपनी तो यह राय है कि सीमा प्रान्तसे मिले पत्रमें जिस नृशंसताका उल्लेख किया गया है उसपर निजी स्तरपर कार्रवाई करनी चाहिए तथा अधिकारियोंको इससे कम क्रूर साधनोंको अपनानेके हेतु प्रेरित करनेके लिए हमें सारे उपायोंको उपयोगमें ले आना चाहिए। मैं एन्ड्रयूजसे सीमा प्रान्त वाले पत्रपर कार्रवाई करनेको कह रहा हूँ। और यदि तुम्हें कोई आपत्ति न हो तो मैं चाहूँगा कि तुम यह टिप्पणी सर तेजबहादुरको दिखा दो और देखो कि उनका क्या कहना है और वह इस मामलेमें कुछ करनेको तैयार हैं या नहीं।

हिजलीमें क्या-कुछ हो रहा है इस सम्बन्धमें बंगालके गवर्नरको भेजे गये अपने पत्रकी एक प्रति मैं इस पत्रके साथ संलग्न कर रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

२०१. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

वर्धा
४ नवम्बर, १९३३

सुज्ञ भाईश्री,

दीनबन्धु एन्ड्रयूज यहीं हैं। आज जायेंगे और ११ तारीखको इंग्लैंडके लिए रवाना होंगे। आपने विलायतमें उनसे शान्तिनिकेतनके लिए ५,००० रुपये देने अथवा दिलवानेके लिए कहा था, लेकिन एन्ड्रयूज इसकी माँग क्योंकर करें? यदि यह रकम भेजी जा सके तो भेजना। गुरुदेवको पैसोंकी हमेशा तंगी रहती है और यदि उन्होंने आपके ५,००० रुपये मिलने की आशामें कोई योजना बनाई होगी तो उसे छोड़ना पड़ेगा और इससे वे परेशान होंगे। आशा है, आपकी तबीयत अच्छी रहती होगी। एन्ड्रयूजने मुझे आपका पत्र पढ़वाया। मेरी चिन्ता क्या की जाये? ईश्वरको यदि मेरा दौरा पूरा करवाना होगा तो वह मेरे शरीरकी रक्षा करेगा। उससे अच्छा चौकीदार अथवा डाक्टर कहाँ ढूँढ़ने जाऊँ?

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९३०) से। सी० डब्ल्यू० ३२४६ से भी; सौजन्य: महेश पी० पट्टणी

२०२. पत्र : मणिबहन पटेलको

४ नवम्बर, १९३३

चि० मणि,

तेरा पत्र मिला। डाह्याभाई अच्छी तरह जूझ[1] रहा है। जहाँ गन्दगी अथवा कृत्रिमता दिखाई दे वहाँ वह भले ही जूझे। तेरी देखभाल ठीक तरहसे हो रही होगी। मुझे नियमपूर्वक लिखती रहना। बाबो यहाँ आ गया, यह तो बहुत अच्छा हुआ। मेरे जानेके बाद बा [जेल जानेके लिए] निकलेगी। इसके लिए हमें तैयारी तो कर ही लेनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ ११०

१. मणिबहनके अनुसार गांधीजीने उक्त बात विट्ठलभाईके दाह-संस्कारके सम्बन्धमें क्या व्यवस्था की जानी चाहिए, इसको लेकर कही थी।

२०३. उत्तर: पत्र-लेखकोंको[1]

[५ नवम्बर, १९३३ से पूर्व]

हम कमसे-कम क्या कर सकते हैं?[2]

सेवाका भी मोह हो सकता है। मोहमात्रका त्याग करनेसे ही सच्ची सेवा हो सकती है। क्या अपंग मनुष्य भक्ति नही कर सकते? सेवा मनसे भी की जा सकती है। एक-दो हरिजन बालाओंको घरमे रखो और उनका पालन पोषण करो।

स्वप्नदोषका उपाय

दूध, रोटी और उबली हुई सब्जी खानी चाहिए, मिर्च मसाले आदि छोड़ने चाहिए। खुली हवामें परिमित व्यायाम करना चाहिए। राष्ट्र-पोषक उद्योगमे तल्लीन रहना और रामनाम लेना चाहिए। इतना किया जाये तो स्वप्नदोषके दूर होनेकी सम्भावना है।

यह रोग कैसे दूर हो?

तुम्हारा रोग उपचार-साध्य है, ऐसा मेरा विश्वास है। तुम्हें पौष्टिक खुराक और औषधियोंका त्याग करना चाहिए? यदि तुम घरसे बाहर खुली हवामें रहोगे और ताजा दूध, ताजे फल, हरी सब्जियाँ और रोटी खाओगे, जितना शरीरको माफिक आये वैसा परिमित व्यायाम करोगे, और जिससे विकार उत्पन्न हो ऐसा साहित्य नहीं पढ़ोगे, सिनेमा और नाटक नही देखोगे तो तुम अच्छे हो सकोगे।

एकाग्रचित्त कैसे हुआ जाये?

एकाग्रचित्त होनेका सबसे अच्छा उपाय है जो शारीरिक काम किया जाये उसमे तन्मय हो जाना; और उसे अच्छेसे-अच्छा करनेका प्रयत्न करनेसे उसमें तन्मयता आ ही जाती है।

ईश्वरके नामोंमें जिसका हमे अभ्यास हो उसे तो सबसे अधिक उपयोगी समझना चाहिए। मुझे तो रामनाम बहुत ही प्रिय है।

१. यह लेख "डाकके थैलेसे" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२. यह एक ऐसी स्त्रीको लिखा गया था जो अस्वस्थ रहती थी और जो अस्वस्थताके कारण हरिजनोंकी सेवा करनेमें असमर्थ होनेकी वजहसे दुखी रहती थी।

अन्तर्नाद क्या है?[1]

तुम जो कहते हो वह तात्त्विक दृष्टिसे ठीक है, लेकिन अर्न्तर्नाद किसे कहा जाये, यदि इसकी तुम्हे स्पष्ट कल्पना न हो तो इस सिद्धान्तको व्यवहारमे नही उतारा जा सकता। सत्यके यथार्थ ज्ञानके साक्षात्कारको ही मै अन्तर्नाद मानता हूँ।-और चूँकि हमें सत्यका सम्पूर्ण दर्शन हो नही पाता, तथा हम जिस सत्यको देखते है वह अपूर्ण होता है, इसलिए हम जगतके ऋषियोको अपना मार्गदर्शक मान लेते हे और उनका अनुकरण करने लगते है। सत्यका साक्षात्कार किया जा सके, इसके लिए स्पष्ट नियम बनाये गये है, और उनका पालन करनेसे ही सत्यके दर्शन किये जा सकते है। कहनेका तात्पर्य यह कि जिस तरह भूमितिकी शिक्षा ग्रहण किये बिना भूमितिका ज्ञान प्राप्त नही हो सकता उसी प्रकार आवश्यक साधना किये बिना किसीको अन्तर्नाद सुनाई दे सकता है, ऐसा नही कहा जा सकता। अतएव मेरी व्याख्याके अनुसार खूनी अपने खूनका बचाव अन्तर्नादकी दुहाई देकर नही कर सकता।

उपवासकी मर्यादा[2]

मेरी दृढ़ मान्यता है कि निजी स्वार्थके कारण किसीको कतई उपवास नही करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति अपने दुखके लिए दूसरोके सामने उपवास करने लगे तो सार्वजनिक जीवन अस्त-व्यस्त हो जाये। इसलिए इस भाईको समझाकर उसका उपवास तुड़वा देना चाहिए।

करोड़ों लोगोंका विचार करो[3]

धर्मका पालन करने वाला विवशताका अनुभव नही करता। कर्ज लेकर दवा-दारूमें पैसे खर्च नही किये जाने चाहिए। यदि तुम करोड़ो लोगोके साथ अपनी तुलना करोगे तो तुम्हे अपनी स्थिति दूसरोसे हजार गुना बेहतर लगेगी। इस समय तुम पर जो आर्थिक सकट आ पडा है यदि तुम उसे सहन करनेकी शक्ति का विकास कर लोगे तो सारा दुख, सुखमे परिवर्तित हो जायेगा। आठ व्यक्तियोमे से जो मजदूरी करने लायक हो उसे मजदूरी करनी चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ५-११-१९३३

१. एक पत्र-लेखकने गांधीजीसे पूछा था, क्या हरएक व्यक्तिको आपका अनुकरण करनेका और अपने अच्छे-बुरे सभी कार्योंके पक्षमें 'अन्तर्नाद' की दुहाई देनेका अधिकार नहीं है?

२. यह उत्तर एक व्यक्तिके मित्रको दिया गया था जो अपनी नौकरीसे हाथ धो बैठा था और उसे दुबारा हासिल करनेके लिए उपवास कर रहा था।

३. यह एक ऐसे पत्र-लेखकके प्रश्नके उत्तरमें दिया गया था जिसकी आर्थिक स्थिति खराब थी और जिसने इस सम्बन्धमें गांधीजीसे सलाह माँगी थी।

२०४. एक कार्यकर्त्ताकी समस्या

एक हरिजन-सेवकने अपने मामाके श्राद्धपर मिली एक सोने, रुद्राक्ष तथा मूँगेकी बनी दोहरी माला तथा साढ़े तेरह रुपये हरिजन-सेवाके लिए भेजे हैं। इन्हे भेजते हुए उक्त भाईने लिखा है:[1]

इसका संक्षिप्त और सीधा उत्तर यह है कि मनुष्यको किसीको सन्तोष प्रदान करनेके लिए अपने सिद्धान्तके विरुद्ध कोई काम नही करना चाहिए। हमसे यदि कोई व्यक्ति कुछ काम करवाना चाहे और यदि हमें साफ तौरपर यह लगे कि वह काम हमारे सिद्धान्तके विरुद्ध है तो हमें किसीके आग्रहके आगे कदापि नही झुकना चाहिए।

लेकिन मेरे इस उत्तरसे प्रश्नकर्त्ताको सन्तोष नही होनेवाला, सो मै जानता हूँ। समस्त मानसिक दुर्वलताओंका मूल एक ही होता है और वह है ईश्वरके प्रति हमारा अविश्वास। मुँहसे ईश्वरका नाम लेना अथवा रूढ़िके वश होकर देवदर्शन इत्यादि करना हमारी आस्तिकता का चिह्न नही है। ईश्वरके प्रति विश्वास हृदयगत वस्तु होनी चाहिए और यह बात जिसके हृदयमें पैठ गई हो उसे अन्य किसीको सन्तुष्ट करनेकी कोई जरूरत नही होती। जिसने ईश्वरको सन्तुष्ट किया वह जीत गया और जिसने उसे नही पहचाना वह हजारोंको सन्तुष्ट करनेके बावजूद हार गया है, क्योंकि एक-एक व्यक्तिको सन्तुष्ट करनेके लिए मनुष्यको अपने-आपको खोना पड़ता है। ईश्वर अर्थात् अन्तरात्मा, क्योंकि ईश्वरके सम्बन्धमे ऐसी धारणा है कि वह कण-कण में व्याप्त है और यह कोरी धारणा नही है बल्कि सिद्ध की हुई चीज है। कोई इसे ईश्वर नामसे न जानकर प्रकृतिके नामसे जानता है। कोई इसे महाशक्तिके नामसे पहचानता है। आधुनिक वैज्ञानिक भी स्वीकार करते है कि प्रत्येक अणुमें छिपी ऐसी कोई शक्ति है जिसके आधार पर यह संसार टिका हुआ है। इस महाशक्तिके अधीन होकर जो व्यक्ति व्यवहार करता है उसमे दुर्बलता टिक ही नही सकती। उसका मनोबल दिनोदिन बढ़ता जाता है। इस शक्तिको प्रकट करनेके लिए जगतके ज्ञानी लोगोने जो साधन बताये है वे सर्वप्रसिद्ध हैं। जो व्यक्ति उसका आधार लेता है उसमें वह शक्ति प्रकट हुए बिना नही रहती। इन साधनोंके बारेमे मै 'हरिजनबन्धु' मे उल्लेख कर चुका हूँ।[2] इसलिए यहाँ लिखनेको कुछ नही रह जाता।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ५-११-१९३३

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने पूछा था: उस दुर्बलतासे कैसे छुटकारा पाया जाये जिसके वशीभूत हो दूसरोंको प्रसन्न करनेके लिए हम अपने सिद्धान्तोंके विरुद्ध काम करने लगते हैं।

२. देखिए "कुछ नैतिक प्रश्न", २२-१०-१९३३।

२०५. हरिजन-कार्यकर्त्ताकी पिटाई

भाई गोकुलदास खीमजी माडवी कच्छके प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता और हरिजन-सेवक है। इनके बारेमे लिखते हुए एक भाई कहते है कि जब मै कच्छ गया था तब मैने उन्हे एक गरीब गायकी उपमा दी थी। यह प्रसग मुझे याद आता है। गोकुलदास सचमुच ऐसे विनम्र है। उनसे जो सेवा बन सकती है वह अवश्य करते है। किसीको कष्ट पहुँचानेका उनका स्वभाव ही नही है। उन्होने गुजरात अस्पृश्यता-निवारण सघके मन्त्री भाई परीक्षितलालको निम्नलिखित पत्र लिखा है:[1]

इसमे जीत मारनेवालेकी नही हुई वरन् मार खानेवालेकी हुई है। गोकुलदास जैसे गरीब सेवकोपर पड़नेवाली मारसे ऐसी सात्विक शक्ति पैदा होगी कि जिसके द्वारा सवर्ण हिन्दुओंकी हड्डियाँ पिघल जायेगी और हरिजनोके बन्धन टूट जायेंगे। कच्छके समझदार सनातनी हिन्दुओंको ऐसी गुण्डागर्दीको रोकनेके लिए प्रयत्न करना चाहिए। अस्पृश्यता यदि धर्म है, तो भी इस धर्मकी रक्षा तपोबलसे हो सकती है। पशुबलसे इसकी रक्षा की जा सकती है, यह बात कभी सुननेमे नही आई।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ५-११-१९३३

२०६. पत्र : तोताराम हिंगोरानीको

वर्धा
५ नवम्बर, १९३३

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र अच्छा लगा। उसमे आनन्द और विद्याके प्रति प्रेम-भाव झलकता है। नि.सन्देह वे दोनो भावुक है। लेकिन वे दोनों सोनेकी तरह खरे हैं। आपको उनपर गर्व होना ही चाहिए। मुझे भी आपका उन दोनोके लिए रचनात्मक कार्य ढूंढनेका विचार पसन्द है। लेकिन आपकी इस इच्छामे मुझे जरूरतसे ज्यादा स्नेहकी झलक मिलती है। मै आपसे विनती करूँगा कि आप संयमसे काम ले। आनन्द ने परमात्माको जो पवित्र वचन दिया है यदि उसे भंग किया जाता है अथवा उसे भंग करनेके लिए उकसाया जाता है तो इससे आनन्दकी आत्माको कष्ट पहुँचेगा। इस बातके लिए आपको मेरे आश्वासनकी कोई जरूरत नही कि आनन्द आपकी और

१. पत्र यहाँ नही दिया गया है। गोकुलदासने किसी सड़क विशेषपर हरिजन बच्चोंको ले जानेका आग्रह किया था जिसका राजपूतोंने विरोध किया और उन्हें मारा।

आपकी नेक पत्नीकी पूजा करता है। वह आपकी अनुमति और आशीर्वाद पानेके लिए कुछ भी करनेको तैयार है। माता-पिताके प्रति ऐसा पूजा-भाव रखनेका उपयोग यदि उसे कमजोर बनानेके लिए किया जाता है तो यह गलत होगा। इसलिए फिलहाल आप उसे वह काम करने दें जिसके करनेका उसने ईश्वरको वचन दिया है। वह सुरक्षित रहेगा। ईश्वर उसका ध्यान रखेगा। जहाँतक विद्याका ताल्लुक है, प्यारी सासके अन्धे प्रेमसे उसका दम घुटा जा रहा था। वह यहाँ खादी-कार्य कर रही है। आप यकीन मानें, उसका स्वास्थ्य अच्छा है और महादेवका भी अच्छा है। उसे अच्छे लोगोंका साथ मिला हुआ है और वह अपने ढंगसे रहती है। वह अंग्रेजी पाठ सीखती है। और यदि उसकी तबीयत ठीक रही और वह चाहे तो मैं हिन्दीकी शिक्षा भी देना चाहता हूँ। यदि ईश्वरने चाहा तो एक सालके अर्सेमें तो वह आपके पास मन और शरीरसे अधिक सशक्त और स्नेहमयी पुत्रीके रूपमें लौटेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी।

२०७. पत्र: प्रेमी जयरामदासको

५ नवम्बर, १९३३

प्रिय प्रेमी[1],

तुम्हारा पत्र और पिताजीकी खबर पाकर मुझे खुशी हुई। निःसन्देह हैदराबाद में मेरे लिए कोई ऐसा घर नहीं है जो मुझे तुम्हारे घर जितना प्रिय हो। जब मैं वहाँ पहुँचूंगा तो तुम मुझे वहीं रखना और या फिर जहाँ तुम्हारी ओरसे कमेटी मुझे और मेरे साथ चलनेवाली लम्बी पलटनको रखना चाहे, वहाँ रखना। क्या पिताजीको बहुतसे पत्र पानेकी इजाजत है? उन्हें मेरा प्यार देना और उनसे कहना कि विद्या उन्नति कर रही है।

बापू

श्रीमती प्रेमीबहन
मार्फत श्री जयरामदास दौलतराम
मार्केट रोड, हैदराबाद (सिन्ध)

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२४४) से; सौजन्य: जयरामदास दौलतराम

१. जयरामदास दौलतरामकी पुत्री।

२०८. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

५ नवम्बर, १९३३

प्रिय कुमारप्पा,

तुम्हारा पत्र मिला।

आशा है कि अब तुम्हारे रहनेका ठीक प्रबन्ध होगा और इलाजसे फायदा हो रहा होगा।

बा और मनुके बहुत जल्द अहमदाबाद पहुँचनेकी सम्भावना है।

मेरी यात्रा सही तौरपर इसी ८ तारीखको शुरू हो रही है। कार्यक्रम तुम्हे मिल जायेगा। लेकिन मेरा पता वर्धाका ही मानना।

तुम्हारे बहुतसे साथी इस समय यहाँ हैं — मोरारजी[1], स्वामी, गोकुलभाई, दीवानजी। वे अभी ही आये हैं और बस अभी ही जानेवाले हैं।

हम सबकी ओरसे प्यार,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१०२) से।

२०९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

[५ नवम्बर, १९३३][2]

भाईश्री वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र आज मिला। विट्ठलभाई श्राद्ध समितिके बारेमे तुम्हे जहाँसे जितना मालूम हुआ है वहीसे उतना ही मुझे भी मालूम हुआ है। मणि क्या अकेले तुम्हारी बेटी है?

. . . ने[3] जो विश्लेषण किया सो स्वामीने मुझे पढाया था अन्यथा कदाचित् मै इस साहित्यको पढनेसे वंचित हो जाता। सीधी बात तो यह कहो कि तुम मेरे पास नही हो। यह बात जितना तुम्हे सालती है उतना ही मुझे भी सालती है। इसलिए मै एकलव्यका अनुकरण करता हूँ। जब द्रोणाचार्यने उसे निकाल बाहर किया तब वह उनका पुतला सामने रखकर धनुर्धर बन गया। मुझे धनुर्धर नही बनना है।

१. मोरारजी देसाई।

२. इस पत्रकी तारीख सी० एफ० एन्ड्रयूजके वर्धा छोडनेकी बात परसे तय की गई है; देखिए "पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको," ४-११-१९३३।

३. साधन सूत्रमें नाम नहीं दिया गया है।

तुम्हे बाण चढ़ाना नही आता। तुमने तो बाण तोड़कर उसका हल बना लिया है। अतः मुझे भी हल तो चलाना ही होगा।

मै रोज पार्श्वेश्वर चिन्तामणिकी रचना करता हूँ और उससे पूछ लेता हूँ। पर उससे सही उत्तर ही मिलता होगा, यह तो कैसे कहा जा सकता है? लेकिन सवाल तो यह है कि तुम्हारी इच्छा क्या हो सकती है अथवा तुम क्या करोगे, इसका मैं बराबर ध्यान रखता हूँ।

बा के जानेकी तैयारी हो रही है। चार्लीभाई ११ तारीखको यहाँसे रवाना होंगे। यहाँसे वे कल चले गये। वे सब जगह घूमे है, सब लोगोंसे मिले भी है, लेकिन फिर भी वहीके वहीं हैं।

काकाके उपवासकी बात कहीं फैली जान नहीं पड़ती। यहाँ भी हमने जरा भी शोर नही होने दिया। उनमे ताकत अच्छी तरह आ रही है।

प्रभुदास आखिरकार तो अल्मोड़ा जायेगा। दौरेमें भी मुझे तुम्हारे पत्र मिलने चाहिए। मेरे पत्र तो तुम्हें मिलते ही रहेगे।

जहाँ बा जायेगी वही (जेलमें) काका, स्वामी आदिका मण्डल पहुँचेगा। मोरारजी इत्यादि यही हैं। वे सकुशल हैं। उनकी तनिक भी चिन्ता न करना। तुम्हारे इस बारके . . .।[1]

खुर्शीदकी तबीयत सुधरती जा रही है।

तुम्हें और चन्दूलाल को,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ४३-४

२१०. पत्र : मणिबहन पटेलको

५ नवम्बर, १९३३

चि० मणि,

तेरा पत्र मिला। डाह्याभाई मलिन वातावरणको ठीक तरहसे शुद्ध कर रहा है। मेरा वहाँ आना नहीं हो सकेगा। मुझे विस्तारसे लिखती रहना। बा कदाचित् यहाँसे १३ तारीखको रवाना होगी। नागपुरका दौरा पूरा करनेके बाद मुझे फिर यहाँ आना है, इसलिए उसके मनमें इतने समयके लिए यहीं रह जानेका लोभ है। मेरा खयाल है कि अहमदाबादमें वह रणछोड़भाई[2] के बँगलेमें रहेगी अथवा लाल बँगला[3]

१. शेष भाग जेल-अधिकारियों द्वारा काट दिया गया था।

२. रणछोड़भाई सेठ।

३. साबरमतीमें स्वर्गीय प्राणजीवन मेहताका मकान।

तो है ही। यह निर्णय तो मुझे करना होगा। इस बारेमे तू क्या कुछ कहना चाहती है? पैर के बारेमें जो इलाज कर सके उतना तो अवश्य करना। बिना सोचे-विचारे उतावलीसे काम न लेना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १११

२११. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

५ नवम्बर, १९३३

चि० पण्डितजी,

तुम्हारे बारेमें समाचार जानता रहता हूँ। मैं देखता हूँ कि तुम्हारा समय अच्छा बीत रहा है। यहाँ लक्ष्मीबहन भारी सेवा कर रही है। उन्होंने बहुत सारा काम अपने हाथोमे ले लिया है। हालाँकि सगीतशास्त्री आ गये है फिर भी मेरे कहनेपर प्रार्थनामें भजनादि वे ही गाती है। बृहस्पतिवार और शुक्रवारके भजन मधुरी मीठे स्वरमें गाती है। उसकी आवाज इतनी ऊँची आती है, यह मुझे मालूम न था। बाकी सब तो लक्ष्मीबहन तुम्हे लिखेंगी ही, इसलिए समय बचानेको खातिर नही लिखता। काकाके सात उपवास बृहस्पतिवारको पूरे हो गये। ये आवश्यक थे। तुम सब-कुछ जान गये होगे, ऐसा मान लेता हूँ। दौरेमे मेरे साथ चन्द्रशंकर, मीराबहन, नायर और जमनालालजीकी ओम होगे। हरिभाऊके एक मित्र रामनाथ 'सुमन' भी होगे। ठक्कर बापा तो है ही। यह दौरा लगातार ९ महीनेतक चलेगा।

रामभाऊ[1] अहमदाबादमें क्या करता है, इसकी पूरी जानकारी मुझे नही मिलती। वह तो लिखता ही नही है। कदाचित् तुम्हे समाचार मिलते रहते है। गजानन[2] और धीरूकी गाडी ठीक चल रही है। गजाननके मनमे असन्तोष है। उसका कहना है कि उसे पूरी शिक्षा नही मिलती। योगा[3] मुझे अच्छी लड़की लगी है; होशियार भी है। मुझे मालूम नही कि वह इतनी अच्छी गुजराती जानती है।

सबको —

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० २४७) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन एन० खरे

१. रामचन्द्र, नारायण मोरेश्वर खरेके पुत्र।
२ और ३. ना० मो० खरेके भाईका पुत्र और पुत्री।

२१२. भाषण: हरिजनोंके समक्ष[1]

नालवाडी
[७ नवम्बर, १९३३ से पूर्व][2]

विनोबा यहाँ तुम लोगोकी सेवाके लिए आये है। यहाँ हमेगा आश्रमका कार्यक्रम चलता है। आशा है कि तुम उसका पूरा लाभ उठाओगे। सेठजीने अभी-अभी याद दिलाया है कि यहाँ एक बैल मर गया था, उसे कोई उठानेको तैयार नही था। उसे आश्रमके लोगोने उठाया और गाड़ दिया। हरिजन भाइयोको यह बात अच्छी नही लगी, क्योकि अस्पृश्योमे भी अस्पृश्यतम लोग है, उनका यह कार्य दूसरे कैसे करें — ऐसा वे लोग मानते हैं। विनोबाने शास्त्रोका पठन-पाठन किया है, उनका अभ्यास किया है। वे कहते है कि भगवानने कही भी यह नही बताया है कि कोई उच्च है और कोई नीच है, कोई स्पृश्य है और कोई अस्पृश्य है। इस भेदको मिटाने के लिए वे हरिजनोमे काम कर रहे है। डॉ० अम्बेडकरको सवर्णोंके अत्याचारसे दुःख होता है, क्रोध आता है। सवर्णोंने हरिजनों पर जितना अत्याचार किया है यदि उतना अत्याचार होगा तो गुस्सा क्यो नही आयेगा? तो फिर तुम लोग अपने बीच ऊँच-नीचका भेद क्यों करते हो? मैला उठानेका, मरे हुए पशुको उठानेका काम केवल भंगीका ही है यदि ऐसा माना जाये तो हरिजनोमे जो काम चल रहा है वह रुक जायेगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र, ये चार वर्ण माने गये है। इनमें से कुछ लोगोको पंचम वर्णका अर्थात् अवर्ण माना गया है। ये वर्ण आज अपने मूल रूपमे नही रह गये है। जो बच गया है वह केवल ऊँच-नीचकी भावना है। ईश्वरने किसी को ऊँचा या नीचा नही बनाया है। हम यहाँ बैठकर यदि तुम्हारे भंगी बनते है तो तुम्हे इस पर रोष नही करना चाहिए। हम हरिजनोकी सेवा किस प्रकार करें? महारकी सेवा करे और भंगीकी सेवा न करें? क्या हम हरिजनोमे भेदभाव करें? यदि यह भेदभाव दूर नही होगा तो हिन्दू-धर्मका नाश हो जायेगा। हिन्दुस्तानमे अधिकांश आबादी हिन्दुओंकी है। इनका यदि नाश हो जाये तो हिन्दुस्तानका शेष क्या रह जाता है? हाँ, हिन्दू मात्र मुसलमान अथवा ईसाई हो जाये तो यह एक अलहदा चीज है। लेकिन यदि हमे यह लगे कि हिन्दू-धर्म अच्छा है तो हमे उसे डूबनेसे बचाना चाहिए। इस धर्ममे अनेक ऋषि-मुनि हो गये हैं। 'गीता' यदि सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ नही तो सर्वश्रेष्ठ कहे जाने-वाले ग्रन्थोंमें से एक अवश्य है। जिस धर्ममे ऐसे ग्रन्थ मिलते है, जिस धर्ममे ज्ञानेश्वर, तुकाराम और समर्थ रामदास जैसे सन्त हुए है, वह धर्म नष्ट होनेके लिए थोड़े

१. इसका अनुवाद चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से किया गया है।

२. यह और अगला शीर्षक "वर्धा, ७ नवम्बर, १९३३", के अन्तर्गत छपी रिपोर्टसे लिये गये हैं।

ही है। वह हमेशाके लिए है, सनातन है, ऐसा समझना चाहिए। उसमे जो खामी हो, जो बुराई आ गई हो उसे निकाल बाहर करना चाहिए। उसमे अस्पृश्यता-रूपी जो मैल घुस गया है उसे निकालना चाहिए। महार, माग, भगी आदि नाम तो धन्धेके भेदको लेकर है, लेकिन इससे महार मांगसे अथवा माग भगीसे श्रेष्ठ है, ऐसा नही कहा जा सकता। माग, भगी, महार और इसी तरह अन्य सारे हरिजन समाजकी सेवा करते है। न करे तो समाज छिन्न-भिन्न हो जाये। जो सेवक यहाँ आये है वे केवल सेवाके लिए आये है, पैसे लेने नही आये है। इनको तो तुम्हीको दो कौड़ी देकर सन्तोष होगा। इनकी सेवाको स्वीकार करो और ईश्वरका उपकार मानो।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १२-११-१९३३

२१३. सलाह : एक हरिजन कार्यकर्त्ताको[1]

[७ नवम्बर, १९३३ से पूर्व]

मुझे तो अनुभवसे ऐसा लगता है कि प्रार्थनाके समय हमारे मनमे जो तरह-तरहके विचार आते है उनका हमे न तो खयाल ही करना चाहिए और न दु:ख ही मानना चाहिए। यदि हम यह सोचकर चले कि ऐसे विचार नही आने देगे तो उनका हमला और भी जोरसे होता है। भयभीत मनुष्य को हर तरफ भय ही भय दिखाई देता है। यही बात अवाछित विचारोपर भी लागू होती है। ऐसे विचार मनमे क्यो आते है, इस बातकी चिन्ता करनेका मतलब शत्रुताके भावसे उन विचारोको आमन्त्रित करना है। जब अनावश्यक विचार मनमे उठे तब समझ लेना चाहिए कि शत्रु आये है, लेकिन हमे उनका आह्वान नही करना चाहिए। जिस प्रकार बिना बुलाये यदि कोई मेहमान घरमे आ जाता है और उचित स्वागत न पाने पर जिस प्रकार वह उपेक्षित होकर भाग खडा होता है उसी प्रकार अनचाहे विचारोके उठने पर यदि हम उनकी परवाह नही करेगे तो वे भी भाग खडे होगे। लेकिन जिस तरह हम बिन बुलाये मेहमानके आनेपर आमन्त्रित अतिथिको नही भूल जाते उसी प्रकार अनचाहे विचारोका हमला होने पर हमे अपनी मनचाही प्रार्थनाको बन्द नही करना चाहिए और अनचाहे विचारो के हमले से घबराना नही चाहिए। जैसे-जैसे उनकी ओर हमारा ध्यान कम आकर्षित होगा वैसे-वैसे वे मन्द पडते जायेगे और हमारा ध्यान ज्यादासे-ज्यादा प्रार्थनाकी ओर झुकता चला जायेगा। दूसरे विचार मनमे उठते है इसलिए हम प्रार्थना ही न करे—हमारा ऐसा सोचना तभी उचित हो सकता है जब हम अनचाहे विचारोको स्वयं बुलाते हो। प्रार्थना

१. यह चन्द्रशकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से लिया गया है और यह "प्राथनामें कठिनाई" नामक शीर्षकमे लिखा गया था।

करने बैठें और अन्य विचारोंको बुलायें — ऐसा करना तो दम्भ है। बुरे विचारोंके साथ मानसिक असहयोग होना चाहिए।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १२-११-१९३३

२१४. पत्र : दूधीबहन वी० देसाईको

७ नवम्बर, १९३३

चि० दूधीबहन,

धीरू बीमार रहता जान पड़ता है। रमाबहन — जो यहीं है — इससे दुखी है। उसके समाचार मुझे लिखना और सीधे रमाबहनको भी लिखना। धीरू आदिको तुमने अपनी देखभालमें रखा है न?

तुम्हें राजकोटमें मेरा पत्र मिला होगा। मुझे लिखती रहना। वालजीका समाचार मिले तो देती रहना। मनु और मावोसे लिखनेके लिए कहना।

कुसुमके क्या हाल हैं?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१३७)से; सौजन्य : वालजी गो० देसाई

२१५. पत्र : धीरू सी० जोशीको

वर्धा

७ नवम्बर, १९३३

चि० धीरू,

तेरा पत्र मिला है। तूने रमाको जो पत्र लिखा है देखता हूँ उसमें तेरी लिखावट बहुत खराब है। हमें किसीको भी खराब लिखावटमें नहीं लिखना चाहिए। पंक्तियाँ भी टेढ़ी थीं। अब तू बिलकुल बच्चा नहीं है। तेरे पत्रमें क्रोधका भाव भी निहित था। माता पर बच्चे कभी क्रोध नहीं करते। हम गरीब हैं, यह बात तू स्वीकार करता है या नहीं? गरीब लोग एक-दूसरेसे मिलने जानेके लिए पैसे कहाँसे लायें?

तुझे अपनी तबीयतका ध्यान रखना चाहिए। तू मुझे अपना वजन लिख भेजना। खानेका ध्यान रखना। दाल यदि फिलहाल थोड़े दिनोंके लिए न खाये

तो अच्छा होगा। चावल और दूधसे गुजारा कर ले?[1] क्या तुझे फल मिलते हैं? कॉडलिवर [ऑयल][2] पीता है क्या? जरूरतसे ज्यादा मत खाना।[3] यदि तू अपना ध्यान रखेगा तो तेरा शरीर लोहे जैसा मजबूत हो जायेगा। तेरे पत्रका उत्तर किसी और समय दूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३१४) से।

२१६. पत्र : महेन्द्र और सुदर्शन देसाईको

वर्धा
७ नवम्बर, १९३३

चि० मनु और मावो,

तुम लोगोंको नये वर्षके आशीर्वादका पत्र[4] तो मिला था न? मुझे पत्र लिखते रहना। खूब पढ़ना। कलसे मेरा दौरा शुरू होता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१६१) से, सौजन्य : वालजी गो० देसाई

२१७. भाषण : सेलूमें

७ नवम्बर, १९३३

यह भी सौभाग्यकी बात है कि मेरी यात्रा इस पवित्र कार्यसे शुरू होती है।[5] मैं कह नहीं सकता कि आगामी ९ महीनोंके कार्यक्रमको मैं पूरा कर सकूंगा, पर मेरा विश्वास मुझसे कहता है कि जो कार्य ऐसी शुभ परिस्थितियोंसे शुरू होता है उसका परिणाम भी अच्छा ही होता है। मन्दिरकी मूर्ति ईश्वर नहीं है, पर ईश्वर चूंकि कण-कणमें मौजूद रहता है, अतः मूर्तिमें भी बसता है। प्राण-प्रतिष्ठा सम्पन्न करनेके बाद मूर्तिको विशेष पवित्र माना जाता है और जो लोग मन्दिरोंमें विश्वास रखते हैं वे दर्शनके लिए मन्दिरोंमें जाकर पूजा अर्पित करते हैं। जिस मन्दिरमें भगवानमें श्रद्धा रखनेवाला और एक ही धर्मको माननेवाला एक वर्ग-विशेष नहीं जा

१, २ और ३. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ कटा-फटा है।
४. देखिए "पत्र : महेन्द्र वी० देसाई को", १२-१०-१९३३।
५. गांधीजीने एक मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोला था।

सकता उसमे ईश्वर रहता है, ऐसा कहना भी पाप है। इसलिए रामदेवजीने ठीक ही कहा कि आज हरिजनोके लिए खुल जानेके बाद से ही यह मन्दिर सच्चा मन्दिर हुआ है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-११-१९३३

२१८. भाषण: सेलूकी सार्वजनिक सभामें

७ नवम्बर, १९३३

गत ५० वर्षोंसे यह मेरा विश्वास रहा है कि जिस प्रकारकी अस्पृश्यता आज हम मानते है उसके लिए हिन्दू-धर्ममे कोई स्थान नहीं है। मैंने अपनी योग्यता और शक्तिके मुताबिक संसारके सभी धर्मोंका अध्ययन किया है और उससे भी मैं इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ। अस्पृश्यताके इस अभिशापको दूर करनेके पवित्र कार्यमे मेरे प्राण चले जाये तो मैं इसे कोई बहुत बड़ा त्याग न समझूँगा। मेरे मनमे जरा भी सन्देह नही है कि यदि अस्पृश्यता जड़मूलसे उखाडकर न फेंक दी गई तो हिन्दू-धर्मका नाश निश्चित है, क्योकि कोई धर्म अपने माननेवालोकी अनीतिपर फल-फूल नही सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-११-१९३३

२१९. भाषण: वर्धाकी सार्वजनिक सभामे

७ नवम्बर, १९३३

यह मेरा सौभाग्य है कि मेरे हरिजन-कार्यके लिए घूमनेका प्रारम्भ भारतवर्षके इस मध्यविन्दु — वर्धा — से होता है। मैं चाहता हूँ कि यह स्थान इस आन्दोलनका भी मध्यविन्दु वन जाये। और जिस शुभ इच्छासे जमनालालजीने कई वर्ष पहले अपना मन्दिर हरिजनोके लिए खोल दिया था और जिस भावनाके साथ विनोबा तथा उनके साथी हरिजनोके लिए काम कर रहे हैं, वह भावना सक्रामक सिद्ध होगी और सारे देशमे फैल जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-११-१९३३

२२०. भाषण : भंगियोंकी सभा, नागपुरमें

८ नवम्बर, १९३३

श्रीमती अभ्यंकरने अपनी जैसी सैकड़ो बहनोकी ओरसे जो-कुछ कहा उसका मेरे दिलपर गहरा असर हुआ।[1] जब वह बोल रही थी उस समय मैंने श्रीयुत अभ्यकरकी ओर देखा और मैंने देखा कि उनकी आँखे नम हो आई है। मैंने तो अपने हृदयको पत्थरका बना लिया है और आसानीसे मेरी आँखोसे आँसू नही निकलते, किन्तु इन शब्दोने मुझे विचलित कर दिया। मै मानता हूँ कि कितने ही व्यापारियो, डाक्टरो तथा गृहस्थोको भिखारी बनानेमे मै कारण रहा हूँ। पर उसका मुझे दुख नही है बल्कि खुशी है कि बहुतोने स्वेच्छासे गरीबीको गले लगाया है। श्रीमती अभ्यकर जो अपने पतिका अनुगमन करते हुए भगियोके साथ तादात्म्य स्थापित करना चाहती है, सोनेकी चूड़ियाँ क्यो पहने? भारत-जैसे गरीब देशमे, जहाँ एक पैसेकी खैरात लेनेके लिए लोग मीलोसे दौडते है, जैसा आज उड़ीसामे हो रहा है, दीन-दुखियोकी चिन्ता रखनेवाले किसी व्यक्तिको कीमती गहने पहनना शोभा नही देता। हरिजनोके साथ तादात्म्य स्थापित करनेका हमारे सामने अन्य कोई तरीका नही है। जिन लोगोके पास और कुछ भी नही है उनके पास ईश्वरका बल है और वे हरिजन है। जिन लोगोके पास धन है वे धनीजन है। इसलिए मोतीलालजी, दास[2], विट्ठलभाई तथा अन्य बहुतसे लोग, जिनके कि मै नाम गिना सकता हूँ, बधाई और प्रशंसाके पात्र है, क्योकि उन्होने गरीबोकी खातिर अपना सर्वस्व त्याग दिया।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-११-१९३३

२२१. सलाह : हरिजनोंको

नागपुर
८ नवम्बर, १९३३

बेशक मैंने सवर्ण हिन्दुओसे कह दिया है कि हरिजनोमे जो भी बुरी आदते पाई जाती है उनके लिए वे ही जिम्मेदार है। लेकिन इसका मतलब यह नही है कि आप अपनी आदतोसे चिपके रहे। हरिजनोको चाहिए कि वे तन और मन दोनोसे

१ अपने हाथकी दो सोनेकी चूड़ियाँ उतारकर गाधीजीको देते हुए श्रीमती अभ्यकरने कहा था· "आज आदमी लोग अपनी पत्नियोंके पास छोडते ही क्या है। इसलिए मैं हरिजनोकी सेवाके लिए केवल यही तुच्छ भेंट दे सकती हूँ।"

२. चित्तरंजनदास।

स्वच्छ-साफ रहकर मुरदार मांसका, जिसे सारा समाज ही घृणा की दृष्टिसे देखता है, त्याग करके, मद्य-पानका त्याग करके, तथा उनमें परस्पर जो ऊँच-नीचका भेद पाया जाता है उसका त्याग करके, इस आन्दोलनमें योग दें। जब वे मन्दिरमें जाते हैं तो उन्हें मन्दिरमें जानेवाले सब लोगोंपर जो नियम लागू होते हैं उनका पालन करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-११-१९३३

२२२. भाषण: नागपुरकी सार्वजनिक सभामें[1]

८ नवम्बर, १९३३

आपने मेरे प्रति यह जो स्नेहभाव व्यक्त किया है उसके लिए मैं आपका हृदयसे आभारी हूँ। भगवानका धन्यवाद है कि आप इतनी बड़ी तादादमें मेरा सन्देश सुननेके लिए यहाँ इकट्ठे हुए हैं। अध्यक्ष[2] महोदयका यह कथन ठीक ही है कि मेरे विचारानुसार हरिजन सेवाका कार्य अनिवार्यतः धार्मिक कार्य है। और यह भी सच है कि इसके और भी बहुतसे परिणाम निकलते हैं। कोई भी सच्चा धार्मिक कार्य ऐसा नहीं है जिसका जीवनके एकाधिक अंगों पर असर न पड़ता हो। किसी महान आन्दोलनको परखनेकी कसौटियोंमें से यह सम्भवतः एक कसौटी है। मैं विनम्रतापूर्वक लेकिन पूरे विश्वासके साथ आपको यह बताना चाहूँगा कि मैंने यह आन्दोलन किसी वर्ग अथवा समुदायके प्रति द्वेषभाव व्यक्त करनेके लिए नहीं शुरू किया है। किसी व्यक्तिके लिए यह कह सकना असम्भव होगा कि पिछले पचास वर्षोंमें मैंने एक भी ऐसा काम किया हो जो किसी व्यक्ति अथवा समुदायके प्रति द्वेषभावसे किया गया हो। मैंने कभी भी किसीको अपना शत्रु नहीं माना है। मेरा धर्म कहता है कि मैं किसीको शत्रु न समझूँ। मैं किसी भी जीवका बुरा नहीं चाह सकता। मेरा यह विश्वास है कि यदि हिन्दुओंके दिलोंपर से अस्पृश्यता-रूपी कलंकका धब्बा पूरी तरहसे धुल जाये तो इस घटनाका न केवल भारतके सभी समुदायों पर बल्कि समस्त संसार पर अनिवार्य रूपसे प्रभाव पड़ेगा। मेरा यह विश्वास दिन-ब-दिन दृढ़ होता जा रहा है। ऐसा नहीं हो सकता कि मैं अपने हृदयसे कुछ लाख लोगोंके प्रति अस्पृश्यताकी भावनाको दूर कर दूँ और उसकी जगह दूसरे कुछ लाख लोगोंके प्रति यह भावना मनमें रखूँ। जब हिन्दुओंके दिलोंसे ऊँच-नीचका भेद मिट जायेगा तब हममें और अन्य समुदायोंमें जो पारस्परिक द्वेष और अविश्वास दिखाई देता है वह भी दूर हो जायेगा। यही कारण है कि मैंने इस प्रश्नपर अपने जीवनको दाँवपर लगा दिया है। अस्पृश्यताकी इस लड़ाईमें मैं न केवल सवर्णों और अस्पृश्योंके बीच एकता स्थापित करनेके

१. गांधीजीने अपना यह भाषण हिन्दीमें दिया था।

२. डॉ० एन० बी० खरे।

लिए संघर्ष कर रहा हूँ बल्कि हिन्दुओ, मुसलमानो, ईसाइयो और अन्य सब विभिन्न मतावलम्बियोमे भी एकता स्थापित करनेके लिए यह संघर्ष कर रहा हूँ। आप एक मिनटके लिए भी ऐसा न माने कि मै हिन्दुओका संख्या-बल बढ़ानेमे रुचि रखता हूँ। मैंने सारी जिन्दगी कभी भी संख्यापर जोर नही दिया है। मैंने तो सदा सख्याके बजाय गुणोपर बल दिया है। यदि मै दस लाख खोटे सिक्के इकट्ठे करता हूँ तो वे मेरे लिए निरर्थक भार रूप होगे। इसके विपरीत एक असली सिक्केका भी अपना मूल्य होगा। यदि किसी धर्मके अनुयायी अपने जीवनमे उसके सिद्धान्तोको माननेसे इन्कार कर देते है तो वह धर्म जीवित नही रह सकता और यदि हिन्दू-धर्मके अनुयायी अपने दिलोसे अस्पृश्यताको निकाल बाहर नही करते तो इन तथाकथित लाखो अनुयायियोके बावजूद यह महान हिन्दू-धर्म भी अपने-आप खत्म हो जायेगा। अस्पृश्योंकी सख्या लाखोमे है इसलिए ऐसा होगा सो बात नही। मुट्ठीभर अस्पृश्य होगे तो भी हिन्दू-धर्म नष्ट हो जायेगा। दूधमे चाहे आप थोड़ा-सा जहर डाले अथवा ज्यादा, लेकिन जहर मिले दूधको तो फेकना ही पड़ेगा। यदि हम यह मानते है कि हम सब एक ही ईश्वरकी साक्षात सन्तान है और भगवान सत्य और न्याय है तो हममे, जो कि उसकी सन्ताने है, अस्पृश्यताकी भावना कैसे हो सकती है? इसलिए मै बिना किसी भेदभावके सभी धर्मो और समुदायोसे अनुरोध करूँगा कि इस आन्दोलनकी पूर्ण सफलताके लिए प्रार्थना करके उसमे अपना सहयोग प्रदान करे, जिससे कि हम सब लोग शान्तिपूर्वक और मैत्रीपूर्वक रह सके।

और यदि मै विभिन्न धर्मोंको माननेवाले सभी समुदायोके लोगोके बीच मेल स्थापित करना चाहता हूँ तो मै तथाकथित सनातनियो और सुधारकोमे फूट डालना भी नही चाह सकता। मै सनातनियोके प्रति अपने मनमे कोई बुरा भाव नही रख सकता। मेरा सनातनियोसे यही कहना है कि वे सुधारकोके प्रति वैसी ही सहिष्णुता बरते जैसी सहिष्णुताकी अपेक्षा वे सुधारकोसे रखते है। यदि सनातनी लोग अन्य धर्मावलम्बियोके धर्म और रीति-रिवाजोके प्रति सहिष्णु है तो वे सुधारकोके धर्म और रीति-रिवाजके प्रति सहिष्णु क्यो नही है? जबतक वे अस्पृश्यताको हिन्दू-धर्मका अभिन्न अंग मानते है तबतक वे हमारी सहायता नही कर सकते। मै और मेरे साथी सुधारकोकी यह दृढ़ मान्यता है कि अस्पृश्यता एक बुराई है, और यदि ऐसा है और यदि सुधारक लोग धैर्यसे काम लेगे और विनम्रतापूर्वक व्यवहार करेगे तो सनातनियोके हृदय अवश्य पिघल जायेगे। इस महान आन्दोलनमे जोर-जबरदस्ती और हिंसाके लिए कोई स्थान नही है। मै विशाल हिन्दू जन-समुदायके आगे अपने उस विश्वासके परिणामोंको रखना चाहता हूँ जो मैंने भक्तिपूर्ण हृदयसे और जितना मुझसे बन सका उतना अध्ययन करके तथा विद्वान शास्त्रियोके साथ अपने सम्पर्कके फलस्वरूप तथा इससे भी बड़ी बात यह कि उस विश्वासपर आचरण करके प्राप्त किया है। निस्सन्देह, उससे आन्तरिक फूटको, द्वेषभावको बढ़ावा नही मिल सकता। मै देखता हूँ कि ऐसे बहुत सारे लोगोने, जो इस आन्दोलनका विरोध करते है, इस आन्दोलनके परिणामोंको समझनेकी कोशिश ही नही की है। मेरी इस यात्राका उद्देश्य जनताके सम्मुख

सुधारकोंकी स्थितिको स्पष्ट करके रखना है। और मैं आशा करता हूँ कि जब लोग हरिजन सेवक संघकी गतिविधियोंसे भलीभाँति परिचित हो जायेंगे तब वे विरोध करना छोड़ देंगे। हम उन लोगोंका हृदय परिवर्तन करना चाहते हैं जो आज इस आन्दोलनका विरोध करते हैं। हम उनके अविश्वासको दूर करना चाहते हैं। हम उन्हें उनकी इच्छाके विरुद्ध कार्य करनेके लिए विवश नहीं करना चाहते। हम तो नम्रतम शब्दोंमें अनुनय-विनय करके उन्हें अपने पक्षमें करना चाहते हैं, उनके दिल और दिमागपर विजय पाना चाहते हैं। ऐसा कोई भी मनुष्य जिसके हृदयमें प्रेम हो, दूसरोंको कष्ट नहीं दे सकता। प्रेमकी अभिव्यक्ति तो आत्म-पीड़न और आत्मशुद्धि करके ही की जा सकती है। मुझे इस बातका पूरा-पूरा यकीन है कि यदि सुधारक लोग अपने जीवनमें उत्तरोत्तर शुद्धता, आत्म-त्याग और कष्ट सहनेकी क्षमताका परिचय देंगे तो उससे ऐसे अनेक लोगोंके हृदय पसीज उठेंगे जिनके हृदयमें आज अस्पृश्यताकी भावना भरी हुई है, क्योंकि उनका विश्वास है कि अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मका एक वांछनीय अंग है।

यह कहा जाता है कि अस्पृश्य लोग अपने अन्दरकी बुराइयोंके कारण अस्पृश्य हैं? लेकिन क्या 'स्पृश्य' लोग उनसे बेहतर हैं? क्या वे निष्पाप हैं? बेशक अस्पृश्यताके पृष्ठपोषकोंका यह दावा है कि कुछ लोग हमेशा अस्पृश्य ही रहेंगे, और वे चाहे कितना ही पवित्र आचरण क्यों न करें लेकिन जन्मसे ही उनके माथेपर अस्पृश्यताका जो दाग लगा है वह कभी नहीं मिट सकता। उन्हें हमेशा सामाजिक कुष्ठ-रोगियोंकी भाँति रहना होगा। सच तो यह है कि हमें अस्पृश्योंमें जो कमजोरियाँ दिखाई देती हैं वे हमारी अपनी कमजोरियों और पापोंका प्रतिबिम्बमात्र हैं। हमने उनके भक्तिपूरित हृदयोंके साथ जो दुर्व्यवहार किया है वे उसका सीधा परिणाम हैं। वे सच्चे अर्थोंमें तभी ऊपर उठ सकेंगे जब हम अस्पृश्यताको जड़मूलसे उखाड़ फेंकेंगे और अपने जीवनमें उत्तरोत्तर शुद्धताका विकास करते जायेंगे। इसलिए इस आन्दोलनकी सफलता आर्थिक सहायतापर उतनी निर्भर नहीं करती जितनी कि सही आचरणपर करती है। आर्थिक सहायता तो इस बुराईको दूर करनेके हमारे दृढ़ निश्चयकी अभिव्यक्ति-मात्र है और इस बातका परिचायक है कि हम आत्मशुद्धि करना चाहते हैं।

मुझसे यह प्रश्न बार-बार पूछा जाता है कि इस सुधारमें क्या अन्तर्जातीय भोज भी शामिल है? हालाँकि इस प्रश्नका मने बार-बार उत्तर दिया है, फिर भी मुझे इसका उत्तर तबतक देते रहना चाहिए जबतक मुझसे यह प्रश्न पूछा जाता रहे। इस सम्बन्धमें मेरे अपने विचार क्या हैं, इससे सभी लोग परिचित हैं। अपनी युवावस्थासे ही मैं लगातार हर सम्प्रदायके लोगोंके साथ भोजन करता आया हूँ, मुझे उनके साथ खानेमें कोई आपत्ति नहीं है बशर्ते कि वे सफाईके नियमोंका पालन करते हैं। लेकिन उसका वर्तमान आन्दोलनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। अन्तर्जातीय भोज और इस तरहकी अन्य बातें तो हर व्यक्तिकी अपनी इच्छापर निर्भर करती हैं। हरिजन सेवक संघका यह जो आन्दोलन है उसका उद्देश्य अस्पृश्यताको उस हदतक दूर करना है जिस हदतक कि वह तथाकथित अस्पृश्योंको प्रभावित करती है।

हरिजनोको भी वही नागरिक सुविधाएँ और अधिकार प्राप्त होगे जो प्रत्येक अन्य हिन्दूको प्राप्त है अर्थात् उन्हे कुओ, स्कूलो, सडको और मन्दिरोका उपयोग करनेकी सुविधा होनी चाहिए।

अस्पृश्यता विषयक विधेयकोको लेकर जो आपत्तियाँ की जाती है उनके बारेमें मै आपसे चन्द शब्द कहूँगा। सनातनियोका कहना है कि इन विधेयकोमे धार्मिक मामलोमे राज्य द्वारा हस्तक्षेप किये जानेकी बात विहित है। मेरा खयाल है यहाँ हस्तक्षेपका तात्पर्य अनुचित हस्तक्षेपसे है। क्योकि ऐसे मामलोके उदाहरण दिये जा सकते है जिनमे धार्मिक मामलोमे लोगोकी ओरसे राज्य द्वारा हस्तक्षेप किये जानेकी माँग की गई है और ऐसी माँग करना अनिवार्य भी था। कहनेका तात्पर्य यह है कि बाहरी दबाव न डाला जाये। सनातनियोंकी तरह मै भी धार्मिक मामलोमे जोर-जबरदस्ती और अनुचित हस्तक्षेप किये जानेके पक्षमे नही हूँ। इन विधेयकोमे ऐसी जोर-जबरदस्ती किये जानेकी अथवा सरकारकी ओरसे अनुचित हस्तक्षेप करनेकी बात नही कही गई है। इन विधेयकोमे सरकारके हस्तक्षेप करनेकी जो माँग की गई है वह लाभकारी है और अनिवार्य है। यदि सरकार लोगोको हरिजनोके लिए मन्दिर खोलनेके लिए विवश करती है तो यह निस्सन्देह अनुचित हस्तक्षेप होगा, लेकिन जब मन्दिर जानेवाले लोगोका कथित बहुमत अथवा मन्दिरके न्यासी, स्वेच्छासे हरिजनोके लिए मन्दिर खोलनेकी बात को कानूनी मान्यता देनेके लिए सरकारसे माँग करें तो यह हस्तक्षेप अनुचित नही हो सकता। ऐसा न करना जोर-जबरदस्ती करना होगा। मन्दिर प्रवेश विधेयकका उद्देश्य तो केवल बहुमतके कार्यको कानूनी रूप प्रदान करना है। दूसरा विधेयक तो आजसे बहुत पहले पास हो जाना चाहिए था। यह विधेयक पूरी तरह से अस्पृश्यताका निवारण नही करता। इसका उद्देश्य तो अस्पृश्यतासे उत्पन्न सामाजिक दुष्परिणामोको रोकना है। अस्पृश्यताके साथ ऐसे दुष्परिणामोंको जोडना धर्म-पालनमे हस्तक्षप करना है। इससे कोई इन्कार नही कर सकता कि आपके धार्मिक दायित्वको कानूनी दायित्व बनाना सरकार द्वारा घोर और अनुचित हस्तक्षेप होगा। अस्पृश्यताका पालन तो तभी अपेक्षित है जब अस्पृश्य और स्पृश्य स्वेच्छासे उसे स्वीकार करें। यदि सरकार अस्पृश्योसे जबरदस्ती अस्पृश्यताका पालन करवाती है तो वह धार्मिक मामलोंमे घोर हस्तक्षेप करती है। इसलिए अस्पृश्यताको जो कानूनी मान्यता प्राप्त है, विधेयकमे उस मान्यताको दूर करनेकी व्यवस्था की गई है। यह विधेयक किसी भी तरह अस्पृश्यताके धार्मिक पालनमे अथवा अस्पृश्यताके नियमका उल्लघन करनेके धार्मिक परिणामोमे हस्तक्षेप नही करता। यदि विधेयकोके विरोधी लोग भी यही चाहते हैं और विधेयकोका अच्छी तरह अध्ययन करनेके बाद पाते है कि विधेयकोमे बाध्यकारिताका कोई तत्त्व नही है तो उन्हें अपनी आपत्तियाँ वापस ले लेनी चाहिए।[1]

१ भाषणकी समाप्तिपर गांधीजीने उपहारमें प्राप्त हुई सब चीजें नीलाम कर दीं जिसमें एक कौडी भी शामिल थी। यह कौडी उन्हें कटोलमें एक व्यक्तिने अर्पित की थी। इसके बादका अंश चन्द्रशकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से लिया गया है।

उस गरीब आदमीके पास कदाचित् देनेके लिए कुछ नही था और उसने अपना सब-कुछ दे दिया जाना पडता है। मालवीयजीके शब्दोंमें, यह ईमानदारीसे कमाई हुई निर्मल कौड़ी है। हम जो कमाते है वह अपनी किस्मतका कमाते है। लेकिन हम ईश्वरके नामपर और उसके बनाये प्राणियोंके सेवार्थ जो चीज दान देते है उससे हमें पुण्य लाभ होता है। अतएव इस कौड़ीको यदि हम त्यागके चिह्न स्वरूप देखे तो यह स्वर्णसे भी अधिक मूल्यवान है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-११-१९३३

२२३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

नागपुर
सवेरेकी प्रार्थनासे पहले, ९ नवम्बर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि तुम दौरेके दौरान मुझे पत्र नही लिखोगे तो ऐसे काम नहीं चलेगा। मैं भी लिखा करूँगा। विट्ठलभाईके सम्बन्धमें जो-कुछ हुआ वह मेरे ध्यानसे बाहर नही है। मुझपर भी अच्छी तरह चोट की गई है। इन सबपर मैंने कोई ध्यान नही दिया। ध्यान देकर करें भी क्या? मैलको हिलाया जाये तो वह और भी उभर कर आती है। मैंने तो केवल सुभाषकी सेवा की ओर ही ध्यान दिया। बाकी विट्ठलभाईकी अन्तिम इच्छा[1] के बारेमें जो अफवाहे सुननेमे आती है उनका तो कहना ही क्या? जैसे तुम्हें शक है वैसे मुझे भी है।

मेरा काम मंगलवारसे शुरू हुआ। सब जगह लोगोके झुण्डके झुण्ड चले आते हैं। जब मैं अस्पृश्यताकी बात करता हूँ उससे कोई चिढ़ता नही जान पड़ता। मैंने हरिजनोंके लिए वर्धाके पास एक सुन्दर मन्दिर खोला।[2] नागपुरमें तो लोगोकी इतनी भीड़ जमा थी, जितनी पहले कभी देखनेमें नही आई। मेरी आवाजने मेरा ठीक साथ दिया। मुझे कुछ थकावट महसूस हुई हो, सो भी नही। १०८ अथवा १०९ वजन लेकर निकला हूँ। और मैं समझता हूँ, पैसा भी अच्छा इकट्ठा हुआ है। मध्यप्रान्तका दौरा पूरा करके दिल्ली जाना है और वहाँसे सीधे दक्षिण। राजाका कहना है कि दक्षिणमें पहले करनेकी आवश्यकता है। सनातनियोका सारा विरोध तो वहीसे शुरू होता है। शनिवारके बाद वर्धा जाना है। वर्धा तहसीलका दौरा अभी पूरा करना है। इस बीच जवाहरलाल आदि मुझे मिल जायेंगे। अन्सारी[3] आ गये

१. स्वर्गीय विट्ठलभाईने वसीयत लिखकर एक लाखसे अधिक रुपया स्वर्गीय सुभाषचन्द्र बोसको उनकी इच्छानुसार विदेशमें प्रचारार्थ व्यय करनेके लिए देनेके लिए कहा था। बादमें बम्बईके उच्च न्यायालयने निर्णय दिया कि तमाम रकम उनके वारिसोंको मिलनी चाहिए। गांधीजीने सब कुटुम्बियोंको समझा-बुझाकर यह रुपया देशकार्यके लिए कांग्रेसको दिलवा दिया था।

२. देखिए "भाषण : सेलूमें", ७-११-१९३३।

३. डॉ० मु० अ० अन्सारी।

हैं। इसलिए कदाचित् वे भी आयें। मेरे साथ मीरा, चन्द्रशंकर, नायर, रामनाथ (दिल्लीके सस्ता साहित्यवाले), ओम और रामेश्वर बिडला[1] के लड़केकी बहू है। वह तो थोड़े दिन ही रहेगी। ओम बड़ी हिम्मतवाली हो गई है। ठक्कर बापा तो रहेंगे ही।

बा १३ तारीखको वर्धा छोडेगी। वह १५-१६ के आसपास अहमदाबाद पहुँच जायेगी। बा का मन इस बार खूब डोल रहा है। वह अस्वस्थ तो है ही। लेकिन वह [जेलमें] पहुँच जायेगी। उसे विश्वास है कि होना भी ऐसा ही चाहिए।

तुम वर्धाके पतेपर ही लिखा करना।

दोनोको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ४५-६

२२४. पत्र : मणिबहन पटेलको

९ नवम्बर, १९३३

चि० मणि,

तेरा पत्र मिला। तूने मुझे सब-कुछ साफ-साफ लिखकर समझदारी की है। हमेशा ऐसा ही करना। तू नही लिखेगी तो कौन लिखेगा? डाह्याभाईको मुझे लेकर गलतफहमी हुई और उसने क्रोध किया, यह आश्चर्यकी बात है। लेकिन हमे इसपर ध्यान नही देना चाहिए। उसे कदाचित् सब-कुछ मालूम भी न हो। उसे दु:ख हुआ, यह मैं समझ सकता हूँ। तू ही उसका जितना समाधान कर सके उतना करना। यदि तू चाहे तो मैं उसे लिखूँ और उसका दु:ख कम करूँ। मुझे यह बात ज्यादा अच्छी लगेगी। यह पत्र भी यदि तू उसे पढवाना चाहे तो पढ़वाना।

बा मगलवारको वर्धा छोड़ेगी। थोडे समयके लिए अर्थात् कुछ घंटोके लिए वह अकोलामे रहेगी। बादमे तेरी ओर आयेगी। बा अभी कुछ दुविधामे है। चिन्तित भी है, लेकिन जेल जानेका निश्चय उसने स्वयमेव व्यक्त किया है। तू उसके इस निश्चयको पुष्ट करना।

अच्छी तरह खा-पीकर तू अपने शरीरको जितना बने उतना सुधार लेना। मुझे तो नियमपूर्वक लिखती रहना। बिजलीका उपचार तो जितना कर सके उतना कर ही लेना। बिजली तो अहमदाबादमे भी ली जा सकती है। दाँतका क्या किया?

शनिवारको वर्धामे जवाहरलालजी आदि आयेंगे।

मृदु[2] इलाहाबादमें क्या करके आई है? क्या वह सन्तुष्ट होकर आई है? उससे पत्र लिखनेके लिए कहना। उसने दाँतोके बारेमे क्या किया। सरलादेवी[3] के बारेमे यदि तुझे ज्यादा मालूम हो तो लिखना।

१. घनश्यामदास बिड़लाके बडे भाई।
२. मृदुला साराभाई।
३. मृदुला साराभाईकी माँ।

नागपुरमें बहुत अच्छी सभा हुई थी। श्रीगणेश तो अच्छा हुआ। विट्ठलभाईके दाह-संस्कारका समाचार लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १११-२

२२५. पत्र : गंगाबहन बी० झवेरीको

९ नवम्बर, १९३३

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमसे जितनी सेवा बन सके उतनी किये जाओ और सन्तोष मानो। किसीके महलको देखकर हम अपनी झोंपड़ीको नहीं उखाड़ देते। जो सुख महलमें होता है वह झोंपड़ीमें भी होता है। तुम हरिजन स्कूल चलाती हो, यह एक अच्छी बात है। तुम यदि केवल दूध और फलका सेवन करोगी तो लाभ अवश्य होगा। और कुछ लेनेकी जरूरत नहीं। नानी बहनको मुझे लिखना चाहिए। वर्धाके पतेसे ही लिखना चाहिए। महेशसे लिखनेके लिए कहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३११९) से।

२२६. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

९ नवम्बर, १९३३

यह पूछे जानेपर कि अपनी अखिल भारतीय अस्पृश्यता-विरोधी यात्राके सिलसिलेमें क्या आप कोई वक्तव्य अखबारोंको देंगे, महात्मा गांधीने कहा कि वक्तव्य देने जैसी कोई बात नहीं है। मुझे जो-कुछ कहना था सो मैं कल रात नागपुरकी सार्वजनिक सभामें अपने भाषणमें कह चुका हूँ। उन्होंने कहा कि मैं प्रश्नोंके उत्तर देनेको तैयार हूँ, लेकिन सवाल खामखाह न किये जायें।[1]

प्रश्न : इस आन्दोलनकी वर्तमान प्रगतिको देखते हुए आपके खयालमें अस्पृश्यताको पूरी तरह दूर होनेमें कितना समय लगेगा?

उत्तर : यह प्रश्न तो ऐसा है, जिसका उत्तर मैं नहीं दे सकता। क्योंकि यह तो करोड़ों मनुष्योंके हृदय-परिवर्तनका प्रश्न है।

१. यह अनुच्छेद हितवाद से लिया गया है।

प्रश्न : अस्पृश्यता नष्ट होनेके पहले आप स्वराज्य स्वीकार कर लेंगे या नहीं?

उत्तर : यह प्रश्न ही ठीक नही है। यह पूछना ही व्यर्थ है कि तबतक अगर अस्पृश्यता दूर न हुई तो मैं स्वराज्य स्वीकार करनेके लिए तैयार होऊँगा या नही। स्वराज्य तो किसीसे पाने या लेनेकी चीज नही है। वह तो हमारे विकासके ऊपर निर्भर है। या तो हम उसकी ओर दिन-दिन बढते रहे है या पीछे हटते जाते हैं। यदि हमे एक राष्ट्रके रूपमे उत्तरोत्तर आत्मज्ञान हो रहा है, करोड़ो लोगोकी मौलिक एकताका अहसास हो रहा है तो हम निश्चय ही स्वराज्य की ओर बढ रहे हैं। और अगर हम विघटित हो रहे है, तो अपने लक्ष्यसे पीछे हट रहे है।

प्रश्न : क्या आप यह महसूस नहीं करते कि दलित जातियोमें अब भी अपने वहम हैं, और जब उनसे ब्राह्मण आदि सवर्ण हिन्दुओंसे मिलनेको कहा जाता है तो वे बहुत हिचकते हैं?

उत्तर नही, मेरा ऐसा खयाल नही है। आप जो कहते है अगर वह सच है तो इसका यह अर्थ हुआ कि वे अपनी मौजूदा पतनावस्थामें ही बने रहना चाहते हैं। मेरी समझमें नही आता कि एक सामाजिक कोढी अपने कोढीपनपर गर्व कैसे कर सकता है? अगर वे दलित कही जानेवाली जातियाँ उच्च-जातीय हिन्दुओकी तरफसे अत्यन्त निराश होकर अपने-आपको हिन्दुओ और हिन्दू-धर्मसे बिलकुल अलग कर देना चाहती है, तो या तो उन्हे अपनी एक जुदी हस्ती बनानी होगी, अर्थात् किसी एक नये धर्मका प्रवर्तन करना होगा, या भारतके अन्य किसी एक प्रचलित धर्मको स्वीकार करना पड़ेगा। यदि सवर्ण हिन्दुओने अपनी उच्चताके काल्पनिक स्वप्नोमे ही मग्न रहकर हरिजनोके प्रति अपने सामान्य कर्त्तव्योका पालन न किया, अर्थात् उन्हे अपने बन्धु-बान्धवोकी तरह न समझा तो हो सकता है कि वैसा ही हो। अस्पृश्यता-निवारणका यह आन्दोलन हरिजनोके प्रति इसी बुनियादी कर्त्तव्यको निभानेका एक प्रयत्न है।

प्रश्न : मालूम होता है कि हरिजन सवर्ण हिन्दुओंसे अलग ही रहना चाहते हैं, उनसे मिलना नहीं चाहते। क्या यह बात सच नहीं है?

उत्तर मेरा अनुभव तो इससे कतई भिन्न है। मैंने हजारो हरिजनोसे बात की है। वे लोग तो सवर्ण हिन्दुओसे मिलनेके लिए बहुत उत्सुक हैं, बशर्ते कि उनके साथ अच्छा बर्ताव किया जाये। यह बात जरूर सच है कि सवर्णोपर उनका विश्वास नही है, और अगर अविश्वास नही है तो वे उनसे डरते है। एक दुर्भाग्यकी बात और है। उनमे जन्मसे ही हीनताका भाव इतना भर दिया गया है कि वे समझते है कि उन्हे तो ईश्वरने ही सदाके लिए नीच बना दिया है। यह तो प्रत्येक विचारशील सवर्ण हिन्दूके लिए लज्जा और दु खकी बात होनी चाहिए।[1]

सवर्ण हिन्दुओके लिए सबसे अच्छा यही है कि वे भूल जाये कि वे किसीसे ऊँचे है। आज उच्च जातियोके बीच जो ऊँच-नीचकी भावना है, वही हरिजनोकी

१. इसके बादका अनुच्छेद *हितवाद* से लिया गया है।

हीनभावना और हिचकमें प्रतिबिम्बित होती है। उच्च जातिके लोगोंको यह पता चलनेपर आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि अस्पृश्यतामें और इसी कारणसे अस्पृश्योंके बीच भी कई प्रकारके भेद हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-१२-१९३३, तथा *हितवाद*, १२-११-१९३३

२२७. भाषण : छात्रोंकी सभा, नागपुरमें

९ नवम्बर, १९३३

मैं जानता हूँ कि अंग्रेजी और हिन्दीका यह झगड़ा शाश्वत है।[1] छात्रोंकी सभाओंमें भाषणके समय अंग्रेजीमें बोलनेकी माँगसे मुझे आश्चर्य हुआ है। आप जानते होंगे, या जानना चाहिए कि मैं अंग्रेजी भाषाका प्रेमी हूँ। लेकिन मैं यह अवश्य मानता हूँ कि भारतके विद्यार्थी जिनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपना भाग्य भारतके करोड़ों साधारण जनोंके साथ जोड़कर उनकी सेवा करेंगे, वे यदि अंग्रेजीकी अपेक्षा हिन्दीपर ज्यादा जोर दें तो ऐसी सेवा करनेके अधिक योग्य बन सकेंगे। मैं यह नहीं कहता कि आपको अंग्रेजी नहीं सीखनी चाहिए; जरूर सीखिए। लेकिन जहाँ तक मैं देख सकता हूँ अंग्रेजी भारतके करोड़ों घरोंकी भाषा नहीं बन सकती। अंग्रेजी हजारों या दसियों हजार लोगों तक सीमित रहेगी, लेकिन वह करोड़ों लोगों तक नहीं पहुँचेगी। इसलिए जब विद्यार्थी लोग मुझसे हिन्दीमें बोलनेकी माँग करते हैं तो मुझे बहुत खुशी होती है।

आप दोनों वक्ताओंने मेरे विषयमें जो कहा है उसे मैं यदि सच मान लूँ, तो मैं नहीं जानता कि मेरा स्थान कहाँ होगा। पर मैं यह जानता हूँ कि मेरा स्थान असलमें कहाँ है। मैं तो भारतका एक विनम्र सेवक हूँ, और भारतकी सेवा करनेके प्रयत्नमें मैं समस्त मानवजातिकी सेवा कर रहा हूँ। मैंने अपने जीवनके आरम्भ कालमें ही यह देख लिया था कि भारतकी सेवाका विश्व-सेवासे विरोध नहीं है। और फिर ज्यों-ज्यों मेरी उम्र बढ़ती गई और साथ ही साथ समझ भी, त्यों-त्यों मैं देखता गया कि मैंने यह ठीक ही समझा। ५० वर्षके सार्वजनिक जीवनके बाद मैं आज कह सकता हूँ कि राष्ट्रकी सेवा और जगतकी सेवा परस्पर-विरोधी नहीं हैं और इस सिद्धान्तपर मेरी श्रद्धा दृढ़ हुई है। यह एक श्रेष्ठ सिद्धान्त है। इस सिद्धान्तके स्वीकार करनेसे ही जगतमें शान्ति स्थापित हो सकती है और पृथ्वीपर बसे हुए राष्ट्रोंका आपसी ईर्ष्या-द्वेष-भाव शान्त हो सकता है। पूर्व वक्ताने यह सत्य ही कहा है कि अस्पृश्यताके विरुद्ध मैंने जो यह युद्ध छेड़ा है उसमें मेरी दृष्टि सिर्फ हिन्दू-धर्म पर ही नहीं है। मैंने यह अनेक बार कहा है कि हिन्दुओंके हृदयसे अस्पृश्यता यदि जड़मूलसे नष्ट

१. गांधीजीने अपना भाषण हिन्दीमें आरम्भ किया था, लेकिन चूँकि श्रोताओंने अंग्रेजीमें बोलनेकी माँग की, इसलिए वह अंग्रेजीमें बोले।

हो जाये तो इससे बडा विशद परिणाम निकलेगा, क्योकि इसका सम्बन्ध करोड़ो लोगोसे है। कल रात नागपुरकी विराट् सार्वजनिक सभामे मैंने कहा था कि अगर सचमुच अस्पृश्यता हिन्दुओके हृदयसे दूर हो जाये, अर्थात् सवर्ण हिन्दू इस भयानक कलंकको धोकर वहा दे, तो हमें थोडे ही दिनोमे मालूम हो जायेगा कि हम सब हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी आदि एक ही हैं, अलग-अलग नही। अस्पृश्यताकी यह दीवार हटते ही हमे अपनी इस एकताका भान हो जायेगा। मैं सैकड़ो बार कह चुका हूँ कि अस्पृश्यता एक सहस्रमुखी राक्षसी है। उसने अनेक रूप धारण कर रखे हैं। उसके कुछ रूप तो अत्यन्त सूक्ष्म हैं। मेरे मनमें किसी मनुष्यके प्रति ईर्ष्या होती है, तो यह भी एक प्रकारकी अस्पृश्यता ही है। मैं नही जानता कि मेरे जीवनकालमे मेरा यह अस्पृश्यता-नाशका स्वप्न कभी पूरी तरह साकार होगा या नही। जिन लोगोमे धर्म-बुद्धि है, जो धर्मके वाहरी विधि-विधान रूपी शरीरपर नही, किन्तु उसके वास्तविक जीवन-तत्व पर विश्वास रखते हैं, उन्हे इतना तो मानना ही पडेगा कि जो सूक्ष्म अस्पृश्यता मनुष्य-जातिके एक बडे समुदायके जीवनको कलुषित कर रही है, वह अस्पृश्यता नष्ट होनी ही चाहिए। हिन्दुओका हृदय यदि उस पाप-कलकसे मुक्त हो सका, तो हमारे ज्ञान-नेत्र अधिकसे-अधिक खुल जायेंगे। अस्पृश्यताका जिस दिन सचमुच नाश हो जायेगा, उस दिन मनुष्य-जातिके अपार लाभका अनुमान कौन कर सकता है? अब आप लोग सहज ही समझ सकते है कि इस एक चीजके लिए मैंने अपने प्राणोकी वाजी क्यो लगा रखी है।

आप विद्यार्थियोने, जो यहाँ एकत्रित हुए हैं, मेरा इतना आशय यदि समझ लिया है, और मेरे इस कार्यका पूरा अर्थ आपके ध्यानमें आ गया है, तो आपसे मुझे जो सहायता चाहिए, वह आप मुझे तुरन्त ही देंगे। अनेक विद्यार्थियोने पत्र लिख-लिख कर मुझसे पूछा है कि वे लोग इस आन्दोलनमे क्या योगदान दे सकते है? मुझे आश्चर्य होता है कि विद्यार्थियोको यह प्रश्न पूछना पडता है। यह क्षेत्र तो इतना विशाल है और आपके इतना अधिक समीप है कि आपको इस प्रश्नके पूछनेकी आवश्यकता ही नही होनी चाहिए कि हम क्या करें और क्या न करें। यह कोई राजनीतिक प्रश्न नही है। सम्भव है कि यह प्रश्न राजनीतिक बन जाये, लेकिन फिलहाल आपके या मेरे लिए तो इसका राजनीतिके साथ कुछ सरोकार नही है। मेरा जीवन धर्मके सहारे चल रहा है। मैं कह चुका हूँ कि मेरी राजनीतिके मूलमे भी धर्म ही है। राजनीतिमे जब मैंने भाग लेना शुरू किया तब भी मैंने अपने जीवनका नियमन करनेवाले इस सिद्धान्तकी कभी उपेक्षा नही की। चूंकि यह एक दयाधर्मका कार्य है, इसलिए विद्यार्थियोको अपने अवकाशका अधिक नही तो थोडा समय तो हजारो हरिजनोकी सेवामे देना ही चाहिए। आपने मुझे इतनी सुन्दर थैली देकर उन भारतीय विद्यार्थियोकी प्रथम पक्तिमे अपना स्थान प्राप्त कर लिया है, जिनकी अनेक सभाओमे अपनी भारत-यात्राओमे मैंने भाषण दिये है। पर मुझे तो आपसे इससे अधिककी आशा है। मै देखता हूँ कि अगर मुझे अपने अवकाशका समय देनेवाले वहुतसे सहायक मिल जाये, तो बहुत बड़ा काम पूरा हो सकता है। यह काम किरायेके आदमियोसे होनेका नही। हरिजन-बस्तियोमे जाना, उनकी गलियाँ साफ करना,

उनके घरोको देखना, उनके बच्चोको नहलाना-धुलाना यह काम भाड़के आदमियोके द्वारा नही कराया जा सकता। विद्यार्थी क्या सेवा कर सकते हैं, यह मै 'हरिजन'के एक गतांकमें बता चुका हूँ।[1] एक हरिजन-सेवकने मुझे बताया है कि यह कितना बड़ा भगीरथ-कार्य है और इसमे कितनी कठिनाइयाँ पड़ी है। मेरा खयाल है कि हरिजन-बालकोकी अपेक्षा तो जंगली बालकोकी दशा भी अच्छी होती है। हरिजन बालक जिस अधःपतनकी दशामे दिन काट रहे है, उस वातावरणमे जंगली बालक नही रहते। जंगली बालकोके आसपास गन्दगीका यह वातावरण भी नही होता। यह सवाल भाड़के टट्टुओसे हल नही हो सकता। चाहे जितना पैसा हमें मिल जाये, तो भी यह काम पूरा नही हो सकता। इस कार्यको करनेका गौरव तो आपका होना चाहिए। आपको स्कूल-कालेजोमें जो शिक्षा मिलती है, उसकी यह सच्ची कसौटी है। आपकी कीमत इससे नही आँकी जानी है कि आप लच्छेदार अंग्रेजी भाषामे व्याख्यान दे सकते है। अगर ६० रु० मासिक या ६०० रु० मासिककी कोई सरकारी नौकरी आपको मिल गई, तो इससे भी आपकी कीमत नही आँकी जायेगी। दीन-दुखियोकी आप जो सेवा करेंगे उसीसे आपकी कीमतका पता लगेगा। मै चाहता हूँ कि मैंने जो कहा है उसी भावनासे आप लोग हरिजन-सेवा करें। मुझे आजतक एक भी विद्यार्थी ऐसा नही मिला जिसने यह कहा हो कि मै नित्य एक घंटा अवकाशका नही निकाल सकता। आप लोग आज अगर डायरी लिखनेकी आदत डाल ले, तो आपको मालूम होगा कि सालके ३६५ दिनोमें आप कितने कीमती घंटे यो ही नष्ट कर देते हैं। आपको यदि अपनी शिक्षा सफल करनी है, तो इस महान आन्दोलनकी ओर ध्यान दीजिए। कुछ दिनोसे वर्धाके आसपास पाँच मीलके घेरेमे स्कूल-कालेजके कुछ विद्यार्थी हरिजन-सेवा कर रहे है। चुपचाप शान्तरूपसे वे बड़ी अच्छी सेवा कर रहे हैं, इसलिए आप उनका नाम नही जानते। अच्छा हो कि आप लोग उनका काम देख आइए। यह सेवा-कार्य कठिन तो जरूर है, पर आनन्ददायी है। क्रिकेट और टेनिससे भी अधिक आनन्द आपको इस कार्यमे मिलेगा। मै बार-बार कहता हूँ कि मेरे पास यदि सच्चे, चतुर और ईमानदार कार्यकर्त्ता होंगे, तो पैसा तो मिल ही जायेगा। मै १८ वर्षका था, तभीसे भीख माँगनेकी कला सीखने लगा था। मैंने देखा कि यदि हमारे पास सही ढंगके कार्यकर्त्ता हों, तो पैसा तो अनायास ही मिल सकता है। सिर्फ पैसेसे मुझे कभी सन्तोष नही होता। मै तो आप लोगोसे आज यह भीख माँगता हूँ कि अपने अवकाशके समयमे से कुछ घंटे हरिजन-सेवामे लगानेकी प्रतिज्ञा कर लीजिए। सभापति महोदयने कहा है कि मैं एक स्वप्नद्रष्टा हूँ। हाँ, मै एक व्यावहारिक स्वप्नद्रष्टा अवश्य हूँ, किन्तु मेरे सामने कोरी हवाई चीजे नही है। मै तो अपने स्वप्नोको यथाशक्ति कार्यरूपमे परिणत करना चाहता हूँ, इसलिए आप लोगोसे मुझे जो उपहार प्राप्त हुए हैं, उनका नीलाम मुझे यहीं कर देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-११-१९३३

१. देखिए खण्ड ५४, पृष्ठ २८७-९।

२२८. भाषणोंके कुछ अंश[1]

[१० नवम्बर, १९३३ से पूर्व][2]

आप जो पैसा देते है उसे मै इस बातका प्रतीक मानता हूँ कि आपने इस उद्देश्यको अपना बना लिया है। लेकिन केवल पैसा देनेसे काम नही चलेगा, इस पैसेके साथ-साथ इस कार्यमे आपका दिल भी होना चाहिए।[3]

आप यह न समझना कि आपका पैसा व्यर्थ गया। जिन लोगोने पैसा दिया है वस्तुत उन्होने पुण्यलाभ किया है और जिन लोगोने समर्थ होते हुए भी पैसा नही दिया, सच पूछो तो, उन्होने पुण्य गँवाया है। जुआ, शराब और भोग-विलास पर जो पैसा खर्च किया जाता है उससे दोहरा नुकसान होता है। एक तो इससे आपका धन व्यर्थ जाता है, और दूसरे, आप अपना स्वास्थ्य और अपनी मान-प्रतिष्ठा भी खो बैठते है। जबकि वे लोग जिन्होने मानवताके सेवार्थ एक पैसा भी दान दिया है उन्हे उससे दुगना लाभ हुआ है। अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मके माथेपर एक कलक है। यह एक नासूर है जो हिन्दू-धर्मके शरीरको गलाये डाल रहा है। मै अपनी आँखोसे देख रहा हूँ कि हिन्दू-धर्मका शरीर धीरे-धीरे नष्ट हो रहा है। इसकी सडाध मेरी नाक अनुभव करती है। यदि आप मेरे विचारोसे सहमत है तो आपको इस उद्देश्यमे यथाशक्ति अपना योगदान देना चाहिए। यदि एक बार हम हिन्दू-धर्मकी आध्यात्मिक शक्तिको खो बैठे तो मै नही जानता कि हमारी क्या स्थिति होगी। धर्म बिना मनुष्य वैसा ही है जैसी बिना पतवारकी नाव। इसलिए आप मुझे जो पैसा देते है वह मेरे लिए इस इच्छाका द्योतक है कि आप हिन्दू-धर्मको आध्यात्मिक नाशसे बचाना चाहते है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-११-१९३३

१ और २. ये अंश चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से लिये गये हैं जिसके अनुसार गांधीजी १० नवम्बर, १९३३ को गोंडिया गये थे, और ये भाषण उन्होंने गोंडिया जानेसे पहले दिये थे।

३. इसके बादका अंश उस भाषणसे लिया गया है जो रास्तेमें जमा हो गये ग्रामीणोंके सामने दिया गया था।

२२९. टिप्पणी

सच्ची अहिंसा

श्री जमशेद मेहता, जो कि मानवताके एक सच्चे सेवक हैं, को उनके एक मित्रने 'ज्ञानेश्वरी गीता'[1] के अध्याय १३ मे से अहिंसाके बारेमे एक प्रवचन निकाल कर भेजा है जिसे श्री मेहताने अंग्रेजीमे अनुवाद करके मेरे पास भेजा है। मैंने इसे और संक्षिप्त कर दिया है और मूल पाठके अर्थको कायम रखते हुए ऐसे रूपमे प्रस्तुत किया है जिसे शायद ज्यादा आसानीसे समझा जा सकता है। जो लोग अस्पृश्यताको अपने मनमे अभी भी स्थान दिये हुए है उन्हे चाहिए कि महाराष्ट्रके इस महान सन्तकी बताई हुई कसौटीपर अस्पृश्यताको कसकर देखे। अहिंसाकी उन्होंने जो व्याख्या की है क्या उसके साथ अस्पृश्यताका मेल बैठता है? नीचे उद्धृत अंशको पढकर आप स्वयं देखे :

> सच्ची अहिंसा क्या है, इसपर विचार करनेसे पहले यह देखना जरूरी है कि यह क्या नही है। अच्छी वर्षा हो, इसके लिए लोग बलि देते हैं जिसमे पशुओकी हत्या की जाती है। यह अहिंसा नही है। क्या यह ऐसा ही नही है जैसे कि कोई व्यक्ति स्वयं अपने हाथोको काट डाले ताकि उसे पकाकर भोजनके रूपमे परोसा जा सके? क्या किसी पेड़के चारो ओर बाड़ी लगानेके उद्देश्यसे उस पेड़की सभी डालियोको काट कर बाडीमे लगा देना बुद्धिमानी है? फिर, बहुतसे मनुष्योको बीमारियोसे बचानेके लिए लोग समूचे पेड़ ही काट डालते हैं, या पेड़की पूरी छाल उतार लेते हैं, या जीवित पशुओका अर्क खीचते हैं और अन्य प्राणियोके शरीरसे द्रवपदार्थ निकालते हैं। क्या यह ऐसा ही नही है जैसे कि कोई व्यक्ति मकानमे एक बरांडा या सायबान बनानेके लिए उस मकानको ही गिरा दे और आग तापनेके लिए अपने कपड़ोको ही जला दे?
>
> सच्ची अहिंसा या प्रेम हृदयमे पैदा होता है, और जिस प्रकार स्वर्ण अपने गुणोसे पहचाना जाता है उसी प्रकार प्रेम भी मनुष्यके आचरणमे प्रकट होता है। प्रेम-पूरित मनुष्य यह कभी नही भूलता कि जैसा जीवधारी वह है वैसे ही संसारमे असंख्य जीवधारी भरे हुए है और वह इस बातकी बड़ी सावधानी बरतता है कि कही उसके हाथों किसी प्राणीको हानि न पहुँचे। वह जिन लोगोंसे मिलता है उनकी आँखोमे अपने प्रेयकी झलक पाता है। वह सभीका मित्र है। जिस प्रकार बिल्ली अपने बच्चेको बिना चोट पहुँचाये दाँतोसे पकड़

१. यहाँ गांधीजीका संकेत गीता पर ज्ञानेश्वरकी मराठी टीकाकी ओर है।

कर उठाती है उसी प्रकार प्रेमका पुजारी अपने सम्पर्कमे आनेवाले व्यक्तियोसे व्यवहार करता है। वह दवे पाँव और विना आहट किये चलता है ताकि उसकी पदचापसे दूसरोकी नीदमे वाधा न पड़े। जिनको जरूरत हो, उनके लिए वह हमेशा स्थान कर देता है। वह अपनी वाणीका स्वर सदैव इतना सयमित रखता है कि दूसरोके कानोको वह खटके नही। वोलनेकी जरूरत न होनेपर वह मौन रहता है। वह दूसरेको दुख पहुँचानेवाली कोई बात नही कहता। वह दूसरोकी योजनाओमे गडवडी पैदा करने या उनको भयभीत करनेकी इच्छा नही रखता। वह ऐसे शब्द कभी नही बोलता जिनसे वहस या विवादको जन्म मिले, या जिनसे दूसरोंकी भावनाओको ठेस पहुँचे। उसकी वातचीतमे कोई छल नही होता, न सन्देह होता है और न कोई अस्पष्टता होती है। वह कभी किसीको घूर कर नही देखता ताकि कही उसका घूरना लोगोको वुरा लग सकता है। वह निरुद्देश्य अपना हाथ नही हिलाता, क्योकि वह एक मच्छर तकको हानि नही पहुँचाना चाहता। दूसरे हथियारोकी कौन कहे वह एक छडी भी लेकर नही चलता। उसके हाथ या तो अभिवादन करते है या सेवा।

जिस प्रकार वृक्ष जन्म देनेवाले वीजका प्रकट रूप है, उसी प्रकार ऊपर वताई गई वाते अन्तरके स्थायी प्रेमभावके वाहरी चिह्न है। उसका मस्तिष्क सभी अंगोका स्वामी है। इसलिए सच्ची अहिसा मस्तिष्ककी प्रवृत्तिमे है जो शरीरकी अन्य ज्ञानेन्द्रियोके माध्यम से व्यक्त होती है। जो व्यक्ति सभी जीवधारियोके प्रति प्रेमभावसे भरा हुआ है और जिसके मन, वचन और कर्ममे एकता है, वही सचमुच महान है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-११-१९३३

२३०. लक्ष्य तो एक ही है

एक पत्र-लेखकने मद्रास-हाईकोर्टके भूतपूर्व जज सर सी० वी० कुमारस्वामी शास्त्रीका एक लेख मेरे पास भेजा है। छपे हुए तीन फुलस्केप पन्नेका वह लेख है। 'सनातनियो' के पक्षमे वह लिखा गया है। उसमे यह वतानेका प्रयत्न किया गया है कि अस्पृश्यता अनादि कालसे चली आ रही है और विधान-सभामे लोग उसके सम्वन्धमे जो कानून पास कराना चाहते है, वह निरर्थक है। पर उस लेखका यह अन्तिम अनुच्छेद महत्त्वका है.

कितनी ही सामाजिक असमानताएँ और संकीर्ण दृष्टियाँ समय और शिक्षाके प्रभावसे शिथिल या समाप्त होती जा रही है। पुरानी व्यवस्था बदलती जा रही है, और उसके साथ ही लोगोंके पुराने विचारोंमें भी परिवर्तन होता जाता है। कई जातियोंको, जो पहले दलित या गुलाम समझी जाती थीं, आज

शिक्षा और आर्थिक उन्नतिके कारण अधिकार और सुख-सुविधाएँ मिल गई हैं। भारतका कोई भी हित-चिन्तक छाती ठोककर यह न कहेगा कि एक कौम या जाति दूसरी कौम या जातिसे हमेशा लड़ती ही रहे और सामाजिक अन्याय और असमानताएँ दूर न की जायें। लेकिन आज जो तरीके अपनाये जा रहे हैं और जिन साधनोंका प्रयोग किया जा रहा है उसे देखकर किसके दिलमें दुःख और भय पैदा न होगा? ये तरीके तो सवर्णों और दलित जातियोंके बीच कटुता ही बढ़ायेंगे, और दलित जातियोंका इससे कोई खास लाभ नहीं होगा। उनकी दलितावस्थाके तो अन्य तथा बहुत गहरे कारण हैं। उनका यह दलितपना तभी दूर होगा, जब तमाम सवर्ण हिन्दू मिलकर उनकी आर्थिक और शिक्षा सम्बन्धी उन्नति करनेका प्रयत्न करेंगे।

मेरी विनम्र रायमें तो ऊपरका यह अन्तिम अंश लेखककी उस युक्तिको काट देता है, जिससे यह सिद्ध किया गया है कि अस्पृश्यता एक पवित्र और धार्मिक प्रथा है। लेखकके इस अंशसे तो यह मालूम होता है कि अस्पृश्यता एक सामाजिक बुराई है और विद्वान भूतपूर्व न्यायाधीश महोदयको उसका उन्मूलन देखकर प्रसन्नता ही होगी। उनके इस कथनसे तो प्रत्येक सुधारक सहमत होगा कि "आज जो तरीके अपनाये जा रहे हैं और जिन साधनोंका उपयोग किया जा रहा है उसे देखकर किसके दिलमें दुःख और भय पैदा न होगा? ये तरीके तो सवर्णों और दलित जातियोंके बीच कटुता ही बढ़ायेंगे और दलित जातियोंका इससे कोई खास लाभ नहीं होगा।" सुधारकको इसमें सिर्फ इतना और जोड़ देना पड़ेगा कि 'सर कुमारस्वामीका यह सारा भय काल्पनिक है।' सुधारकोंने कटुता पैदा करनेवाला न तो कोई तरीका ही अपनाया है और न ऐसे किसी साधनका ही प्रयोग किया है। सर कुमारस्वामीने इस बातका अध्ययन करनेका कष्ट नहीं उठाया है कि सुधारक क्या काम कर रहे हैं और किस ढंगसे काम कर रहे हैं। सचमुच, मैं उन्हें दिखा सकता हूँ कि जहाँ पारस्परिक कटुता पहले ही से मौजूद है और यह कटुता बढ़कर मारपीट तककी नौबत आ सकती है, वहाँ सुधारक हरिजनोंके आर्थिक सुधार तकको आगेके लिए टाल देते हैं। उदाहरणके लिए, हरिजनोंको जिन सार्वजनिक कुओंसे पानी भरनेका असंदिग्ध रूपसे कानूनन अधिकार प्राप्त है उन कुओंसे भी पानी भरवानेका काम सुधारक मुल्तवी करते आये हैं। अब साधनोंके प्रयोगकी बात लें। यह तो सुधारक तुरन्त स्वीकार कर लेंगे कि सामाजिक पूर्वग्रह कानूनी सहायता लेनेसे दूर नहीं हो सकते। पर जब कानूनकी ऐसी व्याख्या होती हो जिससे अस्पृश्यताको समर्थन मिलता हो, तब तो सुधारक कानून और विधान-सभाकी मदद माँगेंगे ही, और मौजूदा कानूनमें सुधार करनेका आग्रह अवश्य करेंगे। किसी बुराईको अगर कानून आश्रय दे रहा हो तो उस कानूनी आश्रयके मुकाबलेमें कोई भी सुधार सफल नहीं हो सकता। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि कानूनी बाधाएँ कानूनमें परिवर्तन करके ही दूर हो सकती हैं, अन्य किसी रीतिसे नहीं। सुधारक सिर्फ ये कानूनी बाधाएँ ही दूर करना चाहते हैं, इससे अधिक कुछ नहीं। उनकी सिर्फ इतनी ही इच्छा है कि अस्पृश्यताको

कानूनी स्वीकृति नही मिलनी चाहिए। वे समझते है कि कानूनी रुकावटे दूर हो जानेपर भी सामाजिक बुराईके रूपमें अस्पृश्यता तुरन्त ही नष्ट हो जायेगी, और उसकी ओर भविष्यमें अभी बहुत लम्बे समय तक ध्यान रखना पड़ेगा।

लेखसे उद्धृत अशके अन्तिम वाक्यका मै स्वागत करता हूँ। जब तमाम सवर्ण हिन्दू मिलकर उनकी (हरिजनोकी) आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी उन्नति करनेका प्रयत्न करेगे, तब अस्पृश्यताको इस देशसे नष्ट होते अधिक समय नही लगेगा। सुधारकोपर सनातनियोका यदि विश्वास न हो, तो वे उनसे अलग स्वतन्त्र रीतिसे काम करे। क्या सर कुमारस्वामी 'सनातनियो' से काम करनेके लिए कहेगे? इसमे उन्हे सफलता मिल जाये, तो कटुता जरा भी न रह जायेगी। क्या उन्हे मालूम है कि सनातन-धर्मके नामपर अपनेको सनातनी कहनेवालोने निरपराध हरिजनोकी फसले जला दी है, उन्हे मारा-पीटा है और जब वे अपने उचित और न्याय्य अधिकारोका प्रयोग कर रहे थे तब उन गरीबोको दूसरे तरीकोसे सताया है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-११-१९३३

२३१. हरिजन-शिक्षकोंके लिए

एक सज्जन पच्चीससे ऊपर हरिजन-पाठशालाएँ चला रहे है। उन्होने एक लम्बा पत्र पाठशालाओकी व्यवस्था-सम्बन्धी कठिनाइयोके बारेमे मुझे लिखा है, और पूछा है कि अगर मुझे स्वय इन पाठशालाओको चलाना पडे, तो मै उन्हे किस तरह चलाऊँगा। उन्होने अपनी कठिनाइयाँ बडी सावधानीसे लिखी है, लेकिन यहाँ उन सबके उद्धृत करनेकी मुझे कोई आवश्यकता नही जान पडती। मै तो यहाँ उनकी कठिनाइयोका उत्तर देनेका ही प्रयत्न करूँगा।

आज जो सार्वजनिक पाठशालाएँ चल रही है उनमे पढनेवाले हरिजन लडको और लडकियोको छात्रवृत्तियाँ तथा अन्य सहायता तो हमे देनी ही चाहिए। पर जो पाठशालाएँ हमारी अपनी देख-रेखमे चल रही है, उनमें सामान्य पाठशालाओके रग-ढगके अन्धानुकरण करनेका कोई कारण नही है।

हमें समझ लेना चाहिए कि किसी भी पाठशालामे पढानेके लिए हमे हरिजन बच्चे बडी दिक्कतसे मिलते है। उनमे किसी भी तरहकी नियमितता तो हमे मिलेगी ही नही। इसके अलावा हमारी भूतकालकी भयंकर उपेक्षाके कारण वे इतने अनगढ होते है कि शुरू-शुरूमे तो हमें सामान्य बच्चोकी अपेक्षा उन्हे बिलकुल जुदा ही तरीकेसे हाथमे लेना होगा।

पाठशालामे जब पहले-पहल हम उन्हे भरती करे, तब उनके शरीरकी बारीकीसे जाँच करके उसे खूब साफ करना चाहिए। उनके कपडे-लत्ते भी शायद धोने और सीने पडे। इसलिए कुछ समय तक तो उनके लिए सबसे पहला दैनिक पाठ यह होगा कि वे अपने शरीरको स्वच्छ रखे, आसपास की जगह साफ रखें और मामूली

सिलाई करना सीखे। पहले साल शायद मैं उनके हाथमें कोई किताब नहीं दूंगा। जिन वस्तुओंसे वे परिचित होंगे, मैं उन्हीके बारेमें बात करूँगा और ऐसा करते हुए उनका उच्चारण सुधारूँगा और व्याकरणकी गलतियाँ ठीक करूँगा तथा नये-नये शब्द सिखाऊँगा। जो नये-नये शब्द वे सीखते जायेंगे, उन्हें मैं लिखता जाऊँगा और बार-बार उनका प्रयोग इस तरह करूँगा कि वे शब्द उनके मनमें अंकित हो जायें। शिक्षक व्याख्यान न दे, बल्कि बातचीतके रूपमें उन्हें पढ़ाये। बातचीत करते हुए ही वह अपने विद्यार्थियोंको इतिहास, भूगोल और अंकगणितका नया-नया ज्ञान देता जाये। इतिहास अपने ही समयसे शुरू होगा, और सो भी अपने अत्यन्त निकटकी घटनाओं और मनुष्योंसे। इसी तरह भूगोलका आरम्भ अपनी पाठशालाके आसपासके स्थानोंसे ही होगा। और गणित शुरू कराया जायेगा विद्यार्थीके घरू हिसाब-किताबसे। इस पद्धतिकी जाँच मैं स्वयं कर चुका हूँ और मैं जानता हूँ कि अमुक नियत समयमें विद्यार्थियोंको प्रचलित पद्धतिकी अपेक्षा इस तरीकेसे कहीं अधिक ज्ञान दिया जा सकता है; साथ ही. उनके मस्तिष्कपर कुछ भार भी नहीं पड़ेगा। वर्णमालाका ज्ञान तो एक जुदा ही विषय समझना चाहिए। बालकोंको बताना चाहिए कि अक्षर एक प्रकारके चित्र ही है। अक्षरोंकी पहचान कराके फिर उनका नाम बताना चाहिए। इसके बाद चित्रकारी (ड्राइंग) के पाठके रूपमें बच्चोंको अक्षर लिखना सिखाना चाहिए। ऐसा करना चाहिए कि कीड़े-मकोड़े जैसे अक्षर बनानेके बजाय बालक नमूनोंकी बिलकुल हूबहू नकल कर सकें। इसलिए जबतक उनका अपनी उँगलियों और कलमपर पूरा काबू न हो जाये, तबतक उनसे अक्षर लिखनेके लिए न कहा जाये। शालभरमें जैसे-तैसे किसी तरह एक किताब पढ़वा कर बालकको उससे जो ज्ञान हो सके, उतना करके उसका मानसिक विकास रोकना एक पाप है। हम यह महसूस नहीं करते कि अगर बालक घरके जीवनसे बिलकुल अलग कर दिया जाये, और सिर्फ पाठशालामें ही रखा जाये तो वह कई साल तक गावदी ही बना रहेगा। घरमें वह अनजाने ही नई-नई बातें और भाषा सीख लेता है, पाठशालामें नहीं। इसलिए हमें संस्कारी तथा असंस्कारी घरोंके बालकोंके बीचमें जमीन-आसमानका अन्तर दिखाई देता है। वास्तवमें, असंस्कारी घरोंको घर कहना ही ठीक नहीं है।

मैंने जिस योजनाका ऊपर वर्णन किया है, उसके अनुसार अध्यापकसे आशा की जाती है कि वह अपना कार्य एकाग्रतासे करेगा और अपने विद्यार्थियोंके साथ काफी घुलमिल जायेगा। मैं जानता हूँ कि इस योजनाको अमलमें लानेके लिए योग्य अध्यापकोंका मिलना सबसे मुश्किल काम है। पर जबतक हम इसका उचित दिशामें आरम्भ नहीं करेंगे, तबतक योग्य अध्यापक भी मिलनेके नहीं।

इतना करनेके बाद जब बालकोंके हाथमें किताबें देनी होंगी, उस स्थितिका विचार तो मैं पीछे करूँगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १०-११-१९३३

२३२. पत्र : मानशंकर जे० त्रिवेदीको

१० नवम्बर, १९३३

चि० मनु,

तूने प्रिन्सेसको[1] मिलकर ठीक ही किया। अब तू ही उससे सब बात करना। मै तो उसे संक्षिप्त पत्र ही लिख पाया हूँ। मैनें उससे सारा विवेचन नही किया है। मुझे लिखना। एलिजाबेथ[2] भी यदि लिखना चाहे तो लिख सकती है। काका साहबके सात दिनोके उपवासकी बात तो तुझे मालूम हो गई होगी। . . .[3]ने मुझे निराश किया है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

पता वर्धा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० २२६२१) से।

२३३. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

नागपुर

[१० नवम्बर, १९३३][4]

मेरे सामने जो नौ महीने पड़े हुए है उसकी तुलनामे चार दिन तो बहुत ही कम समय है। इसलिए मै कह नही सकता कि मै इस अत्यधिक भार को सहन भी कर सकूँगा या नही। मैं तो सिर्फ इतना कह सकता हूँ कि यदि ईश्वरकी इच्छा हुई कि मैं यह यात्रा पूरी कर लूँ तो इस सब घोर परिश्रमके बावजूद वह मुझे इसे पूरा करनेकी शक्ति देगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-११-१९३३

१. एफी परिस्टाशी।

२. एक रोमन कैथॉलिक लड़की जिसे गांधीजी सामान्यतया विमलाके नामसे पुकारते थे और जिससे मानशंकर त्रिवेदी विवाह करना चाहते थे।

३. नाम नहीं दिया गया है।

४. यह भेंट गांधीजीने यात्राके चौथे दिन दी थी। यात्रा ७ नवम्बर, १९३३को शुरू हुई थी।

२३४. भाषण: गोंडियामें

१० नवम्बर, १९३३

गांधीजीने कहा कि यदि हरिजन लड़के द्वारा लगाये गये आरोप[1] सच हैं तो हरिजनोंके प्रति उच्च वर्णके लोगोंका रवैया निन्दनीय है। उन्होंने कहा कि मैं केवल दिखावा नहीं चाहता, मैं लोगोंके हृदयोंको शुद्ध देखना चाहता हूँ। लेकिन अगर वे लोग अभी भी अपने-आपको हरिजनोंसे अलग-थलग रखना चाहते हैं तो उन्हें खुल कर ऐसा कह देना चाहिए और फिर उससे उत्पन्न परिस्थितिके लिए तैयार रहना चाहिए। गांधीजीने कहा, मैं उस आरोपके बारेमें कुछ नहीं कह सकता जो कि बीड़ीवालोंके विरुद्ध लगाया गया है, क्योंकि उसके बारेमें मुझे कोई जानकारी नहीं है। गांधीजीसे पहले जो वक्ता बोले थे उन्होंने 'हरिजन' शब्दपर आपत्ति की थी जिसपर महात्माजीने कहा कि 'हरिजन' शब्द उनकी अपनी खोज न होकर स्वयं एक हरिजन द्वारा चुना हुआ शब्द है। उन्होंने कहा कि मैं अपने-आपको भी 'हरिजन' कहना अधिक पसन्द करता हूँ। उन्होंने बीड़ी व्यापारियोंसे अपने मजदूरोंके साथ अच्छा व्यवहार करनेका अनुरोध करते हुए उन्हें हरिजन उद्देश्यके लिए खुले हाथ दान देनेके लिए धन्यवाद दिया। इसके बाद महात्माजीने स्थानीय भण्डार-गृहमें खादीकी बिक्रीकी चर्चा की और बताया कि खादीकी बिक्री बहुत कम हुई है। गोंडिया जैसे शहरमें प्रतिमास केवल १,००० रुपयेकी खादी बेची जाती है। उन्होंने लोगोंको बताया कि लोगोंके खादी खरीदनेसे हरिजनोंको कितना और कैसे लाभ होता है।

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, १६-११-१९३३

१. एक हरिजन बालकने यह शिकायत की थी कि सवर्ण हिन्दू एकता और सहानुभूतिका स्वांग भरते हैं। उसने बीड़ी फैक्टरीके मालिकोंके विरुद्ध भी यह शिकायत की थी कि वे अपने हरिजन मजदूरोंके प्रति अच्छा व्यवहार नहीं करते।

२३५. तार: जवाहरलाल नेहरूको

[११ नवम्बर, १९३३][1]

दो दिन देनेके लिए अपनेको असमर्थ पाता हूँ। किसी भी सोमवार तीसरे पहर तीन घटे दे सकता हूँ। २७ नवम्बरको रायपुर और ४ दिसम्बरको जबलपुर होऊँगा।

[अग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३३, सौजन्य . नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय

२३६. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
११ नवम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मै बहुत व्यस्त यात्रा-कार्यक्रमके बाद अभी-अभी लौटा हूँ और तुम्हारे पत्रको पढनेके बाद मैने निम्नलिखित तार तुम्हे भेजा है.[2]

एक दिनसे ज्यादा और तीन घटेसे ज्यादा समय देना असम्भव है। तीन घटे देना ही काफी मुश्किल है। कार्यक्रम इतना व्यस्त है कि विश्रामके लिए भी मुश्किलसे समय मिलता है। विश्राम, स्नान तथा भोजनके लिए जो चार घटे थे वे अब घटाकर दो घटे रह गये है। जिस कार्यक्रमसे दसियो हजार व्यक्ति सम्बन्धित हो उसे आसानीसे न तो आगेके लिए टाला जा सकता है और न उसमे फेरबदल की जा सकती है। साथकी प्रतिसे[3] तुम्हे कार्यका अन्दाजा लग जायेगा और जहाँ तुम विश्रामके घंटे देखोगे उनमे, शुक्रवारके तीसरे पहरको छोडकर, कमी कर दी गई है और विश्रामका समय प्रात १० बजेसे दोपहर २ बजे तकके बजाय दोपहर १२ से २ बजे तकका कर दिया गया है।

मै तुम्हारी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि *प्रस्तावित बातचीतसे बाते* सन्तोषजनक रूपसे साफ नही होगी। यदि अ० भा० का० क० की बैठक होती है तो मुझे नही मालूम कि मै उसकी बैठकोमे कैसे भाग ले सकूँगा। क्या मेरे लिए इनमे

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. देखिए परिशिष्ट १।

भाग न लेना बेहतर नही होगा? यदि ऐसा करना उचित हो तो मैं अपने विचार लिखकर भेज दूंगा। तुम्हें भेजे अपने सार्वजनिक पत्रमे[1] जो राय मैंने जाहिर की है वह निरन्तर पुष्ट होती जा रही है।

तुमने हिजली जेलके सम्बन्धमें लाहिड़ीके वक्तव्यको तो देखा ही होगा। इससे सतीश बाबूके पत्रमें कही गई बातोकी पुष्टि होती है। मुझे गवर्नरका पत्र मिला है।[2] उनके सचिवका कहना है कि "आपने जिस मामलेका उल्लेख किया है गवर्नर महोदय उसकी जाँच करेंगे।"

अस्पतालके सम्बन्धमें जो अपील है वह मैंने देखी है।[3] उम्मीद है कि इसकी जैसी प्रतिक्रिया होनी चाहिए वैसी होगी।

सरकारकी माँगसे सम्बन्धित तुम्हारे पत्रको मैंने ध्यानसे पढ़ा है। स्वराज्य भवनसे सम्बन्धित कुछ भी करते हुए क्या तुम यह नही समझते कि तुम्हे न्यासियोंको केवल सूचना देनेके बजाय उनसे राय भी लेनी चाहिए? महज समयकी कमीके कारण मैं तुम्हारा पत्र जमनालालजीको दिखा तक नही सका हूँ। वह मुझपर यह कहते हुए ताना कसते है कि चूंकि मै वर्धामें हूँ इसलिए तुम उनकी बिलकुल उपेक्षा कर रहे हो, यहाँतक कि उनके पत्रोंका जवाब भी नही दे रहे हो। मैंने उनसे कहा कि तुम्हारे पत्र जैसे मेरे लिए है वैसे ही आपके लिए है और इस समय हममें से जो थोड़ेसे लोग बाहर हैं उनके पास महज शिष्टाचार निभानेका समय बहुत कम है।

माँ जैसी पुराने रोगीके स्वास्थ्यके तेजीसे सुधरनेकी आशा तुम्हें नही करनी चाहिए। मुझे तो यह आश्चर्य है कि रोगका जो आक्रमण उनपर हुआ था उससे वह बच गई। आशा है कि सुधार चाहे धीमा ही हो, जारी रहेगा।

सप्रेम,

बापू

संलग्न : १

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. १४ सितम्बर, १९३३ का; देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ४४६-५०।

२. गांधीजीने बंगालके गवर्नरको २ नवम्बर, १९३३ को पत्र भेजा था।

३. देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको" ३०-१०-१९३३।

२३७. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

वर्धा
११ नवम्बर, १९३३

मै नही जानता कि कोई भी आलोचक इन सभाओ और प्रदर्शनोसे बेहतर और क्या सबूत चाह सकता है कि अस्पृश्यता तेजीके साथ छिन्न-भिन्न हो रही है। इसका तात्पर्य यह नही कि इस प्रश्नको लेकर जनमानसमे एकदम परिवर्तन आ गया है। लेकिन पिछले चार दिनोमे जो-कुछ प्रमाण मुझे मिला है यदि पूरी यात्राके दौरान ऐसा ही प्रमाण मिलता रहा तो मै निश्चयके साथ मान सकता हूँ कि अस्पृश्यता-रूपी राक्षसकी अंत्येष्टि-क्रिया निकट भविष्यमे ही सम्पन्न हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-११-१९३३

२३८. भाषण : देवलीमें[1]

११ नवम्बर, १९३३[2]

मै स्वभावत: शान्ति-प्रेमी हूँ। हिन्दुओमे फूट पैदा करनेकी मेरी तनिक भी इच्छा नही है। सनातनियो तथा सुधारवादियोके लिए यही सबसे अच्छा होगा कि वे आपसमे बातचीत करके कोई समझौता करनेका प्रयत्न करे। यदि वह प्रयत्न असफल हो जाता है तो दोनो पक्षोको चाहिए कि वे शान्तिपूर्ण और उचित तरीकोको अपनाये और एक-दूसरेकी बातको सहन करना सीखे। मै अपनेको सनातनी तथा सुधारवादी दोनो ही मानता हूँ। हरिजनोके प्रति एक सवर्ण हिन्दू अधिकसे-अधिक जितना सद्भाव रख सकता है मैने अपने अन्दर वैसा सद्भाव पैदा करनेका प्रयत्न किया है। ईश्वर ही जानता है कि अपने इस प्रयत्नमे मुझे कहाँतक सफलता मिली है। मुझ जैसे एक अपूर्ण मनुष्यके लिए जिस हदतक सम्भव है, उस हदतक मै भी चीजोको हरिजनोकी आँखोसे देखनेका तथा यह जाननेका प्रयत्न कर रहा हूँ कि उन लोगोके मनमे क्या-कुछ विचार चल रहे है। सारी सचाईको जान लेना तो मनुष्यके बसकी बात नही है। उसका तो यही कर्तव्य है कि वह जो-कुछ सचाई देखता है उसका पालन करे और ऐसा करते हुए शुद्धतम साधनका, अर्थात् अहिंसाका आश्रय ले।

१. गांधीजी हरिजनोंके लिए मन्दिर खोलने देवली गये थे, लेकिन कुछ सनातनियोंने इसका विरोध किया। दक्षिणके एक शास्त्रीने गाधीजीसे आन्दोलन रोकने तथा हिन्दू-समाजमें फूट न फैलानेका अनुरोध किया।

२. बॉम्बे क्रॉनिकल से।

सनातनियोंकी भावनाओंको मैं ठेस नही पहुँचाना चाहता। मैं ज्यादासे-ज्यादा विनम्र रूपसे उन्हे अपने मतका समर्थक बनाना चाहता हूँ। यदि मैं कर सकूँ तो मैं उनका मन मोह लेना चाहता हूँ। मैं स्वयं अपने कष्ट-सहनसे उनके मनको पिघला देना चाहूँगा। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जिस रूपमे आज हमारे यहाँ अस्पृश्यता प्रचलित है उसे शास्त्रोकी मान्यता प्राप्त नही है। लेकिन मैं इस चर्चामे नही पड़ना चाहता कि शास्त्र किस चीजका समर्थन करते है और किसका नही करते। जो-कुछ भी सचाई मैं देखता हूँ उसे मैं आपके सामने जितने विनम्र रूपसे हो सकता है, पेश कर देता हूँ और यदि आवश्यकता पड़े तो मैं अनवरत रूपसे उस सत्यका पालन करनेके प्रयत्नमे अपना जीवन भी बलिदान कर देनेको तैयार हूँ। मेरे मनमे यह बात असंदिग्ध रूपसे स्पष्ट हो गई है कि यदि अस्पृश्यताको दूर नही किया गया तो हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जाति, दोनों ही का नाश अवश्यम्भावी है। मैं जब १० वर्षका बालक था तबसे मैं अस्पृश्यताको एक पाप मानता आया हूँ। जन्मपर आधारित अस्पृश्यताके विचारको तो मेरा मन कभी स्वीकार कर ही नही पाया है। अपनी योग्यतानुसार मैंने शास्त्रोंका अध्ययन करनेका प्रयत्न किया है। यथासम्भव अधिकसे-अधिक पंडितोसे सलाह की है और उनमे से अधिकाशने मेरे मतका समर्थन किया है। लेकिन सत्य पुस्तकोमें नही मिलता। सत्य तो प्रत्येक मनुष्यके हृदयमे रहता है। प्रत्येक व्यक्तिको वही इसकी खोज करनी है और उसे सत्य जैसा दिखाई देता है उससे ही अपना मार्ग निर्धारित करना है। लेकिन किसी व्यक्तिको यह अधिकार नही है कि सत्यको जैसा वह समझता है दूसरेको उसके अनुसार ही कार्य करनेके लिए मजबूर करे।

यहाँ उपस्थित मन्दिरमें जानेवाले उन लोगोसे, जो मन्दिरमें हरिजनोके प्रवेशके पक्षमें हैं, मैं यह अपील करूँगा कि वे मन्दिरमे तभी जाये जब सनातनी लोग, जिन्होंने उनका रास्ता रोक रखा है, उस स्थानसे हट जाये। हम उनपर विजय नही पाना चाहते। उनसे नाराज मत होइए, उनका अपमान मत करिए; इसके विपरीत, यदि वे भूखे हों और आपका आतिथ्य उन्हे स्वीकार हो तो आप उन्हे भोजन खिलाइए। हमे उन्हे प्यारसे जीतना है। हमे उनसे निपटनेके लिए पुलिसकी मदद नही लेनी है।

गांधीजीने आशा व्यक्त की कि जिन लोगोंको गिरफ्तार किया गया है उन्हें छोड़ दिया जायेगा और मन्दिर तुरन्त तथा बिना किसी संघर्षके हरिजनोंके लिए खोल दिया जायेगा।[1]

मैं यह बात इसलिए नही कह रहा हूँ कि मैं असहयोगी हूँ बल्कि इसलिए कि मैं अप्रतिकारके सिद्धान्तमे विश्वास रखता हूँ। और फिर मेरा विश्वास है कि धर्मकी रक्षा बल-प्रयोग अथवा हुड़दंगसे कदापि नही की जा सकती बल्कि प्रायश्चित्त तथा कष्ट-सहन द्वारा ही की जा सकती है। इसलिए आवश्यकता पड़नेपर मैं प्रायश्चित्त स्वरूप अन्तमे अपनी जान भी देनेको तैयार हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-११-१९३३

१. इसके बादका अनुच्छेद *हरिजन*, १७-११-१९३३ से लिया गया है।

२३९. प्रति व्यक्ति एक पैसा

श्री हरखचन्द २६ अक्टूबरके अपने पत्रमे लिखते है.[1]

मैं आशा करता हूँ कि इतना सब लिखनेके लिए पाठक मुझपर रोष नही करेगे। यदि कोई कहे कि यह तो पुरानी बात है, बाढका किस्सा भी पुराना है तो यह ठीक नही है। जब बाढ आई, उस समय जिनकी मौत आई वे तो तुरन्त मर गये। जीवितोको तुरन्त ही जो सहायता दी जानी चाहिए थी वह भी दे दी गई। लेकिन बेघर लोगोके लिए दूसरा मौसम आनेतक तथा उनकी फसलोके पकनेतक उनको निवाह लेना दयालु लोगोका नैतिक कर्त्तव्य है और इस तरहके पत्र इस बातको सिद्ध करते है कि यह समय इस कर्त्तव्यको पूरा करनेका है।

पाठक देखेगे कि कितने ही स्थानोपर रोज प्रतिव्यक्ति एक पैसेसे भी कमके चावल दिये जाते है और यदि यह चित्र उनके हृदयपटल पर स्पष्ट रूपसे अंकित हो गया है तो वे ऐसे दुखियोके लिए रोज कुछ भाग निकाले बिना स्वयं सुख-शान्तिसे नही खायेगे। इसमे अगर सब कोई यथाशक्ति अपना योगदान देगे तो हजारों लोगोको जीवित रहनेके लिए पर्याप्त भोजन मिल सकेगा। मिल-मालिक कपडा भेज सकते है। खादी-भक्त खादी भेज सकते है। अभी-अभी हरखचन्दको गुमनाम एक हजारकी हुंडी खादी बेचनेके लिए मिली है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १२-११-१९३३

२४०. पत्र : गंगा पोद्दारको

[१२ नवम्बर, १९३३][2]

मै रामेश्वरको लिखता हू। पाप तो बडा हुआ। लेकिन प्रायश्चित करके भूल जाओ। दागीना वापिस लाना और निश्चय कर लेना ऐसा अपराध कही नहिं होगा।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २१६) से।

२४१. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

वर्धा
१२ नवम्बर, १९३३

चि० रामेश्वरदास,

गगाने भूल तो बडी की है। लेकिन अब पश्चात्ताप करती है। जिसने पश्चात्ताप किया है वह क्षमाके पात्र है। गंगाको एक शब्द भी मत कहो प्रेमसे मिलो। दागिना

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। देखिए "प्रतिदिन एक पैसा" १७-११-१९३३।
२. देखिए अगला शीर्षक।

तो वापिस लाना हि है। वह लायेगी। उसके पश्चात् उसे वापिस भेज दो। शांति रखो। रामनाम लो। हम सव दोष करते हैं। लेकिन जो दोष कवूल करते हैं उसे धन्य है। हम सव इच्छें कि गंगाका पश्चात्ताप शुद्ध हो।

वापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७४) से।

२४२. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

वर्धा
१३ नवम्बर, १९३३

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्रोंका उत्तर मैं तुरन्त ही नही दे सकता। आज भी समय तो नहीं है, लेकिन किसी-न-किसी तरह समय निकालकर लिख रहा हूँ, क्योंकि किशोरलालने नानाभाई को लिखे तुम्हारे पत्रका सार मुझे वताया। वहाँके झगड़ेके वारेमें यदि तुम लोगोंका मैं मार्गदर्शन कर सकता तो अवश्य करता।[1] लेकिन सचमुच ही लोगोंसे मिले विना ऐसे कार्योंको मैं ठीक समझ नहीं पाता। लेकिन तू ऐसा लाचार क्यों? जो तुझे सत्य लगे उसे निधड़क होकर करते जा। भले ही इसमें तुझसे भूल हो। भूलें तो जहाँ तुझे दिखाई दे वहाँ निःसंकोच होकर और परिणामकी चिन्ता किये विना उन्हें सुधार लेना। ऐसा करते हुए प्रत्येक मामलेके वारेमें तुझे सत्यका पता चल जायेगा। मैं तो आज हूँ और कल नहीं। अपने वलसे ही तू तरे, यही वात शोभाजनक है। तैरते हुए यदि तू डूव जाये तो इसमें चिन्ताकी कोई वात नही। अभी भी जो-कुछ चल रहा है उसमें यदि तुझे कोई भूल दिखाई दे तो उसमें से मुक्त हो जाना चाहिए। और यदि तुझे कोई भूल न दिखाई दे तो भले ही तुझे मरना पड़े, तू कंगाल हो जाये, तव भी तुझे अपने मार्गसे विचलित नहीं होना चाहिए। ऐसा करते हुए किसीपर रोष न करना, असत्याचरण न करना, अशान्त न होना, धीरज न छोड़ना और जो संकट आये तो सहन करना। अपूर्ण पिताके संरक्षणमें शान्तिकी खोज करनेकी अपेक्षा पिताके पिता अर्थात् पूर्ण परमेश्वरके संरक्षणमें शान्तिकी खोज कर। इससे तू वलवान वनेगा। तुझे मेरी यही शिक्षा है। और यदि तूने इसे सीख लिया है तो विश्वास रख कि तू पूर्ण शिक्षा पा चुका है।

मेरे दौरेका विवरण तुझे अनेक स्थानोंसे मिलेगा। अन्य समाचार देनेका भी मेरे पास समय नही है।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८११) से।

१. देखिए "पत्र: वल्लभभाई पटेलको", २५-१२-१९३३।

२४३. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

वर्धा आश्रम
१३ नवम्बर, १९३३

हिंदुकी वडी गलती है। हिंदु डरपोक वन गये है। त्याग कुछ करना नहि चाहते निजी शुद्धि करना नहि चाहते, बूरी आदते छोडना नहि चाहते। इसका और नतीजा क्या आ सकता है?[१] ऐसे मौके पर हम जो समझने है वे शुद्ध वनकर त्याग करके अपने कर्त्तव्यका पालन करे और विश्वास रखे कि इसीसे अंतमे झगड़ा मीटेगा।

बापू

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

२४४. पत्र : एफ० मेरी बारको

हिंगनघाट
१३ नवम्बर, १९३३

चि० मेरी,

तुम बैतूल इतनी जल्दी जा रही हो, इसका मुझे पता नही था। यह पत्र मै हिंगनघाटमें मुझे जो-कुछ मिनट खाली मिले है उसके दौरान लिख रहा हूँ। मेरे कार्योका लेखा-जोखा तुम्हे 'हरिजन' मे पढनेको मिलेगा।

मैंने सोचा था कि यदि अमलाको यह पता लग जाता कि यह सुझाव किसने दिया था तो वह शायद ध्यान देती। उसका मामला जरा टेढ़ा है। लेकिन जहाँ और जब हम असफल होते हैं वहाँ ईश्वर सफल हो जाता है। हम उसे ईश्वरके भरोसे छोड दे। उम्मीद है कि तुम शरीर और मनसे स्वस्थ होगी।

तुम्हे कभी-कभी पत्र लिखते रहना चाहिए, लेकिन वर्धाके पतेपर ही, जहाँसे उन्हें मेरे पास भेज दिया जायेगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०१५) से। सी० डब्ल्यू० ३३४१ से भी, सौजन्य : एफ० मेरी बार

१. यहाँ संकेत एक हिन्दू कन्या और मुसलमान युवकके विवाहके फलस्वरूप होनेवाले सिंधके दंगोंकी ओर है।

२४५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

असंशोधित

चाँदा

१३ नवम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मैं अभी-अभी चाँदा पहुँचा हूँ और दूसरे लोग पीछे-पीछे आ रहे हैं। इस बीच मैंने तुम्हारा पत्र उठा लिया है। इस समय रात्रिके ९ बजे हैं। कार्यक्रम काफी थकानेवाला है। शाम ६ बजे मैं हिंगनघाटमें था।

तिवारीने मुझे तुम्हारा पत्र दे दिया है। तुमने ज०[1] को जो पत्र लिखा था उसे भी मैंने पढ़ा है। जहाँतक उसे मालूम है अ० भा० कां० क० के खातेमें शायद बहुत कम रुपया रह गया है। किताबें उसके पास नहीं हैं। उसने हिसाब-किताब मँगवाया है। इस बीच मैंने यह सुझाव दिया है कि ५०० रुपये कमसे-कम उसके खाता-नामे में भेज देने चाहिए। अगर पैसे खत्म हो गये हैं तो मुझे नहीं पता कि क्या किया जाये। मेरे पास एक सुरक्षित खाता है। मैं उस रुपयेको देना पसन्द नहीं करूँगा। मैं इसमें से हार्डिकरको रुपया देता हूँ, और ऐसा ही मैं उन कार्यकर्ताओंके लिए करना चाहता हूँ जिनकी सूची तुमने मुझे भेजी है। यह सब पैसा भी जल्दी ही खत्म हो जायेगा। इन हालातोंमें, यदि हमें सविनय अवज्ञा आन्दोलनको जारी रखना है तो हम कार्यालयके सभी कर्मचारियोंको न भी अलग करें तो भी उन्हें कम अवश्य करना पड़ेगा। मैं जितना ही अपने चारों ओर देखता हूँ उतनी ही मेरी यह भावना दृढ़ होती जाती है कि जो इस समय लड़ाईमें शामिल हैं उन्हें बिना धनके ही काम चलाना पड़ेगा, उस थोड़े-बहुत धनको छोड़कर जो मेरे जैसे कुछ लोगोंके हाथमें हो। अभी-अभी मैंने गुजरात और कर्नाटकके लिए रुपयेकी व्यवस्था की है। जो महिला ५०,००० रुपये देनेवाली थी उन्होंने अभी-अभी यह सन्देश भिजवाया है कि वह १०,००० रुपये तुम्हें देना चाहेंगी। अगर वह ऐसा करती हैं तो मैं यह अपेक्षा करूँगा कि इसमें से तुम संयुक्त प्रान्तके कार्यकर्ताओंका भुगतान कर दोगे। खैर मेरे खयाल से सबसे अच्छा यही है कि इस समय जो पैसा उपलब्ध है उसकी व्यवस्था के सम्बन्धमें तुम जमनालालजीसे, तथा जरूरत पड़े तो मेरे साथ बातचीत कर लो। मैंने सब जगह नोटिस भिजवा दिये हैं कि आगेसे मुझसे मदद्की आशा न की जाये। जो-कुछ मेरे पास है मैं उससे ही खर्च चलानेकी कोशिश कर रहा हूँ।

अब औपचारिक सभाके सम्बन्धमें। इस पत्रके साथ जो कार्यक्रम है उससे तुम्हें पता चल जायेगा कि १० और १४ दिसम्बरके बीच मैं दिल्लीमें हूँ। ठक्कर बापाका

१. जमनालाल बजाज, जो इस समय अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके कोषाध्यक्ष थे।

कहना है कि मैं १४ तारीखका अधिकांश समय हमारी जो बैठक हो रही है, उसमे दे सकता हूँ। १४ तारीखकी शाम ४ बजेके तुरन्त बादमे आन्ध्रके लिए ट्रेन पकडूँगा। अन्सारीने, जो रविवारको मेरे साथ थे, दिल्ली जानेका सुझाव दिया था। यदि वाकई सम्मेलन होना है तो तुम २४ नवम्बर, ४ दिसम्बर या १४ दिसम्बरमे से कोई भी तिथि चुन लेना।

अब हरिजन-यात्राको ले। सयुक्त प्रान्तमे इसके बहिष्कारकी जो सम्भावना है उससे मुझे कोई भी परेशानी नही है। यहाँ मुझे कोई दिक्कत पेश नही आ रही है। काग्रेसी और गैर-काग्रेसी दोनो ही मेरी यात्राकी व्यवस्था करनेमे सहयोग दे रहे है। नरम दलवालोके प्रति, जिन्हे मै गैर-काग्रेसियोमे शामिल करूँगा, तुम व्यर्थ ही नाराज हो। हमे तो उनसे भी काम लेना है। वे सब अपनी-अपनी समझके अनुसार कार्य करते है। मै किसी भी हालतमे यह नही चाहूँगा कि हरिजन-आन्दोलनमे कोई ऐसा काग्रेसी भाग ले जो जेल जानेकी इच्छा रखता हो। जो भी मेरे पास आया है मैंने उससे यह बात कह दी है। मै तो कुछ अच्छे कार्यकर्त्ताओको, जो हाल ही मे जेलसे बाहर आये है, वापस जेल भेज रहा हूँ। मेरा खयाल है कि बा भी जल्दी ही जेल जा रही है और मणिबहन पटेल भी। काकासाहब, स्वामी, सुरेन्द्र भी जा रहे है। मै इस हरिजन आन्दोलनमे केवल उन्ही काग्रेसियोको शामिल कर रहा हूँ जो या तो शरीरसे इतने कमजोर है कि वे जेल नही जा सकते अथवा जिनका सविनय अवज्ञामे विश्वास नही रहा है, और जो हरिजनोकी सेवा करनेको तैयार है, लेकिन उनको नही जो हरिजन-कार्यको केवल आडके रूपमे इस्तेमाल करना चाहते है। इस आन्दोलनको अगर सार्वजनिक बनाना है तो इसे हरेक काग्रेसी के जेल चले जानेकी हालतमे भी जारी रहना है; अन्यथा इसे बन्द कर देना चाहिए। मेरा यह खयाल भी है कि काग्रेसियोको इस आन्दोलनका उपयोग सविनय अवज्ञा आन्दोलनको मजबूत करनेके लिए अथवा जनतापर काग्रेसका प्रभुत्व जमानेके लिए नही करना चाहिए। ऐसा करनेका यह तरीका गलत होगा। इस प्रकारकी मनोवृत्तिसे काग्रेस और हरिजन, दोनोके हितोको ठेस पहुँचेगी। इस प्रकारके मामले मेरी नजरमे आये है। मैंने ऐसे किसी कार्यकी कडी आलोचना की है। मेरे खयालमें मैंने तुम्हारे प्रश्नोका सन्तोषजनक उत्तर दे दिया है। यदि नही, तो कृपया फिर पूछ लेना।

तुमने देखा होगा कि हिजली [जेल] मे [कैदियोसे] सरकार सलाम[1] कहलाना बन्द कर दिया गया है। सीमा प्रान्तमे होनेवाले दुर्व्यवहारके सम्बन्धमे क्या मैं सर तेजको लिखूँ?

मुझे कृष्णाका एक सुन्दर पत्र मिला था। वह अपने नये घरमे प्रसन्न दिखती है।

आशा है कि माताजीकी हालतमे सुधार जारी है।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३३, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. देखिए "पत्र: बगालके गवर्नरको," २-११-१९३३।

२४६. पत्र : रमणीकलाल मोदीको

चाँदा
१४ नवम्बर, १९३३

चि० रमणीकलाल,

तुम ताराकी चिन्ता करते जान पड़ते हो। मैं आशा करता हूँ कि यह विवेक की भाषा है। तुम और मैं हर समय चिन्ता नहीं कर सकते। यदि ऐसा करें, तो ज्ञानके लिए यह लज्जास्पद है। हम रोज 'गीता' का गान करें, रोज पढ़ें कि 'चिन्ता न करो' और फिर भी रोज चिन्ता करते रहें तो क्या यह अच्छी बात होगी? तारासे मैं मिला हूँ। उसका स्वभाव आदि बातें मुझे अच्छी लगी हैं। दाँतका कष्ट है, जिसका उपचार वह करा रही है।

तुम्हारे बारेमें मैंने सुरेन्द्रसे सब सुना है। आजकल हम सबकी अच्छी परीक्षा हो रही है। इसे हम प्राथमिक शिक्षा कहेंगे।

यह पत्र मैं यात्राके दौरान लिख रहा हूँ। सवेरे तीन बजे उठकर दतौन करनेके बाद यह पहला काम है। प्रार्थना तो ४-२० पर होगी। इस समय मैं चाँदामें हूँ। छः बजे सावली जानेके लिए रवाना होंगे। वहाँ हरिजन कातते-बुनते हैं, यह तुम जानते ही होगे। सावली जानेवाला दल बड़ा है। इसमें जानकीबहन, राधाकिसन[1], बोत्रे आदि हैं। मेरे साथियोंमें तो ठक्कर बापा, विश्वनाथ, चन्द्रशंकर, रामनाथ, मीराबहन, नायर और ओम हैं। दौरेमें हमें काफी काम करना पड़ता है। लोगोंकी भीड़ उतनी ही रहती है। बाकी तो अब क्या लिखूँ? तारासे तुम्हें सारी जानकारी मिल ही जाती है। यदि मुझे फुरसत होती तो मैं लम्बा पत्र लिखता। तुम्हें और अनेक लोगोंको भी नहीं लिख पाता, लिख सकता ही नहीं। इच्छा तो होती है, लेकिन उसे मारना पड़ता है।

सुरेन्द्र, दरबारी वर्धामें ही हैं। वहाँ एक जापानी साधु है। उसके आनन्दको देखकर हर्ष होता है। वह हिन्दी सीख रहा है। बा कल अहमदाबाद जानेके लिए स्वामीके साथ रवाना हुई।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१७५) से। सी० डब्ल्यू० १६७४ से भी; सौजन्य : रमणीकलाल मोदी

१. राधाकृष्ण बजाज।

२४७. पत्र : ताराबहन आर० मोदीको

१४ नवम्बर, १९३३

चि० तारा,

मैंने तुम्हे रमणीकलालके लिए पत्र लिखकर देनेके लिए कहा था, लेकिन मेरा खयाल है मैं ऐसा नही कर सका और इस बातसे मैं खिन्न था। सो आज सवेरे मैंने सबसे पहला काम तुम्हे पत्र लिखनेका किया। इसके साथ वह पत्र[1] है। अब यह पत्र रमणीकलालको कब मिलेगा? मुझे पत्र वर्धा ही लिखना। दाँतके बारेमे तुमने जो-कुछ किया है सो मुझे बताना। मनमे जो विचार उठे उन्हे मेरे आगे रखना। जो अनुभव मिले, सो बताना। तुम्हारी 'हरिजनबन्धु' पढनेकी आदत तो होगी ही।

दौरेमे मेरे साथ ओम घूम रही है, यह तुम्हे मालूम है न? इस बार तो सावलीतक अन्य बहुत सारे लोग हैं। हमे ठीक अनुभव मिल रहा है। शरीर इस बोझको अबतक सहन तो कर रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१७६) से। सी० डब्ल्यू० १६७५ से भी; सौजन्य रमणीकलाल मोदी

२४८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

चाँदा

१४ नवम्बर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

मुझे तुम्हारे पत्र मिलने ही चाहिए, तुमने मुझे आदत ही कुछ ऐसी डाल दी है। आज हम चाँदामे हैं। चार बजे हैं। ६ बजे सावलीके लिए निकलना है।

विट्ठलभाईके बारेमे जो हुआ वह मुझे बिलकुल भी पसन्द नही आया। तथापि जिस तरहसे बडी सख्यामे लोग इकट्ठे हुए उससे मैंने यही बैठे-बैठे बहुत सीख लिया है। लोग मनुष्यको नही पूजते। उसके बारेमे उनके मनमें जो कल्पना है और जिसे वे चाहते हैं उस वस्तुको वे अपने ढगसे और अपनी शर्तोके आधारपर पूजते हैं। मैंने अखबारोमे वर्णन तो नही पढे और न विस्तारसे ही कुछ जाना है, लेकिन सारी वस्तुस्थितिका चित्र मेरी आँखोके सामने खड़ा हो गया।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

नागपुरमें विद्यार्थियोंकी सभामें[1] अंडा फेंके जानेकी बात मुझे 'टाइम्स ऑफ इंडिया' से ही मालूम हुई। मैंने तो हॉलमें कुछ भी नहीं देखा। खलबली मची हो, सो बात भी मुझे दिखाई नहीं दी। हॉलमें किसीने कुछ देखा हो, सो भी मुझे मालूम नहीं। हाँ, चन्द्रशंकरने मुझे इतना जरूर बताया कि ओमके समीप एक अंडा फूटा था। यह अंडा उसीको उद्देश्य करके फेंका गया था अथवा उसके पास बैठे भूतपूर्व अध्यक्ष पर अथवा मुझे लक्ष्य करके फेंका गया था सो नहीं जानता। बात यह है कि राईका पहाड़ बना दिया गया है। विद्यार्थियोंके प्रेमका तो पार ही न था। उन्होंने मुझे सात सौ रुपयेकी तो थैली दी. ऐसा ही संयुक्त प्रान्तका भी समझना।

अन्सारी रविवारको आकर मिल गये। उनकी तबीयत कुछ ठीक है। विट्ठलभाईसे मिलना चाहकर भी वे नहीं मिल पाये। अन्तिम दिनोंमें वे बहुत अशान्त हो गये थे। अन्सारीके पास कुछ खास कहनेको न था। केवल मिलनेके लिए आये थे, यही कहा जा सकता है। वह राजवंशी रोगियोंको देखने गये हैं। वह उसी रात चले गये। मेरा तो मौन था। जब वह वापस आये तब मौन नहीं था। अभी तक दौरेमें कोई दिक्कत पेश नहीं आई है। अब खानेका और मोटरमें बैठनेका समय हो गया है. इसलिए आज इतना ही। बा और स्वामीने कल वर्धा छोड़ा है। बा अकोला होकर अहमदाबाद जायेगी। रामी[2] की लड़की बीमार है, इसलिए मनु राजकोट गई है। तुम तो मुझे वर्धा ही पत्र लिखना।

[गुजरातीसे]
बापूना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ४६-७

२४९. पत्र : मणिबहन पटेलको

चाँदा
१४ नवम्बर, १९३३

चि० मणि,

तेरा लम्बा पत्र मिला। तूने लिखा सो अच्छा किया। मेरे सामने तू परदा रखेगी तो तेरा नुकसान ही होगा। अवश्य ही मनुष्यके मरते समय हम उसके दोषोंको याद न करें बल्कि हम उसके गुणोंका ही स्मरण करें। मेरे उपस्थित न रहनेका उनके व्यवहारके साथ कोई सम्बन्ध नहीं। उनके गुण मैं नहीं पहचान सका सो बात नहीं। मैं वहाँ इसलिए नहीं आ सका कि मैं कहीं किसी दूसरे कार्यक्रममें शामिल नहीं हो सकता था।[3] आजकल या तो मैं यरवडामें शोभा दे सकता हूँ या हरिजन-कार्यमें। हरिजन-कार्यके खातिर ही मैं [जेलसे] बाहर हूँ, यह केवल सरकार या जनताको कहनेके लिए नहीं, परन्तु मेरे हृदयमें भी यही चीज है। दूसरे काम में मैं पड़ ही नहीं सकता। मालूम होता है लोग भी यह चीज समझने लगे हैं। मुझसे सरकारके अंकुश सहन

१. यह सभा ९ नवम्बर, १९३३ को हुई थी।
२. रामी कुँवरजी पारेख, हरिलाल गांधीकी पुत्री।
३. गांधीजी विट्ठलभाई पटेलके दाहसंस्कारमें शामिल नहीं हुए थे। मणिबहन पटेलने इस सम्बन्धमें गांधीजीसे पूछताछ की थी।

न होते, मै अपने ढंगसे कुछ कर न पाता। मै तेरा या डाह्याभाईका पथप्रदर्शन भी नही कर सकता। इसीलिए मै मन मारकर बैठा रहा। इसके सिवा मेरे जीवनमे दूसरी बात भी है, यह भी तू जान ले। रसिक (गांधी)[1] मृत्युशय्या पर था, वह चाहता भी रहा होगा कि मै उसके पास पहुँचूँ। परन्तु मै दिल्ली नही गया, बा गई। रसिक मर गया। मैने आँसू तक नही बहाया। मै खा रहा था तब तार आया। खाना खत्म किया और अपने काममे लग गया। मेरे जीवनमें ऐसी घटनाएँ बहुत हुई है। मौतके बारेमें मैने कुछ विचार बना रखे है, वे दृढ होते जा रहे है। मै मृत्युको भयानक चीज नही समझता। विवाह भयानक हो सकता है, मृत्यु कभी नही। क्या इससे तेरी शंकाका समाधान हो जाता है? न हो तो मुझसे फिर पूछना।

वहाँका वर्णन तूने बढिया किया है। बड़ा दुखद है। लोगोका प्रेम समझने लायक है। यह प्रेम व्यक्तिके प्रति नही है, परन्तु जो चीज लोगोको चाहिए उसे वे जिस व्यक्तिमें मानते है उसीके लिए वह प्रेम है। इसलिए यह बडी निर्मल वस्तु है। यह वस्तु लोक-जागृतिकी सूचक है, दुनियाकी आँखे खोलनेवाली है। विट्ठलभाई स्वतन्त्रताके पुजारी थे, इस विषयमे कोई शका कर ही नही सकता।

अब बा के बारेमे। मेरे पास समय होता तो मै उस पत्रमे[2] अधिक समझाता। बा का दिल कमजोर हो गया है। वह मन्दिर (जेल) जाना चाहती भी है और नही भी चाहती। भीतर ही भीतर वह समझती है कि जेल जाना उसका धर्म है इसलिए उसे छोड़ नही सकती, मगर मै बाहर हूँ इसलिए उसे अन्दर जाना अच्छा नही लगता। मैने कोई आग्रह नही किया। उसकी मरजीपर छोड़ दिया है। मेरे लिखनेका आशय यह था कि तू उसे धर्म-पालनमे दृढ बनाना और उसे समझाना। तुझपर उसे आस्था और प्रेम है। मै कुछ भी कहूँगा तो वह हुक्मके रूपमे माना जायेगा और बा दब जायेगी। इसलिए कुछ नही कहता। नही कहता, इसका अर्थ भी बा तो एक ही करती है कि उसे जेल जाना ही चाहिए।

तेरे दाँतों और पैरके सम्बन्धमे जाना। जैसा डाक्टर कहते है वैसा ही करना। थोडी राह देखनी ही पड़े तो हठ करनेकी जरूरत नही। डाह्याभाईको पत्र लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

पत्र वर्धा ही लिखना।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ ११३-४

१. हरिलालका पुत्र जिसकी ८ फरवरी, १९२९ को मृत्यु हो गई थी; देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ ४१०।

२. ९ नवम्बर, १९३३ के।

२५०. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

चाँदा
१४ नवम्बर, १९३३

चि० डाह्याभाई,

मैं तुम्हारी भावना और तुम्हारे दु:ख को समझता हूँ। मेरी भावना और मन:स्थितिको तुम मणिबहनको लिखे मेरे पत्रसे[1] समझ सकोगे। जहाँ मैं असहाय हूँ वहाँ मैं क्या कर सकता हूँ? सिपाहीके हाथसे तलवार ले लेनेपर जैसे वह निकम्मा बन जाता है उसी तरह यदि मेरे हाथसे सविनय अवज्ञाका अधिकार ले लिया जाये तो मैं निकम्मा बन जाऊँगा। इसके अतिरिक्त मेरा सारा जीवन ही प्रतिज्ञाबद्ध हो गया है। मेरी प्रतिज्ञा तो यह है कि या तो मैं जेलमें रहूँगा अथवा हरिजन-कार्यमें लगा रहूँगा। अन्य कार्योंके लिए तो मैं अपने मनको भी नहीं रोक सकता। विट्ठलभाईके दोष तो उनके साथ गये। उनमें गुण बहुत थे। उनकी स्मृतिको हम सबको अपने मनमें सँजोना है। और तुम्हें शायद मालूम भी न हो कि विट्ठलभाईको मैंने पत्र भी लिखा था और उन्होंने मुझे प्रेमसे पगा उत्तर भी दिया था। मेरा उनके साथ निजी सम्बन्ध कभी टूटा नहीं था। मतभेद पारस्परिक सम्बन्धोंके आड़े नहीं आते। मुझे तुम्हें यह सब समझानेकी जरूरत नहीं होनी चाहिए। लेकिन मणिबहन लिखती है कि तुम्हें और अन्य भतीजोंको कुछ दु:ख तो जरूर हुआ है। इसलिए मैंने तुम्हें इतना समझानेका प्रयत्न किया है। वल्लभभाईके [जेलसे] बाहर न होनेके कारण मुझे बहुत परेशानी होती है। वे बाहर हों तो पारिवारिक गलतफहमियोंको दूर करनेका कार्य मैं उनको ही सौंप दूँ। उनके जेलमें होनेके कारण गलतफहमी दूर करनेका मेरा दायित्व दूना हो जाता है। यदि तुम्हें मैंने जो लिखा है वह कम लगे तो मुझे दिल खोलकर लिखनेमें तनिक भी संकोच न करना।

बापूके आशीर्वाद

श्री डाह्याभाई वल्लभभाई पटेल
रामनिवास
पारेख स्ट्रीट
बम्बई–४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १५५

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२५१. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

१४ नवम्बर, १९३३

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र मिला था। नियमका पालन करना। आज मै पत्र सवेरे तीन बजे उठकर लिख रहा हूँ। आजकल मैं रोज तीन बजे ही उठता हूँ। एक घटेमे जितने पत्र लिखे जा सके उतने लिखता हूँ। आज छ बजे सावली जाना है। सावली तक मेरे साथ मोटरमे जानकीबहन और अन्य बड़े लोग होगे। सावली हरिजनोका बहुत बड़ा खादीका क्षेत्र है। वहाँ हमारी ओरसे खादीका कार्य होता है। आशा है तुम सब कुशलपूर्वक होगे। तेरे श्वसुर[1] के पत्र आते रहते हैं। केशु मजेमे है।

तुम दोनोको,

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

पत्र वर्धाके पतेपर ही लिखना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७०२) से; सौजन्य . बनारसीलाल बजाज

२५२. बातचीत : सावलीके खादी-कार्यकर्त्ताओंसे

१४ नवम्बर, १९३३

गांधीजीने खादी-कार्यकर्त्ताओंसे कहा कि वे अपने औजारोंको सुधारे जिससे कि उत्पादनमें वृद्धि हो और उसके फलस्वरूप वेतनोमें भी बढ़ोत्तरी हो।[2] उन्होने कहा :

और तब भी यदि आप बुरी आदतोका त्याग नही करते तो वेतनोमे वृद्धि होनेसे ही आपके जीवन सुखी नही हो जायेंगे, क्योकि आप जो धन पायेंगे उसे उडा डालेगे। इसलिए आपके लिए सबसे ज्यादा जिस बातकी जरूरत है वह यह है कि आप बुरी आदतोको छोड दे और अपने जीवनको शुद्ध बनाये, इस तरह आप न केवल अपने साधनोमे वृद्धि करेगे बल्कि अपने जीवनको अधिक सुखी और समृद्ध बनायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-११-१९३३

१. रामेश्वरलाल बजाज।

२. कुछ स्त्री-कार्यकर्त्ताओंने बहुत कम वेतन होनेके बारेमें शिकायत की थी।

२५३. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

चाँदा
१५ नवम्बर, १९३३

अपने शरीरके साथ तू अत्याचार न करे तो अच्छा होगा। मुर्देके पीछे-पीछे जानेकी कोई जरूरत नही थी।[1] ऐसा कोई स्वतन्त्र धर्म तो नही है। मैं जानता था कि मेरे न जानेका गलत अर्थ तो किया ही जायेगा। लेकिन कोई मेरे धर्मको नही समझेगा, इस भयसे भला मैं अपने कर्त्तव्यसे क्यों च्युत होऊँ? मेरा मन यदि जेलके बाहर बसता है तो वह केवल हरिजन-सेवाके अर्थ ही। वहाँ स्वतन्त्र रूपसे तो मैं कुछ भी नही कर सकता। सविनय आन्दोलनके बिना मैं पंख-विहीन पक्षीके समान हूँ। वहाँ जो-कुछ हुआ उसमें से कुछ बातोंको मैं कदापि सहन नही कर सकता था। इसलिए इस दृष्टिसे भी मेरा वहाँ आना नही हो सकता था। इसके अतिरिक्त हरिजन-दौरेके लिए दिन भी मुकर्रर था। मोतीलालजीकी विधवासे भी मिलने नही गया। रामीकी लड़कीसे भी, जो इस समय मृत्युशय्या पर पड़ी है, मिलने नही गया। पुत्रके समान प्रिय ब्रजकिशन मृत्युशय्या पर है, वहाँ भी नही जाता। . . .[2] तू उसे पत्र लिखना। कदाचित् तार देनेकी जरूरत जान पड़े। . . .[3] रसिक मृत्युशय्यापर पड़ा था, नही गया। बादमें उसकी मृत्यु हो गई तो भी नही गया। लेकिन गायके घर दूध क्या ले जाऊँ अर्थात् तुम्हें यह सब लिखनेकी क्या जरूरत है? तथापि यह सोचकर लिख गया कि कदाचित् तुझे मेरे जीवनके इस पहलूके बारेमें जानकारी न हो। बाकी मुझपर लगाये गये ऐसे आक्षेपोंका उत्तर तुझे नही देना। मुझे जो लोग आजतक नही समझ पाये हैं वे अब दलीलोंसे समझनेवाले नही हैं। मेरा समग्र जीवन ही उनपर जो छाप डाले वही सच्चा है। जो कर्म हमने किये हैं वे तो स्वयं ही प्रतिफलित होंगे। शब्दोंके जरिये उन्हें मिथ्या नही किया जा सकता।

तू नही आया, यह बात अच्छी नही लगी। रविवारको तो अचानक कहीं मेरे सामने आ खड़ा होगा, ऐसा मैंने सोचा था। ऐसा लगता है कि अन्ततः सभा[4] नही होगी। यदि हुई तो दिल्लीमें १४ दिसम्बरको होगी। अन्सारी इसी दिन करना चाहते हैं। यह सभा हो तो तू आना। . . .[5]

उत्कलके बारेमें तुझसे जो बने सो कर दे। 'हरिजन'के लेखसे[6] कुछ पैसे आये जान पड़ते हैं, इस सम्बन्धमें तू चिन्ता न करना। शरीरको रगड़नेकी जरूरत

१. मथुरादास त्रिकमजीने विट्ठलभाईकी शवयात्रामें भाग लिया था।
२ और ३. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूट गया है।
४. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी।
५. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूट गया है।
६. देखिए "उड़ीसाकी पुकार", ३-११-१९३३।

नही है। जिस तरह आलस्य त्याज्य है उसी तरह अत्यधिक परिश्रम भी त्याज्य है। "समत्व योग उच्यते"[1] यह श्लोक हमेशा मेरे मनमे रमा रहता है। 'गीता' मेरे लिए तो जीवित माँ है, कामधेनु है। इसमे तनिक भी अतिशयोक्ति नही है।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १३९-४०

२५४. पत्र : जमनालाल बजाजको

१५ नवम्बर, १९३३

चि० जमनालाल,

श्री सालपेकरजीके स्मारकके सिलसिलेमे भाई हरकरे मुझसे मिले है। यदि सालपेकर स्मारक सेवा निधि नामसे कोष खोला जाता है और उसमे धन इकट्ठा किया जाता है तो उसके लिए मेरे नामका' उपयोग किया जा सकता है। लेकिन मैंने उनसे कहा कि यदि इसमे तुम्हारी सहमति और सहयोग हो तभी इस तरह किया जाना चाहिए। इसमे कमसे-कम ५,००० रुपये मिलने चाहिए और यह रकम पर्सके रूपमें मुझे छिंदवाडामे दी जा सकती है। इसके लिए एक छोटी समिति बनाई जानी चाहिए और वह इस पैसेका उपयोग हरिजन-सेवाकार्यमे मुझसे पूछकर करे। यह ठीक लगे तो भाई हरकरेको इसके बारेमे समझाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२६) से।

२५५. भाषण : वुनकी सार्वजनिक सभामें

१५ नवम्बर, १९३३

अगर आप न जानते हो तो अब बता देता हूँ कि बापूजी अणेके साथ मेरी मैत्री समयके साथ-साथ बढती ही गई है। उनके मधुर आचार, उनकी मितभाषिता, सूझबूझ और उद्यमशीलताके मै आपको अनेक संस्मरण सुना सकता हूँ। मैं आपसे यह बात नही छिपा सकता कि आज हमारे बीच उनके उपस्थित न रहनेका मुझे कितना दुःख है।[2]

मै आपसे यह बात सुननेको तैयार नही था।[3] मै आपसे निर्दोष पैसा चाहता हूँ अर्थात् मै चाहता हूँ कि आप अपने थोडेसे ऐशोआरामका त्याग करके हरिजनोके

१. भगवद्गीता, अध्याय २, ४८।

२. एम० एस० अणे उस समय जेलमें थे।

३. वनके लोगोंने हाल ही में आई बाढके कारण गांधीजीको थैली भेंट करनेकी असमर्थता व्यक्त की थी।

लिए पैसा दें। मैं नहीं समझता कि आपमें से किसी भी व्यक्तिने बाढ-पीडितोंके प्रति सहानुभूति स्वरूप अपने एक बारके भोजनका अथवा किसी सुख-सुविधाका त्याग किया होगा। और यदि यह सच है तो यह बात आपको शोभा नही देती कि जब आपसे इस कामके लिए, जो हम सवर्ण हिन्दुओके लिए पश्चात्ताप और शुद्धीकरणका काम है, कुछ देनेके लिए कहा जाये तब आप अपनी असमर्थता व्यक्त करें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-११-१९३३

२५६. भाषण : यवतमालकी सार्वजनिक सभामें

१५ नवम्बर, १९३३

यह गीत[1] शान्ति और निर्भयताका सन्देश देता है। जब हम अपनी प्रार्थनामे समस्त विश्वके साथ शान्तिपूर्वक रहनेकी बात करते है तब हम उसके साथ अस्पृश्यताको कैसे बनाये रख सकते है? यदि हम सारे संसारके प्रति ईमानदार रहना चाहते है तो हमे हरिजनोके प्रति भी ईमानदार रहना होगा।

जबसे मैंने बरारकी भूमिमे पैर रखे है तबसे मेरे कानोमें बापूजी अणेका नाम गूंज रहा है। वर्षोंके साहचर्यके बाद हममे ऐसी मित्रताका विकास हुआ है जिसका ठीक-ठीक अन्दाज मैं आपको नही दे सकता। मै बरारके कोने-कोनेमे उनका नाम गूंजते सुनना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-११-१९३३

२५७. पत्र : अगाथा हैरिसनको

स्थायी पता : अमरावती
१६ नवम्बर, १९३३

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा लम्बा पत्र मिला।

मैं देखता हूँ तुम एन्ड्रयूजके बारेमे हमेशा उसी प्रकार सोचती रहती हो जिस प्रकार कोई अच्छी माता अपने बेटेके बारेमे सोचती है। तुम उनकी देखभाल करती हो, उनकी जरूरतोका खयाल रखती हो और उन्हे सब प्रकारकी हानिसे बचाती रहती हो। तुम्हारा यह कहना बिलकुल ठीक है कि ऐसी देखभालके बिना उनके ऊपर चिन्ताका भूत सवार हो जाता है, और तब वह स्वय तकलीफ पाते है और

१. झण्डा-गान।

उनके कामका भी हर्ज होता है। तथापि यदि तुम्हे लगता हो कि ज्यादा अच्छी तरह काम करनेकी दृष्टिसे तुम्हे एक या दो महीनेके लिए भारत आना चाहिए तो संकोच मत करो। इस बातपर मै और वह (एन्ड्रचूज) दोनो ही सहमत है, लेकिन वह मौकेपर मौजूद है, और तुम्हे जो उचित लगे सो उनसे और अन्य मित्रोसे परामर्श करके करना। फिलहाल इस समय कोई ठोस काम किया जा सके सो बात तो है नही। सर सैमुअल होरने हर चीजके बारेमे अपना मन निश्चित कर लिया है। वह अपने 'उद्देश्य' मे विश्वास रखते है। वह लगभग मानते है कि हम लोग अपना कामकाज चलानेके अयोग्य है और यह भी नही जानते कि हमारे लिए क्या अच्छा है। वह हमें गलतियाँ नही करने देगे। अग्रेजोकी तात्कालिक आवश्यकताओने उनको वास्तविकताओकी ओरसे अन्धा कर दिया है। मुझे लगता है कि इन परिस्थितियोमें वहाँ हमारे जो मित्र है वे स्थितिको देखने, अवसर की प्रतीक्षा करने और प्रार्थना करनेके सिवा और कुछ नही कर सकते। हमे अपना ध्यान स्वय रखना होगा, और हम अपनी मदद आप कर सकते है, इस बातको यदि हम सफलतापूर्वक करके दिखा देंगे तो तुम लोग वहाँ काफी ठोस काम कर सकोगी।

हिजली-काण्ड सन्तोषजनक ढगसे सुलझ गया दिखता है। मेरा खयाल है कि मेरा यह मानना ठीक ही है कि बगालके गवर्नरको मैंने जो बहुत सीधा-सादा पत्र लिखा था, उसका प्रभाव हुआ।

ऐसा कहा जा सकता है कि विट्ठलभाई पटेलके पार्थिव अवशेषोकी अन्त्येष्टि क्रिया काफी अच्छे ढगसे सम्पन्न हो गई। जहाँतक जनताका सम्बन्ध है, उसने बिलकुल स्पष्ट रूपसे दिखा दिया कि वह क्या चाहती है? ऐंग्लो इडियन अखबारोके अनुसार जुलूस कमसे-कम एक मील लम्बा था। दिवगत नेताके प्रति श्रद्धाजलि देनेके लिए सारा बम्बई उमड़ पडा था। विट्ठलभाई जिस उद्देश्यके लिए लड रहे थे वह यह था कि भारतको ब्रिटेनके नियन्त्रणसे पूरी स्वतन्त्रता मिले, यह नही था कि भारत ब्रिटेनके साथ कोई सम्बन्ध नही रखेगा। जनताने उनके इस उद्देश्यके प्रति अपना पूरा समर्थन इस अवसरपर व्यक्त किया। जनता आज लाचार है और अपनी मदद आप कर सकनेमे असमर्थ है, लेकिन इससे उसकी मनोवृत्तिपर कोई प्रभाव नही पड़ता। जनताको मालूम है कि वह क्या चाहती है और दुनिया को अपनी इच्छासे अवगत करानेका कोई अवसर वह हाथसे नही जाने देती।

मेरी कामना है कि सुभाष बोसको इग्लैंड लानेमें तुम्हे सफलता मिले।

मोटरसे अगले पड़ावके लिए रवाना होनेसे पहले मुझे जो चन्द मिनटका समय मिला है उसमें मै यह पत्र बोलकर लिखवा रहा हूँ। मुझे मालूम है कि पिछले हफ्ते तुम्हे चन्द्रशकर शुक्लका एक यथार्थ-चित्रणवाला पत्र मिला था। मै तुम्हे एक और विवरणात्मक पत्र भेजकर उसके ऊपर बोझ नही डालना चाहता। वैसे ही प्रदर्शन और वैसा ही उत्साह सभी जगह दिखाई पडा है। मुझे अवश्य ऐसा लगता है कि बहुतसे लोगोकी जैसी कल्पना है, उससे कही तेजीसे अस्पृश्यता समाप्त हो रही है। अभी तक जो बहुत-सी सभाएँ और प्रदर्शन हुए है इनमे कमसे-कम १,५०,००० लोगोने भाग लिया होगा। अगर ये लोग आन्दोलनका समर्थन न करना चाहते, तो मै

सोचता हूँ कि वे इतनी बड़ी संख्यामें शायद शामिल न हुए होते। वे जानते हैं कि इस समय मैं केवल अस्पृश्यताके सिलसिलेमें दौरा कर रहा हूँ और इसके साथ कोई राजनीतिक उद्देश्य जुड़ा हुआ नहीं है, लेकिन फिर भी वे सभाओंमें शामिल होते हैं, और हालाँकि हम लोग तंगीके दौरसे गुजर रहे हैं, लेकिन इसके बावजूद वे अपनी सामर्थ्यके अनुसार पैसे और रुपये देते हैं। इसलिए यह सोचते हुए दुख होता है कि ऐंग्लो इंडियन अखबार मेरे इस दौरेके महत्त्वको घटाकर बतानेकी कोशिश कर रहे हैं, यहाँ तक कि उसे बदनाम करनेकी भी कोशिश कर रहे हैं। पता नहीं तुम्हें नागपुरमें अंडे फेंकनेकी घटना और संयुक्त प्रान्तमें बहिष्कार करनेकी तैयारियोंकी सूचना तारसे भेज दी गई थी या नहीं। इस घटनाके बारेमें अखबारी रिपोर्टों और अपने बहुत संक्षिप्त उत्तरकी कतरनें मैं संलग्न कर रहा हूँ। अवश्य, सनातनियोंका विरोध बेशक मौजूद है। लेकिन अभी तक मैंने जन-सामान्यको उनका समर्थन करते नहीं देखा है। यदि सनातनियोंको नाममात्रका भी लोक-समर्थन प्राप्त होता तो वे आन्दोलनको नुकसान पहुँचानेमें नहीं हिचकते। इससे ज्यादा कहनेका मेरे पास समय नहीं है। लेकिन तुम्हें 'हरिजन' को मेरे साप्ताहिक पत्रके अंशके रूपमें पढ़ना चाहिए। उसकी जितनी प्रतियाँ तुम चाहो, बाँटो, और अगर तुम और ज्यादा प्रतियाँ चाहो तो माँगने-भरकी देर है। और तुम यह विश्वास रख सकती हो कि इसमें आन्दोलनके विरोधसे सम्बन्धित कोई चीज छिपाई नहीं जायेगी। मैंने 'हरिजन' में अंडे फेंकनेके सवाल पर और संयुक्त प्रान्तमें विरोधके बारेमें चर्चा नहीं की है। उसका पहला कारण तो यह है कि इन दोनों चीजोंके बारेमें मैं सार्वजनिक अखबारोंमें चर्चा कर चुका हूँ और दूसरा यह कि उनका आन्दोलनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। इनका राजनीतिक महत्त्व जरूर है, क्योंकि ऐंग्लो-इंडियन अखबार बेईमानीके तौर-तरीकोंसे काम ले रहे हैं। लेकिन मैं ऐसी बातोंकी चर्चा 'हरिजन' के पृष्ठोंमें नहीं करना चाहता। हालाँकि इस समय मैं जेलसे बाहर हूँ तथापि मैं उसे राजनीतिक विवादसे मुक्त रखना चाहता हूँ। जेलके अन्दर पहुँच जानेपर मैं राजनीतिक प्रश्नोंपर ध्यान भी नहीं दूँगा, भले ही उनका हरिजन-आन्दोलनपर गहरा प्रभाव पड़ता हो। और जहाँ तक किसी आदमीके लिए सम्भव है, उस हद तक मैं ऐसा ही आचरण करनेकी कोशिश कर रहा हूँ जैसे कि मैं एक कैदी हूँ। तथापि यदि तुम्हें 'हरिजन' में या मेरे पत्रोंमें किसी चीजका छूटना खटके तो तुम उसकी तरफ मेरा ध्यान दिलानेमें मत हिचकना।

मैं यह मान रहा हूँ कि तुम्हारी रायमें जिन मित्रोंको यह पत्र देखना चाहिए उन्हें तुम इसे पढ़वा दोगी।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७४) से।

२५८. पत्र : एफी एरिस्टार्शीको

अमरावती
१६ नवम्बर, १९३३

प्रिय एफी,

मुझे तुम्हारा पत्र और उसके साथ वह बहुत ही सुन्दर कार्ड मिला जिसे तुम चाहती हो कि मैं 'भगवद्गीता' की अपनी प्रतिके अन्दर रख लूं। मैं तुम्हारी इच्छाका अक्षरशः पालन नही करने जा रहा हूँ, क्योकि उससे तो तुम्हारी इच्छाका उद्देश्य ही विफल हो जायेगा। मैं 'गीता' नित्य नही पढता। मैं प्रातःकाल उसका पाठ सुनता हूँ और चूँकि मेरी समझसे तुम्हारा विचार यह है कि पुस्तकमे पृष्ठ-चिह्नके रूपमे मैं उस चित्रको प्रतिदिन रखूँ, इसलिए मेरा विचार यह है कि मैं उसे उस किताबमे रखूँ जिसे मैं पढ़ रहा होऊँ, और जो भी किताब पढ़ता होऊँ उसीमे रखता जाऊँ।

मैं देखता हूँ कि तुम गुजरातीकी शिक्षा ले रही हो, शायद मनुसे, क्योकि तुमने अपना नाम गुजरातीमे लिखा है।

मुझे खुशी है कि तुम मनु और एलिजाबेथके घनिष्ठ सम्पर्कमे आ रही हो। तुमने पूछा है कि मैं इस प्रेम-व्यापारके बारेमे क्या कामना करता हूँ। मैं इन दोनोको अत्यन्त प्रीतिकारी, बहुत ही सच्चा और बहुत गम्भीर मानता हूँ, लेकिन मुझे जिस बातका भय है वह यह है कि वे प्रस्तावित विवाहके पूरे परिणामोको नही समझते। मैं उनका दृष्टिकोण समझता हूँ। उन दोनोके लिए इतना ही काफी है कि वे एक-दूसरेको प्यार करते हैं। लेकिन मेरी यह मान्यता रही है कि युवा लोगोको पहले अपना चुनाव तो कर लेना चाहिए, लेकिन उनकी पसन्दका अन्तिम निर्णय बडोकी स्वीकृति और आशीर्वादपर निर्भर करना चाहिए। मैंने युवावस्थाके प्रेमियोको बादमें अक्सर निराशा भोगते देखा है। [जीवन-संगीका] चुनाव कितना ही सोच-विचार कर क्यो न किया गया हो, किसी-न-किसी प्रकार बादमे ऐसा सिद्ध हुआ है कि चुनाव गलत था। इस मामलेमे मुझे आगे खतरा दिखाई पडता है। इस प्रस्तावित विवाहके खिलाफ जो सबसे घातक आपत्ति मैं देख पा सकता हूँ वह यह है कि एलिजाबेथ चाहती है कि उसकी सन्तान रोमन कैथॉलिक धर्मके संस्कारोमे पले। यह इच्छा उसके अपने दृष्टिकोणके अनुसार शायद स्वाभाविक है। मुझे इसमे जरा भी आपत्ति नही है। लेकिन मनुको भले ही इसमे कोई आपत्ति न हो, तथापि उसके माता-पिता और उसके स्वजन, जिन्हे वह बहुत प्यार करता है, इस बातको कभी स्वीकार नही कर पायेंगे कि उनके पोते-पोतियाँ स्वधर्मको छोड़कर किसी अन्य धर्ममे दीक्षित किये जायें।

फिर, सम्पूर्ण हिन्दू संस्कृतिका भी सवाल है। मैं इस समय भी भारतीयोंकी हिन्दू संस्कृति और ईसाइयोंकी ईसाई संस्कृतिके बीच एक संघर्ष चलते देख रहा हूँ। भारतीयोंको दो लगभग विरोधी शक्तियाँ अलग-अलग दिशाओंमें खींच रही हैं। क्या जाने कुछ ऐसा है कि ईसाई-धर्म पश्चिमी सभ्यताका पर्याय वन गया है। शायद यह ठीक ही है, क्योंकि पश्चिमी देशोंके लोगोंका धर्म प्रधानतया ईसाई-धर्म है और इसीलिए पाश्चात्य संस्कृतिको उसी प्रकार ईसाई-संस्कृति कहना विलकुल ठीक होगा जिस प्रकार भारतीय संस्कृतिको निश्चित रूपसे हिन्दू संस्कृति कहा जायेगा। एलिजावेथका लालन-पालन जिस वातावरणमें हुआ है, उसके वच्चोंका उससे सर्वथा भिन्न परिवेशमें लालन-पालन होगा वशर्ते कि मनु स्वयं ही अपने समाजसे विलकुल सम्वन्ध-विच्छेद करके अलग रहनेका निश्चय न कर ले या पश्चिमके किसी देशमें जाकर न वस जाये। मेरी रायमें, आध्यात्मिक दृष्टिसे देखा जाये तो स्वयं एलिजावेथको ऐसा कुछ नहीं करना चाहिए जिसके कारण मनुको अपने समाजसे सम्वन्ध-विच्छेद करना पड़े।

फिर, स्वयं एलिजावेथका अपना भी सवाल है। उसे भारतीय वातावरणके अनुकूल अपनेको ढालनेमें काफी कठिनाईका सामना करना पड़ेगा। उसके स्वास्थ्यपर बुरा असर पड़ सकता है या उसे इस प्रकारका जीवन जीना पड़ेगा जिसका उसके आजतकके वातावरणसे कोई मेल ही नहीं होगा। यूरोपीयोंके यह कहनेका काफी उचित कारण है कि भारतीय लोग औसतन जितना खर्च करते हैं उससे कहीं ज्यादा खर्च उठाये विना वे शायद भारतमें जीवित ही नहीं रह सकते। मीराके मनमें भारतके प्रति जवर्दस्त प्रेम है, उसकी इच्छा-शक्ति फौलादकी तरह मजवूत है, लेकिन इसके वावजूद उसके लिए भारतीयों जैसी सादगीका जीवन अपना पाना काफी कठिन पड़ रहा है, और मीराको सामान्य औसतका व्यक्ति कहा जा सकता है। लेकिन उसे भी स्वयं अपने ऊपर अत्याचार करनेसे रोकनेकी जरूरत रहती है और उसे ऐसी सुविधाएँ लेनेको वाध्य किया जाता है जो कि उसके साथियोंको नहीं दी जातीं। अगर मैंने शुरूसे ही ऐसा नियम न लागू कर दिया होता तो वह वहुत पहले ही चारपाई पकड़ चुकी होती, और मैं जानता हूँ कि उसने भारतीय जीवनके अनुरूप अपनेको असाधारण रूपसे ढाल लिया है। लेकिन यदि उसने किसी भारतीयसे शादी कर ली होती और अपने वच्चोंको भारतीय ढंगसे पालनेकी व्यर्थ कोशिश करती तो वह तव पूरी तरहसे विफल ही हुई होती। जो व्यक्ति भारतमें भारतीयोंकी तरह रहा नहीं है उसे इस वातका कोई अन्दाज ही नहीं हो सकता कि मैं क्या लिख रहा हूँ। भारत संसारका सवसे गरीव देश है। किसी पाश्चात्य देशकी लड़कीके लिए इस दृढ़ संकल्पके साथ भारत आकर किसी भारतीयसे शादी कर लेना एक जवर्दस्त काम है कि वह शुद्ध भारतीयों जैसा जीवन व्यतीत करेगी। मैं किसी भी ऐसे भारतीयको नहीं जानता जिसने किसी यूरोपीय लड़कीसे शादी की हो और फिर भी औसत भारतीयोंकी तरहका जीवन व्यतीत करता हो। अगर उसे पत्नीके साथ न्याय करना है तो वह ऐसा कर ही नहीं सकता। और मनुको एलिजावेथकी खातिर अपने आदर्शोंको नीचा करना पड़े, इस वातको सहज स्वीकार करनेके लिए मेरा मन

तैयार नही है। ऐसे ही कारणोवश मैंने उन लोगोके लिए ब्रह्मचर्य धारण करनेकी बात कही है जिन्होंने ईश्वरकी सेवा, अर्थात् ईश्वरकी सृष्टिकी सेवा करनेका व्रत लिया है। मेरे लिए मीराको या तुम्हे पुत्रीवत माननेमे कोई कठिनाई नही है, लेकिन किसी यूरोपीय लड़कीको मै पुत्रवधू बनाऊँ, जरा इसकी कल्पना तो करो। मुझे भय लगेगा। मैं इस भारको नही उठा पाऊँगा, क्योकि उदाहरणके तौरपर देवदासको अपने स्वाभाविक वातावरणसे अलग होना पड़े, यह बात मेरा मन स्वीकार नही कर सकता। मुझे लगता है कि भारतीयोका यूरोपीयोके साथ विवाह-सम्बन्ध करना अभी असामयिक है। जब भारत अपनी दशा सुधार लेगा, या जब यूरोपीयोके ऐसे लड़के-लड़कियाँ होंगे जो अत्यधिक सादगीके अभ्यस्त बन गये है और भारतमे ही बस गये है, तभी मैं भारतीयो और यूरोपीयोके बीच विवाहकी सम्भावनाको खुशीके साथ देख सकूँगा।

अब मेरे खयालसे मैंने तुम्हें खूब लम्बा पत्र लिख डाला है और सोचनेके लिए काफी मसाला दे दिया है। तुम्हे इस बातका थोड़ा-बहुत ज्ञान तो है ही कि मै क्या चाहूँगा, किन्तु मैंने जो-कुछ कहा है यदि वह तुम्हे जमे नहीं तो मैं तुमसे किसी भी रूपमे यह अपेक्षा नही करता कि तुम मेरी इच्छापर अमल करो। और यदि मनु और एलिजाबेथके भविष्यके बारेमे तुम्हारे विचार भिन्न हो तो तुम मुझे वैसा बतानेमें संकोच मत करना। मै इस बातकी कद्र करता हूँ कि तुमने अपना व्यक्तित्व मेरे व्यक्तित्वमें समा दिया है, लेकिन मै तुम्हारी बुद्धि या तुम्हारे हृदयको गुलाम बनानेका अपराध कभी नही करूँगा। मैं अपूर्ण हूँ, और मैं अपनी गलतियोमे तुम्हे अपना भागीदार नही बनाना चाहता। इसलिए तुम मेरे साथ मिलकर जो-कुछ भी करो, उसमें सही-गलतका निर्णय पूरी तरह अपनी बुद्धिसे करो। जब तुम्हे विचार, भाषण या कार्यमें मुझसे असहमत होनेकी आवश्यकता प्रतीत हो उस समय यदि तुम मुझसे असहमत होगी, तो मेरा प्रेम तुम्हारे प्रति कम नही होगा।

एक और चीज मैंने तुम्हारे सामने नही रखी है जिसेकि मैंने एलिजाबेथको लिखे अपने पत्रमे बताया है। उस बातको मैं बिना उसके पक्षमे कोई तर्क दिये बस कहे देता हूँ।

मेरा विश्वास है कि जब पति और पत्नी भिन्न धर्मके माननेवाले हो, तो उनकी सन्तानको पिताके धार्मिक संस्कारोके अनुसार पाला जाना चाहिए। इस बातके पक्षमे मेरी रायमे ठोस धार्मिक और दार्शनिक कारण है। यदि तुम्हे मेरी बात ठीक न लगे तो तुम एलिजाबेथसे कहना कि मेरा पत्र वह तुमको दिखा दे।

इस समय मेरे ऊपर जबर्दस्त कार्य-भार है। पत्राचारके लिए मुझे बहुत कम समय मिलता है। यह पत्र भी मैं क्लान्तिकर स्थितियोमें बोलकर लिखवा रहा हूँ। इसलिए मैं चाहूँगा कि यदि तुम ठीक समझो तो इस पत्रको एलिजाबेथ और मनुको भी पढ़वा देना। लेकिन यदि ऐसा न करना ही तुम्हे बुद्धिमत्तापूर्ण लगे तो कृपया उन दोनोंसे कह देना कि मुझे उनका सयुक्त पत्र, और उससे पहलेका लिखा एलिजाबेथका पत्र मिल गये थे। और यह भी कि इन दोनों पत्रोकी मैं कद्र करता हूँ और इनके बारेमें मैंने तुम्हे लिखा है।

आशा है तुम्हें मेरा वह पत्र मिला होगा जिसमें मैंने तुम्हारे भेजे १५ पौंडकी रकमकी प्राप्ति-सूचना दी थी। मैं तुम्हें फिर चेतावनी दूँगा कि तुम अनुचित रूपसे आत्म-त्याग मत करो।

सप्रेम,

बापू

प्रिंसेस एफी एरिस्टार्शी
होटेल स्कोट्जकी
फ्रीवर्ग १–बी
(जर्मनी)

[अंग्रेजीसे]
महात्मा, खण्ड ३ में पृष्ठ ३४४ के सामने प्रकाशित अनुप्रति से।

२५९. पत्र: मनु गांधीको

१६ नवम्बर, १९३३

चि० मनुड़ी,

तेरे दो पत्र आज ही मिले। तू चली गई यह ठीक ही हुआ। अब कुसुमको स्वस्थ बनाना। वह तन्दुरुस्त हो जाये फिर वर्धा जाना है न? बलीको[1] भी आनन्द हुआ। बलीको मैं अलहदासे पत्र नहीं लिखता। मुझे पत्र वर्धाके पतेपर लिखा करना।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती, बलीबहन
मार्फत वोरा हरिदास वखतचंद
हाईस्कूलके पीछे
राजकोट

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १६६२) से; सौजन्य: मनुबहन एस० मशरूवाला

1. बलीबहन एम० अडालजा, हरिलाल गांधीकी साली।

२६०. भाषण: हनुमान व्यायामशाला, अमरावतीमें

१६ नवम्बर, १९३३

इस विशाल जनसमुदायने यह देखा ही होगा कि सवर्ण हिन्दुओ और हरिजनोमे कोई ईश्वरका बनाया हुआ भेद नही है।[1] यह भेद तो विशुद्ध रूपसे मनुष्यका बनाया हुआ है, और ईश्वरकी दृष्टिमे यह अपराध है। यदि हरिजनोको तरक्की करनेका पूरा-पूरा अवसर दिया जाये तो वे जीवनके अनेक क्षेत्रोमे अन्य लोगोसे यदि आगे नही बढ जायेगे तो कमसे-कम समकक्ष अवश्य ठहरेगे। आज हमने जिस बलका प्रदर्शन देखा है उससे हमारी आँखे खुल जानी चाहिए और उससे हमे अपने विचारोसे अस्पृश्यताके कलंकको धो डालनेकी प्रेरणा मिलनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-११-१९३३

२६१. भाषण: अमरावतीकी सार्वजनिक सभामें

१६ नवम्बर, १९३३

मैंने भारतके सभी कोनोमे बहुतसे स्थानोकी यात्रा की है, और ऐसी बडी सभाओको मैं ईश्वरीय कृपाका चिह्न मानता हूँ। मै मानता हूँ कि केवल ईश्वरकी कृपासे ही इतनी विशाल सभाओका हम सचालन कर सकते हैं। यह एक धार्मिक कार्य है और इसलिए इसे सत्य, शान्ति और त्यागके साथ किया जाना चाहिए। किसी और ढंगसे इसे नही किया जा सकता। हरिजनोके प्रति जो अन्याय किये गये हैं और जो अन्याय हम सवर्ण हिन्दू अभी भी उनके साथ कर रहे हैं, यदि उसके लिए हमे प्रायश्चित्त करना है तो हमे उनके साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा कि हम अन्य सवर्ण हिन्दुओके साथ करते है। मै आप सबको बताना चाहता हूँ कि जबतक हम उनके साथ बराबरीका बर्ताव नही करेगे तबतक हमारी दशा भी नही सुधर सकती। मैंने यहाँ डॉ० पटवर्धनकी सहायतासे हरिजनोके मकानोंको देखा है और अन्य कार्य भी देखे है, और अब मैंने स्थानीय नगरपालिका द्वारा मेरे सम्मानमे पढ़ा गया अभिनन्दनपत्र भी सुना है। यदि यहाँकी नगरपालिका इस विषयमे कुछ नही कर सकी तो इसमें इसका दोष नही है। मैंने अन्य बहुत-सी नगरपालिकाएँ देखी है और सभी जगह स्थिति एक जैसी है। लेकिन अब तो पाश्चात्य वैज्ञानिक भी अपनी

१. लगभग एक सौ हरिजन लड़कोंने विशाल जनसमुदायके सम्मुख बैंडके साथ कवायद करके दिखाई थी।

शोधोंके बाद इस परिणामपर पहुँचे हैं कि यदि हम किसी वर्ग-विशेषको अपने समाजसे अलहदा रखते हैं तो हमारा आर्थिक पतन निश्चित है। इन २५ वर्षोंके अध्ययनके बाद मेरा यह विश्वास दृढ़ हुआ है कि धनके साथ-साथ धर्मको बराबर चल सकना चाहिए। धर्म और धनके बीच समरसता होनी चाहिए। अपने हरिजन-कार्यपर से मुझे अनुभव हुआ है कि जो व्यक्ति धर्मके अनुसार धनोपार्जन करता है, उसे दोनोंकी ही प्राप्ति होती है। मैं इसे प्रत्येक सवर्ण हिन्दूका कर्त्तव्य मानता हूँ कि वह हरिजनोंको अपने समाजमें शामिल करे। यदि हम हरिजनोंके प्रति अपना कर्त्तव्य करेंगे तो हम सभी, हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई आदि शान्तिपूर्वक रहेंगे। मेरी समझमें इन सभी लोगोंमें एकता स्थापित करनेके लिए हरिजन-कार्यसे अच्छा और कोई तरीका नहीं है। अब मैं आपको बताऊँगा कि इस विषयमें आपमें से प्रत्येक व्यक्ति क्या कर सकता है। हरिजन आन्दोलन एक महान यज्ञ है और आपमें से प्रत्येक व्यक्ति इसमें अपना अंशदान कर सकता है। जिनके पास धन है वे इस कार्यके लिए धन दे सकते हैं। जिनके पास अवकाश और बुद्धि है वे हरिजन बालकोंको शिक्षा दे सकते हैं और शारीरिक स्वच्छता तथा सफाईके बारेमें सिखा सकते हैं। इस समय यह कार्य कांग्रेसी कर रहे हैं। लेकिन मैं चाहता हूँ कि गैर-कांग्रेसी लोग भी इस कामको करें। इस कामको करना आप सबका धार्मिक कर्त्तव्य है।

मेरी दृष्टिमें राजनीतिका उतना मूल्य नहीं है जितना इस कामका। राजनीतिका मेरे लिए कोई महत्त्व नहीं है। मेरा विश्वास है कि यदि इस कामको हम लोग उत्साहके साथ करें तो सभी चीजें मिल जायेंगी। इस काममें अन्य किसी और इरादेको लेकर मैं दौरा नहीं कर रहा हूँ। और जब मैं देखता हूँ कि मुझे सुननेके लिए लोग इतनी बड़ी संख्यामें इकट्ठा होते हैं तो मुझे आशा होती है कि इस काममें वे मेरे साथ खड़े होंगे। पिछली जुलाईमें हरिजन सेवक संघकी स्थापना की गई थी, और आपमें से कुछ लोगोंने शायद अस्पृश्यताके इस अभिशापको मिटा डालनेका व्रत लिया होगा। हरिजनोंको सार्वजनिक संस्थाओंका उपयोग करने और मन्दिरोंमें प्रवेश करनेका जन्मसिद्ध अधिकार है। लेकिन जबतक हरिजन होनेके कारण एक भी व्यक्तिका बहिष्कार किया जाता है तबतक मैं यह नहीं मानूंगा कि अस्पृश्यता पूरी तरह मिट गई है। अतः अपने दिलोंको बदलना और हरिजनोंको अपना भाई समझना अब आपके हाथमें है।

हरिजन सेवक संघमें विभिन्न विचारधाराओंके लोग हैं, लेकिन यह काम वे सब मिल-जुलकर कर सकते हैं। इस क्षेत्रमें काम करनेवाले कार्यकर्त्ताओंको किसी प्रकारका सम्मान या उपाधि पानेकी कामना नहीं करनी चाहिए। व्यक्तिगत स्वार्थ या स्वार्थपूर्ण इरादेका उनमें लेशमात्र भी नहीं होना चाहिए। इस काममें राजनीतिका भी कोई पुट नहीं होना चाहिए। इसमें कोई शक नहीं कि इस कामका कुछ राजनीतिक अर्थ भी होगा, लेकिन मैं राजनीतिकी बातोंको वह महत्त्व नहीं देता जो इसको देता हूँ। हरिजन-कार्यका उद्देश्य हिन्दू-धर्मको शुद्ध बनाना है। मुझे इस मामलेमें बड़ी आशाएँ हैं। मैं हमेशासे आशावादी रहा हूँ और इस मामलेमें मेरी आशावादिता दिन-दिन

बढ रही है। लेकिन यदि मैं विफल भी होऊँ, तो भी मेरा कर्त्तव्य इस कामको जारी रखना है। अभी तक बहुत कम ईमानदार कार्यकर्त्ता सामने आये है। इसलिए मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह इस मामलेमे अपना कर्त्तव्य करनेकी आपको शक्ति दे और आपको मार्ग दिखाये।[1]

पिछले वर्ष आप लोगोके नामपर की गई प्रतिज्ञाकी मै आपको याद दिलाता हूँ। आपको याद होगा कि पिछले वर्ष सितम्बरमे बम्बईमे हिन्दुओके प्रतिनिधियोकी एक सभा हुई थी जिसकी अध्यक्षता पडित मालवीयजीने की थी। अन्य बातोके अलावा प्रतिनिधियोने सकल्प किया था कि हिन्दू-धर्म पर कलक स्वरूप अस्पृश्यताको मिटाना है और हरिजन लोगोको सार्वजनिक सुविधाओका वैसा ही अधिकार है जैसा कि सवर्ण हिन्दुओको है। उस प्रस्तावमे हिन्दू-मन्दिरोका विशेष उल्लेख था और ऐसा कहा गया था कि उद्देश्यकी पूर्तिके लिए आवश्यक होनेपर कानून बनवाया जायेगा। इसलिए अब प्रत्येक सवर्ण हिन्दूका यह परम कर्त्तव्य है कि वे हरिजनोके लिए सवर्ण हिन्दुओके साथ समानताके आधारपर मन्दिरो, कुओ और अन्य सस्थाओको खोलकर इस प्रतिज्ञाको पूरा करें।

हरिजनोकी वर्तमान पतनावस्थाके कारण हम लोग है। यदि अन्यायका अन्त करना है तो हमे धन खर्च करना होगा। इस कामके लिए जो व्यक्ति भी धन देगा उसका लाभ होगा। इसलिए उसे फाजिल धन देकर ही सन्तोष नही कर लेना चाहिए, बल्कि यदि देनेके फलस्वरूप थोडी कठिनाईमे भी गुजारा करना पडे तो भी हमे पैसा देना चाहिए। हममे से कुछ लोगोको हरिजन-सेवाके लिए अपना सर्वस्व देना होगा।

मुझे यह देखकर खुशी होती है कि इस आन्दोलनमे काग्रेसी और गैर-काग्रेसी, सभी लोग काम कर रहे है। चूंकि यह सवाल पूछा जा रहा है कि काग्रेसी लोग इस आन्दोलनमे किस हदतक शामिल हो सकते है, इसलिए मै वह बात फिरसे दोहराना चाहूँगा जो मै पहले कह चुका हूँ। काग्रेसने १९२० मे अस्पृश्यता-निवारणको अपने कार्यक्रमका अभिन्न अग बनाया था। इसलिए प्रत्येक हिन्दू काग्रेसीका कर्त्तव्य है कि वह अस्पृश्यतासे लडे और सभी उचित तरीकोसे हरिजनोकी सहायता करे। लेकिन यदि आन्दोलन केवल काग्रेसियोतक ही सीमित रहा तो आन्दोलन वैसी वाछित प्रगति नही कर सकता जैसीकि हम सब चाहते है। प्रत्येक सवर्ण हिन्दूको आन्दोलनमे यथाशक्ति सहयोग देना है। काग्रेसियोसे यह तो अपेक्षित है कि वे इस बुराईसे लडे, लेकिन उनसे अधिकृत रूपसे यह अपेक्षित नही है कि वे हरिजन-सेवाका कार्य करनेवाले सगठनोमे शामिल हो। यदि वे सक्रिय सविनय अवज्ञा करनेवाले सत्याग्रही है तो उन्हे इन सगठनोमे कोई पद नही ग्रहण करना चाहिए। सविनय अवज्ञामें विश्वास रखनेवाले और सविनय अवज्ञा करनेवाले किसी काग्रेसीको सविनय अवज्ञा स्थगित करने या बिलकुल छोड़ देनेकी जरूरत नही है। उन लोगोकी बात बिलकुल भिन्न है जो हरिजन सेवाकी खातिर सविनय अवज्ञाको छोड़ देनेकी आवश्यकता अनुभव करते हैं या जिनका सविनय अवज्ञापर से विश्वास उठ गया है।

१. अन्तिम अनुच्छेदको छोड़कर इसके बादका शेष अंश १-१२-१९३३ के हरिजन में से लिया गया है।

सत्याग्रहकी भाँति ही आत्म-शुद्धिके इस आन्दोलनमें किसी प्रकारके छद्मको कोई स्थान नही है।

हरिजनोंने शिकायतें की है कि बहुतसे स्वार्थी लोग इस आन्दोलनमे घुस आये हैं। एक विशुद्ध धार्मिक आन्दोलनमे ऐसे लोगोंके लिए कोई स्थान नही है। केवल वे ही लोग संगठनोंमें पद ले सकते है, या उन्हें ही पद स्वीकार करना चाहिए जिनके अन्दर सेवाकी भावना है।

इस स्थानकी कुछ महिलाओने मुझे जेवर दिये है और छोटेबच्चोंने मुझे एक चाँदीकी मंजूषा भेंट की है। मै इन्हें नीलाम करना चाहता हूँ। मै आप सबसे पैसे स्वीकार करूँगा, भले ही वह एक कौड़ी क्यों न हो, लेकिन जो भी दिया जाये शुद्ध मनसे दिया जाये। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि इससे आपको खुशी हासिल होगी और हरिजनोके लिए आपका दान सहायक सिद्ध होगा।

[अंग्रेजीसे]

हितवाद, २३-११-१९३३ और **हरिजन**, १-१२-१९३३

२६२. पत्र : कीकाभाई एल० वघेलाको[1]

[१७ नवम्बर, १९३३ से पूर्व][2]

मै जिन स्कूलोंका उद्घाटन करता हूँ वे केवल हरिजनोके लिए नही होते और मैं निश्चय ही ऐसे स्कूलोका उद्घाटन नही करता जिनमे हरिजनोको प्रवेश नही मिल सकता। नगरपालिकाओंके हरिजन कर्मचारियोकी स्थितिकी जाँचके बारेमे आपने जो-कुछ कहा है मै उसे नजरन्दाज नही करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-११-१९३३

१. कीकाभाई एक हरिजन नेता थे। उन्होंने गांधीजीसे अनुरोध किया था कि वे हरिजन बच्चोंके लिए पृथक् स्कूल न खोलें।

२. यह पत्र **हिन्दू** में दिनांक "अहमदाबाद, '१७ नवम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२६३. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको

अकोला

[१७ नवम्बर, १९३३ या उससे पूर्व][1]

एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधि द्वारा यह पूछे जानेपर कि अमेरिकासे प्राप्त हुई एक प्राइवेट रिपोर्टके अनुसार क्या वे शरद् ऋतुमें न्यूयॉर्क जा रहे हैं, गांधीजीने कहा कि मैं अमेरिका नहीं जा रहा हूँ और मुझे ऐसा कोई निमन्त्रण पत्र भी नहीं मिला है।

इसके आगे उन्होंने कहा कि मैंने अभी हाल ही में एक सम्वाददाताके आगे अमेरिका अथवा कहीं भी जानेकी असमर्थता व्यक्त की थी और कहा था कि मैंने यह जो प्रतिज्ञा की है कि जुलाईके अन्त तक मैं अपनी पूरी शक्ति केवल हरिजन उद्देश्यमें लगाऊँगा, मैं उस प्रतिज्ञाको तोड़नेवाला नहीं हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-११-१९३३

२६४. प्रतिदिन एक पैसा

२६ अक्टूवरके अपने पत्रमें श्रीयुत हरखचन्द लिखते हैं:[2]

यहाँ पाठकको अपनी कल्पनाशक्तिसे काम लेना चाहिए और अपने-आपसे पूछना चाहिए कि जब कोई व्यक्ति खैरातके रूपमें एक पैसेसे भी कम भर चावल लेनेके लिए खुशी-खुशी मीलों चलकर आता है तब इसका क्या अर्थ होता है? और तब उसे अपने हृदयको टटोलना चाहिए कि जब उससे उड़ीसाके नर-कंकालोंको कुछ भोजन मिल सके, इसके हेतु चन्दा देनेको कहा जाता है तब क्या वह ईमानदारीके साथ तंगीकी हालतमें होनेकी दुहाई दे सकता है? इसके लिए उसे इस बातकी प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए कि जब कोई व्यक्ति चन्दा लेनेके लिए उसके पास आयेगा तभी वह चन्दा देगा। उसे तो अविलम्ब जो पैसा अथवा रुपया वह दे सकता हो, मनीआर्डर द्वारा भेज देना चाहिए। और यदि वह मनीआर्डरका कमीशन बचाना

१. यह रिपोर्ट दिनांक "अकोला, १७ नवम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने उड़ीसाके सहायता-कार्यकी गुरुताको बताते हुए चन्देकी तुरन्त ही कितनी सख्त जरूरत है, इस बातपर जोर दिया था। देखिए "प्रति व्यक्ति एक पैसा", १२-११-१९३३ भी।

चाहता है तो उसे चाहिए कि वह अपनी दानराशिको पड़ोसियोंकी दानराशिके साथ भेजे जिससे कि ज्यादासे-ज्यादा रकम पर कमसे-कम खर्च आये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-११-१९३३

२६५. प्रशंसनीय कार्य

पिछले सप्ताह डॉक्टर खरे और उनकी हरिजन-सेवक-समितिने कार्यक्रमके सम्बन्धमे बड़ी ही सुन्दर व्यवस्था की थी। यदि डॉक्टर खरेको स्वेच्छासे काम करनेवाले अनेक सुयोग्य साथियोंकी सहायता न मिलती, तो यह कार्यक्रम पूरा ही नही हो सकता था। डॉक्टर साहबने, हृदयकी पुरानी व्याधिसे पीड़ित होते हुए भी, इन कठिन दिनोमे परिश्रम करनेमे कोई कसर उठा नही रखी, और अपने साथियोसे भी उन्होने खूब काम लिया। विराट् जन-सभामे बिजलीकी सैकड़ों बत्तियाँ लगाने और ऊँचा पक्का मंच तैयार करनेमे जो खर्च पड़ा वह कुछ सज्जनोने आपसमें ही इकट्ठा करके दे दिया था; दानकी थैलियोंमें से इस खर्चके लिए एक पैसा भी नही निकाला गया। मेरे मेजबानका मकान मेरे ठहरनेके दौरान एक तरहसे धर्मशाला बन गया था। टिकेकर-बन्धुओंने हमारे बड़े दलको तथा दूसरे समारोहोके सम्बन्धमे आये हुए अन्य लोगोको आराम और सुविधाएँ पहुँचानेमे परिश्रम तथा खर्चमें जरा भी कमी नही रखी। मैंने देखा कि नागपुर और आसपासके क्षेत्रोंमे मेरे दौरेको सफल बनानेमें कांग्रेस-वालो और गैर-कांग्रेसियोने पूरा सहयोग दिया, और बेशक वह खूब सफल रहा। डॉक्टर खरे और उनके साथियोने इस अवसरपर जो असीम परिश्रम उठाया उसके लिए मै उन्हे धन्यवाद देता हूँ। इस महान् शुद्धि-कार्यमे जो परिश्रम और सावधानी उन्होने दिखाई वह आवश्यक ही थी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-११-१९३३

२६६. दानका उपयोग

यह मैं इन स्तम्भोमें लिख चुका हूँ कि हरिजन-यात्रामे प्राप्त दानकी रकमका उपयोग किस प्रकार किया जायेगा। फिर भी कार्यकर्त्ता लोग इस बारेमें और अधिक स्पष्टीकरण चाहते हैं। ठक्कर बापासे मैं इस बारेमे बात कर चुका हूँ और मै निश्चित रूपसे कह सकता हूँ कि जिन स्थानोसे जितना दान मिलेगा वहाँ हरिजन-सेवाके अर्थ प्राप्त रकमका कमसे-कम ७५ प्रतिशत वही खर्च किया जायेगा। शर्त इतनी ही है कि [उस स्थानकी हरिजन-सेवक-समिति] सन्तोषजनक बजट पेश करे और उसपर प्रधान कार्यालय मंजूरी दे दे। जहाँ जरूरत मालूम होगी वहाँ सारीकी सारी जमा रकम [उस जगहकी समितिको ही] दे दी जायेगी। इसलिए अब इतना ही कहनेको

रहा कि प्रत्येक केन्द्रके हरिजन-सेवक व्यावहारिक योजनाएँ तैयार कर ले और उन योजनाओको भली-भाँति अमलमे लानेके लिए ईमानदार और उद्योगी आदमी तलाश ले। इतना होनेके बाद पैसा मिलनेमे देर नही लगेगी। जिन स्थानोमे दानकी रकमे मिली है वहाँसे उन्हे दूसरे स्थानोमे अकारण ले जानेकी तनिक भी इच्छा नही है। प्रधान कार्यालयके लिए कुछ भाग रखनेका विचार है, पर वहाँ भी कार्यालयके वेतन इत्यादि खर्चके लिए नही, बल्कि उस रचनात्मक-कार्यके लिए जो सीधे उसके द्वारा चलाया जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-११-१९३३

२६७. भाषण : अंजुमन मुफीद-उल-इस्लाम, खामगाँवमें

१७ नवम्बर, १९३३

जब मैंने सुना कि आपके अंजुमनने मुझे बुलाया है तो मुझे बेहद खुशी हुई। आपके अभिनन्दनपत्रके लिए, तथा हरिजनोके कामके लिए आपने मुझे जो थैली भेट की है उसके लिए मै आपका शुक्रगुजार हूँ। आपके अभिनन्दनपत्रको पढकर मुझे बहुत खुशी हुई। आपने ठीक ही कहा है कि जबतक अस्पृश्यता बनी हुई है तबतक हिन्दू-धर्मका कोई भविष्य नही है। मै अपनी जिन्दगी-भर मुसलमानोके साथ रहा हूँ। इस्लाममे जो बडी खूबी मुझे देखनेको मिली वह यह कि इस्लाम इन्सानकी बराबरी और भाईचारा सिखाता है — इन्सान चाहे राजा हो या गुलाम। आपमे से अधिकाश लोग हाफिज होगे और 'कुरान' पढ चुके होगे। मैंने भी 'कुरान' को पढनेकी और इसमे जो अच्छी बाते है उन्हे समझनेकी कोशिश की है।

हिन्दू-मुस्लिम एकताके बारेमे आपने जो-कुछ कहा है उससे मै सबसे ज्यादा प्रभावित हुआ हूँ। मैंने देखा है कि गलतफहमियाँ बहुत ज्यादा है। फिर भी हिन्दू और मुसलमान इस तरहसे अलग नही रह सकते। आखिरकार ऐसे कबतक चलेगा? हालाँकि मैंने देख लिया है कि इस समय तो मै एकता कायम करनेमे कामयाब नही हुआ लेकिन निश्चय ही इस विफलतामे भी मै सफलता ही छिपी देखता हूँ। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि एकताके अर्थ यह नही है कि किसी तीसरेको तबाह करनेके लिए दो बलवान पक्ष आपसमे मिल जाये। अगर एकताके बारेमें हमारी ऐसी सकल्पना है तो बेहतर है कि हम जैसे है वैसे ही बने रहे। इस वक्त तो मै हरिजनोके कामपर ही ध्यान दे रहा हूँ और मैंने इस [एकताके] सवालको फिलहाल छोड रखा है।

अपनी सस्कृतिको कायम रखनेकी आपकी उत्सुकताको मै अच्छी तरह समझ सकता हूँ। लगता है आप लोग सर्वसामान्य शिक्षण सस्थाओमे विश्वास नही रखते है। आपकी रायमे ऐसी सस्थाओका उद्देश्य आपको अपनी धार्मिक और सास्कृतिक सम्पदाके मार्गसे भटकाना है। मै इस साम्प्रदायिक शिक्षाके सवालको दूसरी दृष्टिसे

देखता हूँ। सर्वसामान्य स्कूल या साम्प्रदायिक स्कूलसे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता। ऐसे सर्वसामान्य स्कूलों का क्या फायदा जहाँ पूर्वग्रहोंके कारण हृदयोंमें मतभेद उत्पन्न होता है? ऐसे साम्प्रदायिक स्कूलोंमें क्या बुराई है जहाँ सबके लिए हृदयमें शुद्धता हो? इस तरह आप देखेंगे कि साम्प्रदायिक स्कूलों या सार्वजनिक स्कूलोंका कोई महत्त्व नहीं है। साम्प्रदायिक शिक्षाके सवालकी बनिस्बत हृदयकी शुद्धता, परस्पर विश्वास और एक-दूसरेके प्रति प्रेम, ये चीजें कहीं ज्यादा महत्त्वपूर्ण हैं।

मुझे आपसे थैलीकी वाकई उम्मीद नहीं थी। इससे भी ज्यादा तो मुझे अस्पृश्यतासे जूझनेमें मुझे ताकत देनेके लिए आपकी दुआओंकी जरूरत है। भारतको एक भयंकर अभिशापसे मुक्त करानेके लिए मुझे आपकी मददकी जरूरत है। यह तो हमारा सबका मामला है, केवल भारतके लिए ही नहीं, बल्कि सारे संसारके लिए। यह तो मानवताकी सेवा है। आपने मुझे जो सुन्दर अभिनन्दनपत्र और थैली भेंट की है उसके लिए मैं आपका शुक्रगुजार हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २५-११-१९३३

२६८. भाषण: खामगांवकी सार्वजनिक सभामें

१७ नवम्बर, १९३३

आपने जो मानपत्र एवं थैली, रुपये तथा नोट दिये हैं इन सबके लिए आप भाइयों और बहनोंका मैं आभार मानता हूँ। मुसलमान भाइयोंकी अंजुमनने जो थैली दी है उसके लिए उनका आभार मानता हूँ। जब मैं चोखामेला[1] हरिजन बोर्डिंगको देखने गया था, तो वहाँ भाइयोंने मुझे जो रुपये दिये तथा बहनोंने अंगूठी दी, उसका भी मैं आभार मानता हूँ। अस्पृश्यता-निवारणके लिए आपने खामगाँव और उनके आसपास जो काम किया है उसके लिए भी धन्यवाद।

आज ग्राम लासूरमें ठक्कर बापाने हरिजन भाइयोंके लिए उदासीजी[2] का शिव-मन्दिर खोल दिया है। उन्होंने यह पवित्र कार्य हरिजन भाइयोंके लिए कर दिया है। मुझे बताया गया है कि उस अवसर पर वहाँ कोई भी हरिजन उपस्थित नहीं था। पर हरिजन भाई तो हमारे व्यवहारसे अभीतक शंकित हैं। हिन्दू जनताका या जो अपनेको सवर्ण हिन्दू मानते हैं उनका कर्त्तव्य है कि वे उनके लिए इन्साफ करें और आजतक उन्होंने उनके साथ जो बुराइयाँ की हैं उनका प्रायश्चित्त करें और आज भी अज्ञानवश जो यह माना जा रहा है कि मन्दिर केवल सवर्णोंके लिए ही हैं, उसे दूर कर दें। उदासीजीने यह कार्य करके अपने कर्त्तव्यका पालन किया है। हरिजन भाई आयें या न आयें, हम उनके प्रति प्रेमसे अपना कर्त्तव्य पालन कर लें तो उसका

१. महाराष्ट्रके एक हरिजन संन्यासी।
२. विष्णुदास उदासी।

फल अच्छा ही होगा। जब हरिजन भाई समझ जायेंगे कि हम उन्हे प्रेमसे बुलाना चाहते है तो वे अपने-आप चले आयेंगे।

यहाँ एक बात मै यह कह देना चाहता हूँ कि जो कानून सब हिन्दुओके लिए है वही हरिजनोके लिए भी है। सार्वजनिक नियम तो सभीके लिए एकसे होने चाहिए। सार्वजनिक सस्थाओमे जानेके नियमोंका पालन हरिजन भाइयोको करना ही चाहिए। उन्हें शरीर तथा कपडोको साफ रखने तथा शौचादिके नियमोका पालन करना चाहिए। जो हरिजन भाई मुर्दार मास खाते है उनको मन्दिरमे जानेका अधिकार नही है। दुनियामे इतना घूमकर और इतिहासका अध्ययन करके मैंने देखा है कि सर्वत्र मुर्दार मास खानेवालेके प्रति घृणा पैदा होती है। इसमे सन्देह नही कि जिनके दिलमे ईश्वरका भय है और जिनमे ज्ञान और शुद्धि पैदा हो गई है वे तो उसे छोड़ सकते है। इसी तरह मेरी प्रार्थना है कि वे मद्यपान भी छोड दे। हम जानते है कि यह दलील दी जा सकती है कि सवर्ण हिन्दुओमे भी तो बहुतसे मद्यपान करते है, पर जो बात बुरी है उसमे उनकी नकल करना ठीक नही है। जो मनुष्य मद्यपान करता है वह मनुष्यताको खो देता है। वह माँ, बहन, बेटी और स्त्रीमे क्या भेद है, यह भी भूल जाता है। यद्यपि मै जन्मसे सवर्ण हूँ पर स्वेच्छासे हरिजन हूँ। इस दृष्टिसे अपनेको हरिजन मानकर मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे इस बुराईको छोड दे। मै जानता हूँ कि उनके यहाँ पूजामे भी मद्य चलता है। यह तो कुछ झूठे धर्म पडितोनें उनको जैसा बता दिया है वैसा ही उन्होने मान लिया है। इसमे धर्मका तो लेश भी नही हो सकता; अधर्म अवश्य है। इसलिए आपसे प्रार्थना है कि मनुष्यको जानवर बनानेवाली इस चीजको आप छोड दे। वास्तवमें यह चीज ही अस्पृश्य है। इसी प्रकार महार, चमार, भगी, इत्यादिके बीच जो भेद-भाव है उसे भी दूर कर देना चाहिए। आत्म-शुद्धिके इस कार्यमे इतना करना हरिजन भाइयोके कर्त्तव्यका भाग है।

अब मै सवर्ण भाइयोसे कुछ कहना चाहता हूँ। जो इतनी जनता व्याख्यान सुननेके लिए जमा हो जाती है उससे मैं क्या समझता हूँ, यह भी मैं बता देना चाहता हूँ। जबसे मैं हिन्दुस्तान लौटा हूँ तबसे मैं जो दिलमे आता है वही करता हूँ। कोई भाई यह न सोचे कि यह करता कुछ है, पर इसके दिलमे दूसरी बात है। मै अपनेको आस्तिक मानता हूँ। उसे चाहे खुदा कहो, अल्लाह कहो या ईश्वर कहो, मैं उसका डर मानता हूँ। उसे साक्षी रखकर काम करता हूँ। और उसे साक्षी रखकर मै प्रतिज्ञा कर चुका हूँ कि सच्चा धर्म मानकर ही मै हरिजन-सेवा करूँगा। मैं भी बहुत-सी बातें जानता हूँ और कर भी सकता हूँ, पर वैसा करनेसे तो मेरे जीवनका पतन हो जायेगा। मै जेलके बाहर रहकर केवल एक ही कार्य कर लेना चाहता हूँ, अन्यथा मेरा जीवन मिथ्या है। मै तो अपनेको साधारण मनुष्य मानता हूँ, पर साधारण क्या और विद्वान क्या, अपने धर्मका पालन करना तो सबका कर्त्तव्य है। मैं इस कार्यको धार्मिक कर्त्तव्य मानता हूँ। अपने माता-पिता, शिक्षको और अपने अनुभवसे मैंने जो पाया है वह सब मै आपके सामने रख देना चाहता

हूँ। मैंने पहले जो-कुछ सेवा की है उसका फल मुझे मिल चुका है। मेरी सेवाका फल तो ईश्वर ही दे सकता है। इस समय तो मैं अस्पृश्यता-निवारणके लिए ही काम करना चाहता हूँ। आपको मेरी बात पसन्द हो तो आप मेरे पास आ सकते है और मेरी बात पसन्द न हो तो मुझे छोड़ सकते हैं। आजकल मुझे आपसे प्रेम मिला है, इसलिए आज यदि आपसे गालियाँ भी मिलेंगी तो भी मैं उन्हें सहन कर लूँगा और यदि आप मुझे मारेंगे तो उसे भी सह लूँगा, तथा ईश्वरसे यही प्रार्थना करूँगा कि वह आपको माफ कर दे। पर यदि आपको मेरी बात पसन्द न हो तो शिष्टाचार तो यह है कि आप यहाँ न आयें। मै तो देखता हूँ कि आप यहाँ आते है, हँसते-हँसते रुपये-पैसे देते है, जेवर देते हैं; इससे मैं यह समझता हूँ कि आप मेरे साथ हैं। क्या मैंने पहले जो काम किया है आप उसकी फीस देते हैं? मुझे तो फीस नही चाहिए। मेरी फीस तो ईश्वर मुझे दे देता है। पर आप जो इतनी अधिक संख्यामे यहाँ आते है और रुपये-पैसेसे सहायता करते हैं उससे मैं यही निष्कर्ष निकालता हूँ कि जो-कुछ कार्य मै इस समय कर रहा हूँ आप उसके साथ हैं, अर्थात् आज यही सनातन-धर्म बन गया है। आज मैं करीब-करीब डेढ़ लाख लोगोंसे मिल चुका हूँ। क्या वे सब सुधारक है? नही, वे सनातनी हैं और आज वे यही कार्य कर रहे है। आज यदि आप अस्पृश्यता-निवारणके इस कार्यमें स्वेच्छासे भाग नहीं लेंगे तो कल यही काम आपको अनिच्छासे करना होगा। क्या आप समझते हैं कि जब हमारे यहाँ एक सार्वजनिक सत्ता कायम हो जायेगी तो फिर क्या हरिजन भाइयोको मदरसेमे नही जाने देगे, या अन्य अधिकारोंसे रोक देंगे? एक समय था जब लोग रेलमे उनके साथ नहीं जाते थे, पर अब क्यों जाते हैं? इसी तरह मिल-मालिकोसे मैं पूछूँ कि क्या वे अस्पृश्योंको नही छूते हैं? छूते तो हैं पर यह सब आर्थिक लाभके लिए। पर इसमे तो धर्म है नहीं। मैं कहता हूँ कि जो काम आप अर्थलाभके लिए जबरदस्ती करते हैं, उसे आप स्वेच्छासे धर्म समझकर क्यो न करें?

नगरपालिकाकी ओरसे जो मानपत्र मुझे दिया गया है उसमें कहा गया है कि मन्दिर-प्रवेशके लिए कानून बनानेकी चेष्टा हमें छोड़ देनी चाहिए, क्योंकि बहुत-से भाई जानते है कि धर्ममें कानूनका हस्तक्षेप ठीक नही है। मैं इन भाइयोसे कहना चाहता हूँ कि मन्दिरमें यदि पाठ-पूजाके लिए हम जाते हैं तो वहाँ हरिजनोंको जानेका भी उतना ही अधिकार है। पर कानूनका जो मसविदा पेश किया गया है उसमें जोर-जबरदस्तीकी तो कोई बात ही नही है। उलटे आज कानूनमें जो जोर-जबरदस्ती है उसे मिटानेके लिए वह है। धर्ममें कानूनी हस्तक्षेप तो मैं खुद नही चाहता, पर इन विधेयकोसे धर्ममें हस्तक्षेप कहाँ होता है? यदि कोई वकील इसे साबित कर दे तो मैं इसका त्याग कर दूँगा, पर मैं जानता हूँ कि बात ऐसी है नहीं और आखिर किसी जमानेमें मैं भी तो वकील था। वकील भाई कहते हैं कि आज तो यदि जनता किसी मन्दिरको हरिजन भाइयोंके लिए खोलना चाहे और ट्रस्टियोंका बहुमत भी इसके पक्षमे हो, पर यदि एक भी ट्रस्टी विरुद्ध हो तो मन्दिर नहीं खुल सकता। उन कानूनमें स्वतन्त्र निर्णयकी सुविधा नही है, इसलिए जोर-जबरदस्तीकी बात है।

मजबूरीको दूर कर देना ही इसका उद्देश्य है। कानूनमें जो दोष है वह तो कानूनसे ही मिट सकता है, दूसरा कोई उपाय उसके लिए है नही। धर्ममें हस्तक्षेप तो तब होता, जब उसमे कानूनन सब मन्दिरोको खोलनेकी बात होती। पर वैसी तो कोई बात है नही। इसमे तो कोई जबर्दस्ती नही है। जब ट्रस्टी या जनता चाहे तभी मन्दिर खुल सकते है। वे न चाहे तो कोई जबर्दस्ती नहीं है। हिन्दू समाजके नामपर बम्बईके सम्मेलनमें हिन्दू नेताओने हरिजनोको देव-दर्शनका अधिकार दिलानेकी प्रतिज्ञा की थी। पर प्रतिज्ञा-पालनमे कानूनकी जो रुकावट है उसे कानून द्वारा ही दूर करना है। बस, इस विधेयकका इतना ही मतलब है। इससे धर्ममे कानूनी हस्तक्षेप नही होता। अब नगरपालिकाके सदस्य मेरी बातोपर विचार करे।

आज जब मै हरिजन भाइयोके पास गया, तब उन्होने कई शिकायतें की और पूछा कि जो लोग हरिजनोके सेवक बनते है उन्हें क्या आप सच्चा हरिजन-सेवक मानते है? मैंने कहा कि मुझे यहाँके लोगोका ज्ञान तो नही है, पर यह नही कहा जा सकता कि हर-एक आन्दोलनमे जितने लोग आ जाते है वे सब अच्छे और सच्चे ही होते है। उन्होंने जो शिकायते की उनसे मालूम हुआ कि मलकापुरमे हरिजनोको पाखानेमे नही जाने दिया जाता। यदि यह बात सच है तो कैसा अन्याय है कि पाखाने साफ तो वे करें पर स्वयं उनका कुछ भी उपयोग न कर सके। यदि कल वे सफाईका काम छोड़ दें तो आप क्या कर सकते हैं? सवर्ण हिन्दुओमें तो इतना भी सगठन नही है कि वे एक-दूसरेकी सफाई कर ले। इस तरहके व्यवहारसे कुछ लाभ नही होना है। इसी तरह मोनार नामक जगहके सम्बन्धमे भी उन्होने शिकायत की। वहाँसे जो पानी निकलता है उसमे सब स्नान करते है, पर हरिजन भाइयोके लिए उस पानीसे स्नान करनेकी मनाही है। वे केवल हमारे नहाये हुए मैले पानीसे ही स्नान कर सकते है। मै नही कह सकता कि यह बात कहाँतक सच है, पर यदि सच है तो बड़े शर्मकी बात है। यह पानी तो पशुओके लिए भी ठीक नही है। पशुओको भी हम साफ पानीसे नहलाते है। फिर क्या ये हरिजन भाई पशुओसे भी गये बीते है? उन्होने ऐसा क्या गुनाह किया है और अगर किया भी है तो गुनहगारोके साथ भी क्या ऐसा ही व्यवहार होता है? यह तो हमारा अत्याचार है। हमने अधर्मको धर्म बना लिया है। राजपूतानेसे जो दुखद सूचना मिली उसे भी यहाँ बता दूं। और वह यह है कि जहाँ पशु पानी पीते है उसीमे ही हरिजन भाई भी पी लेते हैं। यदि यही हमारा धर्म है तो उसका नाश होनेवाला है। जहाँ ऐसी घृणा है, ऐसा द्वेष है वहाँ तो नाश अवश्यम्भावी है। यदि हम इसे शास्त्र-सम्मत मानें और यह कहें कि यही हिन्दू-धर्म है तो मै कहूँगा कि यह सार्वजनिक अनुभवके बिलकुल विपरीत है और वह ज्यादा टिक नहीं सकता। हम अपनेको धोखा दे सकते है, दूसरोंको भी धोखा दे सकते है, पर ईश्वरको धोखा नही दे सकते। अनुभव और अध्ययनके आधारपर हिन्दू-धर्मको जिस रूपमें मैं जान सका हूँ उसमे अस्पृश्यताके वर्तमान रूपको बिलकुल स्थान नहीं है और इसीलिए मैने प्रतिज्ञा की कि भले प्राण चले जायें, पर अस्पृश्यताको तो निर्मूल करना ही है। मेरी नाकसे २४ घंटेमे जो साँस निकलता है वह यही कहता है कि अस्पृश्यता मिटा दो। हरिजनोकी सेवा तो

उनका सेवक बनकर ही हो सकती है; हमें हरिजनोंका सरदार नहीं, उनका सेवक बनना है। मैंने आपसे यह नहीं कहा कि उनके साथ बैठकर खाओ, यद्यपि अपने लिए तो मेरा यह नियम है कि स्वच्छतापूर्वक बनाया गया भोजन जैसा मैं खाता हूँ वैसा यदि मुझे खानेके लिए मिले तो कहीं भी खा लूँगा। पर आपसे तो मैं यही कहता हूँ कि यह जो आपने हरिजन भाइयोंको तुच्छ समझकर हटा दिया है, वह भूल की है।

सन्त कबीरने और दूसरे सन्तोंने भी कहा है कि ईश्वर उसके पास रहता है जिसे दुनिया त्याग देती है। जब दुनिया त्याग देती है तब ईश्वर आता है। ऐसे दृष्टान्त तो सभी धर्मोंमें मिलते हैं। हजरत उमरके जमानेकी मुझे एक बात याद आती है कि जब उनके एक सरदारने ५,००० अशर्फियाँ उन्हें भेजी, उसे देखकर वह रोने लगे। जब बीबीने पूछा — क्यों रोते हो? तब बोले — "आजतक ईश्वर मेरे यहाँ था, आज दुनिया मेरे पास आ गई है।" तो इन हरिजन भाइयोंको आपने त्याग दिया है, पर ईश्वर तो सचमुच उन्हींके यहाँ है। इसलिए आपके अन्दर जो घृणाका यह भाव आ गया है, उसे दूर कर दें।

कई भाइयोंको यह कहते सुना है कि पूर्व-जन्ममें जिसने जैसा किया वैसा ही फल भोग रहा है। पर यह कहना तो अनुचित है, अधर्म है। इसमें अहंकार है। जब हमारे माता-पिता, स्त्री-बच्चे कष्टमें होते है तब क्या हम यह कहकर उनकी उपेक्षा करते हैं कि यह पूर्व-जन्मके कियेका फल है? तब तो हम उनकी सेवा करते है। फिर दूसरोंके प्रति ऐसी उपेक्षा क्यों? पूर्व-जन्मको मैं भी मानता हूँ, पर उसका ऐसा प्रयोग नहीं किया जा सकता। ऐसी बात तो हम अपने ही लिए कह सकते हैं। दूसरोंको कष्टमे देखकर उनकी उपेक्षा करना और हँसी उड़ाना तथा यह कहना कि तुमने पूर्व-जन्ममें जो किया है उसे भोगो, ईश्वरको, जिसे हम दयासागर और न्यायसागर कहते हैं, राक्षस बना देना है। ऐसा पूर्व-जन्म मैं नहीं मानता। इसलिए मेरी आपसे विनय है कि मेरी बातपर गौर करके देखें और समझमें आये तो यह घृणाका, उपेक्षाका, ऊँच-नीचका भाव छोड़ दें। यदि आप स्वयं उसे उचित समझते हों लेकिन जनताका भय हो, तो जनता तो यही है। सच पूछें तो यह आपके दिलका भय है। इस भयको आप निकाल दें और घृणाका भाव छोड़ दें तो अस्पृश्यताका कलंक हिन्दू-धर्मसे मिट जायेगा और हम सबका भला होगा।

मैं जहाँ जाता हूँ वहाँ आप मुझे पैसे देते हैं। यह पैसा देना भी हरिजन-कार्यमें सहायता करना है, पर पैसा आप इस तरह न दें कि १० रुपये हैं तो उसमें से दो इस तरह उठाकर फेंक दिये कि चलो आखिर इतने कामोंमें पैसे खर्च तो होते ही हैं, इसमें भी सही। नहीं, चाहे आप एक पैसा दें पर हृदयसे दें, प्रेमसे दें, अपनी जरूरतमें से निकाल कर दें। इस तरह जो एक पैसा देता है वह हजार पैसे कमा लेता है, इसलिए इसे पुण्यका कार्य समझ कर जितना हो सके, इसमें आप सहायता दें।

हरिजन-सेवक, ८-१२-१९३३

२६९. तार : श्रीकृष्ण चाँदीवालाको

अकोला
१८ नवम्बर, १९३३

श्रीकृष्ण[1]
कटरा खुशाल
दिल्ली

ईश्वर का धन्यवाद। आशीर्वाद। सोमवारतक चिखलदामे हूँ।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २४०१) से।

२७०. बातचीत : स्वामी लालनाथसे

१८ नवम्बर, १९३३

[स्वामी] ने कहा कि मै चाहता हूँ कि आप (गांधीजी) अपनी यात्रा बन्द कर दें या विधेयकोंके बारेमें बात करना बन्द कर दें, और यही कारण है कि मै सत्याग्रह कर रहा हूँ और आपके ही तरीकेसे आपको जवाब दे रहा हूँ।[2]

लेकिन यह तो सत्याग्रह नही है, बल्कि उसको नकारना है। आप चाहते है कि या तो मै पुलिससे आपको गिरफ्तार करवा दूँ या आप लोगोके शरीरपर से मोटर ले जाऊँ। मै इन-दोनोमे से एक भी चीज नही करूँगा। मै पैदल जाऊँगा। तब शायद आप मेरे पैर पकड़ लेंगे और मुझे अपना बन्दी बना लेंगे।

हाँ, मैं आपके पैर पकड़ लूँगा और आपसे अनुरोध करूँगा कि यह यात्रा समाप्त कर दें।

यह तो निश्चय ही हिंसा होगी।

हम लोगोंका जो इरादा है, उसे मै आपसे नहीं छिपा सकता। हम चाहते हैं कि पुलिस या आपके स्वयंसेवक लोग हमें चोट पहुँचायें। ऐसा होनेपर मै जानता हूँ कि आप अपना दौरा रद्द कर देंगे।

लेकिन मै आपको बता चुका हूँ कि मै पुलिस नही बुलाऊँगा और स्वयसेवकोंको आपपर आघात नही करने दूँगा।

१. ब्रजकृष्ण चाँदीवालाके भाई। ब्रजकृष्णजी उस समय सख्त बीमार थे, देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", २१-१०-१९३३ तथा "पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको", १५-११-१९३३ और "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", ४-१२-१९३३ तथा "पत्र : कस्तूरबा गांधीको", ७-१२-१९३३।

२ स्वामी लालनाथने धमनगाँव और अमरावतीमें गांधीजीकी मोटर-कारके सामने लेटकर उनकी यात्राको रोकनेका विफल प्रयत्न किया था।

तब हमें आपका रास्ता रोके रखना पड़ेगा।

आप बड़े ही अविवेकी हैं। सत्याग्रहीको अविवेकी नहीं होना चाहिए। आप चाहते हैं कि जनताको हिंसा करनेके लिए उत्तेजित करें। सत्याग्रही कभी किसीको गलत काम करनेके लिए प्रलोभित नहीं करता, विशेष रूपसे धार्मिक मामलोंमें। संसारकी कोई शक्ति मुझे मेरे विश्वासके विरुद्ध काम करनेके लिए मजबूर नहीं कर सकती।

तब आप हमें कोई बेहतर रास्ता सुझाइए।

यह मैं निश्चय ही कर सकता हूँ। आपको बनारस जाना चाहिए और भगवान विश्वनाथसे कहना चाहिए कि वह मुझे गलत कामोंसे विमुख करें। मैंने जिस प्रकार उपवास किया था वैसे ही आपको भी करना चाहिए।

ऐसा करनेकी हमारे अन्दर सामर्थ्य नहीं है।

तब मुझे बहुत दुख है। मुझे यह अशोभनीय चक्कर पसन्द नहीं है। आपको अपने सलाहकारोंके पास जाकर उनसे कहना चाहिए कि वे मुझे तर्क करके या ईश्वरसे प्रार्थना करके इस पथसे विमुख करें। यदि वे ऐसा नहीं कर सकते तो जो कुछ मैं कर रहा हूँ उसको उन्हें सहन करना चाहिए, वैसे ही जैसे मैं उनके विरोधको सहन करता हूँ। आप देख सकते हैं कि जो हजारों लोग मेरा भाषण सुनने आते हैं, मैं केवल उनके सामने [अस्पृश्यताकी] बुराई समझाता हूँ।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-१२-१९३३

२७१. भाषण : अकोलामें

१८ नवम्बर, १९३३

आजके मुख्य विषयपर आनेसे पहले, यहाँ आनेमें मुझे जो देर हुई उसके बारेमें कहना आवश्यक है। बनारससे आये कुछ लोग मेरे पीछे-पीछे चलते हैं। उनमें एक स्वामी हैं। यों घूमनेका उन्हें अधिकार है। मेरे दौरेका कार्यक्रम इतनी तेजीसे चलता है कि वे सब कहीं तो मेरे साथ नहीं आ सकते लेकिन जहाँ आ सकते हैं वहाँ वे आते हैं। मैं जिस मोटरमें जाता हूँ वे उसके रास्तेमें आकर लेट जाते हैं। स्वयंसेवक इन्हें उठा लेते हैं और मोटर आगे बढ़ जाती है। ये भाई किसी को गाली नहीं देते, मारपीट नहीं करते और मेरा विश्वास है कि स्वयंसेवक इनसे मारपीट नहीं करते। आज भी वे दरवाजेपर आये। इससे मुझे दुःख हुआ। दुःख तो मुझे हमेशा होता था कि जो सनातन धर्मके नामपर आते हैं उनमें सभ्यता क्यों नहीं है? इन्हें उठाकर चलना मुझे अच्छा नहीं लगता था। इसलिए मैंने इनके नेता स्वामीको बुलवाया और उसे समझानेकी कोशिश की।[2] इसीसे यहाँ आनेमें देर हुई। मैंने स्वामीसे कहा

१. देखिए अगला शीर्षक भी।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

कि जो लोग धर्मकी रक्षा करनेका दावा करते हैं उनके लिए ऐसा करना उचित नही है। आधुनिक सत्याग्रह-शास्त्रके प्रणेताके रूपमे मै आपसे कहता हूँ कि इसमे सत्याग्रह नही है। आप ऐसा व्यवहार करते-करते स्वय थक जायेगे। यदि मुझे पकड़ेगे, मारेगे, गाली देगे तो मै उसका उत्तर गालीसे नही दूँगा अपितु स्नेहभावसे सब कुछ सह लूँगा। आप मोटरको अटकायेगे तो मै पैदल चलूँगा। तब स्वामीने कहा कि हम आपके पाँव पकड लेगे और आपको हमारे शरीरपर चलकर जाना पड़ेगा। मैने कहा, मै यह भी नही करूँगा, और पुलिसकी मदद भी नही लूँगा। ऐसा करना मुझे शोभा भी नही देगा। यदि मुझे भय हो तो मै पुलिसकी मदद लूँ, लेकिन मुझे भय तो है ही नही। इस जीवनमे मै मारपीट भी सह चुका हूँ फिर भी मैने कभी पुलिसकी मदद नही ली, तो क्या अब अपनी उत्तरावस्थामे धर्म-कार्य करते हुए क्या मै पुलिसकी मदद लूँगा? इसलिए मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप मुझे रास्ता दे। आपको समझना चाहिए कि सनातन धर्ममे — हिन्दू-धर्ममे — हर तरहके मत व्यक्त करनेकी छूट है। आखिरकार स्वामी बाहर गया और अपने साथियोसे मिल आनेके बाद उसने मुझसे कहा कि आज तो आप दूसरे रास्तेसे चले जाइए, वहाँ हम आपको नही रोकेगे और हमारी बात भी रह जायेगी। मैने इसे स्वीकार किया और दूसरे रास्तेसे निकलकर आया।

स्वामीके साथ जो आये है वे उत्साही नवयुवक हैं। इन्हे किसीने गलतफहमीमे डाल दिया है कि मै सनातन धर्मका नाश कर रहा हूँ। वे मानते है कि मेरा कथन शास्त्र-सम्मत नही है। ऐसा माननेका उन्हे अधिकार है। मै यदि भूलपर हूँ तो मुझे समझानेके लिए भले वे तपस्या करे। हिन्दू-धर्मका तो यह मार्ग ही है, इसमे सभ्यता है। लेकिन इनके असभ्य व्यवहारसे सनातन धर्मकी निन्दा हो, यह मुझे अच्छा नही लगता। इसलिए जो लोग सनातन धर्मके नामपर मेरा विरोध करते है उनसे मै कहना चाहूँगा कि आप लोग मेरी बुद्धिको, मेरे हृदयको छूकर मुझे रोक सकेगे, जोर-जबरदस्ती अथवा अविनयसे नही रोक सकेगे। मै तो प्रतिज्ञाबद्ध मनुष्य हूँ। जीवनके उत्तरार्द्धमे मैने जो प्रतिज्ञा ली है उसका पालन करना मेरा धर्म है। आप श्रोताजन जब मेरा भाषण सुननेके लिए आते है तब मेरे हृदयमे जो वस्तु है वह मै आपको सुनाता हूँ। इसके अनुसार आचरण करना न करना आपके हाथकी बात है। आप उसके अनुरूप आचरण करेगे अथवा नही सो तो ईश्वर ही जाने, मै तो उसे देखने नही आनेवाला हूँ।

आज सवेरे मेरा विरोध करनेवाले कितने ही लोग, जिस राहसे होकर मै आया हूँ उस राहपर काले झण्डे लेकर खड़े थे। इनके प्रति रोष न कर प्रेमभाव रखना मेरा धर्म है। मै अनुचित कार्य कर रहा हूँ ऐसा यदि वे मानते है तो वे काले झण्डोसे मेरा स्वागत कर सकते हैं। हरिजन सेवकके लिए स्तुति और निन्दा एक समान होने चाहिए। यह नियम कोई मुझ अकेलेके लिए नही है अपितु समस्त संसारमे जो लोग सार्वजनिक जीवनमे कार्य कर रहे है उन सबके लिए है। जो ऐसा नही करते वे मनसे दुखी होते हैं। मै इस तरह क्योकर दुखी होऊँ? कोई काला झण्डा

फहराये अथवा सफेद झण्डा, उससे मुझे क्या? मेरा कार्य ही मेरी सच्ची स्तुति अथवा निन्दाके लिए पर्याप्त है।

मैंने सुना है कि सनातनियोने आज मेरा पुतला भी जलाया है। मेरे करोडो पुतले जले तो भी मुझे क्या? हाँ, इसपर जो थोड़ा पैसा बरबाद होता है उसका मुझे दुःख होता है, लेकिन उससे मेरा कोई नुकसान नही होनेवाला है। जनताको यदि मेरी बात पसन्द न आये, वह उसे छोड़ दे तो मैं जनतापर बलात्कार नही कर सकता। मैं बलात् उन्हे अपनी बात नही सुना सकता। यह मेरा रास्ता नही। मेरा रास्ता तो सीधा है (यहाँपर किसीने कहा कि मजिस्ट्रेटने पुतला नही जलाने दिया)। सरकारने नही जलाने दिया तो भी जिन लोगोने जलानेकी इच्छा की [मनसे तो] उन्होंने जला ही दिया। किसी स्त्रीपर यदि मैंने बुरी नजर डाली तो उतने भरसे व्यभिचार तो हो ही गया। यदि किसी कारणवश मैं अपने कुविचारपर अमल नही कर सका तो उससे ईश्वर मुझे क्षमा थोड़े ही करनेवाला है। वह तो कहेगा "दुष्कर्मको रोका तो मैंने ही। तू तो कर ही चुका था।" इस प्रकार यदि ये भाई मेरा पुतला नही जला सके तो उससे क्या? उनके मनसे तो वह जलानेके समान ही है। उन्होंने उसे भले ही जला दिया लेकिन धर्मकी खातिर मैं इतना अवश्य कहूँगा कि यदि उन्होने न जलाया होता तो ठीक होता।

सनातनियोने एक पुस्तिका प्रकाशित की है जिसमें उन्होंने कहा है कि स्वयंसेवकोने भी उन्हे मारापीटा। स्वयंसेवकोने यदि ऐसा किया हो तो यह बुरी बात है। मैं यह बात सहन नही कर सकता। जो लोग मेरी रक्षा करना चाहते है वे किसीको गाली दें, तू-तड़ाक करें, मारपीट करें तो यह मुझे अच्छा नही लगता। बियाणजी[1] का कहना है कि स्वयंसेवकोने ऐसा कुछ नही किया। मैं तो स्वयंसेवकोंको सावधान करना चाहता हूँ। सनातनी भाइयोको यह बात कदाचित् बुरी लगती होगी कि सभाओमे इतने ज्यादा लोग कैसे चले आते है? वे कदाचित् उन्हें रोकनेका प्रयत्न करेंगे। वैसा करनेका उन्हे पूरा अधिकार है। इसके लिए कोई रोकटोक नहीं करे अपितु उन्हें विनयपूर्वक समझाये। वे न समझें तो वे जो चाहे सो करने दे। पुलिसको खबर न दे। मेरी रक्षाके लिए कोई कुछ न करे। ईश्वरने तीन-चार बार मुझे इस तरह बचा लिया है। ईश्वर जबतक मुझसे इस देहसे काम लेना चाहेगा तबतक वह मुझे स्वस्थ और सुरक्षित रखेगा। और जब मेरी आयु समाप्त हो जायेगी तब जगतकी कोई शक्ति मुझे जीवित नही रख सकेगी।

आज जो कार्य चल रहा है उसके द्वारा हिन्दू समाजकी परीक्षा हो रही है, इस बारेमे आप तनिक भी सन्देह न करना। सारा संसार देख रहा है कि हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यता रूपी मैल दूर होता है कि नही। और यदि हिन्दुओके दिलमेंसे अस्पृश्यता दूर हो जाये तो हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, यहूदी सबमे परस्पर स्नेहभाव स्थापित हो जाये। अस्पृश्यताके हजार मुँह है। वह हजारों और लाखो हाथ फैलाये हुए है। जिन्हे हम विधर्मी मानते है उनके पास भी यह अस्पृश्यता पहुँच गई है। इसे मैं

१. ब्रजलाल बियाणी; विदर्भ कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष तथा बादमें मध्य प्रदेश मन्त्रिमण्डलमें अर्थ-मन्त्री।

धर्म नही मानता। हिन्दू-धर्ममे द्वेषको, तिरस्कारको स्थान ही नही है। कितने ही शास्त्रियोने मुझसे कहा है कि आज जैसी अस्पृश्यता है उसके लिए हिन्दू धर्म-शास्त्रोमे कोई प्रमाण नही, लेकिन यदि हो तो इसे हमे छोड़ना होगा, अन्यथा हमे यह दावा छोडना पड़ेगा कि हिन्दू-धर्म अहिंसा प्रधान है, और सहिष्णु है। हमारा यह आन्दोलन सारे संसारकी नजरके आगे चल रहा है, कही किसी कोनेमें नही चल रहा। आपका और मेरा धर्म है कि हम जो करें वह सभ्यता, सचाई, शान्ति और विनयपूर्वक करें। सनातनियोसे भी मेरी विनती है कि वे सारा काम सभ्यता, शान्ति, सचाई, और नियमके साथ करे। मोटरको रोकनेके प्रयत्नमें मै सभ्यता नही देखता। काले झण्डे दिखाना और पुतले जलाना यदि वे छोड दे तो अच्छा हो। आजकल विरोध प्रकट करनेके एक उपायके रूपमे काले झण्डोका उपयोग होता है। जब सत्याग्रह आन्दोलन चल रहा था उस समय कभी-कभी विरोध व्यक्त करनेके लिए काले झण्डे दिखाये जाते थे। मैंने उस बातको पसन्द नही किया था। इसमे सभ्यता नही, इसमें सत्याग्रहका अश नही। सत्याग्रहीका धर्म तो यह है कि जो व्यक्ति दुश्मन बना है उसके मनको मित्रतासे हर ले और उसका हृदय-परिवर्तन करवाये। सत्याग्रहका नियम हिन्दू-हिन्दूमे भिन्न, हिन्दू-मुसलमानके बीच भिन्न, हिन्दू-अग्रेजके बीच भिन्न है, सो बात नही है। सत्याग्रहका नियम सबके लिए एक समान ही है। इसमे अशान्ति, अविनय और हिंसा-द्वेषको स्थान हो ही नही सकता। यदि नियमके अनुसार सनातनी और सुधारक दोनो चले तो हिन्दू-धर्मकी विजय हो, फिर भले अस्पृश्यता रहे या न रहे। अस्पृश्यताके रहते हिन्दू-धर्म जीवित रहे, ऐसा कदापि नही हो सकता। लेकिन यदि दोनो पक्ष सत्यके मार्गपर चले तो अच्छी बात है। यह एक प्रचण्ड आन्दोलन है। इसमें २२ करोड हिन्दुओकी परीक्षा है। हरिजनोकी भी परीक्षा है। पाप सवर्ण हिन्दुओने किया है इसलिए प्रायश्चित्त भी उन्हे ही करना होगा। हरिजन भी हिन्दू ही है, इसीसे कहता हूँ कि उनकी भी परीक्षा हो रही है।

ये जो १०-१२ लोग काशीसे आये है, ये क्या चाहते है सो समझने योग्य बात है। ये कहते है कि आप भले ही अस्पृश्यता-निवारणका काम करे, भले ही मन्दिर-प्रवेशका काम भी करें, लेकिन मन्दिर-प्रवेश और अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धी जो विधेयक विधान-सभाके समक्ष रखे हुए है उनके बारेमे लोगोको नही समझायें। उन्हे पास करवानेकी कोशिश न करें। अन्य लोगोका भी यह कहना है कि कानूनसे धर्ममें हस्तक्षेप होता है। यह बात मै दो-तीन दिनोसे सुन रहा हूँ। यथाशक्ति इसका मैंने उत्तर भी दिया है। हम प्रतिज्ञासे बँधे हुए है। गत वर्ष सितम्बरमे बम्बईमे हिन्दुओके प्रतिनिधियोने मालवीयजी महाराजके नेतृत्वमे यह प्रतिज्ञा की है। इस प्रतिज्ञाका मूल मसविदा मैंने तैयार किया था। मैंने जो मसविदा दिया था लगभग उसी रूपमे प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। मैंने डॉ० अम्बेडकर और रावबहादुर राजाको वचन दिया कि हिन्दू समाज इस धर्मका पालन करेगा इसके लिए आपको मै अपने शरीरकी साक्षी देता हूँ। इसलिए मेरा कर्त्तव्य है कि मै सवर्ण हिन्दुओको इस प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए समझाऊँ। इस प्रतिज्ञामे मन्दिर-प्रवेशकी बात आती है, कानूनी मददकी

बात भी आती है। मन्दिर-प्रवेश विधेयक निर्दोष है। और फिर मेरे कहने-भरसे यह थोड़े ही पास होनेवाला है। मेरे कहनेसे ही अगर इसे पास होना होता तो यह कबका हो गया होता। इनमें से एक विधेयक लोकमत पुष्ट करनेके लिए बनाया गया है। इसे पास करवानेके लिए आन्दोलन करना आपका और मेरा कर्त्तव्य है। यह विधेयक कानूनी हस्तक्षेपको दूर करता है। जो मन्दिर अमुक परिस्थितियोंमें हरिजनोंके लिए आज नही खुल सकते यह विधेयक उन मन्दिरोंके खोले जानेकी अनुमति प्रदान करता है। आज तो स्थिति यह है कि यदि बहुत सारे लोग हरिजनोंके लिए मन्दिर खोले जानेके पक्षमें हों तो भी एक व्यक्ति उसे रुकवा सकता है। इस स्थितिको दूर करनेके लिए ही यह विधेयक है। इसमे किसीपर जोर-जबरदस्ती करनेकी कोई बात नही है। हरिजनोके मन्दिर जानेसे मूर्ति अपवित्र हो जाती है, ऐसा जो लोग मानते हैं वे भले ही उस मन्दिरमें न जायें। लेकिन बड़ी संख्या ऐसे लोगोंकी है जो मानते हैं कि हरिजनोंके प्रवेश बिना मूर्तिमें देवताका वास ही नही होता। ऐसा जो मानते है वे क्या करें? वे यदि कानूनी बाधाको दूर नही करवाते तो उससे उनकी प्रतिज्ञा भंग होती है। इस विधेयकसे किसीको कोई हानि नहीं है, इसमे बलात्कार की बू तक नही है।

दूसरा विधेयक धार्मिक अस्पृश्यतासे ताल्लुक नहीं रखता। वह केवल इतना ही कहता है कि कानूनमे, अदालतमें अस्पृश्यताका कोई स्थान नहीं है। हम एक ओर तो चाहते हैं कि कानून धर्ममे हस्तक्षेप न करे तथा दूसरी ओर दीवानी कानूनमें अस्पृश्यताके स्थानको बनवाये रखना चाहते हैं। ऐसा कैसे हो सकता है? आज कानूनमें अस्पृश्यताको स्थान है, ऐसा लोगोंका कहना है। यदि दोनों विधेयक पास हो जायें तो इससे कोई अस्पृश्यता दूर हो जानेवाली नही है। अस्पृश्यता-निवारणके लिए तो सवर्ण हिन्दुओंका हृदय-परिवर्तन करवाना होगा। इन विधेयकोंसे तो अस्पृश्यता दूर करनेवालेकी और अस्पृश्यकी रक्षा होती है जो आज उन्हें उपलब्ध नही है।

अस्पृश्यताको यदि आज हम स्वेच्छासे दूर नहीं करते तो कल हमें जबरदस्ती ऐसा करना पड़ेगा। हरिजनोंको हमने स्वेच्छासे रेलगाड़ीमें नही बैठने दिया, आज वे बलपूर्वक बैठते हैं। मिलमें हम उन्हें बलात् स्वार्थवश होकर रखते हैं। दबावमें आकर किये गये कार्यमें पुण्य नहीं है।

आज हम जो उनके कन्धोंपर चढ़ बैठे है हमें वहाँसे उतर जाना चाहिए। उनको न्याय प्रदान करनेकी खातिर मैं आपसे धन माँगता हूँ। हरिजन जिन घरोंमें रहते है उन घरोंमे आप और मै नहीं रहना चाहेंगे। वे शौच-सम्बन्धी नियमोंका पालन नही कर सकते, क्योंकि उसके लिए उनके पास सुविधा नहीं है। वे निरक्षर हैं। उनकी इन असुविधाओंको दूर करनेका कार्य पैसेके बिना नही हो सकता, इसीसे मै आपसे धन माँगता हूँ। आप मुझे कंजूसीसे न दें। हम नाटक-थियेटरमें पैसा खर्च करते है यह बात उस तरह पैसा खर्च करनेकी नहीं है। यह तो त्यागकी, बलिदानकी बात है। आप यदि त्याग-बुद्धिसे देंगे तो मैं समझूँगा कि आपने कुछ दिया है। त्यागकी भावनासे दी गई एक कौड़ी भी पर्याप्त होगी, कंजूसीसे दिये गये रुपयेकी भी कोई कीमत नहीं। हरिजन-सेवाका कार्य अन्ततः ईश्वरका कार्य है, लेकिन ईश्वर

मनुष्यकी मार्फत ही तो काम लेता है। जो मनुष्य ईश्वरको साक्षी मानकर, उससे डरकर चलता है, उसीके द्वारा ईश्वर अपना काम लेता है। केवल आपके धनसे हरिजनका पेट भरनेवाला नही है। आपका दान इस कार्यके प्रति सहानुभूतिके रूपमे होना चाहिए। श्रीमती दुर्गाबाईने सवेरे सोनेकी चूड़ी और चाँदीका लोटा व प्याला मेरे सामने रखते हुए कहा कि "ये मेरी प्रिय वस्तुएँ थी। मैंने इन्हे सँभालकर रखा था, ये आज मैं हरिजन सेवाके लिए देती हूँ।" मैं सब हरिजन भाई-बहनोसे ऐसे त्यागकी अपेक्षा रखता हूँ।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३-१२-१९३३

२७२. पत्र : गोरधनभाई पटेलको

[१९ नवम्बर, १९३३][1]

प्रिय गोरधनभाई,

मणिबहनने लिखा है कि विट्ठलभाईके दाह-संस्कारके समय मैं बम्बई नही आया, इसका आपको दुख हुआ। एक तरहसे यह बात मुझे अच्छी लगती है। आपका दुख इस बातका परिचायक है कि आप मुझे परिवारका एक सदस्य मानते हैं। ऐसा माननेका आपको अधिकार है। लेकिन यदि आप मुझे परिवारका सदस्य मानते है तो जहाँ मेरा कार्य आपकी समझमें न आये वहाँ मुझसे पूछना चाहिए। विट्ठलभाई और मेरे बीच जो मतभेद था उसका मेरे न आनेके साथ कोई भी सम्बन्ध नही है। मेरे न आनेका कारण तो मेरी आजकी परिस्थिति ही थी। मै केवल हरिजन-कार्यके लिए ही जेलसे बाहर रहा हूँ। यह कार्यक्रम पहले ही तय हो चुका था। मै किसी ऐसे किसी सरकारी अंकुशको माननेके लिए तैयार नहीं हूँ जो सहन करने योग्य न हो। दूसरी तरहसे भी मुझे लगा कि मेरा वहाँ कोई उपयोग नही है। मृत्युके पश्चातकी उत्तर क्रियाओके सम्बन्धमे जो मेरे विचार है उनको देखते हुए भी मेरा वहाँ कोई उपयोग न था। इसलिए जिस दृष्टिसे भी विचार करे मेरा वहाँ आना जरूरी न था। इतना ही नही बल्कि अनुचित भी था। जो थोडा-कुछ हुआ मैं तो उसे भी नही होने देता। आपको तो मेरा केवल इतना ही बताना पर्याप्त होना चाहिए कि विट्ठलभाईके साथ मेरे जो मतभेद थे वे इसमे तनिक भी कारणभूत न थे। आप शायद नही जानते कि उनकी बीमारीकी खबर पाते ही मैंने उन्हे पत्र लिखा था और उसका उन्होने एक लम्बा और मधुर उत्तर भी दिया था। जब बीमारी बहुत ज्यादा बढ गई तब मैंने तार भी दिया था। उसका भी मुझे उत्तर मिला था। और फिर उन्होने मुझे जानकारी देते रहनेके लिए आपको भी लिखा था। आपके तारको मैं (अहमदाबाद)के मिल-मालिकके सचिव गोरधनभाईका तार समझा था

१. देखिए "पत्र : डाह्याभाई पटेलको", १९-११-१९३३।

और उन्हें धन्यवाद-पत्र भी लिखा था। उन्होंने खबर दी थी कि तार भेजनेवाले वे न थे। मुझे उम्मीद है कि इस खुलासेसे आपका समाधान होगा। यदि न हो पाये तो फिर लिखें।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १५६-७

२७३. पत्र: मणिबहन पटेलको

[चिखलदा]
१९ नवम्बर, १९३३

चि० मणि,

तू अपने और कुटुम्बियोके विचारोको मेरे आगे उँडेल रही है, यह बहुत समझदारीकी बात है। डाह्याभाई अथवा गोरधनभाईके मनमें मेरे प्रति लेशमात्र भी गलतफहमी हो तो यह मेरे लिए असह्य है। यदि तू बम्बईमे हुई तब तो मैंने गोरधनभाईको जो पत्र लिखा है[1] उसे तू पढ़ेगी ही। उसे पढ़नेके बाद यदि तुझे कुछ कहना हो तो मुझे लिखना।

मेरा पत्र तो तुझे मिला ही होगा। मै अखबारोमे कुछ लिखनेकी जरूरत नही समझता। अखबारवाले मुझे न समझ पाये अथवा जान-बूझकर मेरे बारेमे गलतफहमी फैलाये तो मैं उसका जवाब देनेकी जरूरत हमेशा महसूस नही करता। लेकिन यदि तुम दोनों भाई-बहन ऐसा चाहो तो मैं अवश्य दूंगा। मेरी स्थिति बिलकुल साफ है। डाह्याभाई जो कहता है वह बिलकुल सच है। [चित्तरंजन] दास आदिके चरित्रमें दोष अवश्य बताया जा सकता है। दोष बिना [इस संसार] मे कौन है? लेकिन मेरे न आनेका विट्ठलभाईके दोषोके साथ कोई सम्बन्ध नही है। जो सम्मान अन्य नेताओको मिला उस सम्मानके विट्ठलभाई भी अवश्य अधिकारी थे। उनका त्याग, उनका धैर्य, उनकी कुशलता कांग्रेसके प्रति उनकी वफादारी, ये सब उनमें किसीसे कम न थे।

तेरी खुदकी उदारतासे मै चकित हूँ। लेकिन यह तेरा विशेष गुण है, ऐसा न समझना। मैंने यह गुण असंख्य स्त्रियोमे देखा है। स्त्रियाँ अपने प्रति किये गये बुरे व्यवहारको भूल जानेके लिए हमेशा तैयार रहती हैं। इसी गुणसे स्त्री जातिकी शोभा है। लेकिन इस गुणका दुरुपयोग पुरुष जातिने खूब किया है। लेकिन यह तो विषयान्तर हुआ। तू इस समय मेरी नजरोमें इतनी शोभा पा रही है, इसके लिए मैं अपने-आप पर गर्व कर सकता हूँ न?

वर्धाके पतेपर लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ ११५-६

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२७४. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

१९ नवम्बर, १९३३

चि० डाह्याभाई,

तुम्हे मैंने पत्र लिखा है[1] वह मिला होगा। साथमें एक पत्र गोरधनभाईके लिए है। उसे पढकर उन्हे दे देना। यदि तुम्हारा समाधान न हो तो यह न भूलना कि मेरे साथ जूझनेका तुम्हारा धर्म है। बा और मणिके पत्र भी उन्हे पहुँचा देना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १५६

२७५. पत्र : किशन घुमतकरको

असंशोधित

स्थायी पता . वर्धा
२० नवम्बर, १९३३

प्रिय किशन,

बेचारे बूढे आदमी पर तरस खाओ। जब मै तुमसे कहता हूँ कि मै तुमसे नाराज नही हूँ तो तुम्हे शका क्यो होती है? क्या तुमने मुझे गुस्सा करनेकी कोई बात की है? अब भी मै तुम्हारे खिलाफ ऐसी कोई बात नही जानता जिसमे गुस्सा आये। बूढे लोगोको न समझ सकना तो युवाजनोके लिए स्वाभाविक ही है। तुम यह कैसे समझोगी कि दाँत या स्वास्थ्यके बिना कैसा लगता है या २० वर्षकी अवस्थामे यह कैसे जानोगी कि जब तुम ८० वर्षकी होगी तो तुम्हे स्वयं कैसा लगेगा? बूढे लोग इतने रहस्यपूर्ण नही होते कि युवाजन उन्हे समझ ही नही सके। हो सकता है कि वे जड़बुद्धि हो। दूसरे लोगोके बारेमे तुम्हारा अनुभव कैसा भी हो, लेकिन मेरे मामलेमे तो वह लागू नही होगा।

क्या ही अच्छा होता कि तुम भी मेरे पास वर्धामे आ जाती। मुझे तो तुम्हे अब भी पाकर खुशी होगी। लेकिन क्या तुम यात्राके इस भारी बोझको सहन कर सकती हो? क्या तुममे लगातार दौड़भागको झेलनेकी शारीरिक और मानसिक शक्ति है?[2] धुरंधरका क्या कहना है?

१. देखिए "पत्र : डाह्याभाई पटेलको", १४-११-१९३३।
२. किशन घुमतकरका स्वास्थ्य थाना जेलमें कैद भुगतनेके बाद खराब हो गया था।

प्रेमाके साथियोसे जो लोग मिलने जाते है उनके जरिये मुझे प्रेमाके वारेमें खवरें तो मिल जाती है। लेकिन तुम्हें भी उसके वारेमे जो जानकारी मिले उसे मुझे वताती रहना।

सप्रेम,

वापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०६९) से। सी० डब्ल्यू० ९६८८ से भी।

२७६. पत्र : माणेकलाल कोठारीको

२० नवम्बर, १९३३

चि० माणेकलाल,

तुम्हारा लम्वा पत्र मुझे अच्छा लगा है। जितनी सादगी रखोगे उतना अधिक अच्छा है। वालकोंको उद्यमकी आदत डालनेसे वे तन और मन दोनोंसे स्वस्थ रहेंगे।

तुमने देशी राज्यो और अंग्रेजोके वीच जो तुलना की है वह कुछ अंगोमें सही है। लेकिन उसका कारण तो यह है कि देशी राज्य स्वयं गुलाम है। मालिकके दोप गुलाममे हमेशा दुगने नजर आते है। इससे तुम्हे जिस वातका अनुभव हुआ है वह ब्रिटिश राज्यका ही परिणाम है। इसका अर्थ यह नही कि पहले देशी राज्य ज्यादा अच्छे हुआ करते थे। लेकिन पहले देशी राज्योमे जो दोप हुआ करते थे उनका निवारण राजा और प्रजा दोनों मिलकर किया करते थे। आज ऐसा करना लगभग असम्भव हो गया है, क्योकि मूलमें ही खरावी है।

यन्त्रोंको लानेसे हिन्दुस्तानमे थोड़ेसे लोगोंकी आर्थिक स्थितिमें अवश्य सुधार होगा। लेकिन ३० करोड़ लोगोंको यन्त्र रोजी नही दे सकते। उन्हे खेतीके उपरान्त अन्य कुछ वन्धा मिलना चाहिए और वह कताई ही हो सकता है। इससे यदि तुम घरमें खादीका इस्तेमाल करने लग जाओ तो अच्छा होगा। यदि कपड़े पहननेका शौक कम हो जाये तो खादी पुसा सकती है, ऐसा अनेक लोगोंका अनुभव है। तुम सव लोग यदि रोज थोड़े समयके लिए कातो और सूतको वुनवा लो तो तुम्हें कपड़ा विलकुल सस्ता पड़ेगा। पुरुपोत्तम, जमनादास आदि इस वारेमें तुम्हारी मदद भी कर सकते हैं।

रामदास वर्धामे है। केशु, कृष्णो भी वही है। मनु राजकोट गई है, क्योकि कुसुम वीमार है। यह वात कदाचित् तुम्हें मालूम होगी। वा अहमदावाद गई है।

मेरी तवीयत अच्छी रहती है। 'हरिजनवन्धु' न पढ़ते हो तो अव पढ़ना।

वापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

मुझे वर्धाके पतेपर लिखना।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२३) से।

२७७. पत्र : राधाबहन एम० कोठारीको

२० नवम्बर, १९३३

चि० राधा,

माणेकलालको मैंने एक लम्बा पत्र[1] लिखा है इसलिए तुम्हे अधिक नही लिख रहा हूँ। यदि तुम अपनी पूरी सामर्थ्यसे सेवा करोगी तो मै इतनेसे ही सन्तुष्ट हो जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२३) से।

२७८. पत्र : कोतवालको

२० नवम्बर, १९३३

भाई कोतवाल,

जो हमे सहज ही प्राप्त हो गया है वह स्वधर्म है। जो व्यक्ति किसी संस्थाका वरण कर चुका है उसे आजके युद्धमे भाग नही लेना चाहिए, ऐसा सामान्य रूपसे कहा जा सकता है। किसीके कहनेसे मनुष्यको अपना धर्म नही सूझता। जो अपने धर्मको जान लेता है वह समस्त संसारका मुकाबला करते हुए भी उसका पालन करता है।

हम किसीके काजी नही बन सकते। अन्तत. तो प्रत्येक मामलेपर उसके गुणदोषको देखते हुए विचार करना चाहिए। अतएव स्वतन्त्र रूपसे किसी काल्पनिक समस्याको सुलझानेमे खतरा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३६०४) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२७९. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

२० नवम्बर, १९३३

चि० विद्या,

तु क्यों नहि लिखती है? आनंदको कितनी सजा मिली? तुमारी शिक्षा अच्छी होती है? तुमारा पकानेका काम अच्छा चलता है। हारना नहिं। अपना पकाया हुआ खानेमे पुण्य है ऐसा समजो। सीनेका संचा मिला? वर्ग चलता है?

महादेव कैसे है?

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

कांतासे कहो लिखे। दूसरी लडकीयोसे भी कहो।

पत्रकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

२८०. पत्र : धीरू सी० जोशीको

२१ नवम्बर, १९३३

चि० धीरू,

अब रमा पर तेरा गुस्सा उतर गया न?[1] अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना। मुझे पत्र लिखा करना। तू रमाको लिखे चाहे मुझे अथवा किसी और को, लेकिन तेरी लिखावट अच्छी होनी ही चाहिए। बलभद्रसे कहना कि वह पत्र दे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३१६) से।

१. देखिए "पत्र : धीरू सी० जोशीको", ७-११-१९३३।

२८१. भाषण: मोरसीकी सार्वजनिक सभामें

२१ नवम्बर, १९३३

ये मतभेद[1] वस्तुत. अस्पृश्यताके अभिशापका ही एक अंग हैं, क्योकि इनकी पैंदाइश ऊँच और नीचकी भावनासे ही होती है। वर्णोंका चौहरा विभाजन कर्त्तव्यो पर आधारित है, अधिकारोपर नही। धर्म कर्तव्योका निर्धारण करता है, अधिकार नही प्रदान करता। जिस समाजमें लोग अपने-अपने हिस्सेमें पड़े कर्त्तव्यका पालन करते है, वहाँ कोई ऊँचा या नीचा नही है। एक बार अपने अन्दरसे अस्पृश्यता और उसके साथ ही ऊँच-नीचकी भावनाको निकाल फेंकनेके बाद हम देखेंगे कि सभी जातियो और धर्मोंमे एक आधारभूत एकता मौजूद है। जातियो और धर्मोंकी भिन्नताके बावजूद हम एक-दूसरेके प्रति सहिष्णुता बरतना और एक-दूसरेका आदर करना सीख जायेंगे और सभी मनुष्योको एक ही ईश्वरकी सन्तान और इसीलिए एक-दूसरेके भाई-बहन मानेंगे। ईश्वर ही सारे जीवोका रचयिता है; इसलिए ईश्वरकी दृष्टिमे सभी जीव समान हैं। मानवजाति एक विराट वृक्षके समान है जिसमें बहुत-सी शाखाएँ और पत्तियाँ हैं, और इन सभीमे एक ही जीवन-प्राण स्पन्दित होता है। अस्पृश्यता-निवारणमें इस बातकी प्रतीति निहित है कि विविधतामें भी एकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-१२-१९३३

२८२. पत्र: द० बा० कालेलकरको

ट्रेनमे
२२ नवम्बर, १९३३

चि० काका,

मैंने तुम्हारा उत्तर किशोरलालकी मार्फत भेजा था, आशा है वह तो मिल ही गया होगा। तुमने पहाडीपर चढनेका प्रयत्न किया, वह उचित न था। अभी ताकत तुरन्त नही आयेगी। अब ध्यानसे खाना, पीना और घूमना।

. . .[2] के लड़केको जवाब नही दे सका। पत्रोका अम्बार बढता जा रहा है। दौरेका कार्यक्रम कुछ ऐसा बना है कि मौन-दिवसको और रोज सवेरे ३-४ बजेके बीच जो समय मिलता है वही समय चिट्ठी-पत्री लिखनेको मिल पाता है। . . .[3] के

१. मतभेदोंसे गांधीजीका तात्पर्य स्थानीय ब्राह्मणों और गैर-ब्राह्मणोंके बीच मौजूद कटुतासे था।
२ और ३. नाम नहीं दिये गये है।

लड़केकी अभी कुछ मदद की जा सकती है, ऐसा मैं नही देखता। किससे पैसा लिया जाये? . . .[1] की भी समस्या अभी वैसी की वैसी है। उसे अभी तो अपने बलबूते पर ही काम करना होगा। भविष्यमे यदि किसी दिन मुझे शान्तिसे बैठनेका समय मिलेगा तो मैं सम्भवत: ऐसे लोगोंके लिए कुछ कर सकूँगा। लेकिन ऐसा आराम भला मुझे जीते-जी थोड़े ही मिलनेवाला है? उसे अलगसे पत्र अवश्य लिखना चाहिए, यदि तुम्हें ऐसा लगे तो जरूर लिखना। मेरे दाँतकी जाँच तो जब हो जाये तभी ठीक। कुहनीके दर्दमें दाँतोंका कारण हो सकता है, ऐसा मैंने सुना है। लेकिन ऐसी सम्भावना कम ही है, क्योंकि मुझे अन्य कोई शिकायत नही है। रक्तचाप तो अब है ही कहाँ? वजन बढ़ता जाता है। १०९ पौंड तक तो आ ही गया है।

सोमण[2] का पत्र मुझे भी आया है।

. . .[3]

चन्द्रशंकरके कार्यसे मुझे पूरा सन्तोष है। स्वास्थ्यको सँभालकर रखनेकी कला उसने अच्छी तरह सीख ली जान पड़ती है। वह महादेवका अनुकरण ठीक ढगसे कर रहा है। अंग्रेजी इतनी अच्छी लिख सकता है, इसकी मुझे खबर न थी। उसने मेरे कामके बोझको काफी कम कर दिया है। वह काममे व्यस्त रहता है।

आशा है, दौरे सम्बन्धी विवरणके लिए तुम 'हरिजन' पढ़ते ही होगे।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४८०) से; सौजन्य: द० वा० कालेलकर

२८३. पत्र: जीवनजी डा० देसाईको

ट्रेनमें

२२ नवम्बर, १९३३

भाई जीवनजी,

प्रस्तावना मेरे ध्यानसे बाहर नही है। रतिलालके बारेमे आपने जो कहा है सो मैं समझा हूँ। उसे कुछ कहा जाये ऐसी स्थिति नही है। जैसा नसीबमे होगा वैसा होगा। बाबूराव कुछ कहे तो वह लिखना। पहलीवाली पावर ऑफ एटर्नी यदि रद नही हो सकती तो यह वाली कदाचित् व्यर्थ होगी।

एस० की खबर देते रहना। उसे किसी दिन मिलना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९३२) से। सी० डब्ल्यू० ९६०७ से भी; सौजन्य: जीवनजी डाह्याभाई देसाई

१. नाम नहीं दिया गया है।

२. रामचन्द्र सोमण।

३. यहाँ कुछ पंक्तियाँ छोड़ दी गई है।

२८४. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

ट्रेनमें
२२ नवम्बर, १९३३

सुज्ञ भाईश्री,

आपका स्नेहपूर्ण पत्र मिला। श्लोक पढ़ा। प्रभु अच्छे-बुरे सब लोगोंकी पीठ पर है, यह जानता हूँ इसलिए स्वस्थ हूँ। यदि वह केवल अच्छे लोगोंकी पीठपर ही होता तो मैं अवश्य अस्वस्थ महसूस करता। अच्छा तो केवल स्वयं वही एक है। यदि मैं आपको अपने इस दौरेमें साथ चलनेके लिए राजी कर सकूँ तो आपका शरीर अपने-आप स्वस्थ हो जाये, लेकिन यह तो असम्भव है। उम्मीद है आप 'हरिजन' को एक नजर देख जाते होंगे।

रमाबहन[1] मुझे क्यों नहीं याद करतीं?

मोहनदास

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९३१) से। सी० डब्ल्यू० ३२४७ से भी; सौजन्य : महेश पी० पट्टणी

२८५. सन्देश : बरारकी जनताके नाम[2]

२२ नवम्बर, १९३३

महात्माजीने अपने सन्देशमें कहा है कि हरिजनोंकी सेवाके लिए मैंने जो आह्वान किया था, उसका बरारकी जनताने असीम अनुकूल उत्तर दिया है। प्रबन्ध बहुत सफल रहा, और यात्रामें सभी सुविधाओंका ध्यान रखा गया था और वह बड़ी सुखद रही।

पूरी यात्राके दौरान होनेवाली सार्वजनिक सभाओंमें लोगोकी जैसी भीड़ देखनेमें आई, वैसी पहले कभी नहीं देखी गई थी, और इससे मुझे यह आशा होती है कि अस्पृश्यता बहुत तेजीसे समाप्त हो रही है।

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, २६-११-१९३३

१. सर प्रभाशंकर पट्टणीकी पत्नी।
२. यह सन्देश टाइम्स ऑफ इंडिया के प्रतिनिधिसे भेंट करते हुए दिया गया था।

२८६. पत्र : महादेव देसाईको

असंशोधित

रायपुर
२३ नवम्बर, १९३३

प्रिय महादेव,

प्रातः ३ बजे उठनेपर मैंने मीराके नाम तुम्हारा पत्र उस तिपाईपर पड़ा पाया जिसे हम अपने साथ-साथ रखते हैं ताकि पैर फैलानेकी जरूरत होनेपर मैं उसका पायदानकी तरह इस्तेमाल कर सकूं। उसे पूरा पढनेमे मुझे करीब ४० मिनट लगे, और तिसपर भी निर्दिष्ट छन्दोंके अनुवादके बारेमे तुम्हारी टिप्पणी पढना अभी शेष है।[1] मूल पाठका जो अनुवाद मैंने किया है उसे पढनेमे और मुझे क्या कहना चाहिए यह सोचनेमे मुझे कमसे-कम बारह घंटे लगेंगे। और फिर उसको लिखकर प्रकट करनेमें तीन घंटे और लगेंगे। इतना समय मैं इस समय नही दे सकता। फिर यह सवाल है कि क्या मैं तुम्हारी मदद कर सकूंगा? मुझे भय है कि नही कर सकूंगा। क्योकि तुम जो कहते हो वह बिलकुल ठीक है। मित्रोको दिखानेके लिए मैं अनुवाद करूँ, इस हदतक तो स्वामीकी माँग ठीक थी, लेकिन उसको प्रकाशित करानेकी उसकी माँग मुझे स्वीकार नही करनी चाहिए थी। अनुवाद करते समय भी मैंने इस कार्यके लिए अपनी अयोग्यताका अनुभव तो किया, लेकिन फिर भी उसे मैंने जारी रखा। तुमने जो त्रुटियाँ देखी हैं वे उसमें हैं। जो मेरे पास है ही नही वह चीज — यानी पांडित्य — मैं कैसे दे सकता हूँ? संस्कृतके अच्छे ज्ञानका अभाव एक बहुत बड़ी कमजोरी थी। इसका उपाय स्पष्ट है। तुम अपना अनुवाद जारी रखो और उसमें मेरे विचारोको व्यक्त करनेमे जिस हदतक मेरे अनुवादसे मदद मिले, उसकी मदद लो, लेकिन बिलकुल मेरे अनुवादकी ही नकल मत करो। जो तुम्हे स्वीकार्य हो, तुम वैसा ही अर्थ देते हुए अनुवाद करो। जहाँ टिप्पणियाँ व्यर्थ हैं, वहाँ उनको छोड़ दो। जहाँ टिप्पणी देना जरूरी हो वहाँ अपनी टिप्पणी दे दो। इतना कर चुकनेके बाद तुम गुजराती अनुवाद ले लो और उसमे जहाँ गलती है वहाँ सुधार दो, जहाँ भाषाको माँजनेकी जरूरत हो वहाँ माँज दो। जहाँ फिरसे लिखनेकी जरूरत हो लिख दो और जहाँ कुछ जोड़ना हो वहाँ जोड दो। इसके साथ तुम्हारा काम पूरा हो जायेगा। तब फिर जब यह सारा परिणाम मेरे हाथमे आयेगा उस समय मैं उसपर काम करूँगा और अपने अर्थको स्पष्ट करनेके खयालसे जहाँ जो परिवर्तन करने होंगे, कर दूँगा। यह काम मैं आसानीसे कर सकता हूँ।

१. महादेव देसाई अनासक्तियोगका अंग्रेजीमें अनुवाद कर रहे थे। देखीए पृष्ठ १०५ की पाद टिप्पणी २।

उसके बाद हम गुजरातीका सशोधित सस्करण निकाल सकते है और तुम्हारा किया हुआ अग्रेजी अनुवाद प्रकाशित कर सकते है।[1] ऐसा करते हुए तुम्हे अपनी टिप्पणियोके बारेमे मेरा विस्तृत उत्तर पानेकी प्रतीक्षा करनेकी जरूरत नही है। मै तुम्हारी टिप्पणियोको मित्रोको दिखाऊँगा, और उनकी राय प्राप्त करके वह सब तुम्हे भेज दूँगा।

तुम्हारे अन्य सब सन्देशोका ध्यान रखा जायेगा।

मुझे खुशी है कि तुम्हे तरह-तरहकी परीक्षाओमे से गुजरना पड़ रहा है। सिर्फ इतना ही करना कि केवल साहित्यिक काममे ही अपने-आपको न खपा देना। तुम्हे खूब व्यायाम करना चाहिए और शरीरको चुस्त रखना चाहिए। किसी भी हालतमें तुम्हे अपनी आँखोको नुकसान नही पहुँचने देना चाहिए।

आज इससे ज्यादा नही।

हम सबोकी ओरसे प्यार।

बापू

अग्रेजीकी नकल (एस० एन० २६९०६) से।

२८७. पत्र : प्रभावतीको

रायपुर
२३ नवम्बर, १९३३

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र मिला है। तूने दो पत्र दिये है। पिछले पत्रमे तूने सीवानका पता दिया था और अब सीतावदियाराका दिया है। मै तो यह पत्र सीताबदियारा को लिख रहा हूँ।

जयप्रकाशके बारेमे मै लिख चुका हूँ। मैने वह पत्र सीवानके पतेपर भेजा था। जिनके सिरपर कर्ज है, जिन्हे अपने भाई-बहनका खर्च उठाना है वर्तमान सघर्ष उनके लिए नही है। इस संघर्षमे तो सब-कुछ होम देनेकी बात है। गरीबोके भाई-बहन किस तरह पढते है? हमे तो ऐसा रास्ता खोज निकालना चाहिए कि जिससे हमारे भाई-बहन गरीबीमे पढ सके और अपना झटपट निर्वाह करनेके योग्य बन जायें। रही बात पिताजीकी, सो पिताजीको ५० रुपये मिलते है वह पर्याप्त होने चाहिए। उनकी सम्पत्ति परसे तुम दोनोको अपना अधिकार छोड देना चाहिए। इस तरह यदि जय प्रकाश इस फकीरीको अपनानेके लिए तैयार हो तभी वह इस लड़ाईमें शामिल हो सकता है। सिपाहीका यही धर्म है। दूसरा धर्म कुटुम्बके प्रति है। यदि कोई उस

१. अंग्रेजी अनुवाद द गॉस्पेल ऑफ सेल्फलेस ऐक्शन या द गीता एकॉर्डिंग टु गांधी शीर्षकसे १९४६ में प्रकाशित हुआ था; देखिए खण्ड ४१।

धर्मका पालन करना चाहे तो वह भी उचित है। यह धर्म जब स्वतन्त्र रूप धारण करता है तब वह समाजके हितका विरोधी होता है। हममें आज ऐसा ही चलता है। सत्याग्रहका आशय इसी धर्मको टालना है। लेकिन जो इसे नही समझता और इसका पालन करनेका प्रयत्न करता है वह दोनोंसे हाथ धो बैठता है, क्योंकि उसे सन्तोष नही रहता। यह सारी बात यदि तेरी समझमें न आई हो तो मुझसे फिर पूछना। तुझे समझनेमें दिक्कत नही होनी चाहिए।

मैंने अपने दौरेका कार्यक्रम तुझे पहले ही भेज दिया है। इसलिए यहाँसे फिर नही भेजता। मेरे साथ बातचीत करनेके लिए विशेष रूपसे यहाँ आनेकी अब कोई जरूरत नही रह गई है। लेकिन मैं मंगलवार को जबलपुरमें होऊँगा; बादमे दिल्ली।

मेरा वजन १०९ पौंड है और ब्लड-प्रेशर १५५-१०० है। खुराक पहले जैसी ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४३५) से।

२८८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

रायपुर
२३ नवम्बर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

तुमने तो पत्र लिखना सचमुच ही बन्द कर दिया लगता है। जमनालालजीका त्यागपत्र उनकी मानसिक शान्तिके विचारसे भी अनिवार्य था। दूसरोंके लिए भी उचित ही था। इससे वातावरण बहुत साफ हो गया है। जमनालालजी परसे बोझ उतर गया है और उन्हें नया बल मिला है। ज्यादा तो नही लिखूंगा। लेकिन इस कदमके औचित्यके बारेमें मनमें शंका न लाना।

मैंने सुना है कि तुम्हारी तबीयत कुछ गड़बड़ है। यदि ऐसी कोई बात हो तो मुझे बताना। वजन बता सको तो बताना। नाक तो परेशान नही कर रही है न? मुझसे कुछ छुपानेकी जरूरत तो नही है।

महादेवकी अच्छी कसौटी हो रही है। मुझे यह अच्छा लगता है। अब गुजराती पत्रोंमें दिक्कत होती है। इस सम्बन्धमें मैं कर्नल[1] को लिखनेका इरादा रखता हूँ। यद्यपि इतना भी मुझे पसन्द तो नही है।

देवदासका पत्र इन दिनों नही आया है। खुर्शीदकी तबीयतमे सुधार हो रहा है। उसने खासी बीमारी पाई। डाक जाने ही वाली है इससे ज्यादा नहीं लिखता।

१. ई० ई० डॉयल, इन्स्पेक्टर-जनरल ऑफ प्रिजन्स, बम्बई।

मेरी गाड़ी ठीक चल रही है। लोगोकी भीड़ पहले जैसी ही है, कदाचित् अधिक ही है और वे उतने ही प्रेमोन्मत्त भी हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ४८

२८९. भाषण: रायपुरकी सार्वजनिक सभामें[1]

२३ नवम्बर, १९३३

मैं यह बात बार-बार कह चुका हूँ कि यह काम केवल वे ही लोग कर सकते हैं जो वाकई अस्पृश्यताको हिन्दू-धर्मके नामपर धब्बा समझते हैं। यह वह आन्दोलन है जिसमें करोडो लोगोसे हृदय-परिवर्तन करनेकी अपेक्षा की जाती है। इसे किसी राजनीतिक चाल द्वारा सफल नही बनाया जा सकता। यह तो केवल आत्म-शुद्धि द्वारा ही किया जा सकता है। यह एक महान यज्ञकी अग्नि है जिसमे हमे अपने पापोके ढेरकी आहुति देनी है और उसमे से शुद्ध होकर निकलना है। जो लोग इस कामको श्रद्धाके साथ और सच्चे मनसे नही करेंगे वे करोडो लोगोके हृदयोको द्रवित करनेमे सफल नही होंगे। यदि हमने अपने-आपको या हरिजनोको धोखा दिया तो हम कहीके नही रहेंगे। इस आन्दोलनकी सफलता या असफलता हमें सही ढंगके कार्यकर्त्ताओके मिलनेपर निर्भर करती है। आज हमारी परीक्षा हो रही है। ईश्वरने हमें जो मौका दिया है यदि आज हम उससे चूक गये तो इस पीढीमें ऐसा मौका दोबारा मिलनेकी हम आशा नही कर सकते। आज हम जो काम स्वेच्छया करनेसे इनकार कर रहे हैं वह काम हमे भविष्यमें डंडेके भयसे करना पडेगा और फिर हमें इस मौकेको खो देनेका पछतावा होगा। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि हम इस परीक्षामे सफल उतरे और हिन्दू-धर्म तथा अपने-आपको विनाशसे बचाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-१२-१९३३

1. चन्द्रशंकर शुक्लकी रिपोर्टके अनुसार यह भाषण हरिजनकार्यकर्त्ताओंके सामने दिया गया था। तथापि २९-११-१९३३ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**, तथा ३-१२-१९३३ के **हितवाद** के अनुसार यह भाषण स्थानीय नगरपालिका, स्थानीय बोर्ड तथा अन्य संस्थाओं द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दनपत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

२९०. भाषण : अखिल भारतीय स्वदेशी प्रदर्शनी, रायपुरमें

२३ नवम्बर, १९३३

एक ऐसे देशमें जहाँकी ९५ प्रतिशत जनता कृषिके सहारे जीती है, यदि कृषि सम्बन्धी सारे कार्य यन्त्रोंके जरिये किये जायें तो भी एक सहायक कुटीर उद्योगकी आवश्यकता रहेगी। अनादि कालसे भारतीय किसानोंको चरखेके रूपमें वह सहायक धन्धा प्राप्त रहा था। आज सहायक धन्धेके रूपमें कई छोटे उद्योगोंका सुझाव दिया जाता है, लेकिन इनमें से कोई भी उद्योग उतने व्यापक पैमानेपर नहीं अपनाया जा सकता जितना कि खादी-उत्पादनका उद्योग। मैंने इस प्रदर्शनीका उद्घाटन करना इस कारण स्वीकार किया, क्योंकि मैं जानता हूँ कि हजारों हरिजन खादीके सहारे जीविकोपार्जन कर रहे हैं — खादी, जिसने उन्हें अभावग्रस्त होनेसे बचाया है। हम अन्य बहुत-से घरेलू धन्धोंको फिरसे जीवित कर सकते हैं, बल्कि नये-नये घरेलू धन्धे भी शुरू कर सकते हैं, लेकिन खादी, जो कि स्वदेशीका मूलाधार है, उसको हम नहीं छोड़ सकते।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-१२-१९३३

२९१. भाषणोंके अंश[1]

[२४ नवम्बर, १९३३ से पूर्व][2]

अन्याय तो संसार-भरमें किया जा रहा है, लेकिन हमने उसे धर्मका समर्थन प्रदान कर दिया है। ये भेद ईश्वरने नहीं पैदा किये हैं। हरिजन लोग यदि समाजके सबसे निचले पायेपर हैं तो अपने किन्हीं अन्तर्निहित दोषोंके कारण नहीं बल्कि इसलिए हैं कि तथाकथित ऊँची जातियोंने उन्हें दबाकर रखा है। ईश्वरने उन्हें भी वे सभी प्रतिभाएँ प्रदान की हैं जो उसने हमें दी हैं, लेकिन हम उनको इन प्रतिभाओंका प्रयोग करने ही नहीं देते। निश्चय ही वे सभी अधिकार और सुविधाएँ तथा विकासके वे सभी अवसर उन्हें भी मिलने चाहिए जो हमें प्राप्त हैं।

हमने उनके प्रति जो अन्याय किया है, उसका अहसास अब हमको है और प्रायश्चित्त-स्वरूप अब हम कमसे-कम जो चीज कर सकते हैं वह यह है कि उनके

१ और २. इसे चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" में से लिया गया है जिसपर दिनांक-रेखा "रायपुर, २४-११-१९३३" पड़ी हुई है। गांधीजीने जिन-जिन स्थानोंपर भाषण दिये थे इसमें उनका उल्लेख नहीं किया गया है।

उत्थानके लिए धनका दान दें और अपने लिए हमने जो सुविधाएँ पैदा की है उसका लाभ उन्हे भी प्रदान करें। हम सब उसी परमात्माकी सन्तान है और उसकी आँखमे समान है।

आप इस अनुष्ठानके लिए जितना धन देगे, उसका सौ-गुना लाभ आपको मिलेगा, क्योकि यह तो अच्छी उर्वर भूमिमे अनाज बोनेके समान है। इसके विपरीत, विलासिता और लालसापर खर्च किया जानेवाला धन बजर भूमिमे बोये गये अनाजके समान है।[1]

मुझे बताया गया है कि आपको भारी हानि सहनी पड़ी है। लेकिन आपको जानना चाहिए कि कोई भी राष्ट्र जबर्दस्त कष्टोको झेले बिना और अग्नि-परीक्षासे गुजरे बिना अपनी पूरी महत्ताको नही प्राप्त कर पाया है। स्वेच्छया कष्ट-सहनसे हमारी शक्ति बढ़ती ही है। इसलिए कष्ट-सहन करनेके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। लेकिन मैं आपको यह भी याद दिलाना चाहूँगा कि हमारे कष्टोको बढानेवाले कारणो मे से एक कारण यह अस्पृश्यताका अभिशाप है। हमनें कमजोरोको सताया है। हमने जैसा बोया है वैसा काट रहे है। अब यह हमारे ऊपर है कि हरिजनोके प्रति जो अन्याय हमने किये है उन्हे दूर करे और उनके कन्धोपर से गुलामीका जुआ हटा दे।[2]

सवर्ण हिन्दुओको चाहिए कि आपके प्रति किये गये अपने अन्यायोके लिए वे आपसे क्षमा मांगे। लेकिन स्वेच्छासे अपनेको हरिजन माननेवाला मैं आपसे यह भी कहूँगा कि आपको अपनी बुरी आदते, विशेष रूपसे मुर्दा पशुओ और गायोका मांस खानेकी आदत का त्याग करना चाहिए। सारी दुनिया मुर्दा पशुको घृणाकी दृष्टिसे देखती है। और गोमास-भक्षणका त्याग इसलिए करना चाहिए क्योंकि किसी हिन्दूके लिए गोमास-भक्षण न करना एक अनिवार्य शर्त है। गाय समृद्धि प्रदान करनेवाला प्राणी है, और उसकी हत्या करके हम स्वयं अपना ही घात करते है। फिर मैं आपसे कहूँगा कि आप जूठन भी स्वीकार न करे। इन सबसे ऊपर, आपके बीच ऊँच-नीचका जो भेद-भाव घुस गया है, उसे आप खत्म कीजिए। और ऐसा आप किसी प्रत्याशासे नही, बल्कि इसलिए कीजिए क्योकि ये स्वयंमे अच्छी चीजे है। इसलिए मैं आपसे कहूँगा कि आप मद्यपान छोड दे, इसका खयाल किये बिना कि बहुतसे अन्य हिन्दू मद्यपान करते है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-१२-१९३३

१. इसके बादका अंश एक गाँवमें दिये गये भाषणसे लिया गया है।
२. इसके बादका अश हरिजनोंको सम्बोधित करके कहा गया था।

२९२. सविनय अवज्ञा और हरिजन-सेवा

एक मित्र लिखते हैं:[1]

> मैं देखता हूँ कि हरिजन-सेवक संस्थाओंमें कुछ ऐसे व्यक्ति हैं, जो केवल हरिजनोंकी सेवा करनेकी भावनासे काम नहीं कर रहे हैं, जैसा कि आप चाहते हैं। वे तो अन्य आकांक्षाओंकी पूर्तिके लिए हरिजन-सेवाकी आड़ ले रहे हैं। . . . मैं जानता हूँ कि सत्याग्रहको आप हरिजन-सेवक संस्थाओंसे अलग ही रखना चाहते हैं। यदि इस पत्रका कोई आम उपयोग करनेका आपका विचार हो, तो इस अन्तिम बातपर आप कुछ अधिक जोर दें और अबतक आपने उसे जितना स्पष्ट किया है, उससे भी अधिक खुलासा कर दें।

मुझे अपने अनुभवकी बात बतानेके लिए मैं इन मित्रका आभारी हूँ। हरिजन-सेवक संघ जैसे विशाल संगठनको, जिसकी शाखाएँ सारे भारतवर्षमें फैली हुई हैं, स्वार्थियों और समय-सेवी पुरुषोंसे बिल्कुल मुक्त रखना बड़ा कठिन कार्य है। मैंने इस विषय पर सेठ घनश्यामदास तथा ठक्कर बापासे अच्छी तरह परामर्श किया है। मुझे मालूम है कि ये दोनों सज्जन संघको यथासम्भव अधिकसे-अधिक शुद्ध रखना चाहते हैं। व्यक्तिशः इससे अधिक मैं और कुछ नहीं कर सकता। अपनी बिल्कुल लाचारी देखकर ही तो मैंने २१ दिनका अनशन किया था। हरिजन-सेवकोंकी कमजोरियोंका पता पाकर मैंने महसूस किया कि उनके बारेमें केवल लिखनेसे ही काम नहीं चलेगा। मैं इस कठिनाईमें से निकलनेका मार्ग ढूंढ़ रहा था। पाठक विश्वास करें कि उपवास तो उस समय मेरे विचारोंसे कोसों दूर था, मगर जैसा मैं इन पृष्ठोंमें बता चुका हूँ, वह अकस्मात् मेरे मनमें आया और उससे मुझे बड़ी शान्ति मिली। मैं जानता हूँ कि उससे बड़ा लाभ हुआ। परन्तु अकेले एक मनुष्यके उपवासका प्रभाव कितना हो सकता था? अतएव ऐसे प्रायश्चित्तरूप उपवासकी शृंखलाका विचार मेरे मनमें उठा। यह विचार हरगिज छोड़ नहीं दिया गया है। वह तो बार-बार मेरे मनमें आता है। पर उसका यन्त्रकी तरह संचालन नहीं किया जा सकता। कई साथी इस उपवासकी शृंखलाका श्रीगणेश करनेको अथवा प्रारम्भ होनेके पश्चात् उसमें भाग लेनेको तैयार हैं, पर उसे ठीक तौरसे आरम्भ करनेका मार्ग मुझे अभी सूझ नहीं पड़ा है। शृंखला शुरू करनेके पहले यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसका ठीक मार्ग मुझे और मेरे साथी कार्यकर्ताओंको दिखाई दे। तबतक मैं अपने इस अटल विश्वासको केवल प्रकट कर सकता हूँ कि अस्पृश्यताका मूलोच्छेद ऐसे नर-नारियोंकी सेवा द्वारा ही हो सकता है जो केवल सेवाकी ही दृष्टिसे और शुद्ध धार्मिक मनोवृत्तिसे

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

प्रेरित होकर इस कार्यको उठायेंगे। जबतक भारतवर्षके कोने-कोनेमे इस प्रकारके सेवक काफी संख्यामें मौजूद न हो, हम लोग करोड़ों मनुष्योका हृदय-परिवर्तन करनेमे भी कभी सफल नही हो सकते। सवर्ण हिन्दू एक छोरपर है, और हरिजन दूसरेपर है, और कई युगोसे प्रचलित प्रथा, जिसने धार्मिक सिद्धान्तकी-सी गरिमा अख्तियार कर रखी है, बिना प्रायश्चित्त और शुद्धीकरणके कभी भी जड़मूलसे नही मिटाई जा सकती। एक ओर यह देखकर हृदयको बड़ी प्रसन्नता होती है कि गाँवो और कस्बोमे जो सभाएँ हो रही है उनमे लोगबाग हजारोकी संख्यामे इकट्ठे होते है और बड़े हर्षसे अपनी कमाईके पैसे इस आन्दोलनके प्रति अपनी सहानुभूतिके चिह्नस्वरूप भेट करते है; पर दूसरी ओर मुझे यह जानकर दु ख होता है कि यदि इन हजारो नर-नारियोके सामने अचानक यह प्रश्न आ जाये कि जिस बातको ये लोग सभाओमे अपनी उपस्थितिके द्वारा स्वीकृति देते मालूम होते है, उसे स्वयं अपनी जीवन-व्यवस्थामे व्यवहारमे लाये तो सर्वथा कोरा ही जवाब मिलेगा। यह इसलिए नही कि वे ऐसा चाहते नही है, बल्कि सिर्फ इसलिए कि ऐसा करनेकी उनमे शक्ति नही है। मैंने अनेक बार यही बात अपने अनेक अत्यन्त घनिष्ठ साथियोमे पाई है, जो बात वे उचित समझते है और यह भी जानते है कि उसे तुरन्त करनेकी जरूरत है, उसे एकदम आचरणमे लानेके विषयमे उन्होने नि सकोच होकर अपनी अयोग्यता स्वीकार की है। उन्हे अपने कुसस्कार-पोषित और रूढि-जन्य आन्तरिक घृणाके विरुद्ध साहसके साथ युद्ध करना पडा। इस भयकर राक्षसीका सहार करनेके लिए इस बातको केवल बौद्धिक स्तर पर स्वीकार करना काफी नही है कि अस्पृश्यता एक घृणित वस्तु है, जो हिन्दू-धर्मका सत्यानाश कर रही है और उसमे विश्वास रखना परमात्मा, उसकी दयालुता तथा उसके पितृत्वके प्रति अपनी अश्रद्धा प्रकट करनेके समान है। सवर्णो और हरिजनोका हृदय-परिवर्तन करनेके लिए जो लोग अपेक्षाकृत पवित्र है उन्हे दूसरोके लिए प्रायश्चित्त करनेकी आवश्यकता है।

जो आन्दोलन इतना ऊँचा और इतना पवित्र, इतना धार्मिक और इतना मानव-हितकारी है, उसका किसीको अपनी निजी स्वार्थ-सिद्धिके अर्थ अनुचित लाभ नही उठाना चाहिए। राजनीतिक लाभोको प्राप्त करनेके लिए तो ऐसा कदापि नही करना चाहिए। यह आन्दोलन ज्यो-ज्यो प्रगति करेगा, त्यो-त्यो यह देखा जा सकेगा कि आन्दोलनमे राजनीतिक दृष्टिकोणका प्रवेश करानेका एकमात्र परिणाम यह होगा कि फूट और कलह और तीव्र होगे। ऐसा करनेसे आजकल जो उलझन पड़ रही है, वह और भी विकट रूप धारण करेगी और आज जितने दलोमे झगडा चल रहा है, उसमे और भी कई दल शामिल हो जायेंगे। भगवान हमे और हमारे इस सेवा-आन्दोलनको ऐसी विपत्तिसे बचाये!

सत्याग्रहका हरिजन-आन्दोलनसे कहाँतक सम्बन्ध है, इस विषयमे मै हमेशाकी भाँति जोर देकर कहता हूँ कि वे काग्रेसवादी, जो सत्याग्रहमे सक्रिय भाग लेना चाहे, इन हरिजन-सस्थाओमे न तो कोई पद ग्रहण करें और न इन संस्थाओको सत्याग्रह चलानेके कार्यमे साधन ही बनाये। सत्याग्रह एक अद्वितीय शस्त्र है। उसमे

किसी किस्मकी मिलावट की गुंजाइश नही। यह तो निर्भय शूरवीरोंका शस्त्र है, इसलिए इसे किसीकी ओट लेनेकी आवश्यकता नही। इसका प्रयोग तो खुले तौरपर दिन दहाड़े ही होना चाहिए। इसलिए यद्यपि उन काग्रेसवादियोका, जो सत्याग्रहमें प्रमुख भाग लेते हो, यह कर्तव्य है कि हरिजन-सेवा-कार्यमें जो-कुछ सहायता वे दे सकते हों दे, तथापि उनका सम्बन्ध हरिजन-सेवक संघ अथवा उसकी किसी शाखासे नही होना चाहिए। इन संस्थाओंमें पद-ग्रहण करनेसे उनके द्वारा सत्याग्रह तथा हरिजन-सेवा-कार्य दोनोंको ही हानि पहुँचेगी। यह ठीक इसी प्रकार होगा, जैसे कोई व्यक्ति मन्दिरमे जाये तो पूजा-प्रार्थनाके लिए और अपनी देव-आराधनाको सत्याग्रहका साधन वना ले। मगर न तो ईश्वरको ही और न मनुष्यको ही इस तरह धोखा दिया जा सकता है। जैसा कि मैंने अकसर इन पृष्ठोमे कहा है, यदि केवल काग्रेसवादियोपर ही निर्भर किया गया तो हिन्दू-धर्मका महान सुधार कभी नही हो सकता। मैं जानता हूँ कि स्थिति वास्तवमे ऐसी नही है। यह भी बात नही कि प्रत्येक हिन्दू ही काग्रेसवादी हो, जैसे कि प्रत्येक हरिजन भी काग्रेसवादी नही है। इसलिए इस हरिजन-संगठनके लिए लाजिमी है कि वह राजनीति तथा दलवन्दियोसे विलकुल स्वतन्त्र हो और उसमे काग्रेसवादियो और गैर-काग्रेसी लोगोका भी समावेश हो। उसके पदाधिकारी सिर्फ वही लोग हों जो सत्याग्रहमे सक्रिय भाग न ले रहे हो, और जो गुप्त अथवा प्रकट रूपसे सत्याग्रहको आगे वढानेके लिए अपने पदका अनुचित लाभ न उठा रहे हों।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-११-१९३३

२९३. हरिजन-कार्यकर्त्ताओंका कर्त्तव्य

एक सज्जनने मेरे पास उत्तरके लिए नीचे लिखे प्रश्न भेजे हैं:

(१) अस्पृश्यताके विरुद्ध प्रचार करनेमें क्या कार्यकर्त्ताओंको यह सिद्ध करनेके लिए कि आज हमारे बीच जिस प्रकारकी अस्पृश्यता प्रचलित है, उसका हिन्दू-धर्म कहीं समर्थन नहीं करता, शास्त्रों और धार्मिक ग्रन्थोंका उपयोग करना चाहिए?

(२) क्या एक हरिजन-सेवकको खानगी तौरपर सहभोजोंमें भाग लेना चाहिए?

(३) क्या एक हरिजनको, जो किसी कुटुम्बमें नौकरके रूपमें काम करता है, उस कुटुम्बके अन्य प्राणियोंके साथ बैठकर भोजन करना चाहिए?

पत्र-लेखकका कहना है कि इन तीनो प्रश्नोपर एक समाचार-पत्रमे गम्भीरता-पूर्वक चर्चा की गई है और पाठकोको यह सलाह दी गई है कि हरिजन-कार्यकर्त्ताओंको

अस्पृश्यता-निवारणके प्रचारमे न तो शास्त्रीय तथा धार्मिक प्रमाणोका उपयोग करना चाहिए और न सहभोज आदिके सम्बन्धमे अपने व्यक्तिगत विचारोको, हरिजन-आन्दोलनके व्यापक हितमे, अपने खानगी मामलोमे ही लागू करना चाहिए। मेरे लिए अस्पृश्यता-निवारणका कार्य सिद्धान्तत. एक धार्मिक कार्य है। यदि मै विश्वास कर लूं कि लोक-प्रचलित अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मका एक अभिन्न अग है, तो मै हिन्दू-धर्ममे नही रहूँगा। इसमे कोई सन्देह नही कि अस्पृश्यता हमारे पास प्राचीन प्रथाओके ही रूपमे आई है, लेकिन ऐसी तो बहुत-सी बुरी प्रथाएँ चली आ रही है, जिनमें अस्पृश्यता सबसे निकृष्ट है। इसलिए यह दिखलाना आवश्यक हो जाता है कि हिन्दू-धर्ममे इसका कोई स्थान नही है।

यद्यपि हरिजन-सेवक सघने बडी बुद्धिमानीके साथ अपने कार्य-क्षेत्रको सीमित कर दिया है, तब भी सहभोज आदिके सम्बन्धमे उसने व्यक्तिगत विचारो या कार्योंको नियन्त्रित करने या रोकनेकी बात नही की है। अस्पृश्यता-निवारणके लिए हरिजनोके साथ भोजन करनेकी कोई आवश्यकता नही है। सहभोज कोई सार्वदेशिक बन्धन नही है। हरिजन-कार्यकर्त्ताको यह पूर्ण स्वतन्त्रता रहनी चाहिए कि वह चाहे जिसके साथ भोजन करे और इस कारण, किसी हरिजनके साथ भोजन करनेसे, वह कोई कम प्रभावशाली कार्यकर्त्ता न समझा जाये। मै इस सम्बन्धमे क्या करता हूँ, यह सबको अच्छी तरहसे मालूम है, और "सुधारके व्यापकतर हितमे" यदि मै उसे छिपा रखूं तो मै अपनेको एक पाखण्डी समझूंगा। यदि मेरे लिए वह सिर्फ सुविधा या मनोविनोदकी ही चीज हो तो मै अवश्य ही सहभोजसे अपनेको अलग रखूँगा। इन दोनो बातोसे कही बढ़कर मै उसे एक वाछनीय तथा अवश्यम्भावी सामाजिक सुधार मानता हूँ। लेकिन इस सवालको अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनसे नही मिलाना चाहिए। अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनमे मुख्य बात तो उन लोगोके प्रति होनेवाले सामाजिक तथा धार्मिक अन्यायोको खत्म करना है, जो आज अस्पृश्य कहलानेके कारण जिस धर्मके वे अनुयायी है उसी धर्मकी तमाम सार्वजनिक सुविधाओ और आध्यात्मिक शान्ति-सात्वनाके साधनोकेसे वचित कर दिये गये है। अगर मेरे हाथका बनाया हुआ या स्पर्श किया हुआ भोजन दुनियामे कोई ग्रहण न करे, तो मै ऐसा नही समझूंगा कि मै किसी चीजसे वचित किया गया हूँ। किन्तु अगर मै अपने लड़केको किसी सार्वजनिक स्कूलमे न पढा सकूं, या किसी ऐसे स्थानमे किराये पर मुझे मकान न मिल सके जहाँ दूसरे लोगोको मिल जाता हो, अथवा मै किसी ऐसे मन्दिरमे जाकर आध्यात्मिक आनन्दका लाभ न ले सकूं जो मेरे ही धर्मके माननेवालोके लिए बनाया गया हो तो मै बहुत बड़ी चीजसे अपने-आपको वंचित मानूंगा।

रही हरिजन नौकरकी बात तो यदि उस परिवारके प्राणी हरिजन और गैर-हरिजन नौकरोमे भेद रखते है, तो वे अवश्य ही छुआछूत माननेके अपराधी होगे। पर मुझे भय है कि हमारे लिए अभी वह सुन्दर और कल्याणकारी दिन बहुत दूर है, जब सभी मालिक होगे, कोई नौकर न होगा, या सभी सेवक होगे, कोई स्वामी

न होगा — सब मनुष्य कुटुम्बके सदस्यों जैसे होंगे, और जब सभी लोग एक-दूसरेके साथ सगे भाई और बहनोंके जैसा व्यवहार करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-११-१९३३

२९४. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

स्थायी पता : वर्धा
२४ नवम्बर, १९३३

चि० अमला,

मुझे खुशी है कि तुम्हारी तबीयत ठीक है। क्या मैंने यह कहा था कि मैं सप्ताहमें दो बार लिखूंगा? मेरे खयालमें मैंने यह कहा था कि तुम सप्ताहमें दो बार लिख सकती हो।

बेशक, तुम हिन्दीको जितना ज्यादा समय देना चाहो उतना समय दे सकती हो। हाँ, जब तुम बिल्कुल ठीक हो जाओगी तब मैं तुम्हें जिस स्थानपर भी रखूँगा वहाँ तुम अपनी जगह बना लोगी।

सप्रेम,

बापू

श्रीमती अमलाबहन
सत्याग्रह आश्रम
वर्धा (म० प्रा०)

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

२९५. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२४ नवम्बर, १९३३

प्रिय चार्ली,

मुझे अभी-अभी सर प्र० पट्टणीसे यह सूचना मिली है कि वह दिसम्बरसे गुरुदेवको १००० रुपये प्रति माह देना शुरू करेंगे जबतक कि ५००० रुपये पूरे नहीं हो जाते।[1] अब सब ठीक हो जायेगा।

लोगोंका उत्साह और [सभाओंमें] उपस्थिति आश्चर्यजनक है, और मेरी अपेक्षाएँ हालाँकि काफी ऊँची थीं लेकिन वह तो इनसे भी ज्यादा हैं। तुम इनका 'हरिजन' में सही-सही विवरण देखोगे। तुमने यह ध्यान दिया होगा कि अब

१. देखिए "पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको", ४-११-१९३३।

'हरिजन' मद्रास चला गया है। लोग खूब पैसा दे रहे हैं। यदि लोगोकी ये भीड़े इस बातका द्योतक नही हैं कि अस्पृश्यता तेजीसे जा रही है तो फिर मैं नही जानता कि दूसरी कौन-सी चीज इसे सिद्ध कर सकती है। इस जबर्दस्त सुधारका प्रभाव महसूस किया जाये, इसमे समय लगेगा।

बादमें।

इससे पहलेका हिस्सा विघ्न-बाधाके बीच लिखा गया था। तुमने समुद्र-यात्रा के दौरान या बम्बईमे जो पत्र लिखा था वह अभी-अभी मिला है। गुरुदेवकी बम्बई-यात्राके बारेमे मैंने बहुत कम लिखा है। मै तो यह भी नही जानता कि क्या व्यापार चल रहा है। इस व्यस्तताके बीच मै अखबार भी नही पढ़ पाता। लेकिन बेशक जहाँ तक स्वागतका सवाल है, उनका स्वागत तो होगा। लेकिन उन्हे पैसा बहुत मिलनेकी सम्भावना नही है। उड़ीसाके बारेमे मेरी अपील पर बहुत थोड़ा धन आया है।

अवश्य ही एल्विनको अपने रास्ते जाना चाहिए और उसे ईश्वरके हाथोमें छोड़ दिया जाना चाहिए। लेकिन गुणावगुणके आधारपर कार्योंके औचित्यपर शंका हो तब मित्रोको चेतावनी देनी चाहिए। यह कहना मुश्किल है कि कब यह ईश्वरकी आवाज है और कब नही है। अजनबी लोगोको प्रत्येक कार्य उसके गुणावगुणके अनुसार ही परखना होगा। यह बात बेशक अपने उपवासोके बारेमें किये गये मेरे दावोपर भी लागू होती है। ई० माथेरानसे जिस प्रकार गये उसमें मुझे कुछ जल्दबाजी प्रतीत हुई और वह वर्धाको भी बचा कर निकले। इसके बारेमे मैंने उन्हे एक लम्बा पत्र लिखा है। कराजियाके पास वापस लौट जानेके बादसे उनका कोई पत्र मुझे नही मिला है।

आशा करता हूँ कि तुम्हे वापस लौटनेके लिए कहनेको मुझे तार नही करना पडेगा। मजिस्ट्रेटोने मुझे अभी तक तंग नही किया है। लेकिन यदि आगे कभी किया तो उस समय तुमसे परामर्श करनेका अवसर नही होगा। जिस प्रकार एफी कर रही है उसी प्रकार तुम भी मुझे ईश्वरके सहारे मानो, जैसा कि तुम ई० को ईश्वरके सहारे मान रहे हो। मै जानता हूँ कि प्रभु मेरा मार्गदर्शन कर रहे है।

सप्रेम,

मोहन

[पुनश्च :]

अपने पत्र वर्धाके पतेपर भेजना।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९८३) से।

२९६. पत्र : अगाथा हैरिसनको

२४ नवम्बर, १९३३

प्रिय अगाथा,

इस हफ्ते कोई लम्बा पत्र नही। साथमें एक पत्र सी० एफ० ए० के लिए है।[1] कतरनोसे तुम्हें मेरे दौरेकी प्रगतिका कुछ अनुमान हो जायेगा। तुम्हें जैसा आवश्यक लगे उस हिसाबसे तुम उसे मित्रोको भी दिखा देना।

राजनीतिक वातावरणके बारेमें मैं नही सोचता। यह उतना ही खराब है जितना पहले था। इससे मुझे खास चिन्ता नही होती, और यदि सरकारी अधिकारियोमें दुर्बल-रक्षाकी भावना और भद्रता होती तब तो मैं बिलकुल ही चिन्ता नही करूँगा। उनके अन्दर हरएक व्यक्ति और हर संगठनको अपमानित करनेकी कभी न शान्त होनेवाली भयंकर लालसा है। लेकिन यह शिकवा-शिकायत काफी हुआ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७५) से।

२९७. पत्र : वसुमती पण्डितको

२४ नवम्बर, १९३३

चि० वसुमती,

मैंने तुझे कई पत्र लिखे थे। आशा है वे मिले होंगे। तेरा एक पत्र मुझे मिला है। तूने अध्ययन ठीक किया जान पड़ता है। लगता है तूने अंग्रेजीका अभ्यास छोड़ दिया है। ताराने एक दाँत निकलवा दिया है। निकालते समय उसे बहुत दर्द हुआ, उसे एक घंटेतक क्लोरोफॉर्ममें रखना पडा। अब तो वह ठीक है। मैं लम्बे दौरेपर हूँ। [सप्ताहमें] दो दिन छोड़कर मुझे हर रोज घूमना होता है। साथमें मीराबहन है, ओम है, चन्द्रशंकर और ठक्कर बापा तो है ही। दूसरे लोगोको तू नही जानती। अभी तक तो मेरा स्वास्थ्य ठीक चल रहा है। बा और मणिबहन अहमदाबाद गई है। तोतारामजी हरिप्रसादको लेकर हरिजन आश्रममें रहेंगे। सत्याग्रह आश्रम हरिजन आश्रम बन गया है। मेरा वजन १०८ पौंड है। दूध, नारंगी और कोई एक हरी सब्जी मेरी सामान्य खुराक है।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

यह पत्र मैंने खाना खाते समय ओमसे लिखवाया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३३८) से। सी० डब्ल्यू० ५८४ से भी; सौजन्य: वसुमती पण्डित

२९८. भाषण: रायपुरकी सार्वजनिक सभामें

२४ नवम्बर, १९३३

जबसे मै आपके प्रान्तमे आया हूँ तबसे आपने मुझे अपने प्रेमसे नहला दिया है और अभीतक मैं इस प्रेमसे तरबतर हूँ। यहाँ पर भी आपने यह थैली देकर मुझे अधिक आनन्द प्रदान किया है। यदि आप ऐसा मानते है कि इस व्यक्तिको सन्तुष्ट करनेके लिए पैसे देने चाहिए तो यह बात सच है। लेकिन इसके साथ एक शर्त है, यदि आप उसका पालन करे तो। शर्त यह है कि जिस व्यक्तिने पैसे दिये हो उसके मनमे यह भाव होना चाहिए कि उसने शुद्धि यज्ञमे अपना योगदान दिया है। यह पैसा तो उसके योगदानका प्रतीकमात्र है। लेकिन यदि वे यह माने कि पैसा देकर उन्होंने अपना फर्ज पूरा कर दिया तो यह बहुत खराब ढंगका बनियापन होगा। यह तो मानो उसने पैसा देकर स्वच्छन्द अथवा स्वेच्छाचारको खरीद लिया है। ऐसा दान हरिजनोकी सेवा नही कर सकता। हरिजनोकी सेवाके लिए पैसेकी बहुत जरूरत है, इस बातसे मै इनकार नही करता लेकिन सेवाके लिए ज्यादा जरूरी तो यह है कि आप हृदयसे हरिजन बहन-भाइयोको अपनाये। आप मनसे अस्पृश्यताको नेस्तनाबूद कर दे, भेदभावको दूर कर दे, मेरी यात्राका यही उद्देश्य है। इसे सफल बनानेमे यदि आप मदद न देकर फकत पैसा ही दे तो इस पैसेका उपयोग करना भी मुश्किल हो जाये। यदि आप न जानते हो तो यह जान ले कि [इस उद्देश्यके लिए] इस स्थान पर जो पैसा इकट्ठा किया जायेगा उसमे से कमसे-कम ७५ प्रतिशत तो इसीस्थानके हरिजनोकी सेवाके कार्यमे लगाया जायेगा। साथमे दो शर्तें है, वे भी कार्यकी सिद्धिके लिए ही है। एक तो आपकी ओरसे इस पैसेका उपयोग किये जानेके सम्बन्धमे एक अच्छी योजना प्रस्तावित की जानी चाहिए तथा आपको यह भी बताना चाहिए कि उस योजनापर कौन व्यक्ति अमल करनेवाला है। योजना कागजपर तो अच्छी दिखाई दे सकती है लेकिन यदि उसे कार्यरूप देनेवाला कोई न हो तो वह योजना व्यर्थ जायेगी, निष्फल रहेगी। इसीलिए मैंने कहा है कि यदि आप मनसे दान नही करेगे तो आपका दिया हुआ पैसा लगभग व्यर्थ है। और ऐसा होनेपर यह पैसा किसी दूसरे स्थानपर, जहाँ अच्छे कार्यकर्त्ता और अच्छी योजना मिलेगी, वहाँ चला जायेगा। पर यह आपको अच्छा नही लगेगा। हम जो [धन सग्रह के लिए] यहाँ आये हुए हैं ऐसा नही करना चाहते। हमारा इरादा तो यह है कि जिस स्थान पर पैसा इकट्ठा हो उसी स्थानपर उसमे से कमसे-कम ७५ प्रतिशत पैसा खर्च

कर दिया जाये। लेकिन यदि आप इस काममें अपना पूरा सहयोग नहीं देंगे तो अकेले पैसेसे कुछ भी काम बननेवाला नहीं है।

हर स्थानपर इतना विशाल जनसमुदाय इकट्ठा होता है, यह बात हिन्दुस्तानके लिए, हिन्दू-धर्मके लिए आनन्दकी बात है। मैं इस विश्वाससे काम करता हूँ कि यह जनसमुदाय अस्पृश्यता-निवारणके कार्यमें अपना सहयोग देनेके लिए आता है। पर मैंने भूतकालमें हिन्दुस्तानकी सेवा की है, इस बातको ध्यानमें रखकर और मेरी इस सेवाके प्रशंसा स्वरूप यदि ये लोग आते हैं तो यह बहुत बड़ी धोखाधड़ी है। इस समय मेरी आँखोंके आगे कोई अन्य कार्य नहीं है। केवल हरिजन सेवाके लिए ही मैं यह दौरा कर रहा हूँ, स्तुतिवचन सुननेके लिए कदापि नहीं। इसलिए जो लोग इस कार्यमें मदद करना चाहते हों वे लोग और आलोचक ही इन सभाओंमें आयें। विरोध करनेवाले विनयपूर्वक, सभ्यताके साथ अपना विरोध भाव व्यक्त करें। जिस व्यक्तिने धार्मिक कार्यमें सभ्यताका त्याग किया, समझ लीजिए कि उसने धर्म ही छोड़ दिया है। धर्मके साथ असभ्यताका, अविवेकका मेल नहीं हो सकता। धर्मके साथ विनय, विवेक, सभ्यता और दया होनी चाहिए। मैं अपना समय व्यर्थ ही बरबाद नहीं करना चाहता।

मुझे यदि यह मालूम हो जाये कि हिन्दू जनता मेरे साथ नहीं है तो इससे मुझे अवश्य दुःख होगा, लेकिन यदि लोग मुझे और अपने-आपको धोखा देनेके लिए सभाओंमें आयें तो ज्यादा दुःख होगा। यदि सभी लोग मेरा त्याग कर दें तो भी मुझे तो अपने धर्मका पालन करना ही होगा। शास्त्रोंमें कहा गया है कि धर्मके पालनके लिए किसीके साथकी जरूरत नहीं, केवल ईश्वरके साथकी जरूरत है। धर्मका पालन करना व्यक्तिगत चीज है। मनुष्यको तो भरसक अपने कर्त्तव्यका पालन कर लेना चाहिए, बाकी सब ईश्वर देख लेगा। अस्पृश्यता-निवारणरूपी धर्म एक रत्न है। वह मैं आपको दे रहा हूँ। यह रत्न ऐसा साधारण-सा नहीं है कि केवल एक ही व्यक्ति इसका उपयोग कर सकता है अथवा इसका इस्तेमाल करनेसे इसमें कमी आ जायेगी। धर्मरूपी रत्नका करोड़ों लोग उपयोग कर सकते हैं; जितने ज्यादा लोग इसका उपयोग करेंगे उसकी दमक उतनी ही बढ़ेगी।

यदि हम अस्पृश्यताके कलंकको हिन्दू-धर्ममें से जड़ समेत उखाड़ नहीं फेंकेंगे तो हिन्दू-धर्मका और हिन्दू-जनताका नाश हो जायेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं। आज संसारमें लोगोंकी और धर्मोंकी तुलना की जा रही है। हम ऐसे युगमें रहते हैं कि जब रेलसे थोड़े दिनोंमें दूर-दूर तक आवागमन हो सकेगा और अब तो हवाई जहाजोंका आविष्कार भी हो गया है। ऐसे युगमें समस्त संसारकी दृष्टि प्रत्येक धर्मपर पड़ रही है। यदि इस परीक्षामें हम अयोग्य सिद्ध हुए तो हमें समझ लेना चाहिए कि हमारे लिए कहीं भी आसरा नहीं। जगतको ऐसी तुलना करनेका अधिकार है। जिस चीजको संसारके आगे नहीं रखा जा सकता हो, जो बुद्धि और हृदयको स्पर्श न करती हो वह सनातन-धर्म नहीं है। सनातन-धर्म अर्थात् सनातन सत्य।

जब मुझे यह बताया गया कि यहाँ भारतदासजी अपने मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोलना चाहते हैं, तब मुझे बड़ी खुशी हुई। इस मन्दिरकी जगह रमणीय है।

ईश्वरको साक्षी मानकर मैंने इस मन्दिरको खोलनेकी क्रिया की है। हरिजन बड़ी सख्यामे और खुशीसे आये। जो हरिजन अथवा इतर जन मन्दिरमे जाये उनके लिए शास्त्रोमें दो-तीन बातोका विधान है। हृदयसे और शरीरसे शुद्ध होकर मन्दिरमें जाना चाहिए। स्वच्छताके नियमका पालन करना दूसरे हिन्दुओके लिए तथा उसी तरह हरिजनोके लिए भी आवश्यक है। इसलिए हरिजन शौचके नियमोका पालन करे। दूसरी शर्त यह है कि वे गोमास और मरे पशुओके मासका त्याग करे। मरे पशुओका मास सब धर्मोमे त्याज्य माना गया है। ससारमे कही भी सभ्य और धर्मको माननेवाले लोग कभी मुर्दा-मास खाते हों, ऐसा मैंने कभी देखा और सुना नही। मुर्देका मास खानेके बारेमे समस्त मनुष्य जातिको घृणा है। सवर्ण हिन्दू उन्हे अपनाये अथवा न अपनायें, तो भी हरिजनोको इन दोनो वस्तुओका त्याग कर देना चाहिए। वे यदि अपनेको हिन्दू मानते है तो उन्हे गोमासका भी परित्याग कर देना चाहिए। अब एक चौथी वस्तु रह गई है। इसे हिन्दू-धर्मका अनिवार्य अग माना जाता है — ऐसा तो मै नही कह सकता, हालाँकि मेरी दृष्टिमे यह अनिवार्य अग है। वह वस्तु है मद्यपानका त्याग। दूसरे हिन्दू इसे छोडे अथवा न छोडे, लेकिन आप लोग तो उसको अवश्य छोड दे। यह बहुत बुरी आदत है। बुरी आदतकी हमे नकल नही करनी चाहिए, फिर आपको तो अपनी उन्नति करनी है इसलिए आप लोगोको तो मद्यपान छोड ही देना चाहिए। आपका अनुकरण दूसरे हिन्दू करेंगे। शराबको छोडनेसे हिन्दुस्तानके करोडो रुपये बचते है और मनुष्य हैवानसे फिर इन्सान बनता है। जिसका सेवन करनेसे मनुष्य माँ-बहनका भेद भी भूल जाता है उसका आप सेवन न करें। जो लोग जूठन इकट्ठा करते है और खाते है उन्हे इस गन्दी आदतको हमेशाके लिए छोड देना चाहिए। जूठन खाना मनुष्य-जातिका काम नही है। आपकी इस आदतके लिए सवर्ण हिन्दू दोषी है। सवर्ण स्त्रियाँ अज्ञानवश हरिजनोको जूठन देती है। उसके बदले उन्हे चाहिए कि वे अपनी बनाई रसोईमे से हरिजनका भाग हमेशा अलग से निकालकर उन्हे दे। मेरी माँ हमेशा अतिथिका, गरीबका और गायका भाग निकाल कर बादमे हमे खिलाती तथा खुद खाती थी। अच्छे घरकी यह सभ्यता है कि वह उनका भाग अलग निकाल ले। उस तरह आप लोग भी भगी तथा हरिजनके लिए पहलेसे भाग निकाल कर रखे और उन्हे प्रेमसे दे। दूरसे कपडे अथवा बर्तनमे अनाज फेकना सभ्यता नही, तिरस्कार है। इसमे विनय नही, अविनय है। सवर्ण बहने हरिजनोको जूठन देना छोड दे और हरिजन उसे लेना छोड दे। हरिजन भाई-बहन जिस मन्दिरमे जाये वहाँ सब वर्णोको समान रूपमे लागू होनेवाले नियमोका वे पालन करे।

धमतरीमे सतनामी हरिजनोने मुझे एक दु खपूर्ण बात सुनाई कि हज्जाम और धोबी उनका काम नही करते, क्योकि वे अस्पृश्य माने जाते है। जिन्होने यह बात कही वे हमारे जैसे ही साफ-सुथरे थे। मै उनके मोहल्लोमे गया तो उनके घरोको अन्य हिन्दुओके घरोसे अधिक अस्वच्छ नही पाया। हिन्दुस्तानमें घूमते हुए मेरे दिलपर ऐसी छाप पडी है कि भगियोके मकान अन्य हिन्दुओकी अपेक्षा स्वच्छ होते है। ऐसे

लोगोंको धोबी और हज्जाम न मिलें, यह तो अत्याचार हुआ। आत्म-शुद्धिकी जब ऐसी प्रचण्ड प्रवृत्ति चल रही है तब उन्हें धोबी और नाई न मिलें, यह दुःखकी बात है और हमारे लिए शर्मकी बात है। इसमें मैं धोबी और हज्जामको जिम्मेदार नहीं मानता। यह काम तो उनको भड़कानेवाले तथाकथित उच्च वर्णके हिन्दुओंका है। उन्होंने इन लोगोंको बहकाया है कि यदि वे हरिजनोंका काम करेंगे तो उन्हें पाप लगेगा। उनपर इस बातका असर हुआ है, इसीसे वे हरिजनोंका काम करनेसे हिचकिचाते हैं। पर ऐसा नहीं होना चाहिए। समझदार लोगोंको हज्जाम और धोबीको समझाना चाहिए। शिक्षित सवर्ण युवकोंको हजामत बनाना और कपड़े धोना सीखना चाहिए, और हरिजनोंके पास जाकर उनसे कहना चाहिए कि हम तुम्हारी हजामत करने और तुम्हारे कपड़े धोनेके लिए तैयार हैं। यदि शिक्षित लोग हरिजनोंके पास जायेंगे तो हज्जाम और धोबी भी, जो स्वभावसे सरल हैं, अवश्य जायेंगे। वे जब यह देखेंगे कि जिन लोगोंको पैसेकी जरूरत नहीं है वे लोग हरिजनोंके पास जाते हैं तो वे भी जायेंगे। इसमे धर्मभ्रष्ट होनेकी कोई बात नहीं है। किसी भी सनातनीने मुझे यह नही कहा है कि हज्जाम, धोबी, डॉक्टर आदि हरिजनोंकी सेवा नहीं कर सकते। ऐसी सेवा न करना धर्ममें कैसे शुमार हुआ, सो मैं नहीं जानता। ऐसा जंगलीपन जल्द ही दूर होना चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १७-१२-१९३३

२९९. भाषण: बालोदा बाजारमें[1]

२५ नवम्बर, १९३३

गांधीजीने एक निजी मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोलनेकी घोषणा करते हुए कहा कि यह मन्दिर आज हरिजनोंके प्रवेशके साथ ही ईश्वरका सच्चा आवास बन गया है। उन्होंने हरिजनोंसे कहा कि मन्दिरोंमें जानेवाले सभी हिन्दुओंपर जो तीन शर्तें लागू होती हैं उनका आप भी पालन करें। गांधीजीने कहा:

मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आत्म-शुद्धिके इस आन्दोलनमें आप अपना पूरा योगदान करें, पैसे देकर नहीं बल्कि अपने हृदय और शरीरको पूरी तरह स्वच्छ और निर्मल बनाकर तथा आपके बीच जो बुरी आदतें घुस गई हैं उनको दूर करके। हालाँकि मैं शर्मके साथ स्वीकार करता हूँ कि इनमें से बहुत-सी बुरी आदतोंके लिए सवर्ण हिन्दू जिम्मेदार हैं, फिर भी आपको अपने हिस्सेका काम करना है यानी मुर्दा पशु और गायका मांस खाना छोड़ देना है और सफाई तथा स्वच्छताके सामान्य नियमोंका पालन करना है। ये नियम उन सभी हिन्दुओं पर लागू होते हैं जो हिन्दू मन्दिरोंमें पूजा करनेका अधिकार चाहते हैं। यह तथ्य है कि कुछ सवर्ण हिन्दू मद्यपान करते

१. यह भाषण *हरिजन* में "मन्दिर-प्रवेशकी शर्तें" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

हैं, किन्तु मैं चाहूँगा कि इसके बावजूद आप मद्यपान भी छोड दे। आपको उनके दुर्गुणोकी नकल नही करनी है। मद्यपान एक अत्यन्त पतनकारी वस्तु है जो मनुष्यको पशु बना देती है। यह शरीर और आत्मा दोनोको दूषित कर देती है। यह नैतिक और घरेलू जीवन, दोनोको नष्ट कर देती है। इसलिए मैं हरिजनोसे पूरे दिलसे अनुरोध करूँगा कि वे इस बुराईको छोड़ दे और सवर्ण हिन्दुओके सामने ही नही बल्कि सारी दुनियाके सामने एक उदात्त आदर्श प्रस्तुत करें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-१२-१९३३

३००. भाषण : विलासपुरमें[1]

२५ नवम्बर, १९३३

अगर आप जानते न हो तो अब जान ले कि जबसे मैं दक्षिण आफ्रिका गया तभीसे मेरा मजदूरोसे गहरा सम्बन्ध रहा है। दक्षिण आफ्रिकामे, भारतमे या ससारके किसी भी भागमे, उन्होने मुझे अपना एक मजदूर-भाई माना है और अपना ही समझकर मेरा स्वागत किया है। आपको शायद यह जानकर अचम्भा होगा कि लकाशायरमे भी मजदूरोने सहज ही मुझे अपनेमे से एक मान लिया और सैकडो-हजारोकी संख्यामे मुझे घेर लिया था। हमारे बीच एकमात्र अन्तर यह है कि मैं अपनी पसन्दसे मजदूर बन गया हूँ जब कि आप परिस्थितिवश मजदूर बने हैं और अगर सम्भव हो तो शायद मालिक बनना चाहेगे। मैंने मालिक बननेकी महत्वाकाक्षा शुरूमें ही छोड दी थी, क्योकि उस हालतमें मैं एक छोटेसे वर्गका आदमी होता और कगालो, अनाथो, अधभूखो, नंगो तथा सबसे छोटोके साथ तादात्म्य स्थापित नही कर सकता था, जैसा कि आज मैं अपनी योग्यताके अनुसार करता हूँ। मै चाहता हूँ कि मजदूर अपनी स्थितिपर दु ख न माने, उससे घृणा तो हरगिज न करे और श्रमका गौरव समझें। यह सर्वथा उचित है कि आप हरिजनोके प्रति अपनी सहानुभूतिके चिह्नस्वरूप अपनी थैली भेट कर रहे हैं। उनके बराबर किसने कष्ट भोगे है? उनका स्तर हमारे समाजमे सबसे नीचा है। जिन भयकर मुसीबतो और अभावोमे होकर उन्हे गुजरना पड़ता है, उनकी कल्पना ऐसे लोगोको कभी नही हो सकती, जो उनके शिकार नही बने है। दूसरे मजदूर दौलत जमा करके किसी दिन मालिक बननेकी और इस प्रकार अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बढानेकी आकाक्षा रख सकते है। परन्तु हरिजन ऐसी महत्वा-कांक्षा कभी नही रख सकते। उनपर तो अछूतपनका कलंक माँके पेटसे ही लग जाता है। वे जन्मसे ही बहिष्कृत होते हैं और मृत्यु-पर्यन्त बहिष्कृत रहते है। उन्हे समाजसे बिलकुल अलग बस्तियोमे रहना पड़ता है और जीवनकी जो सुख-सुविधाएँ औरोको

१. यह भाषण विलासपुरमें बी० एन० रेलवे मजदूर-संघके सामने दिया गया था। हरिजन में यह दो भागोंमें "महान समता-स्थापक" और "मानवताके नाम पर", इन पृथक शीर्षकोंसे प्रकाशित हुआ था।

प्राप्त होती हैं उनसे वे वंचित रखे जाते हैं। ईश्वरकी मुफ्त देन पानी तक उन्हें नहीं मिलता। मैं मजदूर-संघसे कहता हूँ कि वह हरिजनों और आपके बीचके तमाम भेदभाव मिटा दें। मैं यह अपील विचारपूर्वक कर रहा हूँ, क्योंकि अहमदाबादके मिल-मजदूरोंके सीधे सम्पर्कमें आनेके कारण मैं जानता हूँ कि मजदूर हरिजनों और गैर-हरिजनोंके बीच भेदभाव जरूर रखते हैं। मैं और सबकी अपेक्षा मजदूरोंसे ये भेदभाव मिटा देनेकी अधिक आशा रखता हूँ। मेरी यह गहरी श्रद्धा रहती है कि हम किसी दिन मजदूरोंके द्वारा साम्प्रदायिक एकता जरूर प्राप्त करेंगे। मैं श्रमको एकता पैदा करनेका जबरदस्त साधन मानता हूँ। वह महान ममता-स्थापक है। मजदूरोंमें साम्प्रदायिक आधारपर विभाजन होना शर्मकी बात है, क्योंकि वे सब अपने पसीनेकी कमाई खाते हैं और इसलिए वे सब एक विशाल भ्रातृ-समाजके अंग हैं। इसलिए वे अस्पृश्यताको सम्पूर्णतः मिटाकर इसका आरम्भ करें। यह साम्प्रदायिक एकताकी दिशामें एक बड़ा कदम होगा। एक बार हरिजनोंका अस्पृश्यताका कलंक मिट गया कि हिन्दुओं, मुसलमानों और देशकी अन्य जातियोंके बीच व्यापक एकताका रास्ता खुल जायेगा।

गांधीजीसे एक मुसलमान मित्रने पूछा कि आप एक राष्ट्र-नेता हैं, फिर आपने फिलहाल राष्ट्रके केवल एक वर्गके बीच ही काम करनेका फैसला क्यों किया है? इसपर गांधीजीने निम्नलिखित उत्तर दिया:

मैं आज इस कामके जरिये सभी जातियोंकी सेवा करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। ये सभी एक ही विशाल परिवारकी शाखाएँ हैं। मैंने हिन्दू शाखामें एक ऐसा रोग देखा है जिसे यदि समय रहते दूर न किया गया तो वह सारे कुटुम्बमें फैल जायेगा और उसे नष्ट कर देगा। अस्पृश्यताकी बुराई अपनी निर्धारित मर्यादासे कहीं आगे तक बढ़ गयी है। अस्पृश्यताका हिन्दू समाजमें से समूल नाश करनेकी कोशिश करते हुए मैं सभी जातियोंकी सेवा करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। सम्मेलनोंके जरिये साम्प्रदायिक एकता स्थापित करनेका तरीका हालांकि विफल हो गया है, लेकिन अन्ततः लोगोंके बीच दिली एकता स्थापित होगी, इसकी ओरसे मैं निराश नहीं हुआ हूँ। ईश्वरने यह काम मेरे पास भेजा है और मैं इस विश्वासके साथ इसे कर रहा हूँ कि इसके जरिये साम्प्रदायिक एकताका रास्ता तैयार होगा। इसलिए मेरे विचारसे यह कार्य सारे राष्ट्रकी सेवा है। १९२०-२१ में मैंने हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए जो प्रयत्न किया था वह इतिहासमें लिखा जायेगा और जब कभी भी साम्प्रदायिक एकताका भवन खड़ा होगा तब वह उसकी नींव बनेगा। वह प्रयत्न मैंने किया, इसका मुझे कभी कोई दुःख नहीं हुआ है। मेरे लिए वह कोई कार्यसाधक वस्तु नहीं थी। केवल काम सिद्ध करनेके खयालसे मैंने कोई काम किया हो, इसका मुझको भान नहीं है। मैंने हमेशा ऐसा माना है कि उच्चतम नैतिकता ही सबसे समयोचित साधन भी है। कुछ यूरोपीय मित्र मुझे विश्वास दिलाते हैं कि मैं अस्पृश्यताके विरुद्ध यह लड़ाई समूचे समाजकी ओरसे लड़ रहा हूँ। एक बार यह नासूर हिन्दू-धर्ममें से निकल जाये, फिर तो हिन्दू, मुसलमान, और अन्य सभी लोग अपने विरोधोंको भूलकर सगे

भाइयोकी तरह एक-दूसरेका आलिंगन करेंगे, और सभी जातियोके लोग अनुभव करेंगे कि वे एक वृक्षकी शाखाएँ है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-१२-१९३३

३०१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

रायपुर
२६ नवम्बर, १९३३

प्रिय अमला,

तुमने अपनी उँगलीको क्या कर लिया ? द्वारकानाथजी कहते है कि तुमने खुदको चोट पहुँचा ली है। मै आशा करता हूँ कि तुम सामर्थ्यसे अधिक श्रम नही कर रही हो। मै चाहता हूँ कि तुम हर चीज आनन्दपूर्वक और बहुत धीरजके साथ करो।

ऐसा लगता है कि पहलेसे तय किये हुए अनुसार हम लोग १५ दिसम्बरको वर्धासे होते हुए गुजरेंगे। इस कार्यक्रममे बादमें जो परिवर्तन किया गया था उसके अनुसार हम वर्धा छोड देनेवाले थे और कलकत्ता होते हुए जानेवाले थे। लेकिन अब पहलेवाला कार्यक्रम ही रखा गया है। पिछली बार तुमने स्टेशन न आकर जो आत्मसयम दिखाया था, उसकी तो मै कद्र करता हूँ, लेकिन इस बार यदि तुम्हे द्वारकानाथजीकी अनुमति मिल जाये तो मै चाहूँगा कि १५ तारीखको तुम आओ।

मै देखता हूँ कि तुम पहले जैसा कातती थी उसकी अपेक्षा अब बहुत अच्छा कातती हो और तुमने लच्छियाँ भी ज्यादा अच्छी और सफाईसे बनाई है। मुझे विश्वास है कि सही लगनसे करनेपर तुम ज्यादा बारीक, ज्यादा मजबूत और ज्यादा एकसार सूत निकाल सकोगी। आशा है, अब रुईकी बर्बादी भी कम होगी और चरखा बिगड जानेपर अब तुम उसे ठीक भी करना जानती होगी। मुझे आशा है कि तुम भी अपने जापानी मित्र जितनी ही खुश हो। तुम्हे जानकर आश्चर्य होगा कि वर्षो पहले, दक्षिण आफ्रिकामे जब मैने अपने हाथो अपने बाल काटे तो ऐसा लगने लगा कि जैसे उन्हे चूहोने कुतरा हो। मेरे वकील मित्रोने मेरा खूब मजाक बनाया। लेकिन मै उनके मजाकको बर्दाश्त कर गया, और अगली बार ज्यादा अच्छी कटाई कर सका। यही हाल तब हुआ जब मैने कमीजो और कालरोपर लोहा किया। मै यह घटना तुम्हे इसलिए नही बता रहा हूँ कि तुम अपना प्रयोग दोहराओ। तुम्हे अपने बाल किसी ऐसे नाईसे कटवाने चाहिए जिसे नियत वेतन मिलता हो, भले ही वह कितने ही सर मूँडता हो।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]
स्पीगल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

३०२. पत्र : एम० वापी नीडुको

२६ नवम्बर, १९३३

प्रिय वापी नीडु,

कृपया सब कार्यकर्त्ताओंसे कहें कि मैं आन्ध्रदेशसे बड़ी-बड़ी चीजोंकी आशा रखता हूँ, मोटी-मोटी रकमोंकी ही नहीं बल्कि बहुत सारे शुद्ध हृदय और आत्मत्यागी हरिजन-सेवकोंकी भी।

हृदयसे आपका,
बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-१२-१९३३

३०३. पत्र : जमनालाल बजाजको

रायपुर
२६ नवम्बर, १९३३

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। लक्ष्मीदासने जो लिखा है वह आनन्दीके कहनेपर लिखा जान पड़ता है। तुम्हें स्मरण है न कि आनन्दीको नाम भी मालूम हो गया था। लेकिन हमें उसकी चिन्ता नहीं। लक्ष्मीदास किसी बातका अनर्थ करेगा, सो बात नहीं है। मैं तो जानता हूँ कि तुमने नाम प्रकट नहीं किया।

शहदके बारेमें द्वारकानाथको लिखा है। किसीके हाथ जहाँ भी आसानीसे शहद भिजवाया जा सके वहाँ शहदकी बोतल भेजनेको मैंने लिखा है।

जबलपुरमें ५ तारीखको कार्यसमितिकी बैठक होगी, ऐसा जवाहरलालने लिखा है। लगता है कि उसे तुम्हारे बैठकमें भाग लेनेकी उम्मीद है। क्या तुम्हारा आनेका मन है? यदि न आनेका मन हो तो काम चला लूँगा। इच्छा हो तो अवश्य आना। इसका अर्थ यह हुआ कि तुम्हे ७ तारीखके बदले वहाँसे ३ या ४ तारीखको रवाना होना पड़ेगा। वहाँके तुम्हारे इतने दिन खराब जायें, यह बात मुझे निःसन्देह पसन्द नहीं है।

मथुरादास कल यहाँ आ रहा है। वह क्यों आ रहा है, सो मालूम नहीं।

मैं देखता हूँ कि ओमकी बुद्धि बहुत तेज है। सादी तो वह है ही, शरीर भी अच्छा है। उसे सब-कुछ अच्छा लगता है। मैं उसे थोड़ा-थोड़ा लिखनेका काम

भी देता हूँ। वह मेरे बगलमे ही सोती है। उसकी सोनेकी शक्ति भी बहुत है। वह सबकी प्यारी बन गई है।

जानकी मैया कुछ शान्त हुई है या नही? क्या कमलाका कामकाज ठीक चल रहा है? घूमती-फिरती है? मदालसा[1] और वत्सला[2] अपना समय कैसे व्यतीत करती है? इसके साथ मैं मणिलालका महत्त्वपूर्ण पत्र भेज रहा हूँ। इसे फाइलमे लगा लेना। इसमे गोसेवा सघके बारेमे लिखा गया है और आभूषणोकी सूची दी हुई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२७) से।

३०४. पत्र : रमाबहन जोशीको

२६ नवम्बर, १९३३

चि० रमा,

मुझे पत्र लिखा जा सकता है। अब [तुम] वहाँ कैसे रहती हो — मानसिक और शारीरिक रूपसे? क्या हाथ तकलीफ देता है? विमु[3] कैसी है? क्या धीरूके पत्र आते है? नानाभाईका पत्र मिला होगा। चिन्ताका कोई कारण नही।

निर्मला जोशी[4] का पता क्या है?

छगनलालका पत्र मिला क्या? उसे मेरा लम्बा पत्र मिला अथवा नही, सो जाननेके लिए उत्सुक हूँ। विमुसे लिखनेके लिए कहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५८) से।

१. जमनालाल बजाजकी लडकी, श्रीमन्नारायणकी पत्नी।
२. वत्सला दास्ताने।
३. रमाबहन जोशीकी पुत्री, विमला।
४. केवलराम भीमजी जोशीकी पत्नी।

३०५. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२६ नवम्बर, १९३३

चि० प्रेमा,

तेरे बारेमें सुशीला समाचार देती रहती है। दूसरोसे भी मालूम होता रहता है। मेरा पत्र तुझे मिल गया है, यह बहुत अच्छा हुआ। तूने क्या-कुछ खोया अथवा पाया, इसका सही अन्दाज तो तू बाहर निकलनेपर ही कर पायेगी। पर इसमे कोई सन्देह नही कि अनुभव अमूल्य है।

तेरे कार्यक्रमको मै समझ सका हूँ। तू अपनी तन्दुरुस्तीको बनाये रख सकी है, यह बहुत अच्छी बात है। इसकी चाबी तेरे हाथ थी और मै देखता हूँ कि इसका तूने उचित उपयोग किया है।

हरिजन सेवाके बारेमें क्या लिखूं? चल रही है। मै लोगोंके असीम प्रेमका अनुभव कर रहा हूँ। मेरा शरीर भी खासा योगदान दे रहा है। मेरा वजन ११० पौंड तक गया है। यह कोई ऐसी-वैसी बात नही है। चन्द्रशंकर महादेवकी स्थानपूर्ति करनेका महान् प्रयत्न कर रहा है। मीराबहन तो यहाँ है ही। और रामनाथ है, जिसे तू नही जानती। इनके अलावा जानकीबहनकी ओम है। वह बहादुर लडकी है और उसकी बुद्धि भी सुन्दर है। ईश्वरने उसे सेहत भी अच्छी दे रखी है।

अब ज्यादा लिखनेका समय नही है। अन्य अनेक पत्र लिखने है। मै अधिकाश पत्र-व्यवहार मौनमे ही कर सकता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३५२) से। सी० डब्ल्यू० ६७९१ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

३०६. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२६ नवम्बर, १९३३

चि० काका,

तुम्हे जी-भर कर लिखा जा सके, ऐसी फुरसत मुझे मिल ही नही सकती।

. . .[1] का पत्र देखकर मैं हक्का-बक्का रह गया। क्या वह सचमुच पागल है? वह महिला बलात्कारके वश हो गई, ऐसा मानते हुए ही मुझे संकोच होता है, हालाँकि यह सम्भव है कि इसमे उसकी इच्छा न हो। और यद्यपि सच ही यह बलात्कार ही हो तो भी गर्भपात तो नही कराया जा सकता। उस महिलाको प्रेमपूर्वक बच्चेका पोषण करना चाहिए। हाँ, वह पतिसे अवश्य दूर रहे।

. . .[2]

तुम्हारे दाँतका क्या हुआ?

क्या तुम्हे अभी भी कमरमे दर्द होता है?

खगोलकी तीन पुस्तके पहुँच गई हैं।

बाकी तो तुम्हे चन्द्रशंकर लिखते ही होगे।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४७५) से, सौजन्य द० बा० कालेलकर

३०७. पत्र : विद्या आर० पटेलको

२६ नवम्बर, १९३३

चि० विद्या,

अब तू कैसी है? मासिक-धर्म ठीक होता है? दस्त साफ होता है? स्राव होता है? रावजीभाईके पत्र आते है क्या? क्या खाती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६३५) से, सौजन्य रवीन्द्र आर० पटेल

१. नाम नहीं दिया गया है।

२. यहाँ एक अनुच्छेद दिया नही गया है।

३०८. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

२६ नवम्बर, १९३३

चि० विद्या,

तुमारा खत मिला। आनंदको वहुत कम जेल मिली। उसको मेरे आशीर्वाद भेजो। श्वसुरका कुछ खत आया? संकोच छोड देगी तो कोई नोकरकी जरूरत नहि रहेगी। तुमको तो ईश्वरने पैसेकी कुछ छुट दी है लेकिन जिसके पास कुछ नहि है ऐसी माताका क्या? आस्ते आस्ते स्वावलंवी वननेकी चेष्टा करो। महादेव भी उम्मरमें वढ़ता जाता हैं। थोड़े अरसेमें उसे वहुत मदद नहि चाहियेगी। अव तो कुछ प्रवन्ध हो पाया है ऐसा द्वारकानाथजी लिखते हैं। मखन तो वनानी है ना? कुछ न कुछ सेवाका कार्य किया करो और सवको सगे समझ कर रहो। चिंता करना ही नहि, तकलीफ पड़े तो मुझे शीघ्र लिखो।

वापूके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्म से; राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

३०९. पत्र : व्रजकृष्ण चांदीवालाको

२६ नवम्वर, १९३३

चि० व्रजकृष्ण,

तुमारा खत मिला। मिलते ही मैंने डा० अनसारीको तार दिया। वे मिले होंगे। गीता पाठ सुनानेवाला कोई घरमें नहि कोई वहारसे मिलता नहि यह कैसी दयाजनक स्थिति। ऐसी हालतको पहोंचनेके लिये तुलसीदासजीने रामनाम रूपी गीता हमको दी है। रामनाम कण्ठ करनेकी आवश्यकता नहि रहती, एक वखत लेनेसे कण्ठ हो जाता है। उसे तो हमारे हृदयगत करना है। रामनाम ही तुमारे लिये सच्चा औषध समजो। शरीर रहे तो कुटुंवके छोटे छोटे वालक-वालिकाओंको गीतापाठ सीखाना।

और क्या लिखुं? तुमारा स्मरण प्रतिक्षण चलता है। सुपुत्र होनेका अधिकार तुमने तो ले लिया है मैं सुपिता कैसे वनूं?

वापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४०२) से।

३१०. भाषण: राजकुमार कालेज, रायपुरमें[1]

२७ नवम्बर, १९३३

जब मुझे आपका निमन्त्रण मिला, तभी मेरे मनमे यह विचार उत्पन्न हुआ कि यदि स्वागत-समिति मेरे लिए थोड़ा-सा समय निकाल सके, तो मै यहाँके उन छात्रोको कुछ उपदेश करूँ, जिन्हे शिक्षा समाप्त कर चुकनेपर बहुत बडी जिम्मेदारी और भार अपने ऊपर लेना पडेगा। मुझे इसकी खुशी है कि स्वागत-समितिने इस समारोहके लिए घटेभरका समय निकाला। महोदय आपने मुझे यहाँ निमन्त्रित किया और इस प्रकार उन युवकोसे कुछ कहनेका अवसर दिया जो आपके कृपापूर्ण सरक्षणमे है, इसलिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। मेरे मेजबान शुक्लजी[2] को आपने पहले ही यह सन्देश भेजकर बहुत अच्छा किया कि मै चाहूँ तो हिन्दुस्तानीमे भाषण कर सकता हूँ, पर अग्रेजीमे भाषण करना अच्छा होगा। फिर मैने जब आपको चिट्ठी लिखी, तब आपने जवाब दिया कि यहाँके बहुतसे छात्र हिन्दुस्तानी नही समझते। तब फौरन मैने यह निश्चय किया कि अपने सामान्य नियमके विरुद्ध भी मै अग्रेजीमे ही भाषण करूँगा। आपके प्रिंसिपलने मुझे अपने भाषणके लिए अनजाने ही मसाला भी दे दिया। राजकुमारो, आप लोगोको याद रखना चाहिए कि उत्तरोत्तर ज्ञान-वृद्धि और सचार-साधनोके विकासके इस युगमे आप स्वयको अपने अपेक्षाकृत बहुत ही छोटे राज्योकी सीमामे आबद्ध नही रख सकते। आपको अपना क्षेत्र व्यापक बनाना पडेगा और मुझे कोई सन्देह नही है कि परिस्थिति आपको ऐसा करनेको बाध्य करेगी। तो फिर सिर्फ अपने प्रान्तकी भाषा जाननेसे ही आपका काम न चलेगा, आपको यह भाषा भी सीखनी पडेगी, जिसका व्यवहार इस देशमे सबसे ज्यादा व्यापक रूपसे होता है। शायद आप लोगोको यह मालूम न हो, मुझे पूरा विश्वास है कि आपमे से सबको यह मालूम नही है कि इस देशके २२ करोड स्त्री-पुरुष इतनी हिन्दी या हिन्दुस्तानी भाषाका ज्ञान रखते है कि उस भाषामे उन्हे जो-कुछ कहा जाये उसे वे समझ सके और अपना भाव भी उस भाषामे व्यक्त कर सके, चाहे उनकी हिन्दी टूटी-फूटी ही क्यो न हो। जैसी जिम्मेदारी आप लोगोपर आनेवाली है, वैसी जिम्मेदारीवाले किसी भी व्यक्तिका काम हिन्दी-जैसी व्यापक भाषा जाने बिना चलना सम्भव नही। हिन्दी भाषाके प्रति मेरे पागल प्रेमके पीछे भी ठोस कारण है। मै अग्रेजी भाषाका प्रेमी हूँ। किसी विदेशीके लिए जैसा सम्भव है वैसी अग्रेजी मै भी बोलना चाहूँगा और मै अग्रेजोके साथ होड करना चाहूँगा। वर्षो अग्रेजो और अग्रेजी बोलनेवालोके साथ रहनेसे ही मै थोडी-बहुत अग्रेजी सीख सका हूँ। सैकडो अग्रेज स्त्री-पुरुष मेरे

१ यह भाषण *हरिजन* में "देशी नरेश और अस्पृश्यता" शीर्षकसे छपा था।
२. रविशकर शुक्ल।

घनिष्ठ मित्र हैं। अतएव जब मैं आपसे यह अनुरोध करता हूँ कि हिन्दी सीखना आपका कर्त्तव्य है, तब आपको यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि मुझे अंग्रेजीसे कोई द्वेष है। मै प्रिंसिपल महोदय और अन्य अध्यापकोसे भी अनुरोध करता हूँ कि वे इसपर विचार करे कि देशी नरेशोके लिए हिन्दी जानना कितना जरूरी है, क्योकि हिन्दी भापाके द्वारा ही वे जन-साधारणके भारतको जान सकते है।

इसके साथ ही मै अपने सन्देशके मुख्य मुद्देपर आता हूँ। जीवनके विविध क्षेत्रोमें हमे अंग्रेजोका साथ होता है। अंग्रेज शासकोंकी नीति की आलोचना करनेके कटु कर्त्तव्यका पालन मुझे बार-बार करना पडा है। मैंने कभी अपने भाव छिपाये नही है। हृदयके सच्चे उद्‌गार मैंने प्रकट किये है। पर मै पहले ही कह चुका हूँ कि सैकड़ो अंग्रेज मेरे घनिष्ठ मित्र है। अंग्रेजोके जो-कुछ अत्यन्त अमूल्य गुण है उन्हे मै कभी भूल नही सकता। उनमे से एक गुण विशेष रूपसे मै आपको बताता हूँ। इंग्लैंडमें बडे-बडे लोगोंके यहाँ जो घरेलू नौकर रहते है, उनसे उनका परिवारवालोके समान ही सम्बन्ध होता है। जब मैं उनके घर गया तो मुझे यह देखकर बड़ा हर्ष हुआ कि उनमें और उनके नौकरोंमे स्नेह-बन्धन है। वहाँ अस्पृश्यता नही है। जो मै कह रहा हूँ, वह इंग्लैंडके सैंकड़ो बड़े आदमियोके बारेमे बिलकुल सच है। जहाँ-जहाँ मैं गया, वहाँ-वहाँ मुझसे नौकरका परिचय कुछ हीन प्राणियोंकी तरह नही बल्कि परिवारवालोंकी ही तरह कराया गया। मैं चाहता हूँ कि आप भी अपने जीवनमें अंग्रेजोंके इस गुणको ग्रहण करे। दुर्भाग्यवश हम लोगोकी यह धारणा है कि राजा राजा है और वह कभी साधारण लोगोंके साथ हिलमिल नही सकता। इसीका यह दुखद परिणाम है, भले ही आज यह कितना ही आवश्यक क्यो न हो, कि आप राज-कुमारोके लिए अलग स्कूल और कालेज बनाने पडते है। आप साधारण स्कूल-कालेजमे पढने जानेका साहस नही कर सकते। आपको शायद मालूम न हो कि सम्राट् एडवर्ड और वर्तमान सम्राट्—मैं गलत होऊँ तो कृपया सुधार दे—दोनोने जल-सेनामे मामूली नाविकका काम किया था और उस पदपर रहकर पिता-पुत्र दोनोने एक नाविकके जैसी कठिनाइयाँ झेली थी। क्या आप भी वैसा करेंगे? आपको तो बहुत सहेज-सँभाल कर आराममे रखा जाता है और यह शिक्षा दी जाती है कि आपको ईश्वरने दैवी गुणोसे विभूपित किया है। आप विश्वास कीजिए कि आपमे और साधारण लोगोंमे कोई अन्तर नही। अन्तर केवल इतना ही है कि आपको जो मौका मिलता है वह उन्हे नही दिया जाता। पर आपको जो अवसर मिले है, उनका यदि आप सदुपयोग न करें, तो ईश्वरके यहाँ आप दोषी ठहरेंगे। आपको ध्यान रखना चाहिए कि शिक्षाका मुख्य अभिप्राय यही है कि आपमे जो गुण है उनका विकास हो। आप और मै इस बातसे निश्चित ही सन्तोष प्राप्त कर सकते है कि हम सबमे अच्छा या बुरा बननेकी क्षमता समान रूपसे मौजूद है। इसलिए मुझे लगता है कि अगर आप भारतके गरीबोकी पीड़ा समझना न सीखेगे तो आपकी शिक्षा व्यर्थ है।

इसके साथ स्वभावतः इस अस्पृश्यताके सवालपर आ जाते है। अस्पृश्यता जैसी बुराईको धर्मशास्त्र-सम्मत कहनेका जैसा दावा भारतके हिन्दू समाज द्वारा किया जाता

है वैसा दुनियामे अन्यत्र कही नही किया जाता। पर यदि आप अभी तक मुझसे सहमत है तो मै आशा करता हूँ कि आप हरिजनोको भी साधारण मानवसमाजका ही अभिन्न अग समझेगे। आपको हरिजनोके साथ भी अपनी एकताका अनुभव करना है। सम्भव है कि आपके माता-पिता इस बातको अस्वीकार करें कि अस्पृश्यता कोई बुरी चीज है। ऐसी स्थितिमे आपको प्रह्लाद जैसा सत्याग्रही बनना पडेगा। हिन्दू-धर्ममे जब प्राणि-मात्रको एक माननेकी शिक्षा दी गई है, तब मनुष्योको जन्मसे ऊँचा या नीचा मानना उसके अनुकूल हो ही नही सकता। ससारके सभी धर्मोको आज कसौटीपर कसा जा रहा है, विश्लेषणात्मक दृष्टिसे भी और साश्लेषिक दृष्टिसे भी। यदि हिन्दू-समाज अछूतपनको पकडे रहेगा, तो इसमे सन्देह नही कि हिन्दू-धर्म और हिन्दुओका लोप हो जायेगा। मै हिन्दू-धर्मको इसलिए मानता हूँ कि उससे मुझे पूरी शान्ति मिलती है और मैने पाया है कि आज जैसी अस्पृश्यता प्रचलित है, उसके लिए उसमे कोई स्थान नही है।

मैने यदि आपको अग्रेजोके गुण ग्रहण करनेको कहा है, तो अग्रेज मित्रोंके प्रति आदर रखते हुए मै उनके दोषोसे बचनेको भी कहता हूँ। अमर सन्त-कवि तुलसीदासने अपने एक दोहेमे[1] बहुत गहरा सत्य कहा है। वह कहते है कि हमे हसोकी तरह बनना चाहिए, जो कि अच्छी बातोको बुरी चीजोसे अलग करके ग्रहण कर लेता है और बुराइयोको छोड देता है। इसलिए मै आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप अग्रेजोके दो दुर्गुणोमे कभी न फँसे। एक है शराब पीना और दूसरा है घुडदौडके रूपमे जुआ खेलना। बहुतेरे अग्रेज इन दोनो चीजोसे घृणा करते है। मैने देखा है कि इन दुर्व्यसनोकी बदौलत कितने ही अग्रेज परिवार बर्बाद हो गये है। बहुतेरे देशी नरेशोका भी इन दुर्गुणोके कारण सर्वनाश हुआ है। मै आशा करता हूँ कि आप लोग इन दोनो दुर्गुणोसे बचना सीखेगे।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ८-१२-१९३३

१. जड चेतन गुन दोषमय विस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि-बिकार॥
दोहेके पाठके लिए देखिए खण्ड ३४, पृष्ठ ५९४।

३११. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२७ नवम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

यह रहा गासावीका पत्र। मैं उन्हें लिख रहा हूँ कि मुझे पार्टीके मामलेमें कोई ऐतराज नहीं है बशर्ते कि उसे कांग्रेस पार्टी नहीं माना जाता और यह कि उन्हें हर हालतमें तुम्हारी सलाह लेनी चाहिए।

मैं देखता हूँ कि ५ दिसम्बरको हमें जबलपुरमें मिलना है। यदि तनिक भी सम्भव हुआ तो मैं अधिक समय देनेकी कोशिश करूँगा।

क्या मैंने तुम्हें मध्य-प्रान्तका कार्यक्रम नहीं भेजा है? अबतक उससे ज्यादा तैयार भी नहीं था।

तो तुम धीरे-धीरे शेयरों तथा ऐसी ही अन्य चीजोंके भारसे मुक्त हो रहे हो। मुझे इसका दुःख नहीं है। मेरी दृष्टिसे तो आदर्श बात यह होगी कि तुम्हारे पास जितनी सम्पत्ति है उसे तुम स्वेच्छया या तो किसी संस्थाको दे दो या फिर परिवारके उन सदस्योंको दे दो जो लड़ाईमें नहीं पड़ना चाहते। यह लड़ाई लम्बी चलनी है और शायद बराबर तेजतर ही होती जायेगी। आखिरी लड़ाईमें केवल वे ही खड़े रह सकेंगे जिनके पास कोई सम्पत्ति नहीं होगी और सर टेकनेका कोई ठौर नहीं होगा। लेकिन भविष्यके बारेमें चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नहीं है। कुछ भी हो, तुम तो सबसे आगे ही रहोगे।

मुझे खुशी है कि माँकी हालत बराबर सुधर रही है। पता नहीं जो-कुछ हो रहा है उससे वह अवगत भी हैं या नहीं।

हाँ, हिन्दू सभाकी जो तुमने आलोचना की थी, वह मैंने पढ़ी तो थी। यह जरा कम तीखी हो सकती थी। उसका सारांश पढ़नेपर तो ऐसा लगता था जैसे तुम्हारा रुख पक्षपातपूर्ण था।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

तारीखें तुम्हें साथमें लगे कार्यक्रममें मिल जायेंगी।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

३१२. पत्र : दुनीचन्दको

२७ नवम्बर, १९३३

प्रिय लाला दुनीचन्द,

उत्तर देनेमे विलम्बके लिए क्षमा कीजिएगा। जब मै आपके जिलेमें यात्रा करूँगा उस समय मैं ऐसा कोई और घर नही जानता जहाँ मुझे आश्रय मिलेगा। और फिर, आप अपनी कमेटी तो स्वय ही होगे इसलिए आपके जिलेमे मेरा भाग्य क्या होगा, इसका निर्णय तो आप ही करेंगे।

यह एक ही पत्र आप और श्रीमती दुनीचन्द दोनोके लिए मानकर मैं कुछ पैसे बचा रहा हूँ। उनको मेरे सग यात्रा करनेकी खुली छूट होगी। उन्हे बता दीजिए कि हमारा दल पहलेसे ही खूब बडा है और जिस घरमे हम जाते है वहाँ टिड्डियोकी तरह टूट पडते है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

लाला दुनीचन्द
कृपा निवास
अम्बाला सिटी
(पंजाब)

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एम० ५५८४) से।

३१३. पत्र : दूधीबहन वी० देसाईको

२८ नवम्बर, १९३३

चि० दूधीबहन,

तुम्हारा पत्र मिला — मैं इसकी बाट जोह ही रहा था। तुम्हारी तबीयत कैसी रहती है? मैं देखता हूँ कि अन्य आश्रमकी लडकियाँ भी वही है। वे कौन-कौन है? उन सबकी देखभाल करना।

क्या तुम कुछ लिखती-पढती हो?

वर्धाका पता पीछेकी ओर देखो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१८८) से, सौजन्य . वालजी गो० देसाई

३१४. पत्र : महेन्द्र देसाई और सुदर्शन देसाईको

२९ नवम्बर, १९३३

चि० मनु और मावो,

तुम दोनोके पत्र मिले। मै तुम लोगोकी लिखावटसे अभी सन्तुष्ट नही हूँ। अक्षर सुधारो तो अच्छा होगा। मुझे पत्र लिखा करना। दौरेमे कई बार ऐसा महसूस होता है कि यदि तुम लोगोके साथ घूमता होता तो कितना अच्छा होता। छोटे बच्चोंको लेकर चलनेमे मुझे निश्चय ही आनन्द होता है, और वह भी दाण्डी यात्राकी तरह पाँव-प्यादे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१६२) से; सौजन्य : वालजी गो० देसाई

३१५. प्रत्येक सवर्ण हिन्दू याद रखे[1]

प्रत्येक सवर्ण हिन्दू याद रखे कि २५ सितम्बर, १९३२ को बम्बईमे पंडित मदनमोहन मालवीयकी अध्यक्षतामे इसके प्रतिनिधियोंकी जो सभा हुई थी उसने निम्नलिखित प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे पास किया था :

> यह सम्मेलन निश्चय करता है कि अब आगेसे हिन्दुओंमें किसी व्यक्तिको उसके जन्मके कारण अस्पृश्य नहीं माना जायेगा, और जिन लोगोंको अभीतक अस्पृश्य माना जाता रहा है उन लोगोंको सार्वजनिक कुओं, सार्वजनिक स्कूलों, सड़कों तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओंका उपयोग करनेके मामलेमें वे ही अधिकार प्राप्त रहेंगे जो अन्य हिन्दुओंको प्राप्त हैं। इस अधिकारको पहला अवसर मिलते ही कानूनी मान्यता प्रदान की जायेगी, और स्वराज्य मिलनेसे पहले ही यदि इसे कानूनी मान्यता नहीं प्राप्त हो चुकी होगी तो स्वराज्य संसद सबसे पहले कानूनोंमें से एक कानून इस सम्बन्धमें बनायेगी।
>
> यह भी स्वीकार किया जाता है कि इस समय तथाकथित अस्पृश्य जातियोंपर जो परम्परागत सामाजिक निर्योग्यताएँ लदी हुई है, जिनमें कि

१. इस लेखको *हरिजन* के ८, २२ और २९ दिसम्बरके अंकोंमें भी प्रकाशित किया गया था। देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ १४८-९ भी।

मन्दिर-प्रवेश सम्बन्धी निषेध भी शामिल है, उन्हे प्रत्येक वैध और शान्तिपूर्ण तरीकेसे शीघ्र ही हटवाना सभी हिन्दू नेताओका कर्त्तव्य होगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-१२-१९३३

३१६. टिप्पणियाँ

स्यालकोटके स्व० लाला गंगाराम

एक मित्रके पत्रसे मुझे स्यालकोटके लाला गंगारामके स्वर्गवासकी खबर मिली है। वे ६० वर्षकी अवस्थामे इसी ४ नवम्बरको एकाएक दिलकी धडकन बन्द हो जानेसे परलोक सिधार गये। १९१९ मे लाहोरमे स्वर्गीय रामभजदत्त चौधरीके मकानपर उनसे मिलनेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मुझसे उनका परिचय एक हरिजन-कार्यकर्त्ताके रूपमें कराया गया था। हरिजन-सेवाके अर्थ उन्होने अपना जीवन अर्पण कर दिया था। उन्होने हरिजनोकी नई बस्तियाँ बसवाई थी। हरिजन-कार्यको निश्चय ही उनके निधनसे हानि पहुँची है। स्वर्गीय लाला गगारामके कुटुम्ब तथा उनके प्यारे हरिजनोके प्रति मै सवेदना प्रकट करता हूँ।

बर्बादी न की जाये

जो कोई चाहे उसे फूलोकी माला और गुलदस्ते भेट करनेका अवसर देकर स्वागत समितियाँ इस आदतको प्रोत्साहित करती रही है। मेरा जो दौरा दलितसे-दलित लोगोंकी सेवाके लिए शुरू किया गया है, उसमे इस तरहकी भेंटोसे समय और धन दोनोका ही अपव्यय-सा हो रहा है। अगर मालाएँ भेट करनी ही है तो वे सूतकी समूची लच्छियोके रूपमे हों, जिससे वे बुननेके काममे तो आ सके। बहुत-से हरिजन जुलाहे हाथके कते सूतके अभावमे बेकार बैठे है। वे मिलके कते सूतको नही बुनते। सबसे अच्छा तो यह होगा कि हार पहनाये ही न जाये और जहाँ बिना हारोके स्वागत-सत्कार अधूरा समझा जाये, वहाँ उन हारोके साथ पैसे भी रहे। वण गाँवसे हारोके साथ-साथ रुपये-पैसे देनेकी प्रथा चल पडी है, और अबतक दानकी जो रकम प्राप्त हुई है उसमे इस प्रकारकी भेंटके कई सौ रुपये शामिल है। इस देशमे भूखे तथा तिरस्कृत लोगोके हाथमे एक पैसेका क्या अर्थ होता है, जनताको इसका विचार करना चाहिए। उड़ीसाके बेचारे बाढ-पीड़ित भूखे लोगोके लिए दानमे प्राप्त धनसे प्रत्येक व्यक्तिको कुछ भोजन मिलता है। जिन्हें सन्देह हो, वे हरिजनोके रहनेकी झोपडियाँ देख ले। वे हिंगनघाटमे जाकर नीचाईमे बसी हुई हरिजन-बस्ती देखे, जहाँ बरसातके दिनोमे गुजारा करना लगभग असम्भव है। तब वे यह बात समझ सकेगे कि हरिजनको दिये हुए एक-एक पैसेका कितना बडा मूल्य है। मै तो यही चाहता हूँ कि जनता अपना एक-एक पैसा बचाये और हरिजनोके

निमित्त मुझे दे दे। सवर्ण हिन्दुओंपर हरिजनोंका बड़ा भारी ऋण चढ़ा हुआ है। यह दान उस भारी कर्जेकी आंशिक अदायगी-स्वरूप होगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-१२-१९३३

३१७. स्कूलकी पुस्तकें

इसमें तो मुझे कोई सन्देह ही दिखाई नहीं देता कि सार्वजनिक स्कूलोंमें जो पुस्तकें, खास तौरपर बच्चोंकी पुस्तकें, पढ़ाई जाती हैं वे चाहे हानिकर न होती हो, लेकिन ज्यादातर बेकार होती हैं। इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि उनमें से बहुत-सी किताबें चतुराईसे लिखी होती है। यह भी हो सकता है कि जिन लोगोंके लिए और जिस वातावरणको ध्यानमें रखकर वे लिखी गई हो उस दृष्टिसे वे उत्तम हों। लेकिन वे भारतीय बालक-बालिकाओंके लिए नहीं लिखी गई हैं और न ही भारतीय वातावरणको ध्यानमें रखकर लिखी गई हैं। इस प्रकारसे लिखी गई पुस्तकें सामान्यतः बिना सोचे-समझे की गई नकल मात्र होती हैं, जिनसे विद्यार्थियोंकी आवश्यकताएँ पूरी नहीं होतीं। इस देशमें, प्रान्तों और वर्गोंके अनुसार बच्चोंकी आवश्यकताएँ भिन्न-भिन्न हैं। उदाहरणके तौरपर, हरिजन बच्चोंकी आवश्यकताएँ, कमसे-कम प्रारम्भिक अवस्थाओंमें, दूसरे बच्चोंसे अलग होती हैं।

इस कारण मैं तो इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि विद्यार्थियोंकी बनिस्बत शिक्षकोंके लिए पुस्तकें ज्यादा जरूरी है। और प्रत्येक शिक्षकको, यदि वह अपने विद्यार्थियोंके साथ पूरा न्याय करना चाहता है तो, उपलब्ध सामग्रीमें से दैनिक पाठ तैयार करना होगा। इसे भी उसे अपनी कक्षाकी विशेष आवश्यकताओंके अनुकूल बनाना होगा।

सच्ची शिक्षाका काम पढ़ने-लिखनेवाले लड़कों और लड़कियोंके उत्तम गुणोंको विकसित करना है। यह काम विद्यार्थियोंके मस्तिष्कमें अनापशनाप और अनचाही जानकारी ठूँस देनेसे नहीं हो सकता। इस तरहकी जानकारी एक बोझ बन जाती है जो बच्चोंकी सारी मौलिकता नष्ट कर देती है, और उन्हें यन्त्रवत बना देती है। अगर हम स्वयं इस प्रणालीके शिकार नहीं होते तो हम बहुत पहले ही यह अनुभव कर लेते कि सामूहिक शिक्षा देनेके मौजूदा तरीकेने कितना अनिष्ट किया है, विशेषकर भारतके मामलेमें।

बेशक बहुत-सी संस्थाओंने कम-ज्यादा सफलताके साथ अपनी पाठ्य-पुस्तकें खुद तैयार करनेके प्रयत्न किये हैं। लेकिन मेरी रायमें तो इन पुस्तकों द्वारा इस देशकी *अत्यावश्यक जरूरतोंकी पूर्ति नहीं होती।*

मैंने जिन विचारोंका यहाँ प्रतिपादन किया है उनके मौलिक होनेका मैं कोई दावा नहीं करता। उन्हें यहाँ हरिजन स्कूलोंके व्यवस्थापकों और शिक्षकोंके लाभके लिए दोहराया गया है, जिनके सामने एक जबरदस्त काम करनेको पड़ा है। वे महज इस प्रकारके यान्त्रिक कार्यसे सन्तुष्ट नहीं हो सकते जिसमें कि उनकी देखरेखमें

पढ़नेवाले वच्चे चाहे जैसी चुनी हुई पुस्तके वेमनसे और तोतेकी तरह सीखे। उन्होने वडी जिम्मेदारीका काम हाथमे लिया है जिसे उन्हे साहस, बुद्धि और ईमानदारीके साथ पूरा करना है।

काम काफी मुश्किल है लेकिन इतना मुश्किल नही जितना लगता है, वशर्ते कि शिक्षक या व्यवस्थापक इस काममे अपना पूरा दिल लगा दे। यदि वह अपने विद्यार्थियोके लिए पितावत वन जाये तो वह सहज ही जान लेगा कि उनकी आवश्यकताएँ क्या है, और वह उन्हे पूरी करनेमे लग जायेगा। अगर उसमे वह देनेकी योग्यता नही है जो वच्चोके लिए आवश्यक है, तो वह वैसी योग्यता प्राप्त करनेकी कोशिश करेगा। और यह देखते हुए कि हमने शुरुआत इस खयालसे की है कि लडके-लडकियोको उनकी आवश्यकतानुसार शिक्षा दी जानी है, हरिजन वालको अथवा अन्य वच्चोके शिक्षकमे किसी असाधारण चतुराई अथवा वाह्य ज्ञानका होना जरूरी नही है।

और अगर इस वातको ध्यान रखा जायेगा कि सारी शिक्षाका मूल उद्देश्य विद्यार्थियोके चरित्रका निर्माण करना है अथवा होना चाहिए, तव जिस शिक्षकके पास चरित्र है उसे तो हिम्मत हारनेकी जरूरत ही नही है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-१२-१९३३

३१८. नरक नहीं, महानरक

उडीसाके एक हरिजन-सेवकने वालासोर जिलेमे भद्रकके समीपकी कुछ हरिजन वस्तियोको देखनेके वाद उनका वडा सजीव वर्णन मेरे पास भेजा है[1]

यदि मलेरिया, प्लेग और हैजा हमेशा हमारे यहाँ डेरा डाले रहते है तो भला क्या इसमे कोई अचरजकी वात है? जवतक हम समाजके इस उपयोगी वर्गकी उपेक्षा करते रहेगे, गन्दीसे गन्दी जगहोमे उन्हे रखेगे और जवतक इस अस्पृश्यता-रूपी राक्षसीके कारण उन्हे उनके काम-धन्धोको उचित और अच्छे तरीकेसे करने की शिक्षा नही देगे, तवतक इन वीमारियोसे वचना असम्भव है। देशके तमाम कार्यकर्त्ताओको मेरी सलाह है कि जहाँ कही वे ऐसा 'नारकीय स्थल' देखे, उसे नेस्तनाबूद करनेकी वे जी-तोड कोशिश करें। यह देखकर, कि यह तो एक भगीरथ कार्य है, हमे हिम्मत नही हारनी चाहिए। यदि प्रत्येक व्यक्ति सामने आये कामको लगनके साथ करे तो स्थिति अपने-आप सुधर जायेगी। इसलिए मै भद्रकके हरिजन-सेवकोको सलाह दूँगा कि वे

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने हरिजनोंकी वस्तीकी दुर्दशा, वहाँकी गन्दगी, दुर्गन्धपूर्ण वातावरण और वरसातके पानीसे भरी गलियों और चारों ओर फैली कीचड़का सविस्तार चित्रण करते हुए गांधीजीके २३-९-१९३३ वाले "एक और नरक" शीर्षक लेखका जिक्र किया था और लिखा था कि यदि आप यह वस्ती देख लें तो आप इसे 'महानरक' वतायेंगे।

बस्तीके सुधार की एक सादी-सी योजना और बजट तैयार करके यहाँके व्यापारियोंके पास ले जायें और समतल जमीनको ठीक करके वे पन्द्रह घरोंको नये सिरेसे बना डाले। इसमें कुछ बहुत खर्च नही होगा। मुझे इसमे सन्देह नही कि अगर उचित प्रयत्न किया जायेगा, तो योजनाको कार्यरूप देने लायक पैसा वे जमा कर सकेंगे। दानियोंको मालूम होगा कि वे अपने दानके पैसेको एक स्वास्थ्य-वृद्धिकारी काममें लगा रहे हैं। यह तो उनके लिए अपने घरके आँगनको व्यवस्थित करनेके समान होगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-१२-१९३३

३१९. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

इटारसी
१ दिसम्बर, १९३३

भाईश्री वल्लभभाई,

इटारसीकी धर्मशालामे सवेरे सवा तीन बजे मै यह पत्र लिख रहा हूँ। मीरा-बहन मुंह धोने गई है। बादमे प्रार्थना होगी। उसके तुरन्त बाद करेलीके लिए ट्रेन पकड़नी है और वहाँसे हमे अनन्तपुर जाना है। अनन्तपुरमे जेठालाल[1] काम करते है। कल हम बैतूलमें थे और वहाँसे ट्रेन द्वारा इटारसी आकर सभा की और धर्मशालामें सोये।

तुम्हारा पत्र मिला है। 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में जो-कुछ लिखा जा रहा है उसका हम कहाँ तक प्रतिरोध करें? तथापि मुझे जो सूझता है वह तो मै करता ही रहता हूँ। आजकल तो समाचारपत्र पढ़नेको कम ही मिलते है। हरिजनोंके हमारे इस कार्यको हरि (भगवान) देखते रहते हैं, मुझे तो ऐसा ही प्रतीत होता है। जो शक्ति हर जगह से लाखो मनुष्योको खीचकर ले आती है वही शक्ति झूठका भी पर्दाफाश करेगी। हम यदि कोई गफलत न करें तो समझो कि गंगा नहाये।

मुझे मालूम है कि तुम्हारी आत्मा हर समय मेरे साथ लगी रहती है। कौन जाने वही मेरी रक्षा नही करती हो? तुम्हारे हृदयमे माँ का प्रेम है, इस बातका अनुभव क्या मैंने यरवडामे प्रतिक्षण नही किया? तुम्हारे पत्रोमे भी तुम्हारा यह गुण जहाँ-तहाँ लक्षित होता है, और यह गुण सर्वव्यापी है, यह भी मैंने देखा है। और इसीलिए तुम वहाँ बैठे-बैठे सावधानीपूर्वक हम सभीकी देखभाल करते ही रहते हो।

मेरी चिन्ता न करना। जो हो रहा है, उसकी चिन्ता भी न करना। यह भगवानका कार्य है। "बिगरी कौन सुधारे नाथ (बिन) बिगरी कौन सुधारे।"

१. जेठालाल गोविन्दजी सम्पत। देखिए "अनन्तपुरमें मैंने क्या देखा?" १५-१२-१९३३।

अब हम ट्रेनमे है। मै समझता हूँ कि नाककी तकलीफके लिए जो उपचार करना जरूरी होगा सो तुम अवश्य ही करोगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ४९-५०

३२०. टिप्पणी : इटारसीकी धर्मशालाके सम्बन्धमें

१ दिसम्बर, १९३३

इस धर्मशालेमे हम लोगोको आश्रय दिया गया इसके लिये हम सब सचालकोका आभार मानते हैं। यह जानकर कि स्वच्छतासे रहनेवाले हरिजनोको भी स्थान मिलता है बहुत हर्ष हुआ।

मो० क० गांधी

मध्यप्रदेश और गांधीजी, पृष्ठ ११७ पर प्रकाशित अनुप्रति से।

३२१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२ दिसम्बर, १९३३

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। इसमे सत्यवादिता है, इसलिए मै इसे अच्छा कहता हूँ। मै जानता था कि तुम अपने-आपको और मुझे धोखा दे रही थी। क्या अब तुम मुझे बताओगी कि तुम्हारी प्रकृतिकी क्या माँग है? यदि उसकी यही माँग हो कि तुम मेरे पास रहो, तो इसे सन्तुष्ट नही किया जा सकता। यदि उसकी महज यह माँग हो कि तुम अध्यापन-कार्य करो और ऐसा जीवन व्यतीत करो जो अधिकांश यूरोपीयोके लिए स्वाभाविक है, तो मै सफलताकी आशा रखते हुए तुम्हारी मदद करनेकी कोशिश करूँगा। जब जमनालालजी वापस लौटे तब तुम्हे उनके साथ सलाह करनी चाहिए। इस बीच तुम द्वारकानाथजीसे सलाह लो। तुम्हें स्थिरचित्त और बहादुर बनना चाहिए। मृत्युकी इच्छा करना कायरता है। तुम्हारे आसपास ऐसा कोई व्यक्ति नही है जो तुम्हे दबाकर रखना चाहता हो। तुमने अपने सामने कठिनाइयोका एक पहाड ही खड़ा कर लिया है। तुम्हे निश्चयपूर्वक अपना चुनाव करके उसपर अमल करना चाहिए।

अब सुबहके साढ़े तीन बज रहे हैं। मैं हमेशाकी तरह सुबह ३ बजे उठता हूँ। हाथ-मुँह धोनेके बाद ही मैंने तुम्हारा पत्र पढ़ा और यह पत्र लिखने लगा। तुम्हें बुद्धिमान और आश्वस्त बनना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

३२२. पत्र: विद्या आनन्द हिंगोरानीको

२ दिसम्बर, १९३३

चि० विद्या,

तमारी मानसिक स्थिति अच्छी होगी। घूमनेके लिये जाती है? क्या खाती है? परीक्षाका लोभ छोडो लेकिन पढ़नेका लोभ मत छोड़ो। जो समय मिले उसमें हिंदी अच्छा बना लो। और हिंदी पक्का होनेसे इंग्रेजीपर जोर देना आज भी करो सही लेकिन प्रथम स्थान हिंदी को दो। दा० चोइतरामको मेरा खत मिल गया था? कुछ पता है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

३२३. भाषण: सागरमें

२ दिसम्बर, १९३३

यह मेरे तथा मेरे अनुष्ठान और हरिजन-सेवाकार्यके लिए एक शुभ लक्षण है कि मेरे लिए लोग इतनी बड़ी तादादमें आये हैं। मुझे विश्वास है कि ये वाकई हिन्दू समाजसे अस्पृश्यताके अभिशापको निकाल देना चाहते हैं। परमात्माकी आंखोंमें सब बराबर हैं और सबोंको सार्वजनिक कुओं, पाठशालाओं और मन्दिरोंके उपयोगका समान अधिकार है। वर्तमान आन्दोलनका उद्देश्य आत्मशुद्धि है और किसीको अपनेको ऊँचा या नीचा नहीं समझना चाहिए।

भारतमें अस्पृश्यता जिस रूपमें प्रचलित है वैसी किसी दूसरे देशमें नहीं मिलती तथा 'मनुस्मृति' में भी इसका समर्थन नहीं किया गया है। मैं नास्तिक नहीं हूँ। मुझे ५० सालका अनुभव है, और ऐसा भेदभाव मैंने कभी नहीं माना है।

सनातनियोंके एक लम्बे पत्रका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि मैंने अधर्मका पालन नहीं किया है। अगर मैं ऐसा करता तो मैं ईश्वर, मनुष्य, दोनोंकी ही आँखोंमें दोषी ठहरता।

अगर मैं अकेला भी रह गया तो भी मैं इसी बातका उपदेश दूँगा।

आगे बोलते हुए उन्होंने श्रोताओंको यह सलाह दी कि आप सनातनियोंका अपमान न करें या उन्हें ठेस न पहुँचायें, बल्कि उन्हें वैसा ही प्यार करें जैसे माँ अपने बच्चेको प्यार करती है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि एक दिन ऐसा आयेगा जब सनातनी भी मेरे साथ हो जायेंगे।

हरिजनोंको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा कि आप लोग सफाईकी आदत डालें तथा मुर्दार मांस खाना छोड़ दें और मद्य-पानका त्याग करें। उन्होंने ईश्वर-प्रार्थनाकी प्रभावकारितापर जोर दिया और हरिजनोंको रोज सवेरे हिन्दीमें प्रार्थना करनेकी सलाह दी, क्योंकि प्रार्थनाके लिए संस्कृतका ज्ञान कोई जरूरी नहीं है। गांधीजीने अपने ५० सालके अनुभवका उदाहरण सामने रखते हुए बताया कि किस प्रकार संकटके क्षणोंमें ईश्वरने मेरी मदद की है। उन्होंने कहा कि मन्दिरोंमें जानेके लिए आपको पहले स्नान करना चाहिए और साफ-सुथरे कपड़े पहनने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-१२-१९३३

३२४. भाषण : जबलपुरकी सार्वजनिक सभामें

३ दिसम्बर, १९३३

यदि ऊँच-नीचके भेदको समूल नष्ट कर देनेका यह प्रयत्न सफल हो जाता है तो जीवनके सभी क्षेत्रोंमें इसकी स्वस्थ प्रतिक्रिया होगी और पूँजी और श्रमके बीच लडाई खत्म हो जायेगी और उसके स्थानपर दोनोंमें सहयोग और एकता स्थापित हो जायेगी।[1] यदि हमने अस्पृश्यताके विरुद्ध इस लडाईके सारे फलितार्थोंको समझ लिया है तो हमें यह जाननेमें कोई कठिनाई नहीं होगी कि जन्मपर आधारित अस्पृश्यता तो उस अभिशापके असंख्य रूपोंमें से मात्र एक रूप है। वैसी स्थितिमें स्वतन्त्रता और साम्प्रदायिक एकताका जो लक्ष्य मुझे अत्यन्त प्रिय है उसको हम ज्यादा अच्छी तरह पूरा कर सकेंगे। इस आन्दोलनमें मेरा विश्वास दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है। मुझे दृढ़ विश्वास है कि यदि हम हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यता समाप्त करनेमें सफल हो जाते तो आज भारतमें जो हम वर्गों और सम्प्रदायोंके बीच लडाई देख रहे हैं वह खत्म हो जायेगी। हिन्दू और मुसलमानोंके बीच तथा पूँजी और श्रमके बीचका मतभेद समाप्त हो जायेगा। एक बार हृदय शुद्ध हो गये तो हार्दिक एकताकी स्थापनाके

१ स्थानीय श्रमिकसंघ द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दनपत्रमें यह पूछा गया था कि गांधीजी मजदूरोंकी दशा सुधारनेके लिए और उनको पूँजीपतियोंके शोषणसे बचानेके लिए काम क्यों नहीं करते।

मार्गमें जितनी कठिनाइयाँ हैं उनपर पार पाना सरल हो जायेगा। इस समय हम समस्याके जिस पहलूका सामना कर रहे है उससे लड़ाईकी सारी सम्भावनाएँ समाप्त नही हो जाती। आज हिन्दू-धर्ममे अस्पृश्यता जिस रूपमे प्रचलित है वह सारे पहलुओमे सबसे खराव है। धर्मके छद्म नामसे चलनेवाली अस्पृश्यताने मनुष्यके हाथो मनुष्यके पतनमें सबसे ज्यादा योग दिया है। मै कह चुका हूँ कि अस्पृश्यता एक असख्य सिरोवाला दानव है जो विभिन्न आकृतियो और रूपोमे दृष्टिगोचर होता है, और इनमें कुछ तो इतने सूक्ष्म है कि उन्हे आसानीसे पहचाना भी नही जा सकता। अस्पृश्यताकी कई श्रेणियाँ है। अपने जीवनके सध्याकालमे जब मैंने इस सघर्षको हाथमें लिया और इस काममे अपनी पूरी ताकत लगा देनेका निश्चय किया, उस समय मैं इन सब फलितार्थोसे परिचित था।

सभी सच्चे स्काउटोंको मेरा आशीर्वाद है,[1] ससारके बहुतसे भागोकी यात्राओके दौरान मैं हजारों ब्वॉय स्काउटोके सम्पर्कमे आया हूँ। सच्चे स्काउट बहादुर, दूसरेका ध्यान रखनेवाले, शिष्ट और होशियार होते हैं। उन्हे अपने कर्त्तव्यके प्रति पूरी तरह जागरूक होना चाहिए। देशके असंख्य मेलोमे जहाँ लाखों लोग इकट्ठे होते है, वे व्यवस्था बनाये रखनेका काम करते रहे है। मै यह भी चाहूँगा कि वे अपना कुछ समय हरिजनोंकी सेवामे भी लगायें। जो भी व्यक्ति हरिजनोके घरोको मेरी आँखोसे देखेगा उसे विश्वास हो जायेगा कि जो लोग सेवा करनेके इच्छुक है और जिनमे इसकी क्षमता है उन लोगोके लिए वहाँ काम करनेकी काफी गुंजाइश है। इस काममें कोई असाधारण बुद्धिमानी की आवश्यकता नही है। सिर्फ जिस एक चीजकी आवश्यकता है वह है हरिजनोके साथ तादात्म्य स्थापित करने की।

इस मार्गमे अड़चनोका कोई अन्त नही है, लेकिन एक भी अड़चन ऐसी नही है जिसकी कोई दवा न हो। किसी धार्मिक आन्दोलनकी तो खूबसूरती ही इस बातमे है कि इसकी प्रगतिमे बाधा डालनेवाली सारी कठिनाइयाँ अपने-आप दूर हो जाती है। ईश्वर स्वयं रास्ता साफ कर देता है। रास्ता तो वही दिखाता है, हम तो उसके हाथ की कठपुतलीमात्र है। यदि हम ईश्वर और मनुष्यके प्रति चले आ रहे इस युगो-पुराने पापके विरुद्ध लडनेके लिए कमर कस ले तथा शास्त्रोने जो नियम निर्धारित किये है और पुराने ऋषियोने जिनका अनुसरण किया है, उन नियमोंका पूरी तरह पालन करें, तथा अपने इस काममे नम्रतापूर्वक ईश्वरसे सहायताकी प्रार्थना करें तो निश्चय ही ईश्वर हमपर कृपालु होगा। इन नियमोकी माँग है कि सत्य और अहिंसाका पूरी तरह पालन किया जाये तथा अधिकसे-अधिक त्याग और कष्ट-सहन किया जाये। यदि हममे ये सब चीजे है, और इससे भी ऊपर, अपने विरोधियोके लिए दयाकी भावना और सद्भावना है, तो कठिनाइयाँ चाहे कितनी भी ज्यादा क्यो न हो, निश्चित ही दूर हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-१२-१९३३

१. नेशनल ब्वॉय स्काउट्सने गांधीजीको एक अभिनन्दनपत्र भेंट किया था।

३२५. तार: व्रजकृष्ण चाँदीवालाको

जबलपुर
४ दिसम्बर, १९३३

व्रजकृष्ण चाँदीवाला
कटरा खुशालराय
चाँदनी चौक, दिल्ली

तुम्हारा तार और पत्र मिले। मैं अन्सारीसे सलाह-मशविरा कर रहा हूँ। ईश्वर तुम्हे सुखी रखे। बादमे तार दूँगा। सप्रेम।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २४०३) से।

३२६. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

जबलपुर
४ दिसम्बर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

कल रात हम जबलपुर पहुँचे। अब ६ ३० बजे है। तुम्हारा पत्र कल कटनीमे मिला। मैं अनन्तपुरका काम देख आया हूँ। सब कुछ ठोस है, इसलिए उसकी गति धीमी है। जेठालाल जबरदस्त कार्यकर्त्ता है।

गोरधनभाई मेरे व्यवहारसे बहुत अप्रसन्न है। मैं उन्हे सन्तुष्ट करनेका प्रयत्न तो कर रहा हूँ। उनका विचार विदेशमे पैसा खर्च करनेका है। मैंने वैसा करनेसे इनकार कर दिया है। वसीयतनामेके बारेमें अभी उन्होने मुझसे पूछा नही है। यदि वे पूछेगे तो तुमने जो लिखा है उसे मैं सहज ही याद रखूँगा। यह सब-कुछ विचित्र तो लगता ही है। लेकिन जो हमने सुना है यदि वैसा ही हुआ हो तो मुझे आश्चर्य नही होगा। जो सच होगा वह सामने आ जायेगा। आज बडे लोगोके आनेकी सम्भावना है। मैं देखता हूँ कि कल सब मिलेगे।[1] हमारे रहनेका प्रबन्ध अलग-अलग स्थानपर होगा। 'बुवाजी' भी आ रही हैं। कदाचित् अन्सारी भी आये।

व्रजकृष्ण मृत्युशय्या पर है। उपवासके समय उन्होने मेरी अनन्य भावसे सेवा की थी, यह बात तो तुम जानते ही हो। उनकी खबर लेता रहता हूँ। सेवा-शुश्रूषा हो रही है। डा० अन्सारीका तार मिला है कि कदाचित् वह बच जायेगे।

१- जबलपुरमें कांग्रेस कार्यकारिणी समितिकी एक अनौपचारिक बैठक होनेवाली थी।

महादेवको साथी[1] मिलनेका समाचार तो मुझे तुमसे ही मालूम हुआ। (छगनलाल) जोशी सानन्द है। बा की खबर कल यहाँ आनेके बाद ही मिली; ठीक हुआ।

हरिजन-सेवाका कार्य अच्छी तरहसे चल रहा है। अभीतक तो सब-कुछ ठीक ही चल रहा है, ऐसा कहा जा सकता है।

तुम दोनोको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ५०-१

३२७. पत्र : गोदावरीको

४ दिसम्बर, १९३३

चि० गोदावरी[2],

आया हूं तबसे तुमको मिलनेके लिये तरस रहा हू। प्रात.काल मे मुझे राजेंद्रसिंहने[3] पूछा और मैंने ८ बजे आनेका कहला भेजा। लेकिन दिल चाहे तब आनेका तुमको पूरा अधिकार है।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९६७० से।

३२८. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

५ दिसम्बर, १९३३

चि० अमला,

यह पत्र सुबहकी प्रार्थनाके समयसे पूर्व लिखा जा रहा है। मुझे तुम्हारा अगला पत्र भी मिल गया है। मुझे खुश करनेके लिए तुम्हें मुझसे बाते छिपानी नही चाहिए या अस्वाभाविक काम नही करने चाहिए। खुश करनेका यह तरीका गलत होगा। बिलकुल स्वाभाविक रहकर तुम मुझे ज्यादा खुश रख सकोगी। तुम्हारा अपना कमरा काफी अस्तव्यस्त है। तुम अपनी उँगलीपर ध्यान नही दे रही हो। अब जरूरी है

१. गिरधारी, जे० बी० कृपालानीके भाईके पुत्र।
२. सेठ गोविन्ददासकी पत्नी, जिन्हें १९३२ में गांधीजीने बेटीके रूपमें स्वीकार कर लिया था।
३. जबलपुरमें गांधीजी इनके अतिथि थे।

कि तुम चंगी हो जाओ। यदि तुम वहाँ अच्छी नही हो सकती हो तो तुम्हे पहाडपर चले जाना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

३२९. भाषण : माण्डलाकी सार्वजनिक सभामें[1]

६ दिसम्बर, १९३३

मै कह चुका हूँ कि जो लोग इन सभाओमे केवल इसलिए आते है क्योकि वे मेरी राजनैतिक सेवाओके प्रशसक है, इसलिए नही कि वे अस्पृश्यता-निवारणमे विश्वास करते है, वे लोग स्वय अपने-आपको और मुझे धोखा देते है। मै ऐसी सभाओमे केवल उन्ही लोगोको जानेका निमन्त्रण देता हूँ जो या तो इसके समर्थक है या विरोधी, और विरोधियोको उसी हालतमें जबकि वे विरोध प्रकट करना चाहते हो। मै चाहता हूँ कि आप अपने प्रति सच्चे रहे और यदि इस मामलेमे आप मुझसे सहमत न हो तो मुझे ठुकरा दे।

पडितोके दो दल है जिनकी शास्त्रोकी व्याख्या एक दूसरेसे भिन्न है। वैसी हालतमे साधारण मनुष्यको ईश्वर-प्रदत्त अपने ज्ञानका उपयोग करके दोनोमे से एकको चुनना पडता है।[2] मैने देखा है कि अस्पृश्यता न तो बुद्धिको और न हृदयको ही ठीक लगती है। हृदयकी मूल प्रेरणा तो पापीके प्रति दया और सहानुभूति प्रकट करनेकी ही होती है। मन्दिर पापियोके लिए बने हुए है जहाँ जाकर वे अपने पाप धो सकते है। एक मुक्त और निष्पाप प्राणीके लिए जो सर्वत्र ईश्वरके दर्शन करता है, मन्दिरोका क्या उपयोग है? यदि आप ऐसा समझते है कि हरिजनोकी आज जो दुर्दशा है वह उनके पिछले पापोका फल है तो आपको यह मान लेना चाहिए कि उन्हे मन्दिरोमे सबसे पहले पूजा करनेका अधिकार है। ससारके सभी धर्म-ग्रथोमे ईश्वरको पापियोका रक्षक और उद्धारक कहा है।

शास्त्रोमे अस्पृश्यताका उल्लेख एक विशेष अर्थमे है। मनमे उठनेवाले काम और क्रोध आदि बुरे विचार ही वास्तविक अस्पृश्य है। शास्त्रोकी व्याख्या इस रूपमे

१. इससे पहले सभामें गांधीजीकी आज्ञासे एक सनातनी स्वामीका भाषण हो चुका था। उन्होंने अपने भाषणमें इस बातपर जोर दिया था कि गांधीजीको श्रद्धांजलि देनेके लिए जो असंख्य लोग आते हैं वे उन्हें एक राजनीतिक नेता मानकर आते है, न कि इसलिए कि वे अस्पृश्यता-सम्बन्धी उनके विचारोंसे सहमत हैं।

२ जो मानपत्र भेंट किया गया था उसमें सुधारवादी शंकर तथा कर्मकाण्डी मण्डनमिश्रके बीच हुए वाद-विवादका उल्लेख था जो प्राचीन विद्या-केन्द्र, महिष्मतीमें, जो अब माण्डलामें है, सम्पन्न हुआ था।

करना जिसमें कि आज हम जो भेदभाव बरतते हैं, वे शास्त्रसम्मत प्रतीत हों, शास्त्रोंका दुरुपयोग करना है। एक सच्चा धर्मनिष्ठ व्यक्ति अपनेको पापी और इसीलिए अस्पृश्य मानेगा। हमने अपने अहंकारवश अबतक शास्त्रोंकी गलत व्याख्या की है, और जो चीज पाप है उसे धार्मिक सिद्धान्त का दर्जा दे दिया है। मैं अपनेको सच्चा सनातनी मानता हूँ, क्योंकि मैं सत्यको जिस रूपमें देखता हूँ उस रूपमें उसका पालन करनेके लिए यथाशक्ति जितना प्रयत्न कर सकता हूँ उतना करता हूँ। संसारमें विविधता तो निश्चित रूपसे है, लेकिन इसका अर्थ न तो असमानता है और न अस्पृश्यता ही। हाथी और चींटी एक जैसे नहीं हैं। किन्तु ईश्वरका कहना है कि उसकी आँखोंमें वे दोनों बराबर हैं। समस्त जीवोंमें भीतरी एकता व्याप्त रहती है। रूप अनेक हैं, लेकिन उनके अन्दर मौजूद आत्मा एक है। जहाँ ऊपरसे दिखनेवाली विविधतामें ऐसी सर्वग्राही मौलिक एकता अन्तर्निहित हो वहाँ ऊँच और नीचके भेद की गुंजाइश कैसे हो सकती है? यह एक ऐसा तथ्य है जिससे आपका दैनिक जीवनमें पग-पग पर सामना होता है। सब धर्मोंका चरम लक्ष्य इस मूल एकताकी स्थापना है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-१२-१९३३

३३०. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

७ दिसम्बर, १९३३

कस्तूरबा गांधीको
मो० क० गांधीकी ओरसे
यरवडा जेलके जेल-अधीक्षककी कृपापूर्ण अनुमति मिलने पर।

बा,

रणछोडभाईकी मार्फत भेजा पत्र तुझे मिल गया होगा। अपने स्वास्थ्यको बनाये रखना। तनिक भी चिन्ता न करना। कोई भी सोच-विचार करनेकी जरूरत नहीं। मेरे जीवनको ईश्वरके हाथ सौंप देना। ईश्वरके अलावा देखभाल करनेवाला दूसरा कौन हो सकता है? मेरी खुराक वही चलती है। सब जगह पेड़े तैयार होते हैं। ज्यादातर तो मैं उन्हें ले लेता हूँ। कभी-कभी इनकार भी कर देता हूँ। मीराबहन और ओम मेरी सेवा करती हैं। मीराबहन तो रात-दिन एक ही धुनमें रहती है। कहीं भी सभामें नहीं आती। मेरे लिए सब-कुछ तैयार रखनेमें ही अपना समय बिताती है। उसकी तबीयत ठीक रहती है। मुझे जुकाम अवश्य हो गया था, लेकिन अब ठीक हूँ। आज जबलपुरमें हूँ। यहाँ गोपीके माँ-बाप रहते हैं। मैं उनसे मिला, उसकी छोटी बहनसे भी मिला। गोविन्ददासका[1] घर भी यहीं है। ब्रजकृष्ण अभी

1. सेठ गोविन्ददास।

खासा बीमार है। उसे पत्र लिखवाना। प्रभावतीके पत्र आते हैं। अपनी खुराक ठीक रखना। कुछ मँगवाना हुआ तो रणछोडभाई अथवा चिमनलालकी मार्फत मँगवाना। तेरा मुँह और पैर कैसे हैं? तेरे साथ कौन रहता है? मुझे वर्धाके पतेपर पत्र लिखना। सब बहनें आनन्दपूर्वक होंगी। अमतुस्सलामसे कहना कि मैंने उसे पत्र लिखा है। मणिको कहना कि मुझे लिखे। उम्मीद है, वह ठीक होगी।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृष्ठ १-२

३३१. पत्र : नारणदास गांधीको

७ दिसम्बर, १९३३

चि० नारणदास,

चि० पुरुषोत्तमकी सगाईके बारेमें मेरी हरखचन्द और जीवनलालके साथ बातचीत हुई है। वे दूसरे सम्बन्धके लिए उत्सुक हैं और उनका आग्रह है कि फिलहाल मैं और कहीं रिश्ता करनेकी तजवीज न करूँ। इसलिए मैं और कोई तजवीज नहीं करता। मुझे लगता है कि हमें हरखचन्द की लडकीका हाथ अवश्य मिलेगा। तुम्हें इसकी जानकारी तो होगी ही। तुम्हारी याद बराबर मनमें रहती है। आशा है तुम सब कुशलपूर्वक होगे। मेरी गाडी तो ईश्वर चलाता ही रहता है। तुम सबको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८३९३ से भी; सौजन्य . नारणदास गांधी

३३२. पत्र : भाईलाल मोतीराम पटेलको

७ दिसम्बर, १९३३

भाई भाईलाल,

आपका पत्र मिला है। आप निष्ठापूर्वक हरिजनोंकी सेवा कर रहे हैं, यह देखकर खुशी होती है। भगवान करे कि अन्त तक आपकी यही निष्ठा बनी रहे और आपकी सेवा फलीभूत हो।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३००) से।

३३३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

जवलपुर
७ दिसम्बर, १९३३

भाईश्री वल्लभभाई,

गोरधनभाईका मुझे एक वहुत ही लम्बा पत्र आया था उसे मैं सँभाल कर तो क्या रखता? उसमें मेरे दोषोंका ही निरूपण किया गया था और विट्ठलभाईके गुणोंका बखान। मैंने उन्हें अत्यन्त स्नेहपूर्ण उत्तर दिया था। मुझे उसकी पहुँच नहीं मिली। मेरे पास जो रुपया[1] पड़ा हुआ है उसके सम्बन्धमें तो उन्होंने मुँह-जवानी कहलवाया था। उसके बारेमें मैंने मथुरादाससे कहा था कि उस धनका उपयोग विदेशोंमें तो किया ही नहीं जा सकता। तुमने देखा होगा कि अव उन्होंने मुझसे सार्वजनिक अपील की है। जो होना होगा सो स्वयमेव सामने आ जायेगा। मुझे उम्मीद है कि मैं स्थितिको सँभाल लूँगा। तुम निश्चिन्त रहना।

मैं बा को पत्र लिखता रहूँगा। इस वार उसे जेल जाना अच्छा नहीं लगा। लेकिन ईश्वर निभा लेगा। ठक्करबापाने मुझे तुम्हारा पत्र दिखाया था। इसमें उनका तनिक भी दोष नहीं है। मुझे परेशानी से बचानेका वे भरसक प्रयत्न करते हैं। वे ऐसे लोगोंको मेरे पास आने ही नहीं देते जो मुझे परेशान करें। बहुत टालते हैं, लेकिन कुछ तो टाले भी नहीं टलता। हम अनुभवसे सुधार भी करते रहते हैं। इस वारेमें भी चिन्ता न करना। 'हरि करे सो होय।"

किशोरलाल वीमार पड़ गया है। अभी कुछ ठीक है। वह वम्बईमें है, उसे लिखना।

जीवराजकी[2] सेहतपर काफी असर हुआ है। वे माथेरानमें रगवी होटलमें हैं।

मथुरादास सभामें आया था।[3] अभी मेरे साथ है। दिल्ली तक साथ रहेगा। उसकी भी सेहतपर काफी असर हुआ है। उसकी पीठमें दर्द होता है। ज्यादा घूम-फिर नहीं सकता। आराम ले तो शक्ति आ जाये। ऐसा कहा जा सकता है कि सभामें लोगोंने वातें की और चलते वने। मौलाना साहव और डाक्टर मुझसे अनुरोध-पूर्वक कह रहे थे कि अव मुझे आग्रह छोड़ देना चाहिए। मैंने उन्हें धर्मसंकट वताया, इसपर वे शान्त हो गये। वातचीत वहुत विस्तारपूर्वक हुई। नरीमन को कुछ भान है, ऐसा मुझे नहीं लगा। मैंने कहा कि एक लिखता है "विदर इंडिया", दूसरा लिखता है "विदर कांग्रेस", तव यदि मैं "विदर नरीमन" लिखूँ तो यह अन्यथा

१. केन्द्रीय विधान सभाके अध्यक्ष होनेके नाते विट्ठलभाईको जो वेतन मिलता था उसमें से हर महीने लगभग आधा वेतन वे गांधीजीके पास जमा करा देते थे। यहाँ गांधीजीका संकेत उसी रकमकी ओर है।

२. डॉ० जीवराज मेहता।

३. कांग्रेस कार्यकारी समितिकी बैठकमें।

तो नही होगा न? जवाहर तो जवाहर ही है। जमनालालजीके बारेमे तो मुझे लिखना ही क्या है? उन्होंने अपना वजन बढा लिया है। स्वास्थ्य अच्छा है। चिखलदामे उनके स्वास्थ्यमें अच्छा सुधार हुआ है। लेकिन उनके कानकी हालत तुम्हारी नाक जैसी है। एक नकटा और दूसरा कानकटा। दुखडा किसके आगे रोया जाये? लेकिन अब यदि इन्जेक्शनसे फायदा हो तो मुझे बताना। तुम नेति करना चाहते हो, यह बात तो मुझे पसन्द आई है। लेकिन सिखायेगा कौन? मैं अपनेको उसका विशेषज्ञ मानता हूँ। क्या मुझे विशेषज्ञके रूपमे वहाँ नही बुलाया जा सकता? यदि नेति करना ठीकसे न आता हो तो करते समय थोडा खून निकलता है। शुरू-शुरूमे सलाईका प्रयोग किया जाता है। तुम यह न करना। तुम्हारे लिए महीन कपड़ा ही काफी होगा। धीरे-धीरे करनेसे कोई परेशानी नही होती। कृष्णदास[1], महादेव और देवदासको मैंने ही सिखाया है। देवदासको खून निकलता था। इसका कारण जुदा था। इसलिए उसे छोडना पड़ा।

जानकीबहन जमनालालके साथ आई थी। रात दोनो लौट गये।

महादेवके पास गिरधारी गया है, यह बात तो मुझे तुमसे ही मालूम हुई थी। सुरेन्द्र और दरबारी[2] वर्धामे है। अब दोनो ठीक है। माधवजी[3] अभी-अभी रिहा हुए है। मुझसे मिलने आये है। आज कराडी जायेगे। वे चगे है। चन्द्रशंकर अपना काम बडे अच्छे ढगसे कर रहे है। काका और स्वामी चार-पाँच दिनोके लिए माथेरान गये है।

मैं १० तारीखको दिल्ली पहुँचनेवाला हूँ।

दोनोंको —

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ५१-३

३३४. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

७ दिसम्बर, १९३३

चि० विद्या,

तुमारा खत मिला। सकोच नहि रखनेका अर्थ यह है कि दूसरी बहनोके अथवा भाइयोके पास आवश्यक सेवा ले लेना।[4] यह काम हृदयकी नम्रतासे बन सकता है, लेकिन यह न बन सके वहा तक तो नोकरानी रखो। आस्ते आस्ते नौकरानीका महाविरा छोड दिया जाय और सब काम हाथसे किया जाय लेकिन यह शरीर

१. एक समय गाधीजीके सचिव।
२. सूरत जिलेके मद्य-निषेधक पारसी कार्यकर्ता।
३. माधवजी वि० ठक्कर।
४. देखिए "पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको", २६-११-१९३३।

संपत्ति बढनेपर ही हो सकता है। ऐसा न समजो कि यह सब एकाएक करनेका मैं कहता हूं। शक्ति अनुसार ही करनेकी बात है।

अब तो समजमें आया ना?

मुझे सब हाल लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्म से, सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

३३५. भाषण: लियोनॉर्ड थियोलॉजिकल कॉलेजमें

जबलपुर
७ दिसम्बर, १९३३

मैं संसारके महान धर्मोकी समानतामें विश्वास करता हूँ और मैंने शुरूसे ही दूसरे धर्मोको अपना धर्म समझना सीखा है, इसीलिए इस आन्दोलनमे शामिल होनेके लिए दूसरे धर्मोके अनुयायियोको आमंत्रित करने और उनका सहयोग लेनेमे कोई कठिनाई नही है। यह तो मेरे स्वभावका एक अंग है। यह आन्दोलन तो मुख्य रूपसे तथाकथित उच्च वर्गोके लोगोके लिए प्रायश्चित्त करनेका आन्दोलन है। अपने ही समाजके जिस एक अंगके साथ उन्होने जो अन्याय किये है, उसकी पीठपर जो सवारी की है, उस अन्यायके लिए अब उन्हे कीमत चुकानी है। यह आन्दोलन हिन्दू धर्मके नामपरसे इस शर्मनाक धब्बेको दूर करनेके लिए हिन्दू सुधारको द्वारा किया जानेवाला एक प्रयत्न है। मै यह कहनेमे नही हिचका हूँ कि अगर अस्पृश्यता जिन्दा रही तो हिन्दू-धर्मका नाश हो जायेगा। इसका विकल्प यही है कि अस्पृश्यता समाप्त हो जाये और हिन्दू-धर्म शुद्ध रूपमे विकसित हो। अन्धविश्वासके अन्धकार और सुधारके प्रकाशके बीच होनेवाला यह संघर्ष जीवन-मरणका संघर्ष है। यदि हिन्दू-धर्ममे यह सुधार हो जाता है तब मुझे इस बातमे तनिक भी शंका नही है कि यह केवल भारतकी सभी जातियोंकी ही नही, बल्कि समस्त मानवजातिकी सेवा होगी। मै इस सुधारको लानेके लिए किसी प्रकारकी जोर-जबर्दस्ती, जिसमे कानूनी कार्रवाई भी शामिल है, करनेका विचार नही कर रहा हूँ। ऐसा कहा जाता है कि इस समय विधान-सभाके सामने पेश किये गये दो विधेयकोके लिए समर्थन प्राप्त करनेके प्रयत्नमें मैं वास्तवमे कानूनी बाध्यकारिताकी नीतिका समर्थन कर रहा हूँ। इस प्रकारके विचारोके विरोधमे मैंने जो तमाम तर्क दिये है, उन्हे मैं यहाँ दोहराना नही चाहता, लेकिन मैं आपको इस बातसे आश्वस्त कर देना चाहता हूँ कि विधेयकोमे किसी प्रकारकी कोई बाध्यकारिता नही है। जो लोग उन्हें पढनेकी कोशिश करेगे वे मेरी रायसे सहमत होगे। यह सुधार तो अन्दरसे ही होना है। यह राजनीतिक आन्दोलन नही है। मैं इस बातसे इनकार नही करना चाहता कि इसके महान राजनीतिक परिणाम निकलेंगे,

लेकिन मैंने कभी एक क्षणके लिए भी इस आन्दोलनके माध्यमसे तथाकथित उच्च वर्गोके हिन्दुओके राजनीतिक उत्थानकी बात नही सोची है। मेरे विचारसे तो यह पूर्णतया शुद्धिका आन्दोलन है।

ये प्रारम्भिक बाते बता चुकनेके बाद मेरे लिए आपसे यह कहना आसान हो गया है कि इस आन्दोलनमे आप किन शर्तोपर मदद कर सकते है। आप लोगोको अस्पृश्यताके निवारण और उन्मूलनके लिए बनाई गई सोसाइटी अर्थात् सर्वेन्ट्स ऑफ अनटचेवल्स सोसाइटी (हरिजन सेवक सघ)के साथ मिलकर और यदि मै कह सकूँ तो, उसके अधीन रहकर काम करना चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि आपको अपने टैलेंट्स (प्रतिभाओ)को सोसाइटीको सौप देना चाहिए। मेरा मतलब धात्वीय टैलेंट्स (यूनानके सिक्केका नाम)से नही है। ये तो वे लोग देगे जिन्हे प्रायश्चित्त करना है और प्रतिपूर्ति करनी है। कुछ दिनोकी अपनी यात्रामे मैंने देखा है कि लाखो लोग सुधारके लिए तैयार है। वे तो अपने सहयोगका ठोस प्रदर्शन केवल अपनी टेटसे पैसे देकर ही कर सकते है। लेकिन बुद्धिमान् पुरुषो और स्त्रियोसे अपेक्षित है कि वे हरिजनोके लिए विभिन्न प्रकारसे काम करे। हरिजनोकी रचनात्मक ढगसे सेवा करनेके लिए तथाकथित सवर्ण हिन्दुओको चाहिए कि वे हरिजनोकी पीठपरसे उतर जाये, उनके सामने घुटनोके बल जाये, हरिजन बच्चोको अपने बच्चे समझे और हरिजन भाई-बहनोको अपने सगे भाई-बहन। यह लगभग अतिमानवीय कार्य है और दैवी सहायताके बिना सम्पन्न नही हो सकता। लेकिन दैवी सहायता मुख्यत मनुष्यके माध्यमसे ही प्राप्त होती है। मै मानता हूँ कि हमारे कार्यकर्त्ताओमे शिक्षक और अन्यान्य व्यवसाय करनेवाले पुरुष और स्त्रियाँ बहुत ही कम है। हम उत्तरोत्तर बढती हुई माँगको पूरा करना चाहते है। मै इस कार्यमे आपके जैसी सस्थाओकी मदद चाहता हूँ। अब आप समझ गये होगे कि अधीनतासे मेरा क्या अभिप्राय है। यही सही ढग है।

लेकिन एक गलत ढग भी है। आप अलग रहकर काम करना पसन्द कर सकते है। आप हरिजनोका धर्म-परिवर्तन करके उन्हे ईसाई बना सकते है। आपको इस आन्दोलनमे अपने धर्म-प्रचारकी सम्भावना दिखाई पड़ सकती है। यदि आप इस उद्देश्यको लेकर हरिजनोके बीच काम करते है तो आप देखेगे कि हम अपना जो लक्ष्य लेकर चल रहे है उसमे ही हम असफल हो जायेगे। यदि आप समझते है कि हिन्दू-धर्म भगवानकी ओरसे नही बल्कि शैतानकी ओरसे दी हुई भेट है तो यह बात बिलकुल साफ है कि आप मेरी शर्तोको स्वीकार नही कर सकते। यदि हम एक दूसरेके सामने अपने उद्देश्यको स्पष्ट नही करेगे तो यह बेईमानी होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-१२-१९३३

३३६. एक पत्र

[८ दिसम्बर, १९३३ से पूर्व][1]

किसी सार्वजनिक कार्यकर्त्ताकी कोई व्यक्तिगत इच्छाएँ नहीं होतीं जिनका कि ध्यान रखा जाये। उसे तो एक अतितुच्छ व्यक्ति होना चाहिए। सेवासे जो प्राप्त हो जाये सो अलग बात है वरना उसे न अभिमान मिल सकता है, न अधिकार और न ख्याति। उसे तो "तुल्यनिंदात्मसंस्तुति मानापमानयोस्तुल्यः[2]" होना चाहिए। इसलिए तुम मेरी वजहसे या कामकी वजहसे परेशान मत होना। फल मेरे या तुम्हारे हाथोंमें नहीं है। यह तो ईश्वरके सर्वशक्तिमान् हाथोंमें है। तुम और मैं तो उसके साधन हैं। तुम्हें तो अपनी अवमाननामें भी खुश रहना चाहिए और अपनेको सबल अनुभव करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-१२-१९३३

३३७. पत्र : एफ० मेरी बारको

८ दिसम्बर, १९३३

चि० मेरी,

हम १५ तारीखको बैतूलसे गुजरेंगे। मुझे पूरा यकीन है कि यदि मैंने फेस पाउडर बेचनेके लिए प्रचार किया तो तुम मुझे अकेला और गरीब पाओगी।

तलवार चलानेके अभ्यासके सम्बन्धमें तुम्हारी बात ठीक है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०१६) से। सी० डब्ल्यू० ३३४२ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

1. यह एक रिपोर्टका अंश था जो दिनांक "वर्धा, ८-१२-१९३३" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
2. जिसके लिए निन्दा और स्तुति, मान और अपमान सब बराबर हैं। देखिए भगवद्गीता, १४, २४-५। तथा खण्ड ३२, पृष्ठ ३१२ भी।

३३८. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

७/९ दिसम्बर, १९३३[1]

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरा रक्तचाप १५५ और १६८ के बीचमे घट-बढ़ रहा है। क्या इस सूचनासे तुम्हारी समझमे कुछ आया? जिन बातोको तुम समझ नही सकती उनके बारेमे चिन्ता क्यो करती हो! मुझसे पूछो कि मै कैसा हूँ, उत्तर तुम्हे मिल जायेगा। तकनीकी बाते डाक्टरोपर छोड़ दो। मै तुमसे कह चुका हूँ कि मै तुम्हे आश्रमसे निकाल नही रहा हूँ। यदि तुम्हे वहाँका जीवन पसन्द हो, और तुम अनुशासनका पालन कर सकती हो तो बडे शौकसे वहाँ रहो।

यदि सबके लिए बननेवाली चीजमे मिर्च-मसाले हो तो तुम्हे अपने लिए सादी सब्जी स्वय बना लेनी चाहिए या तुम द्वारकानाथजीसे अपने लिए सिर्फ उबली हुई सब्जी बनवानेको कह सकती हो।

बा बिलकुल ठीक है।

आशा है कि तुम फल खा रही हो।

अच्छा, तो तुम सुमित्राको अग्रेजी पढा रही हो!

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

१५ तारीखको तुम्हे स्टेशन पर आ जाना चाहिए। अगुली बिलकुल ठीक होगी।

बापू

[अग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय

१ यह पत्र ७ दिसम्बरको लिखा गया था, और पुनश्चवाला अंश ९ दिसम्बरको।

३३९. पत्र : किशनबहन घुमतकरको

९ दिसम्बर, १९३३

प्रिय किशन,

आज ट्रेनमें तुम्हारा पत्र मिला। अगर तुम पहले ही रवाना न हो चुकी हो, तो मेरा सुझाव है कि तुम इसी १५ तारीखको वर्धासे मद्रास मेल पकड़ लो। मैं १४ तारीखको दिल्लीसे ग्रैंड ट्रंक मेल पकड़ रहा हूँ। मुझे खुशी है कि तुम तन और मन दोनों से स्वस्थ हो।

सप्रेम,

बापू

श्रीमती किशनबहन
गणेश टेरेस
गिरगाँव बैंक रोड
बम्बई

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९६८९) से।

३४०. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

९ दिसम्बर, १९३३

चि० रुक्मिणी,

तेरा पोस्टकार्ड मिला है। दौरोंमें पत्र लिखनेकी फुरसत भला कहाँसे मिल सकती है? आज भी कुछेक मिनट हैं उनमें इतना लिख रहा हूँ। देवेन्द्र अच्छा हो रहा है, यह ईश्वरकी कृपा है। राधाके पत्र आते हैं। मैंने आज ही सुना कि सन्तोककी माँका देहान्त हो गया।

तुझे 'हरिजन' मिलता है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१५५) से।

३४१. पत्र : नानाभाई इ० मशरूवालाको

९ दिसम्बर, १९३३

भाई नानाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। व्रजलालजी को तार दिया है। शान्ति ठीक हो रहा होगा। बच्चे पढ़नेके बारेमें जितनी सावधानीसे काम लेते है उतनी सावधानी यदि शरीरके लिए भी बरते तो कितना अच्छा हो। किशोरलालके बारेमें गोमतीका पत्र था। वह बिलकुल स्वस्थ तो कदाचित् ही हो। मणिलाल और सुशीलाका पत्र मुझे भी आया था। मैंने इन दोनोको एक लम्बा पत्र लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६९०) से। सी० डब्ल्यू० ४३३५ से भी; सौजन्य : कनुभाई मशरूवाला

३४२. पत्र : मनु गांधीको

९ दिसम्बर, १९३३

चि० मनु,

तू तो मुझे भूल ही गई न? मेरे पत्रका जवाबतक नही देती। कुसुमकी तबीयतके समाचार तो देने चाहिए न? वह अब कैसी है? बा का पत्र जेलसे आया था। वह कुसुमकी और तेरी चिन्ता करती है। उसे पत्र भेजना। तेरा कैसा हाल है? बली मौसी कैसी है? मै यह पत्र चलती गाड़ीमे लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

वर्धाके पतेपर पत्र भेजना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६६३) से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला

३४३. भाषण : जामिया मिलिया, दिल्लीमें

१० दिसम्बर, १९३३

जेलमें मैंने काफी उर्दू सीखी है और यदि मैं फिर जेल गया तो हाफ़िज बनकर निकलूंगा।

इस्लाम हमे दूसरोके धर्मको सहन करनेके लिए बताता है। किसीका धर्म झूठा है ऐसा नही कहता। जो भलाई करता है वही सच्चा मनुष्य है। कुरानका भी यही सिद्धान्त है और दूसरे धर्म भी इसी प्रकारकी शिक्षा देते हैं। मुझे आशा है कि जामिया के छात्र एकता और आजादीके सन्देशको देशमें फैलायेंगे।

मैं हिन्दू मुसलमान एकता सम्मेलनमें जाना नही चाहता। मैं चाहता हूँ कि दोनों जातियोंके दिल एक हों ताकि भारत मां आजाद हो सके।

गांधीजीकी दिल्ली डायरी, भाग १, पृष्ठ ३५७

३४४. भाषण : श्रमिकोंकी सभामें[1]

दिल्ली
१० दिसम्बर, १९३३

गांधीजीने कहा कि हरिजनोंके घरोंका दौरा करके कार्यक्रमका शुभारम्भ किया गया और उसके पश्चात् श्रमिकोंकी सभाका आयोजन किया गया, इसके लिए आयोजक लोग बधाईके पात्र हैं।

उन्हें थैलीके लिए धन्यवाद देते हुए महात्माजीने कहा कि मैं जानता हूँ कि थैलीकी आधी रकम मालिक (श्री घनश्यामदास बिड़ला)ने और आधी श्रमिकोंने श्रमिक-कल्याण-कोषमें से दी है। इतनी बड़ी रकम भेंट करना रईसोंका काम है, श्रमिकोंका नहीं, और इसके अलावा आपमें से बहुतसे लोग हरिजन हैं और अस्पृश्यताके अभिशापको दूर करनेके लिए आपसे पैसे लेना मुझे शोभा नहीं देता। श्री बिड़ला

१. बिड़ला मिल्समें हुई इस सभामें लगभग ५,००० श्रमिक और दूसरे लोग उपस्थित थे। गांधीजीको २,००० रु० की एक थैली तथा केलेके पत्तेपर लिखा अभिनन्दनपत्र भेंट किया गया था। उन्होंने कहा: "केलेके पत्तेपर अभिनन्दनपत्र भेंट करनेका विचार बहुत अच्छा है, लेकिन मुझे खानेके लिए कुछ फल देने चाहिए थे।" इसके तुरन्त बाद ही फलोंकी एक टोकरी मँगाई गई।

जैसे सवर्ण हिन्दुओंका यह कर्त्तव्य है कि वे अस्पृश्यताको मिटानेके लिए पैसा दें; मैं हरिजनोंसे पैसे लेनेमें हिचकिचाता हूँ लेकिन तो भी चूँकि आपने पैसे स्वेच्छासे दिये हैं इसलिए मैं ले लेता हूँ। महात्माजीने आगे कहा कि मैं तो इस बातको ज्यादा पसन्द करता कि हरिजन लोग शराब पीना और धूम्रपान करना छोड़ देते और उससे जो पैसा बचता उसे हरिजन-कार्यके लिए दे देते। इस प्रकारसे दिया गया पैसा उस महान् उद्देश्यमें ज्यादा लाभकारी सिद्ध होता। इस सम्बन्धमें उन्होंने बताया कि कल भोपालके विद्यार्थियोंने पाई-पाई जमा करके एक कोष जमा किया था और इस प्रकार एकत्र राशि मुझे दी थी।

आगे बोलते हुए महात्माजीने कहा कि हरिजन-आन्दोलनके संरक्षक बनकर हिन्दू लोग वास्तवमें अपने युगो पुराने पापोंका प्रायश्चित्त कर रहे हैं। यदि वे ऐसा न कर सके तो भगवान ही जानता है कि उनका भविष्य क्या होगा?

बिड़ला मिल्समें हरिजन-सुधार-सम्बन्धी किये गये कार्यका जिक्र करते हुए महात्माजीने कहा :

मुझे पहले ही पता था कि आपने बिडला मिल्समे अस्पृश्यताको खत्म कर दिया है। घनश्यामदासजीने तो उच्चवर्गीय हिन्दू होनेके नाते हरिजनोके प्रति तथा मिल-मालिक होनेके नाते श्रमिकोके प्रति केवल अपना ऋण चुकाया है।

प्रत्येक हिन्दूका, चाहे वह मिल-मालिक हो या गरीब इसान, यह धार्मिक कर्त्तव्य है कि वह इस भूमिपर से अस्पृश्यताको उखाड फेके। ऐसा करते हुए वे महज अपना कर्त्तव्य पूरा कर रहे होगे, जिसके लिए वे धन्यवादके अधिकारी नही माने जा सकते।

आगे महात्माजीने चेतावनी-स्वरूप निम्नलिखित शब्द कहे :

अस्पृश्यता खत्म कर दीजिए वरना हिन्दू-धर्म ससारसे खत्म हो जायेगा।

कुछ सनातनियोंका, जो इस सुधार-आन्दोलनमें महात्माजीसे सहमत नहीं थे, जिक्र करते हुए महात्माजीने कहा :

मै सनातनियोको अपने मतसे सहमत करानेकी भरसक कोशिश कर चुका हूँ और मैंने उनके तर्कोंकी ओर ज्यादासे-ज्यादा ध्यान दिया है, लेकिन वे मुझे कायल करनेके लिए शास्त्रोमे एक भी ऐसा प्रमाण नही दिखा सके है जिससे अस्पृश्यताका समर्थन होता हो।

महात्माजीने श्रमिकोसे अपील की कि आप शराब और बीड़ी-सिगरेट तथा दूसरी बुरी आदतें छोड़ दें और मन तथा तन दोनोंसे शुद्ध जीवन व्यतीत करें। उन्होंने ईश्वर-पूजापर जोर दिया और कहा कि ईश्वरमें श्रद्धा रखनेसे ही आपके दुखोंका नाश हो सकता है। अन्तमें श्रमिकोंके कल्याणार्थ प्रार्थना करते हुए उन्होंने कहा कि मैं भी अपनी मर्जीसे अपनेको श्रमिक मानता हूँ। मालिक होनेसे श्रमिक होना अच्छा है। (हर्षध्वनि)

महात्माजीने मजाक करते हुए कहा:

फलको खानेकी मेरी बहुत लालसा हो रही है लेकिन इसे हरिजन-बालकोको दे दीजिए, इस प्रकार वे मुझतक पहुँच जायेगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-१२-१९३३

३४५. बातचीत: हरिजनोंके साथ

दिल्ली

१० दिसम्बर, १९३३

प्रश्न: क्या आपका विश्वास है कि मन्दिर-प्रवेश से ही हमारा उद्धार होगा?

उत्तर: मेरा अवश्य ऐसा विश्वास है कि जबतक सवर्ण हिन्दू अपने तमाम मन्दिरोके द्वार हरिजनोके लिए नही खोल देगे, तबतक यह नही कहा जायेगा कि उन्होने अपने कर्त्तव्यका पूरा-पूरा पालन कर लिया। सवर्ण हिन्दुओको अपने मन्दिरोमे हरिजनोको ले जाना ही चाहिए — यह दूसरी बात है कि हरिजन उन मन्दिरोमे जाये या न जाये। पर मन्दिरमे उनके जानेका हक तो उन्हे मान ही लेना चाहिए। मन्दिरोको खोल देना सवर्णोके लिए एक प्रायश्चित्तकी बात है। मुझे यह अन्याय असह्य सा लगता है कि जिस मन्दिरमे मै प्रार्थना कर सकता हूँ वहाँ हरिजन न आ सके। जबतक हरिजनोका यह मन्दिर-प्रवेश-विषयक प्रतिबन्ध पूरी तरहसे दूर न होगा तबतक मै यह माननेको तैयार नही कि अस्पृश्यता दूर हो गई।

प्रश्न: आप हमें आर्थिक संकटसे न उबारेंगे? हमारी राय में तो आर्थिक उन्नति ही मुख्य चीज है।

उत्तर: आर्थिक उन्नतिकी बात तो है ही। वह भुलाई नही गई। पर मुझे इससे सन्तोष नही होता कि तुम्हे रुपया तो काफी भरपूर दे दिया जाये, पर बने रहो तुम अस्पृश्य ही या गाँवके बाहर अलग आलीशान महल बना लो। मुझे तो तभी सन्तोष होगा, जब तुम अस्पृश्य न समझे जाओगे, और सवर्णोके समान ही हिन्दू-समाजमें तुम्हे समानताका पद मिल जायेगा। तुम्हारी आर्थिक उन्नति तो हमारे कार्यक्रममे विविध अंगोमे एक अंग है ही।

प्रश्न: देशमें आप जो पैसा इकट्ठा कर रहे है, उसका उपयोग हमारे हितके लिए ही होगा इसमे हमें सन्देह है। हम अपना वह सन्देह आपसे छिपाना नहीं चाहते। आपको इस कामके लिए सच्चे ईमानदार आदमी मिलें, तभी पैसे का सदुपयोग हो सकता है; पर ऐसे सच्चे आदमी तो अभीतक बहुत ही कम देखनेमें आये हैं। तो फिर आप यह पैसा हमारे सिपुर्द क्यों नहीं कर देते? हम अपनी मरजी मुताबिक इसका उपयोग अपनी भलाईके लिए करें, तो क्या हर्ज है? आपसे हमें यह साफ-

साफ कह देना चाहिए कि आज जो लोग हरिजन-सेवाका काम कर रहे है, उनपर हमारा विश्वास नहीं है।

उत्तर: यह बात तो है नही कि इस पैसेके खर्चनेमे कोई हरिजन भाई शामिल न हो। पर यह सुधार-कार्य तो सवर्ण हिन्दुओके लिए प्रायश्चित्त-स्वरूप है न? इससे यह उन्हीपर छोड देना चाहिए कि इस पैसेका अच्छेसे अच्छा उपयोग किस तरह किया जाये। वे लोग हरिजनोकी सलाह जरूर ले, हरिजनोको अपने साथ भी ले, पर पैसेका हिसाब-किताब तो उन्हीके हाथमे रहने दिया जाये। तुम्हे मै इतना विश्वास दिलाता हूँ कि प्रचार इत्यादिके काममें यह कमसे-कम खर्च किया जायेगा। अधिकाश मे तो यह पैसा सीधा हरिजनोकी जेबमे ही जायेगा। हरिजनोकी सलाह और मदद लेकर जहाँ जैसी जरूरत दिखाई पडेगी, उसके अनुसार वहाँ पैसा दिया जायेगा। यह मै कैसे मान लूँ कि आज जो लोग हरिजन-सेवा कर रहे है, वे सब स्वार्थके लिए ही यह काम कर रहे है। सम्भव है, उनमे कुछ थोडे-से स्वार्थी हो, जो तुम्हारी और मेरी कसौटीपर ठीक-ठीक न उतर सके, मगर ज्यादातर आदमी तो यह काम केवल प्रेमभाव और प्रायश्चित्तके रूपमे ही करते है। उनमे कुछ तो शुद्ध कुन्दनके समान प्रामाणिक है और वे किसी भी आन्दोलनके लिए शोभा-स्वरूप है। पर इस बातको एक तरफ रखकर मै तो चाहता हूँ कि तुम लाखो हरिजनोकी स्थितिका विचार करो। उन लाखोकी पतनावस्थाका तो तुम्हे भी अनुभव न होगा। वे तो अपनी पीरको प्रकट भी नही कर सकते। वे अपनेको पतित मानते है। छ· साल पहले की बात है कि उडीसामे एक बूढा मनुष्य मुँहमे तिनका दबाकर मेरे पास आया था।[1] उसने सुना होगा कि गरीबोकी खबर लेनेवाला कोई पैदा हुआ है, इसलिए वह ५० मील दूरसे आया था। वह अपनेको नीच मानता था। मुँहमे तिनका दबाकर आया था। मैने वह तिनका निकाल लिया और उस भाईको समझानेका प्रयत्न किया कि 'जो मै हूँ सो तू है, तेरा पालनहार मै होता कौन हूँ?' कोचीनमे भी एक हरिजन मेरे सामने आकर थर-थर काँपने लगा। वह बेचारा समझता था कि कही उसे सवर्णोके ससारमे न ले जाये, क्योकि उस प्रान्तमे कुछ हरिजन अदर्शनीय समझे जाते है और सवर्णोको उनके दर्शनमात्रसे छूत लग जाती है। यह सेवा-कार्य हरिजनोको रिझानेके लिए नही, किन्तु शुद्ध कर्त्तव्य समझकर ही मैने हाथमे लिया है। हम सवर्णोको तो किसी तरह यह कलक धो डालना है और ऐसा करते हुए आवश्यकता पडे, तो जान भी दे देनी है। यथाशक्ति तुम्हारी निस्स्वार्थ सेवा करनेका हम प्रयत्न कर रहे है। पर यदि हरिजन हमारी इस सेवाको अंगीकार न करें, इस सेवासे उन्हे सन्तोष न हो, तो मै समझूँगा कि हमने बडी देरसे सेवा-कार्यका आरम्भ किया। पर यह डेढ मासका अनुभव मुझे बताता है कि हजारो हरिजन हमारी इस सेवाको प्रसन्नतासे अंगीकार कर रहे है। तुम्हारे जीवनके प्रत्येक पहलूका हम स्पर्श करना चाहते है। हमे तुम्हारी सेवा सेवक होकर करनी है, स्वामी बनकर नही। हम सेवक है और तुम स्वामी हो।

१. दिसम्बर, १९२७ में; देखिए खण्ड ३५, पृष्ठ ४२२-४।

प्रश्न: अबतक सवर्णोंने हमारे नाम अनेक रखे थे — आपने उनमें एक नया नाम 'हरिजन' और जोड़ दिया है। यह नाम भी दूसरोंसे हमारी पृथकता ही सूचित करता है। हमारी पृथकता शब्दमें और कार्यमें दूर होनी चाहिए; तभी हमें सन्तोष होगा और हमारा कल्याण भी तभी होगा।

उत्तर: 'हरिजन' नाम एक अन्त्यज भाईने ही तजवीज किया था। गुजरातके एक सन्त कविने इस नामका उपयोग किया है, ऐसा उस भाईने मुझे बताया। मैंने यह नाम मान लिया, और फिर यह चल गया। हजारों हरिजनोंने इस नामपर प्रसन्नता ही प्रकट की है। इसका उद्देश्य तुम्हारी पृथकता दिखाने या उसे कायम रखनेका नहीं है। जबतक दुर्भाग्यसे हिन्दू-समाजके दो भाग रहेंगे, तबतक दोनों भागोंके लिए पृथक-पृथक नामोंकी आवश्यकता तो रहेगी ही, पर 'अस्पृश्य' 'अवर्ण' आदि दिल दुखानेवाले नाम तो निकाल ही देने चाहिए। इन घृणित नामोंके स्थानपर 'हरिजन' नाम बड़ा अच्छा है। यह मैं नहीं जानता कि जब अस्पृश्यता दूर हो जायेगी तब सारा हिन्दू समाज अपनेको 'हरिजन' कहा जाना पसन्द करेगा या 'हिन्दू'। पर उस दिनके आने तक तो पृथक नामोंकी जरूरत रहेगी ही। तुम्हारी दलील मैं समझता हूँ। मैं स्वेच्छासे 'हरिजन' बन गया हूँ, और मेरा विश्वास है कि यदि मैंने निस्स्वार्थ भावसे तुम्हारी सेवा की होगी, तो उसे अन्तमें तुम अवश्य स्वीकार करोगे। धीरज रखो और देखो कि कैसा काम चल रहा है। हरिजन-सेवक-संघका उद्देश्य केवल तुम्हारा कल्याण है, उसका कोई दूसरा उद्देश्य नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-१२-१९३३

३४६. पत्र: मणिलाल और सुशीला गांधीको

दिल्ली
११ दिसम्बर, १९३३

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र मिले। मेरे क्या लिखनेसे तुम्हें इतना ज्यादा आघात पहुँचा? मैंने किशोरलालसे क्या कहा, सो तो याद नहीं लेकिन मैंने तुझे कमजोर और डरपोक तो कभी नहीं माना। तेरी बहादुरीके बारेमें मैंने हमेशा गर्वका अनुभव किया है। लेकिन तुझे मैंने अपंग अवश्य माना है। तुझमें स्वतन्त्र रूपसे विचार करनेकी शक्ति कम है, ऐसा भी मैंने अवश्य माना है। इसमें तेरा दोष नहीं। कुछ मेरा ही होगा। इसमें तुझे शर्मिन्दा होनेकी कोई बात नहीं। मैंने पिछली डाकमें तुझे लम्बा पत्र लिखा है उससे तू मेरे विचारोंको स्पष्ट रूपसे जान सकेगा। तू मेरी राय यहींसे माँगता है इसमें भी तेरी अपंगता ही है।

तू भूल करेगा तो उसके लिए मेरा मन भी तेरी भर्त्सना नही करेगा। तू विश्वासघात करेगा तो अवश्य तेरी भर्त्सना करूँगा। तूने मित्रोको अथवा लोगोको जो वचन दिये है उनका तू पालन करे, ऐसा अवश्य चाहूँगा। तेरी वर्तमान क्रिया-विधिसे मुझे कोई भय नही है। ज्यादासे-ज्यादा यही हो सकता है कि तू आर्थिक रूपसे बर्बाद हो जाये? सो भले ही हो, लेकिन तू मूर्ख न बनना। भूल हुई, यदि तुझे ऐसा जान पडे तो उसे स्वीकार कर उससे बच निकलना। तू अपनी राय व्यक्त करना जितना सहल समझता है, मेरे लिए उतना सहल नही है। यदि ऐसा हो तो मैं भला राय तुरन्त ही क्यो न दे डालूँ?

अब तुम्हारे खर्चेके बारेमे। मेरे कथनमे न तो निन्दा ही है और न दुःखका भाव ही। मेरे कहनेका अभिप्राय केवल इतना ही था कि वहाँ अमुक ढगसे रहनेके बाद अब तुझसे यहाँ एकाएक जीवन बदलकर नही रहा जा सकता। मै यह नही चाहता कि यहाँके जीवनका प्रयोग करते करते तुम तीनो शरीर से टूट जाओ। १५० रु० की तो तू स्वयं ही आवश्यकता बताता है जबकि मैंने २०० रुपयेकी मानी है। लेकिन आज तो १५० रुपये भी मेहरबानीके रूपमे ही मिलेंगे, ऐसा समय आ गया है। तू किसीकी कृपापर निर्भर करे इससे तो मै यह पसन्द करूँगा कि तू सूखी रोटी खाकर अपना जीवन-यापन करे। सक्षेपमें तुम्हारे जीवनके प्रति मुझे असन्तोप नही है। इस सम्बन्धमे सुशीला तेरी अपेक्षा अधिक सावधान है, यह मैं जानता हूँ। तुम्हारा पत्र पानेपर मेरा मन तो तुम्हे तार द्वारा आश्वासन देनेका हुआ। लेकिन किसके खर्चपर तार दूँ? भिखारी पिता तारसे आश्वासन कैसे दे? इससे पत्रसे ही आश्वासन देता हूँ। मेरी ओरसे तुम दोनो निर्भय रहना। तुम दोनोको जैसा उचित लगे वैसा रहना। यदि तुमसे वहाँ न रहा जा सके और तुम यहाँ आ जाओ तो भी तुम्हारी आजीविका ईश्वर देगा ही। जो भी करो, स्वतन्त्र रूपसे विचार कर करना।

नीमुको फिर गर्भ रह गया है। रामदास बहुत दुखी हुआ है। मैंने आश्वासन दिया है। यह काम ऐसा नही है जिसमे स्त्री-पुरुष आसानीसे सफलता पा सकते हो। लेकिन रामदास दुर्बल है और सोच-विचार बहुत ज्यादा करता रहता है, फलत. उसकी अपनी कमजोरी भी उसे सालती रहती है।

लक्ष्मी भी गर्भवती है, यह बात कदाचित् तुमको मालूम होगी। मुझे तो इन दोनोके बारेमे अभी-अभी मालूम हुआ है। ऐसे समाचार मुझे देरसे ही मिलते है। बा जेलमें आनन्दसे है। मणिबहन उसके साथ है। मैं ठीक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८१२) से।

३४७. पत्र : रमाबहन जोशीको

दिल्ली
११ दिसम्बर, १९३३

चि० रमा,

मैं जोशीको लम्बा पत्र लिख रहा हूँ। धीरू कमजोर रहता जान पड़ता है। उसे यदि तुम नियमित रूपसे पत्र लिखोगी तो वह ठीक हो जायेगा, मैं ऐसा मानता हूँ। लगता है, उसका मन वहाँ लग गया है, यह सन्तोपजनक है।

तुम्हें वह जगह अनुकूल आ गई है, यह वात मेरे मनको वहुत शान्ति देती है। खूब सेवा करना। जो-कुछ सीखा जा सके, सीखना। विमुसे भी पत्र लिखवाना।

वा के पत्र आने लगे हैं। वा के जेल जानेसे वहनें खूब प्रसन्न हो गई दीखती हैं। अभी तो मणि उसके साथ है।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३६०) से।

३४८. पत्र : विद्या आर० पटेलको

दिल्ली
११ दिसम्बर, १९३३

चि० विद्या,

तेरा पत्र मिला। तू रमावहनकी विशेष देखभालमें है, यह अच्छी वात है। वह जैसा कहे वैसा करना। मैंने द्वारकानाथजीको अभी यह सलाह दी है कि तुझे फिलहाल दूध, फल और सब्जीपर रहना चाहिए। ऐसा करनेसे ही खून साफ होगा। तुझे भाप लेनी चाहिए और कटि-स्नान भी करना चाहिए। आँखको दिनमें चार-पाँच वार गरम पानीकी छींटें मारने चाहिए। पानी विलकुल साफ होना चाहिए।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६३९) से; सौजन्य : रवीन्द्र आर० पटेल

३४९. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

बिड़ला हाउस, नई दिल्ली
[११ दिसम्बर, १९३३][1]

तू क्या चाहती है? पाच दस रोजकी बात है। लेकिन तुमको नाराज या दुखी करके नहि रखना चाहता हू। पीछे तो वर्धा ही जाना। लेकिन तुम्हारा दिल मुलतान जानेका है तो मै नहि रोकना चाहता। कहीसे मै तुमको सुखी और बहादुर बनाना चाहता हू। अगर मै वर्धा वापिस भेजुगा तो पक्का बदोबस्त करके ही भेजुगा। नहि तो देखुगा क्या किया जाय? भावनगर नहि भेजुगा। दूधीबहनका अनिश्चित है। मै यहा हू वहा तक तो इतनी जल्दी नहि है। मौन खतम होनेसे कल प्रात-कालमे बाते करेंगे।

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

३५०. तार : भूलाभाई देसाईको

नई दिल्ली
१२ दिसम्बर, १९३३

भूलाभाई देसाई
वार्डन रोड, बम्बई ११

अभी-अभी आपके आनेका समाचार मिला। उम्मीद है आपने पूर्णतया स्वास्थ्य-लाभ कर लिया होगा।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
भूलाभाई पेपर्स, सौजन्य. नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय

१. साधन-सूत्रमें तिथि "दिसम्बर, १९३४" दी हुई है, जो भूलसे लिखी जान पड़ती है। दिसम्बर, १९३३ में गाधीजी १० से १४ तारीखतक दिल्लीमें थे और मौनवार ११ दिसम्बरका था। देखिए "पत्र: विद्या आनन्द हिंगोरानीको", २५-१२-१९३३ भी।

३५१. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

दिल्ली
१२ दिसम्बर, १९३३

बा,

यह तुझे जेलमें दूसरा पत्र है। अब तुझे 'जामेजमशेद'[1] और 'हरिजनबन्धु' मिलते होंगे। और कुछ चाहिए तो लिखना। मथुरादास अभी मेरे साथ है। मैं १० तारीखको दिल्ली आया था। १४को आन्ध्रदेशकी ओर रवाना हो जाऊँगा और मथुरादास बम्बई जायेगा। मेरी तनिक भी चिन्ता न करना। मैं जैसा होऊँगा वैसा तुझे लिखता रहूँगा। मैं दूध और मावा वगैरा बराबर लेता हूँ। जुकाम हो गया था, अब खत्म हो गया है। डॉ० अन्सारी यहीं हैं। मैं इस बार घनश्यामदासके यहाँ ठहरा हूँ। आज जमनालालके आनेकी भी सम्भावना है। प्रभुदास और उसकी पत्नी भी यहीं है। प्रभुदास इस बीच कहीं-न-कहीं स्थिर हो जायेगा। मणिलालकी चिन्ता न करना। उसे मैंने लम्बा खत लिखा है।[2] मैं उसे दबाना नहीं चाहता। सन्तोककी माँका देहान्त हो गया है। मैंने आज उसे पत्र लिखा है। व्रजकृष्ण काफी बीमार है। खाटपर है। डॉ० अन्सारीकी दवा चल रही है। आशा है कि ठीक हो जायेगा। राधा फिर बीमार हो गई लगती है। तुझे अथवा किसी बहनको कुछ चाहिए तो मुझे लिखना।

तेरे जबड़े ठीक चल रहे होंगे। मणिके घुटने कैसे हैं? क्या पढ़नेका सामान साथ है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृष्ठ २

१. बम्बईसे प्रकाशित एक गुजराती समाचार-पत्र।
२. देखिए "पत्र: मणिलाल और सुशीला गांधीको", ११-१२-१९३३।

३५२. पत्र : प्रभावतीको

दिल्ली
१२ दिसम्बर, १९३३

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र मिला। जयप्रकाशका भी। यदि तुम दोनो इसी निश्चयपर पहुँचे हो कि तुम्हे सेवाधर्मका पालन करना है तो मुझे कुछ नही कहना है। मैंने तो दोनोको यह समझाया था कि निजी कुटुम्बधर्मका पालन करनेमे कोई पाप नही है और सेवाधर्मका पालन करना हो तो निजी धर्मका त्याग करना ही चाहिए।[1]

दोनोको एक साथ पालन करनेके प्रयत्नमे दोनोके विगडनेका भय है। राजेश्वर[2] के लिए प्रतिमास ५० रुपये प्राप्त करनेमे कोई दिक्कत नही होगी। लेकिन मुझे इतनेसे ही सन्तोष नही होता। तुमने अपने खर्चके लिए क्या वन्दोवस्त किया? कर्जके वारेमे क्या किया? यह प्रवन्ध जैसे-तैसे हो जाये इससे कोई मूल प्रश्न हल नही हो जाता। लेकिन अव मै वातको और ज्यादा लम्वा नही करूँगा। जयप्रकाशके उत्साहको मै भग नही करना चाहता। उसका हेतु शुद्ध है इसलिए सब-कुछ ठीक ही होगा, ऐसा हमे मानना चाहिए।

तू अभीतक माताके पास तो पहुँची ही नही है। अव तुझे पहुँचना चाहिए। तूने मेरे पास आनेकी वातको खूव लटकाया, इसलिए अव मै तो वहुत दूर होऊँगा। यदि वहाँसे तू जेल न चली जाये तो तू मुझे आन्ध्रके प्रवासके दौरान मिल सकती है और वर्धासे जहाँ तुझे ठीक लगे वहाँ जा सकती है। मै समझता हूँ, वेहतर तो यह होगा तू विहारसे [जेल जाये]। और यदि तू ऐसा करे तो मेरे पास आनेकी भी कोई जरूरत नही। लेकिन यदि मेरे पास आये विना न रहा जाये तो अवश्य ही आ जाना। मै सव-कुछ तेरी इच्छापर छोड़ता हूँ। २०, २१, और २२ तारीखको मै मद्रासमे होऊँगा। यहाँसे १४ तारीखको रवाना होऊँगा। १६ से १९ के वीच वेजवाड़ाके आसपास होऊँगा। २३ से ३१ तारीखके वीच फिर से आन्ध्रमे होऊँगा, इसलिए मेरा सदरमुकाम तो वेजवाड़ा होगा। अव जैसी तेरी इच्छा हो वैसा करना।

विद्या उकताकर यहाँ चली आई है। साथ कान्ताको लाई है। अभी मैंने निश्चय नही किया है कि विद्याको मुल्तान जाने दूँ अथवा वापस वर्धा भेज दूँ।

ओम मेरे साथ ही है। मेरी जो खुराक थी अव भी वही है। दूध कभी तीन पौड और कभी एक पौड लेता हूँ। सर्दी हो गई थी सो अव दूर हो गई है। वजन १०८ पौंड जवलपुरमे हो गया था। वादमे तो दिखाया ही नही। मेरे वारेमे चिन्ता

१. देखिए "पत्र : प्रभावतीको", २३-११-१९३३।
२. जयप्रकाश नारायणके छोटे भाई।

करनेकी जरूरत नहीं। जैसी ईश्वरकी इच्छा होगी वैसा वह चलायेगा। उसे जो काम लेना होगा सो लेगा।

क्या तू राजेन्द्र बाबूको मिल पाई? पिताजीसे मिली? वे क्या करते हैं।

बा के पत्र आते हैं। मणि अभी तो उसके साथ है।

प्यारेलालकी बहन सुशीला यहीं है। उनकी माँ भी यही हैं। मैं उनसे अभी मिला नहीं हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकलसे (जी० एन० ३४३६)।

३५३. पत्र: कान्ति गांधीको

दिल्ली
१३ दिसम्बर, १९३३

चि० कान्ति[1],

तेरे दाँत खराब हो गये हैं, ऐसी खबर मैंने सुनी है। बाकी तो तेरे समाचार सुनकर मुझे सन्तोष होता है। ऐसा मान लेता हूँ कि तुझे यह पत्र मिलेगा। तुझे बहुत बार याद करता हूँ। तूने और तेरे साथियोंने अच्छा अभ्यास किया है, ऐसा सोमनजी लिखते थे। मेरा दौरा कठिन है, लेकिन अच्छा चल रहा है। लोग खूब आते हैं।

रामीबहनकी कुसुम बीमार है, यह तो तू जानता ही होगा। राधा फिर बीमार पड़ गई है। अभीतक तो मैं यह दौरा सहन कर सका हूँ।

सबको,

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७२८४) से; सौजन्य: कान्ति गांधी

१. हरिलाल गांधीके पुत्र।

३५४. बातचीत : सनातनियोंके साथ

दिल्ली

१३ दिसम्बर, १९३३

मैं सनातनी होनेका दावा करता हूँ[1], क्योंकि मैं समझता हूँ कि मेरा आचरण शास्त्रोकी भावनाके अनुरूप है। यदि आप चाहे तो मेरा दावा अस्वीकार कर सकते हैं। मैंने अपनी क्षमता-भर शास्त्रोका अध्ययन किया है और मै इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मकी भावनाके प्रतिकूल है।

इसपर भी सनातनियोने आग्रह किया कि जो व्यक्ति अस्पृश्यता, श्राद्ध, मूर्ति-पूजा तथा अन्य कर्म-काण्डोमें विश्वास नहीं करता उसे सनातनी नहीं कहा जा सकता। गांधीजीने प्रत्युत्तरमें कहा कि सनातन धर्मकी सच्ची कसौटी तो एकमात्र सत्यकी कसौटी है। उन्होंने आगे कहा कि यदि व्यक्ति धूर्ततापूर्ण जीवन बिताता है तो विधि-विधानोंका ऊपरी पालन करनेसे कुछ नहीं होता। जो व्यक्ति शराबी, दुश्चरित्र और जुआरी हो उसको बाहरी दिखावेसे क्या लाभ?

जब गांधीजीको यह बताया गया कि हरिजनोके लिए मन्दिर खोलनेके प्रयत्नमें खून-खराबा जरूर होगा तो उन्होने कहा कि यह व्यवहारतः असम्भव है, क्योंकि किसीके मनमें किसी प्रकारकी जोर-जबर्दस्ती करनेका इरादा नहीं है। ऐसा कोई भी मन्दिर तबतक नहीं खोला जायेगा जबतक कि उस मन्दिरमें जानेवाले दर्शनार्थियोंमें से अधिकांश लोग मन्दिरको खोलनेके पक्षमें नहीं होंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-१२-१९३३

३५५. भाषण : अलीपुरकी सार्वजनिक सभामें

१३ दिसम्बर, १९३३

मैं आपसे इस बातका विश्वास करनेका अनुरोध करता हूँ कि मेरे हरिजन-कार्यके पीछे कोई राजनीतिक उद्देश्य नही है। अस्पृश्यता-निवारणके राजनीतिक परिणामोका मेरे लिए कोई आकर्षण नही है। वस्तुत. मै यह मानता हूँ कि यदि हम इस प्रश्नको राजनीतिक उद्देश्यकी दृष्टिसे लेते हैं तो हम हरिजनोकी सेवा करनेमे असफल हो जायेंगे तथा हिन्दू-धर्मको नुकसान पहुँचायेंगे। यह बात तो बिलकुल सच है कि अस्पृश्यताके वास्तविक उन्मूलनके राजनीतिक परिणाम निकलेंगे। धार्मिक भावनासे

१. सनातनियोंका दावा था कि गाधीजीको सनातनी कहलानेका कोई अधिकार नही है।

किसी कर्त्तव्यका पालन करनेके अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण परिणाम होते हैं। "पहले ईश्वरका साम्राज्य प्राप्त करो, उसके बाद अन्य सभी चीजें तुम्हें मिल जायेंगी", यह कथन मेरे विचारमें एक वैज्ञानिक सत्य है।

पिछले साल आपके नाममें की गई प्रतिज्ञा मुझे आपको याद दिला देनी चाहिए। आपको याद होगा कि पिछले साल सितम्बरमें हिन्दू-धर्मके प्रतिनिधियोंकी एक बैठक बम्बईमें हुई थी, जिसकी अध्यक्षता पंडित मालवीयजीने की थी। दूसरी बातोंके साथ उन्होंने इस बातकी प्रतिज्ञा की थी कि अस्पृश्यता चूंकि हिन्दू-धर्मके नामपर कलंक है इसलिए उसको दूर करना है, और यह भी कि हरिजन लोग उन सभी सार्वजनिक सुविधाओंके उसी प्रकार हकदार हैं जिस प्रकार कि सवर्ण हिन्दू। उस प्रस्तावमें हिन्दू मन्दिरोंका विशेष रूपसे उल्लेख किया गया था और यह कहा गया था कि यदि लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए कानून बनवानेकी जरूरत होगी तो वह भी बनवाया जायेगा। इसलिए प्रत्येक सवर्ण हिन्दूका यह परम कर्त्तव्य हो जाता है कि वह हरिजनोंके लिए मन्दिरों, कुओं तथा दूसरी संस्थाओंको हूबहू उन्हीं शर्तोंपर खोलकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करे जिन शर्तोंपर वे सवर्ण हिन्दुओंके लिए खुली रहती हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-१२-१९३३

३५६. बातचीत : हरिजन संघकी बैठकमें[1]

दिल्ली
१३ दिसम्बर, १९३३

यात्राके दौरान प्राप्त किये गये चन्देके उपयोगके सम्बन्धमें महात्मा गांधीने कहा कि इस चन्देमें से ७५ प्रतिशत जहाँतक सम्भव हो सकेगा सम्बन्धित इलाकेपर खर्च किया जायेगा बशर्ते कि इसके लिए कोई उपयुक्त योजना तैयार की जाये और केन्द्रीय बोर्ड उसे मंजूर कर ले। फिर भी, प्रान्तीय बोर्ड मेरे द्वारा इकट्ठे किये गये चन्देमें से धन पानेकी आशामें पड़कर अपने साधारण चन्दे इकट्ठा करनेमें लापरवाही न बरतें। उन्होंने जोर देकर कहा :

आप लोग प्रचार अथवा कार्यालय-प्रबन्धके लिए इस धनका कुछ भी अंश खर्च नहीं करेंगे। इसकी एक-एक पाईका उपयोग केवल रचनात्मक-कार्यके लिए ही किया जा सकता है। मैं भारतका दौरा आपके कार्यालयका प्रबन्ध-व्यय उठानेके लिए अथवा आपके प्रचारमें सहयोग देनेके लिए नहीं कर रहा हूँ, बल्कि केवल रचनात्मक-कार्यके लिए पर्याप्त रुपया इकट्ठा करनेके लिए कर रहा हूँ। अपने कार्यालयका प्रबन्ध-कार्य चलानेके लिए आप अलगसे पैसा इकट्ठा कर लें। जो चन्दा मैं इकट्ठा करता हूँ

१. गांधीजी संघके केन्द्रीय बोर्डके सदस्योंके सामने बोले थे।

यदि निर्धारित ढंगसे आप उस रुपयेसे अपना रचनात्मक काम करते हैं तो जनता द्वारा दिया गया पैसा सौगुना होकर जनताके पास लौटेगा। इसलिए इसकी बड़ी सावधानीके साथ हिफाजत करनी चाहिए और बहुत सँभाल कर खर्च करना चाहिए।

यह पूछे जानेपर कि अबतक जो काम किया गया है उसके सम्बन्धमें आपकी क्या राय है, महात्मा गांधीने कहा :

अगर आप प्रशंसा चाहते हैं तो वह आपको नहीं मिलेगी। लेकिन इतना मैं कह सकता हूँ कि आप इससे अच्छा काम कर सकते थे, तथा आगेके लिए मैं सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि आपको पहलेसे ज्यादा अच्छा काम करना चाहिए।

संघके संविधानको लोकतान्त्रिक बनानेके प्रश्नके सम्बन्धमें महात्मा गांधीने कहा कि बजाय इसके कि एक ऐसा संविधान बनाया जाये जिसका स्वरूप तो लोकतान्त्रिक हो लेकिन जिसकी भावना निरंकुशतावादी हो, बेहतर यही होगा कि वर्त्तमान संविधानको ही लोकतान्त्रिक ढंगसे चलाया जाये।

असमके परम पूजनीय गड़मूड़िया गोसाईं और श्री डी० एन० शर्माने विस्तारसे बताया कि चायके बागानोंमें काम करनेवाले भूतपूर्व कुली लोग भारतके विभिन्न प्रान्तोंके रहनेवाले हैं तथा ज्यादातर हरिजन हैं। असममें उनकी आबादी साढ़े दस लाख है जिनमेंसे केवल ५,००० लोग ही साक्षर हैं। वे आमतौर पर शराब अथवा ऐसे ही अन्य दुर्व्यसनोंके आदी हैं। काबुली तथा मारवाड़ी लोगोंने उनका आर्थिक रूपसे खूब शोषण किया है।

महात्मा गांधीने कहा कि मैं इस शोचनीय स्थितिके बारेमें जानता हूँ।

यह एक सामाजिक समस्या है, लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि फसल तो तैयार खड़ी है लेकिन मजदूर बहुत कम हैं। इस प्रश्नके समाधानके लिए हमें कार्यकर्त्ताओंकी जरूरत है। इसे कानून द्वारा हल नहीं किया जा सकता। इसके लिए जरूरत है इन लोगोंके बीच बिना किसी तुरन्त परिणामकी आशाके रोज काम करनेकी। यह ठीक रहेगा कि इन लोगोंके प्रान्त-वार आँकड़े इकट्ठे किये जायें ताकि उन प्रान्तोंके कार्यकर्त्ताओंको बुलाकर उनसे इनके बीच काम करनेको कहा जा सके। हमें जिस प्रकार के कार्यकर्त्ताओंकी जरूरत है वे पैसेके जोरपर हासिल नहीं किये जा सकते। यदि मैं असम पहुँचनेमें सफल हो गया तो मैं परिस्थितियोंका अध्ययन करूँगा और कुछ स्थानीय कार्यकर्त्ता तैयार करनेकी कोशिश करूँगा। यदि मैं स्थानीय कार्यकर्त्ता तैयार करनेमें विफल हुआ तो मुझे इस बातमें कोई सन्देह नहीं रह जायेगा कि असम सभी प्रान्तोंमें सबसे ज्यादा पिछड़ा हुआ प्रान्त है। खैर, सवाल सिर्फ अस्पृश्यताका नहीं है बल्कि दूसरी किस्मका है। लेकिन यदि असममें ठीक ढंगके कार्यकर्त्ता मिल जाते हैं तो फिर उस कामको चलानेके लिए पर्याप्त धन इकट्ठा करनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-१२-१९३३

३५७. भाषण : दिल्लीकी छात्र-सभामें[1]

१३ दिसम्बर, १९३३

यह कहनेमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि हमारे सम्बन्ध दो सगे भाइयों जैसे ही घनिष्ठ थे।[2] उनका उत्कट देशप्रेम, उनका महान् त्याग और अपने बच्चोंके प्रति उनका असीम प्रेम आपके सामने वैसे ही प्रत्यक्ष रहने चाहिए जैसे कि मेरे सामने थे। और अपने बच्चोंको भी उन्होंने देशके सेवार्थ समर्पित कर दिया। मेरा उनसे पहले-पहल परिचय होनेके बादसे उनकी मृत्युके समय तक मुझे उनके निकट सम्पर्कमें रहनेका सौभाग्य मिला था। और मैं देखता था कि जीवनभर हर क्षण उनके मनमें अपने देशका ही विचार रहता था जिसकी उन्होंने इतनी एकनिष्ठासे सेवा की। उनकी दृष्टिमें स्वराज्य कोई दूरका सपना नहीं था; वह तो उनके लिए उनकी प्राण-वायुके समान था। उनकी स्वतन्त्रताकी लालसा दिन-ब-दिन बढ़ती गई। इसलिए यह उपयुक्त ही है कि आप अपनी आँखोंके सामने एक ऐसे देशप्रेमीका चित्र रखें ताकि आपको उनके सद्गुणोंका सदैव स्मरण होता रहे और आप उन गुणोंको अपने जीवनमें उतारनेकी कोशिश करें। जिस देशभक्तकी आप सराहना करते हैं उसको महान् बनानेवाले उसके गुणोंका यदि आप अनुकरण नहीं करते तो केवल उस व्यक्तिके प्रति मौखिक श्रद्धा प्रकट करने मात्रसे आपको कोई लाभ नहीं होगा। आप उनके चित्रको अपने सामने रखते हैं तो इसका यह अर्थ होना चाहिए कि आप उनके पद-चिह्नोंपर चलनेके लिए कृत-संकल्प हैं। आप यह भी याद रखें कि ऊँच-नीचकी भावनासे वह परे थे। अपने दीर्घ और विविधतापूर्ण जीवनमें उन्होंने अस्पृश्यताको कभी कोई स्थान नहीं दिया। उनके सीनेमें एक राजाका हृदय था। वह पैसा कमाना भी जानते थे और पैसा लुटाना भी जानते थे।

इसके बाद गांधीजीने विद्यार्थियोंसे कहा कि आप यदि हरिजनोंसे प्रेम करते हैं तो पैसा देना काफी नहीं है। आप गन्दे तबेलोंको, अर्थात् दिल्लीकी हरिजन-बस्तियोंको साफ करके अपने उस प्रेमका एक ठोस सबूत दीजिए। मैंने नई दिल्लीके महलों, जिनके ऊपर पानीकी तरह पैसा बहाया गया है, और उन नारकीय बस्तियोंका विरोधाभास देखा है जहाँ हरिजनोंको मजबूरीमें रहना पड़ता है। यह कहते समय गांधीजीकी वाणीमें ऐसी गहरी व्यथा छिपी हुई थी जिसे शब्दोंमें व्यक्त नहीं किया जा सकता।

१. सभा हिन्दू कॉलेजमें हुई थी।

२. गांधीजीने मोतीलाल नेहरूके चित्रका अनावरण किया था।

मैंने चारमे से तीन वस्तियाँ देखी है, इनमे से एककी दशा तो सबसे बुरी थी। आँखोसे देखे विना कोई कल्पना ही नही कर सकता कि मनुष्यके रहनेके लिए कोई ऐसा भी स्थान हो सकता है। मैंने वहाँ जैसी गन्दगी और घिनावनापन देखा उसका वर्णन करनेके लिए मेरे पास कोई शब्द नही है। उससे किसीको भी मतली हो सकती है। आप अपनी कमर कस ले और इन नरक-स्थलोको साफ करें। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आपमे कुछ ऐसे विद्यार्थी है जो हरिजनोकी शारीरिक श्रम करके भी सेवा करना चाहते है। जव आप वस्तियोसे कूड़ा-कर्कट हटा देंगे तो अधिक उपयोगी सेवा करनेके दूसरे वहुतसे तरीकोका आपको पता लग जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-१२-१९३३

३५८. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

दिल्ली

बुधवार, १३ दिसम्बर, १९३३

साम्प्रदायिक भावनाके आधारपर अपने-अपने साम्प्रदायिक संगठन खड़े करनेकी, चाहे ये संगठन हिन्दुओके हों या मुसलमानोके, श्री जवाहरलाल नेहरूने जो आलोचना[1] की है उसका सर मुहम्मद इकवाल द्वारा दिया गया जवाव[2] मैंने अभी-अभी पढा है। इस विवादमे मै पडना तो नही चाहता, लेकिन सर मुहम्मद इकवालने मेरे वारेमे जो वात कही है, उसे मै निर्विरोध नही जाने दे सकता।

लन्दनमे मेरी स्थिति[3] स्पष्ट थी। विना डॉ० अन्सारीके साम्प्रदायिक मामलोमे कोई प्रभावकारी कदम उठानेकी दृष्टिसे मै लाचार था। मै काग्रेसके आदेशसे बँधा हुआ था, और कोई सशोधन सुझानेसे पहले मेरे लिए डॉ० अन्सारीकी सलाह लेना जरूरी था। चूँकि फिलहाल मै मौलाना शौकत अलीका विश्वास खो बैठा हूँ, इसलिए मैंने मुसलमान मित्रोसे कहा कि जहाँ तक मुसलमानोसे सम्वन्धित मामलोंकी वात है, मेरा अन्त करण डॉ० अन्सारीकी जेवमे है, और इसलिए सम्मेलनमे उनकी मौजूदगीके लिए कोशिश करनेमें आप लोग मेरी मदद कीजिए। इसके लिए मुसलमान मित्र राजी नही हुए। उनका कहना था कि ऐसा वे तभी करेंगे जव पहले मै उनकी माँगोको स्वीकार कर लूँ। जव मेरा प्रयत्न विफल हो गया तव मैंने वास्तविक एकता स्थापित करनेके लिए मेरे पास जो अन्य साधन मौजूद थे उनका सहारा लिया, लेकिन इनमे मै वुरी तरह विफल हुआ।

काग्रेसके समर्थकोके रूपमे काम करनेका प्रस्ताव उस समय मखौल जैसा प्रतीत होता था। और उसके वाद वह एक मखौल सिद्ध भी हुआ है। वार्त्ताके पीछे

१. जवाहरलाल नेहरूके वक्तव्यके अंशोंके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

२. देखिए परिशिष्ट २।

३. १९३१ में गोलमेज सम्मेलनमें; देखिए खण्ड ४८।

अवास्तविकताकी एक दमघोटू अनुभूति बनी हुई थी। जिस चीजको सर मुहम्मद इकबाल मुसलमानोंकी माँगको व्यक्तिगत रूपसे स्वीकार करनेकी मेरी दो शर्तें बताते है, वे शर्तें नही बल्कि मेरी स्वीकृतिका आवश्यक परिणाम थी। राजनीतिक एकता एक राजनीतिक उद्देश्यकी सिद्धिके लिए वांछित थी, और यह उद्देश्य मेरे तई और मैं ही नही किसी भी भारतीयके तई, चाहे वह हिन्दू हो, मुसलमान हो, ईसाई हो या और कुछ हो, सच्चे अर्थोमें पूर्ण राष्ट्रीय स्वतन्त्रता ही हो सकता है। मुसलमानोकी माँगें समान कार्रवाईके लिए प्रस्तुत की गई थी। लन्दनमें मुसलमान मित्र अन्य अल्प-संख्यकोको अत्यन्त महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय हितोके विरुद्ध उकसा रहे थे। यदि उन्हे मुझे अपने सहायकके रूपमें स्वीकार करना था — और मैंने पूरी ईमानदारीसे अपनी सहायता उनको प्रदान करनेका प्रस्ताव भी किया था — तो मेरी सहायता ऐसी प्रत्येक शक्तिके विरुद्ध संघर्ष करनेके लिए ही हो सकती थी जो भारतकी स्वतन्त्रताके विरुद्ध हो। अतः पृथकताकी भावनाके विरुद्ध संघर्ष करना आवश्यक था, भले ही इस भावनाको कोई भी फैला रहा हो।

किसी भी मुसलमानने पृथक मतदानको खुदमें एक अच्छी चीज नही बताया है। स्वयं अपने मामलेमें भी मुसलमान मित्रोंने स्वीकार किया है कि यह एक आवश्यक बुराई है जिसे अस्थायी अवधिके लिए सहन करना होगा। इसलिए इस सिद्धान्तका अनिश्चित रूपसे प्रसार नही किया जा सकता। तथाकथित अस्पृश्योकी ओरसे रखी गई माँग स्पष्ट रूपसे राष्ट्रविरोधी है। यदि इस माँगकी राष्ट्रीय हितके साथ संगति बैठती अथवा हरिजन हितोकी रक्षाके लिए यह आवश्यक होती तब तो, जैसा कि सर मुहम्मद इकबालने कहा है, मेरा विरोध करना अमानुषिक कार्य होता। लेकिन वैसी हालतमें मुसलमान मित्रोको यह प्रस्ताव भी नही रखना चाहिए था कि यदि मैं उनकी माँगें स्वीकार कर लूं तो वे तटस्थ रहेंगे। लेकिन मै मानता हूँ कि मेरा विरोध न केवल 'अमानुषिक' नही था, बल्कि यह विरोध हरिजनोके हितमे ही किया गया था।

मैं अपने आपको स्वेच्छया हरिजन मानता हूँ। हरिजनोके हितकी रक्षा करनेकी मेरी इच्छा किसी बड़ेसे-बड़े हरिजन नेतासे कम नही है। स्पष्ट ही सर मुहम्मद इकबालको यह देखने और समझनेका अवसर नही मिला है कि मैंने हरिजनोके लिए क्या किया है और क्या कर रहा हूँ। अगर उन्होने सरसरी तौरपर भी मेरे कार्य-कलापोंको देखा-समझा होता तो वह यह नही कहते, जैसा कि उन्होने कहा है, कि "श्री गांधीने अस्पृश्योको अन्य जातियोके साथ घुलने-मिलनेसे रोकनेको, और अस्पृश्यों तथा सवर्ण हिन्दुओ तक में कोई वास्तविक सम्मेलन हुए विना अस्पृश्योंको हिन्दू-धर्मके अन्दर बनाये रखनेको अपने जीवनका मिशन बना लिया है।" उन्हें जानना चाहिए कि अस्पृश्यताका उन्मूलन मेरे जीवनका उद्देश्य है जिसे मैं पिछले पचास वर्षोंसे अबाध रूपसे करता रहा हूँ, और धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक मामलोमे सवर्ण हिन्दुओंको जो अधिकार प्राप्त है वे ही अधिकार हरिजनोंको भी देनेकी माँग मैंने की है और उनके लिए लड़ता रहा हूँ।

हरिजनोसे सम्बन्धित मेरा काम शुद्ध रूपसे धार्मिक काम है। इसके पीछे कोई राजनीतिक हेतु नही है। यह बुनियादी तौरपर अत्यन्त ऊँचे ढगका लोकोपकारी कार्य है। यह हिन्दू-धर्ममे आन्तरिक सुधारका आन्दोलन है। हिन्दू-समाजके अछूतोपर जो अमानुषिकताएँ थोपी गई है, यह आन्दोलन सवर्ण हिन्दुओ द्वारा उनके लिए पश्चाताप और क्षतिपूर्ति करनेका आन्दोलन है। मेरी राष्ट्रीयताकी भाँति ही मेरा हिन्दुत्व भी सम्पूर्ण मानवतासे अलग या मानवताके किसी अगके हितोके प्रतिकूल नही है। मै ऐसी स्वतन्त्रताको स्वतन्त्रता माननेसे इनकार कर दूंगा जिसमें मुसलमानोके या अन्य किसी वर्गके ऐसे हितोका बलिदान होता हो जो भारतकी स्वतन्त्रताके विरुद्ध नही है। मैने लन्दनमे सभी सवालो पर इसी भावनासे विचार किया था।

साम्प्रदायिक एकताकी आवश्यकता है, इस बातमे मेरा जितना दृढ विश्वास पहले था उतना ही अब भी है। पूछा जा सकता है कि अब मै क्या करूँगा। मेरी स्थिति वही है जो पहले थी। मै ऐसे किसी भी समाधानको स्वीकार कर लूंगा जो सभी मुसलमानोको स्वीकार हो और जो अन्य राष्ट्रीय हितोके विपरीत न हो। स्वभावत मै श्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा दिये गये सुझावका अनुमोदन करता हूँ। इससे ज्यादा न्यायोचित कुछ नही हो सकता। एक राष्ट्रवादीकी हैसियतसे मै छोटी-बड़ी सभी जातियोका प्रतिनिधि होनेका दावा करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-१२-१९३३

३५९. भाषण : हरिजनोंकी सभा, दिल्लीमें[1]

१४ दिसम्बर, १९३३

आपके लिए जो स्कूल और कुएँ बनवाये जा रहे है सो आपको अस्पृश्य रखनेके विचारसे नही बनवाये जा रहे। लेकिन आपको पीनेके लिए पानी ही न मिले, यह मुझसे सहन नही होता। जिस पोखरसे कुत्ते और ढोर पानी पीते है उसमे से हरिजनोको पानी मिले, इस बातको कैसे सहन किया जा सकता है? आप तो शहरमे रहते है इसलिए कदाचित् आपको नलका पानी मिलता होगा, लेकिन गाँवोमे तो सवर्ण लोग उद्धततावश हरिजनोको कुँओके नजदीक भी नही आने देते। पानी देते है तो वह भी दूरसे गालीके साथ। यह बात आपको और मुझे सहन नही करनी चाहिए। हरिजनोके लिए कुएँ खुदवाये जाते है, सो उन्हे अस्पृश्य रखनेके लिए नही अपितु इसलिए है कि आपको कमसे-कम स्वच्छ पानी तो मिले। और ये कुएँ कोई अकेले हरिजनोके लिए ही है, ऐसी बात नही है। दूसरे लोग भी वहाँ पानी भरनेके

१. श्रद्धानन्द नगरीके हरिजनोंने गांधीजीको अभिनन्दनपत्र भेंट करते हुए कहा था कि हरिजनोंके लिए अलगसे स्कूल, कुएँ और मन्दिर नहीं खोले जाने चाहिए, क्योंकि इसका अर्थ उनका हिन्दू-समाजसे अलग होना होगा।

लिए आ सकते हैं, लेकिन हरिजनोंको तो वहाँ जानेका अधिकार है ही। उन्हें ढोरोंके पीनेके पोखरसे पानी लेना पड़ता है, यह बन्द होना चाहिए। सच पूछा जाये तो इनके लिए जितने कुएँ खुदवाये जाने चाहिए उतने हम नहीं खुदवा सके हैं और आप यह भी देख रहे हैं कि कितने ही सवर्ण हिन्दू स्वेच्छासे अपने कुएँ हरिजनोंके उपयोगके लिए खोलते जा रहे हैं। यही बात स्कूलोंके बारेमें भी लागू होती है। सार्वजनिक स्कूलोंमें हरिजनोंको प्रवेश दिये जानेके प्रयत्न तो चल ही रहे हैं, लेकिन जबतक हम हरिजनोंको सार्वजनिक स्कूलोंमें प्रवेश नहीं दिला सकते तबतक हमारे सामने यह सवाल है कि या तो हम हरिजनोंके लिए स्कूल खोलें या बच्चोंको पढ़ाईसे वंचित रहने दें। इसलिए हम स्कूल खोल रहे हैं। इनमें दूसरे बच्चे भी आ सकते हैं। लेकिन हरिजनोंको तो इनमें आनेका पूर्ण अधिकार है।

आपको 'हरिजन' नाम दिया गया है, यह तो कड़वे नामके बदले मधुर नाम दिया गया है। इस नामको अनेकों हरिजनोंने स्वीकार किया है। 'अस्पृश्य' जैसे खराब नामके बदले यह नाम अच्छा है। यह नाम एक हरिजनने ही सुझाया था। बुरे नामसे पुकारनेमें जो अविनय है वह इससे दूर हो जाता है। जब अस्पृश्यता मिट जायेगी तब या तो हिन्दूमात्र अपने आपको 'हरिजन' नामसे पुकारेंगे अथवा हरिजन सम्पूर्णतया हिन्दू-समाजमें मिल जायेंगे। तीसरा मार्ग यह है कि हिन्दू जाति ही नामशेष हो जायेगी। लेकिन इस विपत्तिको टालनेके लिए आज बहुत प्रयत्न किया जा रहा है। हरिजन सेवा संघ द्वारा यही काम हो रहा है जिससे अस्पृश्यता नष्ट हो जाये।

श्रद्धानन्द बस्तीमें आनेसे मुझे आनन्द हुआ है। हिन्दू-समाजमें ऐसा कौन होगा जो स्वर्गीय श्रद्धानन्दजीके नामसे परिचित न हो? श्रद्धानन्दजीके हृदयमें हरिजनोंके लिए जितनी दया और प्रेमभाव था उतना और किसीके हृदयमें नहीं हो सकता। हिन्दू जातिने अभिमानवश अस्पृश्य वर्गकी उत्पत्ति की है। इसका श्रद्धानन्दजीको बहुत मलाल था। इस पापके लिए या तो हिन्दू जातिको नष्ट होना पड़ेगा अथवा अपने पापका परिमार्जन करना होगा। परिमार्जनके इस कार्यमें आप मदद करें। दूसरे हरिजनोंके पास आप यह सन्देश ले जायें। जो शुद्धियज्ञ हो रहा है उसमें आप अपना योगदान दें। बाह्य और आन्तरिक सफाई रखें, मरे ढोरोंका मांस खाना छोड़ दें, गोमांस-भक्षणका त्याग करें। यह तीन काम तो आप अवश्य ही करें। चौथी बात यह है कि आप शराब पीना छोड़ दें। अन्य हिन्दू यदि शराब पियें तो भी आप उसे छोड़ दें। आपका तो पतन किया गया है और अब आपको अपने ही बलपर चढ़ना है, इसलिए मैं आपसे शराब छोड़नेकी विनती करता हूँ। आप इतना करें और अन्य हरिजनोंसे भी इसे करनेके लिए कहें। आपने मुझे थैली भेंट की है। लेकिन हरिजनोंसे तो मैं कौड़ी भी नहीं माँगता। आपको तो हमें देना है। हमपर तो आपका ऋण है। तथापि हरिजन देते हैं तो मैं ले रहा हूँ। इसका अनेक गुणा आपको वापस दिया जायेगा। लेकिन आपको देनेकी जरूरत नहीं।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २४-१२-१९३३

३६०. भाषण : महिला-सभा, दिल्लीमे

१४ दिसम्बर, १९३३

परमात्मा, जो सबका स्रष्टा है, की आँखोमे उसके सब प्राणी बराबर है। अगर उसने मनुष्य-मनुष्यके बीच उच्च और नीचका कोई भेदभाव रखा होता तो वह दिखाई देता जैसे कि, मिसालके तौरपर, हाथी और चीटीमे भेद नजर आता है। लेकिन उसने तो सभी मनुष्योको बिना किसी भेदभावके समान आकार-प्रकार और समान स्वाभाविक आवश्यकताएँ प्रदान की है। यदि आप हरिजनोको मल-मूत्र आदि साफ करनेके कारण उन्हे अस्पृश्य मानती है तो क्या एक माँ अपने बच्चोके लिए रोज यही काम नही करती? तब क्या इस कारण ही वह अस्पृश्य बन जाती है? जिस प्रकार माँ नहा-धोकर शुद्ध बन सकती है, उसी प्रकार यही बात भंगियोके ऊपर भी लागू हो सकती है।[1] हरिजनोको, जो समाजके सबसे ज्यादा उपयोगी सेवक है, अस्पृश्य और अछूत समझना अन्यायकी चरम सीमा है। मै यह दौरा हिन्दू बहनोको इस पापके प्रति सचेत करनेके लिए ही कर रहा हूँ। किसी व्यक्तिको अपनेसे हीन समझना कभी भी तारीफकी बात नही हो सकती। हम सब एक ही परमात्माके उपासक है, जिसकी उपासना हम विभिन्न नामोसे करते है। इसलिए हम सबको अपनी आधारभूत एकताको पहचान लेना चाहिए तथा छुआछूतकी और मनुष्योमे अमुक छोटा और अमुक बडा है इस भावनाका त्याग कर देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-१२-१९३३

३६१. अनन्तपुरमें मैंने क्या देखा?

मध्यप्रान्त (हिन्दी-भाषी)के सागर जिलेमे अनन्तपुर एक छोटा-सा गाँव है। इस गाँवमे कुल १७७ घर है, और जन-सख्या लगभग ८८५ है। सबसे करीबका रेलस्टेशन यहाँसे ३५ मील दूर है। यहाँ डाकघर और तारघर नही है। अनन्तपुरसे १२ मील दूर रहली गाँवसे सप्ताहमे एक बार डाक आती है। यहाँके लिए यही निकटसे निकट डाकघर है। दरिद्र भारतका, नमूनेके बतौर, यह एक अत्यन्त गरीब गाँव है। सालमे चार महीनेसे ज्यादाका काम गाँववालोके पास नही रहता। चार साल पहले तक यहाँके तमाम लोगोके लिए मुश्किलसे शायद ही कोई सहायक धन्धा था। उसके बाद एक घटना घटी।

१. ये दो वाक्य *हिन्दुस्तान टाइम्स*, १५-१२-१९३३ से लिये गये है।

१९२९ के सालमें अपनी ग़जबकी धुनके एक उत्साही नवयुवकने अपने प्रयोगके लिए यह अनन्तपुर गाँव चुना। ऐसे गाँवकी तलाशमे, वह एक सालसे बराबर भटक रहा था। खद्दरके पीछे तो वह पागल है। खद्दरके सन्देशमे उसका शायद मेरे बराबर ही विश्वास है। मुझे शक है कि कही वह मेरे 'शायद' के स्थानपर 'अगर अधिक नही तो' न कर दे। अगर उसने यह संशोधन कर दिया, तो मुझे कोई आपत्ति न होगी। उस तरुणका आत्मविश्वास ऐसा है जो हममे से बड़ेसे-बड़े आदमीको लज्जित कर सकता है। उसका विश्वास है कि भारतकी कृषक-जनताकी मजबूरीकी बेकारी, और फलस्वरूप उसकी चिर-निर्धनताको दूर करनेका कोई एकमात्र स्थायी उपाय है तो यही है कि चरखेको व्यापक रूपसे अपनाया जाये। उस युवकका नाम है जेठालाल गोविन्दजी। भाई जेठालाल अंग्रेजी नही जानते। गुजरातीके भी वह विद्वान नही हैं। यद्यपि पालन-पोषण उनका नगरमे हुआ, तो भी बड़ी तितिक्षासे उन्होने अपने आपको ग्राम-जीवनकी मुसीबतें सहन करने योग्य बना लिया है और गाँववालोके बीचमे रहकर वह वैसा ही जीवन व्यतीत कर रहे हैं। उनके साथ तीन कार्यकर्त्ता हैं। एक समयमे एक ही काम किया जाये, इसमे उनका दृढ विश्वास है, और इसीलिए वह और कोई सामाजिक सेवा, चाहे वह कितनी ही लुभानेवाली हो, नही करते। उनका खयाल है कि अगर घर-घरमे चरखेका अच्छी तरह प्रचार हो गया, तो बाकी समस्याएँ, जो गाँववालोको हैरान किये रहती हैं और उन्हे नीचे गिरा रही है, अपने-आप ही हल हो जायेगी। उनका कहना है कि "किसी गाँववालेसे शराब न पीने और किफायतशारीसे रहनेको मैं नही कहूँगा, क्योकि कोई भी शराबी, जबतक वह शराबकी लत नही छोड़ेगा, चरखेको छुएगा भी नही; और कगालके सामने किफायतशारीके गीत गाना तो एक तरहका मखौल ही होगा। उसकी जेबमे ताँबेके कुछ गोल-गोल टुकड़े डालनेके बाद ही उसे किफायतशारीका उपदेश देना समयानुकूल होगा। चूंकि मैं मानता हूँ कि चरखेका हरएक चक्कर उसके दैनिक जीवनमे क्रान्ति करनेवाला होगा, इसीलिए उसकी बहुत-सी बुराइयों और कमजोरियोंको मैं धीरजके साथ सहन कर लूँगा। और मेरा विश्वास है कि यदि मैं स्वयं पवित्र हूँ, तो मेरी पवित्रता गाँववाले भाइयोके बाह्य और आन्तरिक, दोनों शरीरोका स्पर्श किये बिना नही रह सकती।" भाग्यमे परिवर्तन होते रहनेपर भी, अटल आस्थाके साथ, वह और उनके तीनों साथी पिछले चार सालोसे अपने उद्यममें बड़ी लगनसे लगे हुए हैं। उनका मूल मन्त्र 'स्वावलम्बन' है। खादी स्वावलम्बी होनी ही चाहिए। स्वावलम्बी बननेका उपाय यह है कि गाँववाले खुद कातें और सम्भव हो तो अपने लिए कपड़ा भी बुने। अपने पैदा किये हुए अनाजका जो अंश बचता है केवल वही वे बेचते हैं। उसी प्रकार बचा हुआ फाजिल कपड़ा ही वे बेचें। जैसे अपने ही खेतमे पैदा हुए और अपने ही घरमे पीसे तथा पकाये हुए अनाजकी रोटीसे ज्यादा सस्ती और कोई रोटी नही हो सकती, वैसे ही अपने ही घरमे कते और बुने हुए कपड़ेसे और कोई कपड़ा सस्ता नही हो सकता। इन सेवकोंका काम गाँववालोंको कातना-बुनना सिखाना व उसमे मदद देना है। वे हर झोपड़ेमे जाते हैं और उन सबसे ओटना, कातना, धुनना,

बुनना और रँगना सीखनेको कहते है, वे उनके चरखोंको सुधारते है और गाँवमें चरखे बनाने लायक जो कुछ सामान मिलता है, उसीसे वे वेचनेके लिए नये-नये चरखे बनवाते हैं। गाँवके बढई और लुहारको इस तरह कुछ अधिक काम मिल जाता है। प्रत्येक कामके विषयमे खूब विचार कर लिया गया है। उन्होने प्रत्येक गाँववालेकी आवश्यकताओ और अभावोका, उनकी आदतो और रीति-रिवाजोका काफी अच्छा अध्ययन किया है और अपनी रिपोर्ट हिन्दीमे प्रकाशित की है। मधुमक्खियोके छत्तेकी तरह उनके कारखानेमे खूब चहलपहल मची रहती है। खूब सुघड़ता और व्यवस्थित तरीकेसे वहाँ काम होता है। तमाम कार्यकर्त्ताओकी एक किताब रहती है, जिसमें हरएक के रोजाना काम का सक्षेपमें विवरण रहता है। खादी-कार्यकी नीव डालने-वाले चार ही सेवकोकी यहाँ मैंने चर्चा की है। यो तो अनन्तपुरके चारो ओर पाँच मीलके घेरेमे १७ गाँवोकी सेवाके लिए उन्होने कार्यकर्त्ता पैदा कर दिये है।

जो झोपड़े अनन्तपुरमे मैंने देखे, उनके बारेमें भी यहाँ दो शब्द कहूँगा। मै छ· से अधिक झोपड़ोमे गया। उनमे से एक झोपड़ा हरिजनका भी था। यहाँ यह कहना ही पडता है कि इस खादी सन्देशके अनुसार काम करनेमे हरिजन भाई सबसे अधिक तत्पर पाये गये।

झोपडे नीची छतोके थे। उनकी कच्ची दीवारें मिट्टीकी बनी हुई थी। हवा और रोशनी आनेके लिए झरोखे तो नामको भी नही थे। झोपडोमे सन्दूक और धातुके बर्तन-भाँडेतक न थे। जिन्होने अपने लिए खादी बुन ली थी, उन्हे छोडकर बाकी लोग कटे-फटे चिथड़े पहने हुए थे। मैंने उनके पास जो-कुछ देखा, वह साल-भरका नाज रखनेके लिए मिट्टीका खाली कोठा ही था। एक ही कोठा रसोई बनाने, रहने और सोनेके काममें लाया जाता है। उनके बिस्तरे भूसे या पयालके थे, और वे कुछ चिथड़ोसे ढँके हुए थे। यह बात उन घरोमे नही थी, जहाँ उन्होने अपने लिए कुछ खादी बुन ली थी। अब उनका भोजन सुनिए — ज्वारकी रोटियाँ और तेल या बिना तेलकी छौक लगी दाल। दूध-घी तो शायद ही उन्हें कभी नसीब होता हो। जिस चमार भाईका झोंपडा मैंने देखा, वह एक अपवाद था। उसके यहाँ दो गायें थी। उसे और उसके बच्चोको कभी दूधकी एक बूंद मिल जाती है या नही, यह तो एक दूसरी बात रही। गाँववालोको अपर्याप्त भोजन मिलता है और पहननेको कपडे तो और भी कम। कुछ बच्चे तो बारहो महीने बिलकुल नंग-धड़ग ही रहते हैं। दिनमे धूपसे और रातमें फूसकी आगसे वे अपने ठिठुरते हुए तनको गरम कर लेते हैं। मुझे बताया गया कि अनन्तपुरमे कुछ ऐसे परिवार है, जिन्होने खद्दरके धन्धेको एक पैसेकी रुई खरीदकर शुरू किया था। एक पैसेकी रुई खरीदकर जो सूत काता गया, उसे बेचकर दूसरे दिन दुगुनेसे काम शुरू किया गया। इस तरह धीरे-धीरे पूंजी बढाकर अब वे अपने कपड़े आप तैयार करने लगे है।

मेरे दौरेके अवसरपर जो विवरण-पुस्तिका तैयार की गई थी, उसमे से यहाँ कुछ अश मै नीचे उद्धृत करता हूँ: —

सारे सामानकी यह लागत है:

	रु० आ० पाई
ओटनेकी चरखी	०–७–०
धुननेकी कमान, ताँत और हत्था	०–९–६
चरखा और तकुआ	०–६–६
अटेरन या नटाई	०–१–०
३२ इंच चौड़ा करघा और उसका सब सामान	३–०–०
कुल	४–८–०

अनन्तपुरके चारों ओर पाँच मीलके चक्करमें १७ गाँवोंमें हम खादीका काम करते हैं। इन गाँवोंमें कुल ११०० घर हैं और आबादी ५५०० के लगभग है। हमारे श्रमके फलस्वरूप ८० प्रतिशत लोगोंने कताई सीख ली है और ६० प्रतिशत लोगोंने बुनना सीख लिया है।

सौ से अधिक आदमी बुनना सीख गये हैं।

सूतकी साधारण मजबूती ५६ तक पहुँच गई है और औसतन १० नम्बर तक का सूत कात लिया जाता है।

गाँववालोंके काम करनेका औसत सालभरमें १२० दिनका है —शेष समयमें वे बिल्कुल बेकार बैठे रहते हैं। आजकल हरएक आदमी बेकारीके दिनोंमें से सालभर में औसतन ५०० घंटे खादीके काममें लगाता है। हमारा आदर्श तो यह है कि यह औसत सालभरमें हम १६०० घंटे तक पहुँचा दें।

अधिक कार्यकर्त्ता पैदा कर सकनेपर ही अब हमारे कार्यकी उन्नति निर्भर करती है। आजकल हमारे पास तीन मुख्य कार्यकर्त्ता, तीन सहकारी, पाँच उप-सहकारी, पाँच मददगार और चार उम्मीदवार हैं।

हमारे मासिक खर्चका औसत ३२५ रुपये हैं। अखिल भारतीय चरखा संघकी ओरसे हमें यह पैसा मिलता है।

इस महान् प्रयोगकी ओर जनताका ध्यान मैं केवल यह दिखानेके लिए ही आकर्षित नहीं कर रहा हूँ कि हरिजनोंको इससे कहाँ तक लाभ है, बल्कि इसलिए भी कि तमाम गाँववालोंपर खादीके इस सफल प्रयोगका कैसा प्रभाव पड़ता है। इस प्रयोगका उद्देश्य सिर्फ हरिजन-सेवा ही नहीं है; इसका उद्देश्य तो चरखेके द्वारा उन सब गरीब ग्रामवासियोंकी सेवा करना है जिन्हें पर्याप्त भोजन और वस्त्र नहीं मिलते। खादीके द्वारा ग्राम-सुधार करनेका इससे अधिक सरल, सस्ता और प्रभावकर प्रयोग मैं नहीं जानता। फिलहाल उन्नति तो निस्सन्देह धीमी मालूम होती है, मगर मुझे उम्मीद है कि अन्तमें इस प्रयोगके द्वारा ही उन्नतिकी गति तेजसे-तेज देखनेमें आयेगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-१२-१९३३

३६२. स्मरण रखने योग्य बातें

मेरे गत एक मासके इस प्रवासमे समय तो अधिक नष्ट हुआ ही, कार्यकर्त्ताओंको भी चिन्ता काफी रही—और जैसा मेरा साधारण-सा स्वास्थ्य है, उसे देखते हुए मुझे अधिक और अनावश्यक परिश्रम उठाना पडा, और मेरी मोटर गुजरते समय उसकी ओर अव्यवस्थित भारी भीड़ उमडनेके कारण ही यह सब हुआ। याद नही कि कितने ही अवसरोपर लोगोने मेरे पैरकी उँगलियाँ कुचल दी और मेरे पैर खरोच डाले। अबतक ईश्वरने ही मुझे किसी गहरी चोटसे बचाया है। पर मेरी इस रक्षाका श्रेय वे अव्यवस्थित जनसमूह नही ले सकते। लोग तो प्रेममे पागल हो जाते है। और यह स्पष्ट है कि पागलपनसे किसीका कोई भला नही होता। अगर स्वयसेवक लोग खुद अच्छे ढगसे काम करे, और जैसा कि अक्सर देखनेमे आया है, उमडी हुई भीडके साथ वे खुद पागल न हो जाये, तो सुव्यवस्था बडी आसानीसे हो सकती है। एकाएक तो लोगोको किसी बातकी हिदायत दी नही जा सकती। इसलिए यह अच्छा हो कि पहलेसे ही पर्चे छपाकर लोगोमे बाँट दिये जाये और स्वयसेवक सभा-स्थलमे आनेवाली जनताको सारी हिदायते पढ-पढकर भली-भाँति समझा दिया करे। इस तरहकी सबसे अच्छी व्यवस्था तो हर्दामें की गई थी। वहाँके सुसज्जित बाजारमे यद्यपि काफी रेलपेल थी, तो भी हम लोगोको उस भीडमे से गुजरनेमें दस मिनटसे ज्यादा नही लगे। दूसरी जगहोपर उतना ही फासला तय करनेमे अक्सर आध घटेसे भी अधिक समय लगा है। हर्दामे जो सफलता मिली, वह सिर्फ पहलेसे की गई तैयारियोके कारण ही नही मिली, बल्कि उसका बहुत सारा श्रेय तो स्वयसेवकोपर था, जो ठीक-ठीक फासलेपर एक लम्बी रस्सी पकडे कतारोमे खडे हुए थे। उनकी लाइनोको लाँघकर कोई जा ही नही सकता था। खैर, अब मै सर्वसाधारणके सूचनार्थ चन्द हिदायतोकी एक सूची नीचे देता हूँ। मुझे आशा है कि इन हिदायतोपर सामान्य रीतिसे मेरे प्रवासमें सर्वत्र अमल किया जायेगा।

(१) हिदायतोंके पर्चे ऐसी सरल भाषामे छपाकर गाँववालोमे बाँट दिये जाया करे, जिसे वे आसानीसे समझ ले। गाँवोसे ज्यो ही लोग सभा-स्थल पर आने लगें, उन्हे ये पर्चे पढ-पढकर भली-भाँति समझा दिये जाये।

(२) स्टेशनोपर जो लोग मुझे लेने आये, उन्हे कतारे बाँध-बाँध कर खड़े हो जाना चाहिए, ताकि मुसाफिरोको किसी तरहकी असुविधा न हो। जब गाडी प्लेटफार्म पर आ जाये, तब भी उन्हे अपनी जगहोसे नही उठना चाहिए।

(३) प्लेटफार्मपर गाड़ी पहुँचनेसे कुछ मिनट पहले भीडके आगे स्वयसेवकोको कमर तक ऊँची एक लम्बी रस्सी पकड़ाकर खडे कर देना चाहिए, इससे पीछे खडे हुए आदमी अनजानमे मेरी ओर तथा रेलकी तरफ न आ सकेगे।

(४) स्वयंसेवक लोग किसी भी हालतमें मेरे सामने साष्टांग दंडवत न करें।

(५) स्वयंसेवकोंको 'जयकारों' या दूसरे नारोंमें भाग नहीं लेना चाहिए। इससे उनके उचित कर्त्तव्य-पालनमें तो बाधा पड़ती ही है, साथ ही उनके उन जयकारोंमें भाग लेनेसे नारोंकी स्वतःस्फूर्तिता समाप्त हो जाती है।

(६) अपनी हिदायतें स्वयंसेवक जोरसे चिल्ला-चिल्ला कर जनताको न सुनायें, बल्कि धीरज और नरमीसे समझाया करें। सिर्फ एक ही स्वयंसेवक, जो इस कामके लिए नियत किया गया हो, उन आदेशोंको सुनाया करे।

(७) लोगोंसे प्रार्थना की जाये कि वे मोटरगाड़ियोंको चारों ओरसे घेर न लिया करें।

(८) जबतक स्वागत समितिका कोई उत्तरदायी सदस्य न कहे, किसी हालतमें स्वयंसेवकोंको मेरी या किसी दूसरी मोटरगाड़ी पर नहीं चढ़ना चाहिए।

(९) मेरी रेल-यात्रामें रातके ८ बजेसे लेकर सवेरे ६ बजे तकके दरम्यान जनता किसी स्टेशनपर जमा न हो, और रातको लोग जयकारके या दूसरे नारे तो हर्गिज न लगायें। रातमें इन नारोंके बुलन्द करनेसे मुसाफिरों तथा मेरे साथियोंके आराम और शान्तिमें खलल पड़ता है।

(१०) दिन या रातको जो लोग स्टेशनोंपर जमा हो जाते हैं, यह अच्छा होगा कि वे एक बातका सदा स्मरण रखें। वह यह कि मैं मानपत्र बटोरनेके लिए यह दौरा नहीं कर रहा हूँ। इसका उद्देश्य तो लोगोंसे आत्मशुद्धि करनेके लिए कहना है, तथाकथित उच्च वर्गीय हिन्दुओंको हरिजनोंके प्रति किये गये उनके अन्यायका प्रायश्चित्त करनेको आमंत्रित करना है, और हरिजन-कार्यके लिए धन-संग्रह करना है। इसलिए स्टेशनोंपर आनेवाले भाइयोंसे स्वाभाविक रीतिसे मैं यही आशा करूँगा कि निजी अथवा सामूहिक रूपसे वे कुछ-न-कुछ पैसा लेकर ही आया करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-१२-१९३३

३६३. पत्र : अगाथा हैरिसनको

२५ दिसम्बर, १९३३

असंशोधित

प्रिय अगाथा,

मैं यह पत्र बहुत सवेरे चलती हुई ट्रेनमें लिख रहा हूँ। मीराने अब नियमित पत्र लिखने बन्द कर दिये हैं। वह सेवा-शुश्रूषा, खाना बनाना, बोतल धोना, 'हरिजन' के प्रूफ पढ़ना, तथा यूरोप और अमेरिकाके लोगोंसे पत्र-व्यवहार करनेका काम एक साथ करे, और फिर भी उसका शरीर न टूट जाये, ऐसा नहीं हो सकता।

तुम्हारे पत्र मूल्यवान होते हैं।

भूलाभाई देसाईके कामके बारेमे तुम्हारा जो कहना है उसमे कोई आश्चर्यकी बात नही है। इससे कमकी मुझे आशा भी नही थी।

रोममे काल्पनिक भेंट करनेके सम्बन्धमे बेशक, मुझे रोमके पत्र-प्रतिनिधि[1] द्वारा पुन स्पष्टीकरण कभी देखनेको नही मिला। मै तो जेलमे था। लेकिन यदि मै पहले-वाला वक्तव्य और दुवारासे की गई पुष्टिको देखूँ तो मै इसपर प्रकाश डाल सकूँगा। यह बात सर्वथा सत्य है कि अविश्वासी लोगोकी ईश्वर कोई मदद नही करेगा। लेकिन इससे कोई फर्क नही पडता। मुझे तो सच्चे मनसे शका करनेवाले लोगोका समाधान करना ही चाहिए। तुम्हारे लिए सबसे शीघ्र फलदायी रास्ता यह है कि तुम या अन्य कोई मित्र 'टाइम्स' की फाइल प्राप्त करके दोनो वक्तव्योकी नकल तैयार कर लो और अगली ३ अगस्त[2] से पहले-पहले मुझे भेज दो। तुम्हारे लिए यह काफी लम्बा नोटिस है।

यदि तुम्हारे प्रयत्न बोसको इग्लैड जानेकी अनुमति दिलानेमें सफल हो जाते है तो यह अच्छी बात होगी। मै नही समझ पाया कि उन्हे लन्दनसे दूर क्यो रखा जा रहा है।

पहलेकी तरह अखबारोकी कतरने साथ सलग्न है। सभाओमे अभूतपूर्व लोगोकी उपस्थिति देखकर कट्टरपथी विरोधी कुछ समयके लिए विस्मयाभिभूत हो गये थे। लेकिन अब वे उससे उबरने लगे है। हालाँकि विरोधी लोगोकी तादाद काफी कम है लेकिन जहाँतक मै समझ सका हूँ, उनके पास पैसा है, जिसके बलपर वे टिके हुए है। इसलिए सभाओमे वे गड़बडी पैदा करानेकी कोशिश कर रहे है। लेकिन मुझे आशा है कि मै इस विरोधका सामना कर सकूँगा।

राजनीतिक स्थिति लगभग पहले जैसी ही है। सरकारके रुखकी झलक बर्दवानके कमिश्नर द्वारा दिये गये भाषणमे मिलती है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७६) से।

१. सिगनोर गायडा; देखिए खण्ड ४८, पृष्ठ ४७१ तथा ४७३ और खण्ड ५७, "पत्र : सर सैम्युअल होरको", ६-३-१९३४ भी।

२. इस तारीख को गांधीजी जेलसे रिहा होनेवाले थे; देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ४४५।

३६४. पत्र : होरेस जी. अलेक्जेंडरको

१५ दिसम्बर, १९३३

प्रिय होरेस,

रोममे काल्पनिक भेटके सम्बन्धमे तुमने अगाथा को जो पत्र लिखा था वह उसने मुझे भेज दिया है। पत्रकारिताका कितना पतन हो गया है, यह देखकर आश्चर्य होता है। भगवानका शुक्र है कि व्यापक रूपसे पढे जानेवाले समाचारपत्र भी मानव-समाजके बहुत बडे हिस्सेको प्रभावित नही कर सके है। लेकिन ऐसा सोचनेके बाद भी मुझे उस विशिष्ट आरोपका उत्तर देनेकी आवश्यकतासे किसी भी प्रकार छुटकारा नहीं मिलनेका है। यदि अगाथा रोमके पत्र द्वारा दिये गये दोनो वक्तव्योको ढूंढ सके तो मै इस मामलेको तुरन्त निपटा सकता हूँ।

आशा है तुम और ऑलिव[1] अच्छी तरह होगे।

तुम सबको प्यार,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४२२) से।

३६५. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१५ दिसम्बर, १९३३

चि० अमला,

तुम्हे न देखकर मुझे निराशा हुई।[2] तुम्हे जो भय था, उसके जवाबमे मैंने लिखा था कि मै तुम्हे भगा नही[3] दूंगा। तुम्हें अपनेको शान्त रखना चाहिए तथा स्वाभाविक ढगसे रहना, सोचना, और बोलना चाहिए। यदि तुम्हे मुझसे प्यार है तो मुझसे भय नही होना चाहिए।

मुझे रक्तचाप बिलकुल नही है। पत्र अवश्य लिखो।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य . नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. होरेस अलेक्जेंडरकी पत्नी।

२. देखिए "पत्र : मार्गरेट स्पीगलको", ७/९-१२-१९३३।

३. साधन-सूत्रमें यह शब्द रेखांकित है।

३६६. पत्र : एस्थर मेननको

१५ दिसम्बर, १९३३

प्रिय बिटिया,

मुझे तुम्हारा मार्मिक पत्र मिला। खैर, तुम्हे मानसिक और शारीरिक दोनो प्रकारके दु:खोमे खुश रहना चाहिए। तुम अब वही करो जिससे तुम्हारी अपनी अन्तरात्मा सन्तुष्ट होती हो। अन्त भला होगा। बेशक, मारिया[1] तो टूट जायेगी। लेकिन हम सब तो ईश्वरके हाथमे है, उसकी आज्ञाके बिना एक पत्ता तक नही हिलता। यदि हम सब-कुछ अपनी इच्छानुसार कर सकते होते, तो ससारका तो विनाश ही हो जाता। शायद यह एक तरहसे अच्छा ही है कि हमारी इच्छाएँ अक्सर ही अपूर्ण रह जाती है। ईश्वरके प्रति हमारी वफादारीकी इससे यह परीक्षा हो जाती है कि जब वह हमारी इच्छाओकी पूर्ति नही करता, हम तब भी उसमे श्रद्धा रखते है। इसलिए मै चाहता हूँ कि जब तुम्हे सारी बाते बिगडती प्रतीत हो, उस समय भी तुम पूर्ण शान्तिका अनुभव करो।

मेरी दुआ, मेरा मन और मेरा प्यार तुम्हारे साथ है। बाकी बातोके लिए साप्ताहिक 'हरिजन' तुम्हारे लिए मेरा साप्ताहिक पत्र है, जैसा कि वह बहुतसे मित्रो और साथियोके लिए है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (न० १२३) से, सौजन्य. राष्ट्रीय अभिलेखागार, **माई डियर चाइल्ड**, पृष्ठ १०२ भी

३६७. पत्र : जे० एस० हॉयलैंडको

१५ दिसम्बर, १९३३

प्रिय हॉयलैंड,

कुछ समय पहले तुमने मुझसे पूछा था कि क्या तुम उन भजनोको प्रकाशित कर सकते हो। बेशक तुम प्रकाशित कर सकते हो, लेकिन शर्त यह है कि इसके लिखनेका तुम मुझे कोई श्रेय नही दोगे। तुम भूमिकामे इतना लिख सकते हो कि मैंने अंग्रेज मित्रोके उपयोगके लिए खास तौरपर मीराके लिए एक कामचलाऊ अनुवाद तैयार किया था, और तुमने उस अनुवादको सुधार दिया है।[2]

१. पेन मारी पीटरसन।

२. देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३९४ की पाद-टिप्पणी।

बहुतसे मित्रो द्वारा प्रेमपूर्वक हस्ताक्षर किये हुए तुम्हारे पोस्टकार्ड मुझे मिले। मुझे पता है कि तुम्हारी मौन प्रार्थना-सभाओमे मेरे कार्यकी सफलताके लिए भी प्रार्थना होती है।

तुम सबको प्यार,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५१०) से; सौजन्य : वुडब्रुक कालेज, बर्मिघम तथा जैसी हॉयलैंड

३६८. पत्र : महालक्ष्मी एम० ठक्करको

वर्धा
१५ दिसम्बर, १९३३

चि० महालक्ष्मी,

बच्चोके बारेमे चिन्ता न करना। माधवजीकी भी न करना।

बच्चोके बारेमे मैंने बातचीत कर ली है। यदि माधवजी अपने धर्मका पालन करना चाहे तो उन्हे मत रोकना। मुझे मिलना जरूरी हो तो मै जहाँ होऊँ वहाँ आकर मिल जाना।

सब बहनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८२४) से।

३६९. बातचीत : एक सनातनीसे[1]

[१६ दिसम्बर, १९३३ से पूर्व]

आपको यह समझना चाहिए कि ऐसे कितने ही शास्त्री मौजूद है, जो सनातनी होनेका दावा करते है और साथ ही सुधारकोके पक्षका समर्थन करते है। यह मै कैसे मान लूँ कि शास्त्रोका प्रमाण देकर वे शास्त्री जो कहते है, वह असत्य है? वे लोग मेरे इस विचारको और भी दृढ़ करते है कि अस्पृश्यताके लिए शास्त्रका आधार नही है। मै वेद, उपनिषद, स्मृतियो और पुराणोको मानता हूँ। पर मै 'गीता'-को शास्त्र-ज्ञानकी कुंजी मानता हूँ। 'गीता' मे यह बात बताई गई है कि हमारा आचरण किन सिद्धान्तोपर आधारित होना चाहिए। 'गीता' मे समस्त शास्त्रोका निचोड़

१. यह सनातनी हिन्दू गांधीजीसे विजयवाड़ा जाते समय मिला था, जहाँ गांधीजी १६ दिसम्बरको पहुचे थे।

आ जाता है। इसलिए साधारण मनुष्योको 'गीता' के बाद किसी अन्य ग्रन्थको पढनेकी आवश्यकता नही रह जाती। पर मै तो इससे भी एक कदम आगे जाता हूँ। वेदोके नामसे जो चार ग्रन्थ प्रसिद्ध है, वे ही 'वेद' नही है। इन ग्रन्थोमे तो मूल वेदोके कुछ अंशमात्र ही है। जो सत्य सनातन है, उसे इन छपे हुए ग्रन्थोमे ही गाडा या सीमित नही किया जा सकता है। इसलिए मेरा विश्वास है कि वेद अनिर्वचनीय है और अलिखित है। वेदोका वास तो मनुष्यके हृदयमें है। और हमारे शास्त्रोंने बताया है कि हृदय मे इस सत्यका स्फुरण होनेके लिए किस प्रकारकी साधना और अभ्यास करना चाहिए। अत. मनुष्यका निजी अनुभव ही इसके लिए प्रमाणस्वरूप समझना चाहिए। ग्रन्थोकी सहायता मनुष्यको मिलती है सही, पर इन ग्रन्थोका भी अर्थ तो करना ही होता है, और जब एक ही वचनके भिन्न-भिन्न अर्थ किये जाते हो, तब सत्यशोधक स्वय ही अन्तिम निर्णयकर्त्ता है। इस तरह मुझे भी अपने लिए निर्णय करना पड़ा है। वर्षो पहले मैंने यह निर्णय कर लिया था, और मैं इस परिणामपर पहुँच गया था कि आज जिस अस्पृश्यताका पालन हम करते है, शास्त्र उसका समर्थन नही करते।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-१२-१९३३

३७०. भाषण : हरिजन सेवकोंकी सभामें

विजयवाडा
१६ दिसम्बर, १९३३

गांधीजीने कहा कि आप सब लोगोसे मिलकर तथा आपकी साहित्यिक प्रतिभाका प्रमाण पाकर मुझे बहुत खुशी हुई। उन्होंने कहा, यह तो मुझे हमेशासे पता था कि आन्ध्रप्रदेशके लोग कविताएँ लिखनेमें और उन्हें प्रेमपूर्वक पढ़नेमें अच्छे है और इसीलिए मै यह अनुभव किये बिना नहीं रह सका कि आज शाम जो कविता-पाठ मैंने देखा वह कुछ हद तक बेकार था। काव्य और कलाको तो सत्यके प्रचारका साधन होना चाहिए, उनका उपयोग कभी भी चापलूसीके लिए नहीं करना चाहिए। क्योंकि कविताके ऐसे प्रयोगसे न केवल कलाका ही ह्रास होगा बल्कि सत्यका भी खंडन होगा। चूंकि इस समय आप सब लोग हिन्दू-धर्मकी शुद्धिके आन्दोलनमें लगे हुए है इसलिए मै हरएकसे यह आशा करता हूँ कि वह सत्यके मार्गका अनुसरण करे। मुझे आन्ध्रप्रदेशसे बड़ी आशाएँ है और मैं जानता हूँ कि वह उन आशाओंको फलीभूत करेगा।[1]

आप चाहे सवर्ण हिन्दू हो या हरिजन, हरिजनोके हित के लिए आप जो भी योगदान कर रहे हो उसमे बिलकुल भी खोट नही होना चाहिए। इस प्रकारके

१. इसके बादका अंश बॉम्बे क्रॉनिकल-से लिया गया है।

आन्दोलनमें स्वार्थ, छल-कपट, असत्यता और हिंसाके लिए कोई स्थान नही होना चाहिए। धार्मिक आन्दोलन होनेके नाते इसमे हरिजनों और सवर्णो, दोनोके हृदयोको छूनेकी क्षमता होनी चाहिए। हजारों सालसे ऊँच और नीचके भेदने हमारे दिलोमें गहरी जड़ पकड़ ली है। केवल धर्मास्त्रो द्वारा ही अस्पृश्यताका नाश हो सकता है।

बहुतसे हिन्दू सन्तों और ऋषियोने हमे यह शिक्षा दी है कि धर्मकी रक्षा और शुद्धिका एकमात्र साधन प्रायश्चित्त ही है। कहनेकी आवश्यकता नही कि प्रायश्चित्तमे स्वार्थ और अहके लिए कोई स्थान नही हो सकता। मै आशा करता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि जो लोग हरिजन सेवामे लगे हुए हैं वे सदैव सात्विक विचारोसे प्रेरित होंगे।[1]

उन्होंने उन सब सवर्णो और अवर्णोसे जो इस काममें लगे हुए हैं, यह अपील की कि आत्मशुद्धिके सर्वोपरि महत्त्वको पहचानें और इस कामको शुद्धि-यज्ञ समझें।[2]

श्री शम्भु शास्त्रीने पूछा कि क्या आप वेदोंके प्रमाणको मानते है?

निश्चित रूपसे।

क्या आप उनका आदर और उनका पालन करते हैं?

अवश्य।

अगला प्रश्न था कि क्या आप यह स्थिति स्वीकार करेंगे कि यदि हरिजनोंको मन्दिरमें प्रवेश करने दिया जाता तो शास्त्रोके जिन नियमों द्वारा मन्दिरोंका संचालन होता है उन नियमोंका हरिजनोंको पालन करना चाहिए।

सवर्णोपर लागू होनेवाले शास्त्रके सारे नियमोंका हरिजनों द्वारा पालन करनेसे उन्हे मन्दिरोंमे प्रवेश मिल जाना चाहिए।[3]

धर्मकी मेरी जैसी समझ है, मेरे पिछले और आजके सब कार्य उस धर्मके अनुरूप ही हैं। मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि अस्पृश्यता-निवारणके लिए आजकल जो कोशिश की जा रही है उसे वेदोंकी मान्यता प्राप्त है। फिर भी मुझे स्वीकार कर लेना चाहिए कि इस प्रश्नके सम्बन्धमें दो प्रकारकी विचारधाराओंवाले लोग है। दोनो ही अपने-आपको सनातनी मानते हैं और हिन्दू धर्म-ग्रन्थोके आधारपर अपना मत देते हैं।

मैं तो यह मानता हूँ कि जो लोग इस आन्दोलनको अस्पृश्यताके विरुद्ध एक धार्मिक आन्दोलनके रूपमे चला रहे हैं उन्हे अपने विरोधियोके साथ सहिष्णुताका वर्ताव करना चाहिए, उनकी बात हमेशा शान्ति और धैर्यके साथ सुननी चाहिए और किसी भी हालतमें वचन या कर्ममें क्रोध नही प्रकट करना चाहिए। हमारा प्रयास उनका हृदय परिवर्तन करना है। हमे उनकी भी सहायता और सहयोग लेना चाहिए। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि हमने धार्मिक भावना और ईमानदारीके साथ कार्य

१. इसके बादका अंश *हिन्दू* से लिया गया है।
२. इसके बाद गांधीजीने एकत्रित लोगोंसे प्रश्न पूछनेको कहा।
३. इसके बादका अंश *बॉम्बे क्रॉनिकल* से लिया गया है।

किया तो एक दिन वे हमारे साथ हो जायेंगे। उनके लिए हमारे हृदयोमे असीम प्रेम होना चाहिए और यदि हम सच्चे है तो हम उनके हृदय जीत लेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-१२-१९३३ तथा बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-१२-१९३३

३७१. भाषण : विजयवाड़ाकी सार्वजनिक सभामें

१६ दिसम्बर, १९३३

सब लोगो तक अपनी आवाज पहुँचा पानेमें अपनी असमर्थताके लिए क्षमा माँगनेके बाद गांधीजीने सभामें दिये गये अभिनन्दनपत्रों और थैलियोंके लिए धन्यवाद प्रकट किया।

क्या यह अच्छा नही रहता कि अलग-अलग थैलियोकी जगह एक ही थैली जमा की जाती? इस प्रकार हम अपना बहुत-सा बहुमूल्य समय बचा सकते थे। लेकिन यह हमारा दुर्भाग्य है कि ऐसा किया नही गया। लोग अभिनन्दनपत्र और थैलियाँ अपने नामसे या अपने गाँवके नामसे भेंट करना चाहते है, हालाँकि हम सब एक ही देशके रहनेवाले है और हमारी दशा एक जैसी ही है।

आगे बोलते हुए गांधीजीने बताया कि विजयवाड़ाने अबतक रु० ३,९८२–८–० नकद दिये हैं और कहा कि मुझे यकीन है कि मैं जबतक आपके पाससे जाऊँगा तबतक यह राशि पूरी ५,००० रुपये हो जायेगी। मुझे पता है कि इस नगरके लिए यह कोई बहुत बड़ी बात नहीं है। इस सम्बन्धमें मुझे श्री ए० कालेश्वरराव और पट्टाभि सीतारमैयाकी अनुपस्थिति अखर रही है। लेकिन आपको अपने कर्त्तव्यके मार्गपर चलते रहना चाहिए और हरिजन-कार्यको, जो अब दूर-दूर तक फैल चुका है और जो एक महत्त्वपूर्ण कार्य है, छोड़ना नहीं चाहिए। अगर आप अस्पृश्यताकी बुराईको दूर नहीं करेंगे तो मुझे डर है कि हिन्दू-धर्म मिट जायेगा। किसी सह-मानवको "अस्पृश्य" समझना धर्म नहीं है। सवर्ण जिन अधिकारोंका उपयोग करते हैं वे सब अधिकार हरिजनोंको भी मिलने चाहिए। इतने समय तक हरिजनोंको उनके अधिकारोंसे वंचित रखकर आपने भारी पाप किया है, इसलिए सवर्णोको प्रायश्चित्त करके इस पापको धोना चाहिए। इस यात्राके दौरान मैं जहाँ कहीं भी गया हूँ इस प्रकारकी सभाओंमें मुझे लोगोंकी भारी भीड़ देखनेको मिली है और मैं इसे इस बातकी निशानी मानता हूँ कि मैं जो कार्य कर रहा हूँ वह जनताको पसन्द है। मुझे इसकी भी खुशी हुई है कि जनताने पैसा दिया है। हरिजनोंसे मेरी अपील है कि वे रुपये-पैसेके रूपमें ही सहायता न करें, बल्कि बाह्य और आन्तरिक शुद्धिका पालन करे और इस प्रकार इस शुद्धियज्ञमें अपना सहयोग दें। आन्तरिक शुद्धि ईश्वरका स्मरण करके और 'रामनाम' द्वारा प्राप्त की जा सकती है, जबकि बाह्य शुद्धि

स्नान द्वारा और स्वच्छ रहनेके अन्य साधनों द्वारा। उन हरिजनोंसे जो शराब पीनेके तथा मुर्दार मांस और गो-मांस खानेके आदी हैं मैं यह अपील करूँगा कि वे इन्हें छोड़ दें। कोई भी व्यक्ति जो इन सब चीजोंका शिकार है, हिन्दू नहीं कहा जा सकता और न ही उसे मन्दिरोंमें घुसने दिया जा सकता है। मद्यपान एक जघन्य पाप है तथा इसके नशेमें व्यक्ति माँ और पत्नीमें भी भेद नहीं कर सकता।

भाषण समाप्त करनेसे पहले गांधीजीने आन्ध्र हिन्दी प्रचारक संघकी ओरसे दिये गये अभिनन्दनपत्रका उल्लेख किया और कहा कि दक्षिण भारतमें हिन्दीके प्रचारके लिए जो कार्य चल रहा है उसे देखकर मुझे बेहद खुशी हुई। मुझे यह जानकर भी खुशी हुई कि इस मामलेमें आन्ध्र सारे दक्षिण भारतमें सबसे आगे है। मेरा आपसे अनुरोध है कि हिन्दीके प्रचारमें आप सब मदद करें, क्योंकि अपने देश और अपने राष्ट्रकी सेवा करनेका यह प्रभावकारी साधन है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १७-१२-१९३३

३७२. भाषण : मुदुनुरुमें

१७ दिसम्बर, १९३३

एकत्रित जन-समुदायको सम्बोधित करते हुए गांधीजीने कहा कि समयाभावके कारण तथा प्रत्येक स्थानपर कारसे उतरने-चढ़नेकी परेशानीके कारण आप लोगोंके बीच कुछ मिनटोंसे ज्यादा खड़े होनेमें तथा मन्दिरोंमें जानेमें मैं असमर्थ हूँ, और मुझे इसका खेद है। उन्होंने कहा कि चूँकि मुझे अभी बहुतसे गाँवोंमें जाना है, इसलिए मैं जितना सम्भव हो उतना ज्यादा समय बचाना चाहता हूँ। इसलिए यदि मैं मन्दिरोंमें नहीं जाता हूँ तो आपको यह नहीं समझ लेना चाहिए कि मैं भगवानके मन्दिरोंमें जाना नहीं चाहता। मुझे विश्वास है कि मैं जो काम कर रहा हूँ वह ईश्वरका ही काम है। मैं इस देशमें हरिजनोंके लिए जितना ज्यादा सम्भव हो उतने मन्दिर खोलना चाहता हूँ। आशा है कि हरिजन अपने दूसरे हिन्दू भाइयोंके साथ मन्दिरोंमें रोज पूजा करेंगे तथा सवर्णोंपर जो नियम लागू होते हैं उन सबका तथा स्वच्छताके सब नियमोंका पालन करेंगे। ऐसा करके तथा जहाँ लोग मद्यपान, मुर्दार-मांस अथवा गो-मांसका प्रयोग करनेके आदि है वहाँ इनका त्याग करके हरिजन लोग हिन्दू-धर्मकी शुद्धिमें वास्तविक योगदान देंगे।[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १८-१२-१९३३

१. इसके बाद गांधीजीके हाथों हरिजनोंके लिए दो मन्दिर खुले घोषित किये गये।

३७३. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको[1]

सिद्धान्तम्
१७ दिसम्बर, १९३३

जो-कुछ मुद्दे आपके ध्यानमें लानेके काबिल लगते है, क्या मै उनके सम्बन्धमें आपसे कुछ प्रश्न पूछ सकता हूँ?

[गाधीजी] अवश्य पूछिए, मै तैयार हूँ। पूछिए।

हालमें मद्रासमें दिये गये अपने भाषणमें श्री एम० के० आचार्यने कहा है कि ९५ प्रतिशत हरिजन 'गांधीवाद' नहीं चाहते। इस बारेमें आपकी क्या राय है?

मुझे नही पता कि 'गाधीवाद' क्या चीज है। जब मै खुद ही इसे नही जानता तो फिर हरिजन तथा स्वय श्री आचार्य इसे किस प्रकार जानते है? मै अपने बारेमे किसी विशेषताका दावा नही करता। जहाँ तक मै जानता हूँ, 'गाधीवाद' नामकी कोई चीज नही है। मै तो बस यही जानता हूँ कि मै हरिजनोको स्वच्छ पानी देनेमे लगा हुआ हूँ। मै उन्हे शिक्षाकी सुविधाएँ उपलब्ध करानेमे लगा हुआ हूँ। जहाँ उन्हे रहनेके लिए जगह नही मिलती वहाँ मै सार्वजनिक सरायोमे उनके रहनेका प्रबन्ध करनेमे लगा हुआ हूँ। मै उनको शराब और मुर्दार माससे दूर रखनेका काम कर रहा हूँ। क्या उन्हे ये सब बाते पसन्द नही है? मै उन्हे सफाईके प्रारम्भिक नियम बतानेका काम कर रहा हूँ। क्या वे यह नही चाहते? मै उन्हे हिन्दू-धर्मकी मूलभूत बाते बता रहा हूँ, उनके लिए सार्वजनिक मन्दिर खुलवा रहा हूँ। जरा फर्कपर गौर फरमाइएगा। हो सकता है वे मन्दिरोमे जाना ही न चाहते हो और यदि कोई यह कहे कि उनकी मन्दिरोमे जानेकी इच्छा ही नही है, तो मै इस बातको निश्चित रूपसे गलत साबित नही कर सकता, हालांकि जो प्रत्यक्ष प्रमाण मेरे पास है वे सब मेरे ही पक्षमे है। जहाँ कही भी उन्होने पाया है कि उनके लिए मन्दिर खोल दिये गये है, वे हर्षोन्मत्त हो उठे है। आज ही मैंने दो मन्दिर खोले है[2] और हरिजनोके साथ उनमे प्रवेश करते समय मैंने देखा कि वे किस प्रकार हर्षोन्मत्त हो उठे। मुझे इसकी परवाह नही है कि वे मन्दिरोमे जाना चाहते है या नही। मै तो बस इतना जानता हूँ कि सवर्णोको अपने कर्त्तव्यका पालन करना चाहिए। इसमे कोई 'गाधीपन' नही है। जो हिन्दू यह मानता है कि अस्पृश्यताका निवारण होना चाहिए, उसे इस कामको समझना ही चाहिए।

१. हिन्दू के विशेष प्रतिनिधिने गाधीजीसे तीसरे पहर भेंट की थी।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

एक अन्य व्यक्तिका यह कहना है कि चूंकि आप वर्णाश्रममें विश्वास करते हैं जो कि अस्पृश्यताकी ही एक श्रेणीबद्ध प्रणाली है, इसलिए आप इस समस्याको हल करनेके लिए उपयुक्त व्यक्ति नहीं हैं। इस बारेमें आपका क्या कहना है?

मैं वर्णाश्रमको अस्पृश्यताकी ही एक श्रेणीबद्ध प्रणाली नही मानता। वर्णधर्मसे मेरा क्या अभिप्राय है, यह मैं बता ही चुका हूँ। वर्णधर्मके अर्थ मैं श्रेणियाँ समझता ही नही। वर्णधर्ममें समाजका विभाजन ऊपर-नीचेके हिसाबसे नही, समतल अर्थात् बराबरीके आधारपर होता है। इसलिए अस्पृश्यताका तो कोई प्रश्न ही नही उठ सकता। वर्णधर्म एक ऐसा महान् आर्थिक नियम है कि जिसे हम यदि स्वीकार कर लें तो वह हमें उस महाविपत्तिसे बचा लेगा जो संसारके ऊपर आनेवाली है। इस कथनके समर्थनमें मेरे पास शास्त्रोंके पर्याप्त प्रमाण हैं कि ईश्वरकी नजरमें ब्राह्मण और भंगी बिलकुल बराबर हैं।

कुछ लोगोंका ऐसा कहना है कि हरिजन-आन्दोलन सविनय प्रतिरोधके प्रचारका ही एक रूप है और इस यात्राके जरिये आप सविनय प्रतिरोधका ही प्रचार कर रहे हैं। इसके सम्बन्धमें आपकी क्या राय है?

तब तो मैं दो प्रकारके संकटोंके बीच फँसा हुआ हूँ। कांग्रेसी मुझपर यह अभियोग लगाते हैं कि मैंने अस्पृश्यता-निवारणार्थ इस तूफानी अभियानको शुरू करके सविनय-अवज्ञा आन्दोलनका अहित किया है। जो लोग मुझपर कोई गुप्त मंशा रखनेका सन्देह करते हैं वे मुझपर सविनय-अवज्ञा-आन्दोलनको मजबूत बनानेका आरोप लगाते हैं। इन आरोपों और गूढार्थोंसे मुझे कोई फर्क नही पडता। मैं तो बस यही बात दोहरा कर कह सकता हूँ कि मेरा बिलकुल भी कोई गुप्त उद्देश्य नही है। यह तो अत्यावश्यक धार्मिक पुकार है जिसका कि मैं अनुसरण कर रहा हूँ। हजारों लोग जो सभाओंमें आते हैं वे मेरे होठोंसे 'सविनय प्रतिरोध' शब्द नही सुन पाते है। यह तो शुद्ध रूपसे धार्मिक पुनर्जागरण है। इसका मतलब यह नही है कि सविनय प्रतिरोधके सम्बन्धमें मैंने अपने विचार बदल दिये हैं। सविनय प्रतिरोधमें पूरी ईमानदारीकी जरूरत पडती है। यदि मैं सविनय प्रतिरोधका प्रचार करनेके हेतु इस आन्दोलनको चलाऊँ तो मैं बेईमानी करनेका दोषी होऊँगा। सविनय अवज्ञाको ऐसे संदिग्ध उपयोगितावाले साधनोंकी जरूरत नही है।

आपने अबतक जिन प्रान्तोंकी यात्रा की है उनमें हरिजन-उत्थान कार्यकी प्रगतिके सम्बन्धमें आपके क्या विचार हैं?

सब मिलाकर मेरे अनुभव सुखद हैं और यदि ऐसा ही दूसरे प्रान्तोंके बारेमें भी होता रहा तो फिर मुझे यह कहनेमें कोई झिझक महसूस नही होगी कि अस्पृश्यता बहुत तेजीसे समाप्त हो रही है। मेरी सभाओंमें जो हजारों लोग इकट्ठा होते हैं वे अच्छी तरह जानते हैं कि इन पैसोंका उपयोग किस कार्यके लिए किया जायेगा, अन्यथा वे मुझे पैसे क्यों देते?

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-१२-१९३३

३७४. भाषण : मसूलीपट्टममें

१७ दिसम्बर, १९३३

अभिनन्दनपत्रोंका उत्तर देते हुए तथा थैलियों और दूसरी भेंटोंको स्वीकार करते हुए गांधीजीने कहा कि मसूलीपट्टम आनेपर मुझे सबसे पहले डॉ० पट्टाभि सीतारमैयाका खयाल आया। मुझे विश्वास है कि हालाँकि डॉ० साहब हमारे बीच शारीरिक रूपसे मौजूद नहीं हैं फिर भी इस सभामें उनकी आत्मा व्याप्त है। जिला तथा ताल्लुका बोर्ड और इस जिलेकी जनता हरिजनोंके लिए जो काम कर रही है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। लेकिन मेरा यह खयाल है कि जबतक एक भी मन्दिर ऐसा है जो सवर्णोंके लिए तो खुला है लेकिन हरिजनोंके लिए बन्द है, जिससे सवर्णोंको तो लाभ होता है लेकिन हरिजनोंको उतना लाभ नहीं होता, तबतक मैं चैनसे नहीं बैठूंगा और न ही तबतक उनको चैन मिलेगा। यदि हिन्दुओंमें ऊँच और नीच, स्पृश्य और अस्पृश्यका भेद चलता रहा तो मेरा निश्चित मत है कि हिन्दू-धर्म धीरे-धीरे खत्म हो जायेगा।[1]

हम अपनी कब्र खुद खोदेंगे। यदि आज हमने अपने अहंमें ईश्वरके दिये हुए अवसरको खो दिया तो हमें इसके बदलेमें फूट-फूट कर रोना पड़ेगा। जबतक इस अस्पृश्यता रूपी दानवका अन्त नहीं हो जाता और जिनको हमने अबतक अपनी एड़ी तले रखा है उनको हम हर तरह से अपनी बराबरीका दर्जा नहीं दे देते तबतक हमें चैनसे नहीं बैठना चाहिए। इससे पहले कि बहुत देर हो जाये हमें इस पाप-वृत्तिके प्रति सचेत हो जाना चाहिए तथा अपनेको और अपने धर्मको विनाशसे बचा लेना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-१२-१९३३ तथा हरिजन, २९-१२-१९३३

१. इसके बादका अंश २९-१२-१९३३ के हरिजनसे लिया गया है।

३७५. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

स्थायी पता : वर्धा
१९ दिसम्बर, १९३३

चि० नरहरि,

मैं मसूलीपट्टममें सवेरेके छ: बजे यह पत्र शुरू कर रहा हूँ। रोज ३ बजे उठता हूँ और जितने पत्रोंका जवाब दिया जा सके उतने पत्र लिखनेका प्रयत्न करता हूँ। छः बजे तो [दैनिक] कार्यमें व्यवधान पड़ता है और सात बजे यात्रा शुरू हो जाती है। सोम और मंगलवारको दौरा बन्द रहता है। आज मंगल है इसलिए लिखनेका कार्य जारी रखा जा सकता है। (इतना लिखनेपर मलकानी और बापी नीडु आये और उन्होंने मेरा आधा घंटा लिया।)

तुम्हारे लम्बे पत्रको मैंने सँभाल कर रखा था। तुम्हारा काम अच्छी तरह चल रहा जान पड़ता है। अच्छा है, इसी तरह चलता रहे। महादेवके काममें ज्वारभाटा आता रहता है। "सब दिन होत न एक समान" वह बड़े जोर-शोरसे गाता है (फिर विघ्न आ पड़ा है तथा २० मिनट और वेंकटपय्याको दिये)। अब इस बातको वह स्वयं अनुभवे ले रहा है। हमारा व्यक्तित्व इसी प्रकार बनता चलता है।

आनन्दी वगैरहका काम ठीक चल रहा है। अभ्यासकी व्यवस्था हो गई है। रामनाम भी शंकरभाई और एक संगीतशास्त्री सिखाते हैं। वनमाला और मोहनके पत्र आते हैं। मणि भी साथ हो गई है। बावलो तो है ही और कुरेशीके बच्चे भी हैं। नी० भाग गई है। उसका लड़का शारदा मन्दिरमें है। बा को यरवदा ले गये हैं।

चरखेके सम्बन्धमें तुमने जो प्रश्न उठाये हैं वे सब उचित हैं। लेकिन फिलहाल उनका हल निकलना सम्भव नहीं जान पड़ता। इस विषयपर अभी तो कुछ लिखा ही नहीं जा सकता। मेरे मनमें इन सबका हल तो है ही। पर वह उचित है अथवा नहीं, सो तो आजमानेपर ही मालूम हो सकता है। जिन्दा रहा तो किसी दिन बताऊँगा और ईश्वरकी इच्छा हुई तो हम प्रयोग भी करेंगे।

काकाकी तबीयत ठीक रहती है। वह तो अहमदाबादकी ओर गये होंगे। वे थोड़े दिन स्वामीके साथ रहे। यह उन्हें अच्छा लगा। इन दिनों मुझे उनका कोई पत्र नहीं मिला है।

किशोरलाल खूब बीमार हैं और खाट पकड़े हुए हैं।

दौरेके अनुभव तो क्या लिखूं? पहलेसे भी ज्यादा लोग आते हैं और मुक्त हस्तसे चन्दा देते हैं।

सुरेन्द्र और दरबारी वर्धामे है। अब कदाचित् कराडी जाये। दोनो ठीक है। वर्धामे बहुत लडकियाँ आई है और अभी भी बहुत आनेकी माँग करती है। विनोबा तो खेड़ेमे ही रहते है। बालकृष्ण स्वस्थ नही कहा जा सकता। छोटेलालका स्वास्थ्य भी ऐसा ही रहता है।

सबको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०६१) से।

३७६. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१९ दिसम्बर, १९३३

बा,

तेरा पत्र आज ही मिला है। साबरमती [जेल] लिखा मेरा पत्र तुझे मिल गया होगा। मै तो नियमपूर्वक लिखता रहूँगा। हर सोमवार अथवा मगलवार लिखूँगा। क्योकि इन दो दिनोमे ही मुझे थोडी फुरसत मिल पाती है। अपने शरीरका ध्यान रखना। पूनियाँ भेजूँगा। मेरे पास नही हुई तो चाहे कहीसे भी तजवीज करूँगा। मुझे ब्लड-प्रेशर रहता है। डॉ० अन्सारीने दिल्लीमें देखा था। मेरी जरा भी चिन्ता न करना। मणिलाल और सुशीलाको जरूर हर पन्द्रह दिनके बाद पत्र लिखा करूँगा। मै उन्हे लम्बे पत्र लिखता हूँ। तेरा आशीर्वाद सबको भेजूँगा। किसीकी चिन्ता न करना। मनुको भी कुसुमके बारेमे लिखा है। कुसुमकी तबीयत खराब तो रहती ही है। बच जाये तो गनीमत होगी। किशोरलालको बुखार आया करता है। बिस्तरे पर पडा हुआ है। व्रजकृष्ण भी खाटपर तो है ही। देवदास ठीक है। राजाजी भी ठीक है। वहाँ सब बहनोको मेरा आशीर्वाद कहना। उम्मीद है सब मेहनत करती होगी और सबका स्वास्थ्य अच्छा होगा। रामनाम रामबाण औषध है। मैंने रामदासके लिए एक छोटी गीता बनाई थी। वह प्रकाशित की जा रही है। प्रकाशित होनेपर उसकी प्रतियाँ वहाँ भेजूँगा। अन्य कुछ चाहिए तो मँगा लेना। पत्र वर्धा ही भेजना। अखबार तो मिलते होगे। तू मुझसे प्रवचन माँगती है। आज तो नही भेजूँगा। अगले हफ्ते इसपर विचार करूँगा। तू 'गीता' पढती है, यह अच्छा तो है ही। कौन सिखाता है? वहाँ खानेको क्या मिलता है? जो चाहिए वह तू प्रेमलीला[1] बहन अथवा त्रिवेदी[2] से मँगवा सकती है, यह तो याद है न? अब तो वहाँ कम लोग आते होगे। इसलिए उचित यही होगा कि हर हफ्ते एक पत्र तू लिखे और मेरे पत्र भी प्राप्त करती रहे। लेकिन जो तुझे ठीक लगे सो करना। ओम मजेमे है। प्रेमाबहनकी सहेली

१. लेडी ठाकरसी।

२. पूनाके कृषि कालेजके प्रोफेसर जयशंकर पीताम्बरदास त्रिवेदी।

किसन अभी-अभी मेरे साथ आ गई है। तुझे इसकी याद है न? खूब मेहनती है, पढ़ी-लिखी है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृष्ठ २-३

३७७. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

मसूलीपट्टम
१९ दिसम्बर, १९३३

भाई ठक्कर बापा,

साथके कागजात तुम्हारी जानकारीके लिए हैं। भगवानजीका तर्क तो उचित है। मैं उन्हें समुचित उत्तर लिख रहा हूँ। ऐसे कार्य निश्चय ही किये जा सकते हैं।

तुम्हारे प्रस्तावकी नकल अभी मुझे नहीं मिली है। नियमानुसार उसे तुम्हें मुझे भेजना तो चाहिए न? उसकी भाषा परसे मुझे अपने कर्त्तव्यकी जानकारी होगी।

यहाँका काम तेजीसे हो रहा है। मलकानी- हिसाबनवीस बनते जा रहे हैं, अखबारके सम्वाददाता भी बन गये हैं। यदि शरीर स्वस्थ रहा तो वे पूरा काम देंगे।

लोगोंकी तादाद और चन्दा मध्यप्रदेश जितना ही है।

अभी मैं चार घंटेके नियमका पालन नहीं कर पाया हूँ। इसमें किसीका दोष नहीं। ऐसी चीज तो आदर्श रूप ही होती है। बाकी तो जो ईश्वरको करना होगा, सो करेगा।

काचेरे तांतणे मने हरिजीए बांधी,
जेम ताणे तेम तेमनी।

मीराके इस भजनका अनुसरण तो मैं अपनी युवावस्थासे ही करना सीख गया हूँ। इसलिए अड़चन नहीं होती। जो बिठाता है, चलाता है, वह सुला भी देगा।

दिल्लीके हरिजन निवासके लिए यदि तुम अथवा घनश्यामदास दिल्ली नगरपालिका सदस्योंसे मिलो तो अच्छा होगा। ये अच्छे होने ही चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११३४)से।

३७८. पत्र : प्रभावतीको

१९ दिसम्बर, १९३३

चि० प्रभावती,

पटनासे लिखा तेरा पत्र मिला। और अब चूंकि तूने इन्जेक्शन लेना शुरू किया है तो उसका कोर्स पूरा करना बेहतर होगा। कदाचित् उससे लाभ भी हो। मुझे तो इसका कम ही विश्वास है। लेकिन जिस कार्यको आरम्भ कर दिया हो उसे पूरा करना चाहिए।

राजेश्वरको प्रतिमास ५० रुपये भेजनेमें दिक्कत नही होगी। मैंने बात कर ली है।

तू मुझसे आकर मिल जाये, इस सम्बन्धमें मैं अपने पिछले पत्र[1] मे तुम्हे लिख ही चुका हूँ। यदि तेरा स्वास्थ्य खराब हो गया है तो अभी तुझे अपना सारा समय दवा करनेमें लगाना होगा न?

राजेन्द्र बाबूको मिलनेमे क्या कोई दिक्कत पेश आती है?

मैंने अपना वजन अभी तो नही लिया है, लेकिन तबीयत अच्छी ही है। ब्लड-प्रेशर सामान्य हो गया है, १५८-१०९।

ओम आनन्दपूर्वक है। किसन मेरे साथ आ गई है। तू किसनको जानती है न? बम्बईमें जो रो पड़ी थी वह प्रेमाकी खास सहेली है। वह मीराबहनके साथ जेलमे भी थी। वह मराठी है। बहुत पढी-लिखी है। उसके मनमे सेवा करनेकी बहुत उमग है। वह वर्धासे मेरे साथ आ गई है। सुमनके बदले रामनारायण[2] है। मुझे बराबर लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च.]

२०-२२, मद्रास।

२३-३ जनवरी, आन्ध्रदेश, सदरमुकाम बेजवाड़ा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४३७)से।

१. देखिए "पत्र : प्रभावतीको," १२-१२-१९३३।

२. रामनारायण चौधरी।

३७९. पत्र : वनमाला एन० परीखको

१९ दिसम्बर, १९३३

चि० वनमाला,

वाह! अब तो तू अंग्रेजीमें हस्ताक्षर करने लग गई? थोड़े समयमें मेरी गल्तियाँ भी निकालने लगेगी न? शरीरको कस रही होगी। तू क्या पढ़ती है? मोहनसे लिखनेके लिए कहना। सुल्ताना[1], बाबलो, हमीद[2], वहीद[3] भी लिखें। अपना पत्र तूने पूरा नहीं किया, यह याद है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८३)से। सी० डब्ल्यू० ३००६ से भी, सौजन्य : वनमाला देसाई

३८०. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

१९ दिसम्बर, १९३३

चि० भगवानजी,

तुम्हारे पत्रका जवाब देरसे दे रहा हूँ। यद्यपि मैंने विचार तो बहुत पहले कर लिया था। तुम जो लिखते हो वह ठीक है। पर उसका उपयोग ताकतसे नहीं हिकमतसे करना होगा। हरिजनोंके अलावा दूसरे लोग तो थोड़े ही आयेंगे। उनके लिए तो यह नियम आवश्यक होगा। हरिजनोंके लिए तो यह शिक्षाका प्रश्न है पर उनपर तुम सख्ती नहीं कर सकते। वे लोग धीरे-धीरे पाखानोंका उपयोग करने लगेंगे। जिस हल्केमें रामजी रहते हैं वहाँ यदि इनका उपयोग किया जा सके तो पाखाने बनवा दिये जायें। परीक्षितलाल जूठाभाई आदि मिलकर जैसा उचित समझें कर लें।

वाड़जकी पाठशालापर ध्यान देते रहना। बालकोंकी संख्या बढ़े तो अच्छा। बड़ोंको भी छोड़ना मत। इस कार्यमें धीरजकी आवश्यकता होगी। फलकी इच्छा छोड़ देना। मुझे लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३६४)से, सौजन्य . भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या

१, २ और ३. गुलाम रसूल कुरेशीके बच्चे।

३८१. पत्र : शारदा सी० शाहको

१९ दिसम्बर, १९३३

चि० शारदा उर्फ शारदा गौरी उर्फ शारदा कुमारी,

आनन्दीको जो पत्र लिखता हूँ उसे सबके लिए लिखा गया क्यो नही माना जाता? यदि उसीमे सबके नाम लिख दूं तो? तुम सबने जब एक बार उसे अपनी बडी मान लिया तो फिर उसकी शिकायत क्यो? तेरे किस प्रश्नका मैंने उत्तर नही दिया?

यह सुनकर खुशी हुई कि तू अच्छी तरह पढ रही है। लेकिन यह जो तू बीमार पडती रहती है उसका क्या होगा? इसका मतलब यही हुआ न कि तू पढनेके साथ-साथ भूलती जाती है?

तू क्या खाती है?

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९८६५) से, सौजन्य: शारदाबहन जी० चोखावाला

३८२. पत्र : विमलचन्द्र वी० देसाईको

१९ दिसम्बर, १९३३

चि० नानु,

तेरा पत्र मिला है, लेकिन तेरी लिखावटमे अभी बहुत सुधारकी गुजाइश है। अक्षर लिखना अर्थात् चित्र बनाना, यदि तू इतना समझ लेगा तो सुन्दर अक्षर लिखेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७५७)से, सौजन्य. वालजी गो० देसाई

३८३. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

१९ दिसम्बर, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुमारे पत्र अब कम आते हैं। मै कारण समझा हूं इसलिये निश्चित हूं। मेरे बंगला प्रवासके बारेमें तुम तो व्यथित नहि हुइ होगी ऐसी आशा रखता हूं। अरुण कैसे है? अब तुमारा शरीर कैसे रहता है?

मेरी मुसाफरी अब तक तो बहुत अच्छी चली है ऐसा कहा जाये। दौड धूप करनेकी शक्ति भी ईश्वर दे रहा है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०५) से।

३८४. पत्र : ब्रजकृष्ण और रामकृष्ण चांदीवालाको

१९ दिसम्बर, १९३३

चि० ब्रजकृष्ण,

ये कैसी बात कि अबतक कोई खत या तार मुझे नहि मिला है। मेरी आशा है कि अच्छा मकान कहीं मिल गया होगा और शरीर अच्छा होता होगा। सब हाल मुझे भेजवाओ। नित्य एक पोस्टकार्ड मिले तो काफी है और आवश्यकता पर तार।

बापुके आशीर्वाद

भाई रामकृष्ण अथवा श्रीकृष्ण,

ब्रजकृष्णके सामने बाते नहीं बननी चाहिये। दा० अनसारी व सेन पर ही कायम रहना।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४०४) से।

३८५. पत्र : तोताराम सनाढ्यको

दिल्ली
१९ दिसम्बर, १९३३

भाई तोतारामजी,

तुमारा पंत्र मिला है। मुझे योजना पसद है। उसका अमल यथासभव अवश्य किया जाय।

उत्कलके बालक सतोष देते होगे।

हरिप्रसाद तो सेवामे तन्मय रहता होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५३७) से।

३८६. पत्र : कल्याणजी वी० मेहताको

२० दिसम्बर, १९३३

भाई कल्याणजी,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं यह उत्तर चलती ट्रेनसे लिख रहा हूँ। तुम्हारा समाचार तो मुझे मिलता रहता था। आशा है तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा रहता होगा। मुझसे मिलने न आनेके मामलेमे भी तुम काफी सयमसे काम ले रहे हो। हमारे पास फिजूल खर्चके लिए पैसा कभी हो ही नही सकता। कुँवरजी कैसे है? नेपोलियनने अब लिखना बन्द कर दिया है। मीठुबहनके स्वास्थ्यमे अब कुछ वृद्धि हुई कि नही? पैर कैसा है? मुझे पत्र लिखा करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७१०)से।

३८७. भाषण: मद्रास नगरनिगमके मानपत्रके उत्तरमें

२० दिसम्बर, १९३३

महापौर महोदय, नगरपार्षद तथा मित्रो,

आज सुबह मुझे दुबारा अभिनन्दनपत्र[1] भेंट करके आपने जो मेरा सम्मान किया है उसकी मैं दिलसे कद्र करता हूँ। दक्षिणकी यात्रा करनेपर मुझे हमेशा ही बड़ी खुशी होती है। क्योंकि, जैसा कि आप जानते ही हैं, दक्षिणसे मेरे बहुत पुराने सम्बन्ध रहे हैं। गिरमिटिया भारतीय लोगोंसे मेरा निकट सम्पर्क पहले-पहल नेटालमें १८९३ में हुआ था तथा शायद आपमेंसे कुछ लोगोको याद हो कि नेटालमे मेरा प्रथम सम्पर्क केवल दक्षिण भारतीयोसे नही बल्कि तमिल भारतीयोंसे स्थापित हुआ था तथा मुझे पहले-पहल जिस पीड़ित व्यक्तिका मामला अपने हाथमें लेनेका सौभाग्य मिला था वह एक तमिल[2] व्यक्ति था। तबसे ही दक्षिणने मुझे ऐसे कठोर स्नेह बन्धनमे बाँध रखा है जिसका मुकाबला भारतका कोई भी अन्य भाग नही कर सकता।

महोदय, शायद आप न जानते हो, लेकिन कुछेक नगर-पार्षदों और थोड़े-बहुत दूसरे नागरिकोंको शायद इस बातका ध्यान होगा जब पहले मुझे इस महान् नगर-निगमके हाथों एक अभिनन्दनपत्र पानेका सौभाग्य मिला था, उस समय मैंने अपने बहुत-से नाम बताये थे उनमेंसे एक नाम था कुशल भंगी। उस समय मैंने आपकी सार्वजनिक सड़कोकी हालतका जिक्र किया था और कहा था कि इन सड़कोका उपयोग टट्टी-पेशाब करनेके लिए किया जाता है, और ऐसा वे लोग भी करते है जो समझदार हैं। मैं आशा करता हूँ कि उस दिशामें काफी प्रगति हुई है। लेकिन आज सफाईका जो मेरा मिशन है वह एक विशेष प्रकारका है, ज्यादा गहरे ढंगका है और, जैसा कि मैंने उसे देखा है, वह विशुद्ध धार्मिक है — दुर्भाग्यवश आज धर्मके जो संकुचित अर्थ लगाये जाते है उसके नही, बल्कि धर्मके व्यापक अर्थमे धार्मिक है।

जिस सुधारको आज मैंने अपना उद्देश्य बना रखा है उसका सम्बन्ध हिन्दू-समाजके भंगी वर्गसे है और धर्म शब्दको उसके व्यापकतम अर्थमे लिया जाये तो इससे इस सुधारका स्वरूप कुछ कम धार्मिक नही हो जाता। मुझे लगता है कि यह एक अत्यन्त लोकोपकारी मिशन है जिसके लिए मैं गैर-हिन्दुओंको भी सहयोगके लिए निमन्त्रित करनेमें नही हिचका हूँ — बेशक उन जरूरी मर्यादाओके भीतर जिनकी

१. मद्रास नगर-निगमने गांधीजीको ७ मार्च, १९२५ को भी एक अभिनन्दनपत्र भेंट किया था; देखिए खण्ड २६, पृष्ठ २३७।

२, बालसुन्दरम्; देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ १२१।

चर्चा करनेका सौभाग्य मुझे मिशनरियोके सामने, मेरे ख्यालमे जबलपुरमें[1], प्राप्त हुआ था। जैसे-जैसे दिन बीतते जायेंगे आप इस सफाई मिशनका उद्देश्य समझने लगेंगे। अस्पृश्यताका अर्थ निश्चय ही ऊँच और नीचका भेद है, और ऊँच और नीचके भेदको मिटाना ही इस सफाई-आन्दोलनका उद्देश्य है। लेकिन तमिल देशमे घुसनेपर आप मुझसे यह आशा न करे कि मेरी दृष्टिमें समाजके उपयोगी सेवकोके प्रति हिन्दू लोगोका जो कर्त्तव्य है, उसकी मै विशद व्याख्या करूँगा। इसे मैं किसी अन्य अवसर पर करूँगा।

महापौर महोदय और नगरपार्षदो, आज तो मै बस आपको एक बार फिरसे उस अभिनन्दनपत्रके लिए धन्यवाद देता हूँ जिसे आपने कृपापूर्वक मुझे प्रदान किया है। आशा है कि मैंने जो अनुष्ठान हाथमे लिया है उसकी सफलताके लिए मुझे अपनी पूरी यात्राके दौरान आपकी शुभ कामनाएँ प्राप्त रहेगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-१२-१९३३

३८८. भाषण : अखिल भारतीय स्वदेशी प्रदर्शनी, मद्रासमें[2]

२० दिसम्बर, १९३३

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

मद्रासमें मेरे दौरेका आरम्भ सुखद और शुभ मुहूर्तमे हुआ है। मुझे नगर-निगमसे मानपत्र पानेका सौभाग्य मिला था और अब मुझे मेरे मित्र श्री जमाल साहब[3] के हाथो सदर्न इंडिया चैम्बर ऑफ कामर्सकी ओरसे एक और मानपत्र प्राप्त करनेका सौभाग्य मिल रहा है। अभी ज्यादा नही कोई १८ महीनें हुए उनके साथ मेरी लन्दनमे जो लम्बी बातचीत हुई थी उसकी मुझे अत्यन्त सुखद स्मृति है। उस समय हमने ऐसे प्रश्नोपर चर्चा की थी जिनका सारे भारतसे सम्बन्ध था, और अब मैं फिरसे अपनेको उनके साथ पाता हूँ। मित्रो, आप लोगोके आशीर्वादसे मैं आशा करता हूँ कि जिस उद्देश्यको लेकर मै निकला हूँ उसको मद्रासमे और बादमें सारे तमिलनाडुमे ही सफलता मिलेगी।

महोदय, आपने मुझसे स्वदेशी प्रदर्शनीका उद्‌घाटन करनेको कहा है। शायद आपमेसे सब लोग यह बात न जानते हो कि मै सोच-विचारपूर्वक चीजोको पसन्द करता हूँ। मै स्वदेशीके मामलेमे अपने-आपको कुछ हद तक विशेषज्ञ मानता हूँ। भारतमे इस प्रकारकी एकाधिक प्रदर्शनियोका आयोजन करानेमे मेरा हाथ रहा है। भारतमे पैदा होनेवाली या बनाई जानेवाली प्रत्येक वस्तुको आप प्रदर्शित नही कर

१. देखिए "भाषण : लियोनॉर्ड थियोलॉजिकल कालेजमें", ७-१२-१९३३।
२. गांधीजीने सुबह मद्रास महाजन सभा द्वारा आयोजित प्रदर्शनीका उद्‌घाटन किया था।
३. जमाल मुहम्मद।

सकते। स्वभावतः जनताके लिए इस प्रकारकी प्रदर्शनीको शिक्षाप्रद बनानेके लिए आपको चीजोंका चुनाव करना होता है। उदाहरणके लिए भारतमें पैदा होनेवाली घास के बीजोंको तो आप प्रदर्शित नहीं करेंगे। आपको वे बीज और अनाज चुनने होंगे जिन्हें आप चाहते हैं कि जनता उन्हें अपनाये। मित्रो, मेरे दिमागमें बहुत से उदाहरण भरे हुए हैं, लेकिन उनमेंसे मैंने यह केवल एक उदाहरण दिया है। मैंने यह बात इसलिए कही क्योंकि मैं आपसे अब एक बहुत नाजुक विषयमें कुछ कहना चाहता हूँ।

मैं हर स्वदेशी प्रदर्शनीका उद्घाटन करनेका निमन्त्रण स्वीकार नही करता। मैं पूछ लेता हूँ कि भारतमें बनाई जानेवाली नफीस शराबें भी प्रदर्शित की जा रही हैं। अगर की जा रही होती हैं तो मद्यनिषेधका कट्टर समर्थक होनेके नाते मैं आपसे कहूँगा: 'धन्यवाद, किन्तु मैं इस प्रदर्शनीका उद्घाटन नही कर सकता जहाँ कि चमकदार शराबोंका जो कि देशके नैतिक और आर्थिक कल्याणके लिए हानिकारक हैं, प्रदर्शन किया जा रहा है। ठीक इन्ही कारणोंसे तो नही, लेकिन बहुत कुछ इन्हीं कारणोंसे मैं ऐसी प्रदर्शनियोंका उद्घाटन करनेमें भी आपत्ति करता हूँ जहाँ मिलोंका कपड़ा रखा गया हो, भले ही वह सौ प्रतिशत स्वदेशी ही क्यो न हो। मैं यह नही कहता कि मिलोंका कपड़ा उसी अर्थमें हानिकर है जिस अर्थमें कि शराबें हानिकर हैं, लेकिन यदि मुझसे भारतके कुटीरोंमें तैयार वस्तुओंकी नही बल्कि मिलमें तैयार कपड़ेकी प्रदर्शनीका उद्घाटन करनेकी अपेक्षा की जाती है तो आप लोगोंकी यह प्रदर्शनी बड़ी कमजोर साबित होगी। मैं मिलके कपड़ेका विरोध नही करना चाहता। मैं जो कहना चाहता हूँ वह यह है कि यदि आप भारतमें मिल-उद्योगके इतिहासका अध्ययन करें तो आप देखेंगे कि उसे अपने मालके वितरणके लिए किसी स्वदेशी प्रदर्शनीकी आवश्यकता नहीं है। मिलें स्वयं अपनी स्वदेशी प्रदर्शनियाँ हैं। उनके पास अपनी सभी सहूलियतें मौजूद हैं। लेकिन खादीकी क्या स्थिति है?

मैं यह नहीं कहना चाहता कि मैंने एक ऐसी स्वदेशी प्रदर्शनीका उद्घाटन किया जिसमें सभी तरहकी चीजें प्रदर्शित की गई हैं। आपकी प्रदर्शनीका उद्देश्य आत्मोन्नति ही नही होना चाहिए बल्कि यह भी होना चाहिए कि जनता इससे लाभ उठा सके और उसे कुछ जानकारी मिले। मैंने अन्य स्थानोंपर प्रदर्शनियोंका उद्घाटन किया है और एक इतने ही बड़े नगरमें मुझसे एक स्वदेशी प्रदर्शनीका उद्घाटन करनेको कहा गया है। इसलिए मुझे चेतावनीके ये शब्द बीचमें कहने पड़े। आप लोग हरिजनोंकी विभिन्न आवश्यकताओंका विचार करते हैं या नहीं?" जैसा कि आप जानते हैं, हरिजनोंके लिए प्रचार-कार्य करनेको मेरे पास सात या आठ महीनेका जो समय बचा है उस दौरान मेरा एक व्रत है। मैं मुख्यतः हरिजन-कार्य ही करता हूँ, अन्य कोई काम नही। मैं बहुत सारे लोगोंसे विविध विषयोंपर बात कर सकता हूँ, और ऐसे विविध विषयोंकी कोई सीमा नही है जिनमें मेरी दिलचस्पी है या हो सकती है। इस समय मेरा विचार उन चन्द चीजोंके बारेमें ही बोलनेका है जो हरिजन-कार्यके लिए आवश्यक हैं।

आप पूछ सकते है कि कोई स्वदेशी प्रदर्शनी हरिजनोके लिए क्या कर सकती है। मेरा ख्याल है कि खादीका इससे बहुत गहरा सम्बन्ध है। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि हाथकताई और हाथ-बुनाईके चलते हजारों हरिजनोके अँधेरे घरोमें सान्त्वना और आशाकी जगमगाहट फैल गई है। अपनी इस संक्षिप्त यात्राके दौरान भी मुझे बहुत-से हरिजनोके घरोमे जानेका सौभाग्य मिला, और मैंने वहाँ हरिजनोके लिए खादीकी सम्भावनाएँ देखी। आपको यह जानकर भी आश्चर्य होगा कि बहुतसी ऐसी चीजे है — मै आशा करता हूँ कि वे चीजे यहाँ प्रदर्शित की गई है — जिनको बनानेमें हरिजनोका पूरा-पूरा नही तो आंशिक योगदान रहा है। चमडा-उद्योगको ही ले। चमडा तैयार करनेकी आरम्भिक प्रक्रियाएँ हरिजन लोगोके द्वारा ही सम्पन्न होती है। यदि वे लोग यह काम न करते होते तो भारतमे चमडा-उद्योगका कही पता भी न होता। इस उद्योगका इतिहास बतानेकी आशा आप मुझसे न करे। मेरे मित्र जमाल साहब आपको इसके बारेमे विस्तृत जानकारी दे सकते है। लेकिन इसके आर्थिक पहलूके बारेमें मैं आपको बता सकता हूँ। कमसे-कम नौ करोड़ रुपयेकी कीमतकी कच्ची खाले [प्रतिवर्ष] भारतसे बाहर भेजी जाती हैं। यदि हम हरिजनोके साथ ईमानदारीका बर्ताव करे तो इन खालोकी खपत भारतके अन्दर ही हो जायेगी, या कमसे-कम इतना तो होगा ही कि आज जिस तरह कच्ची खाल बाहर भेजी जाती है उसकी जगह तैयार खालका निर्यात होगा। मै ऐसे बहुतसे उदाहरण दे सकता हूँ। लेकिन मैं आपको या खुदको ज्यादा देर रोके नही रखना चाहता।

मुझे इस प्रदर्शनीको खोलते हुए बहुत खुशी हो रही है। मैं आशा करता हूँ कि आप इस प्रदर्शनीसे लाभ उठायेंगे, इसको शिक्षाप्रद बनायेंगे, यहाँकी दूकानोमे जो चीजे लाकर रखी गई है उनमे रुचि लेंगे, और उनके उत्पादनका इतिहास जाननेकी कोशिश करेंगे। और तब आपको यह देखकर आश्चर्य होगा कि संसारके इस सबसे गरीब देशके पास कितने साधन है और यदि हम उनका बुद्धिमानीसे, तथा देशके करोड़ो दलित लोगोके सहयोगसे उपयोग करें तो कितना लाभ हो सकता है। यदि आप लोग हरिजनो, महारो तथा अन्य पीड़ित और दलित जातियोंका शोषण बन्द करके उनके साथ अपने ही साथियो जैसा व्यवहार करेंगे और उन्हे वे ही अधिकार और वही आदर प्रदान करेंगे जिनका हम अपने लिए दावा करते हैं तो हमे अपने इस देशमें जिन जबर्दस्त बाधाओके बीच काम करना पड़ता है उन बाधाओके बावजूद यह देश सम्पन्न और समृद्धिवान देश बन जायेगा, आज जैसी कंगालीकी स्थिति देशमें नही रह जायेगी।

इस प्रदर्शनीका उद्घाटन करनेके लिए आपने मुझे निमन्त्रित किया इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ और मैं आशा करता हूँ कि जनता उदारतापूर्वक इसमें सहयोग करेगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-१२-१९३३

३८९. भाषण : मद्रासकी महिला-सभामें

२० दिसम्बर, १९३३

बहनो,

आपसे अपना परिचय फिरसे ताजा करनेका अवसर पाकर मुझे बहुत खुशी हो रही है। मद्रासमें स्त्रियोंकी सभामें भाषण देनेका यह मेरे लिए कोई पहला मौका नहीं है। मेरे सामने एक बहुत ही व्यस्त कार्यक्रम पड़ा है, जिसे मुझे चालीस मिनटमें पूरा करना है। इसलिए बहुत संक्षेपमें भाषण देनेके लिए आप मुझे क्षमा करेंगी।

मैं यहाँ आपसे एक काम करनेके लिए कहने आया हूँ। आप यह बात बिलकुल भूल जाइए कि कुछ लोग ऊँचे हैं और कुछ नीच। कतई भूल जाइए कि कुछ स्पृश्य हैं और कुछ अस्पृश्य। मैं जानता हूँ कि जैसे मैं ईश्वरमें विश्वास करता हूँ वैसे ही आप सब भी करती हैं और ईश्वर इतना निर्दयी और अन्यायी नहीं है कि वह पुरुष-पुरुष और स्त्री-स्त्रीमें ऊँच-नीचका भेदभाव करे। यह अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मके नामपर सबसे बड़ा कलंक है। और मैं यह कहनेमें भी नहीं हिचका हूँ कि यदि अस्पृश्यता जारी रहती है तो हिन्दू-धर्म नष्ट हो जायेगा। मनुष्यकी भाषामें कहें तो कहेंगे कि ईश्वरने हमारे साथ बहुत धीरज बरता है लेकिन मैं यह कहनेमें नहीं झिझकता कि ईश्वरके धैर्यका भी अन्त हो सकता है तथा हिन्दू भारतमें एक मनुष्य दूसरे मनुष्यके प्रति जो अत्याचार कर रहा है उसके प्रति अब वह और धैर्य नहीं बरतेगा।

इस स्थानपर गांधीजी भाषण देते-देते रुक गये और कहा :

आपने मुझे थैली नहीं दी।

डा० मुत्तुलक्ष्मी रेड्डीने तत्काल यह कहते हुए कि इस थैलीमें ४३० रु० की नकद राशि है, गांधीजीको थैली दे दी।

आपने मुझे एक हल्की थैली दी है। लेकिन हल्की हो या भारी, थैली तो हरिजनोंकी सेवा करनेके लिए है।

डा० मुत्तुलक्ष्मी रेड्डीने बताया कि हममेंसे बहुतोंने दिल खोलकर उस थैलीमें दान दिया है जो आपको तिलक घाटपर होनेवाली सार्वजनिक सभामें मिलनेवाली है।

अच्छा तो आप यह बहाना बनाना चाहती है; अच्छी बात है; मैं देखता हूँ कि आप सब पुरुषोंसे समानता चाहती है।

मैं इस थैलीको दाताओंकी इस इच्छाका द्योतक मानता हूँ कि धर्मके नामपर हमने जिन लोगोंको हानि पहुँचायी है उसके लिए वे थोड़ा-बहुत प्रायश्चित्त करना चाहती हैं।

खैर, कुछ भी हो, स्त्रियोने स्वेच्छापूर्वक अपने गहने दिये है, कुछने अपनी अँगूठियाँ दी है, कुछने अपनी चूड़ियाँ और हार, और कुछने दूसरी चीजें दी है, और मै चाहता हूँ कि आप भी वैसा ही करें, लेकिन इस शर्तपर कि आप जो गहने देंगी उनके बदले आप नये गहने नही बनवायेगी और आप हरिजन-आन्दोलनके लिए यह दान देना अपने लिए सौभाग्यकी बात मानेंगी। मै भाषणका अन्त सर्वशक्तिमान ईश्वरसे इस प्रार्थनाके साथ करता हूँ कि वह आपके इस प्रयत्नमें आपकी मदद करे तथा वह आपके हृदय इस तरह बदल दें कि आप स्पृश्यो और अस्पृश्योके बीच भेद करना भूल जायें।

एक बहन चाहती है कि मै हिन्दीके समर्थनमें कुछ शब्द कहूँ, और यह मै खुशीसे करता हूँ। मुझे उम्मीद है कि आपमेंसे कुछ बहने भारतके दूसरे भागोमे, उत्तरी भागोमे, काम करना चाहेगी। यदि आप हिन्दी नही जानती है तो आप उत्तरके लोगोके साथ घुल-मिल नही सकती। ध्यान रहे कि भारतके २२ करोड़ लोग हिन्दी जानते और समझते है। दक्षिणकी शिक्षित बहने २२ करोड लोगोकी भाषाकी अवहेलना नही कर सकती।

अच्छा, भाषण मैने खत्म कर दिया है, तथा जो बहनें अपने गहने देना चाहे वे दे सकती हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-१२-१९३३

३९०. भाषण : मद्रासकी छात्र-सभामें

२० दिसम्बर, १९३३

विद्यार्थियो और मित्रो,

न तो आप मेरे लिए नये है और न मै आपके लिए। मै आप लोगोको अच्छी तरह जानता हूँ। १८९६ में, जब बेशक आपमेंसे बहुतसे लोग पैदा भी नही हुए थे, और जब उन लोगोंको छोडकर जिन्हें 'कुली' कहा जाता है अर्थात् तमिलनाडुके लोगोको छोड़कर आपके और दूसरोके लिए मैं एक अनजान व्यक्ति था, उस समय मैने मद्रासके छात्रोके साथ परिचय स्थापित किया था। उस समय भी वे लोग मुझे किसी कदर जानते थे, लेकिन उस समय आप लोगोने मेरा जैसा जोरदार स्वागत किया था वह मुझे याद है। आपने मुझे जो थैली भेटकी है और जो अभिनन्दनपत्र पेश किया है उसको लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। इस बातके लिए मुझे आपसे बहस करनेकी और आपको विश्वास दिलानेकी जरूरत नही है कि अस्पृश्यता हिन्दूधर्मपर सबसे बड़ा कलंक है। मुझे आपको यह विश्वास दिलानेकी आवश्यकता नही है कि आपने जो-कुछ शिक्षा प्राप्त की है, यदि उसके बाद भी आप मनुष्य-मनुष्यके बीचके भेद को मानते हैं, तो आपकी सारी शिक्षा बेकार है; लेकिन मैं आपसे इतना जरूर चाहूँगा कि यदि आप पूरी तरह मानते हैं, जैसा कि आपने अपने

अभिनन्दनपत्रमें बताया है कि आप मानते हैं, तो आप यह समझ लें कि अस्पृश्यता एक बुराई है जिससे हमें छुटकारा पाना है। मै चाहता हूँ कि आप इस कार्यमें मदद करें; मै चाहता हूँ कि आप हरिजनोकी सेवा करें। मैंने तो यह आशा की थी कि आप अपने अभिनन्दनपत्रमें मुझे यह बतायेंगे कि आपने उन लोगोकी किस तरह सेवा की है। दिल्लीके विद्यार्थियोकी ओरसे जब मुझे अभिनन्दनपत्र मिला था, तो उसमे उन्होने मुझे यह बताया था कि वे दिल्लीके हरिजनोकी, और यहाँतक कि दिल्लीके आसपासके गाँवोके हरिजनोकी भी, किस प्रकार सेवा कर रहे हैं। उम्मीद है कि आप उनका अनुकरण करेंगे। उन्होने इस बातका दम नही भरा कि उन्होने कोई चमत्कार करके दिखा दिया है। उन्होने तो कुछ समय पहले मामूली-सी शुरुआत की थी। पता नहीं कि आपने भी इस दिशामे कोई मामूली शुरूआत की है या नही। मै नही जानता कि आपको यह पता है या नही कि आप हरिजनोकी दशा सुधारनेके लिए कितना काम कर सकते है, और मौन-सेवाके जरिये आप इस कलंकसे हमे, हमारे समाजको छुटकारा दिलानेके लिए कितना बड़ा काम कर सकते हैं। समाजको यह यकीन दिलानेके लिए कि अस्पृश्यता धर्मका अंग नही बन सकती और यह एक भयंकर दोष है, आपको चरित्रका निर्माण करना होगा। आप अपने जीवनसे, अपने आचरणसे यह दिखा दीजिए कि कुछ लोगोको स्पृश्य और कुछको अस्पृश्य समझना धर्म तो है ही नही, बल्कि स्पष्ट रूपसे धर्मके विरुद्ध भी है। और यदि आपके पास चरित्र-गुण ही नही है तो फिर स्वाभाविक है कि लोग आपपर किसी प्रकारका यकीन नही करेंगे। आपको जनसाधारणके हृदयको स्पंदित करना होगा, जन-साधारणके हृदयको बदलना होगा। शास्त्रोके अध्ययनका दावा करनेवाले दकियानूसी लोग क्या कहेंगे, इसकी परवाह मत कीजिए; वे जनताका प्रतिनिधित्व नही करते और न मेरी रायमे शास्त्रोकी उनकी व्याख्या सही व्याख्या है। हो सकता है कि मै गलतीपर होऊँ, लेकिन हर हालतमे ऐसे लोग थोड़े ही होते हैं जो जनताको प्रभावित कर सकते हैं, जैसा कि आप लोग भी कर सकते है। मैं आपसे वादा करता हूँ कि जो लोग जनताके बीच काम कर रहे है अन्तमे केवल उनकी बात ही अन्तिम मानी जायेगी। जनता बहस नही करेगी। वह तो बस यह जानना चाहेगी कि जो लोग उसके पास जाते हैं और उससे यह कहते है कि जिस अस्पृश्यताको उन्होने इतने लम्बे समयतक माना है वह एक बुराई है, वे लोग है कौन। और यदि उसने देखा कि जो लोग उसके पास आये थे और जिन्होने उससे यह कहा था कि अस्पृश्यता एक बुराई है, वे प्रामाणिक चरित्रवाले आदमी हैं तो जनता उनकी बात सुन लेगी, और यदि उनके पास प्रामाणिक चरित्र-गुण नही हुआ तो वह उनकी बात नही सुनेगी। मैं आपके सामने यह जो प्रस्ताव रखता रहा हूँ वह आश्चर्यजनक रूपसे सीधा-सरल प्रस्ताव है जिसे आपमेंसे प्रत्येक व्यक्ति चाहे तो स्वयं परख सकता है।

ये लोग जो आपके बीच रह रहे हैं, आप उनकी किस तरह सेवा कर सकते हैं? बहुत-सी छात्र-सभाओमें भाषण करते हुए मैंने इसका तरीका बताया है। अपने हाथोमें झाड़ू और बाल्टी पकड़िए, किसी तमाशे या स्वांगके तौरपर नही, बल्कि

सच्चे दिलसे, तथा झाड़ू और बाल्टीसे काम करिये और मद्रासके उन तमाम गन्दे स्थानोको साफ कर डालिए, उन लोगोके बीच जाइए तथा उनकी शराबकी लत छुड़वाइए, उन्हें स्वास्थ्य-विज्ञान तथा स्वच्छताके प्रारम्भिक नियम सिखाइए, जिनका उनमेसे अधिकांश लोगोको कोई ज्ञान ही नही है और यह हमारे लिए शर्मकी बात है। हमने ऐसा मानकर कि ये लोग हमारे ध्यान देने योग्य भी नही है, ये धरतीके सबसे निम्न कोटिके मनुष्य है, अस्पृश्य है, अदर्शनीय है, और अनुपगम्य है इत्यादि, हम इस निर्णयपर पहुँचे कि हमे न तो उनकी देखभाल करनेकी जरूरत है और न वे जो-कुछ कर रहे है उसकी तरफ ध्यान देनेकी। उन्होने हमपर विश्वास कर लिया और ऐसा मानकर कि वे मनुष्य नही है और पशु भी नही है, स्वय अपनी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। उन्होने किसी तरह कठिनाईसे अपनेको जीवित रखा है। आपको ऐसे लोगोके बीच जाना है और उनमे आशाका संचार करना है। उम्मीद है कि आप इन स्थानोपर जायेगे तथा कमर कसकर उनके बीच कार्य करेंगे और उन्हे यह विश्वास दिलायेंगे कि आप वहाँ किसी प्रकारका पूर्वग्रह रखकर और किसी खराब इरादेसे नही आये है बल्कि आपका उद्देश्य साफ है और वह उद्देश्य है उनके बीच शान्ति और प्रेमका सन्देश पहुँचाकर उनकी सेवा करना। यदि आप इतना करेगे तो आपको तुरन्त अहसास हो जायेगा कि उनके जीवन भी आप जैसे बन गये है। मैं आपसे यह नही कहता कि जिन घंटोमे आपको पढनेकी जरूरत हो सकती है आप उनमेंसे एक भी क्षण इस काममे गँवाये बल्कि मेरा तो यह कहना है कि आप अपने खाली समयका उपयोग करें और मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि यदि आपमेसे प्रत्येक व्यक्ति आत्म-निरीक्षण करे तो आप देखेंगे कि हररोज आपके पास बहुत-सा समय खाली रहता है। मै यह नही कहता कि आप अपना सारा खाली समय इसी काममे लगा दीजिए, बल्कि यदि आप सब इकट्ठे हो जाये और मद्रासके हरिजनोकी सेवामे लग जाये तो आप देखेगे कि उनके जीवनमे भी और आपके जीवनमे भी क्रान्तिकारी परिवर्तन हो गया है। यह सब समझनेमे ईश्वर आपकी मदद करे! ईश्वर आपको इस सन्देशका अनुकरण करनेकी शक्ति दे।

एक बात और है जो मुझे आपसे कहनी है। मद्रासके विद्यार्थियोकी मैंने एक शिकायत की है, वह यह कि हालाँकि वे अपनेको खास मद्रासका ही नही बल्कि भारतका एक अग मानते है, तो फिर वे, और मै बहनोसे खास तौरपर कह रहा हूँ, कि वे उस भाषाकी, जिसे २२ करोड़से भी ज्यादा भारतीय समझते है, अर्थात् हिन्दीकी, अवहेलना कैसे कर सकते है। आपके यहाँ मद्रासमें हिन्दी-प्रचार-सभा है जो आपको हिन्दी सीखनेके लिए सारी सुविधाएँ देती है। मुझे मालूम है कि बहुत-से विद्यार्थियोने इन सुविधाओसे लाभ उठाया है लेकिन मुझे अफसोस के साथ यह कहना पडता है कि यह काफी नही है। मैने तो यह आशा की थी कि इस बार आप मुझे हिन्दीमे लिखा हुआ अभिनन्दनपत्र भेट करेंगे, और मै तो यह उम्मीद भी लगाये बैठा था कि आप मुझे हिन्दीमे बोलनेको कहेगे। लेकिन मुझे यह उम्मीद फौरन छोड देनी पड़ी। इस समय तो मै एक काममे, सिर्फ एक काममें, लगा हुआ

हूँ इसलिए हिन्दीकी चर्चापर आपका और अपना बहुत-सा समय न लेते हुए मैं अपने उद्देश्यपर जोर देता हूँ। मैं इस चेतावनीके साथ अपना भाषण समाप्त करता हूँ कि जब आप अपने कन्धोंपर देशका भार सँभालेंगे उस समय यदि आपको हिन्दी या हिन्दुस्तानी न आती हुई तो आपको बहुत बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ेगा। मैं आपको फिरसे धन्यवाद देता हूँ।

अन्तमें महात्माजीने कहा कि मुझे उम्मीद है कि विद्यार्थी मुझे इस अभिनन्दन-पत्रके भारसे मुक्त कर देंगे। मैं इसकी नीलामी करूँगा। चूँकि कोई भी बोली बोलने-वाला आगे नहीं आ रहा था इसलिए महात्माजीने कहा कि स्त्रियाँ भी अपने गहने देकर बोली बोल सकती हैं। मैं चूड़ियोंके जोड़े अथवा अँगूठीके बदलेमें यह अभि-नन्दनपत्र देनेको तैयार हूँ। इसके बाद सभामें बैठी दो स्त्रियोंमेंसे प्रत्येकने एक-एक चूड़ी भेजी। कुमारी स्वामिनाथनने दो चूड़ियाँ दीं, और उन्होंने अभिनन्दनपत्र ले लिया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१-१२-१९३३

३९१. भाषण : मद्रासकी महिला-सभामें[1]

२० दिसम्बर, १९३३

प्रिय बहनो,

हरिजन सेवक संघकी स्वागत समितिने मेरे लिए बहुत कम मिनट छोड़े हैं, इसलिए हालाँकि मैं आपसे परिचय स्थापित करनेको बहुत उत्सुक हूँ, इन चन्द मिनटों मे जितना परिचय स्थापित करना सम्भव है उससे कही ज्यादा परिचय स्थापित करनेको उत्सुक हूँ, लेकिन मुझे जब्तसे काम लेना होगा, और कुछ शब्द कहनेके बाद ही मुझे आपके पाससे चला जाना होगा। यह जानकर मुझे बेहद खुशी हुई कि आपमेसे बहुत-सी बहनें हरिजन है। यदि किसी प्रमाणकी जरूरत थी तो यह सभा उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है; अगर मुझे यह पता न होता कि आपमेसे कुछ बहने हरिजन है तो कमसे-कम मैं नही जान सकता कि कौन बहने हरिजन है और कौन नही है। इससे जाहिर होता है कि अस्पृश्यताकी प्रथा ईश्वरकी बनाई हुई प्रथा नही है। यह प्रथा तो मनुष्यके अन्दरके असुरकी बनाई हुई है। और यह काम सवर्ण हिन्दू पुरुषों और स्त्रियोका है कि वे इस प्रथाके विरुद्ध बगावत करके खड़े हो जाये और इसे खत्म कर दे। इसीलिए मदर्स एसोसिएशनकी ओरसे हरिजन कार्यके लिए दी गई इस छोटी-सी थैलीको स्वीकार करते हुए मुझे खुशी हो रही है।

१. गांधीजीको मदर्स एसोसिएशन और हरिजन स्त्रियोंकी ओरसे अभिनन्दनपत्र भेंट किये गये थे।

लेकिन अब मै एक शब्द हरिजन बहनोसे कहना चाहता हूँ। मै चाहता हूँ कि वे, और हरिजन-पुरुष, आत्म-शुद्धिके इस आन्दोलनमे अपनी भूमिका शानदार ढँगसे अदा करें। तीन या चार चीजें ऐसी है जिनपर नि.सन्देह ध्यान देनेकी जरूरत है। पहली चीज तो है सफाईके प्रारम्भिक नियमोका पालन, अर्थात् शरीरकी शुद्धि। आपको इन नियमोके अनुसार चलना चाहिए। फिर सवाल है मुर्दार-मास और गो-मांस खानेका और मै जानता हूँ कि कुछ हरिजन इन बुरी आदतोके शिकार है। ये दोनो चीजें छोड़ देनी चाहिए। चौथी चीज केवल हरिजनोका दुर्गुण नही है, क्योकि तथा-कथित ऊँचे वर्गके हिन्दू भी उस बुरी आदतसे चिपटे हुए है जिसे मै बतानेवाला हूँ। और वह चीज है मद्यपानकी बुराई। इसकी परवाह मत करिए कि तथाकथित ऊँचे वर्गके हिन्दू क्या करते है या क्या नही करते, कमसे-कम आप तो अपने पुरुषोको मना कीजिए, और यदि आप भी उस आदतकी शिकार है तो आप भी उसे बिलकुल छोड़ दीजिए। मै पिछले ५० सालसे गरीबो और उन लोगोके बीच काम करता रहा हूँ जो शराबके आदी है, और इसलिए मै जानता हूँ कि मै क्या कह रहा हूँ। दक्षिण आफ्रिकामे नेटालमे मैने अपनी ही बहनोंको शराबमे धुत और गन्दी नालियोमे लौटते देखा है। जिस समय वे शराबमे धुत होती थी, उस समय वे अच्छे या बुरेमे भेद नही कर पाती थी। इसलिए यदि आप इस आदतकी शिकार है तो अपनेको इससे बचा ले। ईश्वर हम सबको, चाहे हम हरिजन हो या नही, उस सन्देशको समझनेकी शक्ति दे जिसे मै भारतके कोने-कोनेमे देनेका प्रयत्न कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-१२-१९३३

३९२. भाषण : मद्रासकी सार्वजनिक सभामें[1]

२० दिसम्बर, १९३३

आपने अपने स्नेहका यह जो प्रदर्शन किया है वह अद्भुत है। मै आशा करता हूँ कि मै जो काम भगवानके नामपर, उसके लिए तथा उसके भूले-बिसरे बच्चोके लिए जिन्हे हम 'हरिजन' समझते है, करनेकी कोशिश कर रहा हूँ, आप उस कामकी गम्भीरताको तथा महत्ताको समझते है। ईश्वरकी दृष्टिमे जैसे पशु और पशुके बीच कोई भेद नही हो सकता उसी तरह मनुष्य-मनुष्यके बीच कोई भेद नही हो सकता। यदि ईश्वरने मानव-जातिके एक समुदायको दूसरेसे हीन बनाया होता तो उसने हमारे शरीरके कुछ अगोपर भेद-सूचक चिह्न लगा दिये होते ताकि ये भेद स्पष्ट रूपसे देखे जा सकते, अनुभव किये जा सकते और दिखाये जा सकते।

भारतके एक छोरसे दूसरे छोर तक आप जहाँ चाहे वहाँ चले जाइए, मेरी ही तरह आपको भी अपनेको उच्च वर्गीय हिन्दू माननेवालोमे और जिन्हे उच्च वर्गीय

१. ट्रिप्लीकेन बीच र आयोजित इस सभामें १ लाखसे भी ज्यादा लोग उपस्थित थे।

हिन्दू 'अस्पृश्य', 'अदर्शनीय' और जाने क्या-क्या कहते है, उन लोगोके बीच कोई भेदसूचक विशेषता नही दिखाई पड़ेगी।

इसलिए मैं आपसे गम्भीरतापूर्वक इस अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्नपर विचार करनेके लिए कहता हूँ। मै बता चुका हूँ और जो बात मै हजारो मंचोसे कह चुका हूँ वही बात मैं इस विशाल श्रोता-समुदायके सामने फिर दोहराता हूँ कि यदि हम अपने दिलोमेसे अस्पृश्यताको बिलकुल निकाल नही देते तो एक जातिके रूपमे हमारा विनाश सुनिश्चित है और जिस प्रकार बहुतसे 'वाद' मिट गये है वैसे ही हिन्दूवादका भी नाश हो जायेगा और दोष हमारा होगा।

इस शोरगुलके बीच मुझे आपके सामने इस महान् आन्दोलनके फलितार्थोकी चर्चा नही करनी चाहिए। इतना ही कहना काफी है कि जब हमारे दिलोमेसे अस्पृश्यता निकल जायेगी तव हरिजनोको स्वतन्त्रताकी प्रभाका अनुभव होगा और तव हम उनके साथ वैसा ही वर्ताव करेंगे जैसा कि अपने साथ करते है और हमे यह भी पता चल जायेगा कि उनके भी स्पष्टत· और निर्विवाद रूपसे वे ही अधिकार है जो हमारे हैं तथा हरिजन भी उसी अनुशासनके अधीन होंगे जिसके कि सवर्ण हिन्दू है। यदि ईश्वरकी कृपासे यह सन्देश आपके हृदयो तक पहुँच जाता है तो हम ऊँच-नीचके सारे भेद भूल जायेंगे।

अव मैं चाहूँगा कि आप कृपा करके शान्तिपूर्वक तितर-बितर हो जाइए ताकि मैं भी आसानीसे अपनी कार तक पहुँच सकूँ। आप लोग कृपया अपने घरोको लौट जाये। सभाकी कार्रवाई समाप्त हो चुकी है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-१२-१९३३

३९३. भाषण: बच्चोंके सम्मुख[1]

मद्रास
२१ दिसम्बर, १९३३

नन्हें-मुन्नो, लड़के और लड़कियों, मैं तुमसे केवल एक शब्द ही कहूँगा। याद रखो कि शुद्धीकरणके इस आन्दोलनमे बच्चोको भी अपना योगदान देना होगा। और मै तुम लोगोसे जो कहना चाहता हूँ वह केवल यही: बच्चो, हमेशा अच्छे बने रहो और सब मुसीबतोंमें सदा भगवानको याद करो।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-१२-१९३३

१. गांधीजी वेल्लाल टीनमपेटमें भारत सभाको देखने गये थे जो हरिजनोंके लिए एक रात्रि-पाठशाला और धार्मिक कक्षाएँ चलाती थी।

३९४. भाषण : रॉबिन्सन पार्क, मद्रासमें

२१ दिसम्बर, १९३३

आपने मुझे जो मानपत्र भेट किए है, उनके लिए मै आपको सच्चे दिलसे धन्यवाद देता हूँ। और आपने मुझे जो थैली और उपहार दिए है उनके लिए भी मै आपको धन्यवाद देता हूँ। इस सारे धनका उपयोग हरिजनोके उत्थानके लिए किया जायेगा। मै चाहता हूँ कि आत्मशुद्धिके इस महान् आन्दोलनमे स्त्रियाँ और पुरुष अपना पूरा योगदान दे। हमे अपनी सभी बुराइयो और बुरी आदतोको तिलाजलि दे देनी चाहिए। हमे भगवानसे प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमे शुद्ध हृदय प्रदान करे। यदि आपमेसे किसीको मुर्दार जानवरोका मास खानेकी आदत हो तो उसे इस बुरी आदतको छोड देना चाहिए। आपको स्वास्थ्य और सफाईके नियमोका पालन करना चाहिए। आप अपने बच्चोको शिक्षा दें और यदि आपको शराब पीनेकी आदत हो तो उसका त्याग कर दे। यह मानवजातिके सबसे बड़े शत्रुओमेसे एक है। अनेक सवर्ण हिन्दू मद्यपान करते है। इसका अर्थ यह नही कि हरिजन भी मद्यपान करे। यह एक ऐसा पेय है जो पुरुषोको उन्मत्त बना देता है और वह पत्नी, माँ और बहनमे भेद कर सकनेकी शक्ति खो बैठता है। भगवान आपको शुद्धिकी इस प्रक्रियासे गुजरनेके लिए पर्याप्त शक्ति दे। और अब आप मुझे क्षमा करेगे कि मै आपको ज्यादा समय नही दे पाऊँगा। मुझे अभी और बहुतसे कार्यक्रमोमे जाना है। अन्तमें, मै आपसे अनुरोध करूँगा कि आप मुझे बिना कोई शोर किए जानेके लिए रास्ता दे दे। आपने मेरे प्रति अपने स्नेहका जो भव्य प्रदर्शन किया है और इस शुद्धि आन्दोलनमे जो दिलचस्पी दिखाई है, उसके लिए मै आपका धन्यवाद करता हूँ। ईश्वर आपका कल्याण करे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २२-१२-१९३३

३९५. भाषण: पेराम्बूरकी मजदूर-सभामें[1]

२१ दिसम्बर, १९३३

साथी मजदूरो,

आपने मुझे जो मानपत्र भेट किया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

यदि आप सारे भारतके मजदूरोंके दु:ख-सुखको बाँटना चाहते है, उनके साथ तादात्मय स्थापित करना चाहते है तो आपको हिन्दुस्तानी सीख लेनी चाहिए। जबतक आप ऐसा नहीं करते तबतक उत्तर और दक्षिणमें कोई मेल नही हो सकता। लेकिन आज मैं जिस उद्देश्यको लेकर आपके पास आया हूँ वह यह नही है। आज मैं मजदूरोंसे यह कहना चाहता हूँ कि कमसे-कम मजदूरोमें परस्पर ऊँच-नीचका भेद नही होना चाहिए।

पिछले चालीस सालसे मजदूरोके बीच रहनेके बाद मै यह जानता हूँ और मुझे इस बातका दु:ख भी है कि मजदूरोमें भी भेदभाव है। उनमे हरिजन मजदूर होते है और गैर-हरिजन मजदूर भी होते है। यहाँ तक कि गैर-हरिजन मजदूरोमें भी भेदभाव दिखाई देता है। आपको इस भेदभावको भुला देना होगा। हरिजन मजदूर और गैर-हरिजन मजदूर, दोनों एक है। मै आपमेंसे उन लोगोसे जो हिन्दू होनेका दावा करते है, कहता हूँ कि हमारे बीच आज अस्पृश्यता जिस रूपमे विद्यमान है उसका धर्ममें कोई विधान नही किया गया है।

यह असम्भव है कि ईश्वर, जो न्यायका देवता है, उन सब भेदपरक बातोको प्रश्रय देता होगा जिन बातोंको आज धर्मके नामपर मनुष्य प्रश्रय देता है। और अन्तमें जो लोग मुर्दार-मांस अथवा गो-मांस खाते हैं उन्हें उसका त्याग करना चाहिए और यदि मजदूर लोग अपने पैरोंपर खड़े होना चाहते है तो उन्हे मद्यपान और जुआ जैसी बुरी आदतोको छोडना होगा। मै जानता हूँ कि इन दो बुराइयोकी वजहसे मजदूरोंका अधोपतन हुआ है और इससे कितने ही मजदूरोके घर उजड़ गये है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप शराब पीने और जुआ खेलनेकी आदतोको छोड़ देंगे। भगवान आपको पर्याप्त बल दे जिससे कि आप छुआछूत मानने, मद्यपान करने और जुआ खेलनेकी बुरी आदतोका त्याग कर सके।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २२-१२-१९३३

१. यह भाषण मद्रास एण्ड सदर्न मराठा रेलवे कर्मचारी-संघ द्वारा भेंट किये गये मानपत्रके उत्तरमें दिया गया था।

३९६. टिप्पणियाँ

पुष्पमालाएँ

बड़ा ही अच्छा हो, यदि मेरे प्रवास-क्रमके प्रबन्धक मुझे फूलमालाएँ भेंट करनेकी लोगोकी आदत छुड़ाते जाये। मालाओका भेट करना अगर आवश्यक ही समझा जाये, तो सूतकी मालाएँ दी जाये और उनमे जो सूत लगाया जाये वह एकसार, मजबूत और चरखेका कता बारीक सूत हो, ताकि वह सहज ही कपडे बुननेके काममें आ जाये। ये फूलमालाएँ बिना पैसे या बिना मेहनतके तो बन नही जाती। जितना भी धन और जितना भी श्रम हमें प्राप्त हो सके, उस सबकी हरिजन-सेवाके लिए आवश्यकता है। किसी भी हालतमे उस श्रम या धनको मै अपने विलास, अपनी झूठी शान या अपनी प्रतिष्ठापर खर्च नही होने देना चाहता। फिर फूलोका बरसाना तो एक बड़ा हानिकारक रिवाज है। गेदेके फूल जब दूरसे फेंके जाते है, तो उनकी सख्त डठले मेरे ऐनकके शीशोको तोड सकती है और आँखोको भी उनसे क्षति पहुँच सकती है। कई बार तो मेरी आँखें इन फूलोकी डठलोकी चोटसे बाल-बाल बची है।

इस तरह [फूलों और मालाओपर होनेवाली फिजूलखर्चीसे] जो पैसा बचे, वह हरिजन-सेवाके निमित्त थैलियोमे डाल दिया जाये। सचमुच मै देखता हूँ कि प्रवास-की बहुत-सी व्यवस्थाओमे किफायतकी गुजाइश है। मोटरगाडियो पर काफी पैसा बर्बाद किया जाता है। जिनका रहना जरूरी है, वे ही स्थानीय सज्जन मेरे साथ स्थान-स्थान पर चला करे। कार्यकर्त्ता तो हरिजन-सेवाके न्यासी है — और बहैसियत न्यासीके उनसे यह आशा की जाती है कि वे अपने पैसेकी अपेक्षा हरिजनोके पैसेकी रक्षा अधिक सावधानी और मुस्तैदीके साथ करेगे।

नीलाम और जेवर

एक अखबारमे इस बातकी कड़ी टीका की गई है कि मै जहाँ-तहाँ स्त्रियोसे जेवर इत्यादि भेट करनेकी अपील करता हूँ और इस प्रकार दानमे मिली चीजोका नीलाम कर देता हूँ। वास्तवमे मै तो यह पसन्द करूँगा कि सभाओमें उपस्थित होनेवाली हजारो बहने, अगर सारा नही तो अपना ज्यादासे ज्यादा जेवर उतारकर मुझे दे दे। इस देशमे, जहाँ करोडो आदमी अधभूखे रहते है, और जहाँ लगभग ८० प्रतिशत लोगोको यथेष्ट पुष्टिकर भोजन नसीब नही होता, वहाँ आभूषणोका पहनना आँखोको एक अपराधकी तरह खटकता है। भारतमें स्त्रीके पास ऐसी नकद सम्पत्ति बहुत ही कम होती है, जिसे वह अपनी कह सके। जो आभूषण वह पहनती है, वह उसके कहे तो जाते है, पर उन्हे भी वह अपने स्वामीकी अनुमतिके बिना दे नही सकती, उसे देनेका साहस ही नही कर सकती। एक उत्तम कार्यके निमित्त

अपनी निजी चीजका दान उसे ऊँचा उठा देता है। इसके अलावा अधिकतर यह आभूषण कलाविहीन ही होते हैं, कुछ तो निश्चय ही भद्दे और मैल भरनेवाले होते हैं — जैसे कड़े, गलेकी भारी-भारी हँसलियाँ, सिरके आभूषण और पहुँचीसे लेकर कुहनीतक चूड़ियों-पर-चूड़ियाँ, ऐसे ही गहने हैं। सिरके आभूषण बालोंको सँवारनेके लिए नही, बल्कि उलझे-पुलझे, बिना धुले और बहुधा बदबू मारते हुए बालोके शृंगारके लिए ही पहने जाते हैं। मेरी रायमे कीमती गहने पहननेसे देशको स्पष्ट ही नुकसान पहुँचता है। इन गहनोसे मुल्ककी भारी पूँजी रुक जाती है या इससे भी खराब बात यह होती है कि यह पूँजी दिन-दिन कम होती चली जाती है। मेरा मत है कि आत्मशुद्धिके इस आन्दोलनमें स्त्री या पुरुषके आभूषणदानसे देशका स्पष्ट ही हित होता है। जो बहनें गहने देती हैं, वे राजी खुशीसे ही देती हैं। मेरी यह शर्त अवश्य रहती है कि जो आभूषण वे दान कर दें, उसे वे फिरसे न बनवायें। वास्तवमें, बहनोंने मुझे इस बातके लिए आशीर्वाद दिया है कि मैंने उन्हें उन व्यर्थकी चीजोंसे छुटकारा दिला दिया जिन्होंने उन्हें गुलाम बना रखा था। और बहुत-से पुरुषोंने भी मुझे धन्यवाद दिया है कि उनके घरोंमें सादगी लानेका मै एक साधन रहा हूँ।

अब नीलामके बारेमें दो शब्द कहना चाहता हूँ। मुझे इसमें कोई बुराई नही दिखाई देती। नीलाम अच्छी प्रतिस्पर्धा पैदा करता है, और किसी उत्तम कार्यके लिए स्त्री अथवा पुरुषमें उदारताकी भावना जाग्रत करनेका नीलाम एक निर्दोष साधन है। मै वर्षोंसे इस साधनको काममें ला रहा हूँ; और इन नीलामोंका तिलमात्र भी बुरा प्रभाव पड़ा हो, ऐसा मुझे कभी दिखाई नही दिया। संसारके सुविख्यात ग्रन्थकारोंकी फटी-पुरानी हस्तलिपियोंके लिए बड़ी-बड़ी कीमतें देना बुरा नहीं समझा जाता। तो फिर यदि कोई व्यक्ति किसी वस्तुको, भले वह वस्तु यादगारकी चीज ही क्यों न हो, बहुमूल्य समझता है और उस वस्तुके लिए लागत दामसे अधिक पैसे देता है, तो इसमें क्या हर्ज है। निश्चय ही, किसी वस्तुका मूल्य उतना ही होता है, जितना कि खरीददार स्वेच्छासे दे। स्मरण रहे कि मेरे नीलाममें जो लोग बोली बोलते हैं, वे मुझे रिझानेके लिए बड़ी-बड़ी रकमोंकी बोलियों नही लगाते। मुझे ऐसे अवसर याद हैं जबकि मैं लोगोंको बोली लगानेके लिए राजी नहीं कर पाया हूँ, हालाँकि इन मौकोंपर भी वहाँ उपस्थित लोगोंमें अन्य स्थानोंके समान ही उत्साह था।

उपवासका दुरुपयोग

उपवासके दुरुपयोगके इधर हाल में कई समाचार मेरे देखनेमें आये है। एक सज्जनने मुझे पत्र लिखकर यह धमकी दी थी कि अगर आपने अपना हस्ताक्षर न भेजा, तो मै उपवास करूँगा। तीन सज्जनोंका कहना था कि यदि आप हमारे यहाँ न आये, तो हम अनशन करेंगे। एक भाई तबतक उपवास करनेपर तुले बैठे थे जबतक उनके गाँवके लोग खादी, हरिजन-सेवा और ऐसे ही अन्य रचनात्मक कार्योंके लिए ५,००० रुपये इकट्ठा करके न देंगे। इसमें सन्देह नहीं कि ये तीनों उदाहरण उपवासके दुरुपयोगके हैं। कोई व्यक्ति उपवास करनेकी धमकी दे, तो मैं क्यों उसे

अपना हस्ताक्षर दूँ और उसके गाँवमें किस लिए जाऊँ? किसीके उपवासके डरसे लोग क्यों पैसा इकट्ठा करें? जिस मनुष्यके विरुद्ध उपवास किया जाता है, उस व्यक्तिके ऊपर एक नैतिक दायित्व जैसा होना चाहिए। उपवास तभी उचित समझा जाना चाहिए जब वह किसी लोकहितके अर्थ किया जाये अथवा जिसके लिए उपवास किया गया हो, उसमें उसकी सेवा करनेका हेतु अन्तर्निहित हो। मैं यह खूब जानता हूँ कि उपवासके सदुपयोग और दुरुपयोगके बीचमें प्रायः बाल बराबर अन्तर रहता है, जो सहज ही देखनेमें नहीं आ सकता। इसलिए सबसे अच्छी कसौटी तो यह है कि उपवास करनेवालेने वह साधना सिद्ध कर ली है या नहीं जो दूसरोंके आचरण पर प्रभाव डालनेके हेतुसे उपवास करनेके लिए आवश्यक है? मैंने देखा है कि ऊपरके इन दृष्टान्तोंमें उपवास करनेकी योग्यताका या उसके लिए पहलेसे तैयारीका पूरा अभाव था। फिर योग्य उपवास तो वह है, जिनको हजारों आदमी भी करें, तो भी उनका हेतु सफल हो सके, उनका असर काफी अच्छा पड़ सके। यह मानी हुई बात है कि इस तरह अगर हजार आदमी मेरा हस्ताक्षर माँगें अथवा एक हजार कार्यकर्त्ता एक हजार गाँवोंमें मुझे ले जानेका आग्रह करें, या एक कार्यकर्त्ता गरीब गाँववालोंसे चन्दा इकट्ठा करना चाहे और इन सब बातोंके लिए वे हजारों आदमी उपवास करनेपर तुल जायें, तो उन सबकी मनोवांछा पूरी करना तो सर्वथा असम्भव ही होगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-१२-१९३३

३९७. भाषण : जार्ज टाउनकी सभा, मद्रासमें

२२ दिसम्बर, १९३३

मित्रो,

इस समय तक हमने कोई कामकी बात नहीं की है। हुआ क्या है कि जो दो-चार बहुमूल्य क्षण मेरे पास हैं वे भी अभिनन्दनपत्रोंके पढ़े जानेमें चले गये हैं। इसलिए इससे पहले कि मुझे आपसे बोलनेका अधिकार मिले, मैं थोड़ी कामकी बात कर लूँ। (हँसी।) अब मैं आपसे कहता हूँ कि मुझे जो छोटे-मोटे गहने दिये गये हैं आप उन्हें मुझसे ले लें और उसके बदलेमें मुझे शुद्ध सोना दे दें। (दुबारा हँसी।) तब फिर मैं इस हीरेकी अँगूठीको चुरानेका दोषी नहीं ठहराया जा सकता; और इसलिए मुझे यह आपको देनी ही पड़ेगी।

अब मैं सभाके कामकाजवाले भागपर आता हूँ।[1]

इसके बाद गांधीजीने हिन्दीमें कुछ शब्द कहे जिसमें उन्होंने दान देनेवालों तथा सफलतापूर्वक बोली बोलनेवालोंको हरिजनोंके काममें उन्होंने जो मदद की थी

१. इसके बाद गांधीजीने भेंट की गई वस्तुओंकी नीलामी की। बहुत-सी स्त्रियोंने उन्हें गहने दिये।

उसके लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा कि यह एक महान् पुण्य-कर्म है और इस प्रकारके सेवा-कार्योंमें आपको गर्वका अनुभव करना चाहिए। उन्होंने कहा कि आपके हृदयोंमें जो जन्मके आधारपर ऊँच-नीच माननेकी धारणा घर कर गई है उसे निकाल दीजिए। उन्होंने जोर देकर कहा कि अस्पृश्यता महापाप है; और जिसने अपने कुछ बन्धुओंको अस्पृश्य समझनेकी गन्दगीको अपने दिलसे निकालनेका निश्चय कर लिया है, वास्तवमें वही श्रेष्ठ मनुष्य है। इसके बाद गांधीजीने थोड़ेसे शब्दोंमें यह समझाया कि वे अस्पृश्योंको हरिजन क्यों कहते हैं। उन्होंने कहा, मैंने तमिलमें एक महान् उक्ति पढ़ी है: "दिक्कत्रवरुक्कुदोवमे तुनई"[1] और वस्तुतः इस अभागे वर्गके लिए 'हरिजन' शब्दका यही औचित्य है। यह नाम मैंने नहीं गढ़ा है; एक अस्पृश्यके कहनेपर मैंने ही इस नामका प्रयोग स्वीकार किया था। अन्तमें गांधीजीने लोगोंसे यह अपील की कि अस्पृश्यताके इस कलंकको मिटाकर आप अपने धर्मको विशुद्ध बनाइए। उन्होंने कहा:

यह एक महायज्ञ है और ईश्वरसे मेरी यह कामना है कि वह आपको इसमें अपनी उचित भूमिका निभानेकी बुद्धि दे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २२-१२-१९३३

३९८. भाषण: मद्रासके जैन मन्दिरमें[2]

२२ दिसम्बर, १९३३

अब मैं कामकी बातपर आता हूँ। आप लोग जनताका शोषण करते हुए और धन संचय करते हुए दूर-दूरके देशों तक जाते हैं। अब मैं आपका शोषण करने जा रहा हूँ।

श्रोताओंने इस बातका ठहाकों और हर्षध्वनिके साथ स्वागत किया। हाथी-दाँतकी एक मंजूषाको नीलामीके लिए पेश करते हुए गांधीजीने कहा:

इसके लिए आप क्या देंगे?

मंजूषा, जो अनुमानतः १५ रुपयेकी होगी, उसके लिए पहली बोली श्री रामनाथ गोयनकाने १०१ रु० लगाई।

आगे बढ़िए, यहाँपर आये हुए आप गुजरातियोंके लिए तो १०१ रुपये कुछ भी नहीं हैं।

दूसरी बोली २०१ रु० की लगाई गई।

१. "ईश्वर असहायोंका सहायक होता है"।
२. गुजरातियों, मारवाड़ियों तथा सिन्धियोंने गांधीजीका सुबह साढ़े ९ बजे स्वागत किया था।

तो क्या मै इसे जाने दूँ . . . एक, . . . दो, . . . मैं अब भी 'तीन' नही कहूँगा . . . अब भी समय है . . . आप लोगोके लिए कुछ सौ रुपये कुछ भी नही है।

आप तो जानते ही है कि मैं सुधार-अनुष्ठानके सम्बन्धमें आया हूँ। जहाँतक मैं जानता हूँ, यह सत्यकी सेवा है, और मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आप इसमे मदद करें। आप जितना कुछ दे सकते है उसके मुकाबलेमें जो थैली आपने दी है वह तो बहुत कम है।

आगे बोलते हुए गांधीजीने कहा कि हरिजनोके उद्धारके जिस कार्यमें मैं लगा हुआ हूँ वह एक पवित्र कार्य है। जहाँ तक मैं वेदोंका अर्थ समझ पाया हूँ, मैंने ऐसी कोई चीज नहीं देखी जिससे बड़े और छोटेका, स्पृश्य और अस्पृश्यका भेद उचित ठहरता हो। सच्चे अद्वैतके अनुसार तो ईश्वरकी आँखोंमें सब मनुष्य बराबर है। यह तो सिर्फ मायाके कारण मनुष्य-मनुष्यके बीच ऐसा भेदभाव दिखाई पड़ता है। आप लोगोंको अब अपने बन्धु-मानवोंको अस्पृश्य अथवा अदर्शनीय नहीं समझना चाहिए। क्या कोई व्यक्ति यह कह सकता है कि उसका मस्तिष्क, आँख या कान, उसके हाथ, पैर या शरीरके किसी दूसरे अंगसे श्रेष्ठ है? महत्वकी दृष्टिसे सब अंग बराबर है। उसी प्रकार समाजका कोई भी एक वर्ग उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि कोई अन्य वर्ग, और आपको सब मनुष्योंको बराबर समझना चाहिए। मुझे [अस्पृश्यताके] इस सिद्धान्तमें कोई सार नजर नहीं आता जो कि धर्मके आदेशोके विपरीत है। मुझे पूरा विश्वास है कि जो काम मैं कर रहा हूँ वह ईश्वरका कार्य है और यही सत्य-मार्ग है। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि वह आप लोगोंको सम्पन्न और समृद्ध बनाये और आपसे मेरा अनुरोध है कि आप अपना धन सत्कर्ममें और अपने बन्धु-मानवोंकी सेवामें लगायें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-१२-१९३३

३९९. भाषण : वैश्य एसोसिएशनमें[1]

मद्रास
२२ दिसम्बर, १९३३

प्राचीन कालसे हमें सिखाया गया है कि ईश्वरके सम्मुख हाथी और चींटी, ब्राह्मण और शूद्र एक समान हैं। समदर्शी व्यक्तिके सम्मुख भी वे सब बराबर हैं। एक साधु अथवा पण्डित जो कार्य करता है, वही एक प्राकृत अथवा संसारी मनुष्य को करना चाहिए। धार्मिक आदेश दोनोंके लिए एक जैसे हैं। आप पण्डितको सत्य और प्राकृत मनुष्यको असत्यकी शिक्षा नहीं दे सकते। वैश्य लोग समझते हैं कि व्यापारमें झूठ बोला जा सकता है। लेकिन धर्मशास्त्र हमें यह नहीं सिखाते। विश्वधर्ममें न कोई ऊँचा है और न कोई नीचा है। ऊँच और नीचका भेद ही हमारे सब दुःखोंकी जड़ है। अस्पृश्यता-निवारण हिन्दुओंके लिए शुद्धि यज्ञ है। आज आपने जो दान दिया है वह शुद्धि यज्ञमें आपका अंशदान है और आपकी प्रतिज्ञा[2] का बयाना है।

आपने मुझसे पूछा है कि क्या यह शुद्धीकरण आन्तरिक शक्तियोंकी सहायतासे आ सकता है अथवा बाह्य शक्तियोंकी मददसे। आपने ठीक सवाल किया है। बाह्य साधनों द्वारा किया गया शुद्धीकरण बेकार है। यदि मैं आज आपको अपने सामने झुकनेके लिए विवश करूँ तो यह धर्मके विरुद्ध होगा। धार्मिक उद्देश्योंकी प्राप्ति तो केवल आन्तरिक प्रयत्नके द्वारा ही की जा सकती है।

मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि कल जो कार्य आपको विवश होकर करना पड़ेगा वह कार्य आज आप खुशी-खुशी करें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-१२-१९३३

१. दक्षिण भारत वैश्य एसोसिएशनने गांधीजीको एक मानपत्र भेंट किया था। गांधीजीने अपना भाषण हिन्दीमें दिया और श्री के० नागेश्वरराव पन्तुलुने उसका तेलुगुमें अनुवाद किया।

२. देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ १४८-४९।

४००. भाषण : आन्ध्र महासभाकी बैठक, मद्रासमें

२२ दिसम्बर, १९३३

चित्रका अनावरण करते हुए गांधीजीने कहा कि चित्रमें दिखाये गये नागेश्वर-राव पन्तुलुसे जीवित सप्राण नागेश्वर राव पन्तुलु भिन्न हैं। चित्रके नागेश्वर राव पन्तुलुका व्यक्तित्व निस्पन्द हो गया है। मैंने जबसे श्री पन्तुलुको जाना, तबसे ही मुझे उनमें एक विशेषता दिखाई दी है और वह यह कि श्री पन्तुलु हमेशा उन लोगोंकी मदद करनेमें विश्वास रखते है जिनको उनकी या उनकी मददकी अपेक्षा होती है। श्री नागेश्वरराव पन्तुलुने मुझे बताया कि "अमृतांजन"[1] से होनेवाले लाभका अधिकांश भाग दुखियोंकी सहायता, जरूरतमन्द लोगोंकी मदद करनेमें जाता है। श्री नागेश्वरराव पन्तुलुके जीवनका और कोई उद्देश्य नहीं है। महात्माजीने प्रार्थना की कि श्री नागेश्वरराव पन्तुलुकी सदा उन्नति होती रहे, यहाँ तक कि अन्तमें प्रत्येक व्यक्ति उनके पास जा सके और उनसे सहायता और सान्त्वना का लाभ पा सके। उन्होंने आगे कहा कि हम लोगोको चाहिए कि वे श्री नागेश्वरराव पन्तुलुमें पाये जानेवाले उदात्त गुणोंको अथवा जिन उदात्त गुणोंका उनपर आरोप किया जाता है उन गुणोको अपने जीवनमें उतारे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-१२-१९३३

४०१. भाषण : हिन्दी प्रचार सभाके दीक्षान्त समारोहमें[2]

मद्रास
२२ दिसम्बर, १९३३

गांधीजीने स्नातकों और प्रचारकोंसे इस बातकी क्षमा माँगते हुए कि समयकी कमीके कारण उन लोगोंको उनके प्रमाणपत्र व्यक्तिशः प्रदान नहीं कर सकेंगे, कहा कि मैं आपको अपनी बधाई और आशीर्वाद देता हूँ। उन्होंने कहा कि मुझे आपको अब सलाहके तौरपर कुछ नहीं कहना है क्योंकि जो कुछ कहनेको था वह श्री त्रिपाठी[3]

१. एक मरहमका नाम।

२. दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाका तृतीय वार्षिक दीक्षांत समारोह गोखले हालमें हुआ था जिसकी अध्यक्षता गांधीजी कर रहे थे।

३. श्री रामनरेश त्रिपाठी, जिन्होंने दीक्षांत भाषण दिया था।

पहले ही कह चुके हैं। लेकिन इस सलाहको माननेकी आवश्यकतापर मैं जोर देना चाहूँगा। दक्षिण भारतमें, और जैसा कि मैंने देखा है, विशेष रूपसे आन्ध्रप्रदेशमें हिन्दी प्रचारकी सुस्थिर रूपसे प्रगति हुई है। लेकिन मुझे तबतक सन्तोष नहीं होगा जबतक कि प्रत्येक व्यक्ति हिन्दी इतनी काफी न समझने लगे कि फिर कोई व्यक्ति मुझसे अंग्रेजीमें बोलनेको न कहे। मेरी आपसे यही अपील है कि आप साहस और संकल्पके साथ अपने कामको आगे बढ़ाते जायें। आपने अच्छी शुरुआत की है और मुझे आशा है कि आप ऐसा ही काम करते जायेंगे। ऐसा कहा जाता है कि देशके इस भागमें हिन्दी कुछ विशिष्ट कठिनाइयाँ पैदा करती है। शायद कुछ हद तक यह बात सही है। लेकिन मुझे लगता है कि किसी भारतीयके लिए किसी भारतीय भाषाको सीखना बहुत कठिन नहीं है। सभी भारतीय भाषाओंमें संस्कृतका समान रूपसे कुछ पुट होनेके कारण, जहाँतक मैं देख सकता हूँ, किसी भी भारतीय भाषाका कामचलाऊ ज्ञान प्राप्त कर सकना आपके लिए आसान होना चाहिए। अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषा या तमिल जैसी कठिन भाषापर अधिकार करनेमें हमें कठिनाई नहीं होती। इसलिए हिन्दीके मामलेमें हमें बहुत कठिनाई क्यों होनी चाहिए तो फिर हिन्दी ३५ करोड़में से २२ करोड़ भारतवासियोंकी भाषा है, और इसका भारतकी सर्वसामान्य भाषा होना निश्चित है।

गांधीजीने कहा, कुछ लोग कहते हैं कि मुसलमान हिन्दी नहीं समझ सकते, वे केवल उर्दू समझते हैं। लेकिन जन-साधारण जैसी हिन्दी या उर्दू बोलते हैं उसमें मुझे कोई भेद नहीं प्रतीत होता। यह सही है कि इस्लाम धर्मकी पुस्तकोंमें और मुसलमानोंके एक वर्गमें प्रयुक्त होनेवाली उर्दूमें फारसी और अरबी शब्दोंकी बहुलता होती है जिसके कारण हिन्दू उसे नहीं समझ सकते। इसी प्रकार कुछ हिन्दू भी अपनी पुस्तकों और अपनी बातचीतमें संस्कृतनिष्ठ भाषाका प्रयोग करते हैं-जिसके कारण मुसलमानोंको उसे समझना कठिन होता है। जब मैं कहता हूँ कि हिन्दी और उर्दू एक जैसी भाषाएँ हैं तो मेरा तात्पर्य इस प्रकारकी हिन्दी या उर्दूसे नहीं होता। मेरा मतलब तो उस भाषासे होता है जो उत्तर भारतके जनसाधारणकी भाषा है जिसमें संस्कृत, फारसी और अरबी शब्दोंकी अच्छी मिलावट होती है और फिर भी जिसे प्रत्येक व्यक्ति, हिन्दू या मुसलमान, समझ सकता है। यह वह भाषा है जिसे मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति समझना और बोलना सीखे। जबतक आप ऐसा नहीं करेंगे तबतक मुझे भय है कि दक्षिणके लोग न तो उत्तर भारतके जन-साधारण-का हृदय स्पर्श कर सकेंगे और न उत्तर भारतवाले दक्षिण भारतकी जनताका हृदय छू सकेंगे।

गांधीजीने कहा, हिन्दी प्रचार सभा दक्षिण भारतमें पन्द्रहसे ज्यादा वर्षोंसे कार्य कर रही है फिर भी आप लोगोंने इसकी सेवाओंका लाभ उठानेके लिए, और हिन्दी भाषा सीखकर भारतकी राष्ट्रीय एकताको बढ़ानेके लिए क्या किया है? क्या आप

लोग घुड़दौड़, सिनेमा और सस्ते मनोरंजनपर खर्च करनेके लिए समय और धन नहीं निकालते? क्या आप इसमेंसे कुछ समय और धन हिन्दी सीखनेपर खर्च नहीं कर सकते? मैंने सुना है कि सभाको पर्याप्त जगहकी जरूरत है और वह अपना भवन बनानेकी कोशिश करती रही है, लेकिन धनाभावके कारण नहीं कर सकी है। यदि प्रत्येक व्यक्ति हिन्दी सीखनेके लिए आगे आये और सभाकी सेवाओंके बदले एक छोटी-सी रकम भी दे तो आवश्यक धन आसानीसे उपलब्ध हो सकता है और सभाको उत्तर भारतकी सहायतापर निर्भर न करना पड़े। सभाको स्वावलम्बी बनानेका दायित्व दक्षिण भारतका है। इसलिए मैं अपनी यह अपील फिरसे दुहराता हूँ कि सभी दक्षिण भारतीयोंको सभाकी सेवाओंका लाभ उठाना चाहिए और इस प्रकार राष्ट्रके काममें मदद देनी चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २३-१२-१९३३

४०२. बातचीत : दलित वर्ग संघके शिष्टमण्डलसे[2]

मद्रास
२२ दिसम्बर, १९३३

आइए, राव बहादुर। क्या मैं आपको कुर्सी दे सकता हूँ? हाँ तो राव बहादुर, मुझे आपका पत्र मिल गया है। क्या हम उसीसे शुरुआत करें? या हम क्या करें? आप ही कार्रवाई तय करें।

श्री श्रीनिवासनने कहा: "क्या आप पत्रको पढ़कर सुनानेकी इजाजत देंगे?" गांधीजीने कहा:

हाँ, कृपया आप पढ़ दें।

. . . श्री भाष्यम आयंगारने इस बातकी तरफ इशारा किया कि पत्र ६ टाइपशुदा पृष्ठोंका है।

सब कुछ श्री श्रीनिवासनके ऊपर निर्भर करता है जो यहाँ [इस समय] अध्यक्ष हैं। लेकिन जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं उसे ऊपरसे नीचे तक पढ़ चुका हूँ।

१. इसके बाद गांधीजीने उस दुशालेको नीलाम किया जो उन्हें दीक्षांत समारोहके आरम्भमें भेंट किया गया था।

२. सायंकालमें मद्रास दलित वर्ग संघकी कार्यकारिणीके सदस्य एक शिष्टमंडल बनाकर गांधीजीसे मिलने गये। शिष्टमंडलके सदस्य थे श्री आर० श्रीनिवासन, वी० धर्मलिंगम् पिल्ले, स्वामी सहजानन्द, पी० वी० राजगोपाल पिल्ले और पुष्पराज। अन्य उपस्थित व्यक्तियोंमें थे वी० भाष्यम आयंगार, अध्यक्ष, प्रान्तीय हरिजन सेवक संघ; के० नागेश्वरराव पन्तुलु, वी० वेंकट सुब्बैया, के० भाष्यम और हरिजनके सम्पादक आर० वी० शास्त्री।

श्री श्रीनिवासनने सुझाव दिया कि उनके साथियोंके लाभके लिए पत्रको पढ़नेकी अनुमति दी जा सकती है क्योंकि उसे सब लोगोंके पढ़नेके लिए घुमानेका समय नहीं है। गांधीजीने श्री पुष्पराजसे पत्र पढ़नेको कहा।

यदि मैं उसकी ओर ध्यान न दूं तो आप मुझे क्षमा करेंगे। कारण, वह मुझे लगभग हृदयंगम हो गया है। इस बीच मैं अपने कागज ठीक-ठाक कर लूंगा।[1]

सबसे अच्छा यह होगा कि एक-एक मुद्देको लेकर उसका जवाब देता जाऊं। आपने पूना-समझौतेके बारेमें जो कहा है वह हमारे बीचका सामान्य आधार है, और मैं इस विचारका पूरी तरह समर्थन करता हूं कि समझौतेका जिस रूपमें पालन किया जाना चाहिए यदि सवर्ण हिन्दू उसका उसी भावनाके साथ पालन नहीं करते तो वह निरर्थक हो जा सकता है और उसका कोई लाभ नहीं होगा।[2] इस बातको मैं पूरी तरह स्वीकार करता हूं।

केन्द्रीय बोर्ड या प्रान्तीय बोर्ड चुनावोंको प्रत्यक्ष रूपसे किस हदतक प्रभावित कर सकेंगे, यह मैं नहीं जानता। मेरे विचारसे यह एक बहुत कठिन और नाजुक विषय है। इसलिए मैंने यह निर्देश दिया है कि सामान्यतः हमें इन चुनावोंमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। लेकिन जहां किसी हरिजन उम्मीदवारके साथ अन्याय किया जाता है वहां हम जरूर हस्तक्षेप करते हैं। जब ऐसी कोई बात होती है, जैसी कि बम्बईमें हुई, तो हम उसे सुधारनेका प्रयत्न करते हैं।

बम्बईवाली घटनाकी कुछ विस्तारके साथ चर्चा करते हुए गांधीजीने बताया कि विधान परिषद्के लिए चुनावमें एक उम्मीदवारको बिठलानेके लिए उन्होंने क्या-क्या प्रयत्न किये थे। यह व्यक्ति एक ऐसे उम्मीदवारके विरुद्ध खड़ा हो गया था जो हरिजन सेवकसंघका सदस्य था और जिसके बारेमें सभी लोग जानते थे कि हरिजनोंका हित उसे अत्यन्त प्रिय है।

दिल्लीमें हरिजन उम्मीदवारके नगरपालिकाके लिए न चुने जानेका डर था। हमने हस्तक्षेप किया और हरिजन उम्मीदवारके लिए विशेष रूपसे गुंजाइश निकाली गई। कानपुरमें एक हरिजन उम्मीदवार था और सवर्ण हिन्दुओं द्वारा उसका विरोध किया जाना गलत था। मुझे इसके बारेमें चुनावके बाद खबर मिली। हारे हुए सज्जनने मुझे पत्र लिखा; और मैंने उत्तरमें लिखा कि सवर्ण उम्मीदवारके लिए हरिजन उम्मीदवारके विरुद्ध खड़ा होना गलत चीज थी। हम लोगोंने अपनी भरसक कोशिश की कि यह सज्जन अपनी सीटसे इस्तीफा दे दें। लेकिन उस समय इसमें सफलता नहीं मिली। उसके बाद क्या हुआ, मुझे पता नहीं। और भी ऐसे ही कई उदाहरण हैं।

१. पत्र पढ़ा जा चुकनेके बाद गांधीजीने अपना उत्तर दिया।

२. शिष्टमंडलके सदस्योंने यह आशंका व्यक्त की थी कि पूना-समझौता कारगर नहीं होगा और हिन्दुओंकी चालोंके कारण वे लोग अपनी पसन्दके उम्मीदवार नहीं चुन सकेंगे।

मै ये दृष्टान्त यह दिखानेके लिए दे रहा हूँ कि जहाँ कही कोई ऐसा हरिजन उम्मीदवार खडा होता है जिसकी प्रामाणिकतामे किसी प्रकारकी शंका नही होती वहाँ केन्द्रीय बोर्डने सवर्ण हिन्दू उम्मीदवारोको प्रभावित करके चुनावमे बिठालनेकी कोशिश की है। लेकिन जहाँ हरिजन उम्मीदवार एक दूसरेका विरोध कर रहे हो और सवर्ण हिन्दू चुनावोका सचालन कर रहे हो, वहाँ बोर्ड हस्तक्षेप नही करता। आप लोग वास्तवमे चाहते है कि बोर्ड ऐसे मामलोंमें भी हस्तक्षेप करे। आप चाहते है कि बोर्ड चुनावोका इस प्रकार नियमन करे या चुनावोको इस प्रकार प्रभावित करे कि सही प्रकारके व्यक्ति चुने जाये। लेकिन मेरा खयाल है कि तब बोर्ड अपना प्रभाव खो बैठेगा। आज जो बोर्डका प्रभाव दिन-दिन बढ रहा है उसका कारण यही है कि जहाँ किसी हरिजनको नुकसान पहुँचानेका भय है, ऐसे मामलेको छोड़कर उसका रुख बिल्कुल निष्पक्षताका रहता है। यही मर्यादा-रेखा हमने रखी है। अगर आप स्थितिकी जाँच करें तो मुझे तनिक भी सन्देह नही है कि आप मुझसे सहमत होगे।

यदि आप इस बोर्डको सेवाका एक कारगर साधन बनाना चाहते है तो उसे राजनीतिसे बिल्कुल अलग रहना होगा। और जब हमारे चरित्रका स्तर ऊपर जायेगा और अस्पृश्यताके मूलको निकाल फेका जायेगा उस समय सभी चीजोमे ऊपरसे नीचे तक समता स्थापित हो जायेगी। ऐसी मेरी आशा है। लेकिन महज इन नैतिक प्रकार की गलतियोमें बोर्डको हस्तक्षेप नही करना चाहिए। एक बार हमने वैसा करना शुरू किया तो आप देखेगे कि साराका-सारा सगठन भरभरा कर बिखर जायेगा।

बोर्ड राजनीतिसे सर्वथा अप्रभावित है; और जैसा कि मैंने इतनी बार कहा है, हरिजन आन्दोलन विशुद्ध रूपसे धार्मिक है। यदि इसको ऐसा ही बनानेमें मुझे सफलता मिली और यदि बोर्ड इस नीतिको ईमानदारीसे स्वीकार करता है और लगनसे उसका पालन करता है तो आपको इस उद्देश्यके लिए इससे अच्छी कोई चीज नही मिलेगी। राजनीतिसे अलग रहने और उसमे प्रत्यक्षत: हस्तक्षेप न करनेसे आन्दोलन अधिकाधिक शुद्ध बनेगा और बोर्डके लिए भी इसीमे ज्यादा बुद्धिमानी होगी तथा वह अपना उद्देश्य ज्यादा जल्दी प्राप्त कर सकेगा।

श्री श्रीनिवासनने अपने पत्रमें अगला मुद्दा यह उठाया था कि सरकार द्वारा दलित वर्गोंके आर्थिक उन्नयन और सामान्य रूपसे अस्पृश्यता-निवारणके लिए जो-कुछ किया जा रहा है उसके बारेमें बोर्डको हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। महात्मा गांधीने कहा कि मैं आप लोगोंसे बिल्कुल सहमत हूँ कि बोर्डको कोई भी काम ऐसा नहीं करना चाहिए जो सरकार द्वारा इस दिशामें दिये गये प्रोत्साहनके मार्गमें बाधा बने; और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि सरकारके बारेमें मेरी निजी धारणा कुछ भी हो, लेकिन बोर्ड सरकारी प्रयासोंमें हस्तक्षेप नहीं करेगा।

इसमें सन्देह नही कि मै वर्तमान शासन-प्रणालीके बहुत खिलाफ हूँ। भारतके हितोको कुल मिलाकर देखते हुए यह एक अनिष्टकर प्रणाली है। लेकिन मैं इस सिद्धान्तको हरिजनोके मामलेमें लागू नही कर सकता, यानी तबतक जब तक कि

मैं इस संघर्षमे कूद ही न पड़ूँ और इस मामलेमें भी सरकारका विरोध करूँ। मैं ऐसा नही कर सकता।

मैं ईमानदारीसे कहता हूँ कि सरकार जिस प्रकार आप [श्री श्रीनिवासन] अपने हितोंकी रक्षा करनेमें सक्षम है और जिस प्रकार श्री पुष्पराज है, उस प्रकार यदि हरिजन भी सक्षम होते तो मै सरकारका विरोध करनेसे अपने-आपको नहीं रोक पाता। सक्षमतासे मेरा मतलब है कि जहाँ तक व्यक्तिशः आप लोगोंका सवाल है। लेकिन सामूहिक रूपसे देखा जाये तो हरिजन लोग बिल्कुल असहाय हैं। जब वे अपनी मदद आप कर सकेंगे, सवर्ण हिन्दुओंके बराबर खड़े होंगे और उनके साथ समानताके आधारपर मिलजुल सकेंगे, तब मेरा मन शान्त होगा और मैं कहूँगा: "नहीं; मैं आपके हितोंका ध्यान नहीं रख सकता। यह बात मैं शायद नही कर सकता।

हरिजनोंको सरकारसे जो-कुछ लाभ मिलता है, लेने दीजिए, और सवर्ण हिन्दुओंसे जो-कुछ लाभ मिलता है, वह सब लेने दीजिए। ये दोनों मिलकर हरिजनोंके प्रति होनेवाले अन्यायको काफी कुछ दूर कर सकेंगे। लेकिन मैं ऐसा नही मानता कि इसके बाद भी वे सारे अन्यायोंको दूर कर सकेंगे, क्योंकि सवर्ण हिन्दू कैसा भी प्रायश्चित्त क्यों न करें, लेकिन सदियोंसे जिस भारके नीचे हरिजनोंको जिस प्रकार दला जा रहा है, उसको चन्द वर्षोंमें पूराका पूरा हटाया नहीं जा सकता। हरिजन लोग अपने सच्चे स्वरूपको फिरसे प्राप्त करें; और जैसे अच्छे और योग्य वे हो, वैसा ही अनुभव करने लगें, इसमें बहुत लम्बा समय लगेगा।

मैं आपको इस बातका पूरा विश्वास दिलाता हूँ कि जहाँ तक हरिजनोंका सवाल है, मैं सरकारकी नीतिमें कोई दखल नहीं दूँगा। यहाँ भी मैं यह कहूँगा कि मैं अपनी यह यात्रा इस ढँगसे कर रहा हूँ ताकि किसीको किसी प्रकारकी शंका न रहे; मैं सविनय अवज्ञा आन्दोलनके उद्देश्योंकी प्राप्तिके लिए भी हरिजन आन्दोलनका कोई लाभ नहीं उठाऊँगा। वैसा करनेपर वह अवज्ञा आन्दोलन सविनय न रहकर अपराधपूर्ण अवज्ञा हो जायेगी। लेकिन मैं यह जरूर कहता हूँ कि जीवनभर मैंने कोई अपराधपूर्ण नीयत नहीं रखी है। अवज्ञा आन्दोलनके सविनय स्वरूपका औचित्य सिद्ध करनेके लिए मैं हरिजनोंके कामको उससे अलग रख रहा हूँ। इसके विपरीत, यदि मैं राजनीतिक उद्देश्यके लिए हरिजन आन्दोलनका उपयोग करना चाहता तो मैं खुले रूपसे यह घोषित करनेमें संकोच नही करता कि 'बेशक, मैं सविनय प्रतिरोध आन्दोलनको चलानेके लिए हरिजनोंका उपयोग करने जा रहा हूँ।' नहीं; निश्चय ही नहीं। इसके विपरीत, वे हरिजन जो मेरे साथ रह रहे हैं और जो खुद यह कहते हैं कि उन्हें जो-कुछ भी प्राप्त है वह मेरे साथ उनके सम्बन्धोंके कारण ही उन्हें प्राप्त है, उन्होंने मुझसे अनुरोध किया कि जब मैं आश्रमको समाप्त ही कर रहा हूँ तो उन्हें आन्दोलनमें शरीक होनेकी अनुमति दे दूँ। उन्होंने मुझसे कहा: "आप हमें अलग क्यों रख रहे है? क्या हमारी राष्ट्रभक्ति किसीसे कम है और क्या हममें औरोंकी अपेक्षा सत्याग्रह करनेकी क्षमता कम है?" मैंने उन्हें चेतावनी दी कि "तुम ऐसा करनेका साहस मत करना क्योंकि हरिजनोंके प्रतिनिधियोंकी हैसियतसे ऐसा करके तुम गलती करोगे।"

हरिजन सेवक संघ आज ऐसे लोगोके नियन्त्रणाधीन है जो सविनय अवज्ञा करनेकी स्थितिमें नही है। सर्वश्री अमृतलाल ठक्कर और श्री घनश्यामदास बिड़ला, वहाँकी प्रेरक शक्ति है। यही नही; ऐसे सभी काग्रेसजनोको जिनके मनमे सविनय अवज्ञा करनेकी इच्छा है और जो सविनय अवज्ञा करना चाहते थे, उनको भी संघके केन्द्रीय बोर्ड, प्रान्तीय बोर्ड अथवा उसकी किसी शाखामे कोई पद-ग्रहण करनेकी मनाही है।

सघकी गतिविधियो और सरकारके साथ उसके सम्बन्धोके बारेमे सवाल अभी भी बच रहता है। यहाँ भी मै कहूँगा, "बोर्डके ऊपर यह भार मत रखिए।" यदि आप ऐसा करेगे तो बोर्डका सार्वत्रिक प्रभाव खत्म हो जायेगा। मै चाहता हूँ कि बोर्डका सार्वत्रिक प्रभाव हो और यह प्रभाव कारगारी ढँगसे सभी जगह अनुभव किया जाये। जिन विषयोकी आपने चर्चा की है, उन विषयोके बारेमें बोर्ड सरकारके काममे कभी दखल नही देगा। सरकार ऐसे तरीके भी अपना सकती है जो नुकसानदेह हो। तब उनका विरोध करना आपका काम होगा। हम यह विरोध नही करेगे। यहाँ भी मैं उस बातका समर्थन करता हूँ जो आपने [श्री श्रीनिवासनने] अपने पत्रमे कही है।

राजनीतिके मामलेमे भी आप कहते हैं कि आपको अपने ढँगसे चलने और विकसित होने दिया जाये। मै इसकी स्वीकृति देता हूँ। बोर्ड इस मामलेमें कोई दखल नही देगा। अत: जब हरिजनोके हितकी दृष्टिसे सरकारकी नीति आपत्ति-जनक हो, या लगे तो यह निश्चय भी आपको और केवल आपको ही करना होगा कि सवैधानिक और वैध तरीकोसे ही सही, उसका विरोध आप करें या न करें। लेकिन जहाँ तक बोर्डका सवाल है, मै कहूँगा, "हमने मर्यादा-रेखा खीच दी है, और हमारी वही स्थिति रहेगी।" यदि हम उस स्थितिपर कायम रहे तो मैं जानता हूँ कि बोर्डको सरकार भी आदरकी दृष्टिसे देखेगी। इस प्रकार शुरूसे आखिर तक बोर्ड ईमानदारीकी नीति ही अपनायेगा — इसमें कोई छल नही होगा।

अब शिक्षाको ले।[1] इस विषयमे केन्द्रीय बोर्ड आपके सामने अपने कार्योका बहुत ही अच्छा रिकार्ड प्रस्तुत कर सकता है। हर जगह उदारतापूर्वक छात्रवृत्तियाँ दी जा रही है। कितने ही सौ हरिजन आज छात्रवृत्तियाँ पा रहे हैं जो कि वे सर-कारसे या अन्य किसी सस्थासे नही पा सकते। हम एक भी व्यक्तिसे कभी यह नही कहते: "सरकारके पास मत जाओ।" यह नीति बोर्डके ऊपर लागू नही की जा सकती। हम उन्हे सरकारी विभागोसे सहायता प्राप्त करनेके लिए प्रोत्साहित करते है। जिन मामलोमें यह सहायता पर्याप्त नही होती, उनमे बोर्ड भी कुछ सहायता कर देता है। ऐसा हमने बहुत सारे मामलोंमें किया है। शिक्षाके मामलेमें यह है हमारी नीति।

१. शिष्टमंडलके सदस्योंने शिकायत की थी कि जहाँ सवर्ण हिन्दुओंकी प्रधानता है, ऐसे स्कूलोंमें हरिजन बच्चोंको भर्ती करनेकी नीति सफलतापूर्वक नहीं चल रही थी और दलित वर्गोंकी शैक्षणिक प्रगतिके वह अनुकूल नहीं थी। उन्होंने गांधीजीसे छात्रवृत्तियाँ, और छात्रवासोंकी स्थापनाके लिए धन एकत्र करनेमें सहायता देनेका अनुरोध किया था।

फिर, आह! आप कहते हैं कि देश-प्रत्यावर्तन दक्षिण आफ्रिकामें मेरे कार्योंका परिणाम है।[1] यह तो बड़ा निर्मम आक्षेप है। (हँसी)। मैं कहता हूँ कि इतिहास इससे भिन्न निर्णय देगा।

१८९३ में जब मैंने दक्षिण आफ्रिकाकी धरती पर पैर रखा था उस समय देश-प्रत्यावर्तनकी सूरत पैदा हो ही रही थी। क्या आप जानते हैं कि नेटाल विधानसभामे एक विधेयक वास्तवमें पास किया गया था जिसके अनुसार प्रत्येक ऐसे भारतीयसे जो गिरमिट खतम होनेके बाद नेटालमे बसना चाहता हो, अपेक्षा की जाती थी— क्या करनेकी अपेक्षा की जाती थी?

श्री आर० श्रीनिवासन: कि वह व्यक्ति-कर अदा करे।

गांधीजी: कितना?

श्री श्रीनिवासन: प्रति व्यक्ति १ पौंड।

नहीं, नहीं, नहीं। उन्होंने २५ पौंडका प्रस्ताव किया था। मैंने इसका विरोध किया। मूलत: विचार यह था कि गिरमिट खत्म होनेके बाद वे [भारतीय गिरमिटिया] वापस देश चले जायें। इसके मतलब यह कि उनकी गिरमिटकी अवधि भारतमें खत्म हो। मैंने नेटाल संसदमें पेटीशन भिजवाये। यह मैंने वहाँके व्यापारी समाजके जरिये कराया क्योंकि उस समय व्यक्तिश: प्रत्येक भारतीयसे अलग-अलग ऐसा करवा सकना सम्भव नही था। परिणामस्वरूप कानूनकी व्यवस्थाएँ बदल दी गईं; और यह बात लिखित रूपमें मौजूद है। अत: आप देखेंगे कि जब मैं दक्षिण आफ्रिका गया उस समय देश-प्रत्यावर्तन हो रहा था; और मेरे वहाँ जानेके बाद प्रत्यावर्तन असम्भव हो गया। इसके बाद आप अपना यह भय प्रकट करते हैं कि जिस प्रकार दक्षिण आफ्रिकामें हमारा आन्दोलन समाप्त हो गया था उसी प्रकार यह हरिजन आन्दोलन भी समाप्त हो जा सकता है। मैं चाहता हूँ कि इसका वैसा ही अन्त हो। (जोरसे हँसी) देश-प्रत्यावर्तन अब स्वैच्छिक है और जिन लोगोको देश वापस भेजा जाता है उन्हें आर्थिक मुआवजा दिया जाता है। १८९३ मे देश-प्रत्यावर्तन अस्वैच्छिक और बाध्यकारी था और इसके लिए कोई मुआवजा नही दिया जाता था। यदि मैंने यह अपराध किया है—(फिरसे हँसी)—तो मैं अपराध स्वीकार करता हूँ।

चर्चाके इस विषयका समापन करते हुए गांधीजीने कहा कि देश-प्रत्यावर्तनकी योजना विफल सिद्ध हुई है। यह विफल हुई है, इसकी जानकारी मुझे यों है कि मेरा उन लोगोंके साथ पत्र-व्यवहार होता रहता है जो दक्षिण आफ्रिकाके बारेमें प्रत्यक्ष जानकारीके आधारपर कुछ कह सकते हैं। वहाँके भारतीयोंका मार्गदर्शन मैं जिस हद तक कर सकता हूँ, कर रहा हूँ। मैं उन्हें बराबर चेतावनी देता रहता हूँ कि वे वापस भारत न लौटें क्योंकि यहाँ उनकी स्थिति अछूतोंके भी बीच अछूतों

१. शिष्टमंडलके सदस्योंने कहा था कि दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके कार्योंके फलस्वरूप जो भारतीय दक्षिण आफ्रिकासे भारत आये थे उन्हें रोजगारके अभावमें बड़ी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है।

जैसी होगी। ऐसी परिस्थितियोमें जहाँ तक दक्षिण आफ्रिकाकी बात है, मुझे किसी बातके लिए पछतानेकी जरूरत नहीं है।

अब मैं मन्दिर-प्रवेशके सवाल पर आता हूँ। मै वेहिचक कहूँगा कि मुझे आपकी बात स्वीकार है।[1] यदि आप कहते हैं कि आप इसे बिल्कुल चाहते ही नही, तो इससे मै सहमत हूँ। लेकिन यह तो सवर्ण हिन्दुओका कर्त्तव्य है कि कहे, "हमारे मन्दिरोमे आइए, वे हमारी ही तरह आपके लिए भी खुले हुए हैं। यह बिलकुल आपकी मर्जीकी बात है कि आप प्रवेश करें या न करे। मन्दिर-प्रवेशके इस आन्दोलन-में भाग लेनेके लिए मैं हरिजनोको निमन्त्रित नही करता। लेकिन अगर आप चाहे तो यह बता सकते है कि यह [अर्थात् मन्दिर-प्रवेश] भी आपका अधिकार है, भले ही आप उस अधिकारका उपयोग न करें। या आप इससे भिन्न रवैया अपना सकते है। यह बात सर्वथा आपके विचार करनेकी है। लेकिन जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, यह तो केवल एक तरफा चीज है। यह सवर्ण हिन्दुओके लिए पश्चात्ताप करने और हृदय परिवर्तन करनेकी बात है। जिन स्थानोको आप अपना शरण-स्थान मानते हैं उनमे आनेका आपको हक है। आपको उतना ही हक है जितना किसी सवर्ण हिन्दूको है। इस अधिकारको मान्यता मिल जानेके बाद उसका उपयोग करना या न करना आपके हाथमे है।

मद्यपानकी बुराईके विषयमें गांधीजीने कहा कि दलित वर्गोको सलाह देनेमें मैं सदा सतर्क और सावधान रहता हूँ।[2] मैं जानता हूँ कि यह बुराई अन्य जातियोंमें भी व्याप्त है। बात इतनी ही है कि हरिजनोंको ऊपर उठनेके लिए संघर्ष करनेकी जरूरत है, और वे मद्यपान जैसी चीज नहीं कर सकते। उन्हें तो सीजरकी पत्नीकी भाँति दूसरोकी दृष्टिमें सन्देहसे परे होना है।

सवर्ण हिन्दू भले ही लाल शरावके तालाबोमे लोट-पोट लगायें। लेकिन आपको उससे दूर भागना चाहिए। तथापि मैं आपकी भावनाओको चोट नही पहुँचाना चाहता। भद्र जन होनेके नाते आप इसका बुरा मान सकते है, लेकिन साधारण हरिजन जनता इसका बुरा नही मानती। आखिरकार आप जानते है कि मै हरिजनोको इस बुराईसे छुड़ानेके लिए सालहा-सालसे उनके बीच काम करता रहा हूँ। इसलिए मेरे विचारसे आपको मेरी आजादीपर प्रतिबन्ध लगानेकी कोशिश नही करनी चाहिए। आप मुझे सावधान कर सकते है; और मैं उसे स्वीकार करता हूँ — मैं ऐसी भाषाका प्रयोग करूँगा जिससे किसी व्यक्तिको ठेस न पहुँचे, और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं किसीको चोट पहुँचानेके खयालसे एक भी शब्द नही कहूँगा।

१. शिष्टमंडलके सदस्योंने कहा था कि वे मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध नहीं है, किन्तु उनके लिए इस आन्दोलनमें सक्रिय भाग लेना वाञ्छनीय नहीं है।

२. शिष्टमंडलके सदस्योने शिकायत की थी कि अनेक जातियोंमें लोग शराब पीते हैं और अन्य बुराइयोंसे ग्रस्त हैं; लेकिन केवल दलित वर्गों पर ही इन आदतोंके लाछन लगाना अनुचित और अन्याय-पूर्ण है।

अन्तमें मैं हरिजन नामको लेता हूँ। आप कहते है कि इसको चुननेमे दलित वर्गोंकी राय नही ली गई। मुद्दा तो यह है कि उन्होंने मुझसे राय ली थी। (हँसी।) मै भारतके सब स्थानोंमें गया हूँ। मुझसे पूछा जाता है, "हमें हरिजन क्यो कहा जाता है?" वे कहते है कि उनका कोई और अच्छा नाम क्यो नही होना चाहिए। सामान्य रूपसे यही भावना होती है। वे कहते थे, "ईश्वरके लिए हमें कुली मत कहिए।" किसी समय इस शब्दका एक विशेष महत्व था। एक पूरी-की-पूरी जाति इसी नामसे पुकारी जाती थी। यदि इस शब्दका प्रयोग अब नही किया जाता तो इसका यह अर्थ नहीं कि कोई हृदय-परिवर्तन हो गया है। कानोंको खटकनेवाला शब्द हटा दिया गया है। नये नाम ने भी यही किया है। जैसा कि मैंने कहा, यह मेरा गढ़ा हुआ शब्द नही है। एक अस्पृश्यने मुझसे कहा कि वह नही चाहता कि किसी ऐसे नामसे उसे जाना जाये जो चिर-निन्दाका द्योतक हो। उसने बिलकुल ठीक ही कहा कि 'दलित' शब्द उसे गुलामीकी याद दिलाता है। मैंने कहा, मेरे पास कोई नाम सुझानेको नही है। क्या तुम सुझाओगे?" तब उस व्यक्तिने 'हरिजन' शब्द सुझाया। अपने समर्थनमें उसने गुजराती कवि नरसी मेहताको उद्धृत किया जिन्होंने कि अपनी कविताओमे इस शब्दका प्रयोग किया है। मै इस सुझावपर उछल पडा। मुझे तमिलकी कहावत 'दिक्कात्रवरुक्कु दीवमे तुने' भी मालूम थी। क्या 'हरिजन' शब्द उसका भावानुवाद नही है? जो लोग अछूत है वे हरिके प्यारे होते है। दलित वर्गोंके मामलेमें 'हरिजन' इसी भावका द्योतक है।

अपने पत्रके अन्तिम अनुच्छेदमें आपने मुझे जो प्रमाणपत्र दिया है वह जरा जल्दी दिया गया है।[1] उठाये गये मुद्दोके बारेमे मुझे जो कुछ कहना था उसे आप सबने सुना। हम सब उसी उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए मिलजुलकर काम करेंगे। मुझे विश्वास है कि ईश्वर हमारे साथ है; और इसलिए सफलता सुनिश्चित है। इसमें मुझे कोई शंका नही है। मै जानता हूँ कि अस्पृश्यता मृतप्राय है। मेरी दृष्टिमें यह अस्पृश्यता-राक्षसी अभी भी साँस ले रही है; लेकिन यह उसकी अन्तिम साँसे है। (जोरसे करतल-ध्वनि।)

श्री श्रीनिवासन: मैं ऐसी ही आशा करता हूँ।

हाँ; हम ईमानदारीसे ऐसी आशा कर सकते है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-१२-१९३३

१. शिष्टमंडलके सदस्योंने गांधीजीको दलित वर्गोंके उद्धारके लिए यह अपूर्व आन्दोलन आरम्भ करनेके लिए धन्यवाद दिया था और कहा था कि इस आन्दोलनने सवर्ण हिन्दुओंको अस्पृश्यता-उन्मूलनके लिए जबर्दस्त प्रोत्साहन दिया है। उन्होंने यह कामना व्यक्त की थी कि गांधीजीका अनुष्ठान सफलतापूर्वक सम्पन्न होगा।

४०३. भेंट : 'मद्रास मेल' के प्रतिनिधिको

मद्रास
२२ दिसम्बर, १९३३

गांधीजीने इस आशयका एक वक्तव्य[1] दिया था कि मैंने पंडित जवाहरलालको इस बातका मुख्तारनामा दे दिया है कि वह मेरी तरफसे कांग्रेस पार्टीके नेताके रूपमें काम करें। इस वक्तव्यके बारेमें प्रश्न किये जानेपर गांधीजीने कहा कि मैंने पंडित जवाहरलालका जवाब देखा है और उसमें निहित इस अर्थको भी समझा है कि यह वक्तव्य देते समय मैं मजाक कर रहा था।

यह बात पूरी तरह सही नही है। मेरे वक्तव्यकी एक गम्भीर पृष्ठभूमि है। फिलहाल राजनीतिका त्याग कर देनेके बाद और अपनी शक्तिको हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यता का निवारण करनेमे लगानेका निश्चय करनेके बाद मै कांग्रेस पार्टीका संचालन नही कर सकता। यदि कोई व्यक्तिश. किसी समस्याके बारेमे निजी तौरपर मुझसे अपनी राय देनेको कहे, तो मै अपनी निजी राय दे सकता हूँ, लेकिन मैं नीतियोकी व्याख्या करने या उनपर चर्चा करनेकी स्थितिमे नही हूँ। यह पडित जवाहरलालका काम है। और उनके पूर्ण विवेकाधिकारमे दखल देनेकी मेरी कोई इच्छा नही है। इसलिए मैंने मुख्तारनामेकी बात कही है।

यह बात सभी जानते हैं कि पंडित जवाहरलालका साम्यवादकी ओर झुकाव हैं। क्या इसका अर्थ यह नहीं है कि उनके नेतृत्वमें कांग्रेसकी नीतिको साम्यवादी रंग दिया जायेगा?

नही, मै ऐसा नही मानता। जवाहरलाल बहुत ईमानदार व्यक्ति हैं और वह ऐसा नही कर सकते। मै नही मानता कि वह अपने सहयोगियोको पर्याप्त पूर्वसूचना दिये कांग्रेसकी बुनियादी नीतिसे हटेंगे। मै नही समझता कि जवाहरलालके अपने विचार इतने स्पष्ट बन चुके हैं कि उनके द्वारा कांग्रेसकी नीतिमे कोई बुनियादी परिवर्तन किये जानेकी सम्भावना हो। समाजवादमें उनकी दृढ़ आस्था है, लेकिन समाजवादी सिद्धान्तको भारतीय दशाओमे किस प्रकार लागू किया जा सकता है, इसके बारेमें उनके विचार अभी भी अनिश्चयकी अवस्थामे हैं। इसलिए उनके साम्यवादी विचारोसे किसीको भयभीत होनेकी जरूरत नही है।

१. हिन्दुस्तान टाइम्स, १५-१२-१९३३ में प्रकाशित रिपोर्टके अनुसार दिल्लीमें १४ दिसम्बरको कार्यकर्त्ताओंके साथ अपनी चर्चाका समापन करते हुए गांधीजीने उपस्थित जनोंसे कहा कि मैंने पंडित जवाहरलाल नेहरूको मुख्तारी सौंप दी है और कांग्रेस तथा अन्य बातोंके विषयमें प्रत्येक मसले पर आप लोग पंडित जवाहरलालसे विचार-विमर्श किया करें।

जब गांधीजीका ध्यान इस ओर दिलाया गया कि साधारण जनसमूहसे यह आशा नहीं की जा सकती कि वह आदर्शोंकी चर्चा और अमुक मार्ग अपनानेके लिए स्पष्ट प्रोत्साहनके बीचका सूक्ष्म अन्तर समझ सके, तब उन्होंने स्वीकार किया कि इस बातका खतरा बराबर है कि जनताकी भीड़ किसी वक्ताके उद्देश्यको समझनेमें गलती कर बैठे, लेकिन उन्होंने कहा कि जवाहरलालका इरादा जनताको उकसाने या भड़कानेका नहीं है।

इसके बाद बात चली कि साम्यवादी लोग बड़ी-बड़ी सम्पदाओंका जो विरोध करते हैं, उससे जवाहरलाल भी स्पष्टतः सहमत हैं।

मेरी रायमें भूमिको टुकड़े-टुकड़े करके उसका बँटवारा नहीं किया जाना चाहिए। यदि बड़े-बड़े पुश्तैनी जमींदारोंका प्रभाव पूरी तरह नष्ट कर दिया जायेगा तो यह बहुत हानिकारक सिद्ध होगा। लेकिन यह मैं जरूर मानता हूँ कि वास्तविक काश्तकारका जमीनपर हक होना चाहिए और पैदावारमें अपेक्षाकृत अधिक हिस्सा उसे मिलना चाहिए। इस समय बहुत-सी जगह उसे बहुत कम हिस्सा मिलता है। उसे न्यायोचित हिस्सा मिलना चाहिए, सिर्फ गुजारे लायक हिस्सा नहीं।

देशके विभिन्न भागोंमें भूमि-आन्दोलनोंकी चर्चा करते हुए गांधीजीने कहा:

सरकार कुछ भी करे, लेकिन यह जबर्दस्त जागृति अब समाप्त होनेवाली नहीं है। यह स्थायी है। मैं जिस चीजसे सबसे ज्यादा प्रभावित हुआ हूँ वह यह है कि इस आन्दोलनके सिलसिलेमें इतनी कम हिंसा हुई है, और इसमें अनजानेमें अहिंसाकी प्रभावकारिता ही व्यक्त हुई है।

यह पूछे जानेपर कि क्या आपने इस बातका विचार किया है कि हालके भूमि-सम्बन्धी कानूनके फलस्वरूप जमींदारों और काश्तकारोंके बीच साहूकार और दलाल लोगोंके रूपमें बिचौलियोंके पैदा हो जानेका खतरा है, श्री गांधीने कहा:

यदि जमीन बिचौलियोंके हाथ चली गई तो यह बड़े दुःखकी बात होगी। हमें वास्तविक काश्तकारके हितोंकी रक्षा करनी चाहिए; काश्तकारसे मेरा मतलब उससे है जो खुद जमीन जोतता है। वह भले ही अपनी मददके लिए बहुत से मजदूरोंको नौकर रखता हो, लेकिन यदि वह स्वयं भी अपनी जमीनपर काम करता है तो वह काश्तकारकी मेरी परिभाषापर पूरा उतरता है।

बातचीत अब हरिजन आन्दोलनकी ओर मुड़ गई है। श्री गांधीजीने अपना पहलेका यह कथन दोहराया कि यह आन्दोलन राजनीतिक आन्दोलन नहीं है।

मेरा हरिजन-कार्य बिलकुल धार्मिक कार्य है। इसके पीछे कोई राजनीतिक उद्देश्य नहीं है और यह मूलतः एक लोकोपकारी कार्य है। यह किसी भी अर्थमें राजनीतिक कार्य नहीं है।

लेकिन अब इस बातसे इनकार नहीं कर सकते कि हरिजन-आन्दोलनके राजनीतिक परिणाम भी अवश्य होंगे।

यह सच है। मैं यह अवश्य कहता हूँ कि हालाँकि ऐसे राजनीतिक परिणाम इस आन्दोलनके उप-फल होंगे, लेकिन वे परिणाम इस आन्दोलनके उद्देश्य नही है। किसी भी धार्मिक आन्दोलनका जीवनके अन्य क्षेत्रोपर प्रभाव अवश्य पड़ेगा, क्योकि व्यापक अर्थमें धर्म जीवनके सभी विभागोका संचालन करता है।

श्री गांधीने स्वीकार किया कि इस आन्दोलनका राजनीतिक लाभ उठाया जा सकता है। उन्होंने कहा कि सर एन० एन० सरकार द्वारा हाल में किये गये इस दावेकी मुझे जानकारी है कि इस आन्दोलनका उद्देश्य अन्य अल्पसंख्यक जातियोंके मुकाबले हिन्दू-समाजको संगठित करना है, लेकिन मैं जोरदार शब्दोंमें इस बातसे इनकार करता हूँ कि मेरा ऐसा कोई उद्देश्य है। वस्तुतः मैं इस मामलेमें हिन्दू महासभासे असहमत हूँ।

हिन्दू महासभाकी गतिविधियाँ मूलत. साम्प्रदायिकतापूर्ण है और उनका उद्देश्य अन्य जातियोके मुकाबले हिन्दुओके हितोको आगे बढाना है। हरिजन आन्दोलनमे साम्प्रदायिकताकी कोई भावना नही है। इसका उद्देश्य हिन्दू-धर्ममें आन्तरिक सुधार करना है और ऊँच-नीचके कृत्रिम भेदोको दूर करना है। सवर्ण हिन्दुओको धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक मामलोमे जो अधिकार प्राप्त है वे ही अधिकार हरिजनो को दिलानेके लिए मै लड रहा हूँ। मेरा उद्देश्य कोई हिन्दू मतदाताओकी संख्या बढानेका नही है। एक आदमीके लिए जिस हद तक सम्भव है, उस हद तक मै इस आन्दोलनको राजनीतिसे मुक्त रखनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

संवाददाताने इस बातकी चर्चा की कि मुसलमान, ईसाई आदि अल्पसंख्यक जातियोके बहुतसे सदस्य ऐसा मानते है कि श्री गांधीका उद्देश्य भले ही कुछ और हो, लेकिन इस आन्दोलनका राजनीतिक प्रभाव, तथा अन्य लोगोंका इसके पीछे राज-नीतिक उद्देश्य सभी अल्पसंख्यक जातियोंके ऊपर संख्याबलके आधारपर एक संगठित हिन्दू बहुमतकी प्रधानता स्थापित करना है। इसपर गांधीजीने इस आन्दोलनको राजनीतिसे सर्वथा मुक्त रखनेके अपने निश्चयको दोहराया और कहा :

मै ईसाइयो, मुसलमानो तथा अन्य जातियोको एक अविभाज्य राष्ट्रके रूपमें सगठित करना चाहता हूँ जिनके हित समान हो। तब अल्पसंख्यक जातियाँ अपनेको अल्पसख्यक अनुभव नही करेगी। अस्पृश्यता समाप्त हो जानेपर वह बाधा दूर हो जायेगी जिसके कारण हिन्दू तथा अल्पसंख्यक जातियोमे निकट सम्बन्ध नही स्थापित हो पाते, और इस बाधाके हटते ही उद्देश्य और हितोकी एक नई एकता उत्पन्न होगी। हरिजन आन्दोलन किसी भी दृष्टिसे अकेले हरिजनोसे सम्बन्धित आन्दोलन ही नही है। इसका उद्देश्य प्रत्येक प्रकारकी अस्पृश्यताको समाप्त करना है।

श्री गांधीका ध्यान जब डॉ० मुंजेके हालके इस कथनकी ओर दिलाया गया कि हिन्दू धर्ममें मुसलमान, ईसाई, पारसी आदि सभी लोग आ जाते है, तो उन्होंने कहा :

डॉ० मुजेका उद्देश्य मेरे उद्देश्य से बहुत भिन्न है। वह और उनके समर्थक विधान-सभामे सीटोकी संख्याके ऊपर तकरार कर रहे है। उनका आन्दोलन केवल राजनीतिक है, मेरा गैर-राजनीतिक है।

यह पूछे जानेपर कि आपके कुछ प्रमुख अनुयायी मन्दिर-प्रवेशके मामलेमें जो धमकाने-डरानेकी नीति अपना रहे हैं, क्या आप उसका समर्थन करते हैं, श्री गांधीने जोर देकर कहा :

यदि कोई व्यक्ति हरिजन आन्दोलनमें बल-प्रयोग करता है तो वह मेरी इच्छाके विरुद्ध कार्य करता है। मैं आन्दोलनको नीचे स्तरपर गिरनेसे रोकनेकी कोशिश करता हूँ, लेकिन किसी भी आन्दोलनमें कुछ कठिन लोग होते हैं। जहाँतक मेरा सवाल है, जबतक सन्तुष्ट न हो जाऊँ कि अमुक मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोलनेके लिए सामान्य तौरपर लोग राजी हैं तबतक मैं उसे नहीं खोलता। अभी हाल ही में मैंने एक मन्दिरको खोलनेसे इनकार कर दिया क्योंकि न्यासियोंमें इस सवालपर तीव्र मतभेद जान पड़ता था। मैं केवल उन्हीं मन्दिरोंको खोलनेपर सहमति दूँगा जिसमें वास्तवमें पूजाके लिए जानेवाले दर्शनार्थियों और उस मन्दिरके न्यासियोंका बहुत बड़ा बहुमत हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें हो।

विधान-सभाके सामने इस समय जो विधेयक पेश हैं, उनके बारेमें गांधीजीकी राय पूछे जानेपर उन्होंने कहा कि इन विधेयकोंका उद्देश्य मन्दिरोंके न्यासियों और मन्दिरमें जानेवाली जनताको इस बातकी स्वतन्त्रता प्रदान करना है कि वे यदि चाहें तो मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए खोल सकें। अभी तो अदालती निर्णयोंके कारण उनके हाथ बँधे हुए हैं।

हिन्दू-धर्मको अगर हमने इन बन्धनोंसे मुक्त नहीं किया तो उसमें सड़ांध आ जायेगी और वह नष्ट हो जायेगा।

अगर हम हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यताका समूल नाश नहीं कर सके तो हिन्दू-धर्म खत्म हो जायेगा, वह इसी योग्य होगा कि नष्ट हो जाये, और उसके खत्म होनेका मुझको कोई दुख नहीं होगा। अस्पृश्यताको खत्म होना ही चाहिए। यूरोपीयोंसे मुझे यह बात कहनी है : "शासक वर्गके सदस्योंकी हैसियतसे नहीं बल्कि स्वतन्त्र नागरिकोंके रूपमें आइए और हमारे साथ काम कीजिए।"

श्री गांधीने कहा कि मद्रासने मेरा जिस उत्साहसे स्वागत किया है, बुधवारकी शामको ट्रिप्लीकेन बीच पर जितनी बड़ी संख्यामें लोग इकट्ठे हुए थे, उसे देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया।

मुझे मंच तक पहुँचनेमें ३० मिनट लगे और मंचसे वापस कारतक लौटनेमें ४५ मिनट लगे। वहाँ लगभग एक लाख लोग थे और यह देखकर खुशी होती थी कि हरिजन और सवर्ण लोग किस प्रकार वहाँ आपसमें मिल गये थे। यह चीज कुछ साल पहले नहीं हो सकती थी। अस्पृश्यता जा रही है।[1]

[अंग्रेजीसे]

मद्रास मेल, २२-१२-१९३३

१. इस रिपोर्टकी एक कतरन जवाहरलाल नेहरूको भेजे गये २६-१२-१९३३ के पत्रके साथ संलग्न की गई थी।

४०४. भेंट : "हिन्दू" के प्रतिनिधिसे[1]

मद्रास
२२ दिसम्बर, १९३३

हमेशाकी तरह मैं जहाँ भी गया हूँ मुझे लोगोसे प्रगाढ प्रेमके सिवा कुछ नही मिला है। लेकिन मै स्वीकार करता हूँ कि ट्रिप्लीकेन बीच पर जनताने उत्साहका जो प्रदर्शन किया और अनेक श्रमिक क्षेत्रोंमें जानेपर वहाँ जैसा उत्साह मैंने देखा उसके लिए मैं तैयार नही था। इन अवसरोपर जितनी बडी सख्यामे लोग इकट्ठे हुए उतनी बडी तादादमें इससे पहले कभी नही हुए थे।

यह सही है कि इन जोरदार प्रदर्शनोके लिए काफी हद तक लोगोका मेरे प्रति प्रेम और उनका मुझसे लगाव ही जिम्मेवार था, लेकिन मुझे पूरा विश्वास है कि मुझसे लिपटा हुआ दिखनेवाला विशाल जन-समूह पूरी तरह समझता था कि मैं किस चीजके लिए खड़ा हूँ और किस लिए आया हूँ, और उसकी कद्र करता था। यदि अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनके प्रति उनकी धार्मिक भावनाने विद्रोह किया होता, तो उनका प्रेम मैंने पूरी तरह खोया भले न होता, तो भी उनका उत्साह-प्रदर्शन उतना उन्मुक्त और निर्बाध न होता और उनका रुख मेरी तरफ बिलकुल ठंडा न भी होता तो भी उन्होने प्रेम-प्रदर्शनमें संयम तो जरूर बरता होता। भीडकी सामान्य चेष्टाओ और आँखोके भावको एक ही निगाहमें देखकर उसके मनको पढ सकनेका मैं अभ्यस्त हूँ। अस्पृश्यताके सिलसिलेमें मैं जो-कुछ कर रहा हूँ उसकी अस्वीकृतिका लवलेशमात्र भी मै इन लोगोके मुखपर नही देख पाया। जब मैंने लोगोसे चन्दे देनेको कहा तो जिस प्रकार वे आगे आये वह भी महत्वपूर्ण था और मैंने अपनी जो धारणा आपको बताई है, वह उससे पुष्ट ही हुई। इसलिए मेरे मनमे भविष्यके प्रति आशा भरी हुई है।

मुझे लगता है कि दक्षिणमे भी अस्पृश्यताकी जडे हिल गई है। मैं अपने सनातनी मित्रोसे कहना चाहूँगा कि उनकी भावनाओको चोट पहुँचानेकी मेरी तनिक भी इच्छा नही है। मै चाहता हूँ कि मैं उनके साथ अमुक मुद्दोपर सहमत हो सकूँ और मै जानता हूँ कि ऐसे बहुत सारे मुद्दे है। जिन बातोपर हमारे मतभेद हैं, वे बहुत थोडी-सी है। यदि उनके प्रति मेरे रुखसे तात्कालिक समझौता न भी हो सके तो भी मै जानता हूँ कि यदि मैं धीरज रखूँ तो समय यह समझौता करा देगा; और मै मानता हूँ कि धीरज मुझमें है।

एक शब्द मैं पुलिसके व्यवहारके बारेमे कहना चाहूँगा। आजका दिन उनके लिए सचमुच बहुत ही कठिन दिन था क्योकि मुझे जॉर्ज टाउनके व्यापारिक इलाकोसे

१. यह भेंट गांधीजीने मद्रासमे रवाना होनेकी पूर्व-संध्याको दी थी।

गुजरना था। मुझे यह कह सकनेकी खुशी है कि पुलिस का व्यवहार मैत्रीपूर्ण और सहायतापूर्ण था। पुलिसवाले एक तरहसे जनताका ही एक हिस्सा बन गये थे और बड़े ही अच्छे ढंगसे उसे सम्भाल रहे थे। इस मित्रता-प्रदर्शनके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-१२-१९३३

४०५. सन्देश: तमिल-प्रेमी सम्मेलनमें

२२ दिसम्बर, १९३३

मैं आशा करता हूँ तमिल भाषा प्रेमियोंका प्रेम चिरस्थायी होगा और प्रतिकूलसे प्रतिकूल स्थितियोंमें भी वह बना रहेगा। तमिल भाषाकी मुझे जो सतही जानकारी है, उसपरसे मैं यह जान सका हूँ कि वह कितनी सुन्दर और समृद्ध भाषा है। इसकी उपेक्षा करना मेरे विचारसे अपराध होगा।

मो० क० गांधी[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-१२-१९३३; सी० डब्ल्यू० ९६९९ से भी। सौजन्य: मद्रासलायब्रेरी एसोसिएशन

४०६. भाषण: गुंटूरमें[2]

२३ दिसम्बर, १९३३

भाइयो और बहनो,

गुंटूर मेरे लिए कोई नई जगह नहीं है। आपने जो मानपत्र और थैली मुझे दी है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। गुंटूरके वकीलोंने १४५ रुपयेका चन्दा दिया है। मैं स्वयं एक समय वकील था। मैं कहता हूँ कि मैं वकीलोंसे इतनी छोटी रकम स्वीकार नहीं कर सकता। वे इतने गरीब नहीं हैं। इसपरसे मैं समझता हूँ कि गुंटूरके वकीलोंने हरिजन-कार्यमें कोई दिलचस्पी नहीं ली है। १४५ रुपयेकी यह रकम अकेला एक वकील दे सकता है। मैं उनसे पूछता हूँ "आप क्या करने जा रहे हैं?" मैं गुंटूरके वकीलोंको जानता हूँ। इसीलिए मैं उनसे ऐसा कह रहा हूँ। पिछली

१. हस्ताक्षर तमिल लिपिमें है।

२. गांधीजीने अपना भाषण हिन्दीमें दिया था, और इसका तेलुगुमें अनुवाद श्री कौंडा वेंकटप्पैयाने किया था।

बार जब मैं यहाँ आया था तब उन्होंने मुझे थैली भर रुपये दिये थे। सब दिन एक समान नही होते। उस समय रुपयेकी बहुतायत थी, अब उसकी कुछ तंगी है।

मैंने अभी-अभी तिलकपेटमें श्री पुन्नारावका गुरुनाथेश्वर मन्दिर देखा है। मन्दिर मे प्रतिष्ठित देवताका जो नाम रखा गया है उसके कारण मन्दिर अलोकप्रिय हो गया है क्योंकि देवताका नाम श्री पुन्नारावके चाचाके नामपर रखा गया है। सच देखा जाये तो 'गुरुनाथेश्वर' नाममे कुछ गलत नही है, हालांकि 'गुरुनाथ' नाम गलत हो सकता है। मेरी रायमे किसी मनुष्यकी स्मृतिको चिरस्थायी बनानेके लिए ईश्वरका कोई नाम नही रखना चाहिए। यह उचित नही है कि दानके साथ दान-कर्त्ताका नाम जोड़ा जाये। यह मेरी निजी राय है। ईश्वरके नामसे वास्तवमे कोई फर्क नही पड़ना चाहिए। स्वर्गीय श्री गुरुनाथम्के भाईके पुत्र श्री पुन्नारावने मुझे बताया कि उन्हे देवताका नाम बदलनेमे कोई आपत्ति नही है। अब आगेसे देवताको "गौरी विश्वेश्वर" कहा जायेगा। जिस कागजपर नया नाम लिखा गया है उसपर मैंने हस्ताक्षर कर दिये हैं।

श्री पुन्नाराव मन्दिरको हरिजनोके लिए खोलना चाहते हैं। लेकिन मैंने उन्हें अभी ऐसा न करनेको कहा है; कारण, इसमें जो अनोखी परिस्थिति है उसमे मन्दिर-प्रवेश और नाम-परिवर्तन, ये दोनो चीजे एक ही समय और एक साथ करना वांछनीय नही है। किसी भी मन्दिरको हरिजनोके लिए खोलनेके मै विरुद्ध नही हूँ। लेकिन मै बाध्य किये जानेके विरुद्ध हूँ। जब भक्त और न्यासी लोग राजी हो तभी मन्दिरको हरिजनोके लिए खोलना चाहिए। अब चूंकि मन्दिरके देवताका नाम बदल दिया गया है, इसलिए न्यासी लोग और मै यह देखनेको उत्सुक हैं कि आपमेसे कितने लोग मन्दिरमे जाते हैं। आजसे तीन महीने बाद, अर्थात् आगामी २३ मार्चको यह मन्दिर हरिजनोके लिए खोल दिया जायेगा। जबतक लोकमत इसका समर्थन न करे तबतक मन्दिर नही खोला जा सकता। यदि लोकमत इसका समर्थन करेगा तो अगले २३ मार्चको मन्दिर खोल दिया जायेगा, और उस समय तक यह प्रश्न तय हो चुकेगा। मै आशा करता हूँ कि अब आगेसे आप इस मन्दिरमे जाने लगेंगे और आगामी २३ मार्चको उसमें हरिजनोका प्रवेश होते देखेंगे।

यदि सवर्ण लोग हरिजनोके साथ न्याय नही करते तो हिन्दू धर्म नष्ट हो जायेगा। कोई धर्म किन्ही बाहरी कारणोसे कभी नही नष्ट होता। उसे नष्ट करनेकी शक्ति किसीमें नही है। लेकिन यदि किसी धर्मके माननेवाले अधर्मके पथपर चलेंगे तो उनका धर्म नष्ट हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-१२-१९३३

४०७. भाषण : थल्लापलम्की हरिजन-सभामें

२३ दिसम्बर, १९३३

मुझे यहाँ आ सकनेकी बहुत खुशी है। लेकिन मैं यह भी आपसे कहूँगा कि मुझे बहुत परेशानी भी हुई है। यहाँतक की सड़कपर मोटर मेरे मन-मुताबिक गतिसे नहीं चल सकी। इसलिए ज्यादातर रास्ता मुझे पैदल चलना पड़ा। पैदल चलनेमें कोई परेशानी की बात नहीं है। लेकिन तथ्य यह है कि मेरे पास समय बिलकुल नहीं था, लेकिन फिर भी मुझे यहाँ आना पड़ा है। वादा कर चुकनेके बाद मुझे उस वादेको पूरा करना है।

डोरी काटकर मैंने हरिजन आयुर्वेदिक कुटीरम्का उद्घाटन सम्पन्न किया है। मुझे आशा है कि इस स्थानके इर्द-गिर्द रहनेवाले लोगोंकी बीमारियाँ ठीक करनेके लिए यह एक उपयुक्त संस्था बनेगी। हालाँकि इस समारोहके आयोजकोंकी कृपासे मानपत्र आपके सामने नहीं पढ़ा गया, लेकिन मैंने उसे पढ़ लिया है। मानपत्रमें आपकी वर्तमान गतिविधियोंका, और कुछ हद तक आपकी भावी आशाओंका विवरण दिया गया है। मेरी हार्दिक कामना है कि आपकी भावी आशाएँ पूर्ण हों, लेकिन एक कार्यकर्ताके रूपमें अपने ५० वर्षके अनुभवके आधारपर मैं सावधानीके कुछ शब्द कहना चाहता हूँ।

आपका कार्यक्रम बहुत ऊँचे उद्देश्योंको लेकर बनाया गया है और यदि आपके कार्यक्रमके प्रबन्धक या न्यासी सदा सतर्क, उद्यमशील, ईमानदार और सर्वथा निर्दोष चरित्रवाले लोग हैं तो सम्भव है कि आप इस कार्यक्रमको लागू कर सकें। किन्तु यदि सतर्कता, सावधानी, ईमानदारी और योग्यताका अभाव रहा तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आपके कार्यक्रमका एक मुद्दा भी पूरा नहीं होगा। जहाँतक मेरा सवाल है, मैं हरिजन-सेवक संघसे अपील करूँगा कि आप जितना कुछ काम करें उसीके बराबरकी सहायता वह भी आपको दे। मैं हरिजन सेवक संघकी ओरसे यह वादा कर सकता हूँ कि यदि आप कोई ऐसी व्यावहारिक योजना तैयार कर सकें और ऐसे चरित्रवान् व्यक्ति पैदा कर सकें जो हरिजन सेवक संघको सन्तुष्ट कर दें, और यदि आप समय-समय पर हिसाब-किताबका विवरण प्रस्तुत करें जिसकी जाँच हरिजन-सेवक संघ कर सके तो निश्चय ही हरिजन सेवक संघ आपको आर्थिक सहायता देगा। इसलिए यदि आपको हरिजन सेवक संघसे सहायता नहीं मिलती तो उसका दोष आपपर होगा, हरिजन सेवक संघ पर नहीं। लेकिन मैंने जो शर्तें सुझाई हैं, उन्हें यदि आप पूरी करेंगे तो आप हरिजन सेवक संघसे सहायता प्राप्त कर सकेंगे। हरिजन सेवक संघके पिछले इतिहास पर से मैं जहाँतक जान सका हूँ वह यह है कि हरिजन सेवक संघ अपने वादेसे कभी मुकरा नहीं है।

हरिजन सेवक सघके पास आपकी जरूरते पूरी करने भरको काफी धन है।

यहाँ उपस्थित लोगोसे अपील करूँगा कि आपके बीच जो भी संस्थाएँ खडी हों, आप उनका हर उचित ढँगसे उपयोग करे। मैं सुनना चाहता हूँ कि यहाँ और सब जगह हरिजन सस्थाओकी स्थापना हो रही है। हरिजन सेवक संघका उद्देश्य आपके कार्यका स्थान लेना नही है बल्कि आपके प्रयत्नोमे अपना योग प्रदान करनेका है। यदि हरिजन सेवक सघ हरिजनोकी उचित प्रकारसे सेवा कर सकें तो अपना औचित्य सिद्ध कर चुकेगा। इसलिए आप आसानीसे समझ सकते है कि हरिजन सेवक संघकी कीर्ति पूरी तरह आपके हाथोमे है और आपके समर्थनपर निर्भर करती है।

एक चीज मैं और कहना चाहूँगा और यह वही बात है जिसे मैं हर जगह दोहराता रहा हूँ। वह यह है। शुद्धीकरणके इस आन्दोलनमें हरिजनोको सम्मानजनक और मूल्यवान भूमिका अदा करनी होगी। मै फिर कहता हूँ कि यदि पहले ही से न कर रहे हो तो अब आगेसे आप सब लोग सफाई और स्वच्छताके नियमोंका पालन करे। इसका यह अर्थ नही है कि सभी सवर्ण हिन्दू स्वच्छता और सफाईके वातावरणमे रह रहे हैं। मै स्वेच्छासे अपनेको हरिजन मानता हूँ और इस नाते मैं आपसे कहता हूँ कि आप इन चीजोसे ऊपर उठे और अपनेको शुद्ध बनाये। इस बात पर ध्यान न दे कि सवर्ण हिन्दू क्या करते है या वे क्या है। इसी प्रकार यदि कोई हरिजन ऐसे हो जो मुर्दा पशुका मास और गोमास खाते हो तो मै उनसे कहूँगा कि वे इस आदतको छोड़ दे, और यदि उन्होने इन चीजोको कभी छुआ भी न हो तो मै उनसे कहूँगा कि वे स्वयसेवकोकी भाँति इन आदतोके विरुद्ध प्रचारका काम करे। इसके बाद शराबका अभिशाप आता है। यदि आप लोगोको या आपमेसे कुछ लोगोको शराबकी लत है तो आप इसे छोड दीजिए क्योकि शराब एक जहर है। बहुतसे सवर्ण हिन्दू भी शराब पीते हैं, इसी कारण आप भी उसे पियें, ऐसा नही होना चाहिए। आप सवर्ण हिन्दुओके साथ ऊपर तैरना चाहते है, उनके साथ डूबना तो नही चाहते; और आपकी भुजाओमे ताकत होगी और आप अच्छी तरह तैर सकते होगे तो सवर्ण हिन्दू भी ऊपर उठेगे; मै यह निश्चयपूर्वक जानता हूँ कि निकट भविष्यमे ही वह समय आ रहा है जब, आज सवर्ण हिन्दू जिस दलदलमे धँसते जा रहे है, उसमेसे उन्हे निकालनेमे हरिजन लोग सहायक हो सकेगे। इसलिए मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक हरिजन पूर्ण आत्म-विश्वासके साथ काम करे।

सवर्ण हिन्दुओसे मै एक शब्द कहना चाहता हूँ। यदि आप ऊँच-नीचके सारे भेद नही छोडेंगे, अपने दिलसे अस्पृश्यताको बिलकुल नही निकाल देगे तो आप और मैं और हिन्दू जाति नष्ट हो जायेगी। हजारो आदमी भले ही इससे भिन्न बात कहे, लेकिन मै चाहता हूँ कि आप मेरी बातका विश्वास करे। मै जो-कुछ कह रहा हूँ वह गहरे अनुभवपर आधारित है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २४-१२-१९३३

४०८. पी० एम० रावको प्रमाणपत्र

२३ दिसम्बर, १९३३

गुन्टूर जिलेके मेरे पूरे दिनके दौरेमे श्री पूवदा मृत्युंजय रावने मेरा बहुत ध्यान रखा।[1]

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९७५५) से। सौजन्य: १९६९-७०मे दिल्लीमे हुई गांधी दर्शन प्रदर्शनीका आन्ध्र पैविलियन

४०९. भाषण: पेड्डापुरममें

२४ दिसम्बर, १९३३

दोस्तो,

मुझे सभास्थल पर पहुँचनेके लिए सीधा रास्ता मिले, इसके लिए आपने जो अत्यन्त सहारनीय प्रबन्ध किए, उसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। आप समझ सकते हैं कि मुझमें इतनी शक्ति नही है कि भीड़मेसे अपना रास्ता बना सकूं। इसलिए मेरे लिए यह बहुत स्फूर्तिदायक अनुभव था। मुझे धक्कामुक्की करते हुए भीड़से होकर रास्ता नही बनाना पड़ा। आपने अभी-अभी मुझे जो अनेक मानपत्र और एक थैली भेंट की है, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ और आपने उन मानपत्रोंको पढ़कर न सुनानेमे जिस आत्मसंयमका परिचय दिया है उसके लिए भी मैं आपका शुक्रगुजार हूँ।

आप जानते ही हैं कि मेरी इस यात्राका क्या उद्देश्य है। मैं चाहता हूँ कि आप अस्पृश्यताके इस अभिशापको दूर करनेके मेरे कार्यमे मेरी सहायता करें। मैं चाहता हूँ कि आप पूरे दिलसे इस कार्यमें मेरे साथ हो जाये और सो भी इस विश्वासके साथ कि आज हमारे बीच अस्पृश्यता जिस रूपमे प्रचलित है, धर्म उसकी इजाजत नही दे सकता। यह विचार मात्र ही घृण्य है कि एक भी मनुष्य जन्मतः अस्पृश्य हो सकता है। आजकी परिस्थितियोके हम इतने निकट है कि देख ही नही सकते कि इस भारी अभिशापके बोझके नीचे हिन्दू धर्म छिन्न-भिन्न हुआ जा रहा है, और जो बात मैं हजारों मंचोसे बराबर कह चुका हूँ उसे मैं यहाँ फिर दोहराता हूँ कि यदि अस्पृश्यताको दूर नही किया गया तो हिन्दू-धर्म नष्ट हो जाएगा। इसलिए

१. गांधीजीने २३ दिसम्बरको कारसे गुंटूर जिलेका एक दिनमें दौरा कर डाला था।

मेरे हृदयको तब बहुत खुशी होती है जब मैं देखता हूँ कि इस सभामे इतनी बडी संख्यामे लोग शामिल हुए है और अपने पैसे दे रहे है। लेकिन अस्पृश्यताकी इस समस्या पर ज्यादा बोलकर मुझे आपका और अपना समय व्यर्थ नही खोना चाहिए।

आज मेरे सामने दिनभरके लिए काफी भारी कार्यक्रम है। इसलिए अपने भाषणके अन्तमे मैं अत्यन्त सुन्दर प्रबन्धके लिए, मानपत्रो और थैलीके लिए आपको एक बार फिरसे धन्यवाद देता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह हमे शुद्धीकरणकी इस प्रक्रियासे होकर गुजरनेके लिए पर्याप्त शक्ति दे:

और अब जिन फ्रेमोमें मानपत्र लगाकर मुझे दिए गए है उन फ्रेमोंकी विक्रीमे मैं कुछ चन्द मिनट देना चाहूँगा और यह चाहूँगा कि उपस्थित वहने अपने जेवर आभूषण आदिका त्याग कर दे। यदि आपमेसे किसी व्यक्तिने थैलीमे अपना अंशदान न दिया हो और यदि वह अब देना चाहता हो तो कृपापूर्वक दे दे। लेकिन अब तो ये दोनो फ्रेम क्षतिग्रस्त हो गए है। इनके शीशे टूट गए है। इससे लोगोको यह सवक सीखना चाहिए कि मुझे फ्रेमोमे मढे हुए मानपत्र न दिए जाये। मैं जानता हूँ कि आन्ध्र प्रदेश भारतका एक कलात्मक प्रदेश है। इसलिए आपको चाहिए कि आप जो मानपत्र भेट करे वे किसी कलात्मक और सादे ढँगसे मढे हुए हो।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २५-१२-१९३३

४१०. भाषण : गोल्लापलममें

२४ दिसम्बर, १९३३

मैंने सबसे पहले दक्षिण आफ्रिकामे गिरमिटिया मजदूरोसे एक-एक पाईकी भीख माँगना सीखा। ऐसे छोटे-छोटे चन्दोमे हमेशा दाताका आशीर्वाद भी जुडा रहता है। मुझे एक भी ऐसी घटना याद नही आती जब किसी स्त्री अथवा पुरुषको मुझे पैसा देनेका पछतावा हुआ हो। जिन उद्देश्योको लेकर मैंने भीख माँगी वे उद्देश्य अच्छे थे। और हरिजन उद्देश्य, जिसके लिए मैं अब लोगोसे भीख माँगता हूँ, निःसन्देह आज तकके मेरे उद्देश्योमे सर्वश्रेष्ठ है। अब मैं सवर्ण हिन्दुओसे प्रार्थना करता हूँ कि वे शुद्धीकरण और पश्चात्तापके इस आन्दोलनमे भाग ले। कोई भी सवर्ण हिन्दू हरिजनोके लिए जो थोडा-बहुत कार्य करता है उससे वह स्वय ऊपर उठता है और हिन्दू-धर्मको भी ऊँचा उठाता है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-१२-१९३३

४११. भाषण : रामचन्द्रपुरम्‌में

२४ दिसम्बर, १९३३

आपने मुझे जो मानपत्र[1] और थैली भेंट की है, उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। लेकिन आपने मुझे जितना धन दिया है उससे मुझे सन्तोष नही है। मैं और ज्यादाकी अपेक्षा करता हूँ। अब मुझे दिये गये दो मानपत्रोको मैं नीलाम कर रहा हूँ।[2]

आपने इस सभाके लिए जो अत्यन्त उत्तम प्रबन्ध किया है, उसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। इस स्थानको प्रकृतिने अपनी निधियाँ मुक्त-हस्तसे दी है; और चीजोंको सुन्दर बनाना प्रकृतिका एक विशेष गुण है। ईश्वरकी कृपासे आपने प्रकृतिके सौन्दर्यको बिगाड़ा नहीं है बल्कि अक्षुण्ण बनाये रखा है। आप सब लोग जानते है कि आपके यहाँ एक आश्रम है जिसे वाल्मीकि आश्रम कहते है। मैं अभी-अभी उस आश्रममे गया था। वहाँ हरिजन बच्चोंको आश्रय प्रदान किया जाता है। मुझे इन बच्चोंने भजन और कीर्तन गाकर सुनाया। मैं उन बच्चोसे बहुत प्रभावित हुआ। उन्होने मुझे एक सुन्दर मानपत्र भेंट किया है जिसमें उन्होंने आपकी सहायता माँगी है। आश्रमको आपकी — आप सबकी — सहायताकी आवश्यकता है, तालुकके लोग जो सहायता उसे देते हैं, उस सब सहायताके वह योग्य है।

प्रकृतिने सब मनुष्योंको समान बनाया है। लेकिन मनुष्यने अपने दम्भमें कुछ लोगोको ऊँचा और कुछको नीचा बताकर द्वेषजनक भेदभाव पैदा कर दिये है। ईश्वर इन असमानताओंको नही मानता। आप प्रकृतिमे कही भी देखे और किसी भी चीज-को देखे, लेकिन मनुष्यने जैसी असमानता पैदा कर दी है, वैसी असमानता आपको प्रकृतिमे कही नही दिखाई पड़ेगी। इसलिए जबतक आप अस्पृश्यताकी बुराईको समाप्त नही करते तबतक आप समानता, जो कि प्रकृतिका नियम है, नही स्थापित कर सकते। मैं आपसे कहता हूँ कि मेरे साथ ईश्वरसे प्रार्थना कीजिए कि वह आपको अस्पृश्यताका यह अभिशाप बिलकुल समाप्त कर सकनेकी शक्ति और साहस प्रदान करे। मैं आपको ज्यादा देर रोकना नही चाहता। यदि आप महिलाओके बीचसे कुछ और धन इकट्ठा करनेमे सफल हों; तो कृपया उसे मेरे पास ले आये।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-१२-१९३३

१. ये मानपत्र रामचन्द्रपुरम् तालुका बोर्ड और हिन्दी प्रेमी मण्डली द्वारा भेंट किये गये थे।
२. नीलामीके बाद गांधीजीने अंग्रेजीमें भाषण दिया जिसका तेलुगु श्री बुलुसु साम्बमूर्तिने अनुवाद किया।

४१२. भाषण : राजमुंदरीमें[1]

२४ दिसम्बर, १९३३

मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आप कृपा करके कुछ क्षण मेरी बात सुनें। इन सब मानपत्रो और बहुत-सी थैलियोके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। राजमुंदरी और यहाँके नागरिकोसे अपना परिचय नया कर सकनेका यह अवसर पाकर मुझे बहुत खुशी हुई। आपने मुझे आपसे बडी-बडी चीजोकी अपेक्षा करना सिखाया है, और मैं आशा करता हूँ कि इस हरिजन-कार्यमे भी आप उन अपेक्षाओको पूरा करेंगे जो आपने मेरे मनमे पैदा कर दी है।

मैं यहाँ हिन्दू समाज द्वारा भेंट किये गये मानपत्रको देखता हूँ। समाजने मुझे अपना जो कार्यक्रम भेजा था उसे मैंने पढ लिया है। यह एक उच्चाकाक्षी कार्यक्रम है। लेकिन कोई भी कार्यक्रम, चाहे वह उच्चाकाक्षी हो या न हो, तबतक पूरा नही हो सकता जबतक कि करोडो सवर्ण हिन्दुओके दिल नही बदलते। अस्पृश्यता धीरे-धीरे असर करनेवाले जहरकी तरह है जो हिन्दू समाजको मारे डाल रही है, और जिस प्रकार आप धीमे-धीमे मर रहे शरीरको बनाये नही रख सकते, उसी प्रकार जबतक आप अस्पृश्यताके कारणको नही दूर करेंगे तबतक आप नष्ट हो रहे हिन्दू-धर्मको जिन्दा नही रख सकेंगे।[2]

मुझे यह सूचित करते हुए दु ख होता है कि यदि आप बिलकुल शान्त नही बैठेंगे तो मेरे लिए अपना भाषण जारी रखना असम्भव होगा। अब जबतक आप बैठेंगे उतनी देरमें मैं थोडा-सा काम करनेका विचार रखता हूँ, और इसलिए मैं नगरपालिका द्वारा भेंट किये गये मानपत्रको नीलाम करने जा रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-१२-१९३३

१. इस भाषणका अंग्रेजीसे तेलुगुमें श्री बी० साम्बमूर्तिने अनुवाद किया।
२. गांधीजी यहाँ तक बोले थे कि सभामें कुछ गड़बड़ी होने लगी।

४१३. हरिजन-शिष्टमण्डलको जवाब[1]

राजमुंदरी
२४ दिसम्बर, १९३३

एक महत्वपूर्ण प्रश्न जो आपने उठाया है वह यह है कि हरिजन सेवक संघमें मुख्यतः आपके आदमी होने चाहिए और उसका प्रबन्ध आपके हाथोंमें होना चाहिए। इससे दिखता है कि आपने 'हरिजन' को पढ़ा नहीं है। इससे यह भी दिखता है कि आपने, संघके केन्द्रीय बोर्डकी स्थापना कैसे हुई, इसे भी नहीं समझा है। बोर्डकी स्थापना इसलिए की गई है ताकि सवर्ण हिन्दू प्रायश्चित कर सकें और आपकी क्षतिपूर्ति कर सके। इस प्रकार यह बोर्ड कर्जदारोंका बोर्ड है, और लेनदार आप लोग हैं। आपकी कर्जदारोंके प्रति कोई देनदारी नहीं है, और इसलिए जहाँतक इस बोर्डका सम्बन्ध है, पहल कर्जदारोंकी तरफसे होनी है। आपको यह प्रमाणित करना है कि कर्जदार लोग अपने दायित्वको पूरा करते हैं कि नहीं। आपको जो करना है वह यह है कि आप कर्जदारोंको उनका दायित्व पूरा करनेका मौका दें और उनकी मदद करें। आप उनको बता सकते हैं कि आपकी रायमें क्या किया जाना चाहिए जिससे सामान्य हरिजन जनता सन्तुष्ट होगी। वे आपकी सलाह स्वीकार कर सकते हैं और नहीं भी कर सकते। यदि नहीं करते तो आपको नाखुश करनेको खतरा उठाते हैं। कोई कर्जदार किसी साहूकारके पास जाकर कह सकता है कि "मैं इतना रुपया लाया हूँ क्या आप इसे लेंगे?" साहूकार कह सकता है, "चले जाओ; मुझे दो तो पूरा रुपया दो, वरना मत दो।" या साहूकार कह सकता है, "तुम जो रकम लाये हो वह आंशिक भुगतान नहीं है, बल्कि उससे भी खराब है।" आप साहूकार लोग ये सब बातें कर सकते हैं। और इसलिए जब बोर्डकी स्थापना की गई और कुछ हरिजन मित्रोंने मुझे पत्र लिखे तब मैंने उनसे कहा कि हरिजनोंको अपने सलाहकार बोर्ड या जाँच-बोर्ड बना लेने चाहिए। मैं चाहता हूँ कि आप यह अन्तर अच्छी तरह समझ लें। आप कृपया समझ लीजिए कि आपकी सलाह या सहयोग अथवा सहायताको स्वीकार न करनेकी कोई इच्छा नहीं है। मैं आपके सामने केवल सच्ची और तर्कसंगत स्थिति प्रस्तुत कर रहा हूँ। यह एक माफीकी अवधि है जो ईश्वरने सवर्ण हिन्दुओंको प्रदान की है, और इस माफीकी अवधिमें उन्हें अपनी ईमानदारी सिद्ध करनी है। सवर्ण हिन्दू अपने दायित्वको पूरी तरह पूरा कर सकें, इसके लिए मैं आकाश-पाताल एक कर रहा हूँ और जगह-जगह का दौरा कर रहा हूँ।

१. पूर्वी गोदावरी जिलेके हरिजनोंका एक शिष्टमण्डल गांधीजीसे राजमुंदरीमें मिला था।

इसपर शिष्टमण्डलके एक सदस्यने सुझाव दिया कि बोर्डको अपने चुने हुए हरिजनोंकी सलाहकार समितियाँ नियुक्त करनी चाहिए। गांधीजीने कहा :

बोर्डसे हरिजनोकी सलाहकार समितिका चुनाव करनेको मत कहिए बल्कि अपनी समिति खुद चुनिए और बोर्डसे कहिए कि आपने इन सदस्योंको चुना है और बोर्डको उनके साथ पत्र-व्यवहार करना चाहिए। आपके सुझावमे एक खतरा और है। आपके बीचमे गुट और दल हो सकते हैं। अलग-अलग गुटके लोग अलग-अलग समितियाँ नियुक्त कर सकते है। बोर्ड उन सबको मान्यता दे सकता है। लेकिन यह दुर्भाग्यपूर्ण होगा। आपके बीच कोई आपसी झगड़ा नही होना चाहिए। कर्जदारोके सामने एक संयुक्त मोर्चा प्रस्तुत कीजिए। कर्जदार लोग आपको एकदूसरेके खिलाफ लड़ा भी सकते है, हालाँकि बोर्ड यदि अपने नामके अनुरूप होगा तो वैसा नही करेगा। कांग्रेस एक संयुक्त मोर्चा प्रस्तुत कर सकनेमे सफल रही है। आज कांग्रेसमे आपके और मेरे जैसे सरल व्यक्ति भरे पडे हैं। आपका अपना एक कर्मठ व्यक्तियोका संगठन होना चाहिए जो आपके आपसी झगडोको सख्तीसे दबा दे। तब आप बोर्डमे नही होकर भी उसके ऊपर हावी रहेंगे। अब आसानीसे सन्तुष्ट मत होइए। आप कर्ज-दारोसे कह दीजिए कि रुपयेमे ५ आनेसे ही आप सन्तुष्ट नही होंगे, बल्कि आपको पूरे सोलह आने मिलने चाहिए। यह कोई ऐसा मामला नही है जिसपर सौदेबाजी की जाये।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-१-१९३४

४१४. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२५ दिसम्बर, १९३३

चि० अमला,

मुझे तुम्हारे पत्र मिले। मैंने जो-कुछ भी किया वह तुम्हारे प्रति अपने प्रेमके कारण किया। और यह मेरी बदकिस्मती है कि तुम्हे उसमे कोई प्रेम नही दिखाई दिया। खैर डरो नही, मै फिरसे ऐसा कुछ करनेवाला नही हूँ। तुम्हारा विकास अपने ही ढगसे होगा। तुम जानती ही हो कि तुम्हे किस चीजकी जरूरत है। तुम अपने ही ढँगसे काम करोगी मेरे ढँगसे नही। सिर्फ अपने मन और शरीरको स्वस्थ रखो। हिन्दीका अध्ययन भी तुम अपने ढँगसे करो। अपनी और अपनी चीजोकी हिफाजत करना। अपनेको और अपने कमरेको साफ रखो। तुम्हे अच्छी और सरल हिन्दी पुस्तकें चुननी चाहिए।

तुम मुझे विस्तारसे और नि.संकोच होकर लिखो। तुम्हारे पत्रोसे मुझे आघात नही पहुँचा है।

मैं बिलकुल ठीक हूँ।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

४१५. पत्र: ताराबहन आर० मोदीको

राजमुंद्री
२५ दिसम्बर, १९३३

चि० तारा,

तेरे दाँतका [कष्ट] समाप्त हो गया यह खुशीकी बात है। रमणीकलालसे मिलनेके बाद ही अहमदाबाद जानेका तेरा विचार ठीक है। दाँतकी पीड़ा मिट जानेके बाद शरीर अब अधिक सुधरना चाहिए। रमणीकलालको सारी खबर देना। मैं तो जान-बूझकर ही उसे पत्र नहीं लिखता। यों धर्मकी दृष्टिसे देखा जाये तो मेरा दौरा ठीक ही चल रहा है। शरीर भी खूब काम दे रहा है। मुझे प्रति सप्ताह २-३ पत्र तो मिलने ही चाहिए।

सबको,

बापूके आशीर्वाद

चि० ताराबहन मोदी
मार्फत, डॉ० शान्तिलाल
रेवाशंकर झवेरीका बंगला
शान्ताक्रूज [बम्बई]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१७८) से। सी० डब्ल्यू० १६७७ से भी; सौजन्य: रमणीकलाल मोदी

४१६. पत्र : कुसुमबहन देसाईको

राजमुंद्री
[२५] दिसम्बर, १९३३[1]

चि० कुसुम,

तेरे पत्रका मैं तार द्वारा उत्तर दे चुका हूँ। तू बहुत देरसे जागी है। तूने मुझे पत्र लिखना छोड दिया। मैं तो रोज बाट जोहता था लेकिन तू भला क्यो लिखने लगी? जब मेरे पास तेरा पत्र आया तब मेरे पास पहले ही बहुत भर्ती हो चुकी थी। बहनोमे तीन है, मीरा, किसन और ओम। सब मिलाकर हम नौ लोग है। तू क्या करती है? समय कैसे बिताती है? प्यारेलाल लिखते है? वह कैसे है? क्या तू 'हरिजनबन्धु' पढती है। मेरा शरीर ठीक रहता है। मुसाफरी [का श्रम] सहन सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८४९) से।

४१७. पत्र : रमाबहन जोशीको

२५ दिसम्बर, १९३३

चि० रमा,

तुम्हारा पत्र मिला। हाथसे थोडा-थोड़ा काम लेना अच्छा ही है। फिर और काम भी तो बहुतेरे है।

धीरूको तुम्हारा विछोह अखरता है तो कोई हरकत नही। यदि उसका स्वास्थ्य ठीक रहे तो भावनगरमें वह स्वावलम्बी बन जायेगा। दूधीबहनका उसे सत्संग है ही, फिर कुसुम भी तो है। अत: अच्छा है कि वह वहाँ जम जाये। तुम उसे पत्र नियमित रूपसे लिखती रहो तो बस है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३६१) से।

१. साधन-सूत्रमें २६ दिसम्बरकी तारीख दी गई है। तथापि गांधीजी २५ दिसम्बरको राजमुंद्रीमें थे और सवेरे सीतानगरम्के लिए रवाना हो गये थे।

४१८. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

२५ दिसम्बर, १९३३

बा,

मैंने पिछले सोमवारको तुझे जो लम्बा पत्र लिखा था वह मिल गया होगा। इस सोमवार हम सीतानगरममें हैं। सीतानगरम गोदावरीके किनारे पर बसा हुआ एक छोटा-सा गाँव है, उसमें एक आश्रम है। यह आन्ध्र प्रदेशमें है। गाँव होनेके कारण यहाँ खूब शान्ति है। यहाँ हम नावमें बैठकर आए हैं। नदी बड़ी है इससे इसमें छोटे स्टीमर आ-जा सकते हैं। हम मद्रास हो आए; वहाँ तीन दिन रहे। शास्त्री तो वहाँ थे ही। जेठालालसे भी मिला। गंगा भाभी मद्रासमें ही रहती है। जेठालालकी बहुसे भी मिला। दोनों शरीरसे अच्छे हैं। जेठालालको १५० रुपये वेतन मिलता है, इससे सुखी है। उर्मिला देवीके पुत्रसे भी मिला। वहाँ लोग बहुत बड़ी संख्यामें मिलने आते थे। लक्ष्मी ठीक है। पापा भी मद्रासमें है। लक्ष्मी तीन दिन मेरे साथ ही रही। मीराबहन, किसन और ओम भी मेरे साथ थी, इसलिए उसे अच्छा लगा। अभी एक बार फिर मुलाकात होगी क्योंकि उस ओरका दौरा अभी बाकी है। मेरा शरीर अच्छा है। मद्रासमें दो डाक्टरोंने फिर जाँच की थी। इसलिए मेरे लिए चिन्ता करने जैसी कोई बात नहीं। डाहीबहनके दाँतको कुछ आराम आया या नहीं? तुझे 'जामेजमशेद' मिलता है न? तूने प्रवचन जैसी कोई चीज माँगी थी सो एक तो आज देना चाहिए न?

'गीता' के आजके अध्याय ९, १०, ११, १२ थे। नवें अध्यायमें भगवान कहते हैं कि जो मुझे भजता है वह मुझे पाता है।[1] बारहवें अध्यायमें[2] यह बताते हैं कि भक्त किसे कहा जाये। खूबी यह है कि इसमें एक भी ऐसा लक्षण नहीं कहा गया है जो किसी अज्ञानीसे-अज्ञानी व्यक्तिमें भी न मिल सके। कोई स्त्री या पुरुष जो बिना किसीकी मदद अपने-आप परिश्रम करता है वह भक्त हो सकता है अर्थात् वह भगवानको पा सकता है। लक्षण ये हैं: किसीसे द्वेष न करे, प्राणी-मात्रके साथ मैत्री रखे; सबके प्रति दयाभाव हो, जिसके मनमें यह मेरा है यह तेरा ऐसा भाव न हो; जिसे अहंकार न हो, जिसे सुखदु:ख एक समान हैं, जो क्षमावान है, जो हमेशा सन्तुष्ट रहता है, जो संयमका पालन करता है, जो प्रतिज्ञाका पालन करता है, जिसने अपना मन और बुद्धि ईश्वरको अर्पित कर दिया है, जो किसीको दुख नहीं देता, जो भय और चिन्तासे मुक्त रहता है, जो किसी चीजकी आशा अथवा इच्छा नहीं रखता, जो पवित्र है, कार्य कुशल है, जिसने सब कुछ

१. अध्याय श्लोक ९, २९।

२. श्लोक १३-२०।

त्याग दिया है, जिसकी दृष्टिमे शत्रु और मित्र समान है, मान-अपमान एक समान है, जो सर्दी-गर्मी सहन करता है, निन्दा और स्तुति जिसके लिए समान है। जो जहाँ होता है वही घर मानकर रहता है अथवा जिसके लिए घर जैसी कोई चीज नही है। जो अकारण बोलता नही और जिसका मन व्यवस्थित है वह मेरा भक्त कहलाता है। इन सब पर तुम बार-बार विचार करोगी तो तुम्हे मालूम होगा कि जिसके मनमे इच्छा-भार हो तो वह बिना किसीकी मददके भक्त बन सकता है।

सबको बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृष्ठ ३-४

४१९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सीतानगरम
२५ दिसम्बर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

तुम मेरे पत्रकी राह देखते रहे और मै तुम्हारे पत्रकी। मुझे यह भ्रम था कि मेरे पत्रका उत्तर आना अभी बाकी है। दौरा इतनी तेजीसे चल रहा है कि मै तारीख और दिन आदिकी याद ही भूल जाता हूँ। किसको क्या लिखना है, यह भी याद नही रहता। मै साठका हो गया हूँ, यह कारण तो हो ही सकता है।

तीन बजे उठनेके बारेमे चन्द्रशकरने तुम्हे भड़काया है। यदि मै उस समय न उठूँ तो परेशान हो जाऊँ। तुम्हारा आग्रह तो मेरे जल्दी सोनेपर होना चाहिए। यह नियम आजकल जरूर टूट गया है। तथापि अभी तक तो स्वास्थ्य अच्छा ही रहा है, ऐसी सब डाक्टरोकी राय है। पत्र भी जितने तुम समझते हो उतने नही लिखता। केवल वही पत्र लिखता हूँ जो बहुत जरूरी हो। बल्कि यदि तुम बगलमे बैठे होते तो कहते कि कमसे-कम इतना तो लिख ही डालो। तुम्हारी यह शिकायत कि मै तुम्हे [जेलमे] अकेले छोडकर चला आया, सच है। लेकिन अन्तमे इसका उपाय भी हो जायेगा। मेरे बारेमे तनिक भी चिन्ता न करना। मै शरीरकी मर्यादासे बाहर नही जाता। तुम देखोगे तो मानोगे कि मै उसकी अच्छी सम्भाल कर रहा हूँ अथवा सच कहे तो यह कहेगे कि ईश्वर उसका जतन बराबर कर रहा है। लेकिन यदि मै ही विरोध करूँ तो ईश्वर बेचारा क्या करेगा? मै उसके प्रेममें पूरी तरह मग्न हो गया होऊँगा, इसीसे तो वह मुझे बडे-बडे संकटोसे बचा ले जाता है। मद्रासमे रोज मेरे कुचले जानेका भय बना रहता था फिर भी मै उससे बच निकला। यह कोई मनुष्यकी कारीगरी न थी, ईश्वरकी इच्छा ही ऐसी थी। पाँच घंटेका जो नियम बनाया गया था वह केवल कागजपर ही सुरक्षित है।

बाको हर सप्ताह पत्र जरूर जायेगा। अभीतक मैंने एक भी सप्ताह खाली नहीं जाने दिया है। बाको ईश्वर निभा लेगा। उसको निभानेवाला और हो भी कौन सकता है? मणिकी चिन्ता करनेकी सचमें कोई जरूरत नहीं।

मैंने कानजीभाईको[1] तुरन्त ही तार दिया था। उसके उत्तरमें तार और पत्र दोनों मिले। मैंने स्वयं भी फिर उत्तर भेजा है और लिखा है कि मेरी खातिर इतनी दूरसे आनेकी कोई जरूरत नहीं। लेकिन यदि उन्हें जरूरी लगे तो अवश्य आ जायें। तारीखें भी लिख भेजी हैं। तुम्हें पत्र लिखते समय मैं यह सब बताना भूल गया था। उनका पत्र सरस था।

राजाको मिलना मुश्किल समझता हूँ हालाँकि लक्ष्मी मुझे मद्रासमें मिली थी। उसको छठा महीना चल रहा है इसलिए वह ज्यादा चल-फिर नहीं सकती। तबियत अच्छी रहती है। राजा प्रसव अपनी देखरेखमें करवाना चाहते हैं। देवदास भी मद्रास पहुँचेगा। लक्ष्मी मजेमें थी। राजा ६ फरवरीको रिहा होंगे।

. . .की[2] गाड़ी ऐसे ही चलती है। उसे अपने से ही सन्तोष नहीं . . .[3] को फिर गर्भ रह गया है, इसका उसे सन्ताप है। वह खुदको वशमें नहीं रख सकता और बादमें दुःखी होता है। मैंने उसे काफी सान्त्वना दी है। लेकिन कुल मिलाकर वह जहाँ है ठीक ही है।

प्रिन्सेस एरिस्टार्शीके पत्र निश्चित रूपसे हर सप्ताह आते हैं। वह पैसा भी भेजती रहती है। उसके ममत्वका पार नहीं। अब वह त्रिवेदीके मनुकी मदद कर रही है . . .[4] मैंने प्रिन्सेसको लिखा है वह उसे उसके कर्त्तव्यको बोध कराये। यह सच है कि मणिलाल और सोराबजी[5] परस्पर लड़ते रहते हैं। यह लड़ाई वहाँकी राजनीतिको लेकर है। इसमें मैं किसीका मार्गदर्शन नहीं कर पाया हूँ। लेकिन मैंने मणिलालको लिखा है कि उसे जो सत्य प्रतीत हो सो वह करे, विनम्रता न छोड़े। व्यक्तिगत झगड़ेमें न पड़े। मेरा खयाल है कि यह झगड़ा निपट जायेगा।

गोरधनभाई विट्ठलभाईके दानके बारेमें लिखते रहते हैं। मैंने वह सब नहीं पढ़ा। अवसर पाकर उन्हें हिसाब दे दूँगा और शान्तिसे बैठ जाऊँगा। सुभाषका मुझे बहुत मधुर पत्र आया था। उसे मैंने छपनेके लिए अखबारोंमें भेजा था। अवश्य छपा होगा।

दौरा अच्छा चल रहा है। कोई भी क्लेश नहीं है। अभी तक दक्षिणमें ऊधम करनेवाले लोग देखनेमें नहीं आये। भविष्यकी बात ईश्वर जाने। लोगोंकी भीड़की सीमा नहीं। आज हम सीतानगरममें हैं। परम शान्ति है। यह एक छोटा-सा गाँव है। आज तो मेरा मौन है। मैं कल भी यहीं हूँ। यदि ये दो दिन स्थिरताके नहीं होते तो मेरे लिए दौरा जारी रखना मुश्किल हो जाता है।

१. सूरतके कन्हैयालाल देसाई।

२. ३. साधन-सूत्रमें यहाँ नाम नहीं दिये गये हैं।

४. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूट गया है।

५. पारसी रुस्तमजीके पुत्र।

मद्रासमे दो घड़ीके लिए शास्त्रीसे[1] मिला था। यह मुलाकात दोस्ताना थी। मुन्शी[2] और लीलावती[3] मुझे मद्रास आकर मिल गये। मुन्शीकी तवियत अच्छी जान पड़ी। भूलाभाईका तार आया था। उन्हे पूरा आराम नही आया है।

काका और सुरेन्द्र मशरूवाला गुजरातमे है।

किशोरलाल अभी स्वस्थ नही हुआ है। स्वामी सोनाली और बम्बईके बीच किसी स्थानपर है। उसका समाचार तो तुम्हे मिलता रहता होगा।

मेरे साथ किसन है, यह तो मै तुम्हे वता चुका हूँ न? वहुत अच्छी युवती है। प्रेमाकी मित्र ठहरी, और फिर पूछना ही क्या? सबको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने पृष्ठ ५३-७

४२०. पत्र: छगनलाल जोशीको

२५ दिसम्बर, १९३३

चि० छगनलाल,

तुम्हे लम्बा पत्र लिखना आरम्भ किया था, ऐसा एक पृष्ठ बोलकर लिखवाया था, यह सब जबलपुरमे हुआ। उसके बाद मै आगे बढ ही नही सका। अब आज यह पत्र लिख रहा हूँ। मै सीतानगरममे हूँ और इस समय मौनवारकी रात है। अभी मौन जारी है। ९ बजकर ३५ मिनट पर खुलेगा, अभी साढे आठ बजे है। केवल सोमवार और मंगलवारको ही लिखना हो पाता है, ऐसा कहा जा सकता है। सवेरे तीन बजे उठता तो जरूर हूँ। तबसे लेकर प्रार्थनाके समय यदि कुछ लिखा जा सके तो भले लिखा जा सके और उसमे भी विघ्न पड़ सकता है। और जब ट्रेनमें होता हूँ तो कभी-कभी सवेरे तीन बजे उठ भी नही पाता।

मै यह जो दौरा कर रहा हूँ वह अद्भुत है। लोगोकी भीड पहलेसे भी अधिक है। हमें करोडो लोगोमे काम करना है इसलिए हम इनसे सहज ही छले भी जा सकते है। और फिर जितने लोग आते हों वे सबके सब तुरन्त ही अपने जीवनमे परिवर्तन कर डालते हों, ऐसी बात नही। मुझे केवल इतना ही सन्तोष है कि इन लाखो लोगोको मेरा यह प्रचार अरुचिकर नही लगता जानपड़ता। इसलिए हम ऐसा मान सकते है कि किसीन-किसी दिन अस्पृश्यता जड़से चली जायेगी।

तुम अपने 'गीता'के अभ्यासको अच्छी तरह पक्का कर देना। व्याकरण और शब्दार्थ ठीक-ठीक आना चाहिए। उच्चारण तो अब अच्छा ही होगा। दूसरी पुस्तके भी भले ही कम पढ़ो लेकिन जितना अध्ययन करो, गहन अध्ययन करो। हजारो

१. श्रीनिवास शास्त्री।
२. व ३. क्रमशः क० मा० मुन्शी और उनकी पत्नी।

पुस्तकोंको पचाये बिना पढ़नेवाले मनुष्यकी अपेक्षा वह मनुष्य अधिक जानता है जो एक ही पुस्तक पढ़ता है और अच्छी तरह समझ लेता है। तुम्हारे पास चरखा है क्या? मिमुको और रमाको वर्धा हर तरहसे रास आया है। लगता है रमाका हाथ बिल्कुल ठीक हो जायेगा। धीरुको भावनगर पसन्द तो आया है लेकिन अभी उसके बारेमें हम निश्चिन्त नहीं हो सकते। वह कमजोर तो जरूर है लेकिन उसका स्वास्थ्य पहलेसे बहुत अच्छा है। दूधीबहन उसकी बराबर देखभाल करती है। कुसुम भी वहीं है। स्वयं नानाभाई भी उसकी देखभाल करते हैं। बलभद्रको वहाँ बहुत अच्छा लगता है।

अप्पा पटवर्धन मुझसे मिलने आए हुए हैं। अब जायेंगे। किसन वर्धासे मेरे साथ आ जुड़ी है। वह प्रेमाकी सहेली है और बहुत भली महिला है। हाँ, शरीरसे जरूर थोड़ी कमजोर हो गई है।

दो पत्रोंका भार चन्द्रशंकर अच्छी तरह सम्भाल रहा है। इस बार ठक्कर बापाकी जगह मलकानी हैं। काम ठीक चलता है। रामनारायण भी साथ है। किशोरलाल यह बीमारी भोग रहा है। बुखार उसका पीछा ही नहीं छोड़ता। ब्रजकिसन चांदीवाला बीमार थे लेकिन अब स्वास्थ्य-लाभ कर रहे हैं। उनके प्राण खतरेमें थे। लेकिन हममेंसे किसके प्राण खतरेमें नहीं हैं? तथापि जो लोग शय्यावश नहीं वे अपने-आपको खतरेमें नहीं मानते।

वा यरवदामें आनन्दपूर्वक है। डाहीबहनके[1] दाँत दुखते हैं। शान्ता और ललिता मजेमें हैं। द्वारकानाथ वर्धाका कारोबार अच्छी तरह से चला रहा जान पड़ता है। लक्ष्मीबहन तो ओत-प्रोत है ही।

काका और सुरेन्द्र मशरूवाला गुजरातमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३१४) से।

४२१. पत्र : दूधीबहन वी० देसाईको

२५ दिसम्बर, १९३३

चि० दूधीबहन,

इन दिनों तुम्हारा पत्र नहीं है। मुझे बराबर लिखती रहना। मैं तो कदाचित मुसाफिरीकी भागदौड़में न लिख सकूँ।

सब बच्चोंकी देखरेख रखना। कुसुमके बारेमें जमना भले ही कुछ भी कहे पर उसको लेकर तुम्हें अपना कर्त्तव्य नहीं छोड़ना चाहिए। कुसुमको[1] शृंगार प्रिय हो सकता है पर मुझसे तो वह यह नहीं सीख सकती। यह मेरी कमजोरी है।

१. रावजीभाई नाथभाई पटेलकी पत्नी।

तुम्हारे लिए तो शृंगारकी बात मेरे मनमें भी नही आ सकती। बच्चोसे लिखनेको कहना। आज अलहदा पत्र उन्हे नही लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१९०) से, सौजन्य · वा० गो० देसाई

४२२. पत्र : विद्या आर० पटेलको

२५ दिसम्बर, १९३३

चि० विद्या,

तेरा पत्र मिला। भले ही तू दवा लेकर ही अच्छी हुई हो पर यह ठीक ही हुआ। हमें तो अच्छा होनेसे ही मतलब है। मनुको पत्र लिखती रहना।

बापुके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६३६) से, सौजन्य : रवीन्द्र आर० पटेल

४२३. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

२५ दिसम्वर, १९३३

चि० विद्या,

तुमारा खत मिला। पिताके घर गई सो अच्छा ही हुआ। जब बहार निकलने लायक बन जायगी तब बहार भेज दूंगा। मुझे प्रिय तो वर्धा ही है लेकिन भावनगर मुसाफरी करनी है तो करवा दुंगा। अब तो शरीर अच्छा बनाओ, कुछ शारीरिक श्रम करो, चिंता छोडो, रोना छोडो। इंग्रेजी और हिंदी सीखो।

मुझे लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य; राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द टो० हिंगोरानी

४२४. पत्र : गोविन्दभाई आर० पटेलको[1]

२५ दिसम्बर, १९३३

भाई गोविन्दभाई,

आपका पत्र मिलनेके बाद मैंने पूछताछ की और मुझे पता चला कि पाण्डिचेरी से निमन्त्रण आया था और मैं कदाचित वहाँ जाऊँगा। यदि मैं वहाँ जाऊँगा तो श्री अरविन्दसे अवश्य मिलना चाहूँगा। उनसे मिलन न हुआ तो मुझे बहुत निराशा होगी। इसलिए यदि शोरगुल किये बिना उनसे मिलनेकी व्यवस्था की जा सके तो करना। तय होनेके बाद मैं स्वयं उनसे लिखकर समय माँगनेवाला हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्री गोविन्दभाई
श्री अरविन्द आश्रम
पाण्डिचेरी

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०७३९) से; सौजन्य : गोविन्दभाई रामभाई पटेल

४२५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२६ दिसम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

यह रही 'मद्रास मेल' की एक कतरन।[2] हालाँकि सारी बातचीतमें करीब-करीब तुम्हारा और तुम्हारे विचारोंका ही उल्लेख किया गया है, लेकिन स्वभावतः भेंटकर्ता तुमसे हुई भेंटका विवरण पूराका पूरा नही दे सकता था। मुझे प्रूफ दिखाया गया

१. गोविन्दभाई पटेलने श्री माँ की मार्फत श्री अरविन्दको गांधीजीके इस पत्रके बारेमें बता दिया था और श्री अरविन्दने एक कागजपर पैंसिलसे यह लिखा था कि आपको उन्हें लिखना होगा कि मैं उनसे भेंट नहीं कर सकता क्योंकि एक लम्बे अर्सेसे मैंने किसीसे भेंट न करनेका पक्का निश्चय बना लिया है — यह कि मैं अपने शिष्योंसे भी बात नहीं करता और उन्हें केवल सालमें तीन बार मौन आशीर्वाद देता हूँ। अन्य लोगोंने जब भी मुलाकातके लिए समय माँगा, मुझे उसे अस्वीकार करना पड़ा है। अपने ऊपर मैंने यह नियम अपनी साधनाके कारण लगाया है और इसमें सुविधा अथवा किसी बातका प्रश्न ही नहीं उठता। और अभी मेरे इस नियमसे विचलित होनेका समय नहीं आया है।

२. देखिए "भेंट : मद्रास मेलके प्रतिनिधिको", २२-१२-२९३३।

था। मैंने जो कहा था उसका काफी ठीक सार प्रस्तुत किया गया है। कृपया इसे सावधानीपूर्वक पढ़ जाना और जहाँ तुम्हे लगे कि मैंने तुम्हारे बारेमें कुछ गलत कहा है वहाँ मुझे भूल बताना। हमारी मण्डलीमे भी तुम्हे लेकर बहुत गलतफहमी है। लेकिन इसकी मुझे कोई चिन्ता नही।

मेरा जैसा कार्यक्रम अभी बना है, वह भी तुम्हे साथ भेज रहा हूँ।[1]

आशा है, माताजीका स्वास्थ्य सुधर रहा है।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स १९३३, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

४२६. पत्र : रेहाना तैयबजीको

२६ दिसम्बर, १९३३

प्यारी बिटिया रेहाना,

मुझे तो खयाल ही नही था कि तू बीमार पड गई है। मै तो समझा 'रेहाना अब बापूको भूल गई है।' जहाँ तक मेरा सवाल है, मेरे पास तो लिखनेका वक्त ही नही था। भगवानका शुक्र है कि तू अब बिलकुल अच्छी हो गई है।[2]

हमीदाका एक लम्बा पत्र था। उसे मैंने जवाब दिया है। कमला देवीके साथ बहुत बाते हुई। मुसाफिरीमे तेरी बहुत बार याद आती रहेगी। 'उठ जाग मुसाफिर' तेरे मुँहसे सुननेकी इच्छा होती ही है पर "ऐसा दिन कहाँ कि मियोके पैर मे जूतियाँ हो।" तुम्हारी भजन मडलीमे बैठनेकी भी इच्छा होती है। मेरे साथ किसन और जमनालालजीकी ओम है। अब्बाजान कहाँ गये है? उन्हे और अम्माजानको बहुत सलाम, वन्देमातरम्, प्यार आदि आदि। सरोज[3] और तुझे आशीर्वाद। कमाल मियाँ-को चुम्मी।

बापू

[पुनश्च]

'हरिजन' पढ़ती ही होगी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६५५) से।

१. देखिए परिशिष्ट ४।
२. यह अंश उर्दूमें है।
३. सरोज नानावटी।

४२७. पत्र : कल्याणजी वी० मेहताको

२६ दिसम्बर, १९३३

भाई कल्याणजी,

मौत किसको छोड़ती है? यदि मृत्यु रूपी हमारा मित्र न हो तो कौन जाने हमारा क्या हाल हो? आप सबको और विशेष रूपसे नेपोलियनको इस बातकी तसल्ली होनी चाहिए कि गंगाबा मुक्त हो गई है। पर मैंने ज्ञानकी जो बात की उसे इस अवसर पर भला कौन सुनेगा? तथापि मृत्युके सम्बन्धमें मेरा यह ज्ञान शास्त्रोंपर आधारित नहीं है। इसी कारण प्रसंग उपस्थित होने पर मैं ऐसी बात कह देता हूँ। हमारे जैसे सिपाहियोंको तो उसके स्वरूपको जान लेना चाहिए। गंगाबा की आत्माको तो अवश्य शान्ति होगी क्योंकि जिसने इस देहसे अच्छा बननेका तनिक भी प्रयत्न किया है उसका अकल्याण तो कभी हो ही नही सकता। महालक्ष्मीका मलेरिया उचित उपचारसे दूर हो जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

कल्याणजी मेहता
मार्फत डॉ० नाथूभाई दयालजी पटेल
बैंक व्यू
चर्नी रोड स्टेशन गार्डनके सामने
बम्बई

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

४२८. पत्र : स्वरूपरानी नेहरूको

२६ दिसम्बर, १९३३

प्रिय भगिनी,

आपका खत मिला था। मिलनेसे आनंद हुआ। बहूत शक्ति आनेकी आशा तो अब रख नहिं सकते हैं। अब आपको चिंताका भी कोई कारण नहिं रहा है। कृष्णा खुश रहती है। सरुपसे कहो मुझे लिखा करे। कृष्णा भी लिखे। थोडे महिने वही रहेगी क्या?

ईश्वर तुम्हें शांति देवे।

मेरी मुसाफरी अच्छी तरह चल रही है। परिश्रम ठीक पड़ता है। ईश्वर कृपासे अब तक तो शरीरने सहन किया है। बाके खत आते है। खुश है।

आपका,
मोहनदास

इन्दिरा गांधी-गांधी पेपर्स, सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। जी० एन० ११४०७ से भी।

४२९. भाषण: एल्लोरकी सार्वजनिक सभामें

२७ दिसम्बर, १९३३

इस जबर्दस्त स्वागतके लिए, जो आपके जबर्दस्त प्रेमका परिचायक है, मैं आपको धन्यवाद देना चाहता हूँ। मुझे जो अनेक थैलियाँ और मानपत्र, जिनमें नगरपालिकाकी ओरसे और जिला बोर्डकी ओरसे दिये गये मानपत्र भी शामिल है, भेंट किये गये है, उनके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मेरे पास समय बहुत थोड़ा है, और आशा है आप विभिन्न मानपत्रोंमें कही गई बातोंका विस्तृत उल्लेख करनेकी अपेक्षा मुझसे नही करेंगे।

मेरा सबसे प्रथम और पावन कर्त्तव्य "पंजाब केसरी" स्वर्गीय लाला लाजपतरायके चित्रका अनावरण करना है। उनके अनेक बहुमूल्य गुणों और सेवाओंकी चर्चा मैं आपसे करूँ, आप मुझसे इसकी अपेक्षा नही करेंगे। मुझे उनके अन्तकाल तक उनका विश्वासपात्र रहनेका सौभाग्य मिला था। १९२० में कांग्रेसका जो ऐतिहासिक अधिवेशन हुआ था उसके वह अध्यक्ष थे। आज मेरे और आपके लिए उनका सबसे विशिष्ट गुण यह है कि अस्पृश्य लोगोंसे उनको अत्यन्त निर्मल प्रेम था। उन्होंने भारतके हिन्दू समाजको तथाकथित अस्पृश्य लोगोंके प्रति, हरिजनों के प्रति अपने कर्त्तव्यका ध्यान रखनेकी शिक्षा दी है। लाजपत राय हमेशा कहते थे कि अस्पृश्यता हिन्दूधर्मपर सबसे बड़ा कलंक है। यदि उन्होंने और कुछ न किया होता तो अस्पृश्यताके विरुद्ध उन्होंने जो लड़ाई छेड़ी थी, केवल उसीके कारण हम हिन्दुओंको उनकी पवित्र स्मृतिकी पूजा करनी चाहिए। उनकी देश-सेवा, उनकी बहादुरी और उनकी निर्भीकतासे कौन इनकार कर सकता है? उनको 'पंजाब केसरी' के नामसे यो ही नही पुकारा जाता था।

अब मुझे और चीजोंको लेना चाहिए। आपको जानकर खुशी होगी कि मूलपुरी चुक्कम्माको वेल्लोर जेलमें भी हरिजनोंकी सुध रही और उसके पास जो थोड़ी बहुत चीजे है उनमेंसे यह अँगूठी उसने मुझे भेजी है। उसका पत्र, जिसपर सेंट्रल जेलके सुपरिंटेंडेंटके हस्ताक्षर है, यहाँ मेरे पास है। ऐसे कार्योंसे कौन है जो प्रेरणा नही ग्रहण करेगा? [1]

१. इसके बादका अंश २९-१२-१९३३ के हिन्दूमें प्रकाशित रिपोर्टसे लिया गया है।

जहाँ भी मैं जाता हूँ वहाँ मैं लोगोंमें उत्साह देखता हूँ, तथाकथित अस्पृश्य यानी हरिजनोंको अपने हृदयमें स्थान देनेकी इच्छा देखता हूँ। जहाँ भी मैं जाता हूँ, मैं लोगोंमें अपनी सम्पत्ति, अपने पैसे, रुपये और सोनेकी वस्तुएँ देनेकी तत्परता देखता हूँ, और त्याग करनेमें स्त्रियाँ पुरुषोंसे पीछे नहीं हैं। मैं निश्चयपूर्वक जानता हूँ कि उन्हें पता है कि वे जानती हैं कि किस उद्देश्यके लिए उन्होंने अपनी चूड़ियाँ, अपनी अँगूठियाँ या अपनी कोई अन्य प्रिय वस्तु दान की है। वे जानती हैं कि ये सारा धन और ये सब गहने इसलिए दिये जा रहे हैं ताकि हरिजनोंकी सेवा की जा सके। मैं जितना ही सोचता हूँ उतना ही मुझको लगता है कि यह कार्य सारी मानवताके लिए किया जानेवाला कार्य है, हमेशा किया जानेवाला काम है। यदि हिन्दू अस्पृश्यता-राक्षसीका नाश करनेमें सफल हुए, यदि वे अपने दिलोंको बदलनेमें सफल हुए, यदि वे अपनेको इस कलंकसे मुक्त करनेमें सफल हुए तो मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है कि विभिन्न धर्मोंको माननेवाली सभी जातियोंके हम लोग सुख, सन्तोष, शान्ति और हार्दिक मैत्रीके साथ रहेंगे। मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है कि यदि इस अनुष्ठानमें, अस्पृश्यताके विरुद्ध इस लड़ाईमें हमें पूर्ण सफलता मिली तो जैसा कि मैंने कहा है, हम हृदयकी एकता स्थापित कर सकेंगे। पारस्परिक विश्वास, आपसी प्रेम और आपसी आदरभावकी धूप में सन्देहका कोहरा छँटकर तिरोहित हो जायेगा। इसलिए आइए, हम लोग, आप और मैं और सभी लोग, सर्वशक्तिमान ईश्वरसे प्रार्थना करें कि वह हमें इस गलतीको, चाहे वह कोई भी गलती हो, देख सकनेकी और सुधार सकनेकी शक्ति और बुद्धि प्रदान करे। हमें याद रखना चाहिए कि इतनी सदियों तक हमने अपने ही बीचके एक वर्गको दबाये रखा है और ऐसा करते हुए हमने अपने-आपको पतित किया है, अपने-आपको दबाया है। आज तक संसारमें कोई भी शक्ति स्वयंको पतित और दलित किये बिना मानवताके किसी अंशको दबानेमें सफल नहीं हुई है। मैं जितना ही देखता जाता हूँ उतना ही मुझे लगता है कि अगर हमने अस्पृश्यताको खत्म न किया तो हिन्दूधर्म स्वयं नष्ट हो जायेगा, और यदि ऐसा हुआ तो यह हमारी ही क्षति नहीं बल्कि सारे संसारकी क्षति होगी। ऐसा धर्म जिसकी प्रेरणाके स्रोत वेद हैं, उपनिषद हैं, पुराण हैं, जिसकी प्रेरणाका स्रोत 'रामायण' है, वह धर्म क्यों नष्ट हो जायेगा — किसलिए, किस कारण नष्ट हो जायेगा। इसका एकमात्र कारण यही होगा, कि हमने उपनिषदोंकी शिक्षाका पालन नहीं किया, हमने वेदोंमें, उपनिषदोंमें बतायी गई इस महान् शिक्षाका, उनमें प्रतिपादित इस महान् सिद्धान्तका पालन नहीं किया कि केवल ईश्वर ही सत्य है, और ईश्वरके अतिरिक्त अन्य कोई व्यक्ति, कोई चीज नहीं है। क्या आप समझते हैं कि एक ईश्वरकी, न्यायप्रिय ईश्वरकी शिक्षा देनेवाले शिक्षकोंने यह उपदेश दिया होगा कि हमारे बीच ऊँचे और नीचे का भेदभाव हो सकता है? यह एक असम्भव बात है। इन बातोंके बारेमें हम जितना ही सोचते हैं उतना ही इस बातपर आश्चर्य होता है कि हिन्दुओं जैसी सुसंस्कृत समझी जानेवाली जातिने अस्पृश्यताको अपने धर्मके एक अंगके रूपमें अपना लिया है। और अन्तमें यह बात याद रखिए कि आज

संसारके सभी धर्म आन्तरिक उथल-पुथलमे पड़े हुए है। उन सभी को आलोचनात्मक दृष्टिसे जाँचा-परखा जा रहा है और कसौटी की जा रही है, और यदि हम इस बुराईको तेजीके साथ अपने बीचमेसे निकाल बाहर नही करेगे तो लोकमत आपको और मुझे माफ नही करेगा। अब अस्पृश्यताके ऊपर मै आपका और अधिक समय नही लूंगा।[1]

इसके बाद श्री गांधीने कहा कि चूंकि मै एल्लोरमें बोल रहा हूँ, जो कि आन्ध्र प्रान्तीय हरिजन सेवक संघका मुख्यालय है, इसलिए मै आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर दिलाना चाहता हूँ कि मुझे संघके कुछ पदाधिकारियोंके विरुद्ध कुछ शिकायतें मिली है। मैने और केन्द्रीय बोर्डके सदा-सतर्क मन्त्री श्री ठक्करने जाँचके बाद पाया है कि लगाये गये आरोप सर्वथा निराधार है। किसी भी सही शिकायतके लिए मै अपनी आँखों और कानोंको खुला रखता हूँ, लेकिन मेरा आग्रह है कि शिकायत करनेवालेको दो शर्तोंपर कोई शिकायत करनी चाहिए। पहली शर्त तो यह है कि उसे गुमनाम पत्र भेजनेके बजाय अपना नाम सार्वजनिक रूपसे घोषित करना चाहिए और दूसरी यह कि वह जो भी आरोप लगाये, उन आरोपोंको अकाट्य सबूत देकर सिद्ध करना चाहिए।

श्री गांधीने अपना भाषण अंग्रेजीमें किया, और भाषण समाप्त करनेसे पहले उन्होंने कहा कि आन्ध्रदेशमें भी, जहाँ हिन्दीने इतनी ज्यादा प्रगति कर ली है, मै अंग्रेजीमें बोला, इसका मुझे दुख है। भाषणका अनुवाद करनेमें आसानी हो, इस खयालसे मुझे अंग्रेजीमें बोलना पड़ा। आन्ध्रवासियोंके लिए हिन्दी सीखना तनिक भी कठिन नहीं होगा क्योंकि उसमें बहुतसे शब्द संस्कृतपर आधारित है, और संस्कृतसे ही तेलुगु भाषा निकली है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-१२-१९३३ और २९-१२-१९३३

४३०. भाषण : विशाखापट्टमकी महिला-सभामें

२८ दिसम्बर, १९३३

हरिजन-कार्य आगकी तरह है। आगमे आप जितना ही घी डाले, उतने ही और घीकी उसे जरूरत होती है। इसी प्रकार हरिजन-कार्यके लिए आप जितना ही देते है उतनी ही उसे और आवश्यकता होती है। जो लोग इस कार्यके लिए देते है, वे कभी खोते नही; उन्हे लाभ ही होता है। देकर आप पुण्य अर्जित करते है। न देनेसे आप पुण्य-प्राप्तिका अवसर खोते है। कारण, सवर्ण हिन्दू जातिके स्त्री-पुरुष सदियोसे हरिजनोको पीड़ित करते आये है। आज अगर हम बुरे समयसे गुजर

1. इससे आगेका अंश हिन्दू, २८-१२-१९३३ से लिया गया है।

रहे हैं, तो मुझे पूरा विश्वास है कि इसका एक काफी बड़ा कारण हरिजनोंके साथ हमारा बुरा व्यवहार है। इसलिए मैं भारतकी स्त्रियोंसे कहता रहा हूँ कि वे अपने मनसे अस्पृश्यताके भूतको निकाल बाहर करें। कुछ मनुष्योंको अपनेसे नीचा समझना गलत है, पापपूर्ण है। ईश्वरकी इस धरतीपर कोई नीचा या ऊँचा नहीं है। हम सब उसीके बन्दे हैं; और जिस प्रकार माता-पिताकी दृष्टिमें उनके सभी बच्चे एक समान हैं उसी प्रकार ईश्वरकी दृष्टिमें भी उसके सभी बच्चे बराबर हैं। मैं चाहता हूँ कि आप मेरी इस बातका विश्वास करें कि धर्ममें अस्पृश्यताके लिए कोई आधार नहीं है। इसलिए मैं आपसे कहता हूँ कि आप अपने चारों ओर जो हरिजन हैं उन्हें अपने हृदयमें स्थान दें। हरिजन बच्चोंका अपने घरोंमें स्वागत करें। हरिजनोंके घरोंमें आप जायें और उनके बच्चों और उनके घरोंकी फिक्र करें, उन्हें सँवारें; हरिजन स्त्रियोंको अपनी बहनें मानकर उनसे बोलें, बात करें।

हरिजनोंका यह कार्य मुख्यतः स्त्रियोंको करना है; और मैं आशा करता हूँ कि इस स्थानकी आप हिन्दू स्त्रियाँ अपना कर्त्तव्य करेंगी। मुझे आशा है कि आपमेंसे जो बहनें अपने सारे गहने या कुछ गहने देनेकी इच्छा और क्षमता रखती हैं, वे उन्हें देंगी। भेंट देनेकी एक शर्त है। यदि आप कोई भेंट देती हैं, तो फिर वैसी दूसरी चीज आप न लें। मैं चाहता हूँ कि आप अनुभव करें कि आपने इस कार्यके लिए कोई चीज दी है; और रुपये या नोट देकर आप ऐसा अनुभव नहीं कर सकतीं। रुपये या नोट तो आपके माता-पिता या पतिसे आपको मिले होंगे। लेकिन गहने आपकी निजी सम्पत्ति हैं। जब आप अपने गहने देती हैं और आपका यह इरादा नहीं होता कि आप वैसा ही गहना अपने माता-पिता या पतियोंसे फिर बनवायेंगी, तो यह निश्चय ही आपका त्याग है। आपमेंसे जिन लोगोंने मेरे इस सन्देशकी भावनाको समझ लिया है, मैं चाहता हूँ कि वे सभी स्त्रियाँ वह निश्चित त्याग करें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-१-१९३४

४३१. विशाखापट्टमकी सार्वजनिक सभामें

२८ दिसम्बर, १९३३

स्टेशनपर मेरे उतरनेके बाद आपने मुझे मोटर गाड़ीपर बिठा कर हरिजनोंकी एक पक्तिके बीचसे गुजारा जिन्हें उस समय किसी नागरिककी उदारताके फलस्वरूप भोजन कराया जा रहा था। वह नागरिक अपनी उदारताके लिए धन्यवादका पात्र हो सकता है, लेकिन मुझे स्वीकार करना पड़ता है, कि यह कोई आत्माको प्रसन्न करनेवाला दृश्य नही था। जिस सड़कके दोनो ओर हरिजन स्त्री और पुरुष बैठे भोजन कर रहे थे उसपरसे मोटर गाडी गुजरते समय मैंने शर्मसे अपनी गर्दन झुका ली। जरा सोचिए जिस समय हम लोग सड़कपर भोजन कर रहे हो उस समय यदि कोई उद्दण्ड व्यक्ति अपनी मोटर उधरसे ले जाये तो आपको ओर मुझे कैसा लगेगा? मै वह प्रथा जानता हूँ जिसके अन्तर्गत बिरादरी-भोज दिये जाते है। जिस सडकपर भोज दिये जाते है उस सड़कपर सब प्रकारका यातायात बिलकुल रोक दिया जाता है ताकि भोजन करनेवाले अपना भोजन पूरी शान्तिके साथ कर सकें और खाना परसा जा सके। जैसा कि मै बार-बार कह चुका हूँ, शुद्धीकरणका आन्दोलन हमारे हृदयकी गहराइयो तकमे प्रवेश करता है। मैंने सवर्ण हिन्दुओसे यह नही कहा है कि वे हरिजनोके सामने उनके सरक्षकोकी भाँति आये और अपनी थालीकी जूठन उनके सामने फेके। मैंने उनसे कहा है कि वे अपने हृदय हरिजनोके लिए खोलें और उनमें उनके लिए जगह बनाये। आज जो कुछ मैंने देखा वह तो एक सरक्षकका अपने आश्रितोके प्रति किया जानेवाला काम था। और क्या आप जानते है, न केवल मेरी मोटर भोजन करते हुए लोगोकी पक्तियोके बीचसे निकाली गई बल्कि अन्य मोटरें भी पीछे-पीछे गुजरी, और उनके पीछे-पीछे आनेवाली भीड भी वहीसे गुजरी। और मैंने देखा कि उन गरीब लोगोके लिए उड रही धूलसे अपने भोजनको बचा पाना कठिन हो रहा था। कमसे-कम कहा जाये तो यह दृश्य शोभनीय नही था। इसे देखनेकी विवशतासे मुझे जो दुख हुआ उसे अब आप समझ सकते है।

मै जानता हूँ कि इस कार्यके पीछे कोई बुरी नीयत नही थी। मै यह भी जानता हूँ कि एक भी व्यक्तिको इन हरिजनोका जिन्हे कि मुफ्त भोजन दिया गया था, अपमान करनेकी इच्छा नही थी। मै यह भी समझता हूँ कि जो लोग मुझे उस सडकसे ले गये, उन्होने सोचा था कि भोजन करते हुए हरिजनोके बीचसे गुजरनेमे मुझे खुशी होगी। मै जानता हूँ कि इसमें अविचार मात्र था, और कुछ नही। जैसा कि हमे शास्त्रोमे बताया गया है, धार्मिक जीवन व्यतीत करना तलवारकी धारपर चलनेके समान है और करोडो मनुष्योमें शुद्धीकरणके इस विश्वव्यापी आन्दोलनमे एक भी अविचारपूर्ण कार्य पापका स्वरूप धारण कर लेता है। इसलिए इस हरिजन

आन्दोलनके सम्बन्धमें किया गया हमारा प्रत्येक कार्य सूक्ष्म नियम-निष्ठता, अत्यन्त सावधानी और आत्मनिरीक्षणके साथ किया जाना चाहिए। इस दृश्यको देखनेके बाद मैंने सोचा कि इसका सार्वजनिक रूपसे उल्लेख न करना मेरे लिए गलत होगा। आपका ध्यान इस ओर दिला कर मैंने आत्म-शुद्धीकरणके इस आन्दोलनमें भाग लेनेवालोंको चेतावनी दी है कि आज सुबहके इस दृश्यकी पुनरावृत्ति न होने पाये।

इसके साथ ही अब मैं आता हूँ इस विषय पर कि भारत-भरमें हम लोग आज क्या कर रहे हैं। मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है कि अस्पृश्यता हिन्दू-धर्म पर एक बहुत बड़ा कलंक है। यदि शास्त्र ईश्वरकी इच्छाका प्रतिनिधित्व करते हैं तो उनमें अस्पृश्यताके लिए कोई स्थान नहीं हो सकता, ऐसी अस्पृश्यता जिसका कि भारतके अतिरिक्त संसारमें कहीं जवाब नहीं मिलता। स्वार्थवृत्तिसे यदि हम अपनेको ऊँचा और दूसरोंको नीचा समझें तो यह स्वयंमें काफी खराब बात है। लेकिन जब हम अस्पृश्यता जैसी बुराईमें धर्मका पुछल्ला जोड़ दें तो यह बात दूनी खराब हो जाती है। इसलिए जब विद्वान पंडित आगे आकर अस्पृश्यता जैसी स्पष्ट बुराईके समर्थनमें शास्त्रोंकी दुहाई देते हैं तब मुझे दुख होता है। मैं पहले भी कह चुका हूँ, और आज फिर कहता हूँ कि हम हिन्दू लोग परीक्षाकी अवधिसे गुजर रहे हैं। हम चाहें या न चाहें, अस्पृश्यता जा रही है। यदि परीक्षाकी इस अवधिमें हम अपने पापोंके लिए प्रायश्चित करें, यदि हम अपने आपको शुद्ध बनायें और अपनेमें सुधार कर लें, तो इतिहासमें यह एक कार्य हिन्दुओं द्वारा शुद्धीकरणका एक अत्यन्त महान् कार्य माना जायेगा। किन्तु यदि समयकी गतिके प्रभावसे हमें अपनी इच्छाके विरुद्ध कार्य करने पर विवश होना पड़ा और हरिजन लोग अपने सच्चे स्वरूपको प्राप्त कर लेते हैं तो यह हिन्दुओं या हिन्दु-धर्मके लिए कोई यशकी बात नहीं होगी। लेकिन मैं इससे एक कदम आगे जाकर कहता हूँ कि यदि हम इस परीक्षामें विफल हुए तो हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जाति नष्ट हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-१-१९३४

४३२. टिप्पणियाँ

बार-बार वही प्रश्न

यह आश्चर्यकी बात है कि जहाँ-जहाँ मैं जाता हूँ, मुझसे बार-बार यही एक ही प्रकारके प्रश्न पूछे जाते हैं और ऐसे प्रश्न वे लोग भी पूछते हैं, जो या तो 'हरिजन' अथवा 'हरिजन-सेवक' पढनेवाले समझे जाते है, या मेरे उन सामान्य उत्तरोसे परिचित है, जो मै अक्सर देता रहता हूँ। किन्तु जबतक ये प्रश्न मेरे सामने आते रहेगे, मैं अवश्य ही उनपर अपने विचार प्रकट करता रहूँगा। मुझे आशा है, कि मेरे विचारोको जो पाठक जानते हैं, वे इन पृष्ठोमे मेरी इन पुनरुक्तियो पर ध्यान न देगे। उन प्रश्नोके दोहरानेकी मुझे कोई जरूरत मालूम नही पडती। उन प्रश्नोकी रूपरेखा नीचेके उत्तरोसे ही स्पष्ट हो जायेगी।

(१) मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमे किसी भी प्रकारकी बाध्यता तो हो ही नही सकती।

(२) सम्बन्धित मन्दिरके न्यासियोके, अथवा मूर्तिपूजामे विश्वास रखनेवालो और उस मन्दिरमें पूजा करनेका हक जिन्हे हासिल है, उन लोगोके विशुद्ध बहुमतकी स्वीकृतिके बिना कोई भी मन्दिर हरिजनोके लिए न खोला जायेगा।

(३) मन्दिर-प्रवेश-विधेयक या अस्पृश्यता-निवारक-विधेयकमे किसी भी तरहकी कोई बाध्यकारिता नही है। मन्दिरमे जानेके जो नियम दूसरे हिन्दुओके लिए निर्धारित है, हरिजनोके लिए भी वे ही नियम लागू होगे।

(४) अगर कोई व्यक्ति मुझे यह सन्तोष करा दे, कि जैसी अस्पृश्यता आज बरती जाती है वह 'शास्त्रविहित' है, तो मैं फौरन इस आन्दोलनको छोड दूँगा।

(५) लेकिन मेरा निश्चित विश्वास तो यह है कि वर्तमान अस्पृश्यता एक अमानुषी प्रथा है। इसकी जडमे स्वार्थपरता और जिनका दमन सरलतासे किया जा सके, उन लोगोका शोषण करनेकी इच्छा है।

(६) जैसा कि इन पृष्ठोमे खूब अच्छी तरह सिद्ध किया जा चुका है, मर्दुमशुमारी करनेवाले अधिकारी, अछूतोकी सृष्टि करते हैं।

खिलौने भेंट मत कीजिए

खिलौने आदि भेट करनेमे आन्ध्र देश सब प्रान्तोसे आगे हैं। कुछ लोग छोटे-छोटे चाँदीके प्याले देते है, कोई थाली देता है, और कुछ लोग सजावटकी कोई ऐसी चीजे भेट करते हैं जिन्हे आसानीसे एक जगहसे दूसरी जगह लेकर नही जाया जा सकता। बहुत-सी चीजे ऐसी होती है जिन्हे मै मौके पर लोगोको खरीदनेके लिए राजी नही कर पाता, और हमारे उद्देश्यके खयालसे वे कितनी ही लुभावनी क्यो न हो, लेकिन उन्हे साथ लादकर ले चलना और उनकी गिनती रखना एक तवालत

बन जाता है। इसलिए मैं आयोजन-कर्ताओंसे अनुरोध करूँगा कि ऐसी भेंटें देनेका यदि वे निषेध नहीं भी करें तो कमसे-कम उसको प्रोत्साहन भी न दें। कई जगहों पर बड़े-बड़े फ्रेम और चित्र भेंट किये गये हैं। ये बिलकुल बोझ बन जाते हैं और इन्हें बाजारमें बेचा भी नहीं जा सकता। फ्रेम तो किसी भी हालतमें भेंट नहीं किये जाने चाहिए। मैं चाहूँगा कि मेरा यह दौरा जिस गम्भीर उद्देश्यसे किया जा रहा है उसकी गम्भीरता कायम रहे, कामकी ही बातें हों, और किसी भी मामलेमें कोई बर्बादी न की जाये। मैं यहाँ कह दूँ कि थेलियाँ भेंट करते समय जहाँ तक सम्भव हो सिक्कोंकी जगह नोट ही दिये जायें। तेजीसे यात्रा करते समय, जिसमें एक दिनमें दससे पन्द्रह जगहोंका दौरा हो जाता है, रोज के-रोज रेजगारी गिनना और सही हिसाब रखना कठिन होता है। हालाँकि हिसाब-किताब रखनेवाले व्यक्ति अपने कामके प्रति समर्पित व्यक्ति हैं लेकिन उनके ऊपर बहुत ज्यादा काम रहता है और अक्सर रोजका हिसाब दुरुस्त रखनेके लिए उन्हें रातमें देर तक काम करना पड़ता है। छोटीसे-छोटी तफसीलका खयाल रखे बिना, और कार्यकर्त्ताओं और स्वयंसेवकोंके सूझ-बुझपूर्ण सहयोगके बिना अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ जैसे बड़े संगठनको अच्छे ढँगसे और कम खर्चमें नहीं चलाया जा सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-१२-१९३३

४३३. मारवाड़ी रिलीफ सोसायटी

यह सोसायटी कलकत्तेमें, सन् १९२३ में, स्थापित हुई थी। श्रीयुत हरखचन्द द्वारा भेजी हुई उड़ीसाके बाढ़-संकट-निवारणकी जो रिपोर्ट 'हरिजन-सेवक' में प्रकाशित हुई है, उसमें इस सोसायटीकी बहुमूल्य सेवाओंका उल्लेख आया है। दिल्लीसे बैजवाड़ा जाते हुए रास्तेमें उस दिन पलवल स्टेशन पर मुझसे उक्त सोसायटीके कुछ कार्यकर्त्ता मिले थे। ये लोग गुड़गाँव जिलेमें बाढ़-पीड़ितोंकी सेवा-सहायता कर रहे हैं। स्टेशन पर उन्होंने मुझे अपने कार्यकी ब्यौरेवार विवरण-पत्रिका दी और मुझसे कहा कि इसे आप पढ़ेंगे, तो मालूम होगा कि हम लोगोंने स्पृश्यों और अस्पृश्योंमें कोई भेद नहीं रखा है, बेचारे असहाय हरिजनों पर तो हमने खास तौर पर ध्यान दिया है। इस विवरण-पत्रिकामें १९ नवम्बर, १९३३ से १३ दिसम्बर, १९३३ तकके सेवा-कार्यका उल्लेख है। १४४ गाँवोंमें सोसायटीके सेवकोंने काम किया है। ४०९८ बाढ़-पीड़ितोंको इन भाइयोंने २८०९ सोड़, १८४६ कुर्ते, १२५६ घाघरे, और ८७२ मन ५ सेर अनाज बाँटा है। खुजली, फसलीबुखार, खाँसी आदिके ३०५२ [?] रोगियोंको दवा-दारू दी है। जहाँ जरूरत मालूम हुई, वहाँ मरीजोंको दूध, जौ, साबूदाना वगैरा भी दिया गया है। बाढ़से ढहे हुए मकान फिरसे बनवाये जा रहे हैं। सोसायटी वहाँ इन सात केन्द्रोंमें काम कर रही है—पलवल, [illegible], [illegible], बनचारी, होडल, हसनपुर और गुलावाद। सोसायटीको तथा उसके उक्त मानी

केन्द्रोमें काम करनेवाले नवयुवक सेवकोको मैं धन्यवाद देता हूँ। सोसायटीने जिन हरिजनो और गैर-हिन्दुओको सहायता दी है, उनके आँकडे भी विवरण-पत्रिकामे अलग दिये हुए हैं। सामान्य संकट-निवारणके समय भी, मनुष्योके बीचमे जबतक भेदभावकी यह वाहियात मनोवृत्ति कायम रहेगी, तबतक दुर्भाग्यसे इस अभागे देशमे हिन्दुओ, हरिजनो और गैर-हिन्दुओका अलग-अलग उल्लेख आवश्यक है और रहेगा।

हरिजन सेवक, २९-१२-१९३३

४३४. पत्र : मनु गांधीको

२९ दिसम्बर, १९३३

चि० मनुडी,

तेरा लम्बा पत्र पढकर प्रसन्नता हुई। तेरी याद रोज ही आती है। कुसुमसे कहना, मैं कहाँ अब तेरे कामका रह गया हूँ। मेरी सम्हाल करके तू क्या करेगी? रामनाम लेती जा जिससे शान्ति रहेगी। तू उसे राम नाम सिखाना। उसके पास राम-धुनका गान किया कर। तू तो बहुतेरे भजन गाती है। बली मौसीको मैं क्या आश्वासन दूँ? मुझे यदि फुरसत हो तो मैं उसके पास खड़ा रहूँ और घर भी चलाऊँ तथा उसे चिन्ता-मुक्त कर दूँ। पर ऐसे सम्बन्ध जम पाना अब इस जीवनमे तो सम्भव ही नही है। मृत्युके सम्बन्धमें तू जो लिखती है वह बिलकुल सच है। हम सभीको उससे भेट तो करनी ही है।

बापूके आशीर्वाद

चि० बलीबहन
मा० हरिदास वोराका मकान
हाईस्कूलके पीछे
राजकोट, सी० एस० काठियावाड

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६६४) से; सौजन्य · मनुबहन मशरूवाला

४३५. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

३० दिसम्बर, १९३३

चि० अमला,

हमें सहज बनना चाहिए। तुम्हें भी तभी पत्र लिखना चाहिए जब तुम्हारा मन हो और मैं भी जब फुर्सत हो तब पत्र लिखूं। एक भी दिन ऐसा नही जाता जब मैं तुम्हें याद नही करता। मुझे खुशी है कि तुम निरन्तर प्रगति कर रही हो। मैं चाहूँगा कि तुम अपने-आपको पूर्णतः सुरक्षित महसूस करो और घबराओ नहीं। तुम्हें मुझे अपने विद्यार्थियोंके बारेमें सब कुछ बताना चाहिए। क्या रामदास और उनकी पत्नीसे तुम्हारी भेंट अक्सर होती रहती है?

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा चल रहा है, खुराक पहले जैसी ही है।

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

४३६. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

३१ दिसम्बर, १९३३

चि० रुक्मिणी,

तेरा कार्ड मिल गया है। मैंने तुझे एक पोस्टकार्ड यात्रामें लिखा है सो तुझे नही मिला जान पड़ता है। सन्तोकका पत्र इन दिनों नही है। जमनालालजीसे मिली यह ठीक हुआ। तुझे मारवाड़ीमें बातचीत करना आ गया? हिन्दी तो बहुत ठीक हो गई होगी। मेरे साथ ओमके अलावा किसनबहन है। इसके बारेमें मैं तुझे लिख चुका हूँ कि यह प्रेमाबहनकी सखी है। मुझे सरदी बनी रहती है।

तुम दोनों को,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१५६)से।

४३७. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

कड़प्पा स्टेशन
१ जनवरी, १९३४

बा,

मैंने पिछली बार तुझे जो प्रवचन लिखा था[1] उसकी एक प्रति मुझे भेजना। तेरा पत्र आज ही मिला। मै यह पत्र मौनवारके दिन लिख रहा हूँ। मणिलालकी चिन्ता न कर। उसे तेरे पत्र भेजता हूँ। प्रागजीके कहनेसे घबरा उठनेकी कोई बात नही। दोनो प्रौढ है। यदि कोई भूल हुई होगी तो वे स्वयं ही सुधार लेगे। 'जामेजमशेद' की व्यवस्था तो मैंने की है। मथुरादासने लिखा है कि व्यवस्था हो गई है इससे मैंने इस दिशामें और कुछ नही किया। उम्मीद है अब तो तुझे वह मिलता ही होगा। फिर भी जाँच कर रहा हूँ। 'रामायण' और 'भागवत' के बारेमे तजवीज कर रहा हूँ। प्रेमलीलाबहनसे मँगवानेमे तनिक भी सकोच न करना। और फिर तुझे मँगवाना भी क्या है? जो थोडा-बहुत तुझे चाहिए वह वे लोग बडे आग्रहके साथ भेजेगे लेकिन जिस चीजकी तुरन्त ही जरूरत न हो वह मुझसे मँगवा लेना ठीक होगा। मै बन्दो-बस्त कर लूँगा। दाँतोसे खा सकती है क्या? पोटेशियम परमगनेटके पानीसे कुल्ला करती है? ठक्कर बापा इस बार मेरे साथ नही है। १५ तारीखको मिलेगें। फिलहाल मेरे साथ मलकानी है। यह भी खूब काम कर रहा है। अन्य सब लोग तो करते ही है। चन्द्रशकर ठीक रहता है। ओम, किसन अपने शरीरका बरावर ध्यान रखती है। ओमसे जितना बन पडता है मेहनत करती है। बहुत भोली और सरल है। किसन भी वैसी ही है। सुरेन्द्रके शरीरमे ताकत आ गई है। आन्ध्र प्रदेशकी मुसाफिरी ३ तारीखको पूरी होगी, बादमे मैसूर जाना होगा। मै जहाँ रहता हूँ वहाँ व्यस्तता तो रहती ही है, कुछ दिक्कते भी होती है। मेरी देखभाल तो सब लोग कर लेते है इसलिए मुझे दिक्कत कम ही होती है। मेरी छोटीसे-छोटी आवश्यकताका भी मीराबहन ध्यान रखती है इसलिए मुझे मुसाफिरीकी असुविधाएँ नही होती। यदि तू लोगोसे मुलाकात करना बन्द करेगी तभी मुझसे हर हफ्ते पत्र पा सकेगी। मै तो प्रवचन हर सप्ताह भेजा ही करूँगा। दूसरी बहनोसे जो लोग मुलाकात करने आयें उनसे ही सन्तोष प्राप्त करना। लेकिन जैसी तेरी इच्छा हो वैसा करना। यदि तू मुलाकात करना ही चाहे तब तो तुझसे मिलने आनेके लिए बहुत लोग तैयार होगे और वह मिलना चाहेगे भी। हमने जानबूझकर मुलाकात कम रखनेका रिवाज रखा है। लेकिन तेरी जो इच्छा हो सो मुझे निस्संकोच लिखना। जानकी बहन ठीक है। उसके लड़के रामकृष्णके टासिल कटवानेकी बात मै बहुत करके तुझे लिखा है।

१. २५ दिसम्बर, १९३३ को।

कमला अब खुराकपर आ गई है। किशोरलालका बुखार अभी पीछा नही छोड़ता। लेकिन चिन्ताका कोई कारण नही। मेरा मौन आजकल रविवारकी रातसे शुरू होता है। इसलिए सोमवारकी रात तक नहीं बोलना पड़ता। आज रातको ९ बजकर १० मिनट पर मौन छूटेगा। इसलिए किसीसे बात करनेका कदाचित ही समय मिलेगा क्योंकि बादमें तो सोनेका समय हो जायेगा। सवेरे तीन बजे तो उठना होता है। ब्रजकृष्णका बुखार अब उतर गया है, ताकत अभी नही आई है। हेमीबहनकी मृत्यु हो गई है। अब प्रवचन।

पिछली बार मैंने भक्तके लक्षण लिखे थे। और यह भी बताया था कि सेवा बिना भक्ति नही होती। इस बार सेवा कैसे की जाये, मैं इस पर लिखूंगा क्योंकि लोग बहुत बार यह प्रश्न करते हैं। कोई कहते है कि सेवा अमुक परिस्थितिमे ही हो सकती है। किसीका कहना है कि यदि हम अमुक अभ्यास करें तभी सेवा कर सकते हैं। ये सब तो कोरी भ्रान्तियाँ है, यह तो मैंने पिछले सप्ताह बताया था। मनुष्य चाहे किसी भी स्थितिमे हो, वह सेवा कर सकता है। हमारे पास जितनी सारी शक्ति है वह सब हम ईश्वरार्पण कर दें तो हमें पूरे अंक मिलें। जिसकी सामर्थ्य करोड़ देनेकी हो यदि वह केवल आधा करोड़ ही देता है तो उसे ५० अंक से ज्यादा नही मिल सकते, लेकिन जिसके पास एक दमड़ी मात्र है और वह दमड़ी भी देता है तो उसे शत प्रतिशत अंक मिलेंगे। इसलिए यदि तुम और तुम्हारे साथ जो अन्य बहनें है अपने सम्पर्कमे आनेवाली बहनों अथवा अधिकारियोसे अच्छा व्यवहार करती हो तो तुम सेवाधर्मका पालन करती हो। अधिकारियोंके प्रति सेवाभाव रखना अर्थात् उनका कभी बुरा न चाहना, उनके साथ विनयपूर्ण आचरण करना, उन्हें धोखा नही देना। तुम्हे नियमोका पालन करना चाहिए, और उसी तरह अपने सम्पर्कमें आनेवाली अपराधी बहनोके प्रति सगी बहनों-सा बर्ताव करना चाहिए। उनपर तुम्हारे प्रेमकी छाप पड़े। वे तुम्हारी पवित्रताको पहचाने, यह भी सेवा धर्मका पालन करना कहा जायेगा। दोनोंमे उद्देश्य शुद्ध होना चाहिए। स्वार्थ बुद्धि अथवा भयके कारण अच्छा व्यवहार रखना सेवामें नही गिना जाता। एक मनुष्य अमुक कार्य स्वार्थ साधनेके लिए करता है और दूसरा परमार्थकी दृष्टिसे करता है, ऐसा हम अनेक बार देखते हैं: जहाँ सब कुछ ईश्वरको समर्पित है वहाँ स्वार्थको कोई स्थान नहीं है। इस तरह सेवा करनेवाला नित्य अपनी शक्तिमे वर्धन करता है। वह जो अभ्यास करता है, उद्यम करता है, वह भी सेवाभावसे ही करता है। इस तरह जो सेवा परायण रहता है, उसके हँसने-खेलने और खाने-पीनेमें भी सेवा भाव रहता है। तात्पर्य यह कि उसके सब कार्य निर्दोष होंगे। ऐसे भक्तोंको ईश्वर समस्त आवश्यक शक्ति प्रदान करता है। इस आशयके तीन श्लोक स्त्रियोंकी प्रार्थनामें हैं, वे याद होंगे। वे श्लोक ये रहे।

अनन्याश्चितयंतो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥[1]

१. भगवद्गीता, अध्याय ९, २२।

मच्चिता-मद्गतप्राणा बोधयंतः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यंति च रमन्ति च।।[1]
तेषां सतत युक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयांति ते।।[2]

इसका अर्थ अनासक्तियोगमे से देख लेना। ये श्लोक तुम्हे नवें और दसवे अध्यायमें मिल जायेंगे। 'गीता'का अध्ययन हम इसलिए करते है ताकि हम उसके अनुरूप आचरण करे। यह याद रखना चाहिए। मैंने उपर जो लिखा है वह 'गीता' के आधारपर ही लिखा है, ऐसा समझना। सबको

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृष्ठ ४-६

४३८. पत्र : प्रभावतीको

१ जनवरी, १९३४

चि० प्रभावती,

तेरे पत्रका उत्तर मैं जल्दी न दे पाया। समय तो मुझे सवेरे तीन बजे मिलता है वह अथवा जो ट्रेनमे मिल पाता है सो। यह पत्र मैं ट्रेनमे लिख रहा हूँ। जबतक तेरा स्वास्थ्य सुधर नही जाता तबतक तो और कोई सवाल ही नही उठता। पिताजीके पास यदि पैसेकी सुविधा हो तो उनसे मदद माँगनेमे संकोच नही करना चाहिए। उनकी स्थिति फिलहाल कैसी है सो मैं नही जानता। तुझे उनसे स्पष्ट बात कर लेनी चाहिए। पिताजीकी आर्थिक स्थितिको जाननेमे सकोचकी कोई बात नही। यदि वह कुछ मदद देनेकी स्थितिमे न हों तो मुझे लिखना, मैं तुरन्त कोई-न-कोई बन्दोबस्त करूँगा।

उपर्युक्त अंश ट्रेनमे लिखा गया था, अब अधूरे पत्रको पूरा करता हूँ।

उम्मीद है, जयप्रकाशको उपचारसे लाभ हो रहा होगा। तुम दोनोके खर्चेका क्या बन्दोबस्त हुआ, यह तो तुमने लिखा ही नही। कर्जके सम्बन्धमें क्या किया, सो भी नही बताया।

मेरी तबीयत अच्छी रहती है। खुराक पहले जैसी है। वजन तो नही लिया लेकिन मैं समझता हूँ इसमे अवश्य कुछ वृद्धि हुई होगी। मीराबहन ठीक है। वह तो मेरी सेवाके अलावा और कुछ नही करती, सभाओमे भी नही जाती। ओम और किसन उसकी मदद करते हैं। कभी-कभी वे दोनो सभाओंमे आती है। किसन

१ और २. भगवद्गीता, अध्याय १०, ९ और १०। देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ २८४।

ठीक होती जा रही है। रामनारायणकी तबीयत अच्छी जान पड़ती। जबतक हो सकेगा तबतक वह गाड़ी खींचेगा।

बा के पत्र आते हैं। रणछोड़भाई[1] की पुत्री रमाका विवाह हो गया है। वह और उसका पति मुझे एल्लोरमें मिल गये थे और आशीर्वाद ले गये। मणिबहनकी कोई खबर नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४३८) से।

४३९. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१ जनवरी, १९३४

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारा पत्र आना चाहिए था सो नही आया। मैंने लम्बे पत्र लिखे है वे मिले होंगे। बा जेलमे बैठी-बैठी तुम्हारी बड़ी चिंता किया करती है। प्रागजीने कुछ बाते की जिससे वह घबरा गई है। बा मानती है कि तू, मणिलाल, सभीके साथ झगड़ा कर बैठा है। पर मै ऐसा कुछ नहीं मानता। यह तो सिर्फ बा लिखती रहती है इसलिए लिखता हूँ। बा की इच्छा है कि मै उसीके शब्द लिखूँ। वह जेलमे पड़ी है और एक पत्र लिख सकती है इसलिए उसके पागलपन भरे विचार हो तो भी उनका अमल कर लेनेकी मेरी इच्छा रहती है, इसीलिए मै लिख रहा हूँ।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है। सारा ब्यौरा 'हरिजन'मे तो आता ही है।

नानाभाई बीमार बने ही रहते हैं। किशोरलालको बुखारने घर दबाया है सो छोड़ता ही नही है। मै समाचार प्राप्त करता रहता हूँ। कुछ ही दिनोमें ठीक हो जायेगा ऐसा मानता हूँ।

सन्तोककी माँ गुजर गई है। काशीकी बहन हेमी भी गुजर गई है। देवदास ठीक है और छूटनेके बाद लक्ष्मीकी जचकीके लिए मद्रास जायेगा।

वहाँके झगड़ेके सम्बन्धमें अब मुझे कुछ भी लिखना शेष नही है।

बा के पत्रकी नकल ओमने की है। इसलिए असल प्रति तुझे ही भेज देता हूँ वरना उसे रामदासको भेजनेका विचार किया था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८१३) से।

१. रणछोड़लाल सेठ, अहमदाबादके मिल-मालिक।

४४०. पत्र : पेस्टनजीको

१ जनवरी, १९३४

भाई पेस्टनजी,

आपके वारेमें काका साहबने मुझे एक खास पत्र लिखा था। आप जो मेरे पास आ जाये तो मुझे जरूर अच्छा लगेगा। यदि भ्रमण आपको रुचता हो तो सारी मुसाफिरी मेरे साथ घूमे। हमारी रहनी तो सादगी पूर्ण ही होगी। तीसरे दर्जेमे यात्रा करते है। काम तो रात-दिन बना ही रहता है। मजदूरी भी करनी ही पडती है। भोजन और निवासके लिए जैसा कुछ मिल पाता है उसीसे चलाना होता है। यदि आपका शरीर अच्छा कसा हो और रहनी सादी हो तो आपको रुचेगा। आपकी हिम्मत हो तो आप आ जायें और अनुभव ले जाये। आपके जैसे कुशल और निखालिस प्रकृतिके नवयुवकको अपने पास खीचना मै अवश्य चाहूँगा। यदि आयें तो तार कर दे। हम लोग सात-एक दिन मैसूर स्टेटमे दौरा करनेवाले है। अत· यदि आप आये तो बंगलौरका टिकट ले। बंगलौरमे आपको समाचार मिलते जायेगे कि मै दौरेपर कहाँ हूँ। मुझे बगलौर ही तार दे। मै जहाँ भी होऊँगा, तार मिल जायेगा। और मै बन्दोवस्त कर ही लूँगा। और आपको बंगलौर स्टेशनपर कोई मिल जायेगा। कदाचित् तार न भी मिले पर तो भी आपको कोई अडचन नही होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकलसे (जी० एन० ८०४६)।

४४१. पत्र : सुरेन्द्र मशरूवालाको

१ जनवरी, १९३४

चि० सुरेन्द्र,

तू रो पड़ा था और मारके डरसे पीछे बम्बई गया, यह मुझे मालूम हुआ। इसमें घवराने या शरमानेका कोई कारण नही है। सत्रह-अट्ठारह वर्षकी उम्र तक मैं कितना डरपोक था यह तो तूने पढा ही है। पर मेरी इतनी सलाह जरूर है कि तू शरमके मारे जेल मत जाना। इस बार तो कुछ ही लोगोको बार-बार जेल जाना है। तुझे यदि अपने मनको परखना हो तो अच्छी तरह परखकर, वापस घर जाना चाहता हो तो जा। वही सेवा कर और फिर जब तुझे ईश्वर प्रेरणा दे और पूरी हिम्मत भी, तब जाना। इतना निश्चित समझ कि जो सब-कुछ ईश्वरको समर्पित

कर देता है उसे भार सहन करनेकी शक्ति भी ईश्वर देता ही है। पर ऐसी हिम्मत बुद्धिके जरिये नहीं मिल पाती। यह तो ईश्वरकी प्रसादी है और वह उसके भक्तोंको मिला ही करती है। तुझे जैसा सहज-सुगम लगे वैसा करना; मुझे पत्र देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५२७) से; सौजन्य: मनुबहन मशरूवाला

४४२. पत्र: विद्या आनन्द हिंगोरानीको

१ जनवरी, १९३४

चि० विद्या,

तुमारा खत मिला। मैंने तुमको खत लिखा है उसका उत्तर नहिं है। शायद बादमें मिली होगी।

मुझे तो विश्वास था ही कि काकाजी तुमको उत्तर देंगे और अच्छा देंगे।

यदि कराची जाना है तो दिनकी मुसाफरी अवश्य अकेली करो। डर किसीका मत रखो। विश्वास रखो कि ईश्वर रक्षा करनेवाला है। मैं तो तुमको निर्भय, उद्योगी, सबसे मिलनेवाली और शरीरमें मजबूत देखना चाहता हूं। और यह सब तू बन सकती है उसमें मुझे संदेह नहिं है।

महादेव कैसे है? दूध कितना पीता है? अब तकलीफ देता है? उसे घूमनेके लिए ले जाती है?

आनंदके क्या खबर है? अभ्यास क्या करती है। हिंदी पुस्तक नित्य पढ़ो। इंग्रेजी भी जितना हो सके किया करो।

बापुके आशीर्वाद

मुल्तान तुमारे नजदीक है। देवदासको मिलोगी तो अच्छा होगा। लेकिन तुमारा दिल चाहे तब ही मिलो। न्यु सेंट्रल जेलमें है। सोम, किसन मजेमें है।

पत्रकी माइक्रोफ़िल्मसे; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द टी० हिंगोरानी

४४३. पत्र : लक्ष्मी गांधीको

१ जनवरी, १९३४

चि० लक्ष्मी,

यद्यपी मैं बहूत बात तो न कर सका तो भी तुमारे मेरे साथ तीन दिन रहनेसे मुझे सतोष हूआ। तुमारी गमगीनी दूर होनी चाहिये। बा का खत आया है उसकी नकल भेजता हूं। पढ सकती है तो पढकर देवदासको भेजो।

पापा[1] से कहो मुझे लिखे। अण्णा[2] के लिये खत[3] साथमें है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २००३) से।

४४४. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१ जनवरी, १९३४

चि० ब्रजकृष्ण,

यह क्या बात? एक तार मिला पीछे खत नहिं। तार संतोषजनक था इसलिये मैंने तो मान लिया है कि अब तो बुखार बिलकुल नहिं होगा; लेकिन मुझे सब हकीकतके साथ पत्र चाहिये। अगर इसके पहले कुछ नहिं लिखा है तो एक तार भी भेजो। बैंगलोर भेजनेसे ठीक होगा। बैंगलोर सिटी करो। हम सब अच्छे है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४०५) से।

१. लक्ष्मी गांधीकी बहन।
२. लक्ष्मी गांधीके पिता च० राजगोपालाचारी। उनको लिखा पत्र उपलब्ध नहीं है।
३. पत्र उपलब्ध नहीं है।

००५. वल्लभभाई पटेलको

कड़प्पा (आन्ध्र)
२ जनवरी, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आज इस समय ३ बजकर २० मिनट हुए हैं। दातुन करनेके बाद तुम्हारा स्मरण कर रहा हूँ। इस तरह उठनेसे लिखनेमें बहुत शान्ति मिलती है। दिनमें तो सोता ही हूँ। आजके दिन भी दौरेसे छुट्टी है। तुम चिन्ता न करना। मेरा स्वास्थ्य अच्छा ही रहता है।

और चूंकि तुम अपने बारेमें कुछ नही लिखते इससे ऐसा लगता है कि कही तुम मुझसे कुछ छिपाते हो। ऐसा न करना।

बा को मेरी ओरसे हर सप्ताह नियमपूर्वक पत्र जाता है और जाता रहेगा। उसकी माँगके मुताबिक ('गीता' पर) प्रवचन भेजता हूँ, ठीक उसी तरह जिस तरह यरवडा मन्दिरसे भेजा करता था।

महादेव अब एक ही पत्र लिख सकता है और एक ही प्राप्त कर सकता है और एक पत्रमें अनेक पत्रोंको खपानेकी कोशिश करता है। उसे जीवणजीकी मार्फत पत्र मिलेंगे। उसकी अच्छी परीक्षा हो रही है। इसमें भी एम० ए० की डिग्री हासिल करेगा। वह 'गीता' के अनुवादमें जुटा हुआ है।

किशोरलालके बारेमें तो तुम जानते ही हो। वह अभी भी बुखारका पीछा नही छोड़ता। अब उसने ही नाथ[1], स्वामी और गोमतीकी समिति नियुक्त की है। ये तीनों लोग जैसा कहेंगे वह वैसा ही करेगा।

बा का पत्र कल आया। उसकी नकल ओमने की है। एक तुम्हे भेज रह हूँ। ओम अत्यन्त चंचल लड़की है। उसमें झटपट चीजें सीख लेनेकी हौस भी है। शुद्ध हृदय की है इसलिए तरक्की कर रही है। किसन का स्वास्थ्य गडबड़ा गया है। नही तो वह भी खूब काम करनेवाली है। सादी तो दोनो ही हैं। दोनों खूब घुल मिल गई हैं। कल राधाकान्त मालवीय आये थे। वह बर्फमे दूध संरक्षित करनेकी योजना लाये है और उसमें मेरा सहयोग चाहते है। ऐसे उपक्रममे मेरे सहयोगकी अपेक्षा रखना रेतसे मक्खन निकालना है। ये विलायत जाकर अनुभव प्राप्त कर लौटे है, यह बात तो तुम्हें मालूम ही होगी।

मलकानी खूब मेहनत कर रहा है। ठक्कर बापाकी स्थान-पूर्ति कर रहे हैं। सारा स्टाफ पूर्ण सन्तोष देनेवाला हैं। अभीतक तो काम अच्छी तरहसे चल रहा है।

१. केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवालाके गुरु।

. . .[1] अपने दाँत दिखाने लगा है . . .[2] पर ठीक कब्जा प्राप्त कर लिया है। अब बहनोको हिस्सा नही देना चाहता . . [3] तीनोको दिया हुआ मुख्त्यारनामा रद करवाकर नया अपने नाम ही करवा लिया है। इसपर मैंने उलाहना दिया। उसने मुझे उडता-सा उत्तर दिया है। अब मैंने नानालालको लिखा है। इसका कुछ परिणाम निकलेगा, ऐसा नही लगता।

आनन्दी, बाबलो, बबु, मोहन, वनमाला, बचु और अमीनाके बच्चे अच्छी तरक्की कर रहे है। रामनारायण पाठक[4] हर हफ्ते तीन घटे देते है। जमनादास (गाधी) दुबला-पतला रहता है। वह परेशान भी लगता है। सन्तोककी माँके देहावसानकी बात तो मै तुम्हे लिख ही चुका हूँ न? प्रभुदास अपने श्वसुरके गाँवके आसपास कही खादी कार्यमे लग जायेगा। अल्मोडामे रहते हुए बहुत ज्यादा खर्च बढ जानेकी सम्भावना है।

इस तरह आज जो-कुछ याद आता रहा सो पारिवारिक बजटका ब्यौरा देनेके बाद मैं इस पत्रको समाप्त करता हूँ। मैं मणिको पत्र तो लिखता हूँ लेकिन उसका हाल कही महादेव जैसा तो नही होगा? तुम्हे इसके बारेमें कुछ मालूम हो तो मुझे लिखना।

तुम दोनोको अथवा सबको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ५७-९

४४६. पत्र : मणिबहन पटेलको

कड़प्पा[5]
सवेरे ४ बजेकी प्रार्थनासे पहले
२ जनवरी, १९३४

चि० मणि,

मुझे तेरी ओरसे पत्र सीधे ही मिला करेगे अथवा नही यह प्रश्न ही है। सरदारके जरिये तेरी खबर मिलती रहती है लेकिन मुझे उतनेसे सन्तोष नही होता। इससे डाह्याभाईको लिखता हूँ। तू लिख सके तो लिखना। शरीर और मनको स्वस्थ रखना। मै ठीक चल रहा हूँ। बा को हर हफ्ते नियमपूर्वक और लम्बा पत्र लिखा करता हूँ। आज तो सिर्फ इतना ही।

१, २ और ३. साधन-सूत्रमें नाम नही दिये गये है।
४. एक गुजराती लेखक, उस समय गुजरात विद्यापीठके प्रोफेसर।
५. साधन-सूत्रमें "कडका" लिखा हुआ है।

पत्र वर्धाके पतेपर लिखना।

बापूके आशीर्वाद

श्री मणिबहन पटेल, कैदी
हिंडलगा सेन्ट्रल प्रिज़न
बेलगाम

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १६

४४७. पत्र: अमतुस्सलामको

२ जनवरी, १९३४

प्यारी बेटी,

मुझे अंग्रेजीमें लिखना होगा, क्योंकि जो कुछ क्षण मैं निकाल सकता हूँ उसीमें लिखना होगा। मैं लिखूँ और तुम्हें खत न मिले, तो मुझे दोष नहीं देना चाहिए। पर कोई खत तुम्हें अगर न मिला, तो उसमें तुमने कुछ गँवाया नही है। मेरा सफर इतनी तेजीसे चलता है कि किसीका भी कसूर न होते हुए भी मेरे कुछ पत्र लापता हो जायें तो कोई आश्चर्य नहीं। लेकिन अगर मैं लिखता नहीं हूँ, तो इसका मतलब यह नहीं कि मैं तुम सबको बराबर याद नही करता हूँ। जरूर करता हूँ। परन्तु समयकी कमीके कारण मैं बहुत थोड़ा लिखता हूँ और इसलिए भी कि दूसरोंको लिखनेका मौका मिल सके। मैंने किसी एकको खत लिखा तो वह सबको लिखा हुआ गिना जाना चाहिए।

जबतक तुम लोग रिहा होगी, मैं भारतके धुर दक्षिणी भागमें सफर कर रहा होऊँगा। सिर्फ मुझसे मिलनेके लिए इतनी दूर तक तुम्हें आना ठीक लगता हो तो जरूर आओ। मेरी तुम्हें जोरदार सलाह तो यह होगी कि तुम संयमसे काम लो और जो भी बात करनी हो वह पत्रोंके जरिये करो।

अलबत्ता, तुम्हें अपनी अम्मासे और नारणदाससे भी मिलना चाहिए। दोनों नजदीक ही हैं। लेकिन अन्तिम निर्णय तो तुम्हे करना है। मैं तुमको जो सलाह दे रहा हूँ वही सबके लिए है।

तुमने इतना अच्छा स्वास्थ्य रखा है, इसकी मुझे खुशी है।

बेलनबहन और दुर्गाबहन तथा लीलावतीकी भी खबर मिली है। रिहाई होनेपर वे सब मुझे लिखें। उम्मीद करता हूँ कि तुम सबने अपने समयका सदुपयोग किया होगा।

मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा है। आखिरी वजन १०८ पौंड था। मेरी खुराक है दूध, संतरे और बिना नमककी सादी उबाली हुई एक सब्जी। जब आसानीसे

मिल जाये तो दूसरा फल भी लेता हूँ। वह या तो ताजे अंगूर या अनार। सामान्य तौरपर आजकल मैं खजूर नही लेता। मुझे उनकी जरूरत भी महसूस नही होती। मेरा काम भोर मे ३ बजे शुरू होता है और अक्सर रातको ९ बजे पूरा होता है। हाँ, दोपहरमें थोड़ी-सी नींद लेनेका प्रयत्न रहता है।

तुम्हारी हिन्दी और गुजरातीका लेखन खराब नही है। उम्मीद करता हूँ कि रमजानके रोजेसे तुम कमजोर नही हुई होगी। क्या अमीना भी कर रही है? उससे कहना कि उसके बच्चोके बारेमें समाचार मुझे अक्सर मिलते रहते है। और वे मजेमे हैं। अभी-अभी उनके उर्दूके उस्तादकी रिपोर्ट मुझे मिली है।

तुम सबको प्यार।

बापू

[पुनश्च :]

ओम और किसन मेरे साथ है, और मजेमे है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २८९) से।

४४८. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२ जनवरी, १९३४

प्रिय सतीश बाबू,

आपके ३० दिसम्बरके पत्रसे मुझे बहुत राहत मिली है। आपको जो धन मिला है उसका उद्देश्य आपकी तंगीको कुछ दूर करनेका था। आपको अधिकसे-अधिक इतना ही दिया जा सकता था। मै आशा करता हूँ कि आपके कार्यकर्त्ता अपने कार्यमें सफल होगे। यह बहुत ज्यादा थकाने और खिझानेवाला काम है। कार्यकर्त्ता लोग जितने हर्षपूर्वक चेक और रुपये स्वीकार करते है उतने ही हर्षपूर्वक उन्हे गालियाँ स्वीकार करनेके लिए भी तैयार रहना चाहिए।

यह विचार मुझे पसन्द आया कि डा० राय मेरे दौरेका कार्यक्रम खुद तय करे। आजके अखबारोसे मालूम हुआ कि उनके साथ कोई गम्भीर दुर्घटना हो गई है। उम्मीद है दुर्घटना उतनी गम्भीर नही है जितनी कि बताई गई है। मैंने तार तो दिया है लेकिन आप मुझे पूरा ब्यौरा भेजियेगा।

मुझे खुशी है कि आपका जो वजन घट गया था वह अब फिर पूरा हो गया है। लेकिन आपकी काठीको देखते हुए १२८ पौंड काफी नही है। कोई कारण नही कि आपका शरीर पहले जैसा सुन्दर और सुगठित न हो। शरीरको ईश्वरका साधन मानकर स्पष्ट और आवश्यक सीमाओंके भीतर जहाँ तक हो सके वहाँ तक उसे स्वस्थ बनाये रखना आपका कर्तव्य है।

आशा है कि अरुण[1] ठीक चल रहा है। बंगालकी यात्राके दौरान उसे मेरे साथ रहना होगा। लेकिन यदि उसका स्वास्थ्य खराब हुआ तो उसे ऐसा नहीं करने दिया जायेगा।

सस्नेह

बापू

[पुनश्च:]

'हरिजन' के बंगला संस्करणका क्या हुआ?[2]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२६) से।

४४९. पत्र : दूधाभाई मालजी डाफडाको

२ जनवरी, १९३४

भाई दूधाभाई,

तुम्हा पत्र मिल गया है। ईश्वरकी कृपासे सब कुछ ठीक हो जायेगा। लक्ष्मी[3] को बच्चा होनेवाला है यह तो मैंने कल ही जाना। मैंने सलाह दी है कि यदि कु० मंजुकेशा बहन जवाबदारी लेती हो तो लक्ष्मीको प्रसूतिके लिए बारडोली जाना चाहिए। अन्यथा अहमदाबादके वाडीलाल अस्पतालमें करना चाहिए। वहाँ सारी सुविधाएँ हैं। और आश्रमकी बहनें भी हैं जो ध्यान रख सकेंगी। इस सम्बन्धमें तुमको कुछ कहना या सुझाव देना हो तो मुझे सूचित करना। मारुति[4] और लक्ष्मीका पत्र आनेपर मैं भी निश्चय कर पाऊँगा। मैंने व्यवस्था की है कि तुम्हें 'हरिजन-बन्धु' मिलता रहे। यदि न मिले तो तुम मुझे लिखना। सुन्दरजीभाई क्या मदद किया करते थे? उनका पता देना। मैं सब भूल गया हूँ। साबरमती हरिजन-आश्रममें कन्याश्रम चलता है। उसमें लड़कियाँ भेजोगे? यदि तुम तैयार हो तो मैं पता चलाऊँ। कदाचित् भरती करेंगे। सारे बच्चोंको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

श्री दूधाभाई मालजी
हरिजन शिक्षक
साथरा, भावनगर स्टेट
काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२५१) से।

१. सतीशचन्द्रका पुत्र।
२. चूँकि बंगला *हरिजन* अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो सकता था, इसलिए गांधीजीने सतीशचन्द्रको सुझाव दिया था कि वह उसका प्रकाशन रोक दें।
३. दूधाभाईकी पुत्री जिसको गांधीजीने हरिजन-आश्रममें पाला था।
४. लक्ष्मीके पति।

४५०. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्ताको

२ जनवरी, १९३४

चिरंजी हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला। खादी भी रामके अधीन है। खादीमे राम होगा तो चलेगी और हममें राम होगा तब ही खादी में बसेगा। इसलिये हम खादीके लिये सब प्रयत्न करें लेकिन चिंता न करे। चिंता राम करेगा। चिंता करनेका अधिकार उनका है सेवा करनेका धर्म हमारा है। जितनी चिंता कम करेगी इतनी सफलता ज्यादा मिलेगी। लेकिन निष्फलतामें भी मैं तुमारे चेहरेपर प्रसन्नता ही देखना चाहता हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०६) से।

४५१. भेंट : हरिजन कार्यकर्ताओंसे[1]

कडप्पा

२ जनवरी, १९३४

गांधीजी : हरिजन आन्दोलन बुराईकी जड तकको छूता है। यदि अस्पृश्यता दूर हो जाती है तो हमे आज जो जातियाँ दिखाई देती है वे भी खत्म हो जायेगी।[2]

हरिजन कार्यकर्ता : निश्चय ही नहीं।

मै तो अस्पृश्यताके उग्र रूपकी बात कर रहा हूँ। लेकिन यह बुराई इतनी फैली हुई है कि यह किसी-न-किसी रूपमे सारे हिन्दू समाजमे व्याप्त है और उसे दूषित बना रही है। ऊँच-नीचका भेद ही अस्पृश्यताका मूल कारण है। यदि अस्पृश्यताका उग्र रूप नष्ट हो जाता है तो बची-खुची अस्पृश्यता भी अवश्य तिरोहित हो जायेगी। यदि ऐसा नही होता तो हमारा आन्दोलन केवल छलना-मात्र सिद्ध होगा। जबतक लोगोके दिलोसे ऊँच-नीचका विचार दूर नही हो जाता तबतक अस्पृश्यताको दूर हुआ नही कहा जा सकता।

हरिजन कार्यकर्त्ता : तब उस वर्णका क्या होगा जिसकी आप बहुत वकालत करते है?

गांधीजी : मै उसकी वकालत तो अवश्य करता हूँ लेकिन तब आपको यह जानना चाहिए कि मेरी उसकी परिभाषा क्या है। वर्ण-धर्मकी मेरी परिभाषा वर्तमान

१. इसे चंद्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" मेंसे लिया गया है।

२. एक हरिजन कार्यकर्त्ताने गांधीजीसे पूछा था कि क्या वे जाति-प्रथाको कायम रखनेके पक्षमें है।

जातिप्रथासे उतनी ही भिन्न है जितनी कि खड़िया मिट्टीसे पनीर भिन्न है। वर्णधर्म, जैसा कि मैं उसे समझता हूँ, एक आर्थिक नियम है, जो बराबर चालू है, भले ही हम इसे जानते हों या न जानते हों। इसके अनुसार चलनेसे मानव समाजका कल्याण होगा। इसकी अवहेलनाके कारण ही आज सारे संसारमें समाज-व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो रही है। वर्णधर्मका सिद्धान्त "जिसकी लाठी उसकी भैंस"के सिद्धान्तसे ठीक उल्टा है। यह ऊँच-नीचके सब भेदोंका निराकरण करता है।

हरिजन कार्यकर्त्ता : लेकिन वर्णका जो अर्थ आप लगाते हैं वह अर्थ तो और कोई नहीं लगाता?

गांधीजी : ऐसा हो सकता है। मनुष्यके विचारोंका विकास ही वास्तवमें शब्दोंके अर्थका विकास है। जिस मूल मन्त्रसे वर्णधर्मके सिद्धान्तकी व्युत्पत्ति हुई है उनमें और 'गीता' के जिन श्लोकोंमें उसका उल्लेख हुआ है उनमें भी यही अर्थ देखनेमें मुझे कोई कठिनाई नही होती। अन्तर्जातीय भोज और विवाह-सम्बन्धी नियमोंका वर्णसे कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है। वर्णधर्मका मुख्य लक्षण धन्धा है।

हरिजन कार्यकर्त्ता : तब तो आप चाहेंगे कि हर व्यक्तिको केवल अपने बाप-दादोंका धंधा करना चाहिए।

गांधीजी : न तो मैं और न कोई अन्य व्यक्ति ही किसी पर कोई प्रतिबंध लगा सकता है। वर्ण धर्म कोई मनुष्यका बनाया हुआ अपना कानून नहीं है जिसे वह जब चाहे लागू करे और जब चाहे उसे ढीला कर दे। मनुष्यकी उन्नत अवस्थामें यह सहज हो जाता है। वह चाहे तो उसकी अवहेलना कर सकता है लेकिन इससे उसको ही नुकसान होगा। हर कोई इसका पालन करने अथवा अवहेलना करनेके लिए स्वतंत्र है। इसकी खोज भारतमें की गई थी और लोग ज्ञानपूर्वक तथा कमोवेश ईमानदारीके साथ शताब्दियोंसे इसका पालन करते आये हैं। अभी भी अधिकांश लोग अज्ञानपूर्वक और लाचारीवश इसका पालन कर रहे हैं। वर्णधर्मके अनुसार ब्राह्मण और भंगी दोनों एक समान हैं। एक भंगीको भी, यदि वह अपना काम स्वेच्छासे और ईमानदारीके साथ करता है, ईश्वर प्यार करता है, और एक ब्राह्मण भी चाहे वह कितना भी विद्वान क्यों न हो, यदि वह अपना धंधा नहीं करता तो ईश्वर उससे नाराज हो जाता है। कानून अधिकार प्रदान नहीं करता, बल्कि वह कर्त्तव्योंकी व्याख्या करता है, कानूनका ठीक ढंगसे पालन करने और उसे यथोचित रूपसे मान्यता प्रदान करने पर ही सच्चे लोकतंत्रका विकास हो सकता है। इसलिए मेरे विचारसे, वर्णधर्ममें कोई बुराई नहीं है। हाँ, एक वर्णको दूसरे वर्णसे उच्च माननेमें बुराई है।

हरिजन कार्यकर्त्ता : निश्चय ही आप जिस वर्णधर्मकी बात करते हैं वह आपकी कोरी कल्पना मात्र है। जबकि ठोस सत्य तो यह है कि हम अपने चारों ओर सैकड़ों जातियाँ देखते हैं और हर जाति किसी दूसरी जातिसे उच्च होनेका दावा करती है।

गाधीजी . दुर्भाग्यसे आप जो कहते है, वह ठीक है। लेकिन मैने तो केवल आपके प्रश्नका उत्तर दिया है और जाति तथा वर्णधर्ममें जो महत्त्वपूर्ण अंतर है सो बताया है। जातियाँ तो मनुष्यकी बनाई हुई हैं और ये दिन-व-दिन कमजोर पड़ती जा रही है और नष्ट होकर रहेगी। और मैंने जिस वर्णधर्मकी व्याख्या की है वह भले ही मेरी कल्पनाकी उपज हो लेकिन व्याख्या इसकी काल्पनिक नही है। जिस मंत्रके आधार पर इसकी कल्पना की गई है, वह व्याख्या उसमे निहित है और 'गीता' मे भी बहुत स्पष्ट शब्दोमे इसका उल्लेख किया गया है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१-१९३४

४५२. भाषण : कड़प्पाकी सार्वजनिक सभामें

२ जनवरी, १९३४

कड़प्पामें गांधीजीको जो मानपत्र,[1] थैली और उपहार भेंट किये गये उनको स्वीकार करते हुए गांधीजीने कहा कि कड़प्पा नगरपालिकाने अपने यहाँ काम करने-वाले हरिजनोंके लिए सुन्दर घर बनाये है। हरिजन लोग इन घरोंको साफ और सुथरा रखते है। उन्होंने कहा कि मुझे यह देखकर खुशी हुई है कि उनकी बस्तीमें एक सहकारी समिति, एक मंदिर और जलकी पर्याप्त सुविधाएँ है।[2]

यह स्थान देखने योग्य है। मैं नगरपालिकाको नगरके अत्यत उपयोगी सेवकोकी खातिर इस तरहके मकानोकी व्यवस्था करनेके लिए बधाई देता हूँ; अपनी इस यात्राके दौरान मैंने ऐसे मकान अन्यत्र नही देखे है। मेरी इच्छा है कि अन्य नगरपालिकाएँ भी आपका अनुकरण करे।

गांधीजीने तब सभामें उपस्थित लोगोंसे अनुरोध किया कि हरिजनोंकी स्थितिको बेहतर बनानेके लिए आप लोग मेरे साथ पूरे मनसे सहयोग करें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-१-१९३४ और हरिजन, १२-१-१९३४

१. ये मानपत्र नगरपालिका, दलित वर्ग संघ और जिला बोर्डकी ओरसे दिये गये थे।
२. निम्नलिखित अनुच्छेद हरिजन से लिया गया है।

४५३. पत्र : जमनालाल बजाजको

[३ जनवरी, १९३४][1]

चि० जमनालाल,

कलकत्तेसे लिखा तुम्हारा पत्र मिल गया। लेकिन उससे यह नहीं समझ सका कि तुम सतीशबाबूसे मिले या नही। मिले तो होगे। यह भी नहीं लिखा कि तुम्हारी तबीयत कैसी रहती है। अब लिखना। शिवप्रसाद बच गये, यही बड़ी बात समझनी चाहिए। यात्रा ठीक तरह चल रही है। मेरा शरीर सोचा था, उससे ज्यादा काम दे रहा है। इसलिए चिन्ता करनेका जरा भी कारण नही है। ओमकी गाड़ी ठीक चल रही है। वह ऐसी नही है जो किसीको अपने लिए चिन्ता करने दे। मंत्री-पदके लिए धीरे-धीरे तैयार हो रही है। इतनी जागरूकता अभी नही आई कि मुझे पूरा सन्तोष हो, परन्तु शरीरको खतरेमें डालकर उसके पीछे पड़ना नही चाहता। आसानीसे जितना काम कर सकती है, उतना ही लेता हूँ। किसन मेरे साथ है, यह तो तुम जानते ही होगे। बहुत भली लड़की है। ओमके साथ खूब घुल-मिल गई है। इसका शरीर जेलमें छीज गया, नही तो अच्छी मजबूत थी और मन चंचल था। यात्रासे उसको फायदा हुआ मालूम होता है। इस बार मेरे साथ मलकानी है। इनके विषयमे तो पूछना ही क्या। मेहनत कर रहे हैं। दामोदर ठीक काम दे रहा है। वह मँजा हुआ है। अन्त्यज खातेसे रुपये दिल्ली भेजने थे, सो भेज दिये क्या? गोशीबहनको प्रतिमास कुछ भेजते रहना होगा। वह भी किसी खातेसे निकाल कर देना। मथुरादास जितने कहे, उतने देना। बम्बईसे पूरी रकम उनको मिलनी चाहिए थी, परन्तु उन लोगोने नही दी। अब मैं पत्र-व्यवहार करूँगा, परन्तु इस बीच उसे रुपया अवश्य मिलना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बुधवार, सुबह प्रार्थनाके पूर्व

जानकीबहन तुम्हारे क्रोधके बारेमे लिखती है सो क्या बात है? उसमे तथ्य हो तो उसे निकाल देना। ओमसे पूछा तो वह भी कहती जरूर है कि मदनमोहन को भी तुम कभी-कभी रुलाते हो।

तारा तो अच्छा काम देनेवाली है ही। उसका शरीर अच्छा रहेगा, तो वह मँज जायेगी। डॉ० शर्मा (दिल्ली)का तार है। उसने अपनी सम्पत्ति १० हजारमें बेची है और ऋणमुक्त हो गया है। अब वह आश्रममे आना चाहता है। अपनी पत्नीके

१. पुनश्च वाला अंश बुधवारको लिखा गया था। उस दिन तारीख ३ जनवरी, १९३४ थी।

साथ आयेगा। उसको मैंने सुझाया है कि वह तुमको लिखे। उसे अपनानेकी आवश्यकता प्रतीत होती है। यदि योग्य साबित हो तो अच्छा; नही जम पाये तो चला जायेगा।

मुझे विश्वास है तुम अपना स्वास्थ्य सम्हाल कर ही काम करते होगे। जानकी बाई सोमण[1] भी वहाँ रहना चाहती है। जहाँ विद्या आदि अन्य बहने थी वहाँ उनकी व्यवस्था हो सकती है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२८)से।

४५४. भाषण : पेड्डावाडगुरुमें

३ जनवरी, १९३४

महात्माजीने लोगोंको मानपत्र और थैलीके लिए धन्यवाद देते हुए कहा कि मुझे इस रकम[2] को केशव विद्यानिलयमके लिए रखनेमें कोई आपत्ति नहीं होगी बशर्ते कि एक ठोस योजना और कार्यकर्त्ता मिल सकें। यह स्कूल स्वर्गीय पी० केशव पिल्लेकी स्मृतिमें खोला गया था और इसमें छात्रावासकी व्यवस्था भी थी। गांधीजीने कहा कि जो भी पैसा इकट्ठा किया जाता है उसे निःसन्देह हरिजनोंको शिक्षा देने और उनके उत्थानके लिए अन्य सुविधाएँ प्रदान करनेपर खर्च किया जायेगा। शुद्धीकरणकी इस प्रक्रियाको सम्पूर्ण बनानेके लिए, हम सवर्णोंको हरिजनोंके प्रति किये गये अपने दुर्व्यवहार और पापोंके पश्चात्तापस्वरूप इस प्रक्रियासे गुजरना होगा। केवल अनुदान देना अथवा शारीरिक रूपसे छुआछूतको दूर करना भर पर्याप्त नहीं होगा। सबसे जरूरी तो यह है कि ऊँच-नीचका भेद स्पृश्य और अस्पृश्यका विचार भी लोगोंके दिलोंसे दूर हो जाना चाहिए। यदि लोग अपने मनको वशमें रख सकें तो ऐसा करना आसान है। लेकिन सामान्यतः बात इससे ठीक उल्टी है और इसी कारण यह सारी मुसीबत है। यदि अस्पृश्यता बनी रही तो हिन्दू-धर्मका नाश हो जायेगा। मैं भगवानसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको हरिजन सेवा करनेके लिए और इस बुराईको दूर करनेके लिए पर्याप्त मनोबल और इच्छा शक्ति प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-१-१९३४

१. डॉ० रामचन्द्र जे० सोमणकी माँ।
२. यह राशि रु० १,११६ थी।

४५५. महिलाओंके सम्मुख दिये गये भाषणोंके कुछ अंश[1]

[४ जनवरी, १९३४ से पूर्व][2]

महिलाओंका सच्चा आभूषण उनका चरित्र है, शुचिता है। धातु और पत्थर कभी भी सच्चे आभूषण नहीं हो सकते। सीता और दमयन्ती जैसी महिलाओंके नाम यदि वे कोई आभूषण पहनती थी तो उन आभूषणोंके कारण नहीं, बल्कि उनके निर्मल गुणोंके कारण हमारे लिए पवित्र हो गये हैं। मैं आपसे अपने आभूषण देनेके लिए जो कहता हूँ सो उसका व्यापक महत्व है। कुछ बहनोंने मुझे बताया है कि अपने हीरे-जवाहरातोंसे छुटकारा पानेपर वे और भी अच्छा महसूस करती हैं।[3]

मैंने इसे कई दृष्टियोंसे एक पुण्य-कार्य माना है। कोई भी स्त्री अथवा पुरुष तबतक सम्पत्तिका अधिकारी नहीं हो सकता जबतक वह उस सम्पत्तिका एक उचित हिस्सा गरीबों और असहायोंको नहीं देता। यह एक सामाजिक और धार्मिक कर्त्तव्य है और 'भगवद्गीता' में इसे यज्ञकी संज्ञा दी गई है। जो व्यक्ति ऐसा यज्ञ नहीं करता वह चोर कहलाता है।[4] 'गीता' में बहुत प्रकारके यज्ञ गिनाये गये हैं; लेकिन गरीबों और जरूरतमन्द लोगोंकी सेवा करनेसे बड़ा यज्ञ और क्या हो सकता है? आज हमारे लिए इससे बड़ा त्याग और क्या हो सकता है कि हम ऊँच-नीचके भेदको भुला दें और सब मनुष्योंको समान मानें। मैं भारतकी महिलाओंको यह समझाना चाहता हूँ कि सच्चा अलंकरण शरीरपर धातु और पत्थर लादना नहीं बल्कि हृदयको शुद्ध करना और आत्माके सौन्दर्यको निखारना है।

एक अन्य अवसरपर गांधीजीने महिलाओंको स्वर्गीय श्रीमती अन्नपूर्णा देवी के त्यागकी कथा सुनाई।[5] श्रीमती अन्नपूर्णा देवी आन्ध्र में पहली महिला थीं जिन्होंने अपनी बहनोंके आगे त्याग और सेवाका अनुपम उदाहरण रखा था। गांधीजीने बताया :

पहले ही दिन जब वह मुझसे मिली तब उन्होंने एक-दो नहीं वरन् अपने सारे जेवर उतार कर मुझे दे दिये। उस अवसर पर जितनी भी महिलाएँ उपस्थित थीं वे सबकी-सब आश्चर्यचकित रह गई और फिर वहाँ एकाएक जेवरोंकी बरसात होने लगी। क्या आप समझती हैं कि गहने उतार देनेपर वे कम सुन्दर लग रही थीं?

१. चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से उद्धृत।

२. आन्ध्रमें जो सभाएँ हुई थीं, साधन-सूत्रमें उनकी तारीखों अथवा स्थानोंके बारेमें कुछ नहीं बताया गया है। गांधीजीने ४ जनवरीको आन्ध्र छोड़ा।

३. नीचे जो दिया गया है वह किसी अन्य सभामें कहा गया था।

४. गीता, अध्याय ३, १२।

५. देखिए खण्ड ३५, पृष्ठ २०२-३।

दरअसल मुझे तो वे और भी सुन्दर दीख पड़ीं। अंग्रेजीमें एक कहावत है: "सुन्दर वही है जो सुन्दर कार्य करता है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-१-१९३४

४५६. पत्र : एफ० मेरी बारको

तुमकुर

४ जनवरी, १९३४

चि० मेरी,

बहुत समयसे तुम्हारा कोई पत्र नहीं आया। डंकन ठीक रहा। वह सारे रास्ते हमारे साथ था, और अड्यारमें भी मैं उससे एक क्षणके लिए मिला था क्योंकि मैं श्रीमती वुडके कहनेपर अड्यार गया था। मुझे अवश्य बताना कि तुम्हारी कैसी चल रही है। आशा है चन्द्रा खूब फूलफल रही है और तुम्हें परेशान नहीं करती। मैं यह पत्र तुम्हारे गाँवके पतेपर भेज रहा हूँ हालाँकि तुम्हें अब वर्धामें होना चाहिए। उम्मीद है तुम्हारी आँखें पहलेसे बेहतर हैं।

सस्नेह,

बापू

श्रीमती मेरी बार
मार्फत सेठ दीपचन्दजी
बैतूल
मध्यप्रान्त

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०१७) से।

४५७. भाषण : डोड्डाबल्लापुरमें

४ जनवरी, १९३४

गांधीजीने नागरिकोंको थैलीके लिए धन्यवाद दिया और कहा कि मुझे आशा है कि यदि आपने अस्पृश्यताके विचारको पहले ही अपने हृदयसे निकाल नहीं दिया है तो अब निकाल देंगे। मैंने आपके अभिनन्दनपत्रमें पढ़ा है कि डोड्डाबल्लापुरमें ८०० हरिजन हैं और हरिजन बच्चोंमें से पचास प्रतिशत स्कूलोंमें पढ़ रहे हैं। इसके लिए आप बधाईके पात्र हैं। लेकिन यह दिखाकर कि उतने सारे हरिजन बच्चे हरिजन स्कूलोंमें पढ़ते हैं, आप सम्भवतः अपनेको सन्तोष नहीं दे सकते। आप लोगोंके लिए हरिजन बालक-बालिकाओंको पढ़ाना जरूरी है और इसके लिए यह आवश्यक है कि

आप अपने हृदयोंमें से अस्पृश्यताके विचारको बिलकुल निकाल दें। किसी भी व्यक्तिको अस्पृश्य मानना गलत है। आप सब लोगोंको यह भूल जाना चाहिए कि कोई व्यक्ति आपसे नीचा है। अन्तमें गांधीजीने कहा, मुझे आशा है कि अस्पृश्यताके अभिशापको मिटानेके लिए ईश्वर आप सबको बल प्रदान करेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-१-१९३४

४५८. बातचीत: कार्यकर्त्ताओंके साथ[1]

तुमकुर
४ जनवरी, १९३४

हरिजनों द्वारा मन्दिर प्रवेशके सम्बन्धमें गांधीजीसे प्रश्न किये गये। गांधीजीने कहा कि मन्दिर प्रवेशको लेकर लोगोंमें विरोधकी भावना कम होती जा रही है और इस कार्यके सम्बन्धमें अपनी यात्राके दौरान मुझे लगभग कोई विरोध नहीं दिखाई पड़ा है।

गांधीजीसे यह पूछे जानेपर कि यदि बहुमत मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें हो और सरकार तटस्थ रहे तो उन्हें क्या करना चाहिए, गांधीजीने कहा:

बहुमत पक्ष और अल्पमत पक्ष द्वारा इस बातका आपसमें ही निपटारा कर लिया जाना चाहिए। सरकार इसमें हस्तक्षेप नहीं करेगी। जब अल्पमत पक्ष और बहुमत पक्षमें संघर्ष होगा तभी सरकार हस्तक्षेप करेगी और वह भी शान्ति और व्यवस्था कायम रखनेके लिए। अल्पमत पक्ष बहुमत पक्षकी राहमें बाधा उपस्थित नहीं कर सकता।

एक अन्य प्रश्नके उत्तरमें महात्मा गांधीने कहा कि पूर्ण बहुमत नामकी कोई चीज नहीं होती।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ५-१-१९३४

१. इनमें के० रंगा अय्यंगार, टी० सुब्रमण्यम, नारायन सेट्टी और अन्य कार्यकर्त्ता शामिल थे।

४५९. भाषण : तुमकुरकी सार्वजनिक सभामें[1]

तुमकुर
४ जनवरी, १९३४

आपसे मिलकर परिचय ताजा करते हुए मुझे बहुत खुशी हो रही है। मैं आपके लिए नया नही हूँ और आप मेरे लिये नये नही है। लेकिन कुछ वर्ष पहले मैं जिस उद्देश्यको लेकर यहाँ आया था[1] आज उससे भिन्न उद्देश्यको लेकर आपके पास आया हूँ। आपके मानपत्रमे ही यह बात साफ तौरपर बताई गई है कि मैं आपसे क्या अपेक्षा रखता हूँ। आज आपने मुझे हरिजनोकी ओरसे जो थैली भेंट की है उसके लिए मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूँ। अपने मानपत्रमे आपने मेरे अनेक गुण गिनाये है जिनसे मैं सम्भवत सर्वथा अपरिचित हूँ। आपने मेरी जो ढेरो प्रशंसा की है, हो सकता है, मैं उसके सर्वथा अयोग्य होऊँ। आपने यह स्वीकार करनेकी शालीनता दिखलाई है कि आपको दिन-ब-दिन इस बातका विश्वास होता जा रहा है कि हमारे समाजसे अस्पृश्यताके निराकरणसे न केवल हिन्दू धर्म शुद्ध हो जायेगा वरन् इससे हमारी राष्ट्रीय कमजोरी राष्ट्रीय शक्तिमे परिवर्तित हो जायेगी और इससे विभिन्न धर्मोको माननेवाले हम लोगोमे परस्पर और भी एकता बढ़ेगी। आपकी इस स्वीकारोक्तिके बाद मैंने सोचा था कि आप हरिजनोके लिए किये गये अपने अनेक कार्योके बारेमें मुझे बतायेंगे। आपने इस बातपर खेद व्यक्त किया है कि इक्के-दुक्के लोगोके प्रयत्नोको छोड़कर आपने अस्पृश्यता-निवारणके लिए अबतक बहुत कम काम किया है। यदि हम सचमुच यह मानते है कि ईश्वरकी इस धरतीपर न कोई ऊँच है और न कोई नीच है तो हमारा यह उद्देश्य सफल हो जायेगा जिस उद्देश्यसे प्रेरित होकर मैं आज यहाँ आया हूँ। ऊँच-नीचके हमारे इस विश्वासने हिन्दू धर्मकी जड़ें खोखली कर डाली है और मैंने हजारो सभाओमे जो बात बार-बार कही है वह सिर्फ यह सीधा-सादा सत्य है कि यदि हम इस नासूरसे छुटकारा नही पा लेते तो स्वय हिन्दूधर्म ही नष्ट हो जायेगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ और भगवानसे प्रार्थना करता हूँ कि इस सभामे जितने भी लोग उपस्थित है उनमें से हर कोई मैंने जो कहा है उसकी सत्यताको पहचानेगा और अस्पृश्यताके अभिशापसे छुटकारा पानेका हर सम्भव प्रयत्न करेगा।

इसके बाद महात्माजीने इस बात पर खेद व्यक्त किया कि वे शहरके अन्य सभी भागोंमें नहीं जा सकते जैसीकि उनकी इच्छा थी। शारीरिक कमजोरीके कारण

१. गांधीजी देशबंधु स्मारक कोषके सिलसिलेमें अप्रैल १९, १९२७ में मैसूर गये थे और स्वास्थ्य लाभ करनेके लिए वहाँ अगस्तके अंत तक रहे थे; देखिए खण्ड ३३ और ३४।

वे उन सार्वजनिक संस्थाओंमें नहीं जा सकते जो उपयोगी काम कर रही हैं। उन्होंने आशा व्यक्त की कि तुमकुरके लोग अपनी इच्छाको कार्यरूपमें परिणत करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ५-१-१९३४

४६०. भाषण: बंगलौरकी महिला सभामें[1]

४ जनवरी, १९३४

बहनो,

कई वर्षोंके बाद आपसे फिर मिलनेपर मुझे बड़ी खुशी हो रही है। आपने अपने मानपत्रके शुरूमें मेरे स्वास्थ्यपर लगातार यात्रा करनेके कारण पड़नेवाले प्रभावके बारेमें चिन्ता व्यक्त की है। और यदि आप, भारतकी माताएँ, अपने बच्चोंको लेकर परेशान नहीं होंगी तो और कौन होगा? और मैं आपके लाखों बच्चोंमें से एक हूँ। लेकिन आपको यह मालूम होना चाहिए कि मैं आज आपको जो सन्देश देनेके लिए आया हूँ उसके अनुरूप आचरण करके आप मेरी चिन्ताको दूर कर सकती हैं। मैं जिस उद्देश्यको लेकर यह यात्रा कर रहा हूँ उसके लिए मुक्त हृदयसे दान देकर आप मेरी चिन्ता हर सकती हैं। आपकी तरह भारतके अन्य भागोंकी बहनें भी मेरे स्वास्थ्यको लेकर दुःखी व चिन्तित हुई और उन्होंने मुझपर अपने आभूषणोंकी — चूड़ियों, अँगूठियों और गलेके हारोंकी वर्षा कर दी। आप मुझे चाँदी अथवा ताँबेके जो भी सिक्के देंगी, सच पूछा जाये तो वे हमारे रिवाजके मुताबिक आपकी अपनी सम्पत्ति नहीं हैं। वह तो आपके माता-पिता अथवा आपके पतिकी सम्पत्ति है। लेकिन मैं आपसे ऐसी चीज चाहता हूँ जिसे आप निश्चित रूपसे अपनी कह सकें और वह केवल आपके आभूषण हो सकते हैं। लेकिन मैं आपसे जिन चीजोंकी अपेक्षा करता हूँ उनमें से आभूषणोंका त्याग करनेकी बात तो सबसे नगण्य है। आभूषण-त्याग तो मेरे सन्देशको पूरी तरहसे क्रियान्वित करनेके आपके दृढ़ निश्चयका सूचक भर हो सकता है। और वह सन्देश यह है कि आपको हरिजनोंको सगे भाई-बहनों अथवा अपने बच्चों जैसा समझना चाहिए। किसी भी व्यक्तिको अस्पृश्य मानना गलत है और पापपूर्ण है। ईश्वरने सब पुरुषों और स्त्रियोंको समान बनाया है। हालाँकि हमारे स्वरूप और स्वभाव भिन्न-भिन्न हो सकते हैं लेकिन फिर भी मूलतः हम सब एक हैं, ठीक उसी तरह जिस तरह एक वृक्षकी पत्तियाँ, चाहे वे आकारमें बड़ी हों अथवा छोटी, वस्तुतः एक ही होती हैं। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप अस्पृश्यों और स्पृश्योंमें कोई भेद न करें। इसीको मैं हृदयकी शुद्धि कहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ५-१-१९३४

1. यह सभा आर० बी० ए० एन० एम० हाई स्कूलके अहातेमें हुई थी जिसमें ५,००० महिलाएँ उपस्थित थीं।

४६१. भाषण : बंगलौरकी सार्वजनिक सभामें

४ जनवरी, १९३४

मित्रो, आपके स्वागतने मेरा हृदय छू लिया है। आपके इतने सब उत्साहका और मेरे प्रति आपने अपने प्रेमका जो प्रदर्शन किया है, उसका मैं सदुपयोग करना चाहता हूँ, उसे व्यर्थ नही जाने देना चाहता। इसलिए यदि आप धीरजके साथ कुछ मिनट मुझे बोलनेको दे, तो आप देखेंगे कि आपके इस अपूर्व उत्साह और प्रेमका मैं सदुपयोग करूँगा। जो बात मैं करने जा रहा हूँ, उससे आपके उत्साह और आपके प्रेमकी सच्चाईकी परीक्षा भी हो जायेगी।

मैं आज आपको जो सन्देश सुनाना चाहता हूँ उसे तो आप जानते ही हैं। मैं चाहता हूँ कि हम सब लोग, हममेंसे प्रत्येक व्यक्ति, अस्पृश्यताका काला दाग धोकर अपने दिलको शुद्ध कर ले। मैसूर राज्यकी सीमामे प्रवेश करनेके बाद आज मुझे जो बहुत-से मानपत्र प्राप्त करनेका सौभाग्य और सुख प्राप्त हुआ है उनमें से एक मानपत्रमे यह ठीक ही कहा गया है कि अस्पृश्यताका अभिशाप हिन्दू-समाजमे इस हद तक व्याप्त हो गया है कि वह लगभग हमारे जीवनको संचालित करता है। उस मानपत्रमें यह भी कहा गया है कि अस्पृश्यता-निवारणका जो सन्देश मैं भारतके हिन्दुओको देनेका प्रयत्न कर रहा हूँ उसका असर पड़ रहा है। मानपत्रमे यह भी स्वीकार किया गया है कि अस्पृश्यताके विषसे अगर हमारा पिंड छूट गया, तो यह निश्चय है कि भारतकी दूसरी जातियोके भी पारस्परिक मतभेद दूर हो जायेंगे। अब आप देख सकते हैं कि मैं आपमें से प्रत्येक व्यक्तिसे क्या करनेको कह रहा हूँ। मेरा आपसे अनुरोध है कि अस्पृश्यताके जहरसे आप सब लोग अपना पिंड छुड़ाइए, जिससे कि हम सभी 'हरिजन' बन सके, ईश्वरकी सच्ची सन्तान बन सके, और केवल एक विशेष वर्गको ही हरिजन न मानते रहें।

आज अगर हम अपना अशुद्ध हृदय लेकर अपने सिरजनहारके सामने जाये, तो वह हमें अपनानेसे इनकार कर देगा क्योकि हमने तो अपनी करतूतोंसे खुद ही अपने परमपितासे नाता तोड़ लिया है। आप लोगोने मुझे जो यह छोटी-सी थैली दी है उसे मैं आपके इस संकल्पका प्रतीक मान रहा हूँ कि आजसे आप अपनी यह मान्यता छोड रहे हैं कि संसारमे कोई प्राणी आपसे नीच है। अगर दुनियाके किसी माता-पिताकी दृष्टिमे उसके बच्चोमे कोई ऊँच-नीचकी श्रेणियाँ नही हैं, तो क्या आपका यह खयाल है कि वह न्यायकारी समदर्शी जगत्पिता अपने बच्चोमे ऊँच-नीचकी विषम श्रेणियाँ रचेगा? यदि आप लोगोने मेरे सन्देशके सारतत्वको भली-भाँति समझ लिया है, तो यह बात भी आपकी समझमे आ जायेगी कि जो

हरिजन-सेवाके निमित्त धन देते हैं, उन्हें उसका लाभ मिलता है। मैं और आगे जाकर कहता हूँ कि आप इस कार्यके लिए जितना कुछ भी दें, वह कम ही है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ५-१-१९३४

४६२. उदार दृष्टि रखिए[1]

अपने अनेक प्रवासोंमें मैंने देखा है कि मेहमानोंकी भोजन-सम्बन्धी सुविधाएँ पूरी करनेमें स्वागत-समितियाँ पैसेका जरा भी ध्यान नहीं रखतीं। मिठाइयाँ, दूसरे स्वादिष्ट खाद्य और तरह-तरहके पकवान बनवानेका वे आग्रह करती हैं। यों तो मैंने हमेशा ही इन बातोंको नापसन्द किया है; पर इस समय तो, जबकि मैं हरिजन-सेवाके सम्बन्धमें धन इकट्ठा कर रहा हूँ और जिसे मैं प्रायश्चित्त और धर्म-शुद्धिका कार्य समझता हूँ, मेहमानीमें इस तरहकी फिजूलखर्ची देखकर मुझे दुःख होता है। दो स्थानोंमें मैंने देखा कि गुजराती रसोई तैयार करानेके लिए गुजराती रसोइये बुलाये गये थे। इसे मैं बिलकुल अनावश्यक समझता हूँ। मेरा विश्वास है कि अपने प्रान्तसे इतर प्रान्तोंमें जैसा खाना खाया जाता है, उसे खानेकी ही हमें आदत डाल लेनी चाहिए। मैं जानता हूँ कि यह बात जितनी आसान लगती है, उतनी है नहीं। मैं ऐसे दक्षिणवासियोंको जानता हूँ जिन्होंने गुजराती खाना खानेकी आदत डालनेका काफी प्रयत्न किया, पर वे असफल ही रहे। गुजराती लोगोंको दक्षिणी रसोई अच्छी नहीं लगती। जो स्वादिष्ट चीजें बंगालमें बनती हैं, वे दूसरे प्रान्तवालोंको सहज ही नहीं रुचेंगी। यदि प्रान्तीयके स्थानपर हमें राष्ट्रीय बनना है, तो हमें भोजन-सम्बन्धी अपनी आदतोंमें अदल-बदल करनी ही पड़ेगी, अपने स्वादोंमें सादगी लानी ही पड़ेगी, और ऐसे स्वास्थ्यकर व्यंजन तैयार करने होंगे, जिन्हें हम सभी लोग रुचिपूर्वक खा सकें। इसका अर्थ यह हुआ कि भिन्न-भिन्न प्रान्तों, जातियों और सम्प्रदायोंके आहारोंका ध्यानपूर्वक अध्ययन किया जाये। दुर्भाग्य या सौभाग्यसे भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके भिन्न-भिन्न प्रकारके आहार हैं। इतना ही नहीं, बल्कि एक ही प्रान्तमें भिन्न-भिन्न जातियोंमें भी अलग-अलग किस्मके भोजन हैं। इसलिए राष्ट्र-सेवकोंके लिए यह जरूरी है कि वे भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके आहारों और उनके बनानेके तरीकोंका अध्ययन करें और ऐसी सादी और सस्ती आम खुराकको ढूँढ़ निकालें, जिसे सब लोग बिना पेटको बिगाड़े खा सकें। कुछ भी हो, सेवकोंके लिए विविध प्रान्तों और सम्प्रदायोंके शिष्टाचार और रीति-रिवाजोंका न जानना एक शर्मकी बात है। समृद्ध घरानोंके रसोइयोंको भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें खाये जानेवाले आहारोंको बनाना जानना चाहिए। तमिल, आन्ध्र या बंगालके व्यक्तिका साधारणतया जो भोजन है, उसे एक गुजराती क्यों न बना

1. यह मूल लेख अंग्रेजीमें है। इसका गुजराती अनुवाद ३१-१२-१९३३ के हरिजनबन्धु में पहले छप गया था।

सके? मै जानता हूँ कि बड़े आदमियोके यहाँ भोजनमे ऐसी सामान्यताका होना सम्भव नही, और न ऐसा आवश्यक या वाछनीय ही है। समृद्ध घरानोके आदमी भिन्न-भिन्न प्रान्तोके व्यंजन तो बनवाते ही है, वे अपने परिवारके लिए भी विशेष व्यंजन बनवाते रहते है, पर इनका सर्वत्र प्रचार नहीं हो सकता। उद्देश्य तो यह हो सकता है और होना भी चाहिए कि सर्व-साधारणके लिए ऐसा खाना बनवाया जाये, जिसे सभी खा सके। मै जानता हूँ कि अगर हम चाहें तो यह आसानीसे हो सकता है। पर इसे सम्भव बनानेके लिए स्वयसेवकोको रसोई बनाना सीखना पडेगा और इस कामके लिए उन्हें विभिन्न प्रान्तोके आहारोके गुण-दोषकी जाँच करके सभी प्रान्तोमें प्रचलित ऐसे सामान्य व्यंजनोंको खोज निकालना होगा, जो आसानीसे और सस्तेमे तैयार हो सके।

अपने मुख्य विषयसे मै कुछ हट गया हूँ और वह मुख्य विषय यह है कि प्रान्तोमें मेरे प्रवासके प्रबन्धकोको हमारा ज्यादा लाड़-प्यार नही करना चाहिए, बल्कि हमे जिमानेमें उन्हें काफी सादगी और किफायतशारी से काम लेना चाहिए। याद रहे कि हम यह आत्मशुद्धिका कार्य कर रहे हैं या इसका दावा कर रहे हैं और हम सवर्णोके प्रतिनिधियोने हिन्दू-समाजके दलितोकी सेवाका भार अपने ऊपर ले रखा है। ऐसी दशामें हमें अपनी अत्यावश्यक जरूरतो और मामूली सुविधाओकी पूर्तिके सिवा अन्य किसी प्रकारकी आवश्यकताको पूरी करनेका अधिकार नही है। तली हुई चीजों और मिठाइयोंसे तो खास परहेज करना चाहिए। घी का उपयोग बहुत ही कम किया जाये। एक से ज्यादा हरी सब्जी अनावश्यक है, और वह भी उबली हुई होनी चाहिए। महँगे फल भी कभी न मँगाये जाये। मै जानता हूँ कि फलोके सम्बन्धमें मैं ही गुनहगार हूँ। मेरे मित्र मेरा लाड-प्यार करेंगे और कुछ भी कष्ट उठाकर महँगेसे-महँगा फल मँगाकर मुझे देंगे। मै उन्हे इतना ही आश्वासन दे सकता हूँ कि संतरोके सिवा और कोई फल मेरे लिए आवश्यक नही है और यह बात अनुभवसे साबित हो चुकी है कि सन्तरे मेरे लिए आवश्यक है। अपने मिताहारकी शेखी बघारने पर भी मै जानता हूँ कि अपने दलमे मेरी ही खुराक पर सबसे अधिक खर्च पड़ता है। मुझे इसका दु:ख है, मगर बकरी माताका दूध, जिससे मै अपनी शारीरिक शक्ति कायम रखता हूँ, और सन्तरे, जिनकी बदोलत मै सदा ताजा और प्रसन्न रहता हूँ, ये दोनो ही चीजें सस्तेपनमे चावल और गेहूँका मुकाबला नही कर सकती। मेरी मेहमानी उठानेवाले अपने अनेक मेजबानोसे मेरी विनती है कि वे मन लुभानेवाली व्यर्थकी चीजें बाहरसे मँगा-मँगाकर मेरे सिर पर और ऋण न चढ़ायें। यदि हरिजनोके प्रति कर्त्तव्य-पालन करनेमें वे मुझे सहायता देना चाहते हैं, तो कृपाकर वे मेरी कमजोरियोंको न भड़कायें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-१-१९३४

४६३. पत्र : महालक्ष्मी एम० ठक्करको

५ जनवरी, १९३४

चि० महालक्ष्मी,

मैंने तुम्हें जेलमें पत्र लिखा था, वह मिल गया था? माधवजीका आखिरकार क्या हुआ, यह मुझे अभी तक मालूम नही हो पाया। बच्चोंकी चिन्ता जरा भी नही करनी है। माधवजीने विचारपूर्वक और मुझसे सलाह करके जो कुछ किया है उसे ठीक समझना। फिर भी जैसा तुम्हें जँचे वैसा करना। बहनोके बारेमें मेरी इच्छा है कि उन्हें विचारकी, आचारकी पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। मुझे सब-कुछ लिखती रहना। जेलमें क्या किया? क्या पढ़ा? यह सब लिखना। 'हरिजन बन्धु'के अंक पढ़ती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८२५)से।

४६४. पत्र : प्रभावतीको

५ जनवरी, १९३४

चि० प्रभावती,

एकके बाद एक तेरे दो पत्र मिले।

राजेश्वरके लिए मैंने घनश्यामदासके साथ बन्दोबस्त किया है। मुझे उसका पता भेजना। उसे कबसे पैसे नहीं मिले है?

तेरे और जयप्रकाशके सम्बन्धमें मैंने किस प्रश्नका उत्तर नही दिया है? मुझे ऐसा खयाल है कि तुम्हारे पत्रसे सम्बन्धित सभी प्रश्नोंका उत्तर मैंने दे दिया है। सम्भव है कि मेरा यह पत्र तुम्हारे हाथ ही न पड़ा हो। यदि उत्तर न मिला हो तो मुझे दुबारा फिर पूछना।

चूँकि तूने उपचार शुरू किया है इसलिए उसे अवश्य आजमाना। विश्वास तो मुझे भी कम ही है। तू और जयप्रकाश ठीक हो जाओ तो अच्छा होगा। तुझे तो मैंने बीमार माना ही नही है। लेकिन यदि डॉक्टर ऐसा कहे तो क्या करें?

मैंने अपना वजन अभी नहीं लिया है लेकिन स्वास्थ्य अच्छा ही है। खुराक भी उचित प्रमाणमे लेता हूँ।

व्रजकृष्ण बिल्कुल ठीक हो गया है। अब थोड़ा घूमता फिरता है। देवदास एकाएक जेलसे रिहा हो गया है।[1] मुझे और कुछ मालूम नही।

बा के पत्र आते रहते हैं। किसन फिलहाल तो मेरे साथ ही दौरे पर रहेगी। वह ठीक रहती है। थोड़ी-थोड़ी मदद भी करती है। विद्याकी तवीयत अच्छी न थी और उसके पास जो लड़की थी वह चोर निकली, इसलिए विद्या अपने पिताके यहाँ गई है।

राजेन्द्रबाबूके वारेमे तूने जो लिखा है सो मै समझा। उनसे कहना कि मैंने पत्र लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४३९) से।

४६५. पत्र : वी० एल० फड़केको[2]

५ जनवरी, १९३४

भाई मामा,

तुम्हारा पत्र मिला। सस्थाओका स्वामित्व हरिजन सेवक सघको नही सौपना है। पर मेरा सुझाव है कि उसका खर्च हरिजन सेवक संघ दे। अत. अव भविष्यमें सघको समाधान देनेकी बात ही रही। जो अपना खर्च चलायेगा उसे हिसाब और कारोबार चलानेका सन्तोष प्रदान करना तो जरूरी ही है न?

सरदारके पत्रमे जो बात है उसका अर्थ परलोक नही है उसका अर्थ तो जेल या जेलके बाहर है। वह भी तो परलोक ही हुआ न? उसे ऐहिक परलोक कहे तो चलेगा। पर इस अर्थसे तुम्हे चौंकने या चिन्तामे पड़नेकी जरूरत नही है। तुम्हे तो अपने . . .[3]में ही मशगूल रहना है। ऐहिक परलोकमें जानेकी बारी जिसके लिए जरूरी होगी, उसके लिए आ जायेगी। यह तो आजकलकी ही बात है। मेरे सम्बन्धमे तो 'हरिजनबन्धु'में देखते ही होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८२७) से।

१. २ जनवरी, १९३४ को।
२. गोधरा हरिजन आश्रमके प्रबन्धक।
३. साधन-सूत्रमें यहाँ स्पष्ट नहीं पढ़ा जाता।

४६६. पत्र : जीवनजी डाह्याभाई देसाईको[1]

मैसूर
५ जनवरी, १९३४

भाई जीवनजी,

गोरक्षाके सम्बन्धमे मेरे साथ हुए संवादको मैं देख गया हूँ। यह ठीक-ठीक दिया गया है इसलिए इसका उपयोग करना हो तो कर सकते हो।

विद्यापीठकी लाइब्रेरीका कब्जा म्युनिसिपैलिटीने ले लिया या हाल हमको ही पुस्तकें जमानी पडी है। लाइब्रेरीका मकान बनना शुरू हुआ? यदि न हुआ हो तो कब होगा? बालूभाईसे पूछकर लिखना।

प्रेसमें अब कोई मशीनें बची है या सारी गई? प्रकाशनकी पुस्तकोंके सम्बन्धमे कुछ हुआ?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सम्वादकी प्रति[2] इसके साथ है।

काकाको पत्र लिखा था सो मिला होगा। उसमे मैंने तुम्हे महादेवके लिए कुछ लिखा है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९३३) से। सी० डब्ल्यू० ६९०८ से भी; सौजन्य : जीवनजी डाह्याभाई देसाई

४६७. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

मैसूर
५ जनवरी, १९३४

चि० ब्रजकिसन,

मैंने दो पत्र लिखे है। एकको भी पहुँच तुम्हारे पत्रमें नही है। श्रीनगर नामका कोई गाँव आंध्र देशमें नही है, इसलिए तुम्हारा पत्र शायद काश्मीर गया होगा। मैंने जो अेड्रेस भेजा था वह तो सीतानगरम् था। ईश्वरका बडा अनुग्रह हुआ कि तुमको मृत्युशैयासे उसने उठाया है। अब बड़ी सावधानीसे शरीर जो था उससे भी

१. नवजीवन संस्थाके प्रधान व्यवस्थापक।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

अच्छा बनाओ। डॉ० अन्सारी कहे उसका अक्षरशः पालन करो। रामबाबूने क्यों छोड दिया? नया घर कितने महिनोंके लिए रखा है? क्या किराया पड़ता है। मेरी मुसाफरी अच्छी तरह चल रही है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४०६) से।

४६८. भाषण : हरिजनोंकी सभामें

मैसूर
५ जनवरी, १९३४

आपको आन्तरिक तथा बाह्य दोनों प्रकारके स्वास्थ्य और सफाईके नियमोका पालन करना चाहिए। आन्तरिक शुद्धिके लिए आपको भगवानका नाम लेना चाहिए — सवेरे सोकर उठनेके बाद सबसे पहले यही काम करना चाहिए। यह आत्माके लिए नाश्ता है।

जब उन्हें बताया गया कि बस्तीके हरिजनोंने गो-मांस खाना छोड़ दिया है तब उन्होंने कहा :

आपने गो-मास खाना छोड़ दिया है, मेरे लिए यह अत्यन्त खुशीकी बात है और इसके लिए मै आपको बधाई देता हूँ। मै चाहूँगा कि मद्यपानके विषयमे भी आप ऐसा ही कह सकें। ऐसे रंगीन पानीपर पैसा खर्च करनेमें क्या फायदा जो हमें इतना उन्मत्त कर दे कि हम माँ, बहन और पत्नीके भेदको भूल जाये? मैंने हरिजनोसे सुना है कि उनके लिए विवाह तथा मृत्युके अवसरपर शराब पीनेका विधान है। मै आपसे कह सकता हूँ और इसका कोई प्रतिवाद नही कर सकता कि यह शैतानकी सुझाई हुई बात है। शास्त्रोमे ऐसा कही नही लिखा गया है। मै आप भाइयो और बहनोसे अनुरोध करूँगा कि आप शैतानके निकट न जायें। मैं आशा करता हूँ कि आप मेरी सलाह को मानेंगे और तब मुझे बहुत खुशी होगी जब आप यह कह सकेंगे कि आपने शराब भी छोड़ दी है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१-१९३४

४६९. भाषण : मैसूरकी सार्वजनिक सभामें

५ जनवरी, १९३४

छः वर्षोंके लम्बे अर्सेके बाद आप लोगोंसे दुबारा मिलनेपर मुझे बहुत खुशी हुई है। जैसा कि आप जानते ही हैं, मैसूर राज्यमें मैं अपना खोया हुआ स्वास्थ्य फिरसे बनानेके लिए आया था जिसे मैंने उस समय मैं जो यात्रा कर रहा था उसके दौरान खो दिया था। और स्वाभाविक है कि मैसूर-निवाससे सम्बन्धित बहुत-सी सुखद स्मृतियां मेरे मनमें हैं। महाराजा साहब, उनके दीवान तथा दूसरे अधिकारियोंसे लेकर महाराजा साहबकी प्रजा तकसे मुझे सिर्फ हार्दिक स्नेह ही स्नेह मिला। इसीलिए आप पहलेसे ज्यादा अच्छी तरह यह जान सकते हैं कि फिरसे आप लोगोंके बीचमें आकर मुझे कितनी खुशी हुई होगी। आपने मैसूर राज्यके पितामह स्वर्गीय श्री वेंकटकृष्णय्याके चित्रका अनावरण मुझसे सम्पन्न करनेको कहकर इस खुशीमें और वृद्धि कर दी है। मैं कलाकारको उसकी इस कृतिके लिए बधाई देता हूँ क्योंकि उनके जिस रूपसे मैं काफी परिचित था इसमें उसका हूबहू चित्रण है। शायद आपमेंसे सब लोग यह न जानते हों कि अपनी पिछली यात्राके दौरान मुझे मैसूरके पितामह से साक्षात मिलनेका सुख और सौभाग्य मिला था। उस समय मुझे उनके बहुतसे गुणोंका परिचय मिला था। तब मुझे पता चल गया था कि आपके दिलमे उनके लिए एक अनोखी जगह है। मुझे पूरा विश्वास है कि आप मुझसे इस चीजकी आशा या इच्छा नहीं करेंगे कि मैं उनके असंख्य गुणोंको दोहराऊँ। अपनी संक्षिप्त यात्राके दौरान मेरे लिए उनको जितना जान सकना सम्भव था उसकी बनिस्बत आप लोग, जो यहांके रहनेवाले हैं, उन्हें ज्यादा अच्छी तरह जानते थे। मैं केवल यही आशा करता हूँ कि उनके जिन गुणोंके कारण आप और मैं उन्हें याद करते हैं उन गुणोंको हम अपने जीवनमे चरितार्थ करेंगे। हम यह सोचकर अपने आपको धोखा नही दे सकते कि इस चित्रके अनावरणके लिए मुझे बुलावाकर और यह समारोह देखकर तथा मुझसे अनावरण करवाकर हमने उनकी स्मृतिके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा कर लिया।

अब मैं अपने उस उद्देश्यपर आता हूँ जिसकी वजहसे मैं यहाँपर आया हूँ। नगरपालिकाके अभिनन्दनपत्रने मुझे इस बातकी याद दिलाई है कि मैं उन चीजोंको देखूं जो देखने योग्य हैं ताकि हरिजनोंके लिए जो काम यहाँ किया गया है और किया जा रहा है मैं उसकी सुखद स्मृतियाँ अपने साथ ले जाऊँ। स्वागत-समितिने पहले ही बहुत सूझ-बूझ का परिचय देते हुए इस सभामे लानेसे पहले मुझे बहुतसे मुहल्लोंमें ले जानेका प्रबन्ध कर लिया था और इन पिछले छः सालोंके दौरान जो प्रगति हुई है उसे दिखा दिया था। आपका यह सोचना बिलकुल ठीक है कि इन स्थानोंको देखनेके बाद यहाँ हरिजनोंके लिए जो काम हो चुका है मैं केवल उसकी

सुखद स्मृतियाँ ही ले जाऊँगा। आज तीसरे पहर मैंने जिन सब स्थानोंका दौरा किया है वहाँ मुझे जो शुद्धता और स्वच्छता देखनेको मिली है उसके लिए मुझे मैसूर राज्यको और मैसूरकी नगरपालिकाको बधाई देनी चाहिए। और मुझे इस आश्वासनसे खुशी हुई कि इस शहरके हरिजनोंकी घरेलू सुविधाओंकी व्यवस्था करनेमें नगरपालिका विलम्ब नहीं करेगी। मेरी रायमें प्रत्येक शहरके भंगी उस शहरके सबसे उत्कृष्ट सेवक होते हैं। भंगियों और मेहतरोंको गन्देसे-गन्दे स्थानों तक ही सीमित रखना और उनकी बिलकुल उपेक्षा करना तो शर्मकी बात होनी चाहिए। मेरी दृष्टिमें तो हर एक शहरके स्वास्थ्यकी कुंजी भंगियोंकी जेबमें ही होती है। जो भी शहर अपने मेहतरों और भंगियोंकी अवहेलना करनेका दुस्साहस करता है वह अपने नागरिकोंके स्वास्थ्यकी उपेक्षा करनेका अपराधी होता है।

लेकिन मेरे अनुष्ठानका उद्देश्य केवल हरिजनोंके आर्थिक कल्याणसे कहीं ज्यादा व्यापक है। इसमें सन्देह नहीं कि उनके आर्थिक और शैक्षिक कल्याणकी खूब सावधानीसे देखभाल करना हमारा कर्त्तव्य है। लेकिन पिछले कई युगोंसे हरिजनोंको हमारे कारण जिन कठिनाइयों और दुखोंका शिकार बनना पड़ा है यदि हमें हरिजनोंको उसका बदला चुकाना है तो इतना ही करना काफी नहीं है। वे भी ठीक उन्हीं सब अधिकारों और सुविधाओंके अधिकारी हैं जिनके अधिकारी अन्य नागरिक हैं। और हिन्दू होनेके नाते वे भी वैसी ही सामाजिक सुख-सुविधाओं और धार्मिक अधिकारोंके अधिकारी हैं जिनका अधिकारी कोई दूसरा हिन्दू है। इसलिए मेरा उद्देश्य तो सवर्ण हिन्दुओंको अपने अस्पृश्यताके पापको धोनेके लिए तैयार करना है। और सवर्ण हिन्दुओंके पास जो थोड़ी-सी मोहलत बची हुई है यदि इसमें वे अपना कर्त्तव्य पूरा करनेमें चूक गये तो मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है कि हिन्दू धर्मका नाश हो जायेगा। अब आप समझ सकते हैं कि यह काम न तो कोई नगरपालिका कर सकती है और न स्वयं महाराजा साहब ही। यदि आप और मैं ही अपने हृदयोंमें परिवर्तन नहीं करेंगे, तो फिर राजा-महाराजा लोग भी क्या कर सकते हैं। इसलिए यह मेरा कर्त्तव्य भी है और मेरा सौभाग्य भी है कि मैं आपको अपने दिलोंसे अस्पृश्यता तथा ऊँच-नीचका भेदभाव निकालनेके लिए कहूँ। यदि आप इस सन्देशकी भावनाको समझ लें तो आप देखेंगे कि हृदय-परिवर्तन करना आश्चर्यजनक रूपसे सरल काम है। और यदि सवर्ण हिन्दुओंके हृदयोंमें यह परिवर्तन हो गया तो आप देख सकेंगे कि किस प्रकार पलक झपकते हरिजनोंकी आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक प्रगति अपने आप होने लगेगी। तब ये सारी चीजें उस हृदय-परिवर्तनका प्रतीक और प्रमाण मानी जायेंगी। आपने कृपापूर्वक ये जो सब थैलियाँ मुझे दी हैं उन्हें मैं हृदय-परिवर्तन करनेके आपके निश्चयकी पेशगीके तौरपर मानता हूँ। ईश्वर आपको हृदय-परिवर्तन करनेकी शक्ति दे और हिन्दू-धर्मको आसन्न विनाशसे बचाये।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१-१९३४

४७०. भाषणोंके अंश[1]

[६ जनवरी, १९३४ से पूर्व]

आप लोगोंको जान लेना चाहिए कि हरिजनोंको अच्छे मकान देकर या उन्हें अलग-अलग कुएँ, स्कूल आदि मुहय्या करके ही हमारा काम खत्म नही हो जाता। यदि हम उन्हें ये सब चीजे दे देते है लेकिन उन्हें और फिर भी अस्पृश्य ही मानते हैं तो इसका मतलब उन्हें लोहेकी जंजीरके बजाय सोनेकी जंजीरमे बाँधना होगा। जिन सुविधाओंका हम उपभोग करते है हरिजनोंको भी वे सब सुविधाएँ मिलनी चाहिए। लेकिन मैं इससे आगे बढ़कर यह कहता हूँ कि आप लोगोंको उन्हें अपना लेना चाहिए, आज आपके और उनके बीच जो खाई है आपको उसे पाट देना चाहिए। हम जिस सुधारके लिए प्रयत्न कर रहे हैं वह तबतक पूरा नही हो सकता जबतक कि हम इस भेदभावको दूर करके अपने दिल साफ नही कर लेते। इससे कममें तो आप और मैं सन्तुष्ट ही नही हो सकते।[2]

आप माताओंको चाहिए कि आप अपने बच्चोंको रोज नहलाया करें और आप स्वयं भी नहाया करें। सवेरे आपको अपने मनकी सफाई करनी चाहिए, अर्थात् उठते ही जो आपको पहला काम करना चाहिए वह रामनाम लेनेका है और इसके बाद ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि आप पवित्रताके साथ दिन व्यतीत कर सकें, ताकि आपके होठोंसे कोई भी अपशब्द न निकले और आपसे कोई भी बुरा काम न हो। इसके बाद आप अपनी शारीरिक सफाई करें।

अनन्तपुरमें[3] हरिजनोंके लिए एक नलका उद्घाटन करते हुए उन्होंने कहा:

ईश्वर करे यह जल आपके लिए अमृत साबित हो। जल शुद्धताका प्रतीक है। जिस प्रकार जलसे स्नान करके हम अपने शरीर स्वच्छ बनाते है उसी प्रकार हम प्रातः स्नान द्वारा अर्थात् ईश्वरका नाम लेकर अपने हृदयको शुद्ध कर सकते है।

मैं अपने जीवनका प्रत्येक क्षण अहिंसा और प्रेमके सहारे बितानेकी कोशिश कर रहा हूँ। प्रधानतः मैं शान्ति-प्रेमी हूँ। मैं मतभेद पैदा करना नही चाहता। और जो लोग मेरा विरोध करते है उन्हें मैं विश्वास दिलाता हूँ कि मैं ऐसा एक भी काम नही करूँगा जो मेरे विचारसें सत्य और प्रेमके विपरीत होगा।[4]

१. चन्द्रशंकर शुक्लके 'साप्ताहिक पत्र' से उद्धृत, जिसपर 'बंगलौर', ६-१-१९३४, तारीख पड़ी थी।

२. इसके बादका अंश उस भाषणसे है जिसे गांधीजीने किसी दूसरी सभामें हरिजन स्त्रियोंके सामने दिया था।

३. ३ जनवरीको।

४. ये शब्द ३० दिसम्बरको नेल्लोरमें आयोजित एक सभामें कहे गये थे। इसके आगेका अंश दूसरी सभामें कहा गया था।

लेकिन हमने हरिजनोके हृदयोंमें आशाका संचार कर दिया है। उनको अनुभव होने लगा है कि उन्हे इस दासतासे मुक्ति मिलनेवाली है। आशा है कि आप इस कामको पूरा करेगे। ससारके सभी धर्मोमे यह बताया गया है कि यदि गरीबोको धोखा दिया गया, उन्हे जो आशाएँ बँधाई गई है यदि उन्हें पूरा नही किया गया तो उनके दिलसे निराशाकी आह निकलती है, शाप निकलता है। और इसमे मुझे सन्देह नही है कि हमने उनसे जो कहा है और जो वादा किया है उसके बावजूद यदि हम उन्हे धोखा देते है तो इन गरीब लोगोका शाप हमे जरूर लगेगा और हम तबाह हो जायेगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १२-१-१९३४

४७१. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

६ जनवरी, १९३४

भाई परीक्षितलाल,

भूडी भूछी[1] के कानूनके सम्बन्धमे मै यहाँसे कुछ कर सकूँ ऐसा मुझे फिलहाल तो नही दिखाई देता। तुमने दीवानके नाम पत्र लिखा यह तो ठीक ही किया है। उसका जो-कुछ जवाब आए उससे मुझे भी अवगत कराना। इस सम्बन्धमे कच्छसे यदि कोई सवाददाता अधिकृत अहवाल लिख भेजे तो मै 'हरिजन' मे प्रकाशित कर दूँ। तुम्हे जो समाचार मिले है क्या वे ठीक रूपसे अधिकृत है, जाँच करके लिखना। इससे सम्बन्धित कानूनकी एक नकल भी भेजना। सम्भवतः इसे 'नवजीवन' मे दिया था। छगनलाल जोशीसे तुम्हे जो चेक मिला है वह उस ५,७०० रुपएकी एक किस्त है। दवा डालनेके सम्बन्धमे तुम्हारा पत्र आनेसे पहले ही मैंने व्यवस्था कर दी थी। इसलिए तुम्हे ये रुपये मिले। ठक्करबापा १६को मिलेगे तब मै विस्तार से बात करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री परीक्षितलाल मजमूदार
हरिजन आश्रम
साबरमती (गुजरात)

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९९९) से।

१. देखिए खण्ड ३५, पृष्ठ २८७-८।

४७२. भाषण : बंगलौरकी छात्र-सभामें

६ जनवरी, १९३४

हरिजनोंके सेवकको सीजरकी पत्नीकी तरह सन्देहसे परे होना चाहिए। उसका चरित्र ऐसा होना चाहिए जिसपर कोई उँगली न उठा सके। उसकी दृष्टि इतनी निर्मल होनी चाहिए जिससे किसीको बुरा न लगे। उसके हाथ भी साफ होने चाहिए और उसके स्पर्शमें कोमलता और पवित्रता होनी चाहिए। उसके हृदयमें एक भी अपवित्र विचार नहीं उठना चाहिए। उसके कान ऐसे होने चाहिए कि वह ब्रह्माण्डमें व्याप्त संगीतको सुन सके, उसके पाँव उसे पवित्रतम कार्यकी ओर ले जायें, बुराइयोंकी ओर कभी नहीं, और वह सब बातें सुने लेकिन अपनी ओरसे कुछ न कहे।

अन्तमें गांधीजीने छात्रोंसे अनुरोध किया कि वे आधुनिक युगके इस अत्यन्त महान् सुधार आन्दोलनमें शामिल हों।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-१-१९३४

४७३. पत्र : गोविन्दभाई आर० पटेलको

७ जनवरी, १९३४

भाईश्री गोविन्दभाई,

आपका पत्र मिला है। आपका कार्ड भी मिला था। मैंने चार दिन पहले श्री अरविन्दको एक लम्बा पत्र लिखा था जिसमें मैंने उनसे मुलाकातके लिए समय माँगा था। अब मैं उत्तरकी बाट जोह रहा हूँ। आप मेरे पढ़ने लायक जो सामग्री भेजना चाहें सो भेज दें।

मोहनदासके वन्देमातरम्

श्री गोविन्दभाई
श्री अरविन्द आश्रम
पाण्डिचेरी

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०७४०) से; सौजन्य : गोविन्दभाई रामभाई पटेल

४७४. भाषण : एपेक्स बैंक हॉल, बंगलौरमें[1]

७ जनवरी, १९३४

सहकारिता आन्दोलनके साथ मेरा सम्बन्ध सरसरी ढंगका है। सहकारिता आन्दोलनकी सर डैनियल हैमिल्टनने जो व्याख्या की है मैंने उसी ढँगसे समझनेकी चेष्टा की। मै जानता हूँ कि किसानोके लिए यह आन्दोलन वरदान सिद्ध हो सकता है। बहुत समय पहले बम्बईमे सहकारिता सभामें, मुझे लॉर्ड विलिंग्डन द्वारा निमन्त्रित किये जानेका सौभाग्य मिला था। उस समय मैंने जो कहा थी वह मै अब आपको बताना चाहूँगा। . सहकारिता समित्तियोके लिए जरूरी है कि कर्जके रूपमे दिये जानेवाले पैसे-पैसेका पता रखे। उन्हे मालूम करना चाहिए कि कर्ज लेनेवाला व्यक्ति उस पैसेका क्या कर रहा है। मेरे मनमें यह विचार निरन्तर बना रहा है।[2]

गांधीजीने सहकारिता सोसाइटियोंके रजिस्ट्रार, स्वर्गीय श्री के० एच० रमय्याका मर्मस्पर्शी शब्दोंमें उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि छः वर्ष पूर्व जब मैं बंगलौरमें आया था तब मैं स्वर्गीय श्री रमय्यासे अक्सर मिला करता था और उनसे हँसी-विनोद किया करता था। अभी कल ही मुझे पता चला कि उनका देहान्त हो गया है। मुझे यह सुनकर सचमुच बहुत दुःख हुआ है। राज्यमें सहकारिताके लिए उन्होंने जो महान कार्य किया है वह सर्व विदित है और मुझे उसे दोहरानेकी कोई जरूरत नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-१-१९३४ और हिन्दू, ८-१-१९३४

४७५. भाषण : बंगलौरकी नागरिक सभामें

७ जनवरी, १९३४

मुझे यह अभिनन्दन-पत्र देनेके लिए मैं बंगलौर-नगरपालिकाका अत्यन्त आभारी हूँ। आपने अपने अभिनन्दन-पत्रमे मुझे याद दिलाई है कि पिछली बार जब मैं आप लोगोके बीच आया था उस समय भी आपने कृपापूर्वक मुझे ऐसा ही एक अभिनन्दन-पत्र दिया था। मुझे यह देखकर अत्यन्त प्रसन्नता होती है कि अभी भी आपके दिलोमें मेरे लिए जगह बनी हुई है। जिन हरिजनोके कार्यके सिलसिलेमे मेरा यहाँ आना

१. प्रान्तीय सहकारिता एपेक्स बैंक हॉलमें गांधीजीको एक मानपत्र भेंट किया गया था।
२. इसके बादका अंश हिन्दू से लिया गया है।

हुआ है उनके लिए आपने जो-कुछ काम किया है और कर रहे हैं उसपर मैं आपको बधाई देता हूँ। हरिजन-समस्याको हल करनेके लिए महाराजा साहबकी सरकार जिस उदारताके साथ काम कर रही है उसके लिए मैं महाराजा साहबको भी आदरपूर्वक बधाई देता हूँ। आपने अपने अभिनन्दन-पत्रमें स्वीकार किया है कि यद्यपि नगर-पालिकाने हरिजनोंके लिए इतना काम किया है तथापि अभी बहुत-कुछ करनेको बच रहता है। आपके अभिनन्दन-पत्रमें व्यक्त की गई इस भावनाको, कि अभी भी बहुत-कुछ करनेको बाकी है, यदि मैं भी नहीं दोहराता तो यह मेरी गलती होगी। आज सुबह अपने पर्यटनके दौरान मैंने हरिजनोंकी कुछ बस्तियाँ देखीं और उन्हें देखकर मुझे बहुत कष्ट हुआ। उनके घरोंको झोंपड़ी भी नहीं कहा जा सकता। इसलिए मुझे उनके घरोंको 'दरबे' कहनेमें कोई संकोच नहीं हुआ। ये दरबे हवा, वर्षा और धूपसे हरिजनोंको कोई सुरक्षा नहीं प्रदान करते। हरिजन लोग मलबे मेंसे जो-कुछ सामान इकट्ठा कर सके, उसीकी मददसे उन्होंने ये दरबे बना लिये हैं।

आपको बंगलौर नगरकी सुन्दरता पर गर्व करनेका पूरा अधिकार है। मैं यह स्वीकार करनेको स्वतन्त्र हूँ कि बम्बई नगरको "सुन्दर बम्बई नगरी" नहीं कहा जा सकता। बम्बईमें कुछ इतने बीभत्स और कुरूप स्थल हैं कि उस नगरको 'सुन्दर' कहना मिथ्या नामसे पुकारना होगा। इसलिए उसकी तुलनामें बंगलौरको सबसे सुन्दर नगर होनेके लिए पहला पुरस्कार देनेमें मुझे कोई हिचक नहीं है। लेकिन मैं चाहूँगा कि तुलनात्मक दृष्टिसे यह नगर ज्यादा अच्छा है, इस बातसे आपको सन्तुष्ट नहीं होना चाहिए। मैं चाहूँगा कि आप अपने निर्धनतम नागरिकोंके लिए भी सुख-सुविधाका एक निम्नतम मानदण्ड अपने सामने निर्धारित करें।

आगे बोलते हुए महात्माजीने कहा कि मेरा भारत-व्यापी दौरा समाप्त होनेके बाद मुझे बंगलौर आने और यहाँ कुछ दिन ठहरनेका जो निमन्त्रण कृपापूर्वक आपने दिया है उसके लिए मैं यहाँके नागरिकोंको धन्यवाद देता हूँ।

मुझे आपका इतना स्नेह मिला है और आपने मेरा इतना ध्यान रखा है कि कर्त्तव्यकी पुकार यदि मुझे मोहलत देगी तो आपकी मेजबानी और आपकी शुद्ध जलवायुका लाभ उठानेके लिए मैं स्वयं ही आ जाऊँगा, उसके लिए मुझे प्रलोभनकी जरूरत नहीं है।

इसके बाद महात्मा गांधीने कहा कि अभिनन्दन-पत्रमें मेरी पत्नीकी अनुपस्थितिका जैसा मर्मस्पर्शी ढंगसे उल्लेख किया गया है उसने मुझे बहुत विह्वल कर दिया है। कर्त्तव्यने हमें जो रास्ते दिखाये हैं, हम उन रास्तोंपर चल रहे हैं। मेरी पत्नीका कर्त्तव्य उसे यरवडा ले गया है और मेरा कर्त्तव्य मुझे आप लोगोंके बीच ले आया है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि हम दोनोंको आपका आतिथ्य-सुख फिरसे उठाकर अत्यन्त प्रसन्नता होगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ८-१-१९३४

४७६. भाषण : बंगलौरमें, मद्यत्याग संघके सम्मुख

७ जनवरी, १९३४

मेरे लिए यह एक खुशीकी बात है कि आपने मुझे यहाँ मिलने और मद्य-त्यागके सम्बन्धमें दो शब्द कहनेके लिए आमन्त्रित किया है। आपमें से कदाचित कुछ लोग यह जानते है कि जब किसीको मेरे बारेमें मालूम भी न था और राजनीतिमे प्रवेश करनेकी मैंने कल्पना भी नही की थी उस समय भी मैंने जिन विषयोको अपने हाथमे लिया था उनमे मद्यत्याग भी एक विषय था। जब एक नौजवानके रूपमे मै दक्षिण आफ्रिका गया तब मैंने वहाँ देखा कि कुली लोग, भारतीय गिरमिटिया लोग, शराब पीनेकी अपनी आदतके कारण तेजीके साथ अध.पतनकी ओर अग्रसर हो रहे है। दक्षिण आफ्रिकी कानूनके अनुसार गिरमिटिया भारतीयोका घरोमे शराब ले जाना एक जुर्म था, वे लोग कैन्टीनमे जितनी चाहे उतनी शराब पी सकते थे। जिसके फलस्वरूप अनेक स्त्रियाँ अक्षरशः नालियोमे गिरी पड़ी रहती थी। यह एक ऐसी चीज थी जिसपर किसी भी भारतीयको गर्व नही हो सकता था। मैंने इस सम्बन्धमें सरकारसे अनुनय-विनयकी, लेकिन मेरी आवाज नक्कारखानेमे तूतीकी आवाज थी। इसलिए यह स्थिति जारी रही। लेकिन इसका मेरे मनपर चिरस्थायी प्रभाव पडा और एक लम्बे प्रवासके बाद जब मै भारत लौटा तब मुझे निश्चित रूपसे यह मालूम था कि मुझे क्या करना है।

मै स्वैच्छिक मद्य-त्याग की बात नही करता। मै तो पूर्ण रूपसे मद्यनिषेधके पक्षमे हूँ। दक्षिण आफ्रिकामे मै अपने देशभाइयोंसे लड़ा और मैंने कहा "हमे शराब पीनेके समान अधिकारके लिए नही लड़ना चाहिए।" मै उन्हें लम्बे अर्से तक इसके लिए सहमत नही कर सका, लेकिन मैं उनमें से अधिकांश लोगोको इस बातके लिए अवश्य राजी कर सका कि अधिकारोके लिए लडना एक चीज है और दुर्व्यसनोका सेवन करनेका अधिकार प्राप्त करनेके लिए लडना दूसरी चीज। यदि शराब पीनेके अपराधमें राज्य द्वारा गोरोको दण्डित नही किया जाता तो हमें भी वैसी ही छूटकी माँग नही करनी चाहिए। यहाँ, भारतमें, सरकार शराबका व्यापार कर रही है। मै हरिजनोके कटु अनुभवोसे यह जानता हूँ कि वे न चाह कर भी शराब पीते है। इसपर मुझे कलकत्ताके अपने एक आदरणीय सहयोगी सतीशचन्द्र दास गुप्तकी याद हो आती है। उन्होने एक अत्यन्त लाभकारी नौकरी छोड दी। वह डॉ० रायके दाहिने हाथ थे और अभी भी माने जाते है। उन्होंने अपने रसायन धन्धेको छोड दिया और आज वे बस्तियोके निकट रहते है। उन्होंने हरिजनोसे शराब न पीनेकी प्रतिज्ञा ली। लेकिन हरिजनोंने अपनी इस प्रतिज्ञाको बार-बार तोड़ा। इससे उनको दु.ख हुआ और उन्होंने १५ दिनोके लिए उपवास किया। इसका हरिजनोंपर आश्चर्यजनक असर हुआ।

उन्होने कहा कि अब वे कभी अपनी प्रतिज्ञा नही तोड़ेंगे। सतीश बाबूको उस कष्टसे होकर गुजरना पड़ा लेकिन उनके लिए यह एक खुशीकी बात थी। जो कार्यकर्त्ता मद्यनिषेधके लिए भी जी-जानसे लड़ता है उसे यह सब सहन करना पड़ता है। अनेक हरिजनोने मुझसे कहा है, "इस प्रलोभनको हमारे आगे से हटा दीजिए और हम ठीक हो जायेंगे। इसे हमारे रास्तेमे मत रखे।" जब हम बहुत-सी चीजोके बारेमे अपने आप पर काबू नही रख सकते तो हरिजन और मजदूर लोग अपने-आप पर कैसे काबू रख सकते है? मै इन लोगोके बीच रहा हूँ, मैने इनके साथ खाया-पिया है। उनके पास मनोरंजनके कोई साधन नही है। वे तो टूटी फूटी झोपड़ियोमे रहते है। भौतिक सुखोपर खर्च करनेके लिए उनके पास पैसे नही है। इसलिए उन्हे जो थोडा-बहुत पैसा मिलता है वह कैन्टीनोमे चला जाता है। मै आपको जो यह सब बता रहा हूँ वह सिर्फ यह दिखानेके लिए कि शरावकी इस बुराईके प्रति मेरे मनमे कितनी तीव्र और कटु भावनाएँ है। मुझे तनिक भी शका नही है कि जबतक पूर्ण मद्यनिषेध नही हो जाता तबतक हम इस बुराईका सफलताके साथ मुकावला नही कर सकते। मद्यनिषेधके बारेमे मेरे निश्चित विचार है। मैने आपको अपने अनुभवके परिणामस्वरूप यह बताया है कि मद्यनिषेधके बिना भारतके मजदूर वर्गमे अच्छी आदतोका विकास होना असम्भव है। और मैने यह देखा है कि हरिजनोके अन्दर यह व्यसन सबसे ज्यादा है। भारत एक ऐसा देश है जिसमे पूर्ण मद्यनिषेध सफल हो सकता है। लोगोंको स्वभावतः शराब पीनेकी आदत नहीं है। शराव पीना फैशनमे भी शामिल नही है। यहाँके मौसमको देखते हुए भी इसकी कोई जरूरत नही है। लेकिन मद्यनिषेधसे सरकारको होनेवाली आयमे अवश्य फर्क पड़ता है। इसीसे वह कहती है, "पूर्ण मद्यनिषेधकी माँग करनेसे पहले आप हमारी आयके अन्य साधन ढूँढ दीजिए।" मेरा सरकारसे कहना है कि "यदि आप लोग अपवित्र साधनोसे राजस्व प्राप्त करते है और फिर कहते है कि 'इस राजस्वका विकल्प लाइए,' तो आपकी बात नही सुनी जा सकती। इस सवालपर कोई सौदा नही किया जाना चाहिए।"

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-१-१९३४

४७७. भाषण : बंगलौरकी सार्वजनिक सभामें[1]

७ जनवरी, १९३४

श्री वी० पी० माधवराव[2]को यहाँ मौजूद देखकर मुझे बहुत ज्यादा खुशी हुई। छ: साल पहले जब मैं आप लोगोंके बीच आया था तब मुझे उनसे मिलनेका सुख प्राप्त हुआ था। अपनी वृद्धावस्थाके बावजूद वे मुझे आशीर्वाद देनेके लिए यहाँ आये, यह देखकर पत्थरका कलेजा भी द्रवित हो जायेगा। मैं मानता हूँ कि उनका यहाँ आना हरिजनोंके लिए जो कार्य मैं कर रहा हूँ उसके लिए आशीर्वादस्वरूप है। और मेरे लिए यह बेहद खुशीकी और सन्तोषकी बात है कि जीवनका लम्बा अनुभव रखनेवाले मैसूरके विद्वान लोग इतनी भारी तादादमें इस आन्दोलनको शुभाशीष देनेके लिए यहाँ मौजूद हैं। लेकिन इस सभामें मुझे श्री हमजा हुसैनकी अनुपस्थिति अखर रही है। छ: साल पहले जब मैं यहाँ आया था, उस समय वह स्वागत समितिके अध्यक्ष थे। उनकी उदारताओंके बहुतसे प्रसग मेरी स्मृतिमें ताजे हैं। कितना अच्छा होता कि एक पुराने मित्रके नाते मेरा स्वागत करनेके लिए वह इस सभामें मौजूद होते। ईश्वर उनकी आत्माको शान्ति दे।

आपने जो मुझे थैली भेंट की है उसके लिए मैं आपका बहुत आभारी हूँ। मैं 'बढ़िया थैली' कहने ही जा रहा था लेकिन इस विशेषणका प्रयोग करते हुए मैं हिचकिचा गया क्योंकि मैं जानता हूँ कि बंगलौरके नागरिक मिलकर एक बड़ी थैली इकट्ठा करनेमें काफी समर्थ हैं और मुझे मालूम है कि आपसे बिदा लेनेके समय तक मुझे हरिजन कार्यके लिए उदारतापूर्वक दिये गये कई दान मिल जायेंगे। हिन्दुओंने इन भाई-बहनोंका जो लगातार बाकायदा दमन किया है, उसके बदलेमें आखिरकार यह कमसे-कम प्रतिपूर्ति है जो हम कर सकते हैं।

मैंने आपका अभिनन्दन-पत्र आद्योपान्त पढ़ लिया है। तथा इस अभिनन्दन-पत्रमें जो आपने बहुत-सी बातें बताई हैं उसके लिए मैं आपको और महाराजा साहबकी सरकारको बधाई देता हूँ। लेकिन जबतक अस्पृश्यताकी भावना हमारे हृदयोंमें से बिलकुल निकल नहीं जाती तबतक न तो मैसूर राज्य, न मैसूरकी जनता और न मैं ही किसी प्रकार सन्तुष्ट हो सकते हैं। हालाँकि हरिजनोंके लिए जो सब काम आपने किया है उसका मैं आभार मानता हूँ लेकिन मेरा आपसे ऐसा कहना है कि जबतक सारे हरिजनोंको वे सब अधिकार न मिल जायें जो जीवनके सभी क्षेत्रोंमें सवर्ण हिन्दुओंको मिले हुए हैं तब तक आप चैनसे न बैठें। ईश्वर द्वारा हमें जो मोहलत

१. शामको नैशनल हाई स्कूलमें आयोजित इस सभामें बहुत बड़ी संख्यामें लोग शरीक हुए थे।

२. मैसूर, त्रावणकोर और बड़ौदाके अवकाश-प्राप्त दीवान, और मैसूर राज्य हरिजन सेवक संघके अध्यक्ष।

-दी गई थी, उसमेंसे थोड़ी-सी बच रही है, और इसी अवधिमें आइए, हम लोग अनिवार्य आत्म-शुद्धिका काम पूरा कर लें। निश्चित मानिए कि यदि आपने इस मोहलतका फायदा नहीं उठाया तो हिन्दुओंको फौरन ईश्वरका कोप-भाजन होना पड़ेगा।

लेकिन एक शब्द हरिजन भाई-बहनोंसे कह दूं। आप इस आत्मशुद्धिसे छुटकारा नहीं पा सकते। आप लोगोंको भी सार्वजनिक बलिवेदी पर कुछ बलिदान करने हैं। बलिदान यह कि आपको आन्तरिक और बाहरी, दोनों प्रकारकी सफाई-स्वच्छताके नियमोंका कठोरतासे पालन करना होगा। दूसरा बलिदान यह करना होगा कि जहाँ कहीं आप लोगोंमें मुर्दार मांस और गो-मांस खानेकी आदत अब भी प्रचलित हो वहाँ इसे छोड़ दें। सभ्य संसारके प्रत्येक भागमें मुर्दार मांसको घृणित माना जाता है। इसे मनुष्यके खानेके अनुपयुक्त समझा जाता है। यह नहीं हो सकता कि कोई अपनेको हिन्दू भी कहे और गोमांस भी खाये। गौकी पवित्रता और गो-पूजा हिन्दू-धर्मका एक अभिन्न अंग है। तीसरे, यहाँपर मौजूद हरएक हरिजन स्त्री-पुरुषसे मैं यह कहूँगा कि वह मद्यपानकी आदतको छोड़ दे। कोई हरिजन यह न कहे कि सवर्ण हिन्दू भी तो शराब पीते हैं। यह कोई जवाब नहीं है। हरिजन होनेके नाते मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आप सवर्ण हिन्दुओंके सभी दुर्गुणोंसे बचकर रहें। सवर्ण हिन्दू आपके प्रति जो भी प्रतिपूर्ति करें, उसके बावजूद आखिरकार ईश्वरके समक्ष अन्तत मुक्ति पाना आपके अपने ही हाथोंमें है। परसों[1] जब हरिजनोंने मुझे यह आश्वासन दिया कि वे गो-मांस खाना छोड़ चुके हैं और मद्यपान भी छोड़नेकी कोशिश करेंगे तो इस बातसे मुझे बेहद खुशी हुई। आइए, सब मिलकर ईश्वरसे प्रार्थना करें कि वह हरिजनोंको शक्ति दे ताकि वे शराब छोड़नेके अपने संकल्पका पालन कर सकें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-१-१९३४

४७८. बातचीत: हरिजन कार्यकर्त्ताओंसे[2]

बंगलौर,
७ जनवरी, १९३४

राज्य सरकार जो काम कर रही है उसमें अपनी ओरसे कुछ और जोड़ना आपका काम है। आप ऐसे कार्यकर्त्ता ढूंढ सकते हैं जो हरिजनोंके पास जायें और जाकर उनके बीच रहें। यह तो केवल एक उदाहरण मात्र है। नियम तो यह है कि राज्य सरकार जहाँ अपना कार्य खत्म करे आप वहाँसे शुरू करें। राज्य सरकार हर व्यक्तिकी जरूरतोंको पूरा नहीं कर सकती। यह तो गैर सरकारी लोगोंका विशेषाधिकार है। प्रत्येक कार्यकर्त्ताको अपनी क्षमता आँकनी चाहिए।

१. देखिए "भाषण: हरिजनोंकी सभामें", ५-१-१९३४।
२. यह चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से लिया गया है। गांधीजीसे लोगोंने पूछा था: "जब राज्य सरकार इतना कुछ कर रही है तो हमें क्या करना चाहिए?"

चमत्कारी प्रभाव डालनेके उद्देश्यसे हमें कोई काम नही करना चाहिए। हमारा कार्य आडम्बरपूर्ण न होकर, ठोस होना चाहिए। हमें लोगोके — सवर्णों तथा हरिजनोंके — निकट सम्पर्कमे आना होगा। राज्य सरकार लोगोके साथ ऐसा सम्पर्क कदापि स्थापित नही कर सकती। यह तो अनिवार्यतः समाज सुधारकका काम है। मन्दिर प्रवेशका कार्य ऐसे कार्यकर्त्ताओको करना होगा जिन्हें विशेष रूपसे इस कार्यके लिए तैयार किया गया हो। यदि वे अपने अच्छे चरित्रका परिचय देते है तो वे हरिजन जनताको प्रभावित कर सकेंगे। कार्यकर्त्ताओको हरिजनोके बीच अजनबियो अथवा संरक्षकोके रूपमे नही जाना चाहिए बल्कि उनके मित्र और सेवकके रूपमें जाना चाहिए। ऐसा कार्य वर्धामे किया जा रहा है। यदि राज्यमे एक भी सच्चा कार्यकर्त्ता होगा तो अन्य अनेक लोग उसका अनुकरण करने लगेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१-१९३४

४७९. पत्र : एन० आर० मलकानीको

८ जनवरी, १९३४

प्रिय मलकानी,

यह रहा तुम्हारे लिए कुछ ठोस काम। अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धी दोनो विधेयकोके बारेमें वक्तव्य तैयार करो, विवरणमे दोनो विधेयकोका पाठ भी दो, सरकारी परिपत्र हासिल करो और वक्तव्यके साथ सारा उपलब्ध साहित्य प्रस्तुत करो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०४) से।

४८०. पत्र : पार्वतीबहन पी० देसाईको

बंगलौर
८ जनवरी, १९३४

चि० पार्वती,[1]

तेरा पत्र मिला। प्रागजीके सम्बन्धमें सबसे पहले तेरे जरिये ही जान पाया। धारवाडमे कोई स्नेही है क्या? वहाँसे पत्र आये तब मुझे सूचित करना। धारवाड कब ले गये? तारा और बच्चोके समाचार देती रहना। पता वर्धाका ही करना। पत्र तूने ही लिखा है या किसीसे लिखवाया है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०३६) से।

१. प्रागजी देसाईकी पत्नी।

४८१. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

बंगलौर
८ जनवरी, १९३४

बा,

तेरा पत्र इस बार अभी तक नहीं मिला। लेकिन भटकता हुआ आ पहुँचेगा, ऐसा मैं मानता हूँ। अब तुझे अखबार मिलता होगा। 'भागवत' और 'रामायण' मिली होगी। अन्य जो पुस्तकें चाहिए हो सो मँगा लेना। मणिलालका पत्र आया है। सुशीलाका भी। दोनों मजेमें हैं; मणिलाल शान्त है, चिन्ता न करनेको लिखता है। सीता खूब बढ़ रही है। खूब खेलती है। देवदास जितना सोचा था उससे जल्दी छूट गया है। अहमदाबाद गया है। उसका तार मुझे आया था। कदाचित् तुझसे मिलकर जायेगा। रामदास और नीमुके पत्र भी आये थे। मनुको मैं लिखता रहता हूँ, लेकिन फिर उनका कोई पत्र नहीं आया है। किशोरलालका बुखार अब कम है इसलिए थोड़े दिनोंमें उनके व्याधिमुक्त होनेकी आशा की जा सकती है। मणिकी अच्छी ही खबर है। ओम, किसन, चन्द्रशंकर आदि सब मजेमें हैं। आज मैं बंगलौरमें हूँ। तुझे सब याद करते हैं। शंकरलाल और गुलजारीलाल यहीं आये हैं। मजदूरोंके वेतनके बारेमें पंचायत बैठेगी। कल मंगलवार है इसलिए कल पंचायत बैठेगी। बादमें मुझे मलाबार जाना है। जहाँ तू घूम आई थी वहाँ जाना होगा। उर्मिलादेवीका लड़का अभी आजकल मद्रासमें नौकरीपर है। मेरी तबीयत अच्छी रहती है। चिन्ता करनेका तनिक भी कारण नहीं। लोग सब झुण्डके-झुण्ड आते हैं और थैलियाँ, आभूषण आदि भी देते हैं। कान्ति अब बेहतर है। मैं देखता हूँ कि बाल थोड़े दिनोंमें मुझे मिलेगा। उसकी तबीयत भी अच्छी है। उम्मीद है, तुम सब वहाँ आनन्दपूर्वक होगी। शान्ता, ललिता अभ्यासमें कहाँ तक बढ़ी हैं? अब प्रवचन।

आज 'गीता'में यज्ञके सम्बन्धमें जो कहा गया है उसपर थोड़ी चर्चा करूँगा। यज्ञकी बात तीसरे अध्यायसे शुरू होती है। और उसमें भगवान कहते हैं कि यज्ञ किये बिना जो मनुष्य भोजन करता है वह चोरीका खाता है। लेकिन यह तो बहुत भारी वचन कहा जायेगा। क्योंकि चोरीका अन्न खाना तो कच्चा पारा है। कच्चा पारा किसीसे हजम नहीं होता और जो खाता है उसके अंग-अंगमेंसे फूट निकलता है। इसीसे अखा भगतने कहा है। 'कच्चो पारोखाचो अन्न तेवुं छे चोरीनुं धन' अर्थात् जो मनुष्य घड़ीभर यज्ञ बिना रहता है वह चोर ठहरता है। इस यज्ञको हमें सबको जानना चाहिए। हमारे सौभाग्यसे जिसका हृदय व्यवस्थित है उसके लिए यज्ञ सहल है। इसके लिए धनकी जरूरत नहीं, बुद्धिकी नहीं, और शिक्षाकी भी नहीं। यज्ञ अर्थात् हर कोई परोपकारी कार्य। जिसका समस्त जीवन यज्ञमय हो उसीके विषयमें कहा जा

सकता है कि वह चोरीका अन्न नही खाता। इससे जो व्यक्ति थोड़ा-सा भी यज्ञ करता है वह अपेक्षाकृत कम चोरी करता है। इस तरह विचार करनेसे हम सब थोडी-बहुत चोरी अवश्य करते है। जब हम स्वार्थ-भावका त्याग करते है तभी पूरा यज्ञ किया कहा जायेगा। स्वार्थका त्याग करना अर्थात् अहम्का, "मै" का त्याग करना। यह मेरा है और वह पराया, यह मेरा लडका है और वह दूसरेका, ऐसा भाव मनमे रहना ही नही चाहिए। ऐसा तो वही कर सकता है जिसने अपना सब कुछ कृष्णार्पण कर दिया है। जो मनुष्य ऐसे करता है सो सब ईश्वरको बीचमे रखकर करता है, उसको सेवकके रूपमे ही करता है और सेवाभावसे करता है। ऐसा मनुष्य नित्य सुखी रहता है, नित्य शान्त रहता है। उसके लिए सुख, दुख समान है। वह अपना शरीर, मन, बुद्धि, धनका जो कुछ भी उसके पास हो सब परमार्थके लिए ही उपयोग करता है। ऐसा पूर्ण यज्ञ हम सब नही कर सकते। समस्त जगतकी सेवा हमसे हो सके तो करे। ऐसी भावना मनमें हो तो ऐसा कौनसा कार्य है जो सारे मनुष्य कर सकते है, जिसमे समस्त जगतकी सेवा निहित हो। इस तरह विचार करनेपर कताई मेरे ध्यानमे आई। परमार्थकी दृष्टिसे यह कार्य असख्य व्यक्ति कर सकते है। कह सकते है कि इतनी मेहनत जगतके अर्थकी। लेकिन यह तो मैने एक उदाहरण दिया है। मुझे तो मुख्यत. तुम्हे यज्ञका हेतु और उसका अर्थ समझाना था। इतना यदि मै इससे समझा सका हूँ तो यह पर्याप्त है। सब बहनोको,

बापुके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृष्ठ ७-८

४८२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

बगलौर
८ जनवरी, १९३४

भाई वल्लभभाई,

बाको पत्र लिखनेके बाद तुम्हे लिखने बैठा हूँ। अब शामके चारसे ज्यादा बजे है। मौनवार है। आज हम बगलौरमे है। कल मजदूरोके वेतनमे कटौती करनेकी (अहमदाबादकी) मिलोकी माँगके बारेमें पचायत बैठेगी। उसके लिए शकरलाल (बैंकर), गुलजारीलाल आदि आ गये है। मिल मालिक कल आयेंगे। मैने उन्हे पाँच घंटे देनेकी बात कही है। कल रात हम मलाबारकी ओर रवाना होनेवाले है।

कामका बोझ तो बराबर रहता ही है। फिर भी स्वास्थ्य अच्छा रहता है। कल सुब्बाराव[1] आकर शरीरकी जाँच कर गये और खुश हुए। रक्तका दबाव १५५-१०० आया। यह बहुत अच्छा माना जायेगा। अभी तक तो इतनी ही धारणा है कि ठक्कर बापा १९ तारीखको कालीकटमें मिलेगे।

१. बंगलौरके एक विख्यात डॉक्टर।

यहाँ मैं मैसूर राज्यके भवनमें हूँ। जहाँ पहले था, वहीं।[1] लोगोंमें काफी उत्साह है। दीवान आकर मिल गये है। तुम्हें बहुत याद करते थे। अपना सलाम कहलाया है। प्रेम खूब जताते हैं।

. . .[2]का पत्र आया था। उसने मोटर बेच देनेकी इच्छा व्यक्त की है। बादमें ठक्कर बापाका तार आया था कि वह बेच देनेको तैयार है। इसलिए मैंने अनुमति दे दी। मुझे बात कुछ समझमें तो नहीं आई। ऐसे मामलोंमें मेरा सारा आधार यदि कोई है तो वह तुम हो। अतएव मैं अनेक बार एकलव्यकी भाँति व्यवहार करता हूँ। एकलव्य द्रोणाचार्यका मिट्टीका पुतला बनाकर उससे ज्ञान पाकर अर्जुनके समकक्ष बन गया। मैं तुम्हारी मानसिक प्रतिमा बना लेता हूँ और उससे पूछ लेता हूँ। यह सोचकर कि इसमें तुम अपनी सम्मति ही दे रहे हो, मैंने इस स्वीकृतिका तार दिया।

कुँवरजीकी पत्नीकी मृत्युसे नेपोलियन[3]को बहुत आघात पहुँचा है। मैंने आश्वासन का जो पत्र भेजा था उसके उत्तरमें मुझे उसके स्नेहपूर्ण पत्रसे इस बातका आभास मिलता है। मैंने उसे फिर पत्र लिखा है। . . .[4] सन्तुष्ट नही है, यह मै उसके पत्र-परसे देखता हूँ। मैंने पूछा है कि उसे क्या दुःख है?

मुन्शी वकालत करने लग गये है। जीवराजके बारेमें तो तुमने पढ़ा होगा।

डॉ० विधानके बारेमे कहा जा सकता है कि वे मौतके मुँहसे वापस आये है। मैंने उन्हें तार दिया था, उसके उत्तरमें उन्होंने उक्त बात लिखी है। एक हड्डी टूट गई है। पन्द्रह दिन तक तो खाट पर पड़े रहना होगा।

मामाका पत्र आया है। उसमें तुम्हारे पत्रका उल्लेख है। वे लिखते है कि हरिजन कार्यके सिलसिलेमें अलगसे हिसाब-किताब रखना, अलग से चन्दा जमा करना अब सम्भव नही होगा, पैसा भी कोई नही देगा। इसलिए नवसारी, गोधरा आदि स्थानोंपर इस तरहका जो कोष और हिसाब रखा जाता था उन सबके लिए हमसे जितना बन सके उतना बजट पास कर हरिजन सेवक संघसे पैसा लेनेका निश्चय किया गया है। सम्बन्धित संस्थाओंके स्वामित्वको नही बदला जायेगा। मात्र उन्हे उचित अनुदान मिलता रहेगा और वे हरिजन सेवक संघकी देखरेखमें कार्य करेंगी। उनके स्वतन्त्र अस्तित्वको तनिक भी आँच नही आयेगी। मामा अभी तो स्वेच्छासे इसी काममें लगे रहेंगे। मैंने किसीका भी मार्गदर्शन करनेसे साफ इन्कार कर दिया है। मेरा मन ही इसके लिए हामी नही भरता। इस हरिजन संघके बारेमें यदि तुम्हें कुछ पूछना अथवा जानना हो तो मुझे लिखना। स्वयं मुझे समझ नही आता कि मैं क्या लिखूँ। लेकिन तुम जरा भी इशारा करोगे तो मैं सारी आवश्यक जानकारी लिखकर भेज दूँगा। मैं स्वयं ही उत्तर लिखने बैठ जाऊँगा, ऐसी अपेक्षा न करना। मैं हाथ, मस्तिष्क और समय बचाकर ही काम करता हूँ।

१. कुमार पार्क।
२. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिया गया है।
३. छोटूभाई मेहता।
४. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिया गया है।

देवदास जल्दी रिहा हो गया है। उसका तार आया था। मुझे मिलकर तो अवश्य जायेगा। तार अहमदाबादसे दिया था। बहुत करके बासे मिलने जायेगा।

मणिलाल और सुशीलाके पत्र आते रहते हैं। उसका ठीक चल रहा है। केशु भी ठीक काममें लग गया है। रामदास परेशान है। वह शान्ति पा ही नही सकता।

ऐसा लगता है कि किशोरलाल ठीक होता जा रहा है। ब्रजकृष्ण जी गया है। अब थोड़ा चल फिर भी लेता है। जमनालालको सर्दी लग गई है। शंकरलालका खयाल है कि उनका स्वास्थ्य अच्छा तो नि.सन्देह नही है। वजन तो २०० पौडके आसपास हो गया है।

ओम और किसन सानन्द हैं। मीराबहन का तो कहना ही क्या। तुम दोनोको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ५९-६१

४८३. पत्र : शान्तिकुमार मोरारजीको

८ जनवरी, १९३४

चि० शान्तिकुमार,

तुम्हारे पत्रकी तो अनेक बार आशा किये रहता हूँ। और जब नही मिलता तो मैं मान लेता हूँ कि तुम मुझपर दया खाकर ही नही लिखते।

ऑपरेशन ठीक ढंगसे हो गया होगा।[1] मुझे स्वयं लिखना या लिखवाते रहना। सामान्य रूपसे तो यह आपरेशन मामूलीसा माना जाता है, ऐसा मैं सुनता हूँ।

'हरिजन' तो पढनेमे आता ही होगा। मेरा स्वास्थ्य ईश्वर निभाये चलता है।

तुम दोनोको,

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वर्धाके पतेपर लिखना ही सुरक्षित है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७२१) से; सौजन्य : शान्तिकुमार मोरारजी

१. प्रेषीका हर्नियाका ऑपरेशन हुआ था।

४८४. पत्र : क० मा० मुन्शीको

८ जनवरी, १९३४

भाईश्री मुन्शी,

तुम्हारा पत्र मिला। लीलावतीका अभी तक तो नहीं मिला।

अस्पृश्यताके सम्बन्धमें आवश्यक साहित्य मैं तुम्हें भेजूँगा। यदि पूरी रोटी न मिल पाये और चौथाई ही मिले तो भी ले लूं, मैं ऐसा हूँ। रोटीके बदले रोटीके नाम जब पत्थर मिलें तो मैं लेनेको तैयार नहीं होता। तुम मुझे कभी रोटीके नामपर पत्थर दोगे इसका भय तो मुझे कदापि नही है। अतः तुमसे जो-कुछ दिया जा सके वह दिया करो।

तुम जैसा लिखते हो वैसा एक पक्ष निर्माण हो जाये इसमें कोई हानि है, ऐसा मैं नही मानता। तुम्हारे मसविदेमे मैंने कुछ-एक सुधार किये हैं, उन्हें देख जाना।[1] सविनय अवज्ञाके सम्बन्धमें जो उल्लेख है वह योग्य नही है। कुछ हदतक उसमें विकृतियाँ अवश्य आ गई थी पर इतना कहना भी इस मसविदेमें एकदम अप्रासंगिक है। विरोधी लोग उसका दुरुपयोग किये विना नहीं रहेंगे और सविनय अवज्ञाका जो अंग मैंने छोड़ दिया है उसका कारण भी कोई विकृति नही थी।

यह पक्ष भी जो तैयार हो रहा है वह कोई दूसरे दलोंको आकर्षित करनेकी दृष्टिसे नही है। बल्कि इसके निर्माणका कारण यह है कि वे कांग्रेसवाले जो सविनय अवज्ञा आन्दोलनमे नही पड़ना चाहते या नहीं भाग ले सकते वे लोग अपनी हस्ती कायम रखने और थोड़ी बहुत सेवा करनेकी इच्छासे ऐसा करना चाहते हैं। और इसीलिए दूसरे पक्षोंका उल्लेख मैं अनावश्यक समझता हूँ। यह पक्ष बन जाये फिर भले ही दूसरे दलोंसे बातचीत करें? इसके नामकरणके बारेमें सोचना होगा। जैसे तुम मुझसे पूछना उचित समझते हो उसी प्रकार जवाहरलालसे भी इसकी चर्चा करो। ऐसी मेरी सलाह है। यदि अधिक भाग-दौड़ करके स्वास्थ्य खराब करोगे तो मेरे उलाहने सुनने होंगे। तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५३०) से; सौजन्य : क० मा० मुन्शी

१. मुन्शी और रंगास्वामी अय्यंगारने स्वराज्य दलको कांग्रेसके संवैधानिक अंगके रूपमें पुनः प्रतिष्ठित करनेसे सम्बन्धित एक योजनाका मसविदा तैयार करके गांधीजीको दिया था।

४८५. सन्देश : मैसूरके लोगोंको

९ जनवरी, १९३४

मैं अपने साथ मैसूर राज्यके अपने संक्षिप्त प्रवासकी अत्यन्त सुखद स्मृतियाँ लिए जा रहा हूँ। मैं आशा करता हूँ कि मैसूर की जनता अपनी जिस प्रबुद्धताके लिए विख्यात है उस ख्यातिको वह अस्पृश्यताको जडमूलसे उखाड कर कायम रखेगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १०-१-१९३४

४८६. भाषण : पालघाटकी सार्वजनिक सभामें[1]

१० जनवरी, १९३४

अपने उन मित्रोके प्रति जो अपने-आपको सनातनी कहते है पूर्ण आदरभावके साथ मैंने आज सवेरे अधर्मभूमि मलाबारमे प्रवेश किया। और जिस समय मै जाने-पहचाने रास्तोसे गुजर रहा था उस समय मेरी आँखोंके सामने एक ऐसे असहाय नायडीका चेहरा उभर आया जिससे मैं पिछली वार मिला था।[2] सुवहके दस या ग्यारह वज रहे होंगे और हम लोग अस्पृश्यता, अदर्शनीयता या अनुपगम्यताके बारेमे चर्चा कर रहे थे। संसारभरमें केवल मलाबार ही एक ऐसा स्थान है जहाँ इनके सारे स्वरूप दिखाई पडते हैं। चर्चा चल ही रही थी कि अचानक एक तीखी आवाज सुनाई दी। जो लोग मुझसे वातकर रहे थे उन्होने कहा "हम आपको एक जीवित नायडी दिखा सकते है।" सार्वजनिक मार्गका उपयोग उसके लिए वर्जित था। वह नगे पाँव, विना कोई आहट किये खेतोसे होकर चला जा रहा था। मै मित्रोके साथ वाहर गया और मैंने नायडीको देखा। मैंने उसे अपने पास आने और वातचीत करनेके लिए कहा। वह स्पष्टत. सहमा हुआ था कि कौन जाने कब उसपर कोई प्रहार कर वैठे। उसने काँपते हुए मुझसे वातचीत की। मैंने उसे वताया कि मेरे समान ही सार्वजनिक मार्गपर वह भी चल सकता है। उसने कहा, "ऐसा नही हो सकता। मै सार्वजनिक मार्गपर नही चल सकता।" मै इस किस्सेको यही समाप्त करता हूँ और सनातनियोसे अथवा किसी भी व्यक्तिसे कहता हूँ कि वे इस अमानवीय व्यवहारके

१. प्रातः सवा आठ बजे हुई इस सभामें लगभग ४००० लोग उपस्थित थे। इसमें नगरपालिका और तालुका वोर्डकी ओरसे गांधीजीको अभिनन्दन-पत्र भेंट किये गये थे।
२. देखिए खण्ड ३५, पृष्ठ १५०।

पक्षमें कोई [शास्त्रीय] प्रमाण दिखायें। आप मुझे अपने साथ मुस्कराते, हँसते और मजाक करते हुए पायेंगे लेकिन आप लोग यह भी समझ लें कि इस हँसी-मजाकके पीछे, इन मुस्कराहटों और ठहाकोंके पीछे मलाबारकी अपनी इस यात्राके दौरान मुझे उस नायडीका चेहरा और वह दृश्य बराबर याद आता रहेगा, मुझे कचोटता रहेगा।

जिस समय मैं यहाँ आ रहा था उस समय कुछ प्रदर्शनकारियोंने मुझे काले झण्डे दिखाये। और कुछ लोगोंने राष्ट्रीय झण्डोंसे मेरा स्वागत किया। मैं आपसे कहता हूँ कि राष्ट्रीय झण्डा लिये हुए लोगोंकी अपेक्षा मैंने काले झण्डे दिखानेवाले प्रदर्शनकारियोंको अधिक पसन्द किया, क्योंकि — मैं काले झण्डेके पीछे छिपे असत्यको उनके नग्न स्वरूपमें देख सका। और जो लोग काले झण्डे लिए हुए थे उन्होंने यदि अपने शरीरपर ब्राह्मणोंकी तरह चन्दन लगा रखा था तो उससे क्या? हाथमें काला अथवा लाल झण्डा लेनेसे अथवा माथेपर तिलक लगानेसे कोई ब्राह्मण नहीं बन जाता। ब्राह्मणत्व कोई बाहरी चिह्नोंसे नहीं जाना जाता। जिन शास्त्रोंमें मेरी आस्था है और जिनके लिए मैं अपने प्राणोंकी बाजी भी लगा सकता हूँ वे मुझे बताते हैं कि ब्राह्मण केवल वही है जो ब्रह्मको जानता है। ब्राह्मणत्व मानवताका, अनात्मशंसाका, दयाका सार है। हमारे पूर्वजोंने हमें जिन गुणोंका आदर करना सिखाया है वे सारे गुण एक ब्राह्मणमें मूर्तिमान् होने चाहिए। ब्राह्मण वही है जो धर्मग्रन्थोंका जीवित आगार है, वह व्यक्ति नहीं जो काले झण्डे लेकर असत्यका प्रदर्शन करता है।

मैं मलाबारमें अपनी आत्माकी गहराइयोंसे बोलनेके लिए आया हूँ। जैसा कि आप जानते ही हैं मलाबारमें ऐसी बहुत सारी चीजें हैं जिन्हें देखकर मैं हर्षोन्मत्त हो उठता हूँ। मलाबारमें जो दृश्यावली है वह संसारमें अद्वितीय है। मनुष्य यदि सही आचरण करे तो मलाबारमें सरलतासे जीवन-यापन कर सकता है। मलाबारमें स्त्रियोंको भारतभर में सबसे ज्यादा स्वतन्त्रता प्राप्त है। मैं मलाबारमें जितनी स्त्रियोंसे मिला हूँ उन सबमें ऐसी तेजस्विता है जिसका मैंने हमेशा सम्मान किया है। जैसा कि आपको मालूम है मुझे त्रावणकोरकी भूतपूर्व महारानीसे मिलनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उनकी सादगी पर मैं मुग्ध हो गया और मुझे प्रथम दर्शन पर ही उनसे प्रेम हो गया। लेकिन मलाबारमें अस्पृश्यताकी जो भावना पाई जाती है उस पर गर्व करने जैसी कोई बात नहीं है। यह संसारकी सबसे बड़ी बुराई है। मैं चाहता हूँ कि आप मलाबारसे अस्पृश्यताके इस कलंकको धो डालें, और यदि आप ऐसा कर सकते हैं तो स्वाभाविक है, सारा हिन्दुस्तान आपका अनुकरण करेगा, और यदि आप चाहें तो ऐसा कर सकते हैं। मैं बहुत आशाएँ लेकर मलाबार आया हूँ। यह अब आपकी इच्छा पर निर्भर करता है कि आप उन्हें पूरा करें अथवा न करें। लेकिन आप मेरी इस भविष्यवाणीको याद कर लें कि आज अस्पृश्यता जिस रूपमें प्रचलित है, वह जारी रहा तो हिन्दू धर्मका नाश हो जायेगा। मैं चाहूँगा कि मैं जो कह रहा हूँ आप उस पर विश्वास करें और हिन्दू धर्मको आनेवाले विनाश

से वचा ले। आप इन दोनोमें से कुछ भी चुन सकते हैं। यही समयहै, फिर इसका मौका नही मिलेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१-१९३४

४८७. भाषण : पालघाटकी महिला-सभामें[1]

१० जनवरी, १९३४

क्या आप जानती है कि मै यहाँ क्यो आया हूँ? मै यहाॅ आपसे पश्चात्ताप करनेके लिए कहनेको आया हूँ। मै यहाॅ आपसे यह वात भुला देनेको कहने आया हूँ कि किसी भी व्यक्तिको "अस्पृश्य" कहा जा सकता है। मलाबारकी स्त्रियाँ अर्थात् आप लोग भारतके किसी अन्य भागकी महिलाओकी अपेक्षा अधिक स्वतन्त्र है। और यदि आप चाहे तो आप हिन्दू-धर्मको सकटसे बचा सकती है। यदि लाखो लोग मेरे पास आये और आकर मुझसे कहे कि अस्पृश्यता एक दैवी प्रथा है तो मै यही कहूँगा कि अस्पृश्यता शैतानकी बनाई हुई प्रथा है। मै अभी-अभी एक छोटी बस्तीका दौरा करके आया हूँ जहाँ मै नायडी भाइयो और कुछ नायडी बहनोसे मिला। यह आपके लिए और मेरे लिए शर्मकी बात है कि उन्हे दूरसे फेंके गये थोड़ेसे चावलो पर गुजारा करना पडता है। मुझे आपसे इससे ज्यादा और कुछ नही कहना है। और यदि आप [अछूतोद्धारके कार्यको] प्रायश्चित्तके साथ शुरू करना चाहती है तो आपको यह शुरुआत अपने जेवर और चाँदीके सिक्के देकर करनी चाहिए जिससे कि इन असहायोकी मददके लिए चन्दा जुटाया जा सके।

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-१-१९३४

४८८. भाषण : नायडियोंकी सभा, कुजालमन्नम्में

१० जनवरी, १९३४

मुझे यह जो मानपत्र मिला है, मेरे ख्यालसे इसे आपने पढा तक नही है। इसलिए मानपत्रमे जो लिखा हुआ है उसका बहुत थोडा मूल्य है और यह मेरे विचार से सत्यका भंग है। असलमे यदि यह मानपत्र आपने मुझे मलयालममे पढ कर सुनाया होता तो शायद मै समझता कि इसमे आपने अपनी भावनाओंको व्यक्त किया है और इसका कुछ शिक्षात्मक मूल्य होता। इसके अतिरिक्त आपकी हालतसे मै अनजान नही था। और एक उद्देश्यको ध्यानमे रखकर मै भारतके अन्य भागोका दौरा कर रहा हूँ, उसी उद्देश्यको लेकर मै अभी-अभी मलाबार आया हूँ और वह उद्देश्य है नायडी

१. इस सभामें, जो गोडर पिक्चर पैलेसमें हुई थी, लगभग, १,००० स्त्रियोंने भाग लिया था।

और गैर-नायडी लोगोंके भेदको दूर करना। अनुपगम्यता अथवा अस्पृश्यतासे बड़ा पाप और कोई नही है। जब तक हरिजन लोग अस्पृश्यता रूपी पिशाचके पैरों तले कुचले जाते रहेंगे तब तक हमें उस पिशाचको कुचलनेके लिए काम करते रहना होगा। मैं चाहता हूँ कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्मसे पूरी तरह नष्ट हो जाये अन्यथा स्वयं हिन्दू धर्म ही नष्ट हो जायेगा। मैं चाहूँगा कि आप लोग जहाँ तक आपसे बन सके आत्मशुद्धिके इस आन्दोलनमें भाग लें और शिक्षाके रूपमें आपको जो भी सुविधा उपलब्ध हो उसका आप अपने लिए और अपने बच्चोंके लिए लाभ उठायें। यदि आपको शराब पीनेकी आदत हो तो आपको उसका त्याग कर देना चाहिये और यदि आप सफाई, स्वच्छताके सरल नियमोंका पालन नही करते तो आपको उनका पालन करना चाहिए। आपको सफाई सम्बन्धी नियमोंका पालन भी करना चाहिए तथा शरीर और मनसे स्वच्छ रहना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ११-१-१९३४

४८९. भाषण: गुरुवायूरकी महिला-सभामें

१० जनवरी, १९३४

बहनो,

मुझे जो अभिनन्दन-पत्र और थैली भेंट की गई है उसके लिए आपका धन्यवाद। मलाबारमें यह पहला स्थान है जहाँ अभिनन्दन-पत्र स्त्रियोंने भेंट किया है। इससे यदि आपका यह मतलब हो कि आप इस ताल्लुकेकी स्त्रियोंका प्रतिनिधित्व करती हैं तो इसका अर्थ यह हुआ कि यहाँके पुरुषोंको मुझे कोई अभिनन्दन-पत्र नहीं देना है। हो सकता है कि आपके अन्दर आत्म-शुद्धिकी भावना न आ पाई हो। मैं देखता हूँ कि मलाबारकी स्त्रियोंने पुरुषों और स्त्रियों दोनों की ही ओर से अभिनन्दन-पत्र भेंट करनेका काफी प्रयास नही किया है। अस्पृश्यताके विरुद्ध जेहादका नेतृत्व स्त्रियोंको ही करना चाहिए। शिक्षाके मामलेमें, मलाबारकी स्त्रियाँ दूसरे प्रदेशोंकी अपनी बहनों की अपेक्षा बहुत आगे हैं। मैं चाहता हूँ कि आप इस शिक्षाका ज्यादासे-ज्यादा लाभजनक ढंगसे उपयोग करें। मुझे जो चीजें भेंटमें दी गई हैं जब मैं उनकी नीलामी करूँ उस समय मैं यह उम्मीद करता हूँ कि उन्हें स्त्रियाँ ज्यादा दामोंमें लेकर पुरुषोंको शर्मिन्दा कर देंगे। मैं कह सकता हूँ कि आप एक चूड़ी, हार आदि देकर यह काम आजसे ही शुरू कर सकती हैं। लेकिन आप या तो मुस्करा रही हैं या हँस रही हैं। मैं मामलेको गम्भीरतासे ले रहा हूँ। मद्रास और आन्ध्र जैसे भारतके कम विकसित प्रदेशोंमें स्त्रियोंने दो या तीन चूड़ियाँ देकर बोली बोलनेका काम शुरू कर दिया है। मैं ज्यों ही दो-चार बातें पूरी कर लूँगा, मैं प्रत्यक्ष रूपसे स्त्रियोंके साहसकी परीक्षा लूँगा। यहाँ जो बहनें इकट्ठी हुई हैं उन्हें मैं यह बता देना चाहता हूँ कि आज सुबह मलाबार आनेके बादसे मैं यह सोचता रहा हूँ कि मैं कौनसा

विशेष सन्देश दे सकता हूँ क्योंकि मलाबारमे तो अस्पृश्यताकी बीमारी बहुत भयंकर रूपमें दिख रही है।

मैं समझता हूँ कि यदि मलाबारकी स्त्रियाँ दुगनी शक्तिके साथ इस कामको करनेका निश्चय कर ले तो इस अस्पृश्यतारूपी पिशाचका अन्त किया जा सकता है। ससारके दूसरे भागोमे स्त्रियोने त्याग और कष्ट-सहन द्वारा अपने अधिकार हासिल किये है। लेकिन मलाबारकी स्त्रियोके लिए तो इस बातकी दुगनी विशेषता होनी चाहिए और उसका सीधा-सादा कारण यह है कि भारतमे मलाबारकी स्त्रियोका अपना एक अनोखा स्थान है। इसलिए यदि मलाबारकी स्त्रियाँ अस्पृश्यताके इस राक्षसके विरुद्ध लडाईका नेतृत्व सम्भाल ले तो इसका शीघ्र ही नाश किया जा सकता है। मलाबारमें प्रवेश करनेपर मैंने देखा कि केवल मलाबारमे ही स्त्रियाँ बिलकुल स्वच्छ सफेद कपड़े पहनती हैं। यह तो पिछले कुछ समयसे ही स्त्रियोमे रंगबिरगे कपडे पहननेका फैशन चल पडा है। फिर भी मैंने देखा है कि इधरके भागोमें लोग रगोसे उतना प्रेम नही करते जितना कि भारतके अन्य भागोमे करते है। मुझे आपके घरेलू जीवनके रहस्यका नही पता। लेकिन मैंने अपनी तरफसे ऐसा मान लिया है कि मलाबारकी स्त्रियोका यह सफेद पहनावा उनकी आन्तरिक शुद्धताका परिचायक है। यदि मलाबारमे अस्पृश्यता बिलकुल खत्म कर दी जाती है तो मुझे उम्मीद है कि मेरा विश्वास सच्चा साबित होगा। मेरा खयाल है कि शिक्षाके मामलेमे मलाबारकी स्त्रियाँ सबसे आगे ठहरेंगी। मलाबार की स्त्रियोसे मै जो काम करवाना चाहता हूँ वह यह है कि हिन्दू-धर्मके सिरपर जो खतरा मँडरा रहा है आप उसे उससे बचा ले। मै चाहूँगा कि आप अपना आलस्य और उदासीनता, जो कुछ भी हो, उसे छोड दे। मै यह चाहूँगा कि आप धर्मके मामलेमें सदा सतर्क और जागरूक रहे जैसी कि आप अपने बच्चोकी देखभाल करते समय होती हैं। बच्चोके साथ तो आप स्नेह-दुलारसे काम लेगी। लेकिन आपके धर्मके साथ ऐसी बात नही है। धर्मके मामलेमे तो आप जितनी ही सतर्क रहेगी, वैज्ञानिक दृष्टिसे आप उतनी ही नियमनिष्ठ बनेगी। मलाबारकी स्त्रियोके सामने एक महान् कार्य है। क्या आप ऊँच और नीचका भेद दूर करनेका प्रयत्न करेंगी? आप मेरा विश्वास करे कि जिन्हे हम अपनेसे छोटे मान रहे है वे भगवानकी दृष्टिमे छोटे नही है। अस्पृश्यताका प्रचार उस अविनयके कारण है जो कि धार्मिक पुस्तकोकी गलत व्याख्याको जन्म देता है। मुझे अतिशयोक्ति करनेकी आदत नही रही है, और यदि ऐसा प्रतीत होता हो कि मै कडी भाषाका प्रयोग कर रहा हूँ तो उसका कारण यह है कि मै समझता हूँ कि मेरा यह विश्वास एक बुनियादी विश्वास है। स्त्रियोसे जो-कुछ मैंने कहा है वही बात पुरुषोपर भी लागू होती है। आप अविश्वाससे परे नही हैं। धर्मकी रक्षाके लिए बहुतसे पुरुष और स्त्रियोकी जरूरत होती है। इसे सक्षेपमे कहे तो वर्तमान आन्दोलन आत्म-शुद्धिका आन्दोलन है।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-१-१९३४

४९०. पत्र : यूवोन प्रिवाको

स्थायी पता :
वर्धा, मध्यप्रान्त
११ जनवरी, १९३४

प्रिय भक्ति,

सवेरेके ठीक ३ बजकर २० मिनट हुए हैं और मैंने अभी-अभी तुम्हारा बिना तारीखका पत्र पढ़कर समाप्त किया है। स्त्रियाँ भला तारीखोंकी परवाह क्यों करने लगीं ! वे तो अनन्त कालको ध्यानमें रखकर काम करती हैं इसलिए मनुष्यने समयको जो तारीख़ों और दिनोंमें विभाजित कर दिया है उसकी चिन्ता नहीं करतीं।

तुमने जो आरोप लगाया है वह तुम्हारे दृष्टिकोणसे ठीक ही है। हम कुछ इतनी तेजीसे दौरा कर रहे हैं कि पत्रोंका उत्तर देनेका समय ही नहीं मिल पाता है। तुम्हारा (पिछला) पत्र भी मेरे पास कहीं पड़ा है लेकिन मुझे इतना भी समय नहीं मिला कि मैं उसे पढ़ सकूं। यह सचमुच बहुत शर्मकी बात है इसलिए आज मैं सबसे पहले तुम्हारे पत्रका जवाब दे रहा हूँ जिससे कि वह पत्रोंके ढेरमें कहीं गुम न हो जाए। हालाँकि मीराने और मैंने तुम्हें कुछ अर्सेसे पत्र नहीं लिखा है फिर भी तुम सदा हमारे मनमें समाई रहती हो। तुम दोनोंकी अवियोज्यता, तुम्हारे सदैव मुस्कराते हुए चेहरे और त्याग करनेकी तुम्हारी तत्परता, ये और ऐसी अन्य बातें मुझे तुम्हारे साथ बीते हुए क्षणोंकी सदा याद दिलाती रहती हैं।

मैं जानता हूँ कि तुम वहाँ अच्छा काम कर रही हो। हाँ, हिटलरके विरुद्ध पादरियोंके विद्रोहकी बात मैंने अवश्य पढ़ी थी।

सेरेसोल[1] की जर्मनी-यात्राके बारेमें मैं और अधिक सुननेकी आशा रखता हूँ। कृपया तुम उन्हें मेरा स्नेहाभिवादन कहना।

मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि तुम्हें 'हरिजन' नियमित रूपसे नहीं मिल रहा है। मैं तुरन्त ही सम्पादकको लिख रहा हूँ।

आशा है तुम दोनों सब तरहसे अच्छी तरहसे हो।

क्योंकि तुम्हें 'हरिजन' से मेरे बारेमें सब कुछ मालूम हो जायेगा, इसलिए मैं अपने बारेमें कुछ नहीं लिख रहा हूँ।

बापू

१. पियरे सेरेसोल, युद्धका विरोध करनेवाले स्विट्जरलैंड-निवासी एक सज्जन और 'अंतर्राष्ट्रीय सेवा' के संस्थापक।

[पुनश्च :]

देवदास अभी-अभी जेलसे छूटा है। बा, प्यारेलाल और महादेव अभी भी वही हैं।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २३३७) से।

४९१. भाषण : गुरुवायूरकी सार्वजनिक सभामें[1]

११ जनवरी, १९३४

मित्रो,

मै चाहूँगा कि आप सब लोग बिलकुल शान्ति रखें।[2]

हमें यहाँ इस सनातन सत्यका एक सशक्त दृष्टान्त मिल गया कि "अपने मन कछु और है, कर्त्ताके कछु और"। मै तो आपके सामने ऐसे विषयो पर बोलना चाहता था जो आपके लिए, मेरे लिए और समस्त हिन्दू ससारके लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो। ऐसा करनेके बजाय मुझे बहुमूल्य चालीस मिनट ऐसे दृश्यको देखनेमे लगाने पड़े हैं जो मैंने आज सुबह ही देखा।[3] मैंने अपने दो देशभाइयोको यहाँ चबूतरे पर लेटे हुए देखा, उनमे से एकके मुँहसे खून बह रहा था और दोनो ही बेहोश दिखाई देते थे। इसलिए सबसे पहले तो मुझे अपने इन देशभाइयोकी जो देखभाल मुझसे सम्भव थी वह करनी पडी। और इसीलिए मैंने उन्हे चिकित्साके लिए प्रो० मलकानीकी देखरेखमे यहाँके दवाखानेमें भेज दिया है। जहाँतक मुझ जैसा एक साधारण शुश्रूषा करनेवाला समझ सकता है, मै नही समझता कि उनका जीवन किसी प्रकारसे खतरेमें है। और आइए, हम सब मिलकर प्रार्थना करे कि वे जल्दी ही बिल्कुल ठीक-ठाक हो जाये।

अखिल भारतीय वर्णाश्रम स्वराज्य संघकी ओरसे यहाँ आये हुए दो अन्य मित्रोसे मुझे पता चला कि वे सभी यहाँ उक्त संघकी ओरसे ही आये हुए हैं। इस सभामे शामिल होनेका उनको भी उतना ही अधिकार है जितना कि आपमे से किसी व्यक्तिको। यदि उनका इरादा शान्तिपूर्ण ढंगसे विरोध-प्रदर्शन करनेका था तो इसका उन्हें पूरा अधिकार था। सनातन धर्मका प्रतिनिधित्व करनेवाले लोग इस प्रकारके प्रदर्शनो का सहारा ले, यह बात मुझे कितनी ही असगत और अरुचिकर क्यो न लगती हो,

१. इस सभामें लगभग २,००० लोग मौजूद थे।

२. यह वाक्य हिन्दू में छपी रिपोर्टसे लिया गया है।

३ इस सभाके शुरू होनेसे कुछ देर पहले ही स्वयंसेवकों और दो सनातनियों, राधेश्वर शास्त्री और कल्पनाथजीके बीच हाथापाई हो गई थी जिसमें इन दोनोंको गम्भीर चोटें आईं। देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", १५-१-१९३४ भी।

लेकिन कल पालघाटमें ऐसे प्रदर्शन करनेके उनके अधिकारको मैंने स्वीकार किया था, और वहाँकी सभामे सार्वजनिक रूपसे मुझे उनके विरोध-प्रदर्शनकी चर्चा करनेमे कोई हिचकिचाहट नही हुई; बल्कि जो लोग मेरे प्रति अपने स्नेहका प्रदर्शन और मेरे कार्यके प्रति सहानुभूति प्रकट करने आये थे, उनके प्रदर्शनकी मैंने उतने विस्तारसे चर्चा नही की। और मैंने वही उसी वक्त यह बता दिया था कि किस कारणसे मैंने स्नेह-प्रदर्शनकी अपेक्षा इस काले झण्डेका प्रदर्शन ज्यादा पसन्द किया था। यहाँपर मै उन कारणोंको फिरसे नही बताऊँगा, लेकिन यदि मेरा सार्वजनिक भाषण[1] किसी स्थानीय पत्र-पत्रिकामे छपे तो मैं चाहूँगा कि आप उसे देख लें। यहाँ तो मै बस इतना कहना चाहता हूँ कि इन दोनों देशभाइयोको चोटें लगी देखकर मुझे बहुत दु:ख हुआ, अब चाहे वे किसी कारण लगी हो और चाहे किसीने पहुँचाई हो। यदि इन दोनों मित्रोंपर हुए हमलेमें इस सभाका आयोजन करनेसे सम्बन्धित किसी स्वयंसेवक या व्यक्तिका हाथ था तो मुझे यह कहनेमे कोई झिझक नही है कि उसने हरिजन-सेवाके अनुष्ठानको लांछित किया है, और जिस हिन्दू धर्मकी वह समझा था कि सेवा कर रहा है उसे उसने चोट पहुँचाई है।

मै यह बार-बार कह चुका हूँ कि हिन्दू-धर्मके इस अनुष्ठानकी सेवा केवल वे ही स्त्री-पुरुष कर सकते है जिनका चरित्र सन्देहसे परे है और जिनको अपने चरित्रके बनने-बिगडनेका भय है। आत्मशुद्धिके इस आन्दोलनमें उतावलेपनमें कुछ कहनेकी, जल्दीमें काम करनेकी, गाली देनेकी कोई गुंजाइश नहीं है। शारीरिक क्षति पहुँचानेकी तो बिलकुल भी नही। अपने इन दोनो देशभाइयोके प्राण हमे उतने ही प्यारे होने चाहिए जितने कि अपने सगे-सम्बन्धियोके है। और यदि इस सभामें ऐसे कोई लोग मौजूद हो जिनका इन दोनोको चोट पहुँचानेमे हाथ रहा हो तो मैं उन्हे आमन्त्रित करता हूँ कि वे सार्वजनिक रूपसे अपना अपराध स्वीकार करके और भविष्यमे ऐसा निन्दनीय काम न करनेकी प्रतिज्ञा करके अपने इस अपराधको धो डालें।

हालाँकि अस्पृश्यताकी इस बुराईको मै अत्यन्त तीव्रता और गहराईके साथ अनुभव करता हूँ तथा मेरा यह पक्का विश्वास है कि यदि अस्पृश्यताको हिन्दू-धर्मसे बिलकुल निकाल नही दिया गया तो हिन्दू-धर्मका नाश अवश्यम्भावी है, तो भी मै यह नही चाहूँगा कि अस्पृश्यताका निवारण बलप्रयोग द्वारा अथवा शक्तिका प्रदर्शन करके या फिर किसी प्रकारकी जोर-जबरदस्तीसे किया जाये। अस्पृश्यता-निवारणका मामला कानून अथवा जोर-जबरदस्तीका नही है। यह तो करोडों हिन्दुओंके हृदय-परिवर्तनकी तथा उनकी पूर्ण आत्मशुद्धिकी बात है। और यह सब तो केवल तभी सम्भव है जब हजारो कार्यकर्त्ता स्वयं अपनेको बलिदान कर दें, अन्य लोगोको चोट पहुँचाकर यह करना सम्भव नही है। और जितने शास्त्र मैंने पढे है उनमे प्रत्येकमे ऊँचे स्वरसे यही बात कही गई है कि धर्मकी रक्षा केवल तपश्चर्या द्वारा ही हो सकती है। इसलिए मै आप लोगोंमे से प्रत्येक व्यक्तिसे, आप लोग, जो जहाँ कही मैं जाता हूँ वहाँ मेरे चारो ओर इकट्ठा हो जाते है, आपसे मैं कहता हूँ कि याद

१. देखिए "भाषण: पालघाटकी सार्वजनिक सभामें", १०-१-१९३४।

रखे, यह आन्दोलन वैयक्तिक और निजी आत्मशुद्धि और आत्म-विश्वास लानेका आन्दोलन है। और यदि आप इस प्रश्नपर इस दृष्टिसे नही सोच सकते तो मैं यह बेहतर समझूँगा कि आपने मेरा साथ छोड दिया होता और मेरी सभी सभाओंका आपने बहिष्कार कर दिया होता। यदि कोई पुरुष या स्त्री मेरे पास आकर मेरी बात सुननेको या मुझे एक औंस दूध देनेको उत्सुक हो तो उसे ऐसा तभी करना चाहिए जबकि उसका इस उद्देश्यके साथ पूर्ण तादात्म्य हो और आत्मशुद्धिकी पूरी भावना हो।

गुरुवायूरके इस विशाल मन्दिरकी छाया-तले यह सब कहने तथा अपने विश्वास को प्रकट करनेके बाद मैं उन लोगोसे जो वर्णाश्रम स्वराज्य संघकी गतिविधियोको चला रहे है और उस जैसी अन्य सहयोगी संस्थाओंसे भी मैं यह हार्दिक अनुरोध करता हूँ कि वे इस बातको समझ ले कि जिस प्रकारके प्रदर्शन वे कर रहे है उस प्रकारके प्रदर्शनो द्वारा वे उस धर्मकी रक्षा नही कर सकते जिसे वे सनातन धर्म कहते है। मध्य प्रान्तके पूरे दौरेके दौरान उन्होने कुछ ऐसे ही लोग भेज रखे थे जो हर कदमपर मेरी कारके आगे साष्टाग लोट कर मुझे आगे बढनेसे रोकना चाहते थे। मेरी देखभाल करनेवाले स्वयंसेवको और इन छः-सात नौजवानोके बीच अक्सर झगडा हुआ करता था। सौभाग्यसे कोई गम्भीर या अप्रिय घटना नही घटी हालाँकि मध्य प्रान्तके दौरेके दौरान दोनो पक्षके लोगोको खरोंचे जरूर आईं। बहुत जल्द ही मैंने इन प्रतिरोधात्मक प्रदर्शन करनेवाले लोगोको मित्र बना लिया और जितनी गम्भीरतापूर्वक मैं कह सकता था मैंने उनसे यह कहा कि हिन्दू-धर्मकी रक्षा करनेका यह कोई तरीका नही है।[1] उनमेंसे कुछ तो नौजवान ही थे जिन्हे यह भी नही मालूम था कि वे कर क्या रहे है। मुझे सन्देह है कि सिर्फ एकको छोडकर उनमेंसे किसीको हिन्दू धर्मकी मूल बातोका ज्ञान भी था। और मैंने यहाँ भी यही आशा की थी कि यदि यहाँ विरोध-प्रदर्शन करनेके इच्छुक लोग होगे तो मैं उन लोगोसे मिलूँगा, उनसे बातचीत करूँगा, उनकी बातको समझूँगा और यह जान लूँगा कि वे लोग है कौन। लेकिन मुझे दुख है कि मलाबार मे कदम रखते ही मुझे वैसा दृश्य देखनेको मिला जैसा यहाँ देखा। यह ज्यादा अच्छा होता कि मैं उनसे पहले ही मिलकर यह पता चला सका होता कि वे चाहते क्या है। लेकिन उन्होने दूसरे रास्तेसे आना तय किया। मैं उन्हे अब भी निमन्त्रण देता हूँ कि वे मुझसे आकर मिल ले और मुझे यह बतायें कि वे मुझसे ठीक-ठीक क्या करवाना चाहते है; मैं यह दौरा तो नही रोकूँगा, लेकिन इसके सिवा मैं उन्हे इस बातकी पूरी सुविधा और सहूलियत प्रदान करूँगा कि वे अपने विचार व्यक्त कर सके, यहाँ तक कि यदि वे शान्तिपूर्ण प्रदर्शन करना चाहें तो वह भी कर सके। लेकिन मैं दोनो पक्षोकी ओरसे किसी प्रकारकी गुडागर्दीको टालनेके लिए अत्यन्त उत्सुक हूँ। मैं मानता हूँ कि जिस प्रकार मेरा उद्देश्य ईमानदाराना है उसी प्रकार उन लोगोका भी ईमानदाराना उद्देश्य है जो अपनेको सनातनी कहते है। लेकिन दोनोको ही अपने

१. देखिए "बातचीत: स्वामी लालनाथसे", १८-११-१९३३।

विचार व्यक्त करने और लोकमतको ढालनेकी एक जैसी छूट होनी चाहिए। आखिरकार सनातन धर्म किसी एक वर्गके लोगोका ही विशेषाधिकार नहीं है। जिस अर्थमें वे सनातन धर्मका प्रतिनिधि होनेका दावा करते है उसी अर्थमे मैं भी अपनेको सनातन धर्मका प्रतिनिधि मानता हूँ। अस्पृश्यताके विरुद्ध मेरे इस प्रबल विरोधका आधार वे शास्त्र ही हैं जिनकी कि वे दुहाई देते है और यदि करोड़ो हिन्दुओके बीच मैं अकेला भी पड़ गया तो भी मैं शास्त्रोंकी अपनी व्याख्यापर अटल रहूँगा क्योंकि वे शास्त्र मुझे यह भी तो बताते हैं कि अन्तरात्माकी पुकारका विरोध नही करना चाहिए। भगवानका शुक्र है कि जो व्याख्या मैं आपके सामने पेश करता रहा हूँ उसे माननेवाला मैं अकेला व्यक्ति नही हूँ। इसके विपरीत मेरे साथ ऐसे विद्वान् शास्त्री हैं जिनको शास्त्रोंकी व्याख्या करनेका बिल्कुल उतना ही अधिकार है जितना कि अपनेको सनातन धर्मका प्रतिनिधि समझनेवाले लोगोको है। और ये विद्वज्जन शास्त्रोंकी ठीक वैसी ही व्याख्या करते है जैसी व्याख्या मैंने हजारों स्त्री-पुरुषोके सामने प्रस्तुत की है। और लगभग पचास वर्षोंके लगातार अनुभवके आधारपर मेरी यह निश्चित धारणा बन गई है कि आज हम जिस प्रकारकी अस्पृश्यताका पालन करते हैं, हिन्दू शास्त्रोमे उसका कोई औचित्य नही बताया गया है। मेरा दावा है कि हरिजनोको पूजा करनेका, सार्वजनिक संस्थाओंके उपयोगका, और जीवनके अन्य सभी क्षेत्रोंमें वे ही सब अधिकार प्राप्त है जो ऊँचेसे-ऊँचे वर्गके हिन्दुओ और अन्य हिन्दुओको प्राप्त है। इसलिए मुझे जरा भी सन्देह नही कि गुरुवायूर और ऐसे ही अन्य प्राचीन मन्दिरोमें जानेका जितना अधिकार दूसरे हिन्दुओंको है, जबतक उन्हीं शर्तोपर उतना ही अधिकार हरिजनोको नही मिला, तबतक यह नही कहा जा सकता कि सवर्ण हिन्दुओंने हरिजनोके प्रति अपने बुनियादी कर्त्तव्यका पालन कर लिया है।

लेकिन मेरा धैर्य असीम है। और जैसा कि आप जानते ही है कि केलप्पनको अनशन करते हुए कई दिन हो गये थे तथा अनेक सुधारकोने मन्दिरमे जाकर केलप्पनके साथ सहानुभूति-सूचक अनशन करनेकी धमकी दे दी थी और हालाँकि सुधारक लोग यह समझने भी लगे थे कि विजयश्री लगभग उनके हाथोमे आ गई है तो भी मैंने अपनी उपवास-शय्यासे अत्यावश्यक तार[1] द्वारा केलप्पनको यह सन्देश भेजा था कि अनशन स्थगित कर दो और जो लोग गुरुवायूर मन्दिरके अन्दर हैं उन्हें वहाँसे हटा लो। और ऐसा मैंने इसलिए किया था क्योंकि मुझे लगा कि अनशन करनेका अभी समय नही आया है और मुझे इस अनशनमे जोर-जबर्दस्तीकी गन्ध-सी लगी। इसका जिक्र मैं यह बतानेके लिए कर रहा हूँ कि एक भी मन्दिर जोर-जबरदस्तीसे खुलवानेका मैं अपराधी नही बनूँगा। लेकिन मैं इतना जरूर चाहता हूँ कि जहाँ मन्दिर खुलवानेके पक्षमें लोकमत पूरी तरह और स्पष्ट रूपसे जाग्रत हो गया हो वहाँ मन्दिर खोल दिये जायें। ऐसा करनेमे अगर कोई कानूनी बाधा आड़े आती हो तो मैं चाहता हूँ कि उसे भी दूर कर दिया जाये। मन्दिर-प्रवेश विधेयकका यही, केवल यही अभिप्राय है, इसके सिवा और कुछ नही। जिस कानूनी बाधाके कारण

१. देखिए खण्ड ५१, पृष्ठ १६१।

आज बहुत-से न्यासी लोग अपने प्रबन्धाधीन मन्दिरोको हरिजनोके लिए खोलनेमे असमर्थताका अनुभव करते है, मन्दिर-प्रवेश विधेयक केवल उनकी उस विवशताको दूर कर देता है। इसलिए इस मन्दिर-प्रवेश विधेयकमे अथवा उससे मिलते-जुलते अस्पृश्यता-विरोधी विधेयकमें किसी भी तरह की बाध्यकारिता या जोर-जबर्दस्तीका लेशमात्र भी नही है।

मगर आज सवेरे मेरे कानमें यह भनक पडी कि इस मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनके पीछे यदि मेरा नही तो मेरे साथियोका यह दृष्ट उद्देश्य जरूर है कि मन्दिरोपर अधिकार करके उनपर अपना स्वामित्व स्थापित कर ले। मै स्पष्ट कहता हूँ कि यह बात नितान्त असत्य है। मेरे मनमे बिल्कुल भी ऐसी कोई इच्छा नही है और मै अपने ऐसे किसी साथीको नही जानता जिसके दिलमे ऐसा इरादा हो।

यदि ऐसी दुष्ट इच्छा किसी साथीकी हो तो उसके लिए इस आन्दोलनमे कोई स्थान नही है। मन्दिरोका अधिकार तो निस्सन्देह उन्हीके हाथोमे रहेगा, जिनके हाथोमे आज उनका कानून-सम्मत अधिकार है।

इससे मिलती-जुलती एक बात मुझसे यह पूछी गई है कि क्या इस आन्दोलन का उद्देश्य ब्राह्मण धर्मको नष्ट करनेका भी है? मै बस आपसे इतना ही कह सकता हूँ कि ऐसा इरादा रखनेका अपराधी तो मै हो ही नही सकता, क्योकि मेरी दृष्टिमे ब्राह्मणत्वकी महत्ता घटानेका अर्थ है हिन्दू-धर्मकी महत्ता कम करना। पर इसका अर्थ यह नही है कि तथाकथित ब्राह्मण आज जो दावे करते हों, मै उनको स्वीकार करता हूँ। समाज किसी भी मनुष्यको, केवल उसके जन्मके कारण ब्राह्मण नही मान सकता। शास्त्रोने तो यह कहा है कि ब्राह्मण कुल में पैदा हुआ मनुष्य यदि ब्राह्मण-धर्मके अनुसार आचरण नही करता तो वह सामान्य जनो द्वारा ब्राह्मण कहलानेका अधिकार खो देता है। इस आन्दोलनमे ही ऐसे ब्राह्मण मौजूद है जो यह कहते है कि जबतक वे शास्त्रो द्वारा ब्राह्मणोके लिए विहित नियमोका पालन नही करते तबतक उन्हें ब्राह्मण नही कहा जा सकता। मै मानता हूँ कि ब्राह्मण हिन्दू-धर्मका ही नही, धर्ममात्रका आधारस्तम्भ है। लेकिन यहाँ आपको ब्राह्मण शब्दका अर्थ समझ लेना चाहिए। जिसने ब्रह्मको जान लिया, वही ब्राह्मण है। अगर उसे यह ब्रह्मका ज्ञान नही प्राप्त हुआ है तो उसका प्रत्येक कार्य यह दिखाता है कि उसी ज्ञानकी प्राप्तिके लिए वह सतत प्रयत्नशील है, अन्य किसी चीजके लिए नही। ऐसे ब्राह्मणको तो नित्य प्रात काल मेरे दस सहस्र साष्टांग प्रणाम है, लेकिन उस ब्राह्मणको नही जो स्वार्थ-प्रेरित है, जो निरन्तर सन्तानोत्पत्तिमें लगा हुआ है,[1] जो ज्यादातर अपना ही स्वार्थ-चिन्तन करता है, दूसरोके बारेमे शायद ही कभी सोचता हो, और न ही उस ब्राह्मणको जो समस्त शरीरपर भस्म लगाये हो और अत्यौपचारिक तथा शुद्ध रूपसे वेद-पाठ कर सकता हो। भस्मका लगाना तो उसके लिए शायद ही अनिवार्य हो पर वेदोको अपने जीवनमे उतारना तो उसका धर्म ही है। अपने जीवनके प्रत्येक कार्यमें ब्रह्मका दर्शन कराना उसके लिए आवश्यक है। स्वयं शुद्ध रहना और अपनी

१. हिन्दू में छपे विवरणमें "जिसने अपमानोंकी पुनरुक्ति की है" दिया गया है।

इस शुद्धिकी सुगन्ध आसपास फैलाना उसका धर्म है। दूसरोंको जीवित रखनेके लिए हर समय अपने प्राण हथेलीपर रखे रहना उसका धर्मही है। अब आप समझ लीजिए कि सच्चे ब्राह्मण और सच्चे ब्राह्मण-धर्मके प्रति मेरे हृदयमें कितना आदर है।

आज सवेरे जो मुझे एक छपा हुआ पत्र दिया गया था, और जिसके लेखकने उसमे मुझसे अनेक प्रश्न पूछे थे, और जिनका उत्तर उसने आज सवेरे ही माँगा था, मेरा खयाल है कि इतना सुननेके बाद उसे अब मेरे उत्तरोंकी आवश्यकता शायद न रही हो। लेकिन मैं उससे इतना तो कह सकता हूँ कि उसने इसमें जो प्रश्न उठाये हैं अगर वह उनमेंसे प्रत्येकका विस्तृत उत्तर चाहता है तो उस सबको वह 'हरिजन' की फाइलमें देख सकता है। उसमे वह यह भी देखेगा कि उसने अपने पत्रमें अनेक चीजोकी जो व्याख्या की है, उससे असंदिग्ध रूपसे पता चलता है कि उसने 'गीता' और हिन्दूधर्मके सन्देशको गलत समझा है।

अन्तमें उस पत्र-लेखकने मुझसे मिलनेके लिए समय माँगा है। मुझे दुःख है कि वह मुझसे गुरुवायूरमे तो नही मिल सकता लेकिन वह १६ तारीखको सवेरे दस बजे कालीकटमे मुझसे भेंट कर सकता है। पालघाटमें कल कुछ विद्वान् पंडितोके साथ वाद-विवाद करनेका मुझे निमन्त्रण मिला था। जहाँ तक पालघाटका सवाल था मुझे उन्हे निराश करनेमें दुःख हुआ, क्योंकि जिस समय मुझे उनका निमन्त्रण मिला उस समय मै पालघाटसे रवाना होनेकी तैयारीमे था। लेकिन मैंने उन्हें १६ तारीखको कालीकटमें सवेरे १० बजे मिलनेका समय दे दिया है। वही यह पत्र-लेखक और वे दूसरे भाई मुझसे सहर्ष मिल सकते हैं और मैंने जिन बातोंका यहाँ जिक्र किया है उसपर तथा बातचीतके दौरान उठनेवाले अन्य मुद्दोंपर वे मुझसे जो चर्चा करना चाहते हों, वह कर सकते है। हालाँकि १६ जनवरी मेरा कार्यक्रमसे मुक्त दिवस है, लेकिन मेरे लिए वह मनोरंजनका दिन नहीं है। इसलिए पंडितोंको भेजे अपने पत्रमें मुझे भेंटका समय आधा घंटा ही रखना पड़ा। लेकिन अब मेरा इरादा उस बातचीतको एक घंटेका समय देनेका है जिससे यदि पंडित लोग निमन्त्रण स्वीकार कर लें[1] तो वे पूरा आधा घंटा अपनी बात कह सकें। मुझे किसी भी मनुष्यसे कोई बात छिपानी नही है और न ही अपना अज्ञान छिपानेकी मेरी तनिक भी इच्छा है। मैं अपनी ज्ञान-मर्यादा तो बता ही चुका हूँ। मै किसी भी रूपमें विद्वान् होनेका दावा नही करता। मै तो अपनेको एक विनम्र सत्यान्वेषक मानता हूँ और हिन्दू-धर्मके प्रत्येक आदेशको जैसा मैंने समझा है उसका अक्षरशः पालन करनेके लिए सदा आतुर रहता हूँ। इसीलिए मै मुक्त रूपसे यह स्वीकार करता हूँ कि यदि ये पंडित या दूसरे लोग मुझसे वेद-पाठ करनेको कहें अथवा वेदोंका भाष्य कराना चाहें तो मुझे बिलकुल पराजित कर देंगे। किन्तु शास्त्रोंके विषयमें मेरी जो भावना है उससे वे मुझे आसानीसे विचलित नहीं कर सकेंगे। अगर ईश्वरका ज्ञान या हिन्दू-धर्मके

१. पंडितों ने यह निमन्त्रण स्वीकार नहीं किया। उल्टे उन्होंने गांधीजीको यह लिखा कि वे गांधीजीसे तभी मिलेंगे जब गांधीजी उनसे शास्त्रों पर एक घंटा नहीं बल्कि लगातार कई दिन चर्चा करनेको तैयार होंगे और यह चर्चा भी वे केवल संस्कृतमें ही करनेको तैयार होंगे।

मूल सिद्धान्तोंका ज्ञान केवल सारे वेदो तथा अनगिनत ग्रन्थोके गहन ज्ञानपर ही निर्भर करता हो, तो शायद ही कोई मनुष्य यह कह सकेगा कि 'मै ईश्वरके बारेमे कुछ जानता हूँ।' लेकिन ये शास्त्र तो कहते हैं कि इस ससारमें प्रत्येक मनुष्यको ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त हो सकता है, बशर्ते कि वह अपना हृदय शुद्ध कर ले।

आप लोगोने शान्तिसे जो मेरा भाषण सुना, उसके लिए मैं आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ। आइए, हम सब मिलकर उस सर्वशक्तिमान् ईश्वरसे प्रार्थना करें कि वह हमे सुपथपर चलनेकी प्रेरणा दे और हमे यथेष्ट शक्ति दे कि हम अपने दिलोसे अस्पृश्यताका यह भूत भगा सके।

अन्तमे, कृपया ध्यान रहे कि जो लोग यह मानते है कि अस्पृश्यता एक बुराई है और जो यह भी मानते हैं कि इसे केवल आत्मशुद्धि द्वारा ही दूर किया जा सकता है उन्हे चाहिए कि वे इस आन्दोलनके विरोधियोके एक रोएँको भी कभी हानि न पहुँचाये। इसके विपरीत, हमे उन्हे अपने सही आचरणसे और प्रेमपूर्वक समझा-बुझाकर जीतना है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप उन दो मित्रोके साथ, जो इस समय अस्पतालमे पड़े हुए है और जो वर्णाश्रम स्वराज्य सघके प्रतिनिधि हैं, आदर और स्नेहका व्यवहार करे तथा उन्हे अपना अतिथि माने। वे क्या करेंगे, इसकी परवाह न करते हुए आप तो उन्हें अपने आतिथ्य तथा स्नेहकी ऊष्माका ही अनुभव होने दीजिए, उनको अपनी कटु भर्त्सना का अनुभव मत कराइए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-१-१९३४ तथा हिन्दू, १२-१-१९३४

४९२. भाषण : पत्तम्बीमें[1]

११ जनवरी, १९३४

मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि मलाबारमे, जहाँ हमेशा हरियाली रहती है आपको कागजके कृत्रिम फूलोका उपयोग करना पड़ा। मैं तो समझता था कि मलाबार में, जहाँ प्रकृति आप लोगोपर इतनी दयालु है, आप लोग कृत्रिमतासे अपने आपको वचा सकते है। लेकिन मेरा खयाल है कि इस प्रदेशके प्राकृतिक सौन्दर्यकी कद्र करनेके लिए आपको ऐसे व्यक्तिकी मददकी जरूरत है जो वृक्षहीन मरुभूमिका रहनेवाला हो जैसाकि मैं हूँ। जिस तरह आपने फूलोके मामलेमे कृत्रिमताका सहारा लिया है उसी प्रकार अस्पृश्यताके मामलेमे भी आप कृत्रिमताका सहारा लेते है, और फिर आप समझते है कि कृत्रिम वस्तु स्वयं ईश्वरने भेजी है। मै आपको यह चेतावनी देनेके लिए आया हूँ कि अस्पृश्यता, अनुपगम्यता और अदर्शनीयता इन सब बातोको शास्त्र-सम्मत मानना भूल है। मेरे विचारसे ऐसा करके हम हिन्दू लोग मनुष्यके प्रति और ईश्वरके प्रति सबसे बडा पाप करते रहे हैं। मनुष्यको मनुष्यके दरजेसे गिराना, जैसा कि दुनियाके इस भागमे हम करते रहे है और उसपर यह कहना

१. चन्द्रशंकर शुक्लके "साप्ताहिक पत्र" से उद्धृत।

कि वे आज जो है सो अपने पिछले कर्मोंके फलस्वरूप है, कर्मके सिद्धान्तको भ्रष्ट रूपमें प्रस्तुत करने जैसा है। मैं अपने निजी अनुभवके आधारपर कर्मके सिद्धान्तके बारेमें थोड़ा-बहुत जाननेका दावा करता हूँ क्योंकि पिछले ५० वर्षोंसे मैंने लगातार यह जाननेकी कोशिश की है कि कर्मका सिद्धान्त क्या हो सकता है। और मैं इतना जरूर जानता हूँ कि इसे अपनेको छोड़कर अन्य सब लोगोंपर लागू करना इसे विकृत बनाना है; और यदि मेरे पास इस समय ज्यादा समय होता तो मैं आप सबको इस बातका पूरा यकीन दिलाता कि आप नायडी और अन्य लोगोंपर कर्मके सिद्धान्त को उस तरह कदापि घटित नही कर सकते जिस प्रकार कि आप घटित करते हैं। और मैंने जैसा सुझाव दिया है उसके अनुसार यदि हम कर्मके सिद्धान्तको लागू करते अर्थात् स्वयं अपने ऊपर लागू करें, तो हम यहाँ की भूमिको और अन्य स्थानोंकी भूमिका स्वरूप ही बदला हुआ पायेंगे। इसलिए मैं आपमें से हर व्यक्तिसे यह अनुरोध करने आया हूँ कि आप अस्पृश्यताके इस प्रेतको निकाल फेंके। यदि आप ऐसा नही करेंगे, तो यकीन मानिए, यह प्रेत हमें खा जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१-१९३४

४९३. टिप्पणी

मैत्रीपूर्ण बातचीतका सदा स्वागत है

मद्रासमें अपने संक्षिप्त प्रवासके दौरान मैंने अखबारोंमें कुछ सज्जनोंके हस्ताक्षरोंसे युक्त एक सार्वजनिक अपील देखी। यह अपील मुझे सम्बोधित की गई थी। इसमें मुझसे अस्पृश्यताके बारेमें एक सार्वजनिक परिचर्चा करनेके लिए कहा गया था। बादमें मुझे उस अपीलकी टाइपशुदा प्रति भी मिली थी जिसके शुरूमें सबसे ऊपर निम्नलिखित वाक्य लिखे हुए थे:

> चूँकि आप ज्यादा जाननेका दम्भ करते हैं इसलिए कृपया सामने आइए और खुली चर्चा कीजिए। यह मत कहिए कि आपके पास 'समय नहीं है, समय नहीं है'। जब आपकी हैसियतको ही चुनौती दी जा रही है उस समय ऐसा कहना शर्मनाक है। इससे दुनिया आपपर हँसेगी, आपकी खिल्ली उड़ायेगी।

और इसके बाद यह आश्चर्यजनक अनुच्छेद आता है:

> अपनी उन सभी राजनीतिक गतिविधियोंको छोड़ देनेके बाद जिनके कारण उन्हें सचमुच भारतीय राजनीतिमें ख्याति मिली और व्यावहारिक दृष्टिसे उस महान् भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसको नष्ट करनेके बाद जिसने उन्हें वस्तुतः अपना तानाशाह बना दिया था और अपनी आँख मूँद कर किस्मतकी बागडोर उनके हाथोंमें सौंप दी थी तथा न केवल कट्टर सनातन धर्मावलम्बियोंको पीड़ा

पहुँचाकर अपितु इस देशके सभी भारतीय राष्ट्रवादके प्रेमियोंको भी कष्ट पहुँचानेके बाद श्री गांधीने इधर कुछ समयसे अस्पृश्यताके विरुद्ध और मन्दिर प्रवेश कानूनके पक्षमें बहुत जोरोंके साथ प्रचार करना शुरू कर दिया है। तबसे वे जनताके सम्मुख अपने ही सिद्धान्त-सूत्र और प्रासंगिक विचारोंको व्यक्त कर रहे हैं लेकिन उन्हे वे अपने निजी विचार कह कर अथवा रूसो, टॉल्स्टॉय, लेनिन आदिके विचारोंके नामपर नहीं अपितु सनातन धर्म, समाजशास्त्र और सामान्य न्याय आदिके नामपर व्यक्त कर रहे हैं।

मैं जब नेल्लूर जिलेका दौरा कर रहा था तब भी मुझसे ऐसी ही एक और अपील की गई थी। चर्चाके लिए निमन्त्रित करते हुए मुझे जो तार भेजा गया था उसमे कहा गया था.

हमें लगता है कि आप हिन्दू-धर्मको अच्छी तरह समझ नहीं पाये हैं और आप हिन्दुओंको सच्चे नैतिकतापूर्ण और धार्मिक जीवनसे गुमराह कर रहे हैं।

मैं इन निमत्रणोका तत्काल उत्तर नही दे पाया था। बातचीतके लिए मुझे अन्तिम निमन्त्रण रातके दस बजे वेंकटगिरिमे मिला था।[१] अगले दिन मुझे तिरुपति पहुँचना था जिसके समीप ही एक स्थान पर मुझे प्रस्तावित परिचर्चामे भाग लेनेको जाना था। लेकिन मुझे तिरुपतिमे अपने मेजबान की मार्फत मौखिक सन्देश भेज कर ही सन्तोष करना पड़ा। जहाँ तक पहले आमन्त्रणका सवाल है, मैंने यह सन्देश भेज दिया था कि मैं किसी भी व्यक्तिके साथ मैत्रीपूर्ण बातचीतके लिए तैयार हूँ और यदि मुझे अपनी भूलका अनुभव करा दिया जाये तो मैं उसे भी माननेको तैयार हूँ। मुझे यह भी कहना पडा कि मेरे पास बहुत कम समय है और फिलहाल यह परिचर्चा जहाँ मैं निश्चित करूँगा वही होगी। मैंने इन स्तम्भोमें अनेक बार अपनी मजबूरियोका जिक्र किया है: मै कोई संस्कृतका पण्डित नही हूँ लेकिन इतनी सस्कृत मुझे जरूर आती है कि मुझे जो अनुवाद दिये जाये यदि उनमे कोई भूल हो तो मैं उसे पकड़ सकता हूँ। मैं मानता हूँ कि मैंने शास्त्रोका ठीक अध्ययन किया है और उससे मुझे सन्तोष है और मै इस बातका दावा करता हूँ कि मैंने युवावस्थासे ही शास्त्रोके बुनियादी सिद्धान्तोको जीवनमें उतारनेकी कोशिश की है। इसलिए हिन्दूधर्मके कुछ मूलभूत सिद्धान्तोको लेकर मैं जिन निष्कर्षो पर पहुँचा हूँ उन निष्कर्षोको पूर्ण विश्वासके साथ जनताके आगे रखते हुए मुझे कोई संकोच नही होता। मै जिन निष्कर्षोपर पहुँचा हूँ उनमे से एक यह है कि भारतमें अस्पृश्यता आज जिस रूपमे प्रचलित है उसका शास्त्रोमें कोई विधान नही किया गया है। और मेरे इस निष्कर्षका कई शास्त्री लोग समर्थन करते हैं तथा ये लोग उन लोगोसे कोई कम पढे लिखे नही है जो इसके विरोधी है। जो लोग मेरा समर्थन करते है वे लोग भी अपने आपको उतना ही अच्छा सनातनी मानते हैं जितना कि विरोधी विचार रखने वाले खुदको मानते है। लेकिन मैंने हमेशा

१. ३० दिसम्बर, १९३३ को।

विरोधियोंके विचारोका आदर किया है और इसलिए वे जो कहते हैं मैंने उसे हमेशा ध्यानसे सुना है। मैंने उनके साथ अनेक बार बातचीत की है और उससे मेरे विचारोंकी पुष्टि ही हुई है। इसलिए यह मानते हुए भी कि ऐसी किसी बातचीतसे मेरी रायमें कोई अन्तर नही आयेगा, मैं चर्चा करनेके इच्छुक लोगोंको समय देने और उनसे बातचीत करनेके लिए तैयार हूँ, बशर्ते कि वे मेरे दैनिक कार्यक्रमको ध्यानमें रखते हुए कोई उपयुक्त समय निर्धारित करें। मैं उस कार्यक्रममे कोई परिवर्तन नही कर सकता जो मेरे लिए आगामी कुछ महीनोके लिए पहलेसे ही तय किया जा चुका है। इस दौरेके दौरान मैं कुछ एक स्थानो पर सनातनियों से पहले ही इस विषय पर बातचीत कर चुका हूँ। यदि वे लोग जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे अखबारोके जरिये मुझे लिखते हैं, सामान्य शिष्टाचारके नियमोका पालन करते हैं और यदि वे सामूहिक रूपसे कार्य करनेके लिए कोई आधार ढूँढ़ना चाहते हैं तो मुझे इस बारेमें तनिक भी सन्देह नही कि ऐसे बहुतसे मुद्दे हैं जिन पर हम परस्पर सहमत हो सकते हैं; यहाँ तक कि मन्दिर-प्रवेश और उससे सम्बन्धित प्रस्तावित कानूनको लेकर भी किसी निश्चय पर पहुँचा जा सकता है। पारस्परिक और मैत्रीपूर्ण बातचीत द्वारा बहुत-सी गलतफहमियोंको दूर किया जा सकता है। सामान्य पाठकोंकी जानकारीके लिए मैं यह बता दूं कि कई सनातनी मुझसे नाराज हैं और मुझे वे हर तरहसे अपमानित करते हैं। लेकिन कुछ ऐसे सनातनी लोग भी हैं जिन्होंने मेरे सन्देशके मुख्य मुद्देको समझ लिया है और अब वे मेरे समर्थक बन गये हैं। लोगोके दिलो-दिमाग तक अपनी बात पहुँचानेकी कोशिश करनेके अलावा मेरे पास और कोई हथियार नही है। और मैं जिस सुधारकी बात करता हूँ वह सुधार केवल करोड़ों हिन्दुओंके हृदय-परिवर्तनसे ही हो सकता है। इसलिए मैं जिस उद्देश्यको लेकर यह दौरा कर रहा हूँ उसके हितमे भी यही है कि मैं जब भी सम्भव हो तब अपने विरोधीसे बातचीत करनेके एक भी ऐसे अवसरको अपने हाथसे न जाने दूं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१-१९३४

४९४. पत्र : गोविन्दभाई आर० पटेलको

१२ जनवरी, १९३४

भाई गोविन्दभाई,

श्री अरविन्दको मैंने लम्बा पत्र लिखा है, यह बात मैंने आपको लिखी भी है। अभी मुझे उसका कोई उत्तर नहीं मिला है।

आपके अंग्रेजी पत्रके सम्बन्धमें भी मैं लिख चुका हूँ। जो पूछना हो सो पूछना। अधिक तो मिलनेपर ही।[1]

मोहनदास

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०७४४) से; सौजन्य: गोविन्दभाई रामभाई पटेल

४९५. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१३ जनवरी, १९३४

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र मिल गये हैं। मेरे पत्र भी नियमित रूपसे मिलते होंगे। इस बार तो मैंने एक भी डाक नहीं छोडी। पिछले पत्रके साथ बा के पत्रकी नकल थी।

शान्तिके सम्बन्धमें सुशीलाने ठीक समाचार दिये हैं। वह व्यर्थके बखेड़ोंमें न पड़े तो बस होगा।

सुशीला पूछती है कि मेरे साथ कौन है। मेरा खयाल है, मैं लिख चुका हूँ। चन्द्रशंकर, मीराबहन, ओम, किसनबहन (प्रेमाबहनकी सहेली) प्रो० मलकानी (ठक्कर बापाकी ओरसे) दो हिसाबनवीस विश्वनाथ और दामोदर, एक सामानकी देखरेख करनेवाला – शर्मा, एक टाइपिस्ट – इतना जत्था है।

१. इस पत्रके बारेमें श्री माँको बताते हुए गोविन्दभाई आर० पटेलने उनसे पूछा था कि क्या यह सच है कि गांधीजीने "श्री अरविन्दसे कम-से-कम एक पंक्ति लिख भेजनेकी माँग की थी और श्री अरविन्दने उन्हें पूरा पत्र ही लिख डाला — जो कि वह सामान्यतः नहीं करते हैं।" उत्तरमें श्री अरविन्दने कागजके टुकड़ेपर पेंसिलसे लिखा था: "हाँ, मैंने उन्हें एक छोटा-सा पत्र लिखा था। इसमें मैंने उन्हें अपने अवकाश ग्रहण करनेका कारण बताया था और जबतक वह कारण मौजूद है तबतक मैं यह नियम भंग नहीं कर सकता तथा इसके लिए मैंने खेद व्यक्त किया था। यह पत्र मैंने उन्हें बंगलौरके पतेपर लिखा था और मेरा विश्वास है कि अगर यह पत्र सी० आई० डी० के हाथ नहीं लगा है तो उन्हें मिल गया होगा। मेरा खयाल है कि अगर गांधीजी बंगलौरसे रवाना हो गये होंगे तो भी उस पत्रको आगे भेज दिया होगा। आप उन्हें लिखकर इसके बारेमें बता सकते हैं।"

सीता बहुत बोलती है, तूफान करती है, यह मुझे तो अच्छा लगता है। इन तूफानों और बातूनीपनका सदुपयोग कर लेना माँ-बापका काम है। बहुत-सी शिक्षा तो इसीमे आ जाती है। बच्चोंकी तूफानी वृत्ति तथा बातूनीपन तो एक तरहकी वाष्प शक्ति है। वाष्पका संग्रह करके उसका उपयोग किया जाता है और उसके जरिये बड़ी-बड़ी रेलगाड़ियाँ और जहाज चलते है। यही बात बालककी शक्तिकी है। उसकी शक्तिको हम समझें, उसका संग्रह करें तो वह बड़े काम आती है। सीता से इस समय अक्षरोंको घोटनेकी अपेक्षा अभी न करके तो तुझे उससे रेखागणितकी आकृतियाँ खिंचवानी चाहिए। इसके बाद वस्तुओंकी और उसके बाद अक्षर। उससे भी पहले अक्षरोकी पहचान करवाई जाये और उसीके साथ उनकी समझ भी दी जाये। बात चीतके जरिये भी तू उसे रोज थोड़ा ज्ञान दे सकती है। इतिहासका, भूगोलका, विज्ञानका, तथा 'रामायण', 'महाभारत' की कथायें भी सहज ही सिखा सकती है। यह सारा ही खेलखेलमें सीख लिया जा सकता है। इसमे उसे थकावट भी नही महसूस होगी बल्कि उल्टे कुतूहल पैदा होगा। थोड़ा-थोड़ा, पर प्रतिदिन, इस प्रकार सीखे तो सीताको श्रेष्ठ शिक्षा प्राप्त हो। अंग्रेजी, गुजराती और हिन्दी तो साथ-साथ ही सीख सकती है। मणिलालको अब क्या मदद करती है?

तुम दोनोमें से कोई भी वेस्टसे मिले क्या? उससे मिलकर उसके समाचार दो। वह दुखी न हो इतना ही काफी है। तुम्हें सहयोग देनेकी अपनी पूरी तत्परता बतानी चाहिए।

बा का ठीक चल रहा जान पड़ता है। इस बार पहली बार-जैसी छूटका उपयोग करती वह नही जान पड़ती।

प्रागजीका पत्र तेरे नाम आया सो मै समझ नही पाया। किस सम्बन्धमे बात हुई होगी और मैंने क्या कहा होगा यह मैं नही कह सकता। पर मैंने कुछ भी कहा हो, वह तुम दोनोंपर लागू नही होता। हर किसी की वस्तुस्थिति एक-सी नही होती। इस बातका विचार किया गया होगा कि देशमे आनेके बाद उसका धर्म क्या था। एक दृष्टिसे इतना तो सच ही है कि यहाँ कार्य पूरा हो जाये तो वहाँका भी ठीक परिणाम झट निकल आये। पर इसका अर्थ यह थोड़े ही है कि वहाँका कार्य छोड़कर कोई यहाँ दौड़ा आये। स्वधर्ममे ही श्रेय निहित है,[1] यह बात यहाँ बराबर लागू होती है। इसलिए तुम दोनोके लिए आज जो धर्म है उसीका पालन तुम लोगोंको किये जाना है। और इसका पालन करते हुए यदि नीतिके मार्गसे च्युत न हों तो समझ लो सब-कुछ कर लिया।

देवदास छूट गया है। हाल तो दिल्लीमे ही भटकेगा। मुझे मिलकर जायेगा। उसका स्वास्थ्य ठीक रहता है। वह कान्तिसे मिल आया है। कान्तिकी बहादुरीमें कोई कमी नही है। वह तो जेलसे निकलता ही नही है। अब यह कबतक निभ सकता है सो देखना है।

१. भगवद्गीता, ३, ३५।

किशोरलाल अब थोड़ा ठीक है ऐसा कह सकते हैं। बुखारने अभी पूरी तरह नही छोड़ा है। देवदास, लक्ष्मीको पत्र देना। रामदास और नीमूको तो लिखते ही रहना।

'हरिजन' मिलता होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यह पत्र तेलिचेरी नामक गाँवमे सवेरे ३ बजेके बाद प्रार्थनासे पहले लिखा गया है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८१४) से।

४९६. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

१३ जनवरी, १९३४

चि० डाह्याभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे तीनो पत्र एक साथ मिले, यह टेलीपेथीका अच्छा उदाहरण कहा जायेगा।

महादेवकी कठिन परीक्षा हो रही है। उसका शरीर सम्भवत: कुछ गडबडा जायेगा। लेकिन उसे और कोई आँच नही आयेगी। जीवनजीको लिखे पत्रके उत्तरमे मैंने उन्हे लम्बा सन्देश भेजा है। लेकिन अब यदि तुम्हे लिखनेका प्रसग आये तो इस प्रकार लिखना :[1]

जबकि यह जरूरी नही है कि महादेवके पत्र मुझे मिलने ही चाहिये उसे कतई यह नही समझना चाहिये कि मेरे पास उन्हें पढनेका समय नही है। 'गीता'-वाला भाग शास्त्रीय था और मैंने सोचा कि उसके सम्बन्धमे मुझे तत्काल अपनी राय प्रकट करनेकी कोई जरूरत नही है। और सच तो यह है कि 'गीता' के श्लोकोका मैं जो शास्त्रीय अर्थ करता हूँ मेरे मनमें उसकी कोई बडी कीमत नही है। कुल मिलाकर जहाँ मेरी व्याख्याके अनुसार अर्थ ठीक नही बैठता वहाँ मुझे स्वभावत. उसकी छानबीन करनी पडती है लेकिन साधारण रूपमें तो मुझे कोई एक अर्थ किसी दूसरे अर्थके समान ही स्वीकार्य होगा इसलिए मुझे तो अपनी व्याख्याकी अपेक्षा महादेवकी चिन्तनपूर्ण व्याख्या तुरन्त ही स्वीकार होगी क्योकि मेरी व्याख्या तो किसी एक भाष्यकारकी व्याख्यापर ही आधारित होगी। इसलिए महादेवको मेरी रायकी प्रतीक्षा किये बिना अपना अनुसन्धान और अनुवाद-कार्य जारी रखना चाहिये। जब यह सब पूरा हो जायेगा तब, बेशक, यदि ईश्वरने चाहा तो इसे पढ जानेके लिए मेरे पास बहुत समय होगा।

१. आगेके दो अनुच्छेद अंग्रेजीमें है।

मैं मान लेता हूँ कि महादेवने बी० शा० द्वारा 'एडवेन्चर ऑफ द ब्लैक गर्ल इन हर सर्च फॉर गॉड' पढ़ी होगी। आज मैं उसे मैक्सवेल द्वारा लिखित 'एडवेन्चर्स ऑफ द व्हाइट गर्ल इन हर सर्च फॉर गॉड' भेज रहा हूँ। यदि यह पुस्तक उसे सही सलामत मिल जाये तो वह अपने अगले पत्रमें इसकी पहुँच लिखे।

मैं बेलगाम पहुँचनेपर मणि और महादेवको मिलनेका प्रयत्न करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ १५८-९

४९७. भाषण: तेलिचेरीकी सार्वजनिक सभामें[1]

१३ जनवरी, १९३४

भाइयो,

आपने मुझे जो अभिनन्दनपत्र दिये हैं और थेली भेंट की है उसके लिए मैं आपका अत्यन्त आभारी हूँ। मैं जिस उद्देश्यको लेकर भारतके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक की यह यात्रा कर रहा हूँ उसके स्वरूपको आप जानते ही होंगे। इस उद्देश्य को ध्यानमें रखते हुए मैं आज सवेरे-सवेरे आपके पास यह कहनेके लिए आया हूँ कि आप अस्पृश्यताके पिशाचको अपने दिलोंसे निकाल बाहर करें। आपने मुझे जो मानपत्र भेंट किये हैं उन सबमें मुझे एक बात दिखाई देती है। आपने आशा व्यक्त की है कि अस्पृश्यताके दानवको उखाड़ फेंका जा सकेगा। हमें ऐसा माननेकी भूल नहीं करनी चाहिए कि यह काम तो किसी और व्यक्तिको करना है। यह अनिवार्यतः एक ऐसा कार्य है जो हर किसी स्त्री अथवा पुरुषको करना होगा क्योंकि यह तो अनिवार्यतः सवर्ण हिन्दुओंके हृदय-परिवर्तनका मामला है। उन्हें अपने दिमागसे इस खयालको निकाल देना होगा कि वे उच्च-जातिके हिन्दू हैं अथवा उनमें से कुछ लोग सवर्ण हैं और कुछ अवर्ण हैं। ऊँच-नीचके इस भेदने समाजको पूर्णतया नष्ट कर दिया है और हम चूँकि अपने आपको आनेवाले विनाशसे बचाना चाहते हैं इसलिए हमें इस विचारको अपने दिमागसे निकाल देना होगा कि इस संसारमें कोई भी व्यक्ति हमसे नीचा है। अस्पृश्यताका जहर इतनी दूरतक और इतना ज्यादा फैल चुका है कि जाति-जातिमें भी काफी अनुपातमें अस्पृश्यता पाई जाती है। ऊँच और नीचके इस भेदमें हम और भी आगे बढ़ गये हैं तथा इस जहर ने सभी सम्प्रदायोंको ग्रसित कर लिया है। अस्पृश्यताकी यह भावना न केवल परस्पर हिन्दुओं में, सवर्णों और अवर्णोंमें, सवर्णों और सवर्णोंमें पाई जाती है बल्कि यह हिन्दुओं, मुसलमानों, पारसियों और ईसाइयोंमें भी दिखाई देती है। मुझे इस बातका पूरा यकीन है कि अन्तर्जातीय झगड़ोंके पीछे और भी कितने ही कारण भले ही क्यों न हों लेकिन

१. यह सभा जिसमें लगभग ६,००० लोग उपस्थित थे, तेलिचेरी मैदानमें सवेरे ७-३० बजे हुई थी।

मुझे इस बारेमे तनिक भी सन्देह नही है कि इन झगड़ोंमे से अधिकांश झगड़ोंका मुख्य और निर्णयात्मक कारण अस्पृश्यता ही है। यदि हम अस्पृश्यता रूपी दानवके इस मुख्य प्रकट स्वरूपका नाश कर सके तो मुझे यकीन है कि हम आजतक जितनी भूलें करते रहे हैं उन सबमे सुधार कर सकेंगे। आपके एक मानपत्रमें बताया गया है कि अधिकाश मन्दिर हरिजनोके लिए नही खुले है और श्री नारायण गुरुके अनुगामियो द्वारा स्थापित केवल एक मन्दिर ही हरिजनोके लिए खुला है। मैं मन्दिरके न्यासियोको उनकी इस उदारताके लिए बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि अन्य मन्दिरोके न्यासी भी इसका अनुकरण करेंगे। लेकिन इस परिवर्तनको लानेकी बात मुख्यत. मन्दिरोमे जानेवाली जनतापर निर्भर करेगी। यदि मन्दिरोमे जानेवाले लोगोको अपने कियेपर सचमुच पश्चात्ताप है और यदि वे यह महसूस करते हैं कि हरिजनोको मन्दिरोमे जानेसे रोककर उन्होंने अभीतक उनके प्रति गम्भीर अन्याय किया है तो मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि उनकी इच्छाको चुनौती नही दी जा सकती, और मन्दिरोके द्वार शीघ्र ही हरिजनोके लिए खुल जायेंगे। इसलिए मुझे उम्मीद है कि आप लोकमत तैयार करेंगे जिससे हरिजनोके लिए जल्दी ही मन्दिर खोले जा सकें, ठीक उन्ही शर्तोपर जिन शर्तोपर वे अन्य हिन्दुओके लिए खुले है। मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि यही कही आपसपास अस्पृश्यों और अस्पृश्योमे, अर्थात पुलाया और छिया जातिके लोगोमे आपसमे अनबन है। मैं आशा करता हूँ कि सभी जगह हरिजन लोग अपने घरको ठीक करेंगे और अस्पृश्यता-दर-अस्पृश्यताकी भावनाको निकाल बाहर करेंगे। और अब आपने मुझे यह थैली भेंट की है जिसे मैं इस बुराईको अन्तिम रूपसे दूर करनेके आपके दृढ निश्चयके चिह्न स्वरूप मानता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १५-१-१९३४

४९८. भाषण : माहेकी सार्वजनिक सभामें[1]

१३ जनवरी, १९३४

मित्रो,

आप चूँकि फ्रान्स अधिकृत भारतके एक हिस्सेमें रहते हैं इसलिए आपसे मिलकर मुझे असाधारण रूपसे खुशी हो रही है। मुझे बंगालमें कई बार चन्द्रनगर जानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है लेकिन देशके इस भागमे — फ्रान्सीसी भारतमे — आनेका मेरा यह पहला मौका है। मेरी दृष्टिमे चाहे वह फ्रान्सीसी भारत हो अथवा ब्रिटिश भारत, दोनो एक ही देश हैं। आपकी रगोमें भी वही खून बहता है जो मेरी रगोमें है, वही मिट्टी है, वही वातावरण है, और हमारे रीति-रिवाज और तौर-तरीके भी एक जैसे है तथा ऐसी कितनी ही चीजे है जो हम सबमे एक जैसी है। लेकिन आपकी पुलिसकी

१. सभामें गांधीजीको नागरिकों और छात्रोंकी ओरसे मानपत्र भेंट किये गये थे।

भिन्न वर्दी और यहाँ-वहाँ जो फ्रान्सीसी भाषामें लिखी हुई चीजे देखनेको मिलती है उनको छोड़ दे तो मुझे और कोई अन्तर दिखाई नही देता। इसलिए मेरे लिए यह कोई आश्चर्यकी बात नही है कि मै जब मलाबारसे होकर गुजर रहा था उस समय आपने मुझे अपने यहाँ बुलाया और हरिजन-कार्यके लिए एक थैली भेट की। वस्तुतः मुझे इस बातपर आश्चर्य और दुख होता अगर मुझे यह पता चलता कि इस सड़कसे गुजरते हुए आपने इस कथित हरिजनोंके प्रतिनिधिकी ओर अर्थात मेरी ओर कोई ध्यान नही दिया है। इसलिए आप लोगोंके बीच अपनेको पाकर मुझे बड़ी खुशी हो रही है हालाँकि मै यहाँ बहुत थोड़ी देरके लिए ठहरूँगा। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि इस स्थानपर एक महत्वपूर्ण मन्दिरको हरिजनोके लिए खोल दिया गया है, ठीक उन्ही शर्तोपर जिन शर्तोपर वह हिन्दुओंके लिए खुला है। इस अत्यन्त साधारण धार्मिक कर्त्तव्यका पालन करनेके लिए मै न्यासियोंको बधाई देता हूँ। और अब मुझे उम्मीद है कि आप यह समझ गये होगे कि इस दौरेके पीछे मेरा क्या उद्देश्य है। मै आपको यह बात समझाना चाहूँगा कि हरिजनोंके लिए केवल मन्दिर खुल-वाना, उनके लिए केवल स्कूल खुलवाना-भर ही मेरा उद्देश्य नही है। मेरे उद्देश्यका मतलब है, सवर्ण हिन्दुओंको अपने हृदयोंको शुद्ध करना होगा तथा हरिजनोके प्रति यथोचित क्षतिपूर्ति करनी होगी जिनका आजतक वे दमन करते आये है। इसका मतलब यह है कि हमे ऊँच-नीचके सारे भेदोंको मिटा देना चाहिये और समझना चाहिए कि हम सब एक ही देशके बच्चे है तथा एक ही देशके बच्चे होनेके नाते हमारे अन्दर ऊँच-नीचका भेद नहीं हो सकता। भगवान करे कि हम इस अत्यन्त छोटी-सी, सरल-सी बातको समझ सकें। मुझे खुशी है कि मुझे जो मानपत्र भेट किया गया है वह हिन्दीमे है और मै चाहूँगा कि यहाँ उपस्थित सब लोग हिन्दीके इस सन्देशको समझे, उसकी कद्र करें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १६-१-१९३४

४९९. भाषण : औषधालयके उद्घाटनके अवसरपर, पक्कनारपुरममें

१३ जनवरी, १९३४

आप अपने सामने यह जो औषधालय देख रहे है इसका उद्घाटन करनेके लिए मुझे बुलाया गया है। यह औषधालय एक ऐसे नौजवान कार्यकर्त्ताके नामपर खोला गया है जिसने देशके लिए अपने प्राणोकी बलि दे दी और जिसकी १९२१ के लगभग मृत्यु हुई थी। उसका नाम बालकृष्ण मेनन है। और इस औषधालयको उसके नामपर पुकारा जायेगा। उन दिनो जब असहयोग आन्दोलन अपने चरमोत्कर्ष पर था उसे भी अन्य लोगोके साथ जेलमे ठूँस दिया गया था और उसकी स्मृतिमें इस इस औषधालयका नाम [बालकृष्ण मेनन] औषधालय रखा जायेगा। इसमे सैकडो हरिजनोको चिकित्सा-सहायता दी जा चुकी है। पिछले चार-पाँच महीनोमे दो हजार से ज्यादा मरीजोका मुफ्त इलाज किया गया है। हम आशा करते है कि यह दवाखाना दिन-दिन तरक्की करेगा, अर्थात यह रोग-पीडित मानवताकी दिनोदिन बढनेवाले सेवा-कार्यका एक साधन बनेगा। मुझे बताया गया है कि एक नौजवान डॉक्टरने मरीजोका मुफ्त इलाज करनेके लिए अपनी सेवाएँ अर्पित की है। हमे उम्मीद है कि इस देशमे ऐसे आत्मत्यागी नौजवानोकी सख्या बढेगी। हमे निश्चय ही ऐसे नौजवान डॉक्टरोकी जरूरत है जिनमे आत्मत्यागकी उचित भावना हो और जो गाँवोमे रहनेके लिए तैयार हो। हरिजनोको चिकित्सा-सहायता मिलना बहुत जरूरी है। मै यह जानता हूँ और मुझे इस बातका दुख है कि भारतमे ऐसे डॉक्टर भी है जो इस भयसे कि छू जानेपर वे अपवित्र हो जायेंगे, हरिजनोंका स्पर्शतक करनेसे इनकार करते है और इस तरह अपने धन्धेको बदनाम करते है। इसलिए जब मैं किसी ऐसे डॉक्टरको देखता हूँ जो इन अन्धविश्वासोसे पूर्णतः मुक्त है और साथ ही जिसमे त्यागकी ऐसी भावना मौजूद हो कि वह मरीजोका मुफ्त इलाज करनेके लिए तैयार हो तो मेरा हृदय हर्षसे भर उठता है। डॉक्टरी-सहायता देना, उनके लिए शिक्षाकी व्यवस्था करना तथा मुफ्त जल-वितरणका प्रबन्ध करना हरिजनोके हकमें जरूरी है ही, लेकिन हम सवर्ण हिन्दुओके करनेके लिए इससे भी ज्यादा जरूरी चीज यह है कि हमे उनके संरक्षक होनेका दावा छोड देना चाहिए। हम सदियोसे हरिजनोका दमन करते रहे है। हमे अस्पृश्यताके इस कलकको तुरन्त ही धो डालना होगा और हरिजनोको अपने गलोसे लगाना होगा। हमे उन्हे अपने सगे भाई-बहनोंके समान मानना होगा। किसी भी मनुष्यको अपनेसे नीचा मानना पाप है। ईश्वर अपने बच्चोके साथ किसी प्रकारका पक्षपात कर सकता है, ऐसा समझना ईश्वरकी

निन्दा करना है। यदि यह दवाखाना कुछ हदतक ऊँच-नीचके भेदको मिटा सके तो मैं इसे सफल मानूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १६-१-१९३४

५००. भाषण: कालीकटकी महिला-सभामें

१३ जनवरी, १९३४

प्रिय बहनों,

मैं देखता हूँ कि आप सबके ही मनमें एक ऐसा विचित्र भय समाया हुआ है कि कहीं ऐसा न हो कि मैं आपको कुछ इस तरह बहका डालूँ जिससे आप अपने गहनोंका त्याग किये बिना न रह सकें। आपमें से कुछ बहनोंने तो पहले ही छोटे-मोटे गहने देने शुरू कर दिये हैं। मैं आज आपको कौमुदी नामक बालाकी सुन्दर कहानी सुनाऊँगा। मैं उससे पहली बार आज सवेरे बड़गरामें मिला और मैंने स्त्रियोंसे अपने कुछ गहने और यदि उनकी इच्छा हो तो अपने सारे गहने दे डालनेकी जो अपील की थी उसके उत्तरमें यह छोटी-सी बाला — औरोंकी तुलनामें मैं उसे 'छोटी-सी' कहता हूँ — मेरा खयाल है वह २० अथवा २१ वर्षकी रही होगी —[1] आगे आई और उसने मुझे अपनी सोनेकी दो चुड़ियाँ उतार कर दे दीं; उसके हाथमें केवल दो ही चुड़ियाँ थीं।

मैं तो इतनेसे ही सन्तुष्ट हो गया था लेकिन वह सन्तुष्ट नहीं हुई। उसने अपने गलेका हार भी उतार कर दे दिया जो बहुत खूबसूरत था। मैंने सोचा कि अब वह रुक जायेगी व और गहने नहीं देगी। लेकिन नहीं, उसके हाथ अपने आप कानोंपर गये और उसे ध्यान आया कि उसने कानोंमें भी कुछ पहन रखा है; और उसने खुशी-खुशी अपने कर्णफूल भी उतार कर मुझे दे दिये। मेरा हृदय भर आया लेकिन उस समय मैंने अपनी भावनाओंको दबा दिया। मैंने उसी समय पूछ-ताछ की कि क्या वह खुदमुख्तयार है अथवा उसने अपने पितासे अनुमति प्राप्त कर ली है। और मुझे तुरन्त ही मालूम हुआ कि उसने यह काम अपने पिताकी उपस्थितिमें ही किया है क्योंकि उसके पिता मेरे साथ मंचपर मानपत्रों और छोटे-मोटे आभूषणोंको इकट्ठा करनेके कार्यमें मेरी सहायता कर रहे थे। तब मुझे पता चला कि लड़कीके पिता भी इस बातपर सहमत थे कि उसके शरीरपर जितने भी गहने थे उन सबको वह हरिजन-कार्यके लिए दे दे। अपनी दो चूड़ियोंके एवजमें वह केवल मेरे हस्ताक्षर पाना चाहती थी। बेशक मैंने उसे अपने हस्ताक्षरोंसे भी ज्यादा दिया। मैंने हिन्दीमें लिखा कि पुरानी और बहुमूल्य वस्तुओंकी अपेक्षा उसका महान् बलिदान ही उसका सच्चा आभूषण होगा। खैर, वह बहुत खुशी-खुशी वापस गई।

१. वस्तुतः उसकी अवस्था १६ वर्षकी थी; देखिए खण्ड ५७, "कौमुदीका त्याग", १९-१-१९३४।

और मैंने उससे यह वचन ले लिया कि उन गहनोके स्थानपर वह अपने पितासे नये गहने बनवानेको नही कहेगी, उसके पास पहननेके लिए और भी ज्यादा तथा पर्याप्त संख्यामे चीजें और आभूषण थे। बेशक एक मलाबारी बालाका यह कार्य कोई अद्‌भुत कार्य न था क्योकि जहाँतक मेरी जानकारी है, मलाबारकी लड़कियाँ संसारभरमे सबसे ज्यादा सीधी-सादी होती है। पता नही, मेरे मनपर उन्होने यही प्रभाव छोडा है कि उन्हे आभूषणोसे बहुत कम मोह है। हो सकता है कि मैं बिलकुल गलत होऊँ। जो भी हो, कमसे-कम मुझपर तो उन्होने यही छाप छोडी है।

आत्माको झकझोर देनेवाली इस कहानीको खत्म करनेसे पहले मुझे एक और कहानी बतानी है। आजसे कोई दस साल अथवा उससे भी पहले आन्ध्र देशमे एक लड़की थी जो विवाहित थी और जब मैंने सभामे उपस्थित बहनोसे अपील की – बहनो की यह शानदार सभा एक थियेटरमें हुई थी – तब सबसे पहले उस लडकीने अपने गहने उतारकर मुझे दे दिये।[1] हालाँकि श्रीमती अन्नपूर्णम्माके गहने अपेक्षाकृत सादे थे तथापि उसके गलेका नेकलैस अथवा कह सकते है कि जजीर बहुत लम्बी और भारी थी तथा शुद्ध सोनेकी बनी हुई थी। मुझे दूसरे गहनोका वर्णन नही करना चाहिए। अफसोस कि वह अब जीवित नही है। लेकिन मै आपको बता दूँ कि उसने मुझे उन गहनोके बदले और नये गहने न बनवानेका जो वचन दिया था उसका उसने शत-प्रतिशत पालन किया। उसके माँ-बाप बहुत अमीर थे और खुशीके साथ उसके गहनोके बदले उसे अपने सारे गहने दे सकते थे। लेकिन तबसे लेकर अपनी मृत्युतक – उसकी मृत्यु आजसे तीन वर्ष पूर्व हुई थी[2] – उसने कभी कोई गहना नही पहना। मेरा यह दृढ विश्वास है कि अन्नपूर्णम्मा और कौमुदीने अपने गहने देकर पुण्य लाभ किया है। मैंने इन दो पुण्य कथाओमे काफी समय लिया है और अब मै बताना चाहता हूँ कि हरिजन-कार्य-जैसे पवित्र कार्यके लिए अपने आभूषणो को त्याग कर आप कोई आश्चर्यजनक कार्य नही करेंगी। [स्त्रियाँ हमेशासे ऐसा करती आई है]। जब-जब उन्होने हरिजन सेवा-कार्यके समान पवित्र किसी भी कार्य को अपने हाथमे लिया है तब-तब उन्होने इसी त्यागभावनाका परिचय दिया है। मुझे आपसे यह कहना है और मै आपसे विनती करता हूँ कि आप अपने दिलोसे अस्पृश्यताके पापका परिष्कार करें, हरिजन लडके-लड़कियोके साथ अपने ही बच्चो, भाइयो और बहनो-जैसा व्यवहार करें। हम युगोसे हरिजनोका दमन करते आये है और आज यदि हम उनके लिए अपने सर्वस्वका त्याग करते है तो यह धर्मके नाम पर उनके प्रति किये गये अन्यायोका देरसे किया गया थोडा बहुत प्रतिकार होगा। इसलिए आप चाहे जो भी दें, फिर भले वह कोई छोटा-सा आभूषण हो अथवा भारी गहना हो अथवा चाँदीकी कोई चीज हो, मै चाहूँगा कि आप उसे अस्पृश्यताके इस कलंकको दूर करनेके संकल्पके प्रतीक-स्वरूप दें, इस विचारको अपने दिलोसे निकाल

१. अप्रैल १९२१ में; देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५७१।

२. वास्तवमें उसकी मृत्यु १९२७ में हुई थी; देखिए खण्ड ३५, पृष्ठ १९३।

बाहर करनेके चिह्न स्वरूप दें कि आप उच्च है अथवा हरिजन नीच है! भगवान आपको बुद्धि दे कि आप इस सरल सत्यको देख सकें और उसे अपने जीवनमें ढाल सकें। अब आप मुझे जो वस्तु देना चाहें दे सकती है; भले ही वह कोई आभूषण हो अथवा चाँदीका सिक्का या नोट, कुछ भी हो।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १५-१-१९३४

५०१. भाषण: कालीकटकी सार्वजनिक सभामें[1]

१३ जनवरी, १९३४

आज आपने मुझे ये जो मानपत्र भेंट किये है उनके लिए मैं आपका बहुत आभारी हूँ और इन मानपत्रोको मुझे पढ़कर न सुनानेमें आपने जिस आत्मसंयमका परिचय दिया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। इससे यह पता चलता है कि आप अनुभव करते हैं कि मैं आज पिछले दो महीनोंसे भी ज्यादा अर्सेसे लगातार हररोज एक जगहसे दूसरी जगह जाता रहता हूँ और इसलिए दिनके अन्तमें थक जाता हूँ। और आप चूँकि समझदार है इसलिए आपने इस बातको महसूस किया तथा इन मानपत्रोको सुननेके कष्टसे मुझे बचा लिया। आपके इस आत्म-संयमके बाद स्वभावतः यह मेरे ऊपर था कि इन मानपत्रोंको मैं पढ़ लूँ और तैयार रहूँ। लेकिन मुझे आपसे कहना होगा कि मुझे इस बातका एहसासतक न था कि मुझे सब मानपत्र दिए जानेवाले हैं और न मुझे इनकी प्रतियाँ ही दी गई थी। यदि मुझे प्रतियाँ दी जाती तो मैं उन्हें निश्चय ही पढ़ता। तथापि मुझे पूरा यकीन है कि इन मानपत्रोंमें करीब-करीब वे ही बातें कही गई जो मुझे इन पिछले दो महीनो अथवा उससे भी ज्यादा समयसे मिलनेवाले असंख्य मानपत्रोंमे कही गई है। इन मानपत्रोंमें निरपवाद रूपसे मैं जिस उद्देश्यको ध्यानमें रखकर यह दौरा कर रहा हूँ उसपर अत्यन्त प्रसन्नता व्यक्त की गई है। इनमे लोगोने इस उद्देश्यके प्रति न केवल सहानुभूति प्रकट की है वरन् इन मानपत्रोमे उन्होने हरिजन-सेवाकार्यकी प्रगतिके लिए अपने-अपने क्षेत्रोमें वे जो-कुछ सेवाकार्य कर सकते हैं वे सब काम करनेकी अपनी अभिलाषा, अपनी दृढ़ इच्छा भी व्यक्त की है।

मुझे यह जानकर बहुत खुशी और सन्तोष हुआ है कि हरिजन उद्देश्यको लेकर प्रबुद्ध वर्गमें मतैक्य है। यदि ऐसा न होता तो मुझे उसपर आश्चर्य और दुख होता। यह बात न केवल प्रबुद्ध वर्गके बारेमें सच है बल्कि जहाँ तक केवल सहमतिका सवाल है, मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि आम जनता भी इस आन्दोलनके साथ है। मै अपने बारेमे सहज ही कोई भ्रम नही पालता। मुझे इस बातका सन्देह नही

१. यह सभा टाउन हॉलमें की गई थी। गांधीजीको मलाबार नगर परिषद्, मलाबार व्यापार संघ, तालुका बोर्ड, हरिजन युवक संघ और अन्य संस्थाओंकी ओरसे मानपत्र भेंट किये गये थे।

है कि मुझे अपने बारेमें थोडा बहुत भ्रम जरूर होगा और होना भी चाहिए क्योंकि इसके बिना सम्भवत. हममेसे अधिकाश लोगोका जीवन निश्चित रूपसे दूभर हो जाये। लेकिन अपने बारेमे इसकी गुजाइश रखनेके बाद भी मै कह सकता हूँ कि रोज जो ये दृश्य मेरे देखनेमें आते हैं और ये जो इतनी बड़ी संख्यामे लोग — जिनमे आम जनता और प्रबुद्ध वर्ग दोनो ही शामिल है — सभाओमें आते है वे मात्र किसी पिछले जन्មमे की गई अथवा मेरी पहलेकी सेवाओके प्रति अपनी प्रसन्नता और सन्तोष व्यक्त करनेके लिए ही नही आते। जीवनका प्रवाह कुछ ऐसा तेज रहा है और विशेष रूपसे मेरा जीवन-क्रम कुछ इतनी तेजीसे चला है कि मेरे लिए घटनाओंका ठीक चित्र याद रखना मुमकिन नही है ऐसी स्थिति होनेके कारण मुझे यह जानकर गहरा दुख और निराशा होगी कि आम जनता व प्रबुद्ध वर्गने इन सभाओमे उपस्थित होकर मेरी उन सेवाओके प्रति न केवल अपना सन्तोष प्रकट किया है और सहानुभूति व्यक्त की है बल्कि उन्होने जो कमोबेशी चन्दे दिए और इस सम्बन्धमे कुछ कार्य भी किए वह सब भी मेरी पिछली सेवाओके एवजमें ही किया है। खैर मै यह सब छोडता हूँ। मै यह माने ले रहा हूँ कि आपके सभी मानपत्रोमे यह गम्भीर और पवित्र प्रतिज्ञा व्यक्त की गई है कि हरिजनोके प्रति किए गए अत्याचारोकी क्षतिपूर्तिके लिए आपसे जो बन पडेगा सो आप करेंगे। यदि कोई व्यक्ति समस्त भारतका अस्पृश्यताका नक्शा खीचने बैठे तो मेरा ख्याल है कलंकका ताज मलाबारके ही सिरपर होगा और जहाँतक अस्पृश्यताका सवाल है मलाबार सबसे काला स्थान होगा। यह एक दुखकी बात है लेकिन हमे इस तथ्यको दरगुजर नही करना चाहिए। मै इस कालिमाको अच्छाईमे बदलना चाहूँगा और मै आपसे अनुरोध करूँगा कि अस्पृश्यताके कलंकको दूर करनेके लिए आप कमर कसकर तैयार हो जाये और ऐसा भगीरथ प्रयत्न करे कि सघर्षके अन्तमे मलाबारके लिए यह कहना सभव हो कि अस्पृश्यताके दानवके विरुद्ध लडी गई लडाईमें मलाबार सबसे अग्रणी था। लोग मलाबारके लिए यह कहे कि अस्पृश्यताकी इस बुराईको दूर करनेके लिए मलाबारने बडे-से-बडे त्यागको तुच्छ जाना। और इस सभाके लिए श्री के० माधवन नायरके चित्रसे ज्यादा उपयुक्त और पवित्र स्मारक और क्या हो सकता था।

मै उन्हे बहुत पहलेसे जानता था। जब मै पहली बार कालीकट आया था तब मुझे उनका परिचय पानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। लेकिन मुझे स्वीकार करना होगा कि तब मै उन्हे उतनी अच्छी तरहसे नही जानता था जितनी अच्छी तरहसे मैंने तब जाना जब वे यरवडामे मुझसे मिलने आये थे। तब मै उनके अत्यंत निकट संपर्कमे आया और जब राजगोपालाचारी यहाँ थे तथा जब गुरुवायूरमे जनमत-संग्रह चल रहा था तब मै स्वभावत अन्य मित्रोके साथ-साथ उनके साथ भी लगभग प्रतिदिन पत्र-व्यवहार करता था। उस समय श्रीमती उर्मिलादेवी और मेरी पत्नी भी श्री के० माधवन नायरके निकट सपर्कमे आई। मेरी पत्नी एक सरल महिला है। वह कुछ भी नही जानती और उसे अंग्रेजी भाषाका कोई ज्ञान नही है, मलयालम भाषा तो वह निश्चय ही नही जानती, लेकिन उसने अपनी अत्यंत सरल भाषामें मुझे यह बताया कि वह श्री माधवन नायरके चरित्रकी सादगीसे अत्यंत प्रभावित

हुई है। उसकी इस वातसे मेरे मनपर पड़ी उनकी छाप और भी गहरी हुई और वह अभी भी अमिट है। उनके साथ मेरे जो सम्बन्ध थे उनकी मेरे दिमागमे अत्यंत स्पष्ट याद है और उनकी जिस बातने मुझे सबसे ज्यादा प्रभावित किया वह थी उनकी विशुद्ध विनम्रता। यह उनका सही चित्र है और जिस चित्रकारने कालीकटकी जनताको यह चित्र भेंट किया है उसे मैं बधाई देता हूँ। मेरा खयाल है, चित्रमे उनके मुखपर जो विनम्रता झलक रही है आप उसे सहज ही देख सकते हैं। आप यह न समझे कि चित्रकारने उनकी विनयशीलताको चित्रमे बढ़ा-चढ़ाकर दिखाया है। मेरा खयाल है कि चित्रकार ऐसा करनेमे सर्वथा असमर्थ है। यदि आप माधवन नायरसे मिले होते तो आपको उनकी सजीव आँखोंमें उस विनम्रताकी ज्यादा सुन्दर झलक दिखाई देती। इस चित्रमे उनका पूरा चरित्र चित्रित है। श्री माधवन नायर आज मेरे समक्ष उसी रूपमें उपस्थित है जिस रूपमे मैंने उन्हे यरवडामें देखा था। वे अत्यन्त स्पष्ट रूपसे मेरी आँखोके सामने रहते है और उन्होंने मेरे मनपर यह एक विशिष्ट छाप छोड़ी है।

मैंने यह भी देखा कि वे अत्यंत मितभाषी थे। आपको ऐसे लोग अधिक नही मिलेगे जो भाषाका अथवा शब्दोंका प्रयोग करनेमें मितव्ययी हो। श्री माधवनने मेरे साथ अपने इस गुणका बहुत ज्यादा परिचय दिया। उनके पत्र सुसम्बद्ध, सुन्दर, साफ और अत्यन्त संक्षिप्त होते थे। उन्हें जो कहना होता था वह बहुत थोड़े शब्दोंमें कहकर पत्र समाप्त कर देते थे। ऐसे थे श्री माधवन नायर। यदि आप ऐसे लोगोंका स्मरण करें जो शरीरसे तो नष्ट हो गए हैं लेकिन अन्यथा जीवित हैं तो आप देखेंगे कि वे अपनी बौद्धिक उपलब्धियोंके कारण नही वरन् अपने गुणोंके कारण जीवित हैं तथा यदि हम चाहें और यदि हम उस दिशामें प्रयत्न करें तो हम और आप भी बल्कि हममें से हरकोई व्यक्ति अपने अंदर इन गुणोंका विकास कर सकता है। इस-लिए यदि आप यह सोचते है कि इस चित्रका अनावरण करनेके लिए मुझे बुलाकर और इस समारोहमें उपस्थित होकर वे उनकी स्मृतिमे कुछ प्रशंसात्मक शब्द सुनकर आपने अपना कर्त्तव्य पूरा कर लिया है तो आप उस व्यक्तिकी स्मृतिके प्रति अन्याय करेंगे जिसका मैंने, जिस रूपमें मैंने उसे जाना, उस रूपमे वर्णन किया है। यदि आप सचमुच ऐसा करेंगे तो आप निस्सन्देह उसके प्रति अन्याय करेंगे। लेकिन आप ठीक चीज तभी करेंगे जब उनके इस चित्रको एक बहुमूल्य निधिके रूपमें अपने पास रखेंगे जो आपको बराबर इस बातका एहसास कराये कि आपको भी यदि पूरी तरहसे नहीं तो कम-से-कम कुछ अंशोंतक माधवन नायर बनना है और अन्तमे इस प्रकरणको पूरा करनेके लिए मैं आपसे कह दूँ कि जहाँतक हरिजन-कार्यका सवाल है, श्री माधवन नायर अपने कर्तव्यका पालन करते हुए मृत्युको प्राप्त हुए। वे उस हरिजन कार्यके एक सच्चे कार्यकर्त्ता थे जो कि [सवर्णोके लिए] आत्मशुद्धि, पश्चात्ताप और क्षतिपूर्तिका कार्य है। वे जो-कुछ भी करते थे उसमे कही कोई लघुताका भाव नही होता था। ईश्वर करे कि मेरे और आपके दिलोंमें उनकी याद बराबर बनी रहे।

आपने मुझे जो मानपत्र भेंट किए है उनके लिए मैं आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ। और चूंकि मै समझता हूँ कि इन मानपत्रोंकी नीलामी करनेके

लिए यह उचित अवसर नही है इसलिए मैं आशा करता हूँ आप सब लोग कल इन मानपत्रोके बदलेमे कुछ पैसा जुटानेके कार्यमें मेरी सहायता करेगे क्योकि मै जानता हूँ कि कालीकटसे मैं निराश होकर नही लौटूंगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १५-१-१९३४

५०२. भाषण : मलाबार क्रिश्चियन कॉलेज, कालीकटमें

१३ जनवरी, १९३४

जब आपने मुझे हरिजन-कार्यके लिए एक थैली प्राप्त करने और आपसे कुछ शब्द कहनेके लिए आमन्त्रित किया तब मुझे बडी प्रसन्नता हुई। आपने स्वभावत: इस उद्देश्यके प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त की है। लेकिन आपके प्रिंसिपलने कॉलेजको और इस तरह प्रकारान्तरसे आपको भी जो प्रमाणपत्र[2] दिया है उतने भरसे आप नौजवानोको सन्तुष्ट नही हो जाना चाहिए। जरूरत इस बातकी है कि आप इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण कार्य करें, और वह यह कि अस्पृश्यताकी इस प्रथाको आप ईश्वरीय देन न माने बल्कि इसे आप हमे अपने चगुलमे फँसानेके लिए शैतानकी करतूत समझें। हम सब चाहे किसी भी धर्मको माननेवाले क्यो न हो, लेकिन हम सब उसी एक स्रष्टाकी सन्तान हैं। सृष्टिकर्ता तो केवल एक ही है। हम ऐसा अपने मुँहसे तो अवश्य कहते हैं लेकिन हम इस मान्यताको जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमे और अपने क्रियाकलापोमे स्थान देनेको तैयार नही हैं। यह असत्य है और हमें अपने जीवनसे इस असत्यको निकाल बाहर करना चाहिए। और विद्यार्थियोसे ज्यादा अच्छी तरह इसे और कौन कर सकता है? इसलिए आपको निर्भय होकर यह घोषणा करनी होगी कि यदि हम सब उसी ईश्वरकी सन्तान है तो हम सब समान है। आप अपने मनमें जिरह न करे और यह न कहे कि "हम सब समान कैसे हो सकते है?" आपमेसे कुछ लडके बहुत होशियार है और उन्होने पुरस्कार प्राप्त किये है तथा अपनी-अपनी कक्षामे उनका स्थान प्रथम श्रेणीमे है। तो फिर जो लडके कक्षामे

१. इसके बाद गांधीजीने श्री के० माधवन नायरके चित्रका अनावरण किया। बादमें उसी दिन किसी समय वे एक मलयालम दैनिक *मातृभूमि* के कार्यालयमें गये और उसके कर्मचारियोंके समक्ष भाषण देते हुए उन्होंने कहा कि माधवन नायर इस न्यासकी आत्मा थे और यह उनके अथक प्रयत्नोंका परिणाम है कि आज इस समाचार पत्रका अपना एक विशिष्ट स्थान है। यह कहना बहुत ज्यादा न होगा कि मलाबारमें इस पत्रका एक विशिष्ट स्थान है। उन्होंने कर्मचारियोंसे अपील की कि वे स्वर्गीय श्री नायरके पदचिह्नों पर चलें जो बिना किसी दुविधाके और तहेदिलसे इस आंदोलनके साथ थे। सीधे-सादे शब्दोंमें यह आंदोलन एक धार्मिक आंदोलन है।

२. कॉलेजके प्रिंसिपलने कहा था कि कॉलेजमें जो हरिजन लडके है उनके साथ समताका व्यवहार किया जाता है।

सबसे ऊपर हैं वे उन लड़कोंके समकक्ष कैसे हो सकते हैं जो कक्षामें सबसे नीचे हैं। यह आपके लिए और मेरे लिए एक अच्छी खासी पहेली है और आपको इसे बुद्धिमानीके साथ सुलझाना होगा, अबुद्धिमत्तापूर्वक नहीं। अक्सर ही ऐसा होता है कि जिस तरह हम अंकगणित और ज्यामितिकी समस्याओंको सुलझाते हैं उसी तरह ऐसी समस्याओंको भी सुलझा डालते हैं। यदि आप इन्हें समझदारीके साथ सुलझा सकें तो मैं आपको सांसारिक माता-पिताओंके उदाहरण दूँगा। आपमें से जिन लड़कोंके भाई हैं वे यह अनुभव करेंगे कि उनमें परस्पर एक जैसे गुण अथवा बुद्धि नहीं है, और उम्र तो निश्चय ही एक जैसी नहीं है, शरीरका गठन भी एक जैसा नहीं है। और तब भी क्या आप अपने माता-पिताको आपमें और अपेक्षाकृत अधिक होशियार और मेहनती बच्चोंमें कोई भेदभाव बरतते हुए देखते हैं? इसके विपरीत, कदाचित् आपके माता-पिता उन बच्चोंको ज्यादा प्यार करते होंगे जो असहाय हैं और जिन्हें मददकी जरूरत है बनिस्बत उन बच्चोंके जो होशियार हैं और अपनी सहायता आप कर सकते हैं। तो क्या आप यह समझते हैं कि वह दिव्य पिता, जो पिताओंका भी पिता है और ऐसा पिता है जैसा संसारने कभी नहीं देखा है, क्या वह कुछ लोगोंके साथ उनके जन्मसे ही अस्पृश्योंका-सा व्यवहार करेगा और इस तरह उन्हें सबसे नीच मानेगा तथा अन्य लोगोंको सबसे ऊपर जानेगा? आप लोगोंमें आज जो अस्पृश्यता प्रचलित है वह मेरे विचारसे एक स्वयंसिद्ध सिद्धान्त है। यदि आप यह थैली मुझे अपना हृदय परिवर्तन करनेकी दृढ़ इच्छाके चिह्न स्वरूप देंगे और आप इस पृथ्वीपर किसी व्यक्तिको अस्पृश्य न मानेंगे तो इसका सदुपयोग होगा। धर्म हमें अपने आपको निम्नतम और अन्य हर किसीको उच्चतम मानना सिखाता है। क्या आप सब लोग इसी तरहका आचरण करते हैं? अस्पृश्यताको निःसन्देह खत्म होना है। अस्पृश्यताका यह रोग हमारे शरीरको घुनकी तरह खा रहा है और हमारी आत्माको रौंदे डाल रहा है। यदि आपने मेरे वचनोंको समझ लिया है तो आप अपने दिलोंको इस तरह बदल डालेंगे कि आप अस्पृश्यताकी भावनाको किसी भी रूपमें अपने दिलोंमें घर नहीं करने देंगे। आप अन्य धर्मोंको माननेवाले लड़कोंके प्रति अस्पृश्यताके बर्तावको बरदाश्त नहीं करेंगे। आप हरिजनोंकी बस्तियोंमें जायेंगे और अपना समय व्यर्थ गँवानेके बजाय, आप वहाँ जाकर हरिजन लड़कोंकी सेवा करेंगे और उनकी जरूरतोंके बारेमें पता लगायेंगे। यदि आपके माता-पिता आपको पाँच पाई अथवा जो-कुछ भी देते हैं तो आप कमसे-कम उसका थोड़ा-सा अंश हरिजन लड़कोंके लिए बचा कर रखेंगे जिनको उन पैसोंकी आपसे ज्यादा जरूरत है। आप फुर्सतके समय हरिजन लड़के और लड़कियोंकी सेवा करें। आप उनके घरोंमें जाकर झाड़ू लगायें। आपको उन्हें स्वच्छ जीवन बिताना सिखाना होगा। आपके लिए इतना ही पर्याप्त नहीं है कि आप अपने शरीरोंको साफ रखें, बल्कि आपको अपने हृदय और अपनी आत्मा भी शुद्ध रखनी चाहिए। जब आप प्रातःकाल सो कर उठें तब सबसे पहले आप भगवानसे प्रार्थना करें कि वह आपको हृदय और शरीर स्वच्छ रखनेकी शक्ति प्रदान करे। यदि आप यह सब करेंगे तो आपने मुझे यह जो

थैली भेट की है वह अस्पृश्यताकी बुराईको दूर करनेकी आपकी दृढ़ इच्छाका प्रतीक होगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १५-१-१९३४

५०३. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१४ जनवरी, १९३४

भाई घनश्यामदास,

मलकानीने तुमारा पत्र पढाया है। बिहारीलालको मैंने स्पष्ट लिखा है। मेरे पत्रकी प्रतिलिपि भेजता हु। हमारे उसके साथ स्पष्टतासे और दृढतासे काम करना होगा।

पेदलवाला करनेका कार्य इस दौरेमे होना अशक्यसा प्रतीत होता है। लेकिन जो हो रहा है वह अच्छा ही प्रतीत होता है। लोगोके विचारका परिवर्तन खूब हुआ है। आचारमे बहुत परिवर्तन नहि हुआ है। देखे क्या होता है। मुझे तो ईश्वरका हाथ इस कार्यमे देखा जाता है। यह एक रूढ वचन है। यह कार्य कोई एक मनुष्यकी शक्तिसे हो हि नही सकता है, न हजारोसे। लेकिन इस बारेमे अधिक लिखा या कहा जा नहि सकता है। इसका तात्पर्य इतना ही है कि ईश्वर पर मेरा विश्वास बड़ता जाता है। अपनी शक्तिकी अल्पताका प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा है।

तुमारा शरीर अच्छा रहता होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९४३) से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

५०४. भाषण : कलपेट्टाकी सार्वजनिक सभामें[1]

१४ जनवरी, १९३४

दोस्तो,

मुझे मोटरमे देशके इस अत्यन्त सुन्दर क्षेत्रसे होकर गुजरनेका यह जो संयोग मिला उसमे मुझे श्रम-जैसा कुछ महसूस नही हुआ बल्कि इससे मुझे सचमुच बहुत खुशी हुई है। आपके सामने अभी जो मानपत्र पढकर सुनाये गये है उनमे कही गई बातोके पीछे जो-कुछ है उसके बारेमें मुझे बहुत-कुछ पता चला है। ऐसा प्रतीत होता है कि मृतक सुब्बिया गोन्डनके पास जो भी जमीन-जायदाद[2] थी वह सबकी

१. 'सहोदर संघ' के तत्त्वावधानमें मुतल हिल्नेल्ली हरिजन बस्तीके उद्घाटन समारोहकी सभामें।

२. विस्तारमें १६५ एकड़ जमीन।

सब उसने हरिजन-कार्यके लिए वसीयत कर दी है। यह एक दुर्लभ और वस्तुतः एक बहुमूल्य भेंट है। इस न्यासके सम्बन्धमें न्यासियों और वसीयतके प्रबन्धकोंके ऊपर एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। इस वसीयतनामेकी शर्तोंके अनुरुप चलनेवाली योजनाको जबतक प्रबन्धक और न्यासी लोग अपने दिलोजानसे कार्यान्वित करनेका प्रयत्न नहीं करेंगे तबतक यह बस्ती वैसी सुन्दर बस्ती नहीं बन सकेगी जैसीकि स्वर्गीय सुब्बियाकी इच्छा थी। मैं आशा करता हूँ कि न्यासी अथवा वसीयतके प्रबन्धक लोग उनपर जो भरोसा प्रकट किया गया है उसके योग्य हैं और यह कि वे अपने दायित्वको इस प्रकार निभायेंगे जिससे कि जनताको पूरा सन्तोष होगा। मैंने जान-बूझकर 'जनता' शब्दका प्रयोग किया है क्योंकि जब कोई न्यास सार्वजनिक कार्यके लिए समर्पित कर दिया जाता है तब वह जनताकी सम्पत्ति बन जाता है। मैं इस आशा और आश्वासनके साथ प्रसन्नतापूर्वक बस्तीके खोले जानेकी घोषणा करता हूँ और इसकी सफलताकी कामना करता हूँ। हमें प्रयोगके लिए अथवा योजनाके कार्यान्वित करनेके लिए जिन साधनोंकी जरूरत है वे हमारे सामने मौजूद हैं। हमारे सामने एक दो नहीं बल्कि बहुत सारे हरिजन भाई खड़े हैं। उन्होंने नृत्य व संगीतका जो कार्यक्रम प्रस्तुत किया है वह हम सबने देखा है। हमारे लिए यह कोई आनन्दकी अथवा मनबहलावकी चीज नहीं होनी चाहिए बल्कि इससे हमें गहरा सबक सीखना चाहिए। मेरा खयाल है मेरी तरह आप सबने भी यह बात महसूस की होगी कि उनके वाद्योंमें संगीतकी मधुरता न थी और नृत्य भी मनोहारी न था। लेकिन यही एक चीज है जो ये लोग अपना खाली वक्त काटनेके लिए कर सकते हैं। उनके वाद्य में और नृत्यमें जो मधुरताका अभाव है उसकी जिम्मेदारी उनपर नहीं बल्कि आपके और मेरे कन्धोंपर है। उनके जंगली स्वभावको समझनेके लिए हमें उनके नाच व संगीतकी बारीकियोंमें जानेकी जरूरत नहीं है। उनकी शकल-सूरत, बिखरे हुए बाल, और उनकी हर चीज हमें यह बतानेके लिए काफी है कि हम अपने इन बन्धुओंके प्रति कितने लापरवाह रहे हैं। और ऐसा करके हमने कितना अपराध किया है। वे साल-दर-साल तबतक वही लंगोटी अथवा कपड़ा पहने रहते हैं जब तक कि वह चिथड़े-चिथड़े नहीं हो जाता। वे बहुत कम स्नान करते हैं और जब करते भी हैं तब, यकीन मानिए, खास साफ पानीसे नहीं करते। इन शर्मनाक हालात के लिए आप और मैं जिम्मेदार हैं। और यदि इस बस्तीका प्रबन्ध मेरे हाथमें हो तो मैं आपसे कहता हूँ कि मैं फौरन इन लोगोंको बस्तीमें रहनेके लिए बुलाऊँगा, इन्हें अच्छा वेतन दूँगा, इनसे नियमपूर्वक स्नान करनेका अनुरोध करूँगा और इन्हें सलीकेदार मनुष्य बना दूँगा। मेरा खयाल है, अगर हमें पता चले कि हमारा अपना सगा भाई उन्हीं जंगली हालातमें रह रहा है जिनमें कि हमारे ये भाई रहते हैं, तो हममें से प्रत्येक व्यक्ति ऐसा ही करेगा। और यदि बिना समय गँवाये ऐसी सुखद स्थिति लाई जा सके तो हम मान सकते हैं कि आपने और मैंने यहाँपर व्यतीत हुए अपने समयका सदुपयोग किया है। इस मानपत्रके अन्तमें ये शब्द कहे गये हैं: "भगवान करे कि आप अपने प्रयत्नोंमें सफल हों।" खैर, मैं तो सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि मैं अपने प्रयत्नोंमें तबतक सफल नहीं हो सकता जबतक आप

भी अपने प्रयत्नोमें सफल न हो। क्योकि मेरे प्रयत्न तो केवल सवर्ण हिन्दुओसे हृदय-परिवर्तन करनेका आग्रह करने और उनसे हरिजनोकी जितनी सेवा बन पड़े उतनी सेवा करनेको कहनेतक ही सीमित है। अन्तमे मै इन हरिजन भाइयोसे अनुरोध करूँगा कि वे आत्मशुद्धिकी दिशामे सच्चे दिलसे प्रयत्न करें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-१-१९३४

५०५. भाषण : कालीकटकी सार्वजनिक सभामें[1]

१४ जनवरी, १९३४

मित्रो,

अभी-अभी मुझे कालीकटके नागरिकोंकी ओरसे बहुत-सी थैलियाँ दी गई है जिनका जोड रु० ४,३८८-५-९ है। दानकी बछियाके गुण-दोष नही देखे जाते, इसलिए शिष्टाचारका तकाजा है कि हरिजन-कार्यके लिए जो बहुत-से उपहार आपने मुझे दिये है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद दूं। लेकिन स्वेच्छया अथवा आत्म-नियुक्त हरिजन-सेवक होनेके नाते मुझे मलाबारकी राजधानीसे मिलनेवाली हल्की-फुल्की थैलियोके प्रति अपना आदरयुक्त विरोध प्रकट कर देना चाहिए। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि बंगलौरने, मैसूरकी राजधानी नही बल्कि मैसूर-राज्यके दूसरे नम्बरके नगरने, जो मलाबार-जितना बड़ा भी नही है, मुझे जितना आज शाम आपने मुझे दिया है, उससे कही अधिक दिया था। और कालीकट हरिजन-कामके लिए कितना दे सकता है, यह मै अच्छी तरह जानता हूँ। लेकिन अब भी कुछ नही गया है। आपके यहाँ बहुत-सी मनोहर वस्तुएँ है और दो-चार शब्द जो मै कहना चाहता हूँ, वे कह चुकनेके बाद आप चाहे तो उस कमीको पूरा कर दे और आज जो नि.सन्देह एक हल्की थैली है उसे आप भारी थैलीमे बदल दे। ऐसा कर सकना आपके लिए सर्वथा सम्भव है।[2]

मलाबारमे आनेके बाद यह बात मैं बहुत-से मचोसे कह चुका हूँ कि यदि सम्पूर्ण भारतका एक अस्पृश्यता-सूचक मानचित्र तैयार किया जाये तो मलाबारको पूरे देशमे सबसे काले धब्बेके रूपमे दिखाया जायेगा। और इस समय जो स्थिति है, उसको देखते हुए मैं समझता हूँ कि आपको अपना अपराध स्वीकार करना होगा। तब यदि आप मलाबारके पापके बारेमे कायल है, जैसाकि आपने मुझे यह थैली देकर स्वीकार किया है कि आप कायल है, तो आप स्वीकार करेंगे कि इस पापसे मुक्त होनेके लिए मलाबारको सबसे ज्यादा प्रायश्चित्त करना होगा। इससे तो कुछ भी फर्क नही पड़ता, और पडना भी नही चाहिए, कि आपमें से जो कुछ धनवान लोग है वे मूलत. मलाबारके निवासी नही है। मलाबारमें रहकर जो लोग मात्र

१. यह सभा शाम छ: बजे समुद्रके किनारे हुई थी और इसमें १५,००० लोग उपस्थित थे।
२. यह अनुच्छेद हिन्दूसे लिया गया है।

अपनी जीविका अर्जित कर रहे हैं या खूब धन कमा रहे हैं, उनको यह समझ लेना चाहिए कि उन्हें प्राप्त होनेवाला एक-एक पैसा इस पापसे दूषित है। इसलिए क्षतिपूर्ति और प्रायश्चित्तके लिए वे भी उतने ही जिम्मेदार हैं जितने कि यहाँके मूल मलयाली निवासी हैं।

आज सुबह मुझे मलाबारके एक अत्यन्त सुन्दर स्थानपर ले जाया गया; मुझे पहाड़ीपर ले जाया गया जहाँकी दृश्यावलि बहुत रोमानी थी। वहाँ मुझे कलपेट्टा नामक एक गाँवमे ले जाया गया, जहाँ मुझे एक भजन याद आ गया — मेरे खयालमें इसे बिशप हेबरने लिखा था। खैर, चाहे उन्होंने लिखा हो या किसी और बिशपने, आपकी ज्ञानवृद्धिके लिए मै उस भजनमे से यह एक पंक्ति आपको सुनाता हूँ। कहा जाता है कि वह जब भारतके पश्चिमी तटपर पहुँचनेवाले थे तब उनके होठोंपर या उनकी कलमपर अपने-आप यह पंक्ति उतर आई: "प्रत्येक दृश्य सुखदायी है, केवल मनुष्य ही घिनौना है"[1] ('एवरी प्रॉस्पेक्ट प्लीजेज, मैन एलोन इज वाइल') इसमे मुझे कोई सन्देह नही कि जब उन्होंने यह पंक्ति लिखी थी तब उनके दिमागमें अस्पृश्यताका यह काला धब्बा नही था। इस पंक्तिकी मैंने जो व्याख्या की है उससे इसकी शास्त्रीय व्याख्या बिलकुल भिन्न है। लेकिन कवियोंको उनके स्व-निर्मित दायरोंमें भी कभी सीमित नही रखा जा सकता। कवि तो चिरकालके लिए लिखते हैं। उनके शब्दोमे एक ऐसा अर्थ गर्भित होता है जिसकी कल्पना उन्हें जब वे बोलते हैं या लिखते हैं तब नही होती। मलाबारमे मनुष्यके लिए प्रकृतिने जो उपवन बनाये हैं वहाँसे सुरभित हवाएँ आती हैं। लेकिन मनुष्यने अस्पृश्यता द्वारा उसे दूषित कर दिया है और इस तरह वह घिनौना बन गया है। हमने ईश्वरकी महानतम रचना अर्थात् मनुष्यको विरूपित करनेका प्रयत्न किया है। मनुष्यकी आत्माका सौन्दर्य ऐसा होता है कि पेड़-पौधोंका चित्ताकर्षी सौन्दर्य भी उसे कभी मात नहीं कर सकता। लेकिन तथाकथित सवर्ण हिन्दू अथवा तथाकथित उच्च वर्गीय हिन्दुओंने हिन्दू-समाजके एक अंशको दबानेकी अनधिकार सत्ता ग्रहण कर ली। लेकिन जैसाकि हम शायद कुछ वर्षोमें देखेंगे, उनका यह प्रयत्न असफल रहा है। मनुष्यने, स्वयं ईश्वरके नामपर, हजारो लोगोंको समाजके दायरेसे बाहर रखकर मनुष्यकी आत्माका दमन करनेमें कोई कसर नही उठा रखी है।

आज कलपेट्टामें पेड़-पौधोके चित्ताकर्षी सौन्दर्यके बीच मैंने जो-कुछ देखा है वह मैं आपको बताऊँगा। मुझे मानव-जातिके जंगली नमूने देखनेको मिले जिनसे तीव्र दुर्गन्ध आ रही थी। आप मेहरबानी करके जल्दीमें यह मत कह बैठिए कि यही तो वजह है कि वे अस्पृश्य हैं। आप जिस हदतक शायद मेरे साथ सहमत होनेको

१. ये पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:
"व्हाट दो द स्पाइसी ब्रिजेज
ब्लो सॉफ्ट ओवर सीलोन्स आइल
दो एवरी प्रॉस्पेक्ट प्लीजेज
ऐण्ड ओनली मैन इज वाइल"

तैयार है, मै चाहता हूँ कि आप जरा उससे गहरे उतरकर मेरे साथ विचार कीजिए और समझनेकी कोशिश कीजिए कि इस अवर्णनीय रूपसे पीडाजनक दृश्यके लिए आप और मै जिम्मेदार है। यदि आप चाहे तो एक घटेके अन्दर-ही-अन्दर इन लोगोको स्वच्छ तथा ऊपरसे देखनेमे उतने ही सम्माननीय व्यक्तियोके रूपमे बदला जा सकता है जितने कि आप और मै है। बस थोड़े-से गरम पानी, या साबुन, और थोड़ी-सी खादीकी जरूरत है, और आप तत्काल देखेगे कि वे भी बिलकुल उतने ही सभ्य दिखने लगेगे जितने कि आप और मै। उनके और हमारे बीच के आन्तरिक भेदका तो केवल ईश्वर ही निर्णय कर सकता है। यह बिलकुल सम्भव है, बल्कि वस्तुत. मेरी रायमें तो यह बिलकुल निश्चित बात है कि हम लोग उनकी अपेक्षा कही ज्यादा पापी और अधम प्राणी है। हमारे जीवनकी पाटीपर हमारे कार्योका जो ब्योरा लिखा हुआ है वह बहुत अच्छा नही है। उनकी जीवन-पाटी तो अभी भी साफ-सुथरी पडी है। आपको क्या यह जानकर अब आश्चर्य होगा कि जब अपने इन देशवासियोको मैंने देखा तो मन ही-मन मै सहसा उपरोक्त कविसे कह बैठा, 'तुमने यह बात ठीक ही कही है कि "प्रत्येक दृश्य सुखदायी है, केवल मनुष्य ही घिनौना है"।' अब आप अपने दिलोपर हाथ रखकर मुझे यह बताइए कि यदि आप लोग अपनी सारी धन-दौलत दे दे और बहनोके पास जो-कुछ जेवर है वे सब उसे त्याग दे तो भी क्या आपके कारण हमारे इन देशवासियोको जो नुक्सान पहुँचा है उसकी पर्याप्त क्षतिपूर्ति हो सकेगी? मै आपको यह समझाना चाहता हूँ कि जब आप अपने पासका सब-कुछ त्यागकर हरिजनोके साथ हुए अन्यायकी क्षतिपूर्ति करनेका काम आरम्भ कर देगे तब ही आप हरिजनोके उपयुक्त सेवक समझे जायेगे। लेकिन मै जानता हूँ कि यह एक आदर्श स्थिति है और मै यह भी जानता हूँ कि यदि मै आपको आसानीसे उस आदर्श मार्गपर ले चल सका तो भारत वास्तवमें फिरसे तीस करोड देवताओका देश बन जायेगा।

लेकिन मै ऐसे किसी प्रकारके भ्रमके वशीभूत नही हूँ। मै अपने-आपको एक व्यावहारिक आदर्शवादी मानता हूँ। मानव प्रकृतिसे मुझे जो-कुछ प्राप्त होता है वह मै ग्रहण कर लेता हूँ और अपनी राह लगता हूँ। मेरा काम आपके सामने स्थितिकी वास्तविकताओको पेश करना है, आपकी बुद्धि और आपकी कल्पना-शक्तिको जगाना है, आपके हृदयको स्पर्श करना है, और इसके बाद यह बात आपके ऊपर छोड़ देनी है कि आप हरिजन-कार्य जैसे महान् और पवित्र उद्देश्यके लिए यथासम्भव जितना कुछ कर सकते है, करे।

अन्तमे मै चाहूँगा कि आप इस बातको समझ ले कि यदि हम, तथाकथित सवर्ण हिन्दू, परीक्षाकी इस छोटी-सी अवधिमें हरिजनोके प्रति अपने इस प्राथमिक कर्त्तव्यके पालनमे असफल हो गये तो हिन्दू-धर्म इतिहासकी चीज बनकर रह जायेगा। इतिहास हमे यह सिखाता है कि बहुत-सी सभ्यताएँ, बहुत-सी सस्कृतियाँ उन पिछली सभ्यताओके प्रतिनिधियोकी अन्तर्निष्ठ कमजोरीके कारण सदा-सदाके लिए नष्ट हो गई है।

इसलिए आप इस धोखेमें न रहिये कि हम यदि प्राचीन ऋषियों द्वारा छोड़ी गई अमूल्य निधिके अयोग्य प्रतिनिधि सिद्ध हुए तो वैसी स्थितिमे भी हिन्दू-धर्म अपवाद सिद्ध होगा और आसन्न विनाशसे बच जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-२-१९३४ तथा हिन्दू, १६-१-१९३४

५०६. पत्र : नान और तंगई मेननको

१५ जनवरी, १९३४

प्रिय नान[1] और तंगई[2],

दोनोंको खूब-खूब प्यार और चुम्बन। आशा है, वहाँका मौसम[3] तुम्हें अनुकूल आ रहा है और तुम दोनों प्रसन्न हो। क्या तुम लोग मलयाली भाषा सीख रही हो? तुम लोग मुझे जल्दी-जल्दी पत्र लिखा करो।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड, पृष्ठ १२०

५०७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१५ जनवरी, १९३४

भाई वल्लभभाई,

इस समय शामके चार बजे है। आज मौनवार है। मै कालीकटमें नागजी पुरुषोत्तमके बँगलेमें बैठा हुआ हूँ। देवदास और लक्ष्मी आज आये हैं। कल ठक्कर बापा और शंकरलाल आयेंगे। कल दोपहरको ढाई बजे जामोरिन[4] से मिलूँगा। पाँच बजे त्रिचूरके लिए रवाना हो जाऊँगा।

लक्ष्मी प्रसवके लिए दिल्ली जाये अथवा मद्रासमें रहे, यह प्रश्न हमारे सामने है। वह और देवदास दो दिनोमें राजासे मिलेंगे। उसके बाद अन्तिम निर्णय करेंगे। देवदासको दिल्ली जानेकी अनुमति मिल गई है। तथापि वह अनुभव प्राप्त करनेके लिए छः महीने मद्रासमें रहेगा। दोनों सोच-विचार कर रहे हैं। देवदासकी अनुपस्थितिमें प्रसव हो, ऐसा लक्ष्मी नही चाहती, और राजा अपनी अनुपस्थितिमे नही चाहते। इस प्रकार

१ और २. एस्थर मेननकी पुत्रियाँ।
३. दक्षिण भारतमें पलनी हिल्समें कोडाईकनालका।
४. कालीकटके, अब कांजीकोड।

उलझनोंमें उलझने फँसी है। लेकिन जीवनकी सफलता ऐसी जटिल दीख पड़नेवाली समस्याओंको सीधी तरह सुलझानेमें ही तो है न?

शंकरलालको मैंने खादीके बारेमें थोड़ी बातचीत कर जानेके लिए खास तौरसे बुलाया है। मैं देखता हूँ कि हमारे खातेमें कदाचित् अनावश्यक खर्च होता है। मैंने जो देखा है उसे मैं उनके आगे रखना चाहता हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि एक प्रान्तकी खादी दूसरे प्रान्तमें भेजनेका दायित्व अब बिलकुल त्याग देना चाहिए। और अन्तमें मेरा रुख अनन्तपुरकी पद्धतिकी ओर झुकता है। सावलीमें जो पद्धति है वह भी ठीक जान पडती है। कृष्णदास [गाधी] और जाजूजी दोनों ही उस्ताद हैं और एक-दूसरेकी खूब पूर्ति करते हैं। कृष्णदास खूब नाम कमा रहा है। केशु शान्त है। रामदासेका दिल उचाट है। वह भी किसी दिन ठिकाने आ जायेगा।

देवदास बा से मिल आया है। बा की बहादुरीका वह बहुत बखान करता है। बा परेशान तो जरूर है, लेकिन परेशानी न हो तो जीवनमें क्या मजा है?

मैं गुरुवायूर हो आया। वहाँ कुछ भी नही है। लेकिन यह बात जरूर है कि वर्णाश्रम सघने उत्तर भारतके कुछ पहलवानोको काले झण्डे दिखाने और थोड़ी मार खानेके लिए भेजा था। दो व्यक्तियोने सभा मचपर कब्जा कर लिया था। उन्होंने एक भाईके पाँव पकड़ लिये। इसपर युवकोने उन्हे मचसे उतर जानेके लिए कहा। हाथापाई हुई, इन पहलवानोको थोड़ी मार पड़ी। यह है तो ठीक, लेकिन उन्होंने अभिनय ऐसा किया है मानो खूब मार पड़ी हो। इन दोनोंको मैंने अस्पताल भेजा[1] और सभा शुरू की तथा पूरी की। लोग बडी सख्यामें आते रहते हैं। छोटी और बड़ी भेट मिलती रहती हैं। अन्नपूर्णा जैसी एक कौमुदीबहन प्रकाशमें आई है। उसने अपने गहने दे दिये।[2] "जिसे राम राखे ते कौन चाखे जी" अत वह जैसा रखेगा वैसे रहेंगे, जो कहेगा सो करेंगे, जैसा नाच नचायेगा वैसा नाचेंगे।

बगलौरमें हंगरीकी दो महिलाएँ, माँ और बेटी, मिली थी। दोनों चित्रकलामें बहुत प्रवीण है। सादगीसे रहती हैं। अभी तो उन्होने अपना सर्वस्व हिन्दुस्तानको अर्पित कर दिया है। ये माँ-बेटी भजनोके स्वरपर सहज ही नाच उठती है।

नी० अमेरिका जायेगी, ऐसा लगता है। कदाचित् स० भी जाये। उसने जो कारनामे किये है उसके बारेमें मैंने तुम्हे ज्यादा नही लिखा है और लिखूंगा भी कैसे? उस सबके लिए समय चाहिए न?

अमलाका काम ठीक चल रहा है।

मणिका पत्र इसके साथ है। पूनी और पुस्तकोके बारेमें मैंने स्वामीको लिखा है। पुस्तके एक ही आकारकी न होनेके कारण वह उनकी जिल्द बँधवाकर भेजेगा अथवा नही, सो मैं नही कह सकता। स्वामी उस्ताद है और यदि सम्भव हुआ तो वह अवश्य कर देगा।

मणिने तुम्हे जो पत्र लिखा है वह डाह्याभाईने भेजा था।

१. देखिए "भाषण: गुरुवायूरकी सार्वजनिक सभामें", ११-१-१९३४।

२. देखिए "भाषण: कालीकटकी महिला-सभामें", १३-१-१९३४ तथा खण्ड ५७, "कौमुदीका त्याग", १९-१-१९३४।

यदि मैं बेलगाम गया तो मैं दोनोसे मिलनेकी तजवीज करूँगा। वैसे मेरा वहाँ जाना निश्चित नही है।

मणिको लिखना कि वडोकी सेवा उनके समीप रहकर की जा सकती है अन्यथा नही, सो बात नही है। जो वडोंका काम करता है वह भी वड़ोकी सेवा ही करता है। उनके सान्निध्यमें रहनेका लोभ भले हो। यह स्वाभाविक भी है। सेवाका और सान्निध्यका अनिवार्य सम्बन्ध नही है। वह बिचारी समझती है कि उपर्युक्त पत्र तुम्हें सीधे पहुँच गया होगा। तुमने देखा होगा कि यह तो साबरमतीमे डुबकी लगाकर आया है।[1] इसीलिए चार पाँच जगहसे भीग गया है। यह कोई हमारे लिए नया अनुभव नही है। लेकिन हमारा काम तो येन-केन अपने चित्तको सन्तुष्ट रखना है न?

गोरधनभाईको मैं शान्त तो नही कर सका। लेकिन वे अब मुझे कुछ नही लिखते। मुझे जो उचित लगा उस धर्मका पालन मैंने उनके प्रति भी किया है। विट्ठलभाईकी ओरसे जो पैसे मिले है उसका आँकड़ा मैंने मँगवाया है और उनके बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ है, उसे भेजनेके लिए भी कहा है। यदि मुझे ये मिल गये तो मैं उन्हे प्रकाशित करना जरूरी समझता हूँ।

जब वे मुझे पत्र लिखे तब भले वर्कीके पतेपर लिखे। लेकिन यदि वे सब-कुछ तुम्हें ही लिखते रहे और वे पत्र मुझे भी मिलते रहे तो भी मुझे पूर्ण सन्तोष होगा। तुम ही इस बारेमे उनका मार्गदर्शन करना। बा के बारेमे तो तुम लिखोगे ही। लक्ष्मीके बारेमे तो मैं तुम्हे लिख ही चुका हूँ। मृदुलाको और नन्दु[2] बहनको पत्र लिख रहा हूँ। ब्रजकृष्णको देवदास देख आया है। वह अच्छा है। बच गया है। आरामकी जरूरत है, सो ले रहा है।

राजा फरवरीकी ६ तारीखको रिहा होंगे।

तुम्हे किसी भी बातको लेकर चिन्ता न करनेकी आदतका विकास करना चाहिए। उसके लिए या तो 'गीता' कंठस्थ करनी चाहिए, संस्कृत सीखनी चाहिए अथवा उल्टे-सीधे रामधुन रटनी चाहिए।

मुझे तो चिन्ता करनेकी फुर्सत ही नही मिलती, इसलिए तुम्हें मुझे चिन्ता न करनेकी सलाह देनेकी कोई जरूरत नही।

दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ ६२-५

१. चूँकि बेलगाम जेलके कर्मचारियोंमें किसीको गुजराती नहीं आती थी इसलिए गुजराती कैदियों द्वारा लिखे गये पत्रोंको सेन्सरके लिए पहले साबरमती जेल भेजा जाता था।

२. डॉ० कानूगाकी पत्नी विजयागौरी।

५०८. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

१५ जनवरी, १९३४

चि० गंगाबहन,

तुम्हारे बारेमें समाचार तो मिलते ही रहते थे। पर मैं तुम्हे जानबूझकर नही लिखता था। पत्र तो एक ही मिल सकता था तुम्हें, अत दूसरे आवश्यक पत्र तुम्हे मिलते रहे इस विचारसे मैंने तुम्हें पत्र नही लिखा। बाकी सभी बहनोंका स्मरण तो बना ही रहता है।

सब बहनोके लिए तो इतना ही सन्देश भेजता हूँ रासकी कूच[1] के आयोजनके समय भले ही जो-कुछ विचार किये गये हो और प्रतिज्ञाएँ ली गई हो पर अब सारी बहनोको नये सिरेसे स्वतन्त्र रूपसे विचार करके जो निर्णय करना हो, करे। मुझे वह मान्य होगा। मैं अपने मूल विचार पर कायम हूँ। कोई किसीपर जोर न डाले। सब कोई अपना-अपना विचार कर ले, यही धर्म है। सब लोग अपनी शक्ति और इच्छाके अनुसार चले। मै तो अनायास ही जेलके बाहर हूँ। लाल बँगलेपर कोई न ठहरे। लाचारीमे कोई अन्यत्र न ठहरे। हो सकता है कि ऐसा समय आये जब हमे कोई रहने या खानेको कुछ न दे। हम तो ऐसी स्थितिको भी बिना रोष, बिना दु ख माने भोगे, हमने यही धर्म सीखा है। 'गीता' मे यही है, और कुछ नही। दूसरे लोग यदि हमे नही स्वीकार करते तो यही समझना चाहिए कि यह उनकी शक्तिके बाहर है। इसमे दु ख किसलिए? पर हम अभी इस चरम स्थितिको नही पहुँच पाये है। यदि पहुँच जाये तो एक दृष्टिसे अच्छा ही माना जायेगा।

सारी बहने अभी मुझसे अलहदा पत्रकी आशा न करे। मै अवश्य सभीके पत्रोकी आशा रखूँगा।

तुम तो सभी मिलकर लिखोगी और अपने उद्गारोसे भरा-पूरा पत्र लिखोगी। लिखनेमे यदि मदद लेना जरूरी हो तो लेना। सभीने क्या-क्या किया इसकी जानकारी मुझे देना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

सारे पत्र वर्धाके पतेपर भेजे जाये।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृष्ठ ८१-२। सी० डब्ल्यू० ८८१४ से भी; सौजन्य : गगाबहन वैद्य

१. १ अगस्त, १९३३ को; देखिए खण्ड ५५, पृष्ठ ३४३-४५।

५०९. पत्र : सुलोचना अ० शाहको

१५ जनवरी, १९३४

चि० सुलोचना,

तुझे आनन्द तो आया? मुझे छः महीनेका हिसाब देना और अब आगे क्या करना है यह सूचित करना। जरा भी संकोच करनेकी आवश्यकता नही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७५०) से।

५१०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१५ जनवरी, १९३४

चि० प्रेमा,

मैं यह पत्र तुझे सिर्फ यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि तूने जो मुझे लम्बा पत्र लिखनेका वादा किया था मुझे उसका इन्तजार है।

किसन मजेमें है। मैं उसपर जितना ध्यान देना चाहता हूँ उतना नहीं दे पाता।

'हरिजन' के सब अंक पढ़ जाना, गुजराती और अंग्रेजी दोनों।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३५३) से। सी० डब्ल्यू० ६७९२ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

५११. पत्र : अमीना जी० कुरेशीको

१५ जनवरी, १९३४

चि० अमीना,

मुझे ब्योरेवार पत्र लिखना। बच्चोंसे मिलनेके पश्चात् अपना अनुभव मुझे बताना। भविष्यमे जो तुम ठीक समझो वही करना। जेलमें तुमने क्या किया, क्या पढ़ा तथा अन्य सब बातोके बारेमे मुझे बताना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०६२२) से, सौजन्य. अमीना जी० कुरेशी

५१२. पत्र : अमतुस्सलामको

१५ जनवरी, १९३४

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम[१],

उर्दूमे ज्यादा लिखनेकी कोशिश नही करूँगा। सचमुच मैं इतना थक गया हूँ कि ज्यादा लिख नही सकता। हाथमे दर्द होता है और मौनवार के रातके ८-३० बज चुके है। पर कुछ खत तो मुझे लिखने ही होगे। उम्मीद है कि मेरा खत[२] तुमने जेलमें पाया होगा। मैंने तुमसे कहा है कि मेरे पास नही आना। मैं तुमसे बहुत दूर हूँ। परन्तु आनेकी इच्छाको अगर तुम रोक न सकती हो तो जरूर आओ। किसी भी सूरतमे तुम्हे अपनी अम्मा और नारणदासभाईसे तो मिलना ही चाहिए। मुझे तफसीलसे लिखो। आशा करता हूँ, तुम शरीर और मनसे अच्छी होगी।

प्यार।

बापू[३]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९०) से।

१. यह पवित उर्दू लिपिमें है।
२. देखिए "पत्र : अमतुस्सलामको", २-१-१९३४।
३. हस्ताक्षर उर्दू लिपिमें हैं।

परिशिष्ट

परिशिष्ट–१

(अ) यात्रा-कार्यक्रम[1]

७ नवम्बर, १९३३ से १५ नवम्बर, १९३३ तक

७ नवम्बर

सेलू : मन्दिरका उद्घाटन और सार्वजनिक सभा, आदि (प्रातः ९ बजे)

८ नवम्बर

प्रातः ६.०० बजे : वर्धासे प्रस्थान
" ७.०० बजे : बोरीमें पड़ाव
" ७.४० बजे : नागपुरमें आगमन
" ७.४०-८.०० बजे : धनतोलीमें स्वागत
" ८.००-८.३० बजे : भंगियोंकी बस्तीका दौरा, नगरपालिका द्वारा हाल ही में बनाये गये कुएँका उद्घाटन
प्रातः ८.३०-८.४५ बजे : खलासी लाइन अस्पृश्य बालिका विद्यालय
" ८.४५-९.०० बजे : सदर बाजार डी० सी० ए० गर्ल्स स्कूल
" ९.००-९.१५ बजे : चोखामेला होस्टल
" ९.१५-९.३० बजे : पचपौली डी० सी० एम० स्कूल और मॉंग बोर्डिंग
" ९.३०-१०.०० बजे. महार स्टुडेन्ट्स बोर्डिंग, ऊँटखाना
" १०.००-१.०० बजे : विश्राम
" १.००-५.०० बजे : कटोल सार्वजनिक सभा, आदि
शाम ५.००-६.०० बजे : विश्राम
" ६.००-७.०० बजे : सार्वजनिक सभा

९ नवम्बर

प्रातः ६.००-६.३० बजे : अनाथ विद्यार्थी गृहमें
" ६.३०-१०.०० बजे : रामटेक
" १०.००-२.०० बजे : विश्राम

१. देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", ११-११-१९३३।

,, २ ०० बजे · सेवनरके लिए प्रस्थान
३ ००-४.०० बजे सार्वजनिक सभा आदि
४.००-५.०० बजे · नागपुर वापस
शाम ५.००-६ ०० बजे : विश्राम
,, ६ ००-७.०० बजे · कार्यकर्त्ताओके साथ बातचीत
रात ७.००-८ ०० बजे : विद्यार्थियोकी सभा

१० नवम्बर

प्रात. ६ ०० बजे तुमसरके लिए प्रस्थान
,, ८ ०० बजे तुमसरमे सार्वजनिक सभा इत्यादि
,, ९.०० बजे · भंडाराके लिए प्रस्थान
,, १०.००-११.०० बजे · मन्दिरका उद्घाटन, अभिनन्दनपत्रोकी भेट
,, ११.००-२ ०० बजे . विश्राम
,, २ ०० बजे : गोदियाके लिए प्रस्थान
शाम ५.००-६.०० बजे: विश्राम
,, ६.००-८.०० बजे · सार्वजनिक सभा, आदि

११ नवम्बर

प्रात १.२० बजे ट्रेन द्वारा प्रस्थान, ५ ०० बजे नागपुरमे गाड़ी बदली
प्रात : ८.००-९ ०० बजे : देवली (जिला वर्धा)में

१२ से १३ नवम्बर

वर्धामे विश्राम

१३ नवम्बर

शाम ४ ०० बजे : हिंगनघाट
रात ८ ३० बजे चाँदा

१४ नवम्बर

प्रात : ६.००-३.०० बजे सेवलीमे पडाव
शाम ६.०० बजे : चाँदामें सार्वजनिक सभा

१५ नवम्बर

प्रात ५.२० बजे : चाँदासे प्रस्थान '
,, ६.३० बजे . वरोरा मे आगमन, वणीके लिए प्रस्थान

(यदि महात्माजीका स्वास्थ्य यात्राकी थकानको सहन नही कर सका तो डॉ० खरे द्वारा उपर्युक्त कार्यक्रममें परिवर्तन किया जा सकता है।)

(आ) यात्रा-कार्यक्रममें परिवर्तनके सम्बन्धमें परिपत्र

कैम्प वर्धा
७ नवम्बर, १९३३

प्रिय मित्र,

विषय: गांधीजीके यात्रा-कार्यक्रममें परिवर्तन

नवम्बर १९३३ से जुलाई १९३४ तक ९ महीनेके महात्माजीके प्रस्तावित दौरे के कार्यक्रममें महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करना आवश्यक, बल्कि अपरिहार्य हो गया है। मध्यप्रान्तकी यात्रा जो आजसे शुरू हुई है, करनेके पश्चात् तथा १०-१४ दिसम्बर तक दिल्लीमें होनेवाली केन्द्रीय बोर्डकी बैठकमें शामिल होनेके बाद गांधीजी पंजाब, सिन्ध आदि जानेके बजाय सीधे आन्ध्र तथा मद्रास प्रेसीडेंसीके शेष भागमें जायेंगे और फिर उसके बाद बंगाल, असम और फिर पश्चिमकी ओर चले जायेंगे। इसलिए नया क्रम निम्नलिखित होगा:

जुलाई १९३४ के अन्तमें मध्यप्रान्त, दिल्ली, आन्ध्र, मद्रास शहर, मैसूर राज्य और मलाबार डिस्ट्रिक्ट, कोचीन और त्रावणकोर, तमिलनाडु, उड़ीसा, कलकत्ता, बंगाल, असम, बिहार, संयुक्त प्रान्त, पंजाब, सिन्ध और राजपूताना, गुजरात तथा काठियावाड़, बम्बई शहर, महाराष्ट्र और हैदराबाद (दक्षिण) तथा कर्नाटक।

विभिन्न प्रान्तोंमें यात्राकी तिथियाँ तथा अन्य विवरण संलग्न सूचीमे दिये गये हैं। प्रत्येक प्रान्तकी यात्राके ब्योरेका निर्धारण तथा लिखत-पढ़त प्रान्तीय सचिव पूर्व-प्रेषित विस्तृत निर्देशोंके अनुसार अपने-अपने प्रान्तके अधीक्षकोंसे सलाह-मशविरा करनेके बाद करेंगे। लेकिन जिन चार प्रारम्भिक नियमोंका पालन करना है, वे निम्नलिखित हैं:

(१) दिनमें बीचमें भोजन और पत्र-व्यवहारके लिए पूरे चार घंटे (१०.०० से २.०० बजेतक हो तो बेहतर है) सार्वजनिक कार्य बिलकुल बन्द रखा जाना चाहिए।

(२) रोजका कार्य सुबह ६.३० बजेसे पहले शुरू नहीं होना चाहिए और रातमें हदसे-हद ८.०० बजेतक बन्द हो जाना चाहिए।

(३) रेलकी यात्रा मोटरकी यात्राके मुकाबले ज्यादा ठीक रहेगी, लेकिन जहाँ मोटरसे यात्रा करना अनिवार्य हो जाये तो वह दिन-भरमें ७५ मीलसे ज्यादा नहीं होनी चाहिए।

(४) प्रत्येक सप्ताहमें सोमवार और मंगलवार विश्रामके दिन हैं और इन दिनोंमें कोई यात्रा तथा सार्वजनिक कार्यक्रम नहीं होना चाहिए। इतवार रातको ८ बजेसे मंगलवार रात ८ बजेतकका समय संरक्षित समय है — २४ घंटे मौनके लिए तथा २४ घंटे पत्र-व्यवहार और दूसरे कार्यके लिए।

अ० वि० ठक्कर
महासचिव
हरिजन-सेवक संघ

(ड) प्रान्तानुसार यात्रा-कार्यक्रम

गाधीजीकी हरिजन-यात्राका कार्यक्रम

गाधीजीको पत्र-व्यवहार तथा 'हरिजन' मे लिखनेके लिए समय देनेके लिए सप्ताहमें दो दिन, मुख्यतः सोमवार और मगलवारको, यात्रा तथा मुलाकाते नही होगी। इस प्रकार जहाँतक यात्रा-कार्यक्रमका सम्वन्ध है, सप्ताहमे पाँच कार्य-दिवस होगे।

प्रान्त	कुल दिन	तिथि (इसमें दोनो तिथियाँ सम्मिलित हैं)	कार्य-दिवस
मध्यप्रान्त	३१	८ नवम्बर – ८ दिसम्बर	२३
९ दिसम्बरको ट्रेनमे तथा झाँसीमे			
दिल्ली	५	१० दिसम्बर – १४ दिसम्बर	३
१५ दिसम्बरको ट्रेनमे — दिल्लीसे बेजवाडाके लिए			
आन्ध्र	१४	१६ दिसम्बर – २९ दिसम्बर	१०
मद्रास शहर	५	३० दिसम्बर – ३ जनवरी, १९३४	३
मैसूर-मलाबार	१०	४ जनवरी – १३ जनवरी	८
कोचीन-त्रावणकोर	७	१४ जनवरी – २० जनवरी	५
तमिलनाडु	२०	२१ जनवरी – ९ फरवरी	१०
(इनमे पूरी तरह विश्राम करनेके लिए ६ दिन शामिल हैं) १० फरवरीको ट्रेनमें – मद्राससे उडीसा जानेके लिए			
उड़ीसा	७	११ फरवरी – १७ फरवरी	५
बंगाल	२८	१८ फरवरी – १७ मार्च	२०
असम	७	१८ मार्च – २४ मार्च	५
बिहार	१४	२५ मार्च – ७ अप्रैल	१०
संयुक्त प्रान्त	३५	८ अप्रैल – १२ मई	२०
(इनमे पूरी तरह विश्राम करनेके लिए ७ दिन शामिल हैं)			
पंजाब	१४	१३ मई – २६ मई	१०
सिन्ध	७	२७ मई – २ जून	५
राजपूताना	७	३ जून – ९ जून	५
अहमदाबादमे विश्राम	७	१० जून – १६ जून	०
गुजरात–काठियावाड़	१४	१७ जून – ३० जून	१०
बम्बई शहर	७	१ जुलाई – ७ जुलाई	५
महाराष्ट्र–हैदराबाद (दक्षिण)	१७	८ जुलाई – २४ जुलाई	११
कर्नाटक	७	२५ जुलाई – ३१ जुलाई	५

इस कार्यक्रमको अस्थायी समझा जाये। इस कार्यक्रममें परिवर्तन भी किया जा सकता है, लेकिन केवल तभी जब कामके हितमें आवश्यक हो।

अ० वि० ठक्कर

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

परिशिष्ट—२

मुहम्मद इक़बालका वक्तव्य[1]

लाहौर
६ दिसम्बर, १९३३

सम्प्रदायवादी मुस्लिम नेताओंके विरुद्ध पं० जवाहरलाल द्वारा लगाये गये आरोपोंका उल्लेख करते हुए आज जो वक्तव्य जारी किया गया है, उसमें सर मुहम्मद इक़बालने कहा है, "१९३१ में लन्दनमें आगा खाँने श्री गांधीके सम्मुख जो प्रस्ताव रखा था वह अब भी कायम है। अगर पण्डित जवाहरलालके नेतृत्वमें हिन्दू और कांग्रेस उन रक्षात्मक उपायोंका, जिन्हें मुसलमान सम्पूर्ण भारतमें अल्पसंख्यक समुदाय होनेके नाते अपने हितके लिए आवश्यक समझते हैं, समर्थन करते हैं तो मुसलमान सम्प्रदाय भारतके इस राजनैतिक संग्राममें बहुसंख्यक समुदायका साथ देनेके लिए अब भी तैयार रहेगा"।

सर मुहम्मद इक़बालका कहना है कि १९३२ में श्री गांधीके सामने आगा खाँने ऐसा ही प्रस्ताव रखा था, किन्तु श्री गांधी इस बातकी गारंटी नहीं दे सके कि कांग्रेस उनके दृष्टिकोणको स्वीकार कर लेगी और फिर हिन्दू तथा सिख प्रतिनिधि श्री गांधीके दृष्टिकोणसे सहमत नहीं हुए। दूसरे श्री गांधी यह चाहते थे कि मुसलमान लोग अस्पृश्योंकी माँगोंका समर्थन न करें। राष्ट्रीयता और प्रजातन्त्रके सम्बन्धमें मुसलमानोंके क्या विचार हैं, यह समझानेके बाद सर मुहम्मद इक़बालने पण्डित जवाहरलालसे स्पष्ट प्रश्न पूछा: "यदि बहुसंख्यक समुदायने किसी तीसरे पक्षके निर्णयको स्वीकार नहीं किया तो फिर भारतकी समस्या कैसे हल होगी? ऐसी स्थितिमें केवल दो ही विकल्प हैं। या तो बहुसंख्यक जाति पूर्वमें ब्रिटिश साम्राज्यवादके एजेंटके स्थायी पदको स्वीकार कर ले, और या फिर धार्मिक, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक सभ्यताके आधारपर भारतका विभाजन किया जाना चाहिए जिससे कि मताधिकारके प्रश्नको और आज जिस रूपमें साम्प्रदायिक समस्या विद्यमान है, उसके प्रश्नको खत्म किया जा सके।"

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ७-१२-१९३३

१. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", १३-१२-१९३३।

परिशिष्ट – ३

जवाहरलाल नेहरूके वक्तव्यके अंश[1]

. . . मैं नही समझता कि मुस्लिम साम्प्रदायिक सस्थाएँ, जिनमे मुस्लिम सर्व-दलीय सम्मेलन और मुस्लिम लीग प्रमुख है, भारतमे मुसलमानोके किसी बहुत बडे समुदायका प्रतिनिधित्व करती है, सिवाय इसके कि आज जो साम्प्रदायिक भावना फैली हुई है उससे वे अनुचित लाभ उठा रही है। लेकिन तथ्य यही है कि वे संस्थाएँ मुसलमानोके पक्षका समर्थन करनेका दावा करती है और अब तक कोई ऐसी दूसरी संस्था पैदा नही हुई है जो उस दावेका सफलतापूर्वक विरोध कर सके। उनका यह आक्रामक साम्प्रदायिक स्वरूप उन असंख्य राष्ट्रवादी मुसलमानो पर, जो काग्रेसमे शामिल है, प्रभाव डालनेमें मदद करता है। इन संस्थाओके नेता स्पष्टत और पूर्ण-रूपेण साम्प्रदायिक है। यह तो वस्तुस्थितिको देखते हुए कोई समझ ही सकता है।

लेकिन यह भी इतना ही स्पष्ट है कि उनमे से बहुत-से लोग निश्चित रूपसे राष्ट्र-विरोधी और सबसे निम्न कोटिके राजनैतिक प्रतिक्रियावादी है। ऊपरसे तो वे किसी सर्वसामान्य राष्ट्रको भारतमे विकसित होते हुए देखना भी नही चाहते।

पिछले साल ब्रिटिश हाउस ऑफ कॉमन्समे एक बैठकमे आगा खाँ, सर मुहम्मद इकबाल और डॉ० शफात अहमद खाँके बारेमे बताया जाता है कि उन्होने (३१ दिसम्बर, १९३२ के 'स्टेट्समैन' के अनुसार) "हिन्दू और मुसलमानोके राजनीतिक या वस्तुत सामाजिक हितोका विलयन करनेकी अन्तर्निहित असम्भाव्यता पर" जोर दिया था। उन लोगोने आगे "ब्रिटिश एजेंसीके अतिरिक्त किसी अन्य माध्यम द्वारा भारत पर शासन करनेकी अव्यावहारिकताका भी" उल्लेख किया था। ऐसे वक्तव्य अब या सुदूर भविष्यमे भी राष्ट्रीयता अथवा भारतीय स्वाधीनताके लिए कोई गुंजाइश नही स्वीकार करते।

मैं नही समझता कि इस प्रकारके वक्तव्य आमतौरपर मुसलमानोके अथवा साम्प्रदायिकताकी ओर रुझान रखनेवाले मुसलमानोके भी विचारोका प्रतिनिधित्व करते हो। लेकिन ये विचार निस्सन्देह मुसलमानोमे उन लोगोके है जो प्रभावशाली है और राजनीतिकी दुहाई देनेवाले है। इन विचारोका तालमेल राष्ट्रवादी और स्वतन्त्रता-सम्बन्धी विचारोसे बैठाना अपनी बुद्धिका अपमान करना है और बेशक किसी प्रकारकी वास्तविक आर्थिक स्वतन्त्रता तो अब भी उनसे कोसो दूर है। तत्वतः यह मनोवृत्ति महज राजनीतिक, सास्कृतिक, राष्ट्रीय और सामाजिक प्रतिक्रियाके फलस्वरूप बनी है। और यदि कोई इन सस्थाओकी सदस्यताकी जाँच-पड़ताल करे तो कोई

१. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", १३-१२-१९३३।

ताज्जुब नहीं कि यह बात ठीक ही निकले। इनके बहुतसे प्रमुख सदस्य तो सरकारी अधिकारी, भूतपूर्व सरकारी अधिकारी, मन्त्री, तथाकथित मन्त्री, सामन्त और उपाधिकारी और बड़े-बड़े जमीदार इत्यादि हैं। उनके नेता हैं धनाढ्य धार्मिक समुदायके प्रमुख आगा खाँ, जिन्होंने सामन्तवाद और ब्रिटिश शासक वर्ग, जिसके साथ उनका कई साल घनिष्ठ सम्पर्क रहा है, की राजनीति और आदतोंको बड़ी खूबीसे आत्मसात् कर लिया है।

भारतमें मुसलमानोंकी ऐसी नेतागिरी होनेपर कोई ताज्जुब नहीं कि गोलमेज सम्मेलनमें उनका दृष्टिकोण प्रतिक्रियावादी हो। यह प्रतिक्रियावादी नीति इतनी फैल गई है कि लन्दनमें मुसलमान प्रतिनिधियोंको ब्रिटिश जन-जीवनके अत्यन्त प्रतिक्रियावादी लोगों — लॉर्ड लॉयड और उनके गुटवालोंसे — मैत्री करनी पड़ी। इसकी इन्तिहा तब हुई जब गांधीजीने व्यक्तिगत तौरपर उनकी प्रत्येक साम्प्रदायिक माँगको, चाहे वह कितनी ही असंगत और अतिरंजित क्यों न हो, इस शर्तपर स्वीकार करनेका प्रस्ताव रखा कि स्वतन्त्रताके इस राजनैतिक संग्राममें वे अपना पूरा सहयोग देनेका आश्वासन दें। वह शर्त और प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया गया और यह स्पष्ट हो गया कि इसे स्वीकार करनेमें जो बाधा थी वह साम्प्रदायिकवादकी नहीं थी बल्कि राजनैतिक प्रतिक्रिया की थी।

व्यक्तिगत तौरपर तो मैं ऐसा समझता हूँ कि यदि राजनैतिक उद्देश्य एक जैसे ही हों तो साम्राज्यवादियोंसे सहयोग करना सामान्यतः सम्भव है। लेकिन प्रगति और प्रतिक्रिया में, उन लोगोंमें जो स्वतन्त्रताके लिए संग्राम कर रहे हैं और जो गुलामीमें ही खुश हैं, बल्कि इसे आगे बढ़ानेके इच्छुक हैं, समझौतेकी कोई गुंजाइश नहीं है। और यही राजनैतिक प्रतिक्रिया है जिसने देशको साम्प्रदायिक भावनाकी आड़में आच्छादित कर रखा है और एक समुदायका दूसरे समुदायके प्रति जो भय है उससे लाभ उठाया है। हमें इन साम्प्रदायिक समस्याओंमें इस भयकी भावनासे ही निपटना है। सच्ची साम्प्रदायिकताके पीछे भय होता है; झूठी साम्प्रदायिकताके पीछे राजनीतिक प्रतिक्रिया होती है।

अल्पसंख्यक समुदायमें यह भयकी भावना कुछ हदतक उचित है, या कमसे-कम स्वाभाविक तो है ही। जहाँ तक मुसलमानोंका सवाल है, हम देखते हैं कि यह भयकी भावना सम्पूर्ण भारतमें व्याप्त है; पंजाब तथा सिन्धमें जहाँतक हिन्दुओंका सवाल है और पंजाबमें सिखोंका प्रश्न है, यह भयकी भावना उतने ही प्रबल रूपमें विद्यमान है।

ब्रिटिश सरकारके लिए मुसलमानोंके प्रतिक्रियावादी नेताओंको सहयोग देना और उनको बढ़ावा देना तथा राष्ट्रवादियोंकी अवज्ञा करनेका प्रयत्न करना स्वाभाविक था। उनके लिए यह भी स्वाभाविक था कि वे मुसलमानोंकी अधिकांश माँगोंको स्वीकार कर लें जिससे कि उनके अपने समुदायमें उनकी स्थिति सुदृढ़ हो जाये और राष्ट्रीय संग्राम कमजोर पड़ जाये। इतिहासके बहुत थोड़े ज्ञानसे ही यह पता चल जायेगा कि शासक वर्ग हमेशा ऐसा करते ही रहे हैं। मुसलमानोंकी माँगोंसे भारतमें अंग्रेजोंका नियन्त्रण किसी भी तरह कम नहीं होता था। बल्कि ये माँगें तो

कुछ हदतक अंग्रेजोके प्रस्तावित विशेष अधिकारोमे वृद्धि करनेमे तथा ससारको यह दिखानेमे कि भारतमे उनका बने रहना कितना आवश्यक है, मदद ही करती थी।

मुसलमान साम्प्रदायिक नेताओके दृष्टिकोणके सम्बन्धमें मैंने यह सब जो लिखा है, वह सिर्फ तस्वीरको पूरा करनेकी दृष्टिसे नही बल्कि इसलिए लिखा है कि हिन्दुओकी साम्प्रदायिक भावनाको समझनेके लिए इसे देना जरूरी था। दोनोमे कोई मौलिक भेद नही है। लेकिन इसी भेदके कारण ही काग्रेसको हिन्दू-समाजके अधिकाश महत्त्वपूर्ण व्यक्तियोको अपने दलमे शामिल करना पडा और फिर यही लोग वस्तुस्थिति पर छा गये और इस प्रकार परिस्थितियोने हिन्दू सम्प्रदायवादियोको राजनीतिमे एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानेसे वचित रखा। हिन्दू महासभाके नेताओने तो ज्यादातर अपनेको काग्रेसकी आलोचना करनेतक ही सीमित रखा। जब कभी भी काग्रेसकी गतिविधियाँ मन्द पडने लगती थी तो हिन्दू सम्प्रदायवादी ज्यादा जोरसे आवाज उठाने लगते थे तथा उनका दृष्टिकोण स्पष्टत प्रतिक्रियावादी ही होता था।

यह याद रखना चाहिए कि बहुसख्यक समुदायकी साम्प्रदायिक भावनाका तालमेल अल्पसंख्यक समुदायकी साम्प्रदायिक भावनाकी अपेक्षा उसकी राष्ट्रीय भावनासे अवश्य बैठना चाहिए। राष्ट्रीय भावनाकी सत्यताको नापनेकी सबसे बढिया कसौटी यह है कि पता चलाया जाये कि राष्ट्रीय सग्रामसे इसका क्या सम्बन्ध है। यदि यह राजनीतिक प्रतिक्रियावादी है या राष्ट्रीय समस्याओकी अपेक्षा साम्प्रदायिक समस्याओपर जोर देती है तो फिर यह स्पष्टतया राष्ट्र-विरोधी है। . . .

ऐसे वक्तव्यो[1] के लिए मैं महासभाको दोषी नही ठहरा सकता, लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि ये महासभाके विचारोसे मेल खाते है और केवल महासभाके दृष्टिकोणका ही थोड़ा-बहुत बढा-चढा रूप है। और इनसे यह प्रकट होता है कि बहुत-से हिन्दू सम्प्रदायवादी तो निश्चय ही ब्रिटिश साम्राज्यसे सम्बन्ध स्थापित करनेकी बात सोच रहे है जिससे वे उनकी कृतज्ञताके पात्र बन सके। मामूली-से तर्क-वितर्कसे ही यह पता चल जाता है कि यह दृष्टिकोण न केवल संकीर्ण रूपसे साम्प्रदायिक है बल्कि राष्ट्र-विरोधी और अत्यन्त प्रतिक्रियावादी भी है। . . .

यह बिलकुल सच है कि हिन्दू महासभा आरम्भसे ही हमेशा सयुक्त निर्वाचन मण्डलका समर्थन करती रही है और यही स्पष्टतया समस्याका एकमात्र राष्ट्रीय समाधान है। यह भी सच है कि साम्प्रदायिक निर्णय राष्ट्रीयताको बिलकुल अस्वीकार करता है और इस साम्प्रदायिक निर्णयका उद्देश्य भारतको साम्प्रदायिक विभागोमे विभक्त करना है, और विध्वंसक तत्वोको बल प्रदान करके इस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्यवादकी जड़को मजबूत करना है। लेकिन यह बात ध्यान रखनी चाहिए कि राष्ट्रीयताका महज इसलिए समर्थन नही किया जा सकता कि इससे बहुसख्यक समुदायका लाभ होता है। इसकी परीक्षा उन प्रान्तोमे होती है जिनमें मुसलमानोकी बहुतायत है और उस परीक्षामे हिन्दू महासभा असफल हो चुकी है।

१. ये वक्तव्य भाई परमानन्द, डॉ० मुंजे तथा दूसरे लोगोंने दिये थे।

केवल मुसलमान सम्प्रदायवादियोंको दोषी ठहराना काफी नहीं है। वैसे ऐसा करना आसान है, क्योंकि कुल मिलाकर भारतीय मुसलमान दुःखद रूपसे बहुत पिछड़े हुए हैं और अन्य देशोंके मुसलमानोंके मुकाबले हीन साबित होते हैं। बात यह है कि भारतमें हिन्दुओंके लिए एक विशेष दायित्व हो जाता है। इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि वे बहुसँख्यामें हैं, और दूसरे इसलिए कि आर्थिक और शिक्षाकी दृष्टिसे वे बहुत आगे हैं। महासभाने उस दायित्वको निभानेके बजाय कुछ इस ढंगसे काम किया है कि उससे मुसलमानोंकी साम्प्रदायिक भावनामें निस्सन्देह इजाफा हुआ है और उनके अन्दर हिन्दुओंके प्रति उनकी अविश्वासकी भावना जागृत हुई है। उनमें साम्प्रदायिक भावनाको समाप्त करनेका जो एकमात्र तरीका इसने अख्तियार किया है वह है, अपनी साम्प्रदायिक भावनाको विभिन्न रुपोंमें प्रकट करना। एक वर्गकी साम्प्रदायिक भावनासे दूसरे वर्गकी साम्प्रदायिक भावनाका अन्त नहीं हुआ करता; दोनों ही एक-दूसरेको पुष्ट करती हैं और इस प्रकार दोनों ही में वृद्धि होती है। . . .

मैं कह नहीं सकता कि हिन्दू और मुस्लिम साम्प्रदायिक संस्थाओंके अनुयायी कौन हैं। यह सम्भव है कि साम्प्रदायिक भावावेशके क्षणोंमें प्रत्येक पक्षको अपने प्रति पर्याप्त लोगोंकी निष्ठा प्राप्त हो जाये। लेकिन मैं इतना जरूर कहूँगा कि दोनों ही संस्थाएँ धनी उच्च वर्गका प्रतिनिधित्व करती हैं और साम्प्रदायिकतासे लाभ उठानेकी इस होड़में इन दोनों दलोंका वास्तवमें प्रयत्न अपने लिए जितना सम्भव हो सके उतने ज्यादा अधिकार और विशेषाधिकार हासिल करना होता है। बहुतसे-बहुत इन संस्थाओंका उद्देश्य यह हुआ कि हमारे कुछेक बेरोजगार बुद्धिजीवियोंको रोजगार मिल जायेगा। इन साम्प्रदायिक माँगोंसे जनताकी जरूरतें कैसे पूरी होती हैं? श्रमिकों, कृषकों तथा निम्न मध्यमवर्गीय लोगोंके लिए — जो राष्ट्रके अधिकांश भागका प्रतिनिधित्व करते हैं — हिन्दू महासभा या मुस्लिम लीगका क्या कार्यक्रम है? जैसाकि अजमेरमें हिन्दू महासभाने इस ओर इंगित किया था, वर्तमान सामाजिक ढाँचेमें परिवर्तन न करनेवाले नकारात्मक कार्यक्रमके अलावा उनका कोई कार्यक्रम नहीं है। इससे स्वयं ही यह प्रकट हो जाता है कि इन साम्प्रदायिक संस्थाओंकी बागडोर उच्च वर्गके लोगोंके हाथमें है जिन्होंने आज सामाजिक वर्ग बना रखे हैं। मुसलमान सम्प्रदायवादी हमें इस्लामके लोकतन्त्रके बारेमें बताते तो बहुत-कुछ हैं, लेकिन उसे व्यावहारिक रूप देनेमें घबराते हैं; हिन्दू सम्प्रदायवादी बात तो राष्ट्रीयताकी करते हैं, लेकिन सोचते "हिन्दू राष्ट्रीयता" के बारेमें हैं।

व्यक्तिगत तौरपर तो मैं इस बातसे आश्वस्त हूँ कि हिन्दू, मुस्लिम तथा सिख और भारतके अन्य सम्प्रदायोंके सिद्धान्तोंके सम्मिश्रणसे ही राष्ट्रीय भावना जागृत हो सकती है। इसका यह मतलब नहीं है कि किसी सम्प्रदायके वास्तविक सिद्धान्तोंका नाश हो जायेगा, बल्कि इससे तात्पर्य है सामान्य राष्ट्रीय दृष्टिकोण, जिसके सामने और सब मामले महत्त्वहीन होंगे। मैं नहीं समझता कि हिन्दू-मुस्लिम एकता या अन्य वर्गोंमें एकताकी स्थापना केवल मन्त्रकी तरह (एकताका) पाठ करनेसे ही हो जायेगी।

इसमे तो मुझे कोई सन्देह नही है कि एकताकी स्थापना होगी तो जरूर, लेकिन यह नीचेसे होगी, ऊपरसे नही क्योकि जो उच्च वर्गीय लोग है उनमे से अधिकांश ब्रिटिश आधिपत्यमे रहनेके ज्यादा इच्छुक है और इसके द्वारा वे अपने विशेषाधिकारोको बनाये रखनेकी आशा रखते है। सामाजिक और आर्थिक शक्तियाँ अनिवार्यत अन्य समस्याओको आगे खडा कर देगी। वे विभिन्न बातोमे दरार पैदा कर देगी, लेकिन साम्प्रदायिक दरार खत्म हो जायेगी।

मित्रोने, जिनकी रायको मै महत्त्वपूर्ण मानता हूँ, मुझे आगाह किया है कि साम्प्रदायिक सस्थाओके प्रति मेरे दृष्टिकोणका परिणाम यह होगा कि उससे बहुत-से लोग मेरे विरोधी हो जायेगे। दरअसल इसकी सम्भावना है। अपने किसी देशवासीको अपना वैरी बनानेकी मेरी इच्छा कतई नही है, क्योकि हम सब एक जबरदस्त विरोधीके विरुद्ध एक महान सग्रामके दौरमे से गुजर रहे है। लेकिन उस सग्रामके लिए यह आवश्यक है कि हम हानिकर प्रवृत्तियोपर अकुश रखे और अपने उद्देश्यको हमेशा सामने रखे। यदि हमारे उस महान स्वतन्त्रता सग्रामको कमजोर करने और उसमे गतिरोध उत्पन्न करनेकी कोशिश होती हो और उसे मै चुपचाप खडा देखता रहता हूँ तो मै अपने प्रति, अपने मित्रो और सहयोगियोके प्रति, जिनमे से बहुतेरोने तो स्वतन्त्रताकी वेदीपर अपना सब-कुछ न्योछावर कर दिया है, और यहाँतक कि उन लोगोके प्रति भी जो मेरी बातसे सहमत नही है, झूठा ठहरूँगा। मेरी रायमे जो लोग इस कार्यमे मदद कर रहे है, उन्होने जो धारणाएँ बना रखी है, हो सकता है वे बिलकुल ठीक हो। मै उनकी वास्तविकतापर सन्देह नही करता। लेकिन, कम-से-कम उनके विचार गलत है, राष्ट्र-विरोधी है और प्रतिक्रियावादी है।

मै एक व्यक्तिकी हैसियतसे लिख रहा हूँ और इस मामलेमे मै अपने अलावा और किसीके विचारोका प्रतिपादन करनेका दावा नही करता। बहुत-से लोग मेरी बातसे सहमत हो सकते है; आशा है कि वे सहमत होगे। लेकिन चाहे वे सहमत हो या न हो, मुझे तो अपने मनकी बात साफ-साफ कहनी चाहिए। शायद राजनीतिज्ञोका ऐसा तरीका न हो, क्योकि राजनीतिके क्षेत्रमे तो लोग कहनेके मामलेमे बहुत सावधान रहते है और वे ऐसी कोई बात नही कहते जिससे सम्प्रदाय या व्यक्तिको ठेस पहुँचे और वे उसका समर्थन खो बैठे। लेकिन मै अपनी खुशीसे राजनीतिज्ञ नही बना हूँ, मुझसे अधिक प्रबल शक्तियोने मुझे इस क्षेत्रमे ला पटका है और हो सकता है कि मुझे अभी राजनीतिज्ञोके तौर-तरीके सीखने हो।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २-१२-१९३३

परिशिष्ट – ४

बापूका यात्रा-कार्यक्रम[1]

तिथि	प्रातः	दोपहर	रात
२८ दिसम्बर	ट्रेनमें	विशाखापट्टनम	विजयनगरम
२९ दिसम्बर	अणकापल्ली (३ बजेतक)	ट्रेनमें	ट्रेनमे
३० दिसम्बर	वुचीरेड्डीपालयम	नेल्लौर	वेकटगिरि
३१ दिसम्बर	रेणीगुंटा	कुडाप्पा	कुडाप्पा
१-२ जनवरी	कुडाप्पामें विश्राम		
३ जनवरी	उर्वाकोण्डा	अनन्तपुर	ट्रेनमें
४ जनवरी		बंगलौर	
५ जनवरी		मैसूर	

दिन-भरके पत्र गहरी स्याहीमें छपे स्थानोंपर भेजे जा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३३; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. देखिए "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", २६-१२-१९३३।

सामग्रीके साधन-सूत्र

गाधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली . गांधी साहित्य और तत्सम्बन्धी कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय पुस्तकालय, कलकत्ता।

साबरमती सग्रहालय पुस्तकालय तथा आलेख सग्रहालय, जिसमे गाधीजीसे सम्बन्धित कागजात रखे है।

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल'. बम्बईसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'मद्रास मेल': मद्रासससे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हरिजन': रामचन्द्र वैद्यनाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित तथा हरिजन सेवक सघके तत्वावधानमे प्रकशित अंग्रेजी साप्ताहिक, जो गाधीजीकी देखरेखमे ११ फरवरी, १९३३ को पूनासे प्रकाशित हुआ था।

'हरिजनबन्धु': चन्द्रशकर शुक्ल द्वारा सम्पादित तथा १२ मार्च, १९३३ को पूनासे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'हरिजनसेवक'. वियोगी हरि द्वारा सम्पादित और २३ फरवरी, १९३३ को दिल्लीसे प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक।

'हितवाद': नागपुरसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स'. नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'(द) इंडियन एनुअल रजिस्टर', खण्ड–२, १९३३ (अग्रेजी) नृपेन्द्रनाथ मित्रा, द एनुअल रजिस्टर आफिस, कलकत्ता।

'इन द शैडो ऑफ द महात्मा' (अंग्रेजी): जी० डी० बिड़ला, ओरिएन्ट लॉन्गमैन लिमिटेड, इण्डिया, १९५३।

'कोई शिकायत नही'. कृष्णा हठीसिंह, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, १९५९।

'गाधीजीकी दिल्ली डायरी', खण्ड १ ब्रजकृष्ण चाँदीवाला, गाधी स्मारक निधि एवं ज्ञानदीप, १९७०।

'(द) साइनो-इडियन जरनल' (अग्रेजी): गाधी मेमोरियल नम्बर, दिसम्बर, १९४८।

'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद'. सम्पादक: काका कालेलकर, जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'(ए) बच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अग्रेजी) जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९५८।

'बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती) : सम्पादक : काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने' (गुजराती) : सम्पादिका : मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती) : सम्पादिका : मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना बाने पत्रो' (गुजराती) : इंटरनेशनल प्रिन्टिंग प्रेस, फीनिक्स, नेटाल, १९४८।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) : मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद, १९४८।

'बापूजीनी शीतल छायामां' (गुजराती) : सम्पादिका : सरोजिनी मेहता, लीलावती डी० बैंकर और बचुबहन आर० लोटवाला, बम्बई, १९५८।

'मध्यप्रदेश और गांधीजी' : सूचना तथा प्रकाशन संचालनालय, मध्यप्रदेश सरकार, अक्टूबर, १९६९।

'महात्मा : लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड – ३ (अंग्रेजी) : डी० जी० तेंदुलकर, विट्ठलभाई के० झवेरी और डी० जी० तेंदुलकर, बम्बई, १९५१।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी) : सम्पादक : एलिस एम० बार्न्स, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१६ सितम्बर, १९३३ से १५ जनवरी, १९३४ तक)

१६ सितम्बर: गाधीजी बम्बईमे ही रहे। जवाहरलाल नेहरू, सरोजिनी नायडू, घनश्यामदास बिड़ला और कावसजी जहाँगीरसे बातचीत की।

१९ सितम्बर मिल-मालिक सघ तथा श्रमिकोके प्रतिनिधियोसे बातचीत की।

२० सितम्बर एनी बेसेटका देहान्त, गाधीजीने उन्हे श्रद्धांजलि अर्पित की। अहमदाबादके लिए रवाना हो गये।

२१ सितम्बर. अहमदाबादमें, चिनुभाईकी प्रतिमाका अनावरण किया; माणेकलाल जेठालाल पुस्तकालयका शिलान्यास किया। रातको बम्बईके लिए रवाना हो गये।

२२ सितम्बर: बम्बईमे।

२३ सितम्बर: वर्धा पहुँचे।

२४ सितम्बर: तृतीय 'हरिजन दिवस' मनाया गया।

२९ सितम्बर. के० माधवन नायरकी मत्युपर गाधीजीने सम्वेदना-सन्देश भेजा।

३० सितम्बर· घनश्यामदास बिडलाको लिखे एक पत्रमें सत्याग्रह आश्रम हरिजन सेवक समाजको सौप देनेका प्रस्ताव रखा।

४ अक्टूबर. रेव० फूजी और रेव० ओकीत्सूसे भेंट की।

८ अक्टूबर. सार्वजनिक सभामे आगामी ३ अगस्त, १९३४ तक अपनेको हरिजन-कार्यमे लगाये रखनेके निर्णयको दोहराया।

९ अक्टूबर: एन० एस० हार्डिकर और कमला चट्टोपाध्यायसे भेंट की।

१४ अक्टूबर: स्वामी दयानन्दकी अर्द्ध-शताब्दीके अवसरपर सन्देश भेजा।

१८ अक्टूबर. प्रभुदास गाधीके विवाहके अवसरपर दो शब्द कहे।

२२ अक्टूबर· 'उन्नति' के प्रतिनिधिसे भेट की।
विट्ठलभाई पटेलकी जेनेवामे मृत्यु।

२४ अक्टूबर. एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे भेंटके दौरान गाधीजीने विट्ठलभाई पटेलके प्रति श्रद्धाजलि अर्पित की।

३१ अक्टूबर: के० एफ० नरीमनसे भेट की।

२ नवम्बर: हिजली जेलमे सविनय प्रतिरोधियोके साथ किये गये अमानवीय व्यवहारके सम्बन्धमे बंगालके गवर्नरको पत्र लिखा।.

७ नवम्बरसे पूर्व: नालवाडीमे हरिजनोंकी सभामे भाषण दिया।

७ नवम्बर: हरिजन-कार्यके लिए यात्रा आरम्भ की। वर्धाका राम मन्दिर और लक्ष्मी-नारायण मन्दिर देखने गये। सेलूमें मन्दिरको हरिजनोके लिए खोला, सार्वजनिक सभामे भाषण दिया। शामको वर्धामे सार्वजनिक सभामे भापण दिया।

८ नवम्बर: सुबह नागपुर पहुँचे। लेंढर। और वनतोलीमें भाषण दिया। हरिजनोंकी बस्तीमें आयोजित सभामें भाषण दिया; हरिजनोंके लिए कुएँका उद्घाटन किया। विभिन्न हरिजन संस्थाएँ देखने गये; हरिजन महिला आश्रमका उद्घाटन किया। कटोल, मोपा, कमलेश्वर, डोरलीकी यात्रा की। शामको नागपुरमें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

९ नवम्बर: सुबह पत्र-प्रतिनिधियोंसे भेंट की। खादी वस्त्रालय, ऊँटखाना बोर्डिंग, नावी शुक्रावारी और अनाथ विद्यार्थी गृह देखने गये; हरिजनोंके लिए कुआँ खोला। हरिजन कार्यकर्त्ताओंकी सभा और विश्वविद्यालयके विद्यार्थियोंकी सभामें भाषण दिये। दिनमें कांपटी, कानन, रामटेक, डुरी, खुर्द और सावनेर देखने गये।

१० नवम्बर: पत्र-प्रतिनिधियोंसे भेंट की। तुमसर पहुँचे, सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
भंडारामें एक सभामें भाषण दिया, लक्ष्मीनारायण मन्दिरका उद्घाटन किया।
मोहाली, शिहोरा और लाखाणी देखने गये।
गोंदियामें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
वर्धाके लिए रवाना हो गये।

११ नवम्बर: प्रातः ७ बजे वर्धा पहुँचे; पत्र-प्रतिनिधियोंसे भेंट की।

१२ नवम्बर: वर्धामें देवलीमें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१३ नवम्बर: वर्धासे हिंगनघाटके लिए रवाना।
हिंगनघाटमें हरिजनोंकी बस्ती देखने गये, शामको सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। रातको चाँदा पहुँचे।

१४ नवम्बर: मूल पहुँचे, हरिजनोंके लिए दो कुँओंका उद्घाटन किया। सावलीमें खादी कार्यालय और बुनकरोंकी बस्ती देखने गये; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१५ नवम्बर: प्रातः वरोरा और वुनमें सार्वजनिक सभाओंमें भाषण दिये।
ब्रानी और उमानीकी यात्रा की।
शामको यवतमल पहुँचे।
चोखामेला हरिजन बोर्डिंग और अन्य संस्थाएँ देखने गये। कार्यकर्त्ताओंकी सभा और सार्वजनिक सभामें भाषण दिये।

१६ नवम्बर: प्रातः यवतमलसे अमरावतीके लिए रवाना हो गये। धामणगाँव और चांदूरकी यात्रा की।
सुबह ११ बजे अमरावती पहुँचे।
दोपहर बाद बच्चोंकी सभा, महिलाओंकी सभा और हरिजनोंकी सभामें भाषण दिये।
हरिजनोंकी बस्तीमें गये।
शामको हनुमान व्यायामशाला और सार्वजनिक सभामें भाषण दिये।

१७ नवम्बर: कामरगाँव, लोणी, कारजा, मुरतजापुर, वालापुर, वाडेगाम, वल्लाया और शेगाँवकी यात्रा की।
लासुरामे शिव-मन्दिरका उद्घाटन किया।
खामगाँवमे हरिजन बस्ती और हरिजन होस्टल देखने गये।
अजुमन मुफीद-उल-इस्लाम, सार्वजनिक सभा और कार्यकर्ताओकी सभाओमे भाषण दिये।

१८ नवम्बर: प्रातः १० बजे अकोला पहुँचे।
नेशनल स्कूल, सरस्वती स्कूल, सरस्वती मन्दिर और हरिजन बस्तीका दौरा किया।
हरिजनोसे भेंट की।
सनातनी स्वामी लालनाथसे बातचीत की।
सार्वजनिक सभा और हरिजन कार्यकर्त्ताओकी सभामें भाषण दिये।
पत्र-प्रतिनिधियोसे भेट की।

१९ नवम्बर. प्रात· अकोलाके लिए रवाना हो गये।
उगवा, केलीवेली, अकोट, अंजनगाँव और पथरोटका दौरा किया।
चिखलडा पहुँचे।

२० नवम्बर: चिखलडामें; मौन-दिवस।

२१ नवम्बर: चिखलडासे रवाना।
ईलीचपुरमे दो सार्वजनिक सभाओमे भाषण दिये। उतखेड और चादूर बाजारका दौरा किया। मोरसीकी सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
रातको बडनेरा पहुँचे, सार्वजनिक सभामें भापण दिया।
बरारकी जनताके नाम सन्देश भेजा।

२२ नवम्बर: दूर्ग पहुँचे।
एक मेहतरके घरमे, नगरपालिका विद्यालय, आर्य समाज कन्या विद्यालय, खादी केन्द्र और हरिजन बस्तीमे गये।
सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
कुमहारीका दौरा किया।
रातको रायपुर पहुँचे।

२३ नवम्बर प्रातः हरिजनो और सनातनियोसे भेट की। अभिनन्दनपत्रोका उत्तर दिया।
हरिजन बस्ती, खादी भंडार, हिन्दू अनाथालय और सनातनी आश्रम देखने गये।
शामको अखिल भारतीय स्वदेशी प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।

२४ नवम्बर: धमतरीमे महिलाओकी सभा और सार्वजनिक सभामे भाषण दिये; हरिजन बस्तीका दौरा किया। राजिमका दौरा किया। रायपुरमे हरिजनोके हनुमान-मन्दिर और दो कुओका उद्घाटन किया; शामको सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

२५ नवम्बर: बलोडा बाजारमें हरिजनोंके लिए गोपालजी मन्दिरके द्वार खोले; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
भाटापाडाका और साकटी दौरा किया।
बैथलपुरमें क्लेयर कुष्ठालयका दौरा किया।
बिलासपुरमें महिलाओंकी सभा, सार्वजनिक सभा और रेलवे कर्मचारियोंकी सभामें भाषण दिये।
रायपुर लौट आये।

२६ नवम्बर: रायपुरमें।

२७ नवम्बर: दोपहर बाद महिलाओंकी सभामें भाषण दिया। शामको छत्तीसगढ़ हरिजन कार्यकर्त्ताओंकी सभामें और राजकुमार कॉलेजमें भाषण दिये।
आमगांवके लिए रवाना हो गये।

२८ नवम्बर: प्रातः १ बजे आमगांव पहुँचे, ग्रामीणोंकी सभामें भाषण दिया।
रिसममें गणेश मन्दिरका उद्घाटन किया।
लॉंजी में हरिजन बस्तीका दौरा किया; सभामें भाषण दिया।
किरणापुरका दौरा किया।
बालाघाटमें महिलाओंकी सभा और सार्वजनिक सभामें भाषण दिये; हरिजन बस्तीका दौरा किया।
वाडासेवनीका दौरा किया।
सेवनी पहुँचे।

२९ नवम्बर: महिलाओंकी सभा और सार्वजनिक सभामें भाषण दिये।
सनातनियोंसे भेंट की।
छिन्दवाड़ामें कार्यकर्त्ताओंकी सभा तथा सार्वजनिक सभामें भाषण दिये; हरिजन बस्तीका दौरा किया।
खेरवाणी और मूलतापीका दौरा किया।
बैतूल पहुँचे।

३० नवम्बर: खेडी, सावलीगढ़ और वारालिहंगका दौरा किया।
बैतूलमें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया; हरिजन बस्तीका दौरा किया।
इटारसीकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१ दिसम्बर: करेलीकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
देवरीमें श्री मुरलीधर मन्दिरका उद्घाटन किया; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
अस्पतालमें आहत हरिजन कन्याको देखने गये।
अनन्तपुरमें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया; खादी-निवास और ग्रामीणोंके घरोंका दौरा किया; खादी कार्यकर्त्ताओंके साथ बातचीत की।

२ दिसम्बर: अनन्तपुरसे रवाना हो गये।
गाधाकोटाका दौरा किया।

दमोहमे हरिजनोके लिए मन्दिरका शिलान्यास किया, सार्वजनिक सभामे भाषण दिया, हरिजन बस्तीका दौरा किया।

शामको ४ बजे सागर पहुँचे, महिलाओकी सभा और सार्वजनिक सभामे भाषण दिये, समस्त हिन्दुओके लिए हरिजनो द्वारा बनाये जाने वाले मन्दिरका शिलान्यास किया।

रातको कटनीके लिए रवाना हो गये।

३ दिसम्बर कटनीमे सार्वजनिक सभामे भाषण दिया। सिहोरा, वुढागर और पानागारका दौरा किया।

शामको ४ बजे जबलपुर पहुँचे। सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

४ दिसम्बर जबलपुरमे, मौन-दिवस, डॉ० मु० अ० अंसारीसे भेट की।

५ दिसम्बर जवाहरलाल नेहरू, मु० अ० असारी, एस० महमूद, के० एफ० नरीमन और जमनालाल बजाजके साथ बातचीत की।

६ दिसम्बर हरिजन कार्यकर्त्ताओकी सभामे भाषण दिया।

माण्डलाका दौरा किया, सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

जबलपुर लौट आये, नारायणगज, बरेला और ब्योहारजीके मन्दिर गये; हरिजनो के लिए खोली गई रात्रि-शालाका निरीक्षण किया।

जबलपुरमे गुजरातियोकी सभामे भाषण दिया।

७ दिसम्बर. हरिजन नेताओ और कार्यकर्त्ताओके साथ बातचीत की। स्वदेशी संग्रहालय और हरिजन बस्ती देखने गये। खादी भण्डारमे खादी बेची; लक्ष्मीनारायण मन्दिरके द्वार हरिजनोके लिए खोले। महिलाओकी सभा और लियोनार्ड थियोलॉजिकल कॉलेजमे भाषण दिये।

ट्रेनसे जबलपुरके लिए रवाना हो गये।

सोहागपुर पहुँचे।

बाबईका दौरा किया।

८ दिसम्बर. सुबह हरदा पहुँचे; सार्वजनिक सभामे भाषण दिया। खण्डवा और बुरानपुरकी सार्वजनिक सभाओमे भाषण दिये।

झाँसीके लिए रवाना हो गये।

९ दिसम्बर. भोपाल पहुँचे और सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

भेलसा और बमोदाका दौरा किया।

झाँसीमें महिलाओकी सभा तथा सार्वजनिक सभामे भाषण दिये।

दिल्लीके लिए रवाना हो गये।

१० दिसम्बर' प्रात दिल्ली पहुँचे, श्रमिको की सभामें भाषण दिया।

हरिजन बस्ती, खादी भण्डार और जामिया मिलिया इस्लामिया देखने गये।

हरिजनोके साथ बातचीत की।

११ दिसम्बर. दिल्लीमें, मौन-दिवस।

१२ दिसम्बर: कांग्रेस नेताओके साथ बातचीत की।

१३ दिसम्बर: सनातनियोंके साथ बातचीत की।

प्रातः अलीपुरका दौरा किया और सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

हरिजन सेवक संघके केन्द्रीय बोर्डकी बैठकमें शामिल हुए।

विद्यार्थियोंकी सभामें भाषण दिया और मोतीलाल नेहरूके चित्रका अनावरण किया।

समाचारपत्रोंको दिये गये वक्तव्यमें मुहम्मद इक़बाल द्वारा लगाये गये आरोपोंका स्पष्ट रूपसे खण्डन किया।

जापानी प्रतिनिधिमण्डलके सदस्योंसे भेंट की।

कांग्रेस नेताओंसे बातचीत जारी रही।

रातको कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंसे चर्चा की।

१४ दिसम्बर: मौलाना अबुल कलाम आजाद, जवाहरलाल नेहरू, आचार्य कृपालानी, जमनालाल बजाज और सैयद महमूदसे बातचीत जारी रही।

हरिजनोंकी सभा तथा महिलाओंकी सभामें भाषण दिये।

शाम ४ बजे बेजवाड़ाके लिए रवाना हो गये।

१५ दिसम्बर: ट्रेनमें।

१६ दिसम्बर से पूर्व: सनातनियोंके साथ बातचीत की।

१६ दिसम्बर: प्रातः ३ बजे बेजवाड़ा पहुँचे।

पदमाटा, पदमाटा लंका, मुगलराजपुरम और इद्रुपुगलुका दौरा किया। बेजवाड़ा-में हरिजनोंकी बस्तीका दौरा किया; महिलाओंकी सभा, आन्ध्रके हरिजन कार्य-कर्त्ताओंकी सभा तथा सार्वजनिक सभामे भाषण दिये।

१७ दिसम्बर: प्रातः मुड्डनुरूमें दो मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए खोला।

गुडीवाडामें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

सिद्धान्तम्मे हरिजनोंके लिए मन्दिर खोला; दोपहरको 'हिन्दू' के प्रतिनिधिसे भेंट की।

अंगलुर, गुदलावलेरू, कवुथवरम् और पेदानाका दौरा किया।

मसूलीपट्टम पहुँचे; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

चल्लापल्लीका दौरा किया।

१८ दिसम्बर: मसूलीपट्टममे; मौन-दिवस

१९ दिसम्बर: शामको कंकीपाडु, पामारू और भटलापेनुमारूका दौरा किया।

बेजवाड़ा लौट आये।

मद्रासके लिए रवाना हो गये।

२० दिसम्बर: प्रातः मद्रास पहुँचे।

नगरनिगम द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें भाषण दिया; अखिल भारतीय स्वदेशी प्रदर्शनीका उद्‌घाटन किया। साउथ इंडिया चेम्बर ऑफ कॉमर्सकी सभामें, महिलाओंकी दो सभाओंमें, विद्यार्थियोंकी सभा तथा सार्वजनिक सभामें भाषण दिये।

२१ दिसम्बर: हरिजन-चेरियोका दौरा किया।

रोयापुरममे रॉबिन्सन पार्कमे आयोजित हरिजनोकी सभामे भाषण दिया।

पेराम्बूरमे एम० एस० एम० रेलवे मजदूरोकी सभा तथा सार्वजनिक सभामे भाषण दिये।

वेल्लाल तेनामपेटमे भारत सभामे भाषण दिया।

वाडिया पार्कमे श्रमिक सघकी सभामे भाषण दिया तथा एनी वेसेंटके चित्रका अनावरण किया।

चुलाईमें सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

२२ दिसम्बर: एस० सत्यमूर्तिसे भेंट की।

सार्वजनिक सभामे तथा वैश्य सघ और जैन मन्दिरमे गुजराती, मारवाडी और सिन्धी लोगोके समक्ष भाषण दिये।

आन्ध्र महासभामे नागेश्वर राव पन्तुलुके चित्रका अनावरण किया।

ट्रिप्लीकेनकी गन्दी बस्तियोका दौरा किया।

हिन्दी प्रचार सभाके दीक्षान्त समारोहकी अध्यक्षता की।

दलित वर्गोके प्रतिनिधि-मण्डलसे भेट की; 'मद्रास मेल' और 'हिन्दू' के प्रतिनिधियोसे भेट की। तमिल प्रेमियोके सम्मेलनके लिए सन्देश भेजा।

गुटूरके लिए रवाना हो गये।

२३ दिसम्बर: प्रात. गुंटूर पहुँचे।

कोण्डा वेंकटप्पैयाकी रुग्ण पत्नीके घर गये।

एक मन्दिरका पुन. नामकरण किया; सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

चैबरोल, म्युनिपल्ले, मनचल्ला, वेल्लालूर तथा पोन्नूरकी यात्रा की।

निदुब्रोलुकी सार्वजनिक सभामे भाषण दिया; प्रौढशिक्षाके लिए एक संस्था तथा पुस्तकालयका उद्घाटन किया।

थल्लापलममे नि शुल्क आयुर्वेदिक कुटीरमका उद्घाटन किया और आत्म विलास आश्रम भवनका शिलान्यास किया; हरिजनोकी सभामे भाषण दिया।

कवुरमे, विनय आश्रम भवनका शिलान्यास किया; हरिजनोके लिए मन्दिर खोला; सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

इथननगरमपादुमे हरिजनोके लिए मन्दिर खोला।

भट्टीप्रोलु और रेपल्लीका दौरा किया।

तेनाली पहुँचे; सार्वजनिक सभामे भाषण किया।

२४ दिसम्बर. प्रात. १०.४० पर शामलकोट पहुँचे।

पेड्डापुरममे सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

कोकनाडामे महिलाओकी सभा और सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

गोल्लापलम्का दौरा किया।

रामचन्द्रपुरममे वाल्मीकि आश्रममे गये तथा सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

शामको ७.३० बजे राजमुंदरी पहुँचे। सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

रातको हरिजन नेताओंके प्रतिनिधि-मण्डलसे भेंट की।

विहार-नौकामे रात बिताई।

२५ दिसम्बर प्रातः सीतानगरम पहुँचे; मौन-दिवस।

२६ दिसम्बर बंगलपडुका दौरा किया, सीतारामस्वामी मन्दिर, सीतानगरम हरिजन आश्रम और रामलिंगेश्वर तथा कोदण्डमके दो मन्दिरोका उद्घाटन किया।

स्टीमरसे तल्लापुडी पहुँचे।

मलकापल्ली, धर्मवरम, और निडावोलेका दौरा किया।

तानुकू पहुँचे।

२७ दिसम्बर: तानुकूकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया; एलेतीपद्दु, कवितम, पौडुरु, वेदगी और जिन्नुनूरका दौरा किया।

पलाकोलामे सार्वजनिक सभामें भाषण दिया, हरिजन आश्रमका शिलान्यास किया।

बल्लीपाडुका दौरा किया।

भीमावरम् और ताडेपल्लीगुडममें सार्वजनिक सभाओमे भाषण दिये।

शाम ५ बजे एल्लोर पहुँचे और सार्वजनिक सभामे तथा आर्य आन्ध्र सघके समक्ष भाषण दिया; लाजपतरायके चित्रका अनावरण किया; हरिजन बस्तीका दौरा किया।

२८ दिसम्बर· कांग्रेस कार्यकर्ताओंसे भेंट की।

एल्लोरसे रवाना।

दोपहरको विशाखापट्टनम पहुँचे।

हरिजन कार्यकर्त्ताओसे भेंट की; स्वदेशी स्टोरका उद्घाटन किया; महिलाओकी सभा और सार्वजनिक सभामे भाषण दिये।

वीमलीपटममे राममन्दिरका उद्घाटन किया।

विजयनगरम्मे हरिजन नेताओसे भेंट की।

२९ दिसम्बर: विजयनगरम्मे हरिजन बस्तीका दौरा किया; सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

अणकापल्लीमे नागरिक अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें भाषण दिया।

विट्रागुटा पहुँचे।

३० दिसम्बर: कावली और अल्लुरकी सार्वजनिक सभाओंमें भाषण दिये।

गंडावरम्मे; हरिजनोंके लिए मन्दिर खोला; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

वेल्लयापलम्का दौरा किया।

बुचीरेड्डीपालयम्मे; महिलाओकी सभा और सार्वजनिक सभामे भाषण दिये।

नेल्लोरमे; हरिजन बस्तीका दौरा किया; हरिजनोके लिए वाचनालयका उद्घाटन किया; महिलाओंकी सभा और सार्वजनिक सभामे भाषण दिये।

गडूरमें; सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

वेंकटगिरि पहुँचे।

३१ दिसम्बर: हरिजन बस्तीका दौरा किया; हरिजनोके लिए एक वाचनालयका शिलान्यास किया; सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
तिरुपतिमे, सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
रेणीगुटाका दौरा किया।
कुडाप्पा पहुँचे।

१ जनवरी, १९३४ कुडाप्पामे; मौन-दिवस।

२ जनवरी . हरिजन कार्यकर्त्ताओसे भेंट की।
कुडाप्पा स्वदेशी भण्डारका उद्घाटन किया।
हरिजन बस्तीका दौरा किया, सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

३ जनवरी सुबह ४ ३० बजे पेड्डावाडगुरु पहुँचे; सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
गुटीका दौरा किया।
गुटकलमे चर्मशोधनालय तथा हरिजन बस्तीका दौरा किया।
सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
कोणाकोण्डला, वज्रकरुर और उर्वाकोण्डाका दौरा किया।
अनन्तपुरमे, हरिजन बस्तीका दौरा किया, सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
हिन्दूपुर पहुँचे।

४ जनवरी · हिन्दूपुरसे रवाना।
गोरीबीडनूरका दौरा किया।
डोड्डाबल्लापुरकी सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
तुमकुरमे स्थानीय कार्यकर्त्ताओके साथ बातचीत की, हरिजन बस्तीका दौरा किया, सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
त्यामागोण्डलू और नेलमगलाका दौरा किया।
शामको ४.४५ बजे बगलौर पहुँचे, अखिल भारतीय चरखा सघकी शाखाका उद्घाटन किया, महिलाओको सभा, सार्वजनिक सभा और मारवाडियोकी सभामे भाषण दिये, हरिजन बस्तीका दौरा किया।
मैसूर पहुँचे।

५ जनवरी तगडुर, बडनवाल और नजनगडका दौरा किया।
मैसूरमे हरिजन बस्तीका दौरा किया, हरिजन कार्यकर्त्ताओकी सभा, महिलाओकी सभा और सार्वजनिक सभामे भाषण दिये।

६ जनवरी मड्या, सकूर, भद्रूर, बेकग्रालल्ली, शिवपुरम् और सोमणहल्ली, चेन्नपतन, क्लोजपेट, ककणल्ली, बिडाली और केंगरीका दौरा किया।
बगलौर वापस लौटे, विद्यार्थियोकी सभामे भाषण दिया।

७ जनवरी बंगलौरमे नरसिंहार्या आदि कर्नाटक होस्टल, दीन सेवा सघ, आदि-कर्नाटक बालिका-गृह और हरिजन बस्ती देखने गये।
मालेश्वरममे महिलाओकी सभा, एपेक्स बैंकमे सहयोगियोकी सभा, टैम्परेस फेडरेशन, महिलाओकी सभा, सार्वजनिक सभा और हरिजन कार्यकर्त्ताओकी सभामे भाषण दिये, नागरिक अभिनन्दनके अवसरपर भाषण दिया।

८ जनवरी: बंगलौरमें; मौन-दिवस।

९ जनवरी: मैसूरकी जनताके नाम सन्देश भेजा।
बंगलौरसे रवाना।

१० जनवरी: ओलवाकोट पहुँचे; शवरी आश्रम देखने गये।
पालघाटमें सार्वजनिक सभा और महिलाओंकी सभामें भाषण दिया।
चित्तूर, कोडुवायूर, तेनकुरीसी और विल्लायंचतुरका दौरा किया।
कुजालमन्नममें नायडियोंकी सभामें भाषण दिया।
करीमपुज्ञा, चेरपुलासेरी, अनन्तानदी और ओट्टापालेमका दौरा किया।
रात १० बजे गुरुवायूर पहुँचे।

११ जनवरी: गुरुवायूरकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
कृष्णमकुल्लमका दौरा किया।
अकिकावमें हरिजनोंके लिए निःशुल्क औषधालयका शिलान्यास किया।
पत्तम्बीकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
कानानूर पहुँचे।

१२ जनवरी: पायानूरमें, श्री नारायण हरिजन आश्रम और खादी डिपो देखने गये; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
कानानूर लौट आये; हरिजन कार्यकर्त्ताओंकी सभा और सार्वजनिक सभामें भाषण दिये।
तेलिचेरी पहुँचे।

१३ जनवरी: तेलिचेरीमें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
माहे और वडगरामें सार्वजनिक सभाओंमें भाषण दिये।
पक्कनारपुरममें बालकृष्ण स्मारक आयुर्वेदिक औषधालयका उद्घाटन किया।
किलंडीका दौरा किया।
कालीकट पहुँचे।
महिलाओंकी सभा, सार्वजनिक सभा और विद्यार्थियोंकी सभामें भाषण दिये; टाउन हॉलमे और 'मातृभूमि' के कार्यालयमें के० माधवन नायरके चित्रोंका अनावरण किया।

१४ जनवरी: कलपेट्टाका दौरा किया; हरिजन कालोनीका उद्घाटन किया; सार्वजनिक सभा और हरिजन कार्यकर्त्ताओंकी सभामें भाषण दिया; हरिजन बस्तीका दौरा किया।

१५ जनवरी: कालीकटमें; मौन-दिवस।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

उ

ख

ग

घ

ध

न

भ

य

र

ह